भारत की भौगोलिक समीक्षा

भारत की भौगोलिक समीक्षा

लेखक

प्रो० के० बी० सक्सेना, एम० काम०,

वाणिज्य विभाग श्री जैन (स्नातकोत्तर) कालिज बीकानेर।

एवं

प्रो० बी० एन० हुक्कू, एम० कॉम०,

वाणिज्य विभाग, जोधपुर यूनिवर्सिटी, जोधपुर।



नवयुग साहित्य सदन,

लोहामन्डी, आगरा-२

प्रथम संस्करण सन्—१९६१ } आगरा बुक स्टोर द्वारा
सप्तम संस्करण सन्—१९६९ } प्रकाशित
अष्टम् संस्करण १९७१-७२

मूल्य १५.०० मात्र

राजेन्द्रकुमार जैन द्वारा नवयुग साहित्य सदन एवं हिन्द प्रेस, ३२७९
लोहामण्डी, आगरा—२ से, प्रकाशित तथा मुद्रित।

आठवें संस्करण की भूमिका

पुस्तक के प्रस्तुत आठवें संस्करण म आद्योपात आवश्यक सशोधन एव नवीनतम सामग्री एव आँकडो का यथास्थान समावेश कर दिया गया है। भारत म सन् 1971 म अब तक की प्राय समस्त प्रमुख सम्बन्धित आर्थिक घटनाओ एव प्रवृत्तियो का उल्लेख भी यथास्थान कर दिया गया है। विभिन्न उद्योगो का पच-वर्षीय योजनाओ मे विकास, चतुर्थ योजना के लक्ष्य, एव उनकी समस्याएँ सम्बन्धित उद्योगों के विवरण के साथ जोड दी गई हैं।

प्रस्तुत सस्करण मे अनेक नए अध्याय और जोडे गये हैं। 'भारत म परिवार नियोजन', 'बेरोजगारी की समस्या', प्रमुख बन्दरगाह, निर्यात सवद्धन' आदि नए अध्याय पचवर्षीय-योजनाओ के सदर्भ म लिखे गये हैं। राजस्थान से सम्बन्धित तीन नए अध्याय और जोड दिए गये हैं।

पुस्तक मे सभी मानचित्र नए दिये गये हैं। सामग्री के साथ पचवर्षीय योज नाओ से सम्बन्धित कुछ रेखाचित्र भी दिये गये हैं।

प्रो० डी० पी० एस० माथुर (चूरू), प्रो० आर० एस० अग्रवाल (काला डेरा), प्रो० आर० एन० ठाकुर (श्री गगानगर), प्रो० पुष्कर नारायन माथुर (अजमेर) एव प्रो० नुमेरच द जैन (बीकानेर) के हम विशेष रूप से आभारी हैं जिन्होंने प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप स पुस्तक के इस सस्करण के सशोधन मे उपयोगी परामर्श दिए हैं।

श्री राजेन्द्रकुमार जैन, प्रोपाइटर, नवयुग साहित्य सदन, आगरा की लगन एव कार्य-क्मठता प्रशसनीय है जो एक माह की अल्प अवधि मे कठोर परिश्रम करके पुस्तक को इस रूप म लाए हैं।

पुस्तक को और अधिक उपयोगी बनाने के लिए विज्ञ गुरुजनों एव विद्यार्थियो द्वारा प्रेषित सुझावो का सदव की भाँति स्वागत किया जायगा।

—लेखक द्वय

अनुक्रमणिका

I

मनुष्य तथा वातावरण

विषय प्रवेश—

मनुष्य अपने वातावरण से प्रेरित होकर कार्य करता है, अतः मनुष्य पर वातावरण का बहुत प्रभाव पड़ता है, यहाँ तक कि व्यक्तित्व को व्यक्ति की वातावरण के प्रति प्रतिक्रिया तक कह दिया गया है। मनुष्य के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को वह वातावरण पूर्ण रूप से नियंत्रित करता है जिसमें वह निवास करता है। '**किसी देश के निवासियों के रहन-सहन के ढंग केवल संयोग की बात नहीं होती, वरन् वहां के वातावरण की देन एवं परिणाम है।**"

विभिन्न देशों के मनुष्यों का रहन सहन, स्वभाव खाना पीना, पहनावा आदि बहुत अंशों तक वहाँ के भौगोलिक वातावरण पर ही निर्भर होता है। प्रत्येक देश पूर्ण स्वावलम्बी होना चाहता है किन्तु हो नहीं पाता क्योंकि स्पष्ट है कि किसी देश ने कृषि के क्षेत्र में उन्नति की है, तो किसी देश ने औद्योगिक क्षेत्र में। भारत कृषि प्रधान देश है तो इङ्गलैण्ड औद्योगिक और अफ्रीका पिछड़ा हुआ। इसका कारण क्या है? क्या अफ्रीका उन्नति नहीं करना चाहता? क्या इङ्गलैण्ड कृषि के क्षेत्र में भी स्वावलम्बी नहीं होना चाहता? परन्तु भौगोलिक वातावरण का नियन्त्रण है। हम देखते हैं कि विश्व के विभिन्न भागों में बहादुर, डरपोक, सुस्त, परिश्रमी हृष्ट पुष्ट कमजोर सभ्य तथा असभ्य मनुष्य पाये जाते हैं। इसका कारण भौगोलिक वातावरण ही है। अतः स्पष्ट है कि **मनुष्य अपनी भौगोलिक परिस्थिति की उपज है।'** इस कथन की पुष्टि में **मिस सेम्पल** के ये विचार महत्त्वपूर्ण है, मानव पृथ्वी के धरातल की उपज है। इसका केवल यही तात्पर्य नहीं कि वह पृथ्वी का शिशु है उसकी धूल की धूल है वरन सत्य तो यह है कि उसी ने उसका लालन पालन किया, उसको खिलाया उसको कार्य करना सिखाया, उसके विचार तथा भाव आदि उत्पन्न किये हैं उसके सम्मुख कुछ कठिनाइयाँ उपस्थित की हैं जिसके कारण उसके शरीर तथा मस्तिष्क का विकास हुआ। वास्तव में सच तो यह है कि वह (वातावरण) उसकी हड्डी पसलियों, स्नायुओं, मस्तिष्क और आत्मा में रम गई है। एक विद्वान ने कहा है कि मानव मोम के पुतले के समान है जिस पर वातावरण का पूर्ण प्रभाव पड़ता है और वह उसी के अनुसार अपने को ढाल लेता है। वास्तव में मनुष्य अपने वातावरण से निर्देशित होता है।

वातावरण

साधारण शब्दों में वातावरण उस सबको कहते हैं जो किसी वस्तु को निकट से घेरे रहता है तथा उसे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है।[1]

अध्ययन की सुविधा हेतु वातावरण को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—*(I) भौगोलिक और (II) अभौगोलिक अथवा कृत्रिम अथवा मानवीय।*

भौगोलिक वातावरण का अर्थ एवं महत्त्व—

भौगोलिक वातावरण में वे सब सांसारिक अवस्थाएं और घटनाएं सम्मिलित हैं जिन्हें मनुष्य ने उत्पन्न नहीं किया है और जो मनुष्य की उपस्थिति और क्रिया से स्वतन्त्र अपने आप सहज रूप से परिवर्तित होती हैं। दूसरे शब्दों में, यदि हम *मनुष्य के वातावरण को लें और उसमें से उन सब साधनों को निकाल दें जिन्हें कि* मनुष्य ने बनाया या परिवर्तित किया है, तो हमारे पास स्थूल रूप से जो बच जाता है, वही भौगोलिक वातावरण है। इसकी रचना नैसर्गिक रूप से स्वतः ही होती है।

डविस[2] के अनुसार भौगोलिक वातावरण के अन्तर्गत 'भूमि की रचना और उसके विभिन्न स्वरूप—पहाड़ मैदान पठार जल विस्तार मिट्टी का स्वभाव (उर्वरा शक्ति व उपजाऊपन) क्षेत्र विशेष की स्थिति उसकी जलवायु वनस्पति, जीव जन्तु खनिज पदार्थ और सभी सौर शक्तियां सम्मिलित हैं। इसी को अधिक स्पष्ट हम इस प्रकार कर सकते हैं—प्राकृतिक जलवायु तापक्रम भूमि, भूमि की बनावट जल का वितरण और उसकी दशाएं पशु पक्षी और पेड़ पौधे ऋतुओं और भौगोलिक भौतिक प्रक्रियाओं में प्राकृतिक परिवर्तन भूकम्प तूफान, समुद्र आदि जहाँ तक मनुष्य के बिना प्रयत्न के रहते और बदलते हैं—ऐसी ही वस्तुएं और घटनाएं भौगोलिक वातावरण के अन्तर्गत सम्मिलित हैं। इसके विपरीत वे समस्त अवस्थाएं और घटनाएं, जिनकी उपस्थिति और परिवर्तन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में किसी भी प्रकार मनुष्य की उपस्थिति तथा उसकी क्रिया का परिणाम हैं अभौगोलिक अथवा कृत्रिम अथवा मानवीय वातावरण के अन्तर्गत सम्मिलित हैं शासन प्रबन्ध धर्म जनसंख्या का वितरण आदि इसके क्षेत्र में हैं। मानव क्रियाओं का कोई भी अंग ऐसा नहीं, जिसकी कि भौगोलिक कारणों द्वारा विवेचना न की जा सके। मैकाइवर व पेज[3] ने उचित ही लिखा है कि जीवन और वातावरण एक दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं और उन्हें पृथक नहीं किया जा सकता। एक विद्वान ने तो यहाँ तक कह दिया है कि 'किसी देश के आर्थिक विकास को समझने के लिये उसकी भौगोलिक परिस्थिति का ज्ञान होना उतना ही आवश्यक है जितना कि गणित करने के पहले अंकों का ज्ञान होना।

---

1 Gisbert P *Fundamentals of Sociology*

2 Davis *Man and Earth*

3 MacIver and Page *Society* p 74

(1) प्राकृतिक वातावरण (Physical Environment)—

(1) स्थिति—प्रो० हंटिंगटन तथा कुशिंग ने कहा है, 'पृथ्वी के गोल पर स्थिति ही भूगोल की वास्तविक कुंजी है।[1]

देश की स्थिति वहाँ के मनुष्यों के जीवन पर बहुत प्रभाव डालती है। जो देश समुद्र के निकट होते है वहाँ विशेषत किनारे के मनुष्यो का मुख्य पेशा प्राय मछली पकडना होता है। इंगलैण्ड और जापान की स्थिति द्वीपवर्ती (Insular) है, क्योंकि उनके चारो ओर समुद्र है और भारत की स्थिति प्रायद्वीपवर्ती (Peninsular) है क्योंकि भारत के तीन ओर समुद्र है। अत इंगलैण्ड व जापान देशों के समुद्र किनारों के निकट रहने वाले मनुष्यो म स अधिकाश का व्यवसाय मछली पकडना है। इंगलैण्ड म कुल जनसख्या का लगभग 10 प्रतिशत और जापान में 20 प्रतिशत मछली पकडने के व्यवसाय मे लगा हुआ है, किन्तु भारत म अपेक्षाकृत कम व्यक्ति इस व्यवसाय म सलग्न हैं। इसका कारण यह है कि इंगलैण्ड व जापान देशो म खाद्यान्नो की कमी होने के कारण मनुष्यो का झुकाव इस ओर होना स्वाभाविक ही है। साथ ही, यदि किसी देश की स्थिति विश्व के व्यापारिक मार्गों पर है तो उस देश का विदेशी व्यापार भी शनै शनै विकसित होने लगता है, किन्तु जो देश समुद्र से अधिक दूर होते है अथवा व्यापारिक मार्गों से दूर होते हैं, उनके विकास म अधिक कठिनाई होती है। इंगलैण्ड की स्थिति इतनी अच्छी होने के कारण ही वह इतना उन्नतिशील हो गया है। भारत, पूर्वी गोलार्द्ध के प्राय मध्य मे होने, समुद्र की निकटता और व्यापारिक मार्ग पर होने के कारण एशिया का प्रमुख देश बन रहा है। कुमारी सेम्पल के शब्दो म, 'स्थिति की तुलना उस तराजू से की जा सकती है जिसका एक पलडा जलवायु और उससे सम्बन्धित वनस्पति प्रदर्शित करता है तथा दूसरा पलडा उस देश की राजनीतिक स्थिति एव सभ्यता को बताता है।'

(2) समुद्र की तट रेखा—समुद्र की तट रेखा का अपना विशेष महत्त्व होता है। समुद्र-तट प्राय तीन प्रकार का होता है—सीधा-सपाट, साधारण कटा-फटा और अधिक कटा फटा। जिन देशों का समुद्र-तट अधिक कटा फटा होता है वहा श्रेष्ठ पोताश्रय एव बन्दरगाह स्थापित हो जाते हैं। इङ्गलण्ड एव जापान के समुद्र तट कटे फटे होने के कारण वहा का कोई भी भाग समुद्र स 320 Kms स अधिक दूर नहीं है और वहा अच्छे बन्दरगाह हैं जो व्यापारिक विकास म सहायक हुए हैं। समुद्र से अधिक सम्पर्क होने के कारण वहाँ श्रेष्ठ नाविक हैं और साथ ही उनका स्वभाव भी साहसी उत्साही तथा परिश्रमी हो जाता है। तटीय किनार सुविधाजनक होने के कारण वहाँ जलयान उद्योग विकसित हो जाता है। दूसरी ओर भारत म समुद्र-तट के साधारण कटा होने के कारण श्रेष्ठ बन्दरगाहो की कमी है। यद्यपि हमारा समुद्र-तट लगभग ५,६८६ Kms लम्बा है लेकिन फिर भी कम बन्दरगाह

---

1 Huntington & Cushing *Principles of Human Geography*

होने का प्रमुख कारण यहाँ के समुद्र तट की बनावट है। इङ्गलैण्ड व जापान मे जलयान उद्योग पर्याप्त विकसित हैं किन्तु भारत म नही।

(3) धरातल की बनावट (Relief)—धरातल की बनावट मनुष्य के जीवन, व्यवसाय एव स्वभाव को बहुत प्रभावित करती है। आवागमन के मार्गो के निर्धारण मे तो इसका पूरा ही नियंत्रण होता है।

(i) पवत—पवतीय क्षेत्रो म अधिक आर्थिक विकास नही हो सकता है। इन भागो म जनसंख्या कम होती है, उद्योग धन्धे प्रगति नही कर सकते, कृषि म बहुत कठिनाई होती है सीढीदार खेतो पर खेती करते हैं भाग बहुत कम और पगडण्डीमात्र ही होते है पशु चराना मुख्य पेशा होता है। ई० सम्पिल के अनुसार "पर्वतीय भाग के मनुष्य निरन्तर परिस्थितियो से लडते रहते हैं तथा इस कारण वे बडे वीर, साहसी, परिश्रमी, उद्योगी, ईमानदार और मितव्ययी होते हैं।"[1] हिमालय प्रदेश म जनसंख्या बहुत कम है। हिमालय रॉकी (उत्तरी अमरीका), एण्डीज (दक्षिणी अमरीका) आल्प्स पवत (इटली) और मध्य एशिया के पवतीय भागो म मनुष्य नहीं रहते हैं।

(ii) पठार—पठारी भागो म खनिज पदाथ वन व पशु पाये जाने के कारण किन्तु खाद्य पदार्थों के अभाव कृषि म कठिनता आवागमन के मार्गों की कमी के कारण, कम लोग निवास करते हैं।

(iii) मदान—मदानी भागो म जनसंख्या घनी होती है। यहाँ के मनुष्यो का स्वास्थ्य पहाडी क्षेत्रो के मनुष्यो के समान नही होता है। यहा के मनुष्यो का मुख्य धन्धा प्राय खेती करना होता है। यातायात के साधनो का विकास हो जाता है और आवागमन के मार्गों का जाल सा बिछ जाता है। यहाँ मनुष्यो का जीवन स्तर अपेक्षाकृत ऊंचा होता है। उद्योग धन्धे व व्यापार भी खूब विकसित हो जाते हैं। भारत म गगा यमुना का मदान अधिक घना बसा हुआ है। रेल तथा अन्य मार्गों का जाल बिछा हुआ है। उद्योग धन्धे भी काफी हैं। पहाडी क्षेत्रो के मनुष्यो की अपेक्षा बगाल के मनुष्य मजबूत नहीं होते हैं।

(iv) नदियाँ—नदियाँ भी मनुष्य के जीवन को प्रभावित करती है। नदियों के किनारे प्राचीनकाल म नगर बस जाया करते थे क्योकि उस समय नदियाँ आवागमन के मार्गों म प्रमुख स्थान लिए हुए थीं। कम वर्षा वाले भागो म नदियो के निकटवर्ती क्षेत्रो म मनुष्य का व्यवसाय कृषि हो जाना है क्योकि सिंचाई के लिए जल उपलब्ध हो जाता है। इसके अतिरिक्त, आजकल भी नदियो का महत्त्व अधिक बढा ही है क्योकि नदियो को बाँधकर जल विद्युत का निर्माण करते हैं और सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध करते हैं।

(v) रेगिस्तान—रेगिस्तान भी मनुष्य के व्यवसाय स्वभाव आदि का निर्धा

1 E Sample *Influence of Geographic Environment*, p 131

ग्ति करते हैं। रेगिस्तान के लोग खानाबदोश होते हैं, क्योंकि वे एक स्थान से दूसरे स्थान को पानी की खोज में घूमा करते हैं। इसके साथ ही यहा के मनुष्य लूट मार करने में भी सकोच नही करते हैं। इनके पहनावे के कपड़े प्राय ढीले ही होते हैं।

(4) प्राकृतिक वनस्पति—जलवायु तथा भू रचना पर वनस्पति निभर होती है। अधिक वर्षा और गर्म प्रदेशों में घनी वनस्पति पाई जाती है। साधारण वर्षा वाले भागो में वनस्पति भी कम घनी होती है। प्राकृतिक वनस्पति भी मनुष्य के जीवन को प्रभावित करती है। वनो मे रहने वाले निवासी लड़ाकू, साहसी तथा असभ्य होते हैं। इन लोगो का मुख्य पेशा शिकार करना होता है। अफ्रीका में कांगो नदी के बेसिन और दक्षिणी अमरीका में अमजन नदी के बेसिन में आज भी घने वन पाये जाते हैं। धीरे धीरे वनो को साफ करके भूमि को खेती व अन्य कामों में उपयोग किया गया, किन्तु पहाड़ी व पठारी क्षेत्रों में भी घने वन हैं। वनो के ऊपर अनेक उद्योग धन्धे निभर रहते हैं।

(5) खनिज सम्पत्ति—खनिज सम्पत्ति भी मनुष्य के जीवन को प्रभावित किये बिना नही रहती है। जिन स्थानो पर खनिज पदार्थ होते हैं वहाँ अनेक असुविधाओं के होते हुए भी मनुष्य पहुच जाता है और इस व्यवसाय में लग जाता है। दक्षिणी अफ्रीका में हीरे की खानो, आस्ट्रेलिया में कालगूर्ली और कूलगार्डी की सोने की खानो ने दूर दूर से अनेक कठिनाइयों के होते हुए भी, मनुष्यों को आकर्षित किया। इंगलैण्ड व संयुक्त राज्य अमरीका की उन्नति के कारणों में खनिज सम्पत्ति का योग भी है। भारत में भी बगाल तथा बिहार में लोहा व कोयला अधिक मिलने के कारण, वह औद्योगिक क्षेत्र हो गया है। भारत के रानीगंज व झरिया, इंगलैण्ड के दक्षिणी नार्थम्बरलैण्ड? व उत्तरी स्टैफोर्डशायर और जापान में सेखालीन चिकूहो आदि खनिज क्षेत्रों में मनुष्यों का प्रमुख व्यवसाय खानें खोदना ही है।

(6) जलवायु—प्रो० केस एवं बर्गस्माक के शब्दों में, 'जलवायु हमारे भौतिक वातावरण का अनिश्चित उपक्रम है।'[1] वातावरण का कोई भाग मनुष्य पर इतना प्रभाव नही डालता जितना कि जलवायु। जलवायु को प्राकृतिक वातावरण का सबसे महत्वशील एवं शक्तिशाली तत्त्व माना गया है। किसी देश की प्राकृतिक वनस्पति, कृषि उद्योग धन्धे, व्यवसाय, जनसंख्या, रहन सहन आवागमन के मार्ग तथा साधन आदि का जलवायु पर बहुत प्रभाव होता है। मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं पर जलवायु का ही सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। मनुष्य की विभिन्न आर्थिक क्रियाओं पर जलवायु का प्रभाव नीचे बताया गया है —

(1) जलवायु और वनस्पति—वनस्पति पूर्ण रूप से जलवायु पर ही निभर होती है। अधिक वर्षा और गर्म भागों में घने वन होते हैं। उदाहरण के लिए विषुवतरेखीय जलवायु वाले प्रदेशों में बहुत ही घने वन हैं। शुष्क जलवायु वाले

---

1 **Case and Bergsmark** *College Geography* p 37

भागा मे काँटेदार झाड़ियाँ मिलती हैं। ध्रुवीय प्रदेशो म केवल बफ ही जमी रहती है और वहाँ कोई पौधा नही पनपता है, केवल काई जमी रहती है। छोटा नागपुर के पठार पर घनी वनस्पति पाई जाती है जबकि राजस्थान के पश्चिमी भाग म दूर-दूर छोटी काँटेदार झाड़ियाँ।

(ii) जलवायु और कृषि—कृषि की वस्तुओ की उपज पर जलवायु का पूण अकुश होता है। विभिन्न वस्तुआ क उत्पादन को जलवायु ही नियन्त्रित करती है। 15 C स 26 C और 25 Cms से 100 Cms तक के वर्षा वाल भागा मे ही गहूँ उत्पन्न होता है। जिन भागो मे 120 Cms अथवा अधिक वर्षा होती है वहाँ गेहूँ की खेती नही हो सकती है। चावल की खती के लिए दूसरी किस्म की जलवायु की आवश्यकता होती है। बहुत ठडी और बहुत गम तथा शुष्क जलवायु कृषि के लिए अनुपयुक्त होती है।

(iii) जलवायु और प्रवास—विभिन्न जलवायु वाले प्रदेशा म मनुष्य प्रवास (migrate) करने मे जरा कठिनाई प्रतीत करता है, किन्तु लगभग समान जलवायु वाले भागा म मनुष्य आसानी से प्रभावित हो जाता है। उदाहरण के लिए कनाडा व सयुक्त राज्य अमेरिका मे इङ्गलैंड के लोग जाकर बसने म असुविधा अनुभव नहीं करते, किन्तु आस्ट्रेलिया या अफ्रीका म इङ्गलड के मनुष्य असुविधा अनुभव करते हैं।

(iv) जलवायु और जनसख्या— जलवायु एक तानाशाह (Dictator) की भाँति यह निर्धारित करती है कि विश्व के किन भागो मे मनुष्य निवास करें।" अत्यन्त गम और अत्यन्त ठण्डे प्रदेशो म मनुष्य बहुत कम रहते हैं किन्तु शीतोष्ण और समशीतोष्ण जलवायु मे बहुत अधिक लोग रहते हैं। विश्व की लगभग आधी जनसख्या एशिया के दक्षिणी तथा पूर्वी भागा मे ही रहती है। चीन और भारत म अधिक जनसख्या होने का प्रमुख कारण जलवायु है। ब्रानमेयर ने आँकडा एव तालिकाओ द्वारा सिद्ध किया है कि प्राय 12 C तापक्रम, 100 से 125 Cms वर्षा तथा लगभग 100 मीटर से कम ऊँचाई वाले स्थान ही सबस घने बसे हुए हैं।

(v) जलवायु और जन्म—ओटिंगटन तथा लिवेन्पूर आदि विद्वानों ने विभिन्न यूरोपीय देशा के आँकडे एकत्रित करके, उन देशो की जन्म मृत्यु और विवाह-दरो म एक नियन्त्रित मौसमी हर फेर दिखाने का प्रयत्न किया है। उनके अनुसार फरवरी-माच और सितम्बर-अक्टूबर मे सबसे अधिक जन्म होते हैं। इसी प्रकार दिसम्बर-जनवरी और मई-जुलाई म सबमे अधिक गर्भाधान होते हैं। आदिकालीन समाजा और गर-पालतू पशुओ म गर्भाधान या जन्म की क्रियाओ म एक मौसमी नियमितता देखी जाती है।

(vi) जलवायु और मकान—जिन भागो की जलवायु गम होती है वहाँ मकान खुल हुए व खिडकीदार बनाते हैं बरामदे व आँगन रख जाते हैं। ठण्डी जलवायु वाल भागा म कमरे सटाकर बनाते हैं और खुले हुए बरामदे कम रखते हैं।

अधिक वर्षा वाले भागों में छतें प्राय ढालू रखते हैं ताकि पानी सुगमता से बह जावे। मरुस्थलों में गर्म जलवायु के कारण मनुष्य तम्बू में रहते हैं।

(vii) जलवायु और वस्त्र—ठण्डे जलवायु में लोग कम हुए कपड़े अधिक पसन्द करते हैं। वहाँ ऊनी कपड़े तथा जानवरों की खालें अधिक प्रिय वस्त्र होते हैं। किन्तु गर्म प्रदेशों में मनुष्य सूती अथवा रेशमी वस्त्र ही पहनते हैं और साथ ही ढीले वस्त्र अधिक पसन्द करते हैं।

(viii) जलवायु और भोजन—जलवायु मनुष्य के भोजन को भी प्रभावित किये बिना नहीं रहता। जिन प्रदेशों का जलवायु ठण्डा है वहाँ के मनुष्य प्राय माँसाहारी होते हैं। ऐसे प्रदेशों में मनुष्य माँस, मछली, अण्डे, चाय, कॉफी आदि गर्म पदार्थ ही अधिक पसन्द करते हैं। इसके विपरीत गर्म जलवायु वाले भागों में मनुष्य की रुचि फल, दूध, दही, शर्बत आदि की ओर विशेष रूप से होती है।

(ix) जलवायु और मार्ग—आवागमन के मार्गों को भी जलवायु नियंत्रित करती है। ध्रुवों में जलवायु के कारण ही बर्फ जमी रहती है, अतः वहाँ पक्की सड़कें अथवा पहिएदार गाड़ियों का सर्वथा अभाव है। जाड़ों के दिनों में अनेक दर्रे तथा समुद्र जम जाते हैं जिसके फलस्वरूप आवागमन के मार्ग बन्द हो जाते हैं। रेगिस्तानी भागों में भी सड़कें नहीं बन सकती, रेलों का उपयोग नहीं हो सकता, केवल ऊँट ही यातायात का साधन होता है। अधिक वर्षा वाले भागों में कच्ची सड़कें व्यर्थ हो जाती हैं व कभी-कभी रेल की पटरियाँ भी टूट जाती हैं। आँधी व अधिक वर्षा में हवाई जहाज नहीं उड़ते हैं। पहले पानी के जहाज हवा के प्रभाव से ही चलते थे। अतः जलवायु मार्गों तथा यातायात के साधनों को प्रभावित करती है।

(x) जलवायु और उद्योग—वैसे तो जलवायु प्रत्येक उद्योग को किसी न किसी रूप में प्रभावित करती है किन्तु कुछ उद्योग—विशेषतः सूती वस्त्र उद्योग फिल्म उद्योग, कृषि उद्योग, फूल उद्योग आदि—जलवायु पर निर्भर होते हैं। मैनचेस्टर, बम्बई तथा अहमदाबाद में सूती वस्त्र उद्योग कैलिफोर्निया में फिल्म उद्योग जलवायु के कारण ही स्थापित किये गये थे।

(xi) जलवायु और व्यापार—जलवायु का व्यापार पर भी अधिक प्रभाव पड़ता है। यह हम जानते हैं कि जलवायु पर कृषि पदार्थ, वन पदार्थ और पशु-पदार्थ अवलम्बित रहते हैं। अतः अनुकूल जलवायु में ये वस्तुएँ प्रचुर मात्रा में होती हैं और अन्य क्षेत्रों में इनकी कमी रहती है। इस तरह प्रचुरता वाले क्षेत्रों से कमी वाले क्षेत्रों में वस्तुओं का निर्यात कर दिया जाता है।

(xii) जलवायु और शारीरिक तथा मानसिक विकास—मनुष्य के शारीरिक और मानसिक विकास पर भी जलवायु प्रभाव डालती है। ठण्डे प्रदेशों के मनुष्यों की कार्यक्षमता अधिक होती है और गर्म प्रदेशों के मनुष्यों की कम। उष्ण, आर्द्र तथा ध्रुवी भागों में प्राय असभ्य मनुष्य मिलते हैं। सभ्य, स्वस्थ और उन्नतिशील मनुष्य प्राय साधारण गर्म व समशीतोष्ण भाग में पाये जाते हैं।

मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक शक्ति समशीतोष्ण भागों में सबसे अधिक अच्छी रहती है। गर्म भागों में कुछ कम तथा ठण्डे और आर्द्र भागों में सबसे कम। हंटिंग्टन ने भी बहुत पहले जलवायु विज्ञान शोध कर इस सम्बन्ध में तीन निष्कर्ष निकाले थे। प्रथम, मृत्यु-दर और तापक्रम के वक्र रेखाएं (curves) साथ-साथ चलते हैं। द्वितीय औसत से तापक्रम और अधिक मृत्यु का प्रत्यक्ष सम्बन्ध है, तृतीय जाड़े में औसत से अधिक तापक्रम मृत्युओं को घटा तथा गर्मियों में बढ़ा देते हैं। ई० जी० डेक्सटर के सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए अमेरिका के प्रो० सी० ई० हंटिंग्टन ने अपने तुलनात्मक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला कि मनुष्य की शारीरिक शक्ति 15 से 18 C तक के तापक्रम में अच्छी रहती है परन्तु मस्तिष्क उस समय अच्छा काम करता है जबकि वायु का तापक्रम 3 C हो। भारत में पंजाब, हरियाणा, कश्मीर, पश्चिमी उत्तर प्रदेश की जलवायु शारीरिक कार्यों के लिए अच्छी है जबकि पश्चिमी बंगाल, महाराष्ट्र व गुजरात की जलवायु कला, साहित्य व अन्य मानसिक कार्यों के लिए अच्छी है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि किसी प्रदेश की जलवायु का वहाँ के निवासियों के आर्थिक जीवन को निर्धारित एवं प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भाग होता है।

(II) कृत्रिम वातावरण (Non Physical Environment)—

मनुष्य के जीवन को भौगोलिक अथवा प्राकृतिक वातावरण तो प्रभावित करता ही है किन्तु अभौगोलिक अथवा कृत्रिम वातावरण भी अपना विशेष स्थान रखता है।

(1) धर्म—मनुष्य के आर्थिक जीवन को उसका धर्म भी प्रभावित करता है। एक ओर तो धर्म कुछ धन्धों के लिए हतोत्साहित करता है और दूसरी ओर कुछ धन्धों को करने के लिए उत्साहित करता है। विश्व में चार मुख्य धर्म हैं— हिन्दू, बौद्ध, इस्लाम और ईसाई।

हिन्दू धर्म में अनेक जातियाँ हैं जो कि विशेष कार्य ही करती हैं जैसे— कपड़ों की सिलाई का काम दर्जी। इसी प्रकार लुहार, सुनार, बढ़ई आदि भी हैं। किन्तु आजकल अन्य लोग भी ये काम करने लगे हैं। बौद्ध धर्म में अहिंसा का सिद्धान्त होने से पशु वध नहीं करते, अतः जापान, बर्मा, लंका आदि देशों में जहाँ बौद्ध धर्म अधिक प्रचलित है पशु सम्बन्धी व्यवसाय विकसित नहीं है। इस्लाम धर्म में ब्याज लेने तथा मद्यपान पर निषेध होने के कारण अधिकोषण (Banking) तथा शराब तैयार करने के धन्धे उस धर्म में अविकसित हैं किन्तु ईसाई धर्म में धार्मिक प्रतिबन्ध कम होने के कारण ईसाई जातियाँ आर्थिक दृष्टि से अधिक विकसित हैं।

(2) शासन-प्रबन्ध—मनुष्यों की आर्थिक क्रियाओं को शासन प्रबन्ध भी प्रभावित करता है। शान्तिकाल में नये नये आविष्कार किये जाते हैं और उद्योग धन्धों का विकास होता है। इसके अतिरिक्त अपने देश के उद्योगों का संरक्षण देना तथा अन्य नीतियों से देश के निवासियों का आर्थिक जीवन प्रभावित होता है। उदा

हरण के लिए भारत मे 1947 से पूव अँग्रेजो का शासन हान क कारण देश का विकास न हा पाया और अभी दश का स्वत त्र हुए अधिक समय नही हुआ है, किन्तु फिर भी हमारा दश द्रुतगति स प्रगति कर रहा है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 "The mode of life in any given region is not an accident but is a product of environment Expand the statement)
Discuss with reference to the Valley of the Ganga the influence of environment on the economic activities of the inhabitants of this valley

2 'किसी भी देश का रहन महन सयाग की-वात नही, वरन उसकी भौगोलिक परिस्थितिया का परिणाम होता है।" इस कथन की पुष्टि भारतीय उदाहरणा म कीजिए। (T D C 1960)

3 'मनुष्य के चरित्र, पेशे व जीवन पर भौगालिक परिस्थितियो का पूरा प्रभाव पडता है।' अपन देश का उदाहरण दकर इस कथन की पुष्टि कीजिए। (T D C 1965)

4 'किसी भी देश के मनुष्यो का रहन सहन, खान पान और वेप भूपा सयोग की वात नही है वरन् भौगोलिक परिस्थितियो का परिणाम है।' इस कथन की पुष्टि भारत का उदाहरण दकर कीजिए। (T D C Supp, 1965)

5 'मनुष्य के आर्थिक जीवन पर जलवायु का बहुत महत्वपूर्ण प्रभाव पडता है। यह कथन भारत क सम्बन्ध म कहा तक सत्य है? (T D C 1966)

6 किसी भी देश के मनुष्यो का रहन सहन खान-पान और वेप भूपा सयोग की बात नही वरन् भौगोलिक परिस्थितियो का परिणाम है।" इस कथन की पुष्टि भारत का उदाहरण दकर कीजिए। (T D C 1967)

7 भारत के आर्थिक विकास पर भौगोलिक वातावरण क प्रभाव का विवेचन कीजिए। (T D C 1968)

8 प्राकृतिक वातावरण से मनुष्य किस प्रकार सम्बन्धित है? अपना दृष्टिकोण समझाने के लिए कुछ भारतीय उदाहरण प्रस्तुत करिए। (T D C 1970)

9 किसी भी देश के मनुष्यो का रहन-सहन खान पान और वेश भूषा सयोग की बात नही वरन् भौगोलिक परिस्थितियो का परिणाम है।' इस कथन की पुष्टि भारत का उदाहरण देकर कीजिए। (T D C 1971)

2

भारतीय अर्थ-व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ

(Basic Features of Indian Economy)

प्रारम्भिक—

प्रत्येक देश की अर्थ-व्यवस्था में अपनी कुछ विशेषताएँ[1] *पाई जाती हैं जिनका* प्रभाव देश के आर्थिक विकास पर बहुत अधिक पड़ता है। प्रत्येक देश की आर्थिक व्यवस्था में सदैव परिवर्तन होते रहते हैं। प्रायः ये परिवर्तन इतने क्रमिक एवं स्वाभाविक होते हैं कि हमें उनका विशेष आभास नहीं होता। किन्तु कभी-कभी शासन एवं समाज द्वारा कुछ परिवर्तन, जान-बूझकर इतनी शीघ्रता से किये जाते हैं कि हमारे देखते-देखते ही थोड़े समय में अर्थ-व्यवस्था में नई विशेषताएँ उत्पन्न हो जाती हैं। भारत का अपना एक लम्बा इतिहास है। अंग्रेजों के पदार्पण करने के पूर्व भारत की आर्थिक-व्यवस्था वर्तमान व्यवस्था से नितान्त भिन्न थी। अंग्रेजों के शासन-काल में भारतीय अर्थ-व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए जिनकी छाप भारत की वर्तमान अर्थ व्यवस्था पर देखने को मिलती है।

अंग्रेजी शासन-काल में एक ओर भारत के प्राचीन गौरवमय उद्योग धन्धों का पतन हुआ तो दूसरी ओर यातायात के साधनों में महान् प्रगति हुई और आधुनिक विशालकाय उद्योगों का जन्म हुआ। अतः यह कहा जा सकता है कि एक ओर तो भारत *एक निर्धन और कृषि प्रधान देश है* जिसकी जनसंख्या तीव्रगति से बढ़ती जा रही है जिसके फलस्वरूप निर्धनता, बेरोजगारी, खाद्य-पदार्थों की कमी तथा जीवन का नीचा-स्तर हमारे देश की अर्थ-व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ हैं। किन्तु दूसरी ओर, भारत प्राकृतिक साधनों में सम्पन्न देश है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् से भारत की आर्थिक-व्यवस्था में परिवर्तन हो रहे हैं जो कि अत्यन्त व्यापक एवं प्रभावशाली हैं। पूर्व नियोजित ढंग से हमारी अर्थ-व्यवस्था में परिवर्तन लाया जा रहा है और इसके लिए पंचवर्षीय योजनाओं के

---

1 निर्धारित पाठ्यक्रम में आर्थिक विकास के सिद्धान्त नहीं हैं अतः आर्थिक विकास का अर्थ, आर्थिक विकास के निर्धारक तत्व, आर्थिक विकास की अवस्थाएँ, अल्प एवं अर्द्ध विकसित देश की परिभाषा एवं विशेषताएँ आदि समस्याएँ अन्तर्भुक्त नहीं की गयी हैं।

अन्तर्गत अरबों रुपय व्यय किये जा रहे हैं। जो परिवर्तन किये जा रहे हैं वे मौलिक एवं आधारभूत हैं।

[भारतीय अर्थ-व्यवस्था की विशेषताओं का विश्लेषण करते समय यह स्मरण रखना चाहिए कि भारत अभी पूर्ण विकसित देश नहीं है, वह तो अभी आर्थिक-संक्रान्ति-काल (transitional period) से गुजर रहा है। अतः भारत को अभी विकासशील (developing) देशों की श्रेणी में नहीं गिना जा सकता है। आशा है कि आने वाले भविष्य में भारतीय अर्थ-व्यवस्था अर्द्ध विकसित न रहकर पूर्णरूप से विकसित हो जायगी।]

भारतीय अर्थ-व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ

(1) **कृषि प्रधानता**—भारतीय अर्थ-व्यवस्था की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि भारत प्राचीनकाल से ही कृषि प्रधान देश रहा है। आज भी देश का सबसे प्रमुख व्यवसाय कृषि ही है। देश की जनसंख्या का लगभग 70 प्रतिशत भाग प्रत्यक्ष रूप में कृषि व्यवसाय में लगा हुआ है। फिर भी आश्चर्य की बात है कि कृषि-उद्योग भारत का सबसे पिछड़ा हुआ उद्योग है। इंगलण्ड में 5 प्रतिशत, संयुक्त राज्य अमरीका में 12 प्रतिशत, कनाडा में 13 प्रतिशत और आस्ट्रेलिया में 16 प्रतिशत जनसंख्या कृषि में लगी हुई है, किन्तु कृषि उन्नत अवस्था में है। कृषि की असमर्थता हमारी अर्थ-व्यवस्था की सबसे संकटपूर्ण एवं दुर्भाग्यपूर्ण विशेषता है जिसके फलस्वरूप देश की विदेशी मुद्रा का एक बहुत बड़ा भाग इसमें खप जाता है। भारत में भूमि व मनुष्य का अनुपात (land man ratio) अनुकूल नहीं है।

(2) **प्राकृतिक साधनों का बाहुल्य**—प्रायः कहा जाता है कि भारत एक धनी देश है किन्तु इसमें निर्धन लोग निवास करते हैं। इसका आशय यह है कि यद्यपि भारत में प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता है किन्तु उनका पूर्णरूप से विदोहन नहीं हुआ है। भारत की भौगोलिक स्थिति व जलवायु देश के आर्थिक विकास में बाधक नहीं है। देश में नदियों की प्रचुरता है जिन्होंने उपजाऊ मैदानों का निर्माण किया है। नदियों में लाखों किलोवाट जल विद्युत शक्ति उत्पन्न करने की क्षमता है। खनिज की दृष्टि से भारत की गणना विश्व के चार बड़े देशों में की जा सकती है। भारत का लोहा विश्व में सर्वोत्तम किस्म का माना जाता है, कोयले के अटूट भण्डार हैं, खनिज तेल के छिपे हुए बड़े भण्डार पड़े हुए हैं, मैंगनीज बड़ी मात्रा में उपलब्ध हैं, यूरेनियम, थोरियम, अभ्रक आदि की खानें हैं। देश में विस्तृत वन क्षेत्र हैं, पशु-धन विश्व के प्रत्येक देश से अधिक है। किन्तु भारत आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि किसी देश का आर्थिक विकास वहाँ के प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता पर ही निर्भर नहीं होता वरन् उन उपलब्ध साधनों का पूर्ण उपयोग आवश्यक है, जिसकी भारत में अभी तक कमी रही है।

(3) **मानसून पर निर्भरता**—भारतीय अर्थ-व्यवस्था मानसून पर निर्भर है। मानसून की सफलता पर अन्न की समृद्धि निर्भर है। जिस वर्ष वर्षा नहीं होती, उस

पर देश में उद्योग धंधों, व्यापार तथा कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। राष्ट्रीय आय घट जाती है, अशांति का वातावरण फैल जाता है। मानसून की सफलता पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। इसी कारण भारतीय बजट को 'मानसून का जुआ' कहते हैं।

(4) जनसंख्या की तीव्रगति से वृद्धि—सन 1921 में भारत की जनसंख्या लगभग 25 करोड़ थी किन्तु यह सन् 1971 में लगभग 54 7 करोड़ हो गई। लूप के प्रसिद्ध अमरीकी आविष्कारक डा० जक लिप्पीस ने अपनी भारत-यात्रा की समाप्ति पर (सन 1966 में) कहा कि भारत अगले 10 वर्षों में अपनी जनसंख्या में 20 करोड़ की वृद्धि कर लगा तो भारत या उसका कोई मित्र इतनी बड़ी जनसंख्या को खिलाने में समर्थ नहीं होगा। भारत में जनसंख्या तीव्रगति से बढ़ रही है। इस जनसंख्या को रोजगार की व्यवस्था करना बहुत कठिन कार्य है। अभी तक देश में आर्थिक विकास की गति जनसंख्या की वृद्धि की गति से धीमी रही है। अतः बेरोजगारी, निर्धनता, रहन सहन का नीचा स्तर, पर्याप्त भोजन की कमी, प्रति व्यक्ति आय की कमी आदि समस्याएँ देश के सामने है। देश का विकास तभी हो सकता है जबकि जनसंख्या नियंत्रित रहे।

(5) अर्थव्यवस्था का असन्तुलित विकास—भारत की अर्थ-व्यवस्था का असन्तुलित विकास हुआ है। भारत में कृषि धंधे में लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या लगी हुई है उद्योग धंधों में 10 प्रतिशत से भी कम व्यक्ति लगे हुए है। वाणिज्य, व्यवसाय, यातायात आदि में लगे हुए व्यक्तियों का प्रतिशत तो और भी कम है। अतः देश का सन्तुलित विकास नहीं हुआ।

(6) बेरोजगारी व अर्द्ध रोजगारी—आर्थिक नियोजन होने पर भी बढ़ती हुई बेरोजगारी व अर्द्ध बेरोजगारी भारतीय अर्थव्यवस्था का एक स्थायी अंग हो गया प्रतीत होता है। प्रथम पचवर्षीय योजना के आरम्भ में देश में लगभग 33 लाख व्यक्ति बेरोजगार थे द्वितीय योजना के अन्त में 70 लाख और तृतीय योजना के अन्त में 90 लाख व्यक्ति बेरोजगार थे। इन आंकड़ों से ज्ञात होता है कि देश का आर्थिक नियोजन मे कदाचित नियोजित रूप से बेरोजगारी बढ़ाने की योजना है। चतुर्थ पचवर्षीय योजना के प्रारूप में बतलाया गया है कि अर्द्ध रोजगार प्राप्त व्यक्तियों की संख्या लगभग 1 6 करोड़ है।

(7) प्रति व्यक्ति कम आय—संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा हाल ही में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार 55 राष्ट्रों की प्रति व्यक्ति आय के क्रम में भारत का स्थान बहुत नीचा है। भारत में, अमरीका के प्रति व्यक्ति आय का $\frac{1}{31}$ कनाडा का $\frac{1}{22}$ और इङ्गलण्ड का $\frac{1}{15}$ है। भारत में प्रति व्यक्ति आय न केवल कम है वरन इसमें वृद्धि भी बहुत मंद गति से हो रही है।

(8) असन्तुलित औद्योगिक विकास—प्राकृतिक साधन एवं जनशक्ति की प्रचुरता रहते हुए भी देश का सन्तुलित औद्योगिक विकास अभी तक नहीं हुआ है। यह अंग्रेजी शासन की देन है। बड़े उद्योगों की बात तो दूर रही, हमारे कुटीर एवं

लघु उद्योग भी अभी तक पूर्णत संगठित नहीं हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात 24 वर्षों में भी भारी रासायनिक, भारी मशीन निर्माण व धातु उद्योग आदि अवनत दशा में हैं।

(9) यातायात एवं संवाद वाहन के साधनों का असंतुलित विकास—भारत में जहाँ अधिकांश व्यक्ति गाँव में निवास करते हैं यातायात व संचारवाहन के साधनों का अत्यन्त महत्त्व है। अनेक गाँव तो ऐसे हैं जहाँ कच्ची सड़कों की भी उचित व्यवस्था नहीं है। अनेक स्थानों पर रेल-सड़क प्रतिस्पर्धा दिखाई पड़ती है। यातायात व संवाद वाहन के उपयुक्त विकास न होने के कारण देश के आर्थिक विकास में कठिनाई आई।

(10) असंतुलित विदेशी व्यापार—ऐसा प्रतीत होता है कि विदेशी व्यापार का असंतुलन भारत की अर्थ-व्यवस्था का एक स्थायी अङ्ग बन गया है। विकासशील देश की आरम्भिक अवस्था में यह अवश्यम्भावी है किन्तु इस असंतुलन की एक सीमा भी होनी चाहिए। खाद्यान्नों का आयात इस असंतुलन में और भी अधिक वृद्धि कर देता है।

(11) भूमि तथा सम्पत्ति का असंतुलित वितरण—भारतीय अर्थ व्यवस्था की एक विशेषता यह भी है कि यहाँ भूमि तथा सम्पत्ति का संतुलित वितरण नहीं है। भूमिहीन व्यक्तियों की संख्या बहुत अधिक है। एक ओर धनी वर्ग है तो दूसरी ओर भारी संख्या में शोषित-वर्ग भी विद्यमान है।

(12) गाँवों की अधिकता—भारत में लगभग $5\frac{1}{2}$ लाख गाँव हैं जिनमें देश की लगभग 82.7 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। अतः भारत की अर्थ-व्यवस्था ग्रामीण (Rural) है, शहरी (Urban) नहीं।

(13) पूँजी निर्माण की मन्दगति—भारत के अधिकांश लोगों की औसत आय इतनी कम है कि बचत नहीं हो पाती। ग्रामीण बचत का एक बड़ा भाग तो दबा पड़ा रहता है। बैंक व साख संस्थाओं का उपयुक्त विकास न होने व साधारण वर्ग के लिए विनियोग के उपयुक्त साधन न होने के कारण भारत में पूँजी निर्माण की मन्दगति रही है। भारत सरकार द्वारा यूनिट ट्रस्ट की स्थापना से साधारण-वर्ग को विनियोग के अवसर मिले हैं। देश में ऐसी अन्य संस्थाओं की अत्यन्त आवश्यकता है।

(14) उपभोग का निम्न स्तर—भारत में औसत आय इतनी कम है कि यहाँ के निवासियों का जीवन स्तर निम्न है। एक भारतीय का औसत रूप में 15 मीटर कपड़ा वार्षिक मिल पाता है जबकि अन्य देशों में यह 50 मीटर से 75 मीटर प्रति व्यक्ति वार्षिक है। भारत में प्रति व्यक्ति केवल 2,000 कैलोरी खाद्य मिल पाता है जबकि अन्य विकसित देशों में यह 3,000 कैलोरी से भी अधिक है। इसी प्रकार अन्य वस्तुओं की भी यही दशा है। इन सबका श्रमिकों की कुशलता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

(15) आर्थिक असमानता—भारत की अर्थ व्यवस्था का एक लक्षण है—धन और आय के वितरण में घोर असमानता। यद्यपि हमने समाजवादी समाज के

स्थापना के महत्व को स्वीकार कर लिया है किन्तु फिर भी इस असमानता में वृद्धि होती जा रही है। नगर-क्षेत्र में यह असमानता ग्रामीण क्षेत्रों से अधिक है।

(16) आर्थिक कुचक्रों का जोर—भारतीय अर्थ-व्यवस्था आर्थिक कुचक्रों से गम्भीर प्रभावित रही है। एक पिछड़े हुए देश में आर्थिक कुचक्र चलते रहते हैं जिन्हें तोड़ना बड़ा कठिन होता है। रेगनर नर्कस ने कहा है कि एक निर्धन व्यक्ति के पास खाने के लिए पर्याप्त भोजन नहीं है अतः वह निर्बल रहता है और कम काम करता है। कम काम करने से वह निर्धन रहता है अतः उसे पर्याप्त भोजन नहीं मिलता। इस प्रकार निर्धनता का कारण निर्धनता है अतः एक निर्धन देश इसलिए निर्धन है कि वह निर्धन है।

(17) सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं से प्रभावित—भारत की अर्थ-व्यवस्था को देश की सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं ने बहुत प्रभावित किया है। संयुक्त परिवार प्रणाली, जाति प्रथा, पर्दा प्रथा, धार्मिक अधीनता, छुआछूत, उत्तराधिकार के नियमों ने भारतीय अर्थ-व्यवस्था पर गहरा प्रभाव डाला है। यद्यपि इनके बन्धन शिथिल होते जा रहे हैं, किन्तु इतने शिथिल नहीं हुए हैं जितने देश के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक हैं।

(18) मिश्रित अर्थ व्यवस्था—भारतीय अर्थ-व्यवस्था की एक अपूर्व विशेषता यह है कि इसमें सार्वजनिक (Public) एवं निजी (Private) क्षेत्र का सह अस्तित्व है। सन 1956 की औद्योगिक नीति ने सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों का सीमांकन कर दिया है। इस अर्थ व्यवस्था से पूंजीवादी (capitalistic) अर्थ-व्यवस्था तथा समाजवादी (socialistic) अर्थ व्यवस्था, दोनों के ही लाभ प्राप्त होते हैं।

हमारी राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के धीमे विकास के कारण
(Causes of Slow Growth of Our National Economy)

(1) विदेशी शासन—भारत लम्बी अवधि तक अंग्रेजी शासन में रहा। अंग्रेजों की नीति शोषण की रही अतः देश का आर्थिक विकास द्रुतगति से नहीं हो सका। सन 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात देश की अर्थ-व्यवस्था प्रगति की ओर बढ़ रही है।

(2) कृषि प्रधानता—भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर ही निर्भर है किन्तु रूढ़िवादिता, अज्ञानता व अनेक कारणों से कृषि भी चरम-उन्नत स्तर पर नहीं पहुँच सकी। संतुलित अर्थ व्यवस्था के लिए कृषि व उद्योग दोनों का ही उचित विकास होना चाहिए।

(3) प्राकृतिक प्रकोप—पिछले अनेक वर्षों से भारत के किसी न किसी भाग पर प्राकृतिक प्रकोप रहा है। अकाल पड़ते रहे हैं समय पर और पर्याप्त वर्षा नहीं होती बाढ़ की समस्या रही है। देश के एक भाग में, बल्कि राज्य के एक भाग में बाढ़ सर्वनाश का दृश्य दिखलाती है तो दूसरे भाग में अकाल के कारण त्राहि

चाहि मच जाती है। अत सरकार का ध्यान अथ-व्यवस्था के विकास की ओर से थोडा हट जाता है।

(4) जनसख्या की अधिकता—देश की बढ़ती हुई जन-सख्या हमारी अथ व्यवस्था के विकास को रोक देती है। भारत की जनसख्या सन 1901 मे लगभग 23 6 करोड थी और अब 1971 म लगभग 54 70 करोड थी। अत जनसख्या की तीव्र वृद्धि देश की अथ-व्यवस्था के विकास को गति नही पकडने देती।

(5) प्राकृतिक साधनो का पूण उपयोग नहीं—भारत पर प्रकृति काफी दयालु रही है किन्तु हम उसका पर्याप्त उपयोग नही करते। खनिज पदार्थों की दृष्टि से भारत धनी है किन्तु हम उनका उपयुक्त उपयोग नही करते नदियो का पानी समुद्र म बह जाता है किन्तु हम उसका पूण उपयोग नही करते, भूमि के बडे-बडे टुकडे बेकार पडे हुए है, परन्तु हम उनका कृषि आदि के लिए उपयोग नही करते। अत अथ-व्यवस्था का धीमा विकास होगा ही।

(6) अशिक्षा—देश के लगभग 75 प्रतिशत व्यक्ति अशिक्षित ह। विकास आदि के कार्यों को करना सरकारी दायित्व समझते हैं और हम सरकार को पूरा सहयोग नही द पाते हैं। वास्तविकता तो यह है कि सरकार स भी अधिक हमारा दायित्व है।

(7) वैज्ञानिक एव तकनीकी ज्ञान का अभाव—भारत म उच्चकोटि की वैज्ञानिक एव तकनीकी शिक्षा एव ज्ञान की पर्याप्त उपलब्धि नही है। भारत म वैज्ञानिक शोध पर प्रति व्यक्ति प्रति वष लगभग 15 पसे व्यय किय जाते हैं जबकि सयुक्त राज्य अमरीका म 154 रु० तथा सोवियत रूस म 110 रुपय औसत रूप से प्रति व्यक्ति प्रति वष व्यय किय जात हैं। अत हम प्रगति की कितनी आशा करें।

(8) उद्योगो मे हस्तक्षेप—भारत म उद्योगो के प्रति सरकार की नीति कुछ इस प्रकार की उलझी हुई है कि साधारणत उद्योगपतियो को बहुत अधिक विश्वास नही है अत उद्योग आदि स्थापित करन म सकुचाते हैं और पूजी शर्मीली हो गई है।

(9) कर व्यवस्था—सरकार की कर नीति भी आदश नही है। प्रति वष नय नये कर लगाय जाते हैं और अनक पुरान करो म वृद्धि की जाती है। कर वसूल करन की मशीनरी दोषपूण है जिसमे पूरे करो की वसूली नही हो पाती और करोडो रुपया के करो की चोरी की जाती है।

(10) राजनीतिक दशा—आज देश के अनक नेता, पद लोलुपता एव स्वाथ-सिद्धि की ओर ही कम कर रहे हैं। दल-बन्दी तो देश के लिए अभिशाप ही बनकर रह गये हैं। अत देश प्रगति के पथ पर उतनी गति स नही बढ़ पा रहा है जितना अपेक्षित था।

(11) असन्तुलित वितरण—कृषि व्यवसाय म तो लगभग 70 प्रतिशत जन सख्या लगी हुई है, किन्तु उद्योग धधो म 10 प्रतिशत से भी कम जनसख्या लगी हुई है, अत अथ व्यवस्था का मन्दा विकास हुआ।

(12) निर्धनता—अधिकांश भारतीय निर्धन हैं अतः न तो पर्याप्त मात्रा में पूंजी का निर्माण हो पाता है और न ही उपभोग का उचित स्तर स्थापित हो पाता है।

(13) योजनाओं का उचित निर्माण नहीं—भारत में यद्यपि तीन पंचवर्षीय योजनायें पूरी हो चुकी हैं। चौथी चल रही है किन्तु उनको ठीक प्रकार से नहीं बनाया जाता जिसके फलस्वरूप निर्धारित लक्ष्यों को हम प्रायः प्राप्त नहीं कर पाते हैं परन्तु योजनाओं पर बहुत अधिक व्यय हो जाते हैं।

(14) पड़ोसी देशों द्वारा आक्रमण की आशंका—हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान व चीन, भारत पर कुदृष्टि रखते हैं। दोनों ही भारत पर आक्रमण कर चुके हैं और पुनः आक्रमण कर सकते हैं अतः हमको रक्षा व्यय बहुत अधिक करना पड़ता है और करना भी चाहिए। यदि इन दोनों देशों से देश की सीमाओं को खतरा न हो तो इतना अधिक रक्षा व्यय नहीं करना पड़े और यह धन देश के विकास में उपयोग किया जा सकता है।

"भारत एक धनी देश है जिसमें निर्धन लोग निवास करते हैं"
(India is a rich country inhabited by the poor)

किसी भी देश का धनवान होना इस बात पर निर्भर करता है कि उसके प्राकृतिक साधन कितने सम्पन्न हैं। यदि कोई देश प्राकृतिक साधनों से तो सम्पन्न है किन्तु यदि उनका समुचित उपयोग नहीं किया जाता है तो वहाँ के निवासी निर्धन ही होंगे। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डा० वीरा एन्सटे ने ठीक ही कहा है 'भारत एक धनी देश है, जिसमें निर्धन लोग निवास करते हैं'[1]—इस कथन का तात्पर्य यह है कि भारत एक धनी देश है अर्थात भारत में प्राकृतिक साधन तो प्रचुर मात्रा में हैं किन्तु देश के निवासी निर्धन हैं अर्थात उन साधनों का हम समुचित उपयोग नहीं कर पाये हैं। स्पष्टतः इस कथन के दो भाग हैं—प्रथम भारत एक धनी देश है और द्वितीय यहाँ के निवासी निर्धन हैं। अतः पहले यह स्पष्ट करेंगे कि भारत एक धनी देश है तत्पश्चात यह सिद्ध करेंगे कि यहाँ के निवासी निर्धन हैं।

भारत एक धनी देश है—

(1) विस्तृत देश है—भारत एक विशाल देश है जिसका क्षेत्रफल लगभग 32,68,090 वर्ग Kms है तथा देश उत्तर से दक्षिण तक लगभग 3 220 किलोमीटर तथा पूर्व से पश्चिम तक 2,975 Kms फैला हुआ है। इस प्रकार भारत विश्व का सातवां बड़ा देश है। विस्तार की दृष्टि से भारत का आकार इंगलैण्ड से 14 गुना, जापान से 9 गुना व लंका से 45 गुना बड़ा है। अतः देश में प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता होना स्वाभाविक है।

(2) सभी प्रकार की जलवायु है—भारत के मध्य में कर्क रेखा गुजरती है

1 Anstey V *Economic Development of India* (1937)

अन दक्षिणी भाग्न उष्ण कटिबन्ध मे व उत्तरी भारत समशीतोष्ण कटिबन्ध मे है। भारत म बहुत गम व बहुत ठण्डी जलवायु वाले प्रदेश व अत्यधिक वर्षा व अत्यधिक शुष्क प्रदेश भी हैं। एक विद्वान् के अनुसार भारत मे विश्व की प्रत्येक प्रकार की जलवायु पाई जाती है। इस प्रकार प्रकृति, जलवायु की दृष्टि से भी भारत के प्रति उदार है।

(3) **पर्याप्त नदियाँ**—भारत म अनेक नदिया हैं। उत्तरी भारत की अधिकांश नदियो म वष-पय त जल रहता है। व नदियाँ देश को समृद्ध बनाने म बहुत योग द सकती हैं, यदि हम उनका उचित उपयोग कर। इन नदिया म अपार जल भण्डार है जिनका उपयोग जल विद्युत निर्माण, जल-यातायात व सिंचाई आदि म हो सकता है।

(4) **उपजाऊ मदान**—उत्तरी भारत मे उपजाऊ मैदान है जो नदियो द्वारा निर्मित हैं। इसके अतिरिक्त, भारत मे अनेक प्रकार की मिट्टियाँ पाई जाती हैं। काली मिट्टी का प्रदेश तो आश्चयजनक है जिसमें बिना खाद शताब्दियों तक कपास की खेती हो सकती है, दूसरी ओर थार के रेगिस्तान की मिट्टी भी आश्चयजनक शुष्क है जिसमे पानी को सोख सकने की बहुत क्षमता है किन्तु नमी का रोक रखने की क्षमता बिलकुल नही है। पानी की उपलब्धि पर यह मिट्टी भी बहुत उपजाऊ सिद्ध हुई है।

(5) **वन सम्पत्ति**—भारत क लगभग 23 प्रतिशत क्षेत्र म वनो का हरा आवरण फला हुआ है जिनम अनक प्रकार की वन सम्पत्ति है। लाख उत्पादन म तो भारत का विश्व म एकाधिकार सा ही है।

(6) **चाय उत्पादन अधिक है**—विश्व म सबसे अधिक चाय भारत म ही उत्पन्न होती है। इसके निर्यात से हम विदेशी मुद्रा बहुत प्राप्त होती है।

(7) **जूट-उत्पादन महत्वशील है**—विभाजन के पूव भारत के पास जूट उत्पादन का एकाधिकार ही था। आज भी जूट उत्पादन हो रहा है और नये नय क्षेत्रो म जूट का उत्पादन किया जा रहा है।

(8) **खनिज की दृष्टि से धनी है**—खनिज की दृष्टि से प्रकृति भारत के प्रति काफी उदार है। विश्व का लगभग 25 प्रतिशत लोहा भारत म ही संचित है। यही नही भारतीय लोहा विश्व म सर्वोत्तम श्रेणी का है। भारत म लगभग 21 अरब टन लौह-खनिज होने का अनुमान है। लोह का खानें बिहार उडीसा, मसूर, मद्रास, आंध्र, मध्य प्रदेश व महाराष्ट्र आदि राज्यो मे हैं। मैंगनीज की दृष्टि मे भी भारत का स्थान विश्व म दूसरा अथवा तीसरा है। विश्व के कुल अभ्रक उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत भाग भारत ही उत्पन्न करता है। भारत मे कोयले के अटूट भण्डार हैं। रानीगज व झरिया क क्षत्र बहुत प्रसिद्ध हैं। बंगाल, बिहार आंध्र, मद्रास, राजस्थान आदि कोयला उत्पादक राज्य हैं। इनक अतिरिक्त, टंग्सटन, क्रोमाइट मैंगनेमाइट, इल्मेनाइट, सोने आदि की भी खानें हैं।

(9) पशु धन की प्रचुरता—भारत में, विश्व के अन्य देशों की तुलना में, सबसे अधिक पशु धन है। विश्व में लगभग 30 प्रतिशत पशु भारत में ही पाये जाते हैं।

(10) कृषि की उपज—गन्ना, चाय व मूंगफली के उत्पादन की दृष्टि से भारत का विश्व में प्रथम स्थान है तथा जूट व चावल उत्पादन की दृष्टि से भारत का द्वितीय स्थान है।

(11) बड़ा रेल मार्ग—भारत में लगभग 59340 Kms लम्बा रेलमार्ग है। भारत का रेल मार्ग एशिया में सबसे बड़ा तथा संसार में इसका दूसरा स्थान है।

(12) घनी जनसंख्या—चीन के पश्चात विश्व में सबसे अधिक जनसंख्या भारत में ही है। भारत में इस समय 53.7 करोड़ से भी अधिक जनसंख्या है। इस प्रकार भारत के पास असीम जन शक्ति है।

जिस देश के पास असीम जनशक्ति अपार शक्ति के साधन तथा प्रचुर मात्रा में खनिज सम्पत्ति हो उसे धनी नहीं कहा जायगा तो क्या कहा जायगा। अतः उपरोक्त तथ्य यह सिद्ध करते हैं कि भारत एक धनी देश है।

किन्तु निवासी निर्धन हैं?

यह एक विरोधाभास है कि देश धनी होते हुए भी इसके निवासी निर्धन हैं। इसका क्या कारण है? इस जटिल प्रश्न पर विचार करने से पूर्व यह भी सिद्ध करना आवश्यक है कि भारत के निवासी निर्धन हैं। इसके सम्बन्ध में निम्नलिखित तर्क हैं—

(1) विदेशियों की निगाह में—यद्यपि भारत एक धनी देश है इस तथ्य से हम चाहे प्रसन्न हो लें अथवा गर्व कर किन्तु कुछ विदेशियों की दृष्टि में ऐसा नहीं है, वे हमें निर्धन समझते हैं व कुछ लोग घृणा भी करते हैं। नियम है कि निर्धनों को (यदि वह शक्तिशाली नहीं है तो) चाहे कोई भी व्यक्ति चाहे कुछ कह सकता है एवं चाहे उसे अपमानित कर सकता है। मार्च 1967 को जब अमरीकी-कांग्रेस में राष्ट्रपति जानसन के भारत को खाद्य सहायता देने के अनुरोध पर विचार हो रहा था तब श्री० डब्लू० आर० पोएज ने भारत को भिखारी बताया। यह कहा गया कि 'भारत दान का भिखारी है'। ओह! कितनी लज्जाजनक बात है! इस पर भी हम अमरीका से सहायता के लिए प्रार्थना करते हैं। इससे स्पष्ट है कि भारत एक निर्धन देश है।

(2) प्रति व्यक्ति आय कम है—सरकारी आँकड़ों के अनुसार भारत में प्रति व्यक्ति आय सन 1960-61 में 324 रुपये था जो बढ़ कर सन् 1964-65 में 348 रुपये हो गई, किन्तु सन 1966-67 में यह 465 रुपये हो गई। यह प्रति व्यक्ति आय अन्य देशों की तुलना में अत्यन्त कम है। भारत की प्रति व्यक्ति आय से जापान की प्रति व्यक्ति आय तीन गुनी, इंगलैंड की पन्द्रह गुनी, कनाडा की बीस गुनी व संयुक्त राज्य अमरीका की तीस गुनी अधिक है। अतः भारत के निवासी निर्धन हैं।

(3) पूँजी निर्माण की धीमी गति—भारत म पूँजी निमाण की गति बहुत धीमी है। हमार देश म पूँजी निमाण राष्ट्रीय आय का केवल 8 प्रतिशत है, जबकि पश्चिमी जमनी म यह 24 प्रतिशत, जापान म 19 प्रतिशत, सयुक्त राज्य अमरीका म 18 प्रतिशत, इगलैन्ड मे 16 प्रतिशत और लका म 11 प्रतिशत है।

(4) कम राष्ट्रीय आय—भारत की राष्ट्रीय आय सन 1960 61 म 14,140 करोड रुपय थी जो वप 1968 69 म बढकर 16,544 करोड रुपय हो गई। सन् 1965 66 म सूखा और भारत को मिलन वाली सहायता म आने वाली रुकावटो क कारण 15 900 करोड रुपये ही रह गई। अन्य देशो का तुलना म यह बहुत कम है।

(5) खाद्यान्नो की कमी—एक ओर कहा जाता है कि भारत म बडे उपजाऊ मैदान हैं नदियाँ व उनम जल की बाहुल्यता है हमन अनक नदियो का मान मदन करके उन पर बाँध बना लिए हैं किन्तु दूसरी ओर हमारे देश म खाद्यान्नो की बहुत कमी है। हमको पिछल अनक वर्षो म विदेशी अनाजो पर निभर रहना पड रहा है। देश को पुन आश्वासन दिया गया है कि निकट भविष्य म हम अनाज की दृष्टि से स्वावलम्बी हो जायेंगे।

निम्न तालिका म विभिन्न पचवर्षीय योजनाओ म प्रतिवप अन्न के आयात की मात्रा दिखाई गई है —

अवधि	प्रति वप आयात
प्रथम पचवर्षीय योजना	24 6 लाख टन
द्वितीय पचवर्षीय योजना	34 6 लाख टन
तृतीय पचवर्षीय योजना	50 9 लाख टन
1966 69 तक की अवधि	71 7 लाख टन

(6) अपर्याप्त खाद्यान्न—हमार देशवासियो को औसतरूप स प्रतिदिन मिलन वाली खाद्यान्न की मात्रा को देख सा ज्ञात होगा कि यह बहुत ही कम है, और शायद मनुष्य को जीवित रखन क लिए भी अपर्याप्त है किन्तु प्रकृति न उन्ह जीवित रखा है। निम्न तालिका स यह स्पष्ट होगा—

अवधि	प्रति व्यक्ति प्राप्त अन्न
प्रथम पचवर्षीय योजना	418 ग्राम प्रतिदिन
द्वितीय पचवर्षीय योजना	440 ग्राम प्रतिदिन
तृतीय पचवर्षीय योजना	458 ग्राम प्रतिदिन
1966 69 तक की अवधि	422 ग्राम प्रतिदिन

(7) अपौष्टिक भोजन—अधिकाश भारतीय व्यक्तियो को पौष्टिक भोजन नही मिलता, इसका कारण हमारी निधनता ही है। पौष्टिकता-जाच कमेटी के

अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को 3 000 कलोरीज भोजन, स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिए आवश्यक है, जबकि औसतन भारतीय को केवल 2,000 कलोरीज ही भोजन प्राप्त होता है। यही नहीं, लाखों व्यक्ति अब भी हैं जिन्हें दोनों समय भर पेट भोजन भी नहीं मिल पाता। खराब स्वास्थ्य तथा उनकी निर्धनता, दोनों ने मिलकर एक चक्रव्यूह सा बना लिया प्रतीत होता है—मनुष्य निर्धन हैं इसलिए वे अस्वस्थ रहते हैं और क्योंकि वे अस्वस्थ हैं इसलिए वे और अधिक निर्धन होते जाते हैं।

(8) निवास की कमी—भारत में अधिकांश मनुष्यों के पास स्वयं के रहने लायक मकान नहीं हैं। मकानों के स्थान पर अधिकांश लोगों ने घास फूस की झोंपड़ियाँ बना रखी हैं। ऐसे व्यक्तियों की संख्या भी कम नहीं है जिनके पास खुद की झोंपड़ियाँ भी नहीं हैं। बड़े नगरों में तो एक एक कोठरी में अनेक परिवार रहते हैं हजारों व्यक्ति फुटपाथ पर अथवा उनके निकट निर्वाह करते हैं। अतः सरकार रैन बसेरों की व्यवस्था कर रही है जो अपर्याप्त है।

(9) अपर्याप्त वस्त्र—ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश व्यक्ति अर्द्ध-नग्न ही रहते हैं। भारतीयों को औसत रूप से वार्षिक 15 मीटर वस्त्र ही उपलब्ध हो पाता है जबकि अन्य विकसित देशों में यह मात्रा 50 से 75 मीटर है।

(10) विदेशी सहायता—भारत निर्धन होने के कारण ही विदेशों से सहायता प्राप्त करने में सदैव उत्सुक रहा है। संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा, इंगलैंड, फ्रांस, जर्मनी, सोवियत रूस, इटली, रूमानिया, आस्ट्रेलिया, जापान आदि सभी देशों से भारत ने सहायता ली है और ले रहा है। भारत को अमरीका की आर्थिक सहायता के सम्बन्ध में मार्च 1970 में प्रकाशित एक तथ्य पत्र में अमरीका के राजदूत श्री कनेथ बी० कीटिंग ने बतलाया है कि सन् 1951 से अमरीकी सहायता कार्यक्रम आरम्भ होने से अब तक भारत को 70 अरब 5 करोड़ 15 लाख रुपये (अर्थात 1 अरब 32 करोड़ 2 लाख डालर) की सहायता दी जा चुकी है। दूसरे शब्दों में भारत के प्रत्येक नागरिक को (यदि भारत की जनसंख्या 53 करोड़ मानें) केवल संयुक्त राज्य अमरीका ने ही लगभग 134 करोड़ रुपये की सहायता दी है। अन्य सभी देशों से कुल प्राप्त सहायता की यदि प्रति व्यक्ति की गणना करें तो यह अनेक कई अरब रुपयों में होगी।

(11) भारत कर्जदार है—भारत पर विदेशी ऋण का बहुत भार है जो भारत की निर्धनता का ही सूचक है। प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा ने बतलाया है कि 31 मार्च 1969 को भारत पर लगभग 49 96 अरब रुपये के विदेशी ऋण थे। संसद में दी गई सूचना (मार्च 1970) के अनुसार भारत के प्रति व्यक्ति पर औसत विदेशी ऋण 127 रुपये थे। चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक यह भार बढ़कर लगभग 200 रुपये प्रति व्यक्ति हो जायगा।

(12) ब्याज चुकाने में कठिनाई—उपरोक्त तमाम बातों से यह सिद्ध होता ही है कि भारत एक निर्धन देश है। भारत इतना अधिक निर्धन है कि भारत पर

विदेशी ऋण इतने अधिक बढ गये हैं कि मूल राशि को चुकाने का तो समय जब आयगा तब आयगा, हम ब्याज चुकाने म भी अपने को असमर्थ पाते हैं । ब्याज चुकाने के लिए भी हम फिर विदेशों में ही ऋण मांगना पडता है । 'दैनिक हिंदुस्तान' के सम्पादकीय लेख म टिप्पणी की गई है 'इस प्रकार भारत सदा हाथ मे भिक्षापात्र लिए हो रहता है ।' चौथी पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक अनुमान है कि भारत के ऋणो के ब्याज की ही देनदारी 25 अरब 60 करोड रुपय तक पहुँच जायगी ।

इस प्रकार यह कहना कि भारत एक धनी देश है—एक मिथ्या प्रवचना ही है । अत उपरोक्त सभी तथ्यों का अध्ययन करने के पश्चात यही निष्कर्ष निकलता है कि 'भारत एक धनी देश है, किन्तु उसके निवासी निर्धन हैं ।'

UNIVERSITY QUESTIONS

1 भारतीय अर्थ-व्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं की व्याख्या कीजिए । हमारी राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था का धीमा विकास इन पर कहा तक आधारित है ? (T D C, 1967)

2 'भारत एक धनी देश है जिसम निर्धन लोग रहते हैं ।' इस कथन की पुष्टि कीजिये । (T D C, 1967)

3 भारत एक अविकसित देश क्या है ? सुधार के उपाय बताते हुए आलोचनात्मक विवरण दीजिए ।

4 अपने एक विदेशी मित्र को भारत के आर्थिक भूगोल की दृष्टि से भारत की गरीबी कैसे समझायेंगे । (T D C Suppl 1968)

5 भारतीय जनता की गरीबी की सीमा का विवेचन करिये । अल्प-काल में समस्या को हल करने के लिए नये सुझाव दीजिये । (T D C, 1969)

6 भारतीय अर्थ व्यवस्था के अविकसित होने के कारणो पर प्रकाश डालिये । उपयुक्त उदाहरण दीजिए । (T D C 1970)
(संकेत—इस प्रश्न के उत्तर मे 'हमारी राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था के धीमे विकास के कारण' दीजिये ।)

3

भारत महान की झाँकी

परिचय—

भारत एक विशाल देश है जिसकी गणना एशिया के उन्नतिशील एव विक सित देशो मे की जाती है। उष्ण कटिबन्ध म स्थित देशा म यह देश सबस अधिक उन्नत है। भारत की महानता का गौरवपूण इतिहास हजारो वष पुराना है। हमारे देश ने ही सभ्यता सस्कृति और ज्ञान का प्रकाश विश्व के अन्य देशो म फलाया था। हमारा देश भारत अति अलौकिक विलक्षण एव सुविधा सम्पन्न देश है। भारत का अतीत तो महान् था ही, वतमान उससे भी अधिक महान और भविष्य और भी अधिक महान है।

भारत की स्थिति
(Location)

हमार प्राचीन ग्रन्था म पृथ्वी के उस खण्ड को, जो समुद्र के उत्तर और हिमालय के दक्षिण मे है भारत तथा उसके निवासियो को भारती बताया गया है। जसा कि कहा गया है —

उत्तरयत समुद्रस्य, हिमाद्रेश्चव दक्षिणम।
वष तत भारत नाम, भारती यत्र सन्तति ॥

भारत विश्व के पूर्वी गोलार्द्ध के मध्य म स्थित है। हिमालय के द्वारा मध्य एशिया की दक्षिणी कोर से जुडा हुआ भारत देश दक्षिण की ओर कक रेखा तक फलता हुआ जाकर अरब सागर और बगाल की खाडी के बीच म हिन्द महासागर (जिसका नाम हमारे देश हिन्दुस्तान पर पडा है जबकि विश्व के अन्य किसी भी महासागर का नाम किसी देश पर नही पडा है) म एक उल्ट त्रिभुज की भाति लटका हुआ है। भारत एक त्रिभुजाकार प्रायद्वीप है। जसा कि यूनान के प्रसिद्ध भूगोलशास्त्री स्ट्रबो ने भी कहा है भारत का आकार चतुष्कोणीय न होकर त्रिभुजाकार है जिसका आधार उत्तर मे तथा शीष दक्षिण मे है।

सम्पूण देश विषुवत रेखा के उत्तर म स्थित है। कश्मीर का सम्मिलित करन हुए भारत 8 4 उत्तरी अक्षाश स 37 6 उत्तरी अक्षाश तक और पश्चिम स पूव तक 68 7 पूर्वी देशान्तर मे 97 25 पूर्वी देशान्तर तक स्थित है।[1]

1 *India 1970 Govt of India Publication* p 1

कर्क रेखा ($23\frac{1}{2}$ उत्तरी अक्षांश) भारत के लगभग मध्य में होकर गुजरती है जो देश को प्राय दो त्रिभुजो म विभक्त करती है। कर्क रेखा (Tropic of Cancer) गुजरात, राजस्थान (दक्षिणी भाग), मध्य प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बगाल, त्रिपुरा व असम के दक्षिणी भाग म होकर जाता है। कर्क रेखा के उत्तर वाले भाग को उत्तरी भारत (Northern India) कहते हैं। यह शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone) म स्थित है। कर्क रेखा के दक्षिण वाले भाग को दक्षिणी भारत (Southern India) अथवा प्रायद्वीपी भारत (Peninsular India) अथवा अयनवर्ती (Tropical) कहते हैं। यह उष्ण कटिबन्ध (Torrid Zone) म स्थित है।

भारत का दक्षिणी भाग शन शन सकरा होता गया है और अन्त म कुमारी अन्तरीप म एक बिन्दु का आकार हो जाता है। भारत का दक्षिणी बिन्दु विषुवत रेखा स लगभग 895 Kms दूर है।

उत्तर स दक्षिण तक भारत की लम्बाई लगभग 3,219 Kms और पूर्व स पश्चिम तक चौड़ाई लगभग 2 977 Kms है।[1] इस तरह भारत का कुल क्षेत्रफल 32,68,090 वर्ग Kms है।

भारत की स्थिति का प्रभाव

भारत की स्थिति विश्व म महत्त्वशाल है। प्रकृति ने भारत के तीन ओर अभेद्य पर्वतीय दीवार तथा दक्षिण म अनन्त सागर म घेरकर इसे एक सुरक्षित गढ़ बना दिया है। भारत की जलवायु जैसी कि हम आज देखते है, इसकी स्थिति के कारण है। भारत को व्यापारिक दृष्टि स जो प्राकृतिक सुविधाय प्राप्त हैं, उन सबका श्रेय इसकी स्थिति का ही है। इसी कारण प्राय कहा जाता है "भारतीय गणराज्य की भौगोलिक स्थिति उसके जलवायु तथा व्यापार के प्रति विशेष महत्त्वपूर्ण है।'

भारत की स्थिति का व्यापार पर प्रभाव—

प्रत्येक देश की स्थिति वहाँ के व्यापार को प्रभावित करती है। मगोलिया (चीन के उत्तर म), अफगानिस्तान नपाल, भूटान आदि का वदेशिक व्यापार इतना पिछड़ा होने के अनेक कारणो म एक कारण उनकी स्थिति भी है। इसक विपरीत इगलण्ड, जापान, सयुक्त राज्य अमरीका आदि के विकसित व्यापार मे उनकी स्थिति का भी योग है। इसी प्रकार भारत की स्थिति न इसके व्यापार को बहुत प्रभावित किया है, जिसका सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है —

(1) विश्व का मानचित्र देखने स स्पष्ट होता है कि (दक्षिणी अमरीका, आस्ट्रेलिया व अफ्रीका के कुछ दक्षिणी भाग के अतिरिक्त) सभी प्रमुख देश उत्तरी गोलार्द्ध म स्थित हैं। यूरोप के सम्पूर्ण देश, उत्तरी अमरीका, चीन जापान, भारत

---

1 *Ibid*

आदि सभी उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित हैं। भारत की स्थिति विश्व के प्राय सभी महत्वपूर्ण महाद्वीपों के मध्य में है, अतः व्यापारिक दृष्टिकोण से भारत की स्थिति अनुकूल है। ऐसी महत्वपूर्ण स्थिति के कारण ही सुदूर अतीत में भी भारत का सम्पर्क तत्कालीन समस्त सभ्य देशों से था। उस समय प्रमुख व्यापारिक स्थल मार्गों का केन्द्र भारत ही था। विश्व में भारत की स्थिति का अनुमान नीचे के चित्र से स्पष्ट हो जावेगा —



चित्र 1—भारत की स्थिति

(2) भारत की स्थिति पूर्वी गोलार्द्ध [redacted] मध्य में है। पूर्वी गोलार्द्ध में लंदन के पूर्व के देश (अधिकांश फ्रांस, इटली, जर्मनी, रूस, अधिकांश अफ्रीका, सम्पूर्ण एशिया, आस्ट्रेलिया आदि) सम्मिलित हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि विश्व के पश्चिमी देशों व सुदूर पूर्व के देशों के मध्य भारत की स्थिति बहुत महत्वपूर्ण है।

(3) यूरोप के देशों से सुदूर-पूर्व के देशों जैसे—आस्ट्रेलिया, चीन, जापान आदि जाने वाले जहाजों को भारत अथवा लंका के किसी न किसी बन्दरगाह पर अवश्य ही रुकना पड़ता है। लौटने वाले जहाजों द्वारा कम किराये पर भारत से माल भेजा जा सकता है। इस प्रकार की प्रत्यक्ष सुविधा ईरान, अफगानिस्तान आदि देशों को नहीं है। कलकत्ता से सिंगापुर होकर हांगकांग और याकोहामा (जापान) पहुँचने में लगभग दो सप्ताह लग जाते हैं। बम्बई से अदन और स्वेज नहर होते हुए यूरोप के देशों तक पहुँचने में लगभग दो सप्ताह ही लगते हैं। कलकत्ता से उत्तरी अमरीका लगभग उतनी ही दूर है जितना बम्बई से उत्तरी अमरीका का पूर्वी तट।

(4) स्वेज मार्ग का निर्माण (सन् 1869 में) हो जाने के कारण, भारत की स्थिति का महत्त्व और भी अधिक बढ़ गया है। भारत अब यूरोप के देशों के और भी अधिक निकट आ गया है। यूरोप से आने वाले जहाजों को स्वेज मार्ग से आने में अफ्रीका का चक्कर लगाकर आने की अपेक्षा लगभग 7,250 Kms मार्ग की बचत होती है। इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमरीका के पूर्वी भागों और पूर्वी देशों के मध्य दूरी इस नहर द्वारा कम हुई है।

(5) भारत के तीन ओर समुद्र है। भारत का दक्षिणी भाग सकरा होता गया है अतः दक्षिण भारत के भाग समुद्र से अधिक दूर नहीं हैं। हिन्द महासागर के सिर स्थान स्थित इस देश की स्थिति अत्यन्त महत्त्वशील है। हिन्द महासागर तीन महाद्वीपों—एशिया, अफ्रीका व आस्ट्रेलिया—को जोड़ता है। अतः यह भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के विकास में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।



चित्र 2

(6) भारत के पूर्वी समुद्र-तट तथा पश्चिमी समुद्र तट काफी लम्बे हैं, अतः भारत का तटीय व्यापार भी काफी होता है।

(7) भारत की स्थिति इस प्रकार की है कि इसे वायु मार्गों की भी बहुत सुविधा है। यूरोप से पूर्व की ओर सिंगापुर, चीन, जापान व आस्ट्रेलिया जाने वाले वायुयान भारत होकर बम्बई, जोधपुर, दिल्ली अथवा कलकत्ता के हवाई अड्डों पर उतर कर पैट्रोल लेते हैं। इस प्रकार भारत से प्रत्येक देश को जाने वाले वायुयान मिल जाते हैं। इससे व्यापारियों व उद्योगपतियों को भी लाभ होता है।

(8) भारत के निकटवर्ती देश अविकसित हैं—जैसे अफ्रीका, अरब, ईराक, ईरान, अफगानिस्तान, नेपाल, सिक्किम, ब्रह्मा, थाईलैण्ड, मलाया आदि। अतः भारत के निर्मित माल के लिये भी बाजार निकट है।

(9) भारत की उत्तरी और पूर्वी सीमाओं पर ऊँची पर्वत श्रेणियाँ होने के कारण भारत का एशिया के अन्य देशों से स्थलीय व्यापार नहीं के बराबर है।

(10) भारत एक विशाल देश है जिसकी लम्बाई लगभग 3,220 Kms, चौड़ाई लगभग 2 975 Kms व क्षेत्रफल लगभग 32,68,090 Sq Kms है। अतः आंतरिक व्यापार भी बड़े पैमाने पर होता है। उत्तरी मैदान पर (समतल होने के कारण) रेलों व सड़कों का जाल-सा बिछा हुआ है।

भारत की स्थिति का जलवायु पर प्रभाव—

किसी भी स्थान की स्थिति ही वास्तव में जलवायु का निर्धारण करती है। अलग अलग देशों की स्थिति में भिन्नता होने के कारण ही जलवायु में भी भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। भारत की स्थिति ने भी देश की जलवायु पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाले हैं —

(1) भारत एक विशाल देश है अतः यहां विभिन्न प्रकार की जलवायु पायी जाती है। ब्लैडफोर्ड ने तो यहां तक कहा है कि हम भारत की जलवायुओं (Climates) के विषय में कह सकते हैं जलवायु (Climate) के विषय में नहीं क्योंकि सम्पूर्ण विश्व में जलवायु की इतनी विषमताएँ नहीं मिलती हैं जितनी कि अकेले भारत में। भारत के कुछ भाग समुद्र के अत्यन्त निकट हैं तो कुछ बहुत ही दूर। अतः जलवायु में विषमताएँ पाया जाना स्वाभाविक है।

(2) सम्पूर्ण भारत विषुवत रेखा के उत्तर में है दक्षिणी भारत तो केवल 8 ही दूर है। कर्क रेखा भारत के लगभग मध्य में होकर जाती है। इस प्रकार दक्षिणी भारत उष्ण कटिबन्ध में स्थित है। शेष भारत कर्क रेखा के उत्तर में है अतः उत्तरी भारत शीतोष्ण कटिबन्ध में है। इस प्रकार देश की स्थिति के कारण ही यहाँ उष्ण जलवायु पाई जाती है।

(3) भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत की श्रेणियाँ फैली हुई हैं जो जलवायु पर नियन्त्रण रखती हैं वर्षा व तापक्रम को भारत के पक्ष में बनाती हैं व नदियों के उद्गम स्थान हैं। हिमालय पर्वत साइबेरिया की ओर से आने वाली ठण्डी व शुष्क हवाओं को उधर की ओर ही रोक लेता है। इस प्रकार हिमालय पर्वत ने भारतीय प्रदेश को ठण्डा रेगिस्तान बनने से बचाया है। दूसरी ओर, हिमालय पर्वत मानसूनी हवाओं को सम्पूर्ण वर्षा भारत में ही करने के लिए बाध्य करता है।

(4) भारत के तीन ओर समुद्र होने के कारण वर्षा में इनका योग रहता है। दक्षिण में हिन्द महासागर है। दक्षिणी-पश्चिमी मानसून हवाएँ इस महासागर से नमी प्राप्त करती हैं। ये हवाएं जब अरब सागर व बंगाल की खाड़ी के ऊपर से गुजरती हैं तो और भी अधिक नमी प्राप्त कर लेती हैं। देश को प्राप्त होने वाली सम्पूर्ण वर्षा का श्रेय इन्हीं समुद्रों को है।

(5) भारत की स्थिति व प्राकृतिक बनावट के कारण ही एक ओर तो विश्व में सबसे अधिक वर्षा प्राप्त करने वाला भाग (चेरापूंजी) और दूसरी ओर बहुत कम वर्षा प्राप्त करने वाले भाग (पश्चिमी तथा उत्तरी राजस्थान) भारत में हैं। इस प्रकार ठण्डा जम ठण्डी जलवायु वाले भाग (उच्च हिमालय प्रदेश) और सहारा रेगिस्तान जैसी गर्म जलवायु वाले भाग (पश्चिमी व उत्तरी राजस्थान) भी भारत में पाये जाते हैं।

भारत की सीमायें
(Boundaries)

प्रो० चिशोल्म ने ठीक ही कहा है "विश्व म केवल ब्रह्मा के अतिरिक्त अन्य ऐसा कोई देश नहीं है, जिसको प्रकृति न इतनी अच्छी प्रकार परिसीमित किया हो जितना भारत को।" भारत को प्राकृतिक सीमाएँ उपलब्ध होने का गर्व प्राप्त है— इसके उत्तर म हिमालय पर्वत एक प्राकृतिक दीवार की भांति है। दक्षिण म हिन्द महासागर (दक्षिण पश्चिम म अरब सागर और दक्षिण पूर्व म बगाल की खाडी) है। इस प्रकार प्रकृति न भारत को भौगोलिक एकता प्रदान की है और इसको शेष एशिया से पर्वता एव समुद्रा द्वारा अलग कर दिया है।

(1) उत्तरी सीमा—भारत की उत्तरी सीमा का निर्माण हिमालय पर्वत करता है जिसक दूसरी ओर चीन है। हिमालय पर्वत की गोद मे कश्मार की घाटी है जिसकी उत्तरी सीमा पर सीक्याग का प्रान्त है। सीक्याग और कश्मीर के मध्य कराकोरम पर्वत है। यह पर्वत बहुत ऊँचा है। यहाँ कुछ दर्रे भी हैं, जिनका प्रयोग सीक्याग व कश्मीर क मध्य व्यापार करने म किया जाता है। सर्दियो म य दर्रे बर्फ से ढँक जात हैं और इस मार्ग से व्यापार भी बन्द हो जाता है। किन्तु इन दिनो चीन के साथ अच्छे सम्बन्ध न रहने के कारण इन दर्रों का केवल सामरिक महत्त्व ही है।

कश्मीर के उत्तर-पश्चिम म अफगानिस्तान, रूसी तुर्किस्तान हैं। कश्मीर क दक्षिण व दक्षिण-पश्चिम म पश्चिमी पाकिस्तान है। भारत की उत्तरी सीमा पर ही नेपाल, भूटान और सिक्किम के राज्य हैं। भूटान व सिक्किम भारत स विशेष सन्धि द्वारा सम्बन्धित है। इनके दूसरी ओर तिब्बत (Tibet) है जो पहले स्वतन्त्र था, किन्तु कुछ वर्षों पूर्व चीन न इस पर अधिकार कर लिया और अब यह चीन सरकार के अधीन एक प्रान्त की भाँति है।

(2) पूर्वी सीमा—भारत के पूर्व म ब्रह्मा है जिस पहाडी श्रेणी की एक शृखला भारत से पृथक् करती है। भारत के पूर्व म पूर्वी पाकिस्तान है। भारत व पूर्वी पाकिस्तान के मध्य प्राकृतिक सीमा नहीं है। पाकिस्तान के पूर्व मे भारत के असम, मणिपुर, त्रिपुरा, नागालैण्ड आदि हैं। लाल चीन न सन 1962 म नेफा (North East Frontier Agency) क्षेत्र पर आक्रमण करके हमारी पवित्र भूमि पर आक्रमण किया। अब हमारे वीर सैनिक वहाँ प्रत्येक परिस्थिति का सामना करने के लिए डटे हुए हैं। अत इस क्षेत्र का अब सामरिक महत्त्व बहुत अधिक होगया है।

(3) दक्षिणी सीमा—भारत के दक्षिण मे लका द्वीप व हिन्द महासागर हैं। मनार की खाडी और पाक जलडमरूमध्य भारत को लका से पृथक करते हैं। बगाल की खाडी म अण्डमान व निकोबार द्वीपसमूह और अरब सागर म लक्द्वीव मिनिकाय और अमिनद्वीव भारत सघ के भाग हैं।

(4) पश्चिमी सीमा—भारत न पश्चिम म पश्चिमी पाकिस्तान है। भारत और पश्चिमी पाकिस्तान के मध्य भी कोई प्राकृतिक सीमा नहीं है। पजाब के आरम्भ

(1) पश्चिमी तट—भारत के पश्चिमी तट को तीन भागों में बांटा जा सकता है—(क) काठियावाड़ तट जो सम्पूर्ण गुजरात राज्य का तट माना जाता है। कुछ विद्वान सूरत तक का तट इसमें मानते हैं। (ख) कोंकण तट का विस्तार सूरत से गोआ तक माना जाता है। (ग) मालाबार तट का विस्तार गोआ से कुमारी अन्तरीप तक माना जाता है।

बम्बई से मालाबार तक का तट सीधा सपाट तथा सपाट है किन्तु कोचीन एवं उसके नीचे खाड़ियाँ व प्रवाल (Reefs) अनेक हैं। सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि तटों के समीप समुद्र की औसत गहराई 100 फैदम पाई जाती है। 100 फैदम गहराई का क्षेत्र मछली उद्योग के विकास के लिए अच्छा माना जाता है। पश्चिमी तट पर समुद्र गर्त (Deeps) नहीं पाये जाते हैं। मालाबार तट (गोआ से कुमारी अन्तरीप तक) कटा फटा है अतः अनेक प्राकृतिक आश्रय स्थान हैं किन्तु वायु बहुत तेज चलती है। समुद्री किनारे कम गहरे व रेतीले हैं अतः बड़े बड़े जहाज यहाँ नहीं ठहर सकते हैं।

पश्चिमी तट पर ताप्ती नदी के दक्षिण में कोई भी बड़ी नदी समुद्र में नहीं गिरती है। कोचीन, मारमागोआ तथा बम्बई प्रमुख बन्दरगाह हैं। गुजरात में, भावनगर, ओखा व कांडला प्रमुख बन्दरगाह हैं।

(2) पूर्वी तट—भारत के पूर्वी तट को दो भागों में बाँटा जा सकता है—(क) उत्तरी सरकार, और (ख) कारोमण्डल तट। उत्तरी सरकार तट का विस्तार गंगा नदी के डेल्टा से लेकर कृष्णा नदी के डेल्टे तक है। शेष भाग कारोमण्डल तट कहलाता है।

पूर्वी तट से लगभग 100 Kms की दूरी तक समुद्र 100 फैदम गहरा है। इसके आगे और 100 Kms दूर तक समुद्र लगभग 500 फैदम गहरा है।[1]

भारत के द्वीप

भारत के समुद्र तट के निकट अच्छे व बड़े द्वीपों का नितान्त अभाव है। छोटे छोटे कुछ द्वीप कच्छ की खाड़ी के निकट पाये जाते हैं। खम्भात की खाड़ी के निकट द्यू द्वीप है जो पहले पुर्तगालियों के अधिकार में था किन्तु अब भारत का ही अंग है। खम्भात की खाड़ी में पियाल परिम तथा अन्य अनेक छोटे छोटे द्वीप हैं। इन द्वीपों का विशेष आर्थिक महत्त्व तो नहीं है किन्तु मछली उद्योग को थोड़ी सहायता अवश्य पहुँचाते हैं। बम्बई नगर एवं बन्दरगाह सालसेट (Salsette) द्वीप पर स्थित है। बम्बई के पास ही एलीफेन्टा (Elephanta) द्वीप है। गोआ के दक्षिण पश्चिम में अंजदीव (द्वीप) है। इनके अतिरिक्त अन्य छोटे छोटे द्वीप भी हैं जिनका आर्थिक महत्त्व अधिक नहीं है।

भारत के पश्चिमी तट से 200 से 400 Kms तक की दूरी पर अरब

---

1 Chhibber *India* Part I, p 91

सागर मे लकाभीव, अमिनदीव, और मिनिकाय द्वीप तथा अन्य छोटे छोटे द्वीप स्थित हैं। ये द्वीप 8 उत्तरी अक्षाश से 12 उत्तरी अक्षाश के मध्य में स्थित हैं। इन द्वीपो की कुल सख्या 19 है जिनमे से 10 द्वीप पर तो कुछ मनुष्य रहते हैं किन्तु शेष 9 द्वीप निर्जन हैं। कुछ द्वीपो का क्षेत्रफल एक वर्ग Kms से भी कम है। बसे हुए 10 द्वीपो का कुल क्षेत्रफल लगभग 16 वर्ग Kms है। समस्त द्वीप मूँगे के द्वीप है।

लका एव भारत के मध्य पाम्बन द्वीप (Pamban Isles) स्थित हैं। ये धनुषाकार मे 8 से 16 Kms लम्बे क्षेत्र में फैले हुए हैं। रामेश्वरम भी एक द्वीप पर स्थित है। कृष्णा नदी के डेल्टा के निकट भी कुछ द्वीप पाये जाते हैं। चिल्का झील तथा समुद्र के बीच भी कुछ द्वीप पाये जाते हैं।

हुगली नदी के मुहाने से लगभग 900 Kms दूर बगाल की खाडी मे अडमान निकोबार द्वीप समूह स्थित है। ये द्वीप समूह 6 उत्तरी अक्षाश और 14 उत्तरी अक्षाश के मध्य फैले हुए है। अन्डमान द्वीप समूह मे 204 द्वीप हैं और निकोबार द्वीप समूह मे 19 द्वीप हैं।

देश का विभाजन

विभाजन के पूर्व देश का क्षेत्रफल 42 14 751 वर्ग Kms था, जिसमे लगभग 60 प्रतिशत से भी अधिक भाग अँग्रेजो के अधीन था और शेष मे से अधिकाश देशी राजाओ के अधीन था, थोडा भाग फ्रास के और थोडा पुर्तगाल के अधीन था। 15 अगस्त, 1947 को भारत के विभाजन की सरकारी रूप से घोषणा हुई, जिसके फलस्वरूप पश्चिमी तथा पूर्वी पाकिस्तान का जन्म हुआ। पश्चिमी पाकिस्तान और भारत को रावी नदी पृथक करती है और वही इन दोनो देशो की सीमा निर्धारित करती है। पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान के मध्य 1770 Kms[1] से भी अधिक दूरी है। अविभाजित पजाब का 62 प्रतिशत से भी कुछ अधिक भाग पश्चिमी पजाब (पाकिस्तान) मे और अविभाजित बगाल का लगभग 66 प्रतिशत भाग पूर्वी बगाल (पाकिस्तान) मे चला गया। पश्चिमी पाकिस्तान पूर्वी पाकिस्तान से लगभग छ गुना बडा है। विभाजन के फलस्वरूप भारत के हिस्से मे देश का लगभग 76 प्रतिशत क्षेत्रफल आया, जिसमे देश की 80 प्रतिशत जनसख्या निवास करती है।

पूर्वी बगाल पश्चिमी पजाब और सिंध की उपजाऊ भूमि पाकिस्तान को प्राप्त हुई। श्रेष्ठ कपास और जूट के उत्पादन करने वाले अधिकाश प्रदेश पाकिस्तान मे चले गये। सूती कपडे और जूट के प्राय सभी कारखाने भारत मे ही रहे। लोहे और कागज के समस्त कारखाने भारत मे ही रहे पाकिस्तान मे एक भी नही गया। समूची रेलवे भारत सघ मे रही तथा दो रेलवे—नार्थ वेस्टर्न और असम-बगाल रेलवे—का दोनो देशो के मध्य बँटवारा हुआ। भारत मे 40 हजार

---

1 Pakistan *Basic Facts* p 1 (Govt of Pakistan Publication)

Kms से कुछ अधिक रेलमार्ग रहा, जबकि पाकिस्तान को 10 700 Kms रेल मार्ग मिला। कच्ची व पक्की सड़कों में लगभग 80 हजार Kms सड़कें पाकिस्तान को मिली और 1 लाख Kms सड़क भारत को मिला।

विभाजन के पश्चात राजनीतिक दशा—

26 जनवरी 1950 को भारत को गणतन्त्र राज्य (Republic of India) घोषित कर दिया गया। राज्य पुनर्गठन विधयक के अनुसार भारत में 14 राज्य और 6 केन्द्र द्वारा शासित प्रदेश बनाये गये, जिनकी स्थापना 1 नवम्बर 1956 को की गई। इसके पश्चात अन्य परिवर्तन सन् 1960 व 1966 में किये गये।



चित्र 3

2 अप्रैल 1970 को भारत के सुदूर पूर्वी अंचल में असम के पुनर्गठन के फलस्वरूप नए प्रदेश 'मेघालय' का निर्माण हुआ। गारो खासी और जयन्तिया

हिल्म—तीन पहाड़ी जिलों को मिलाकर इसका निर्माण हुआ है। इस नए उपराज्य का क्षेत्रफल 22 550 वग किलोमीटर है। राजनीतिक आधार पर मेघालय वास्तव मे एक उपराज्य है जो असम के अतगत रह कर काय कर रहा है। किन्तु है यह पूरी तरह स्वशासी। इसकी एकमात्र यही विशेषता है जो देश भर म पहली और अनूठी है। असम व मेघालय दोनो ही राज्यो की राजधानी शिलाग है। मेघालय के दक्षिण म पूर्वी पाकिस्तान है।

25 जनवरी 1971 से हिमाचल प्रदेश को राज्य का स्तर दे दिया गया है अत अब भारत मे 18 राज्य एव 10 केन्द्र द्वारा प्रशासित प्रदेश हैं जो निम्नलिखित है—18 राज्यो के नाम इस प्रकार हैं—आन्ध्र प्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, केरल, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश तमिलनाडु, मसूर, उडीसा, पजाब हरियाना, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश पश्चिमी बगाल, जम्मू व कश्मीर, नागालण्ड राज्य। केन्द्र द्वारा शासित 10 प्रदेशो के नाम इस प्रकार हैं—दिल्ली, नफा, चडीगढ, मणिपुर, त्रिपुरा अडमान एव निकोबार द्वीप समूह लकदीव एव अमनदीव द्वीप समूह गोआ, डमन ड्यू, दादरा, व नगर हवेली एव पांडिचेरी।

18 राज्यो तथा केन्द्र द्वारा शासित प्रदेशो का क्षेत्रफल एव जनसख्या (लाखो मे) इस प्रकार[1] है—

राज्य	क्षेत्रफल (वग Kms)	जनसख्या (सन 1969 मे)	राजधानी
मध्य प्रदेश	4,43,459	394	भोपाल
राजस्थान	3,42,267	253	जयपुर
महाराष्ट्र	3 07,269	485	बम्बई
उत्तर प्रदेश	2 94,366	882	लखनऊ
आध्र प्रदेश	2,75 244	421	हैदराबाद
जम्मू व कश्मीर	2,22 870	39	श्रीनगर
असम व नफा	2 03 399	150	शिलाग
मैसूर	1 91,757	284	बगलौर
गुजरात	1,87,091	256	गाधीनगर
बिहार	1 74,008	560	पटना
उडीसा	1 55,860	210	भुवनेश्वर
तमिलनाडु	1 29 966	386	मद्रास
प॰ बगाल	87 676	433	कलकत्ता
पजाब	50 376	142	चडीगढ
हरियाना	44 056	97	चडीगढ
केरल	38 869	206	त्रिवन्द्रम
नागालण्ड	16,488	42	कोहिमा
हिमाचल प्रदेश	55 658	34	शिलाग

1 India' 1970, p 8

केन्द्र द्वारा शासित एवं अन्य प्रदेश[1]

प्रदेश	क्षेत्रफल	जनसंख्या	राजधानी
मणिपुर	22,346	9 94 लाख	इम्फाल
त्रिपुरा	10,451	13 82 लाख	अगरतला
अण्डमान व निकोबार	8,293	82 4 हजार	पोर्ट ब्लेयर
दिल्ली	1 483	36 54 लाख	नई दिल्ली
गोआ, दमन, द्यू	3,733	6 67 लाख	पंजिम
दादरा व नगर हवेली	489	67 5 हजार	सिलवस्मा
लकदीव, अमिनदीव	28	26 4 हजार	कवरत्ती
पांडिचेरी	473	4 20 लाख	पांडिचेरी
चंडीगढ़	115	1 45 लाख	चंडीगढ़

विभिन्न राज्यों एवं केन्द्र द्वारा प्रशासित प्रदेशों के क्षेत्रफल तथा जनसंख्या से सम्बंधित उपरोक्त तालिकाओं का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि क्षेत्रफल के आधार पर भारत में सबसे बड़ा राज्य मध्य प्रदेश है, द्वितीय राजस्थान, तृतीय महाराष्ट्र और चौथा स्थान उत्तर प्रदेश का है। किन्तु जनसंख्या के आधार पर भारत में सबसे अधिक जनसंख्या उत्तर प्रदेश में निवास करती है द्वितीय स्थान बिहार तृतीय महाराष्ट्र और चौथा स्थान पश्चिमी बंगाल राज्य का है। क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे छोटा राज्य नागालण्ड है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 'The geographical location of the Indian Republic is a factor of great importance effecting her commerce and climate Examine this statement critically (R U B Com 1957)
'भारतीय गणराज्य की भौगोलिक स्थिति उसकी जलवायु तथा व्यापार के प्रति विशेष महत्वपूर्ण है। उपरोक्त कथन की आलोचनात्मक पुष्टि कीजिये। (T D C, 1960)
2 Point out the geographical location of India and discuss the advantages according to the country on account of such location
भारत की भौगोलिक स्थिति का विवरण दीजिये और उक्त स्थिति के कारण होने वाले लाभों का वर्णन कीजिये। (T D C 1960)
3 पूर्वी गोलार्द्ध में भारत की स्थिति का आर्थिक महत्त्व क्या है?
4 क्या आप भारत की स्थिति और जलवायु को आर्थिक विकास के अनुकूल समझते हैं। (T D C 1969)

---

[1] 'India 1970, p 8

4
भारत-भूमि का धरातल

परिचय—

भारत एक विशाल देश है, अत अनेक भौगोलिक विविधताओं का मिलना स्वाभाविक ही है। इन विविधताओं म धरातल के विभिन्न स्वरूप भी सम्मिलित हैं। विभिन्न भूगोल के विद्वानो ने भारत की प्राकृतिक दशा पर विचार करते हुए भिन्न भिन्न मत प्रकट किये हैं। कुछ विद्वानो[1] ने, जिनमे डडले स्टाम्प, स्टम्बर, हुबट पिकिल्स उल्लखनीय है, भारत को धरातल की बनावट की दृष्टि से तीन भागों मे बाँटा है—(1) उत्तर का पहाडी प्रदश, (2) नदियो का मदान, और (3) दक्षिण का पठार। इन विद्वाना ने दक्षिण के पठार मे ही तटीय मैदानो और थार के मरुस्थल को सम्मिलित कर लिया है। दूसरी ओर कुछ विद्वानो (जैसे मार्सडन, स्पेट, मॉरीसन[2]) ने भारत के धरातल को चार भागों मे विभक्त किया है। उन्होंने तटीय मदाना को दक्षिण के पठार म पृथक माना है, किन्तु थार के मरुस्थल को इस पठार में ही शामिल किया है। कुछ विद्वानो (जस छिब्बर[3]) ने थार के मरुस्थल को तो अलग मान लिया है, किन्तु तटीय मैदानो को दक्षिण के पठार म सम्मिलित कर लिया है। वास्तविकता तो यह है कि दोनो भागो—(1) तटीय भाग, और (2) थार का मरुस्थल—को दक्षिण क पठार स अलग रखना अध्ययन की दृष्टि से अधिक उपयुक्त है।

भारत के धरातल का विभाजन

उपयुक्त विभिन्न दृष्टिकोणा को ध्यान म रखते हुये भारत के धरातल को

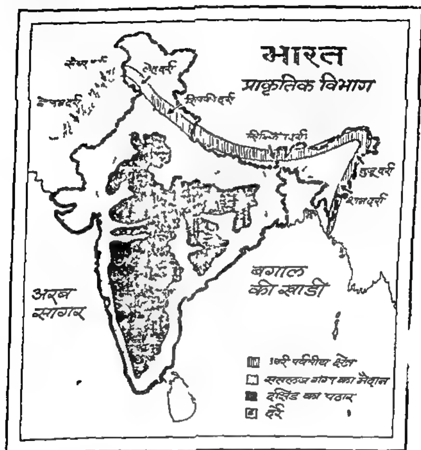
---

1 Dudley Stamp *The World Geography* p 194
Stember *The World* p 275
Pickles *India World and Empire* p 302

2 Morrison *A New Geography of The Indian Empire and Ceylon* p 13
Marsden *Geography for Senior Classes*, p 117.
Spate *India and Pakistan*, p 3

3 Chhibber *India* Part 1, p 5

पाँच प्राकृतिक भागों में विभक्त किया जा सकता है—(I) उत्तर का पहाड़ी प्रदेश (II) सतलज, गंगा, ब्रह्मपुत्र का मैदान, (III) दक्षिण का पठार (IV) समुद्र तट के मैदान, एवं (V) थार का मरुस्थल।



चित्र 4

(I) उत्तर का पहाडी प्रदेश

भारत के शीश पर हिममण्डित हिमालय का सुन्दर ताज है। वह हिमालय जिसके गगनचुम्बी शिखर, जिसके चकाचौंध कर देने वाले हिमानी, जिसकी असंख्य नीलमणियों सी दिखाई देने वाली झीलें, जिसकी अनन्तता, जिसकी विशालता एवं अपार शान्ति विश्व को प्रकृति की अनुपम देन है।

दक्षिण के पठार के अतिरिक्त भूगर्भ शास्त्र के अनुसार पहले भारत का समस्त उत्तरी भाग समुद्र मग्न था। इस समुद्र का नाम टैथिस (Tethys) सागर था, जिसका विस्तार वर्तमान पाकिस्तान, ब्रह्मा, अफगानिस्तान, अरब, ईरान, ईराक,

इटली आदि, अधिकांश-दक्षिणी यूरोप के देश उत्तरी अफ्रीका, अधिकांश उत्तरी अमरीका आदि म था। ज्वालामुखी विस्फोट तथा अय प्राकृतिक परिवतनो म समुद्रतल से भूमि एव अय पवतो की सृष्टि हुई। हिमालय पवत की गणना विश्व क नय पवतो म की जाती है। हिमालय पवत का अभी पूण रूप म निर्माण नही हुआ है। य पवत अभी भी ऊँचे उठ रहे हैं।[1]

अन्तर्राष्टीय भूगभ विज्ञान काग्रेस के 22वें सम्मेलन के अध्यक्ष पद से भाषण देत हुए डा० डी० एन० वाडिया ने बतलाया कि हिमालय एक शताब्दी म एक मिलीमीटर की रफ्तार स बढ रहा है। इस विश्वास का आधार यह प्रामाणिक भूगभ तथ्य है कि कश्मीर मे पीर-पजाल चोटी, जब स पृथ्वी पर मानव की सृष्टि हुई तब स 7000 फीट से 8000 फीट हो गई।

मध्य एशिया मे पवतो की एक गाठ है जिसे पामीर की गाठ (Pamir knot) कहते हैं। यहाँ स बहुत ऊँची ऊँची पवत-श्रेणियाँ चारो दिशाओ म जाती हैं। इन श्रेणियों म सबसे बडी हिमालय पवत श्रेणी है जो पामीर गाठ स दक्षिण पूव की ओर फैली हुई है।

सिन्ध एव ब्रह्मपुत्र नदियाँ उत्तरी पहाडी प्रदेश[2] को तीन उप विभागो म निम्न प्रकार विभक्त करती हैं —(I) मुख्य हिमालय (II) हिमालय की उत्तरी पश्चिमी शाखा; एव (III) हिमालय की दक्षिणी पूर्वी शाखा।

(I) मुख्य हिमालय—

यह सिन्धु नदी के मोड से और ब्रह्मपुत्र नदी के मोड तक के बीच म 70 पूर्वी देशान्तर व 97° पूर्वी देशान्तर के मध्य अर्थात 27° देशान्तरो क मध्य फैला हुआ है। हिमालय की उच्चतम श्रेणियाँ इसी भाग म हैं। मुख्य हिमालय की लम्बाई लगभग 2,400 Kms और चौडाई 250 Kms. से 500 Kms तक है, मुख्य हिमालय म लगभग 140 चोटियाँ हैं।

मुख्य हिमालय म केवल एक ही श्रेणी नहा है वरन हिमालय पवत प्राय तीन श्रेणियो स मिलकर बना है जो समानान्तर हैं। अत मुख्य हिमालय के तीन उप विभाग और हुए—(1) उप हिमालय (2) लघु हिमालय, और (3) मुख्य या महा हिमालय।

---

1 Wadia *Geology of India*, p 48

2 Burrard ने हिमालय प्रदेश को चार भागो म विभाजित किया है—(1) पजाब हिमालय—यह सतलज नदी से सिन्ध नदी तक विस्तृत है, जिसकी लम्बाई 550 Kms है। (2) कुमायूँ हिमालय—यह सतलज नदी स काली नदी तक विस्तृत है, जिसकी लम्बाई 320 Kms है। (3) नेपाल हिमालय—यह काली नदी स तिस्ता नदी तक विस्तृत है, जिसकी लम्बाई 800 Kms है। (4) असम हिमालय—यह तिस्ता नदी स ब्रह्मपुत्र नदी तक विस्तृत है, जिसकी लम्बाई 625 Kms है।

(1) उप हिमालय—भारत में उत्तरी मैदान से उत्तर की ओर जाने पर 8 Kms से 50 Kms चौडी व औसत रूप म 1,200 मीटर ऊँची श्रेणी मिलती है जो कि बडे मैदान की भाँति बालू, कंकड और मिट्टी से बनी है। इसे 'सिवालिक' कहते हैं, जिस पर मिट्टी की मात्रा अधिक होने के कारण हरियाली अधिक दिखाई पडती है। सिवालिक पहले गंगा सिंधु के मैदान से सम्बन्धित था किन्तु अल्पाइन युग में पर्वत बन गया। ये पहाडियाँ पंजाब में पोटवार बेसिन के दक्षिण से प्रारम्भ होती हैं और पूर्व में कोसी नदी तक (80 E) तक चली गयी हैं। ये पहाडियाँ एक में ही क्रम में नहीं चली गई हैं, किन्तु कुछ स्थानों पर खण्डित भी है। इनके स्थान-स्थान पर खंडित होने का सम्भवत कारण है—तीव्र मानसूनी वर्षा, क्योंकि ये पहाडियाँ अस्थायी बालू, कंकर व पत्थरों से बनी हैं अत वर्षा ने इन्हें कई स्थानों पर काट दिया है। सिवालिक के पीछे की ओर लम्बाकार घाटियाँ हैं जो सिवालिक को लघु हिमालय से पृथक करती हैं। इन घाटियों को पश्चिम में 'दून' कहते हैं और पूर्व में द्वार कहते हैं।

(2) लघु हिमालय—सिवालिक के उत्तर में दूसरी श्रेणी है, जिसे लघु हिमालय' कह सकते हैं। सिवालिक श्रेणी और लघु हिमालय के मध्य खुले हुए मैदान से हैं। लघु हिमालय लगभग 80 से 100 Kms चौडे व 1,800 मीटर से 3 000 मीटर तक ऊँचे हैं। इसके निचले भाग पर शिमला, मसूरी, नैनीताल व दार्जिलिंग आदि स्थित हैं। गर्मियों में ये स्थान विशेष आकर्षण के केन्द्र बन जाते हैं।

(3) मुख्य अथवा महा हिमालय—लघु हिमालय के उत्तर में हिमालय का तीसरी श्रेणी है जो सबसे अधिक ऊँची है, जिसकी औसत ऊँचाई लगभग 6 हजार मीटर है। इस भाग में ही सबसे अधिक ऊँची चोटियाँ हैं। संसार में सबसे ऊँचा पर्वत शिखर एवरेस्ट (स्थिति 28 3 उत्तर 87 7 पूर्वी द०) मुख्य हिमालय में ही है, जिसकी ऊँचाई 8,848 मीटर (29,028 फीट) है। सन् 1856 में सर एण्ड्रयू वाग (Andrew Waugh) ने अपने पूर्व के मुख्य-मापनिरीक्षक (Surveyor General) सर जॉर्ज एवरेस्ट के नाम पर इस शिखर का नाम 'एवरेस्ट शिखर'[1] रखा। एवरेस्ट शिखर धरातल का सबसे ऊँचा बिन्दु है। इस पर्वत-श्रेणी पर 29 मई 1953 को तेनसिंह शेरपा व सर हिलरी ने विजय पायी है। तिब्बत में एवरेस्ट चोटी को चोमोलुग्मा (Chomo Lungma) नाम से पुकारते हैं। यह तिब्बत के लामाओं के लिए बहुत पवित्र मानी है। एवरेस्ट के अतिरिक्त नन्दादेवी, धवलगिरि किंचिनजंगा, नंगा पर्वत आदि इसके प्रमुख शिखर हैं।

---

1 Chhibber *India* Part I p. 14

यहाँ की प्रमुख चोटियों की ऊँचाई निम्नलिखित है[1]—

चोटी का नाम	स्थिति	ऊँचाई (मीटर म)
एवरेस्ट	नेपाल हिमालय	8,848
गान्विनआस्टिन	कराकारम	8,611
किंचिनजगा	नेपाल हिमालय	8,585
धवलगिरि	नेपाल हिमालय	8,167
नागा पवत	कश्मीर हिमालय	8,126
गोसाई थान	नपाल हिमालय	7,913
न दाग्वी	कुमायूँ हिमालय	7,816
बद्रीनाथ	कुमायूँ हिमालय	7,086
गगोत्तरी	कुमायूँ हिमालय	6,613

उपरोक्त चोटियो की तुलना निम्नलिखित महाद्वीपो की सर्वोच्च चोटियो से कीजिय —

महाद्वीप	चोटी का नाम	स्थिति	ऊँचाई (मीटर म)
द० अमरीका	अकोंन का गुआ	(एण्डीज)	7,035
उ० अमरीका	माउण्ट मक किनल	(रॉकी)	6,217
अफ्रीका	माउण्ट किलिमजारा	(टगानिका)	5,894
यूरोप	माउण्ट ब्लक	(आल्पस)	4,804
आस्ट्रलिया-	—माउण्ट	(न्यूजीलण्ड)	3,763

हिम रेखा (Snow line)—ग्रीष्मकालीन 0 C की समताप रेखा ही वास्तव म हिम रेखा हाती है। यह रखा सदा बफ जम रहन की निम्नतम सीमा बतलाती है। हिम रेखा की सीमा तापक्रम, वायु की दशा और हिमपात की मात्रा पर निभर हाती है। औसत रूप से हिमालय पवत पर लगभग 4,875 मीटर की ऊँचाई पर हिम-रेखा मिलती है। व से, हिमालय के विभिन्न भागो की अलग-अलग ऊँचाई पर हिम-रेखा मिलती है।

तिब्वत की ओर नमी के अभाव मे हिम रेखा अधिक ऊँची है। पूव की ओर *हिम रेखा की ऊँचाई 5,700 मीटर और पश्चिम की ओर 6,300 मीटर है।* लद्दाख म हिम रेखा 5,400 मीटर की ऊँचाई पर मिनती है।

हिमालय के दर्रे—हिमालय पवत बहुत ऊँचे हैं अत उन्हें पार करना कठिन है। फिर भी उनमे कहा-कही ऊचाई पर सकीण दर्रे पाय जात हैं, जिनम हाकर मनुष्य आते-जाते और व्यापार करते हैं। अधिक ऊँचाई पर हाने के कारण

---

1 Wadia *Geology of India* p 10

हिमालय के अधिकांश दर्रे जाड़ों में बर्फ से जम जाते हैं और इन दिनों उनका प्रयोग नहीं हो पाता है। प्रमुख दर्रे निम्नलिखित हैं —

(अ) जोजिला दर्रा—इसमें होकर श्रीनगर (कश्मीर) से लेह (लद्दाख) में आने जाते हैं। यह दर्रा लगभग 3,450 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है।

(ब) कराकोरम दर्रा—इस दर्रे से होकर सीक्यांग व तिब्बत को जाते हैं। यह दर्रा 5,500 मीटर की ऊँचाई पर है।

(स) शिपकी दर्रा—यह दर्रा सतलज की घाटी में स्थित है। शिमला से तिब्बत जाने का यही मार्ग है।

(द) जलपला दर्रा—यह दर्रा दार्जिलिंग के निकट है, यहां से तिब्बत जाते हैं।

(II) हिमालय की उत्तरी-पश्चिमी शाखा—

नक्शा देखने पर विदित होगा कि मुख्य हिमालय के पश्चिमी किनारे से सिंध नदी दक्षिण की ओर मुड़ती है। यहां से हिमालय की शाखा दक्षिण-पश्चिम की ओर आती है, जिसमें हिन्दूकुश, सुलेमान और किरथर मुख्य श्रेणियां हैं। विभाजन के पूर्व ये श्रेणियां भारत की उत्तरी पश्चिमी सीमा बनाती थीं किन्तु अब सुलेमान व किरथर तो सम्पूर्ण और हिन्दूकुश का कुछ भाग पाकिस्तान में चला गया है। इस भाग में बोलन और खैबर दो दर्रे हैं। इस क्षेत्र में वर्षा कम होती है और आर्थिक विकास अधिक नहीं हुआ है।

(III) हिमालय की दक्षिणी-पूर्वी शाखा—

मुख्य हिमालय के पूर्वी किनारे पर जहाँ ब्रह्मपुत्र नदी दक्षिण की ओर मुड़ती है वहां से एक पर्वत शृंखला निकल कर असम व बर्मा में गई है। इसके अधिकांश भाग बर्मा में हैं व शेष असम में। जो भाग असम में हैं उनका नाम उत्तर में पटकाई, मध्य में नागा और दक्षिण में लुशाई है। प्राकृतिक नक्शा देखने से ज्ञात होगा कि नागा पर्वत के साथ एक उंगली सी पश्चिम की ओर बढ़ी हुई है जो कि जयन्तिया, खासी और गारो पहाड़ियां हैं।

इन पर्वत-श्रेणियों पर मानसूनी हवाओं से बहुत अधिक वर्षा होती है। चेरापूंजी जो जहां विश्व में सबसे अधिक वर्षा होती है, यहीं खासी पहाड़ियों में स्थित है। वर्षा अधिक होने के कारण सभी पर्वत मालाएं घने वनों से ढकी हुई हैं। इन पहाड़ियों पर विभिन्न प्रकार के वृक्ष पाये जाते हैं जिनमें सागवान, रबर व सिनकोना आदि के वृक्ष उल्लेखनीय हैं। इन पर चाय के बगीचे भी हैं। इन वनों में अनेक प्रकार के पशु जैसे—शेर, चीते, हाथी आदि बहुतायत में पाये जाते हैं। इन पहाड़ियों से होकर कुछ मार्ग बर्मा को जाते हैं जिनमें से कितने ही कठिन व असुरक्षित हैं। अतः उनका उपयोग प्रायः नहीं होता है। इन पहाड़ियों में असंख्य और नागा जातियां व भिन्न-भिन्न और अनेक जंगली मानव बसते हैं।

हिमालय के आर्थिक महत्त्व—

भारत के भाग्य निर्माण में हिमालय की शृंखलाओं का सबसे महत्त्वपूर्ण हाथ रहा है, जो देश के उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर फैला हैं। भारत के आर्थिक विकास, इतिहास, सभ्यता, मानव जीवन और इसी प्रकार की अन्य अनेक बातों पर हिमालय सदियों से अपना गहरा प्रभाव डालता चला आ रहा है। मार्सडन[1] के शब्दों में, "हिमालय ने भारत को बनाया है वे भारत को पानी देते हैं, वे भारत को शरण देते हैं और रक्षा करते हैं।" इस प्रकार हिमालय पर्वत भारत के लिये प्रकृति की अनमोल भेंट है।

हिमालय ने भारत की आर्थिक प्रगति में पर्याप्त योग दिया है, साथ ही हिमालय पर्वत ने देश के आर्थिक विकास में कुछ रुकावट भी डाली हैं। अतः हिमालय पर्वत का आशावादी दृष्टिकोण में व निराशावादी दृष्टिकोण से महत्त्व बताना उपयुक्त होगा।

(I) आशावादी दृष्टिकोण से—

(1) **भूगोल के निर्माता**—हिमालय उत्तरी भारत के भूगोल के निर्माण करने वाले हैं। उत्तर का विशाल मैदान, उपजाऊ दोमट मिट्टी, नदियों के निर्माण में हिमालय का योग स्पष्ट है। यदि हिमालय नहीं होता तो भारत का भौतिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक व ऐतिहासिक भूगोल कुछ और ही होता।

(2) **जल का भण्डार**—हिमालय पर्वत प्रवाहित होने वाली नदियों के लिये अनन्त व **इतने बड़े जलाशय का कार्य करता है जितना बड़ा जलाशय अभी तक कोई इंजीनियर नहीं बना सका है।**[2] इन नदियों से नहरें निकाल कर सिंचाई की जाती है और इस प्रकार उत्तरी भारत में अधिक उपज होती है। इनके अतिरिक्त ये नदियाँ अपने साथ ही नई मिट्टी लाकर मैदान में बिछा देती हैं, जिससे जूट, चावल व गन्ना की खेती को विशेष लाभ पहुँचा है। वास्तव में, मारिसन के शब्दों में,[3] "**गंगा और ब्रह्मपुत्र दो भुजाओं की भाँति सम्पूर्ण हिमालय की श्रेणियों का आलिंगन कर लेती हैं और हिमालय पर गिरने वाले हिम अथवा वर्षा की सारी मात्रा अन्तत भारत को ही लौट आती है।**' मॉरिसन ने आगे लिखा है[4] भौगोलिक दृष्टि से हिमालय पर्वत जितना तिब्बत के लिए है उतना ही भारत के लिए भी, किन्तु इसकी (हिमालय) नदियों का सम्पूर्ण लाभ भारत को ही मिलता है।"

(3) **जलवायु नियन्त्रण**—साइबेरिया की ओर से आने वाली शीतल हवाओं

---

1 Marsden *Geography for Senior Classes* (Ed 1925), p 120

2 George Kuriyan—*Hydro electric Power in India*, p 9

3 C Morrison—*A New Geography of the Indian Empire and Ceylon* (Ed 1932), p 67

4 *Ibid*

को रोकता है। यदि यह पर्वत यहाँ नहीं होता तो उत्तरी भारत का ... मरुस्थल होता। हिमालय पर्वत ढाल में उत्तरी मैदान का तापमान बढ़ा है क्योंकि यदि यहाँ यह पर्वत न होता और यह मैदान ध्रुव प्रदेश की ओर फैला होता तो 3 से 5 डि॰ (—15 C) तक तापमान कम होता।[1]

(4) वर्षा—हिमालय पर्वत की ऊँचाई में पानी के लिए विशाल बाँध कहा जाता है क्योंकि मानसूनी हवाओं का यह पर्वत बाहर नहीं जाने देता और समस्त वर्षा भारत में ही हो जाती है। जिस प्रकार मिस्र को 'नील नदी की देन' कहते हैं उसी प्रकार उत्तर भारत को 'हिमालय की देन' (Gift of the Himalayas) कहना अनुपयुक्त न होगा।[2]

(5) वन सम्पदा—हिमालय पर्वत अटूट वन सम्पदा से भरे हुए हैं। इनकी ढालों पर अनेक प्रकार के वन पाये जाते हैं जिनसे व्यापारिक ईंधन व अनेक जड़ी बूटियाँ प्राप्त की जाती हैं। यहाँ से प्राप्त की गई वस्तुओं पर हमारे देश के अनेक उद्योग धन्धे अवलम्बित हैं।

(6) खनिज पदार्थ—इस क्षेत्र में खनिज पदार्थ भी पाये जाने की सम्भावना है। असमान धरातल एवं वन क्षेत्र के कारण यहाँ खनिज सम्पत्ति प्राप्त करने में पर्याप्त समय लगेगा। पट्रोलियम तो प्राय सम्पूर्ण तलहटी में पाये जाने की आशा है। अभी केवल असम क्षेत्र में ही तेल निकाला जा रहा है।

(7) चरागाह—पहाड़ की निचली ढालों पर भूमि पर चरागाह मिलते हैं। उत्तरी मैदान में भूमि की कमी के कारण ये चरागाह कमी को दूर कर सकते हैं।

(8) पशु—हिमालय के वनों में अनेक प्रकार के पशु पाये जाते हैं जिनका मांस, हड्डियाँ व चमड़ा आदि प्राप्त करके उपयोग में लाते हैं।

(9) जल विद्युत—हिमालय पर्वत से निकलने वाली नदियों से जल विद्युत भी बड़ी मात्रा में उत्पन्न की जा रही है जिसका उपयोग विभिन्न उद्योगों में किया जा सकता है। कोसी योजना इसका प्रमुख उदाहरण है।

(10) चाय की उपज—हिमालय पर्वत की ढाल चाय की खेती के बहुत उपयुक्त होने के कारण भारत की गणना चाय के सबसे बड़े उत्पादकों में की जाती है। भारत की कुल चाय उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत भाग यहीं उत्पन्न होता है।

(11) होटल उद्योग—ऐवरेस्ट शिखर को पार करने तथा हिमालय के प्राकृतिक सुन्दर दृश्य देखने को विश्व के अन्य देशों से भी यहाँ अनेक व्यक्ति आते हैं। अतः यहाँ पहाड़ी नगरों में होटल उद्योग को प्रोत्साहन मिला है। नैनीताल, शिमला, मसूरी आदि इन्हीं पर्वत मालाओं में हैं जो स्वास्थ्यप्रद स्थान भी हैं।

(12) सुदृढ़ दीवार—यह पर्वत दूसरी ओर से पशुओं के आक्रमण से हमें बचाता रहा है। इस प्रकार राजनीतिक दृष्टि से यह भारत का प्रहरी रहा है।

1 *Imperial Gaz* (1909), Vol I p 107

2 Chhibber *India* Vol I, p 23

किन्तु अब यह बात नही है। धीरता का प्रतीक हिमालय आज अधीर है। साम्यवादी चीन ने इस ओर से ही भारत पर (सन 1962 म) आक्रमण किया था और अब सरकार को इस ओर की रक्षा करने के लिए काफी यत्न करने पड रहे हैं।

(13) **परिश्रमी मानव**—यहा के मनुष्य अत्यन्त ही मजबूत एव परिश्रमी होते हैं और इसी कारण सेना के लिए श्रेष्ठ माने जाते हैं।

(II) निराशावादी दृष्टिकोण से—

(1) **भूमि का प्रयोग नहीं**—हिमालय पर्वत बहुत अधिक भूमि के भाग को घेरे हुए हैं जिसका कोई उपयोग नही किया जा सकता है। अनुमान है कि हिमालय पर्वत लगभग 5 लाख वग किलोमीटर क्षेत्र मे फैले हुए हैं।[1]

(2) **निवासियों के मिलन मे बाधक**—हिमालय पर्वत ने भारत के निवासियो एव एशिया के अन्य भागों के निवासियों के मिलन म पर्याप्त बाधा डाली है।

(3) **यातायात के साधनों के विकास में बाधा**—इस क्षेत्र म भूमि समतल न होने के कारण रेलो व सडको का विकास नही हो सका है। सडको के स्थान पर केवल सकरी पगडण्डियां हैं। पशु व मनुष्य ही माल ढोते हैं।

(4) **उद्योग धन्धो में बाधक**—इस क्षेत्र मे अनेक असुविधायें होने के कारण बड़े उद्योग धन्धो का पूर्णत अभाव है।

(5) **व्यापार में बाधक**—अच्छे मार्ग, सवादवाहन के साधन, यातायात के साधन व अन्य तत्वों के अभाव म व्यापार उन्नत नही हो सकता।

(6) **कृषि में बाधक**—हिमालय क्षेत्र म असमान धरातल, पथरीली मिट्टी व कठोर जलवायु के कारण कृषि का विकास नही हो पाया है। अत मनुष्यो को बहुत ही कठोर जीवन व्यतीत करना पडता है।

(7) **उच्च जीवन स्तर में बाधक**—अनेक कठिनाइयां, जीवन की अत्यन्त आवश्यक वस्तुओ को भी प्राप्त करन म कठिनता मैदानी भागों से सम्बन्ध रखन म कठिनाई आदि होने के कारण यहां के मनुष्यो का जीवन स्तर नीचा है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि हिमालय के आर्थिक महत्त्व के भी दो पहलू—आशावादी और निराशावादी—हैं, किन्तु निराशावादी दृष्टिकोण ने देश की आर्थिक व्यवस्था म इतनी बाधा नही डाली है, जो विशेषत उल्लेखनीय हो।

(II) सतलज, गंगा तथा ब्रह्मपुत्र का मैदान

परिचय—उत्तरी पहाडी प्रदेश और दक्षिणी पठार के मध्य में नदियों का एक विशाल मैदान स्थित है। इस मैदान के उत्तर म हिमालय पर्वत है और दक्षिण मे विन्ध्याचल पर्वत और छोटा नागपुर का पठार है। पूर्व मे ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी से लेकर पश्चिम म पाकिस्तान स्थित सिन्धु नदी की घाटी तक विस्तृत है। यह मैदान ससार के सबसे बडे व उपजाऊ मैदानो मे है। यह मैदान धनुषाकार मे फैला है। यह मैदान लगभग सारे उत्तरी भारत में फैला हुआ है। इसका क्षेत्रफल 7 70

[1] Pichamuthu C S *Paysical Geography of India* (1967ed), p 45

लाख वर्ग Kms[1] है। एक छोर से दूसरे छोर तक इसकी लम्बाई लगभग 3 200 Kms और चौड़ाई साधारणतया 225 से 325 Kms है। यह मैदान तीन नदियों—गंगा, सिंधु और ब्रह्मपुत्र—और उनकी सहायक नदियों के प्रदेश में बना है। पश्चिम में सिंधु नदी है जो कि अरब सागर में गिरती है। पूर्व में गंगा नदी है जो कि दक्षिण पूर्व में बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती है। दिल्ली जो कि भारत की गौरवपूर्ण राजधानी है इन दोनों नदियों के प्रदेश के मध्य में जल विभाजक स्थान पर स्थित है। बंगाल की खाड़ी में गिरने से पहले गंगा में उत्तरी भारत की तीसरी महान नदी ब्रह्मपुत्र मिल जाती है। भौगोलिक दृष्टि से गंगा सिंधु नदी का मैदान एक ही है जो कि भारतीय इतिहास और राजनीति का अखाड़ा रहा है।

निर्माण—जब हिमालय का निर्माण हुआ तो हिमालय पर्वतमाला के सहारे गहरा खड्डा अथवा दरार घाटी बन गई। शनैः शनैः यह खड्ड नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी से भरता गया। यही कारण है कि इस मैदान में मिट्टी की तहों की मोटाई 410 मीटर से भी अधिक है। वास्तव में यह मैदान सिंधु गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों द्वारा हिमालय पर्वत से लाई हुई मिट्टी से बना है। अतः यह कथन बिल्कुल उपयुक्त ही है कि यह मैदान पहाड़ों की धूल है।[2]

वर्तमान स्थिति—भौगोलिक दृष्टि से तो सिंधु गंगा ब्रह्मपुत्र का मैदान एक अखण्ड इकाई है, किन्तु देश के राजनैतिक विभाजन ने इसका खण्डन कर दिया है। पश्चिम में सिंधु नदी का अधिकांश भाग और पूर्व में गंगा ब्रह्मपुत्र का अधिकांश डेल्टाई भाग आज हमारे देश से पृथक हो गया है। भारत का विभाजन हो जाने के कारण सिंधु नदी व उसकी अधिकांश सहायक नदियाँ पाकिस्तान के क्षेत्र में चली गयी, अतः भारत के पास अब केवल सतलज, गंगा, ब्रह्मपुत्र का मैदान ही रह गया है, जिसकी लम्बाई पूर्व से पश्चिम तक अब लगभग 2 414 Kms[3] और चौड़ाई पूर्ववत् 240 320 Kms ही है। इस प्रकार इस मैदान का क्षेत्रफल लगभग 7·70 लाख वर्ग Kms है। इस मैदान का ढाल क्रमशः दिल्ली के निकट यमुना नदी से बंगाल की खाड़ी तक की दूरी—जो लगभग 1,600 Kms है—में ढाल केवल 210 मीटर का ही है, अर्थात् 1 Km में औसत रूप से लगभग 8 मीटर का ही ढाल है।

इस मैदान को निम्न पाँच उप विभागों में विभक्त किया जा सकता है—(1) सतलज नदी का मैदान, (2) गंगा का ऊपरी मैदान, (3) गंगा का मध्यवर्ती मैदान, (4) गंगा का निचला मैदान, तथा (5) ब्रह्मपुत्र की घाटी।

1 *Gazetteer of India* (Govt of India Publication) Ch III p 148 किन्तु इसी गजटियर के Ch I p 31 पर यह क्षेत्रफल 6 52 लाख Kms बतलाया गया है। Ch III Dr D N Wadia द्वारा लिखित है और Ch I Dr S P Chatterjee द्वारा, अतः Dr Wadia द्वारा दिया गया क्षेत्रफल ही यहाँ स्वीकार किया गया है।

2 T W Holderness *Peoples and Problems of India* p 34

3 India 1967, p 1

(1) सतलज नदी का मैदान—

विस्तार—यह मदान मनलज और यमुना नदियो के बीच स्थित है। दूसर शब्दो मे, पश्चिमी पाकिस्तान की सीमा स यमुना नदी (दिल्ली) तक यह मदान विस्तृत है। यह भारत क उत्तरी मदान का एक महत्त्वशील भाग है जो कि वास्तव म सिन्धु नदी के मैदान का पूर्वी क्षेत्र है। इसे हम सतलज, व्यास और रावी का मैदान कह सकते हैं। पश्चिम म इस मैदान की प्राकृतिक सीमा नही है, किन्तु सतलज, व्यास पाकिस्तान की सीमा से अलग करने का प्रयत्न करती हैं। राजनीतिक सीमा द्वारा यह पश्चिमी पजाब के मदानी भाग से पृथक है। दक्षिण मे घग्घर की पट्टी पार के रेगिस्तान की उत्तरी ओर तथा अरावली पर्वत का टूटा फूटा, पतला और अदृश्य होता हुआ दुमदार भाग दिल्ली तक पहुँचता है जो कि इसकी दक्षिणी सीमा बनाने का प्रयास करते हैं। राजनीतिक दृष्टि से अब भारत के पास पजाब व हरियाना राज्य हैं। प्रो० स्पेट के मतानुसार यह भाग वास्तव म गगा सिन्धु के मदान के लिए विशाल जल विभाजक का काय करता है।

प्राकृतिक दशा—यह सम्पूर्ण भाग समतल मैदान है। इस मैदान की ऊँचाई 200 मीटर स 450 मीटर तक है। इस भाग म पहाडी नाममात्र को भी नही है। यह नदियो द्वारा लाई गई मिट्टी म बना है। यह उल्लखनीय है कि उत्तर की ओर की मिट्टी अपेक्षाकृत अधिक नवीन और उपजाऊ है किन्तु दक्षिण की ओर की मिट्टी पुरानी बलुई व कम उपजाऊ है क्योकि राजस्थान के रेगिस्तान ने भी इस प्रभावित किया है और तेज हवाए रेगिस्तानी मिट्टी को उडाकर यहाँ तक पहुँचा देती हैं। इस मदान का ढाल दक्षिण पश्चिम की ओर है किन्तु पूर्व की ओर इस मदान का ढाल दक्षिण-पूर्व को है। सतलज व व्यास इस भाग की प्रमुख नदियाँ हैं, जो वर्ष-पर्यन्त प्रवाहित रहती हैं। इन नदियो म प्राय बाढ आया करती है।

जलवायु—यह भाग समुद्र स दूर होने के कारण यहाँ गर्मियो म काफी गर्मी पडती है और सर्दियो म ठण्ड भी अधिक पडती है। **गर्मियो मे यहाँ का औसत तापक्रम** 2 C अथवा अधिक हो जाता है। कभी-कभी तो दोपहर म तापक्रम 46 C व 48 C हो जाता है। **सर्दियों का औसत तापक्रम** 12 C है, किन्तु कभी कभी रात मे तापक्रम —1 C हिमांक से नीचे से भी कम हो जाता है। यहाँ प्राय पाला पडा करता है।

वर्षा की दृष्टि से इस मैदान की गणना शुष्क प्रदेशो म करनी चाहिए। अधिकाश वर्षा गर्मियो म होती है। वार्षिक औसत वर्षा 40 65 cms है। मानसूनी हवाएँ यहाँ लम्बी यात्रा करने के पश्चात पहुँचती हैं अत उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है। अत यहाँ गगा के मदान की अपेक्षा कम वर्षा होती है। जाडो म कुछ वर्षा **भूमध्यसागरीय चक्रवातों** म हो जाती है, जो कृषि क लिए अत्यन्त लाभप्रद होती है। दक्षिण की ओर यह मदान शनै शनै ऊँचा व शुष्क होता गया है और अन्त म मरुस्थल म विलीन हो गया है। वर्षा उत्तर से दक्षिण की ओर कम होने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

कृषि—पूर्वी पंजाब की आर्थिक स्थिति पर सिंचाई का विशेष प्रभाव पड़ा है। नहरों के कारण ही इस प्रदेश की इतनी उन्नति हो सकी है। इस भाग में नहरों का जाल सा बिछा हुआ है। भारत के किसी भी क्षेत्र से यहाँ अधिक नहरें हैं। भाखरा नांगल योजना पूर्ण हो जाने पर कृषि के क्षेत्र में और भी वृद्धि हुई है। गेहूँ इस भाग की मुख्य उपज है जो कि कुल खाद्यान्नों की उपज की मात्रा का लगभग 40 प्रतिशत भाग होता है। इसके अतिरिक्त कम वर्षा वाले भागों में जौ, मक्का, ज्वार बाजरा चना अन्य प्रमुख खाद्यान्न हैं। तिलहन कपास व गन्ना अन्य औद्योगिक फसलें हैं।

खनिज—यह प्रदेश खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से अत्यन्त निर्धन है। इस प्रदेश में पट्रोलियम के लिए खोज हो रही है। पट्रोलियम मिल जाने पर इस क्षेत्र का महत्त्व और भी बढ़ जायगा।

जनसंख्या एवं व्यवसाय—इस प्रदेश में भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 10 प्रतिशत भाग निवास करता है। लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि व पशु चराना है। अधिकांश मनुष्य गाँवों में निवास करते हैं। गाँवों की संख्या भी अधिक है। अधिकांश निवासी हिन्दू हैं। सिक्ख गूजर व राजपूतों की संख्या भी काफी है। अनेक व्यक्ति पशु पालन में लगे हुये हैं।

प्रमुख उद्योग—धारीवाल (अमृतसर) में ऊनी कपड़ा बनाने की प्रसिद्ध मिल हैं। सूती व रेशमी कपड़ा बनाने की भी मिल हैं। सोनीपत में साइकिल बनाने का व जालंधर लुधियाना आदि में सिलाई मशीन व कृषि के यन्त्र बनाने के कारखाने हैं। जगाधरी में कागज व चीनी बनाने के कारखाने हैं। खेल का सामान बनाने के लिये यह प्रदेश विख्यात है। भाखड़ा-नांगल योजना के पूरी हो जाने पर सस्ती जल विद्युत उपलब्ध हो सकेगी अतः इस प्रदेश का औद्योगिक भविष्य उज्ज्वल है।

प्रमुख नगर—चण्डीगढ़ अमृतसर जालंधर अम्बाला पटियाला, हिसार भटिंडा, पानीपत आदि प्रमुख नगर हैं।

(2) गंगा का ऊपरी मैदान—

विस्तार—यह मैदान यमुना नदी के पूर्व से गंगा-यमुना के संगम (इलाहाबाद) तक विस्तृत है। राजनैतिक दृष्टि से इस भाग में दिल्ली राज्य तथा उत्तर प्रदेश में इलाहाबाद तक का भाग सम्मिलित है। यमुना इस मैदान की दक्षिणी सीमा बनाती है। इस मैदान के पूर्व में गंगा का मध्यवर्ती मैदान है किन्तु इनके मध्य प्राकृतिक सीमा का अभाव है। इस सम्बन्ध में डडले स्टाम्प ने वर्षा के वितरण को मुख्य आधार माना है। उनके अनुसार 100 cms की सम-वर्षा की रेखा ने गंगा के ऊपरी मैदान की पूर्वी सीमा का निर्धारण किया है। इस सम वर्षा की रेखा को स्टाम्प ने इलाहाबाद से गुजरती हुई मानी थी।

प्राकृतिक दशा—यह भाग भी पंजाब के मैदान की भाँति समतल है। इस मैदान की ऊँचाई 100 मीटर से 200 मीटर तक है। यह मैदान गंगा व उसकी

सहायक नदियो द्वारा लाई हुई मिट्टी से बना है। इस मैदान का ढाल पश्चिम से पूर्व की ओर है। ढाल बहुत ही धीमा है अधिक ऊँची-नीची भूमि नही है जिसके फलस्वरूप सिंचाई तथा यातायात के साधनो का काफी विकास हुआ है। यमुना, गगा, गोमती, शारदा व घाघरा प्रमुख नदियाँ है।

जलवायु—यह भाग समुद्र से दूर है अत यहा की जलवायु विषम है। कर्क रेखा इस मैदान के दक्षिण से होकर जाती है, अत गर्मी की ऋतु मे सूर्य की किरणें कर्क रेखा पर बिल्कुल सीधी पडती हैं। गर्मियो मे अधिकतम तापक्रम 48 C और न्यूनतम 10 C तक हो जाता है। औसत रूप से गर्मियो का तापक्रम 35 C है। सर्दियो का औसत तापक्रम 16 C रहता है। वार्षिक तापान्तर लगभग 15 C रहता है।

इस प्रदेश मे वर्षा गर्मी की ऋतु मे बगाल की खाडी से आने वाली मानसूनी हवाओ से होती है। अरब सागर से आने वाली मानसूनी हवाएँ इस ओर नही आने पाती, अत वे इस प्रदेश के लिए महत्वहीन हैं। इस प्रदेश मे उत्तर से दक्षिण की ओर तथा पूर्व से पश्चिम की ओर वर्षा कम होती जाती है। पश्चिमी भाग मे वार्षिक वर्षा का औसत 50 से 65 cms है और पूर्व मे 100 cms। सर्दियां मे प्राय शुष्क रहता है।

कृषि—इस मैदान के लगभग 70% भाग मे खेती की जाती है। कृषि सिंचाई पर ही आधारित है। गेहू जौ, चना, मटर सरसो दालें आदि मुख्य उपज हैं। इलाहाबाद के पूर्व मे चावल व पूर्व मे गेहूँ मुख्य फसलें है। पूर्वी भाग मे गन्ने की खेती भी होती है। पश्चिम के भागो मे मक्का, ज्वार, बाजरा आदि भी होते हैं।

खनिज—यह भाग खनिज की दृष्टि से निर्धन है। चूने का पत्थर इटावा जिले मे पाया जाता है।

जनसख्या एव व्यवसाय—इस भाग मे जनसख्या घनी है। अनेक स्थानो मे जनसख्या का घनत्व 900 व्यक्ति प्रति वर्ग Kms हो गया है। अधिकाश व्यक्तियों का व्यवसाय कृषि है। 80 प्रतिशत से भी अधिक व्यक्ति गावो मे ही रहते है। अधिकाश व्यक्ति हिन्दू हैं।

प्रमुख उद्योग—सूती वस्त्र (कानपुर, आगरा, मेरठ अलीगढ, बरेली आदि), चीनी (कानपुर, मेरठ, बरेली आदि) काँच (फिरोजाबाद) कागज (लखनऊ सहारनपुर) आदि प्रमुख उद्योग हैं। इनके अतिरिक्त वनस्पति घी, साबुन तेल, ताले आदि के भी प्रमुख उद्योग हैं।

प्रमुख नगर—लखनऊ कानपुर दिल्ली, इलाहाबाद, आगरा, बरेली, अलीगढ आदि प्रमुख नगर हैं।

(3) गगा का मध्यवर्ती मैदान—

विस्तार—यह मैदान इलाहाबाद के पूर्व से आरम्भ होकर बिहार के सम्पूर्ण भाग तथा बगाल की पश्चिमी सीमा तक विस्तृत है। अधिक स्पष्ट करते हुए इस

भूखण्ड में उत्तर प्रदेश का तराई भाग और सम्पूर्ण उत्तरी बिहार सम्मिलित है। भारत में इलाहाबाद के निकट से गुजरने वाली 100 cms वर्षा की सम रेखा से लेकर पूर्व में 150 cms वार्षिक वर्षा की सम रेखा के मध्य में यह प्रदेश है। यदि ध्यानपूर्वक देखा जावे तो ज्ञात होगा कि बंगाल तथा डेल्टे के अधिक वर्षा वाले भाग और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के अर्द्ध शुष्क भाग के मध्य यह मैदान एक शृंखला के रूप में है। इस प्रदेश की लम्बाई लगभग 650 Kms है। इस प्रदेश के उत्तर में हिमालय की निचली पहाड़ियाँ और दक्षिण में दक्षिणी पठार इसकी सीमायें बनाते हैं।

प्राकृतिक दशा—यह मैदान भी नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी से बना हुआ है। गंगा के दक्षिण में पठारी भूमि स्पष्ट दिखाई पड़ती है। घाघरा, गंडक, कोसी व सोन नदियाँ प्रमुख हैं। साधारणतः इस मैदान की समुद्रतल से ऊँचाई 50 से 100 मीटर तक देखी गई है। पश्चिम से पूर्व की ओर ऊँचाई क्रमशः कम होती जाती है। पूर्वी सीमा पर तो यह ऊँचाई केवल 30 मीटर ही रह जाती है। इस प्रदेश की भौतिक बनावट पर यहाँ की जलवायु ने विशेष प्रभाव डाला है। वर्षा की अधिकता और भूमि के कम ढाल के कारण यहाँ अनेक बरसाती नदियाँ और झील हैं। गंडक व कोसी नदियाँ हिमालय से उतरने पर यहाँ काफी निक्षेप करती हैं। नदियों ने बाढ़ के विस्तृत चौड़े मैदान बनाये हैं। इस मैदान के दक्षिण की ओर दक्षिणी प्रायद्वीप की कठोर चट्टानें कहीं कहीं उभर आई हैं। इन कठोर चट्टानों को चीरती हुई (दक्षिण पश्चिम से) सोन नदी प्रवाहित होती है। पूर्व की ओर प्रायद्वीप का अग्र भाग राजमहल पहाड़ियों के नाम से प्रसिद्ध है।

जलवायु—इस प्रदेश में जाड़े का औसत तापमान 16 C रहता है। कभी कभी जाड़ों में तापमान 10 C से नीचा भी हो जाता है। गर्मियों में औसत तापमान 25 C रहता है। अधिकतम तापमान मई में 35 C तक हो जाता है। इस प्रदेश पर भी समुद्र का प्रभाव नहीं पड़ता है। वार्षिक तापान्तर लगभग 14 C रहता है।

पश्चिम से पूर्व की ओर और दक्षिण की ओर वर्षा की मात्रा बढ़ती जाती है। औसत वार्षिक वर्षा 100 से 150 cms है। उत्तर में वर्षा 150 cms पूर्वी किनारे पर लगभग 170 cms और मध्य भाग में लगभग 100 से 115 cms औसत है। इस प्रदेश में लगभग कुल वर्षा गर्मी की ऋतु में और बंगाल की खाड़ी की मानसूनी हवाओं से होती है। बंगाल की खाड़ी से आने वाली चक्रवातीय हवाएँ अपने साथ तूफानों के साथ साधारण वर्षा भी लाती हैं।

कृषि—इस भू-खण्ड के लगभग 75 प्रतिशत भाग में कृषि होती है। अधिकांश भाग में चावल होता है। गेहूँ पश्चिम से पूर्व की ओर कम होता जाता है और उसी अनुपात में चावल का महत्त्व बढ़ता जाता है। पूर्व के कुछ भागों में जूट की खेती भी होने लगी है। गन्ना मुख्य औद्योगिक फसल है। पान व नील की खेती पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। अफीम की खेती के लिये यह भाग प्रसिद्ध है।

खनिज—इस भाग में भी खनिज पदार्थों की कमी है, किन्तु निकट ही दक्षिण पूर्व में कोयला, लोहा, अभ्रक, मैंगनीज आदि पाये जाते हैं।

जनसंख्या एवं व्यवसाय—इस भूखण्ड में घनी जनसंख्या है क्योंकि अनुकूल जलवायु, उपजाऊ भूमि एवं यातायात के सुगम साधन उपलब्ध हैं। औसत रूप से जनसंख्या का घनत्व 240 से 280 व्यक्ति प्रति वर्ग Km है किन्तु कहीं कहीं (जैसे मुजफ्फरपुर, दरभंगा आदि) पर जनसंख्या का घनत्व 350 व्यक्ति प्रति वर्ग Km से भी अधिक है। कृषि मुख्य व्यवसाय है।

प्रमुख उद्योग—बड़े उद्योगों की यहाँ कमी है। उद्योग प्रायः कृषि की उपज व कुटीर उद्योगों पर ही निर्भर है। गन्ने की मिलें, सीमेंट व सूती वस्त्र बनाने के कारखाने हैं। सीमेण्ट का कारखाना (डालमियानगर) एवं तम्बाकू का कारखाना (मुंगेर) भी उल्लेखनीय है।

प्रमुख नगर—वाराणसी, गोरखपुर, मिर्जापुर, पटना, मुंगेर, छपरा आदि प्रमुख नगर हैं।

(4) गंगा का निचला मैदान—

विस्तार—वास्तव में इस भूखण्ड में गंगा व ब्रह्मपुत्र नदियों का डेल्टा सम्मिलित है। देश विभाजन हो जाने के पश्चात राजनैतिक दृष्टि से अब इस भाग में पश्चिमी बंगाल है। इस प्रदेश के उत्तर में प० बंगाल का दार्जिलिंग जिला है और दक्षिण में बंगाल की खाड़ी है। पश्चिम में दक्षिणी प्रायद्वीप का अग्र भाग है जो राजमहल की पहाड़ियों के नाम से प्रसिद्ध है। पूर्व में पूर्वी पाकिस्तान द्वारा इस प्रदेश की सीमा बनती है। इस मैदान के पूर्व में कोई प्राकृतिक सीमा नहीं है। पूर्वी पाकिस्तान की पश्चिमी सीमा भारत को गंगा के निचले मैदान से अलग करती है यद्यपि भौगोलिक दृष्टि से दोनों प्रदेश एक ही है।

प्राकृतिक दशा—सम्पूर्ण मैदान नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी से बना है। यह मैदान एक निचला मैदान है और कहीं भी 45 मीटर से अधिक ऊँचा नहीं है। दक्षिणी भाग तो 15 मीटर से भी कम ऊँचा है। मैदान का ढाल उत्तर से दक्षिण की ओर है, किन्तु यह ढाल अत्यन्त साधारण है। यहाँ गंगा नदी दक्षिण की ओर मुड़ती है और अपनी अनेक भुजाएँ समुद्र की ओर फैला देती है व डेल्टा का ऊपरी भाग कीप की भाँति है। हुगली नदी के पश्चिम की ओर भूमि कठोर है जो कि वास्तव में छोटा नागपुर के पठार का ही ढालू भाग है। दक्षिण में दलदल है व सुन्दरवन है।

जलवायु—समुद्र के अधिक निकट होने के कारण इस भाग की जलवायु समआर्द्र है। यद्यपि कर्क रेखा इस प्रदेश में होकर जाती है। किन्तु समुद्र के प्रभाव के कारण गर्मियों का औसत तापमान 25 C से 30 C तक रहता है। सर्दियों का

औसत तापमान 6 C रहता है । वार्षिक तापान्तर उत्तर से दक्षिण की ओर कम होता जाता है ।

यहाँ अधिकांश वर्षा गर्मी की ऋतु में बंगाल की खाड़ी की मानसूनी हवाओं से होती है । औसत वार्षिक वर्षा 150 cms है । कुछ स्थानों पर 250 cms (जलपाईगुड़ी) वार्षिक वर्षा होती है । मानसूनी हवाओं के आने के पहले तेज हवा वातों से थोड़ी वर्षा होती है ।

कृषि—इस भूखण्ड के लगभग 65 प्रतिशत भाग में खेती होती है । चावल व जूट यहाँ की मुख्य उपज है । डेल्टे के ऊँचे भागों में गन्ना, तिलहन, दालें व तम्बाकू की खेती होती है । ठंडे उत्तर में चाय के बगीचे हैं ।

खनिज—खनिज यहाँ नहीं पाये जाते हैं । अनुमान है कि सुन्दरवन में खनिज तेल का राशि संचित है । डेल्टे के पश्चिमी छोर पर दामोदर नदी के घाटी में कोयले की प्रसिद्ध खानें—रानीगंज, आसनसोल, झरिया आदि हैं ।

जनसंख्या एवं व्यवसाय—सुन्दरवन के भाग को छोड़कर शेष भाग में घनी जनसंख्या है । जनसंख्या का औसत घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर प्रायः 320 व्यक्ति है । प्रायः सभी लोग बंगाली हैं । हिन्दुओं की संख्या अधिक है । प्रायः 75 प्रतिशत लोग कृषि करते हैं ।

प्रमुख उद्योग—प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र हुगली नदी के दोनों ओर हैं । जूट उद्योग यहाँ का प्रमुख उद्योग है । इसके अतिरिक्त सूती वस्त्र, कागज, इंजीनियरिंग का सामान, रासायनिक पदार्थ, रेशमी वस्त्र आदि बनाने के अनेक कारखाने हैं ।

प्रमुख नगर—कलकत्ता, हावड़ा, आसनसोल, श्रीरामपुर, मुर्शिदाबाद, मिदनापुर आदि इस भाग के प्रमुख नगर हैं ।

(5) ब्रह्मपुत्र की घाटी—

विस्तार—यह भाग ब्रह्मपुत्र नदी के पूर्व व पश्चिम में स्थित है । इस भूखण्ड की लम्बाई लगभग 800 Kms और चौड़ाई लगभग 80 Kms है । इसका सम्पूर्ण भाग असम राज्य के अन्तर्गत आता है । इसके उत्तर में हिमालय पर्वत और दक्षिण में गारो, खासी, जयन्तिया की पहाड़ियाँ फैली हुई हैं । पूर्व में यह पटकोई श्रेणी से घिरी है और पश्चिम में कोई प्राकृतिक सीमा इस गंगा के मैदान से पृथक नहीं करती है, किन्तु पूर्वी पाकिस्तान की उत्तरी सीमा ही इसकी पश्चिमी सीमा निश्चित करती है ।

प्राकृतिक दशा—गंगा के मैदान के उत्तर पूर्वी किनारे पर ब्रह्मपुत्र की घाटी है जो पश्चिम से पूर्व तक चली गई है । ब्रह्मपुत्र के दोनों किनारों पर कुछ दूर तक दलदली भूमि पाई जाती है । खेती के योग्य भूमि नदी से कुछ दूर हटकर मिलती है । यह घाटी ब्रह्मपुत्र नदी द्वारा मिट्टी और बालू से बनी है । घाटी के उत्तरी भाग में हिमालय पर्वत एकदम सीधे खड़े हैं ।

जलवायु—जाड़ों में तापक्रम 16 C से भी कम हो जाता है । गर्मियों में तापक्रम 25 C से 30 C तक हो रहता है ।

इस भाग मे वर्षा ग्रीष्म-काल मे बगाल की खाडी मे उठन वाली मानसून हवाआ स हाती है। वर्षा 200 cms स भी अधिक होती है। घाटी के उत्तरी-पूर्वी भाग म तो काफी वर्षा होती है किन्तु दक्षिण के कुछ भाग वृष्टि छाया प्रदेश म आ जाते हैं।

कृषि—चावल यहाँ की प्रमुख उपज है। पहाडी ढालो पर चाय की खेती होती है। कही-कही पर दालें भी उगाई जाती हैं।

खनिज—यहाँ मुख्य खनिज पैट्रोलियम है। थोडा-सा कोयला भी प्राप्त किया जाता है।

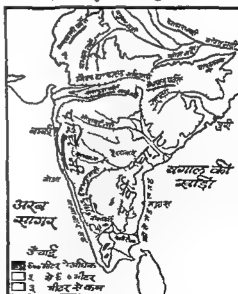
जनसख्या एव व्यवसाय—इस भूखण्ड म घनी जनसख्या नही है। जनसख्या का घनत्व लगभग 60 व्यक्ति प्रति वग Kms है। बगाल, बिहार व नैपाल के मनुष्य यहा बस रहे हैं। चाय के बागो मे व खेतो म काम करना मनुष्यो का मुख्य व्यवसाय है। बहुत से मनुष्य रेशम के कीडे पालने म लगे हुए हैं।

प्रमुख उद्योग—खनिज तेल निकालने व उसे साफ करने और चाय की पत्तियाँ तैयार करने के मुख्य बडे उद्योग हैं।

प्रमुख नगर—शिलाग, गोहाटी, डिब्रूगढ, तेजपुर इस भाग के प्रमुख नगर हैं।

(III) दक्षिण का पठार

दक्षिण का पठार त्रिभुजाकार है, जिसका आधार विध्याचल पवत व कमूर पवत बनाते हैं पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट इसकी भुजाएँ व कुमारी अन्तरीप इसका शीर्ष है। यह पठार ताप्ती नदी की घाटी से दक्षिण म नीलगिरि पवत तक चला गया है। इसके पश्चात नीलगिरि पहाड व कारडा मोम पवत (सुदूर दक्षिण म) मध्य पालघाट है। दक्षिण का पठार बहुत ही पुरानी चट्टानो से बना हुआ है। यह दक्षिणी अफ्रीका तथा स्कन्डिनेविया और स्काटलड की चट्टानों के समान प्राचीन एव कठोर है। वास्तव म यह गोडवानालड का ही अवशेष है। यह सख्त रवेदार चट्टानो का है। पुरानी चट्टानें होने के कारण इसम अभ्रक, लोहा, सोना, एल्यूमिनियम, कोयला आदि अनेक खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। यह पठार अनेक पठारों म विभक्त हो गया है। इस पठार के



दक्षिण का पठार

चित्र 5

अनेक नाम जैसे दक्षिण छोटा नागपुर का पठार, मसूर का पठार मालवा का पठार आदि के नाम से विख्यात है। वर्तमान पठार की औसत ऊँचाई 450 से 750 मीटर है।[1]

जलवायु—इस पठार के उत्तर में कर्क रेखा व दक्षिण में विषुवत रेखा है। अतः इस भाग में गर्मियों में बहुत अधिक गर्मी पड़ती है और जाड़ों में भी तापक्रम बहुत नीचा नहीं जाता। यही कारण है कि इसमें गर्मी और जाड़े के तापमान में अधिक अन्तर नहीं पाया जाता है। परन्तु इसके विपरीत भारत के उत्तरी मैदान में गर्मियों में अधिक गर्मी एवं जाड़ों में अपेक्षाकृत अधिक ठण्ड पड़ने के कारण वार्षिक तापमान में काफी अन्तर रहता है। यहाँ औसत तापक्रम लगभग 25 C रहता है।

मिट्टी—पठार में कई प्रकार की मिट्टी पाई जाती है। प्रायद्वीप के उत्तरी पश्चिमी भाग में काली मिट्टी पाई जाती है। इसको अधिक स्पष्ट करने के लिए, यदि एक रेखा खम्भात की खाड़ी से जबलपुर तक खींचा जाय और दूसरी रेखा जबलपुर से गोआ के निकटवर्ती किनारे तक तो ज्ञात होगा कि यही काली मिट्टी का प्रदेश है। राजनैतिक दृष्टि से इस क्षेत्र में पूर्वकालीन सौराष्ट्र बम्बई राज्य का उत्तरी भाग मालवा का पठार मध्य प्रदेश और मध्य प्रदेश का पश्चिमी भाग और पूर्वकालीन हैदराबाद राज्य का उत्तरी पश्चिमी भाग सम्मिलित है। यह मिट्टी विशेषकर कपास के उत्पादन के लिए श्रेष्ठ है। पूर्वकालीन हैदराबाद व मसूर में लाल मिट्टी भी पाई जाती है जो कृषि के लिए अच्छी नहीं है।

उपज—काली मिट्टी के प्रदेश में कपास मसूर के पश्चिमी भाग के पहाड़ी क्षेत्रों में कहवा व गरम मसाले होते हैं। इसके अतिरिक्त तिलहन और गन्ना भी यहाँ बहुत मात्रा में होते हैं। कुछ भागों में चावल तम्बाकू व ज्वार बाजरा भी उत्पन्न होता है। सिनकोना व नारियल भी यहाँ होते हैं।

नदियाँ—दक्षिण के पठार का ढाल पश्चिम से पूर्व की ओर होने से अधिकांश नदियाँ बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। समस्त नदियों में वर्षा का पानी ही रहता है अतः कुछ नदियाँ अन्य मौसम में सूख जाती हैं। केवल नर्वदा व ताप्ती ही दो नदियाँ हैं जो अरब सागर में गिरती हैं। इन दोनों नदियों की घाटियाँ बहुत उपजाऊ हैं। नर्वदा नदी की घाटी 20 Kms से 65 Kms तक चौड़ी है। बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली प्रमुख नदियाँ कावेरी कृष्णा गोदावरी और महानदी हैं। इनके अतिरिक्त अन्य छोटी नदियों में बनाई पनर पामर वर्णा लाइ हैं। ये नदियाँ पठारी भाग में बहने के कारण वर्षा ऋतु में इनकी गति बहुत तेज हो जाती है। अतः यह नदियाँ जल यातायात के लिए उपयुक्त नहीं हैं परन्तु जल विद्युत के लिये अटूट भण्डार है। कई नदियों के ऊपर बाँध बनाकर जल विद्युत के लिए तैयार की जा रही है।

---

[1] Chisholm's *Handbook of Commercial Geography* (Ed 1937) p 573

पर्वत—इस पठार के उत्तर में विन्ध्याचल, सतपुड़ा, अजन्ता व अरावली के पहाड़ हैं। इनके अतिरिक्त पश्चिम में पश्चिमी घाट, दक्षिण में नीलगिरि पहाड़ और पूर्व में पूर्वी घाट हैं।

पश्चिमी घाट लगभग 16 000 Kms लम्बे हैं जिनकी औसत ऊँचाई लगभग 1,200 मीटर है। इसका सबसे ऊँचा शिखर दोदाबेट्टा लगभग 2,550 मीटर ऊँचा है। इनका ढाल पश्चिम की ओर है। यह घाट बम्बई के निकट 1 200 से 1,375 मीटर ऊँचे हैं, जिनकी ऊँचाई दक्षिण में 2 130 मीटर से 2 450 मीटर हो गई है। इनमें दो दर्रे, नासिक के निकट थालघाट और पूना के निकट भोरघाट प्रसिद्ध है। इनके अतिरिक्त 'नामा' एक और छोटा दर्रा है। इन दर्रों के द्वारा ही मध्य के पठारी भाग पश्चिमी तटीय भाग से मिल हुये हैं।

पूर्वी घाट उत्तर में महानदी की घाटी से दक्षिण में नीलगिरि पर्वत तक लगभग 800 Kms लम्बे हैं। ये पश्चिमी घाटी की अपेक्षा कम ऊँचे हैं तथा शृंखलाबद्ध भी नहीं हैं। इनकी औसत ऊँचाई 750 मीटर है।

दक्षिण में नीलगिरि पर्वत पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट का मिलन बिन्दु है।

पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट की तुलना—

पूर्वी और पश्चिमी घाटों की तुलना मुख्यतः दो दृष्टिकोणों से की जा सकती है—(क) बनावट सम्बन्धी तुलना और (ख) जलवायु सम्बन्धी तुलना।

(क) बनावट सम्बन्धी तुलना—

(1) अन्तर—(1) विस्तार—पश्चिमी घाट बम्बई से सुदूर दक्षिण में कुमारी अन्तरीप तक लगभग 1600 Kms की लम्बाई में दक्षिण के पठार के पश्चिम में विस्तृत है। पूर्वी घाट महानदी की घाटी से दक्षिण में नीलगिरि पर्वत तक लगभग 800 Kms की लम्बाई में दक्षिण के पठार के पूर्व में स्थित है। इस प्रकार पश्चिमी घाट की लम्बाई पूर्वी घाट की लम्बाई की तुलना में लगभग दो गुनी है।

(2) दिशा—पश्चिमी घाट उत्तर से दक्षिण की ओर सीधे फैले हुए हैं। पूर्वी घाट उत्तर पूर्व से दक्षिण पश्चिम की दिशा में फैले हुए हैं।

(3) ऊँचाई—पश्चिमी घाट की औसत ऊँचाई 1,000 मीटर से 1,200 मीटर तक है। पूर्वी घाट की औसत ऊँचाई 750 मीटर है। इस प्रकार पश्चिमी घाट की ऊँचाई पूर्वी घाट से अधिक है। हाँ, कुछ स्थानों पर (जैसे गंजाम में महेन्द्रगिरि) पूर्वी घाट की ऊँचाई 1,500 मीटर भी देखी जाती है।

(4) ढाल—पश्चिमी घाट की ढाल में यह विशेषता है कि इनका ढाल समुद्र-तट की ओर तो एकदम खड़ा हुआ (अर्थात तेज ढाल) है, किन्तु पठार की ओर ढाल धीमा है, अतः दोनों ओर के ढाल में बहुत अन्तर है। पूर्वी घाट के दोनों ओर ही साधारण हैं।

(5) क्रमबद्धता—पश्चिमी घाट क्रमबद्ध हैं अर्थात लगातार दीवार की भाँति चले गये हैं अतः इन्हें पार करना कठिन है। इस घाट को पार करने के

मिल केवल तीन दर हैं—थालघाट (नासिक के निकट), भोरघाट (पूना के निकट) और सबसे दक्षिण म पालघाट। इसके विपरीत, पूर्वी घाट बहुत विच्छिन्न है। कावेरी व कृष्णा व गोदावरी नदियो के मध्य लगभग 150 Kms की दूरी का भाग तो बिल्कुल विलीन सा हो गया है।

(6) समुद्र से दूरी—पश्चिमी घाट समुद्र के निकट है। व समुद्र से लगभग 65 किलोमीटर दूर हैं, क्योंकि अरब सागर और पश्चिमी घाट के मध्य इतना (65 Kms) ही चौड़ा समुद्र-तट है। किन्तु पूर्वी घाट अपने सम्पूर्ण विस्तार म समुद्र से अधिक दूर रहते हैं और इस प्रकार एक चौड़ी तट की पट्टी छोड़ते चलते हैं। पूर्वी घाट समुद्र से लगभग 80 से 125 Kms दूर है।

(7) वनस्पति—पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढालों पर वर्षा अधिक होने के कारण सदाबहार घने वन पाये जाते है। किन्तु पूर्वी घाट पर गर्मियो म तो वर्षा अधिक हो नहीं पाती, सर्दियो म अधिक होती है, अत वनस्पति म भी बहुत अन्तर है।

(8) नदियाँ—पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढाल से निकलने वाली नदियाँ छोटी और तेज बहने वाली हैं। पूर्वी घाट से निकलने वाली नदियाँ अपेक्षाकृत लम्बी और कृषि के लिए उपयोगी हैं।

(II) समानता—पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट मे यद्यपि अति विषम अन्तर है, किन्तु फिर भी इनम कुछ समानता भी दृष्टिगोचर होती है। इन दोनो म निम्न समान बातें पाई जाती हैं—(1) दोनो ही घाटो का निर्माण अति प्राचीन युग म हुआ था। (2) दोनो ही घाटो के शिखर चौरस और सपाट हैं। (3) दोनो ही घाटो पर स्वास्थ्यवर्द्धक स्थान पाये जाते हैं।

(ख) जलवायु सम्बन्धी अन्तर—

(1) वर्षा—पश्चिमी घाट पर गर्मियों म अरब सागर की मानसूनी हवाओं म वर्षा होती है क्योकि य भाग इन हवाओं के ठीक सामने दीवार की भाँति आ जाते है। इनके फलस्वरूप पश्चिमी घाट की पश्चिमी ढालो पर बहुत अधिक वर्षा होती है। किन्तु पूर्वी घाट पर, विशेषत मद्रास वाले क्षेत्र म सर्दियो म वर्षा होती है। इसका कारण यह है कि गर्मियो म जो बगाल की खाड़ी की मानसूनी हवायें आती है, उनकी दिशा म पूर्वी घाट नहीं आते। अत गर्मियाँ प्राय शुष्क रहती हैं। किन्तु सर्दियो म उत्तरी पूर्वी मानसूनी हवायें (लौटती हुई मानसूनी हवाय) जब बगाल की खाड़ी के ऊपर से प्रवाहित होती हैं, उस समय व नमी प्राप्त कर लेती है और मद्रास के क्षेत्र इन हवाओं के क्षेत्र म आ जाते हैं। अत इस भाग म सर्दियो म ही अधिकांश वर्षा होती है।

(2) तापमान—पश्चिमी घाट की पश्चिमी ढालो की ओर तापमान प्राय सम रहता है और विषम नहीं होने पाता। इसका कारण यह है कि ये ढालें समुद्र के अधिक निकट हैं और समुद्र का प्रभाव यहाँ की जलवायु पर बहुत पड़ता है।

किन्तु पूर्वी घाट समुद्र से अपेक्षाकृत दूर हैं अत समुद्र का उतना अधिक प्रभाव नहीं पडने पाता।

(IV) समुद्र तट के मैदान

ये दक्षिण के पठार के पश्चिम तथा पूर्व म स्थित हैं। अध्ययन की दृष्टि स इसको दो भागो म विभक्त कर सकते हैं—(1) पश्चिमी समुद्र तट और (2) पूर्वी समुद्र तट के मदान।

(1) **पश्चिमी समुद्र तट का मदान**—पश्चिमी तट अरब सागर और पश्चिमी घाट के मध्य उत्तर म खम्भात की खाडी से दक्षिण म कन्याकुमारी तक विस्तृत हैं। पश्चिमी तट की औसत चौडाई 50 60 Kms है। दक्षिण म यह तट काफी सँकरा हो गया है परन्तु उत्तर मे यह काफी चौडा है और अन्त म रेगिस्तानी भाग मिल गया है। दक्षिण मे भी यह मदान करल म चौडा हो गया है। अरब सागर स उठने वाली हवायें इस प्रदेश म लगभग 250 Kms वार्षिक वर्षा कर देती हैं। पश्चिमी तट के उत्तरी भाग को कोकन तट और दक्षिणी भाग को माला बार तट कहते हैं। नवदा और ताप्ती इस तट की प्रमुख नदियां हैं। कोकन तट (उत्तरी तट) म उद्योग धन्धा का अच्छा विकास हुआ है। इस प्रदेश की मुख्य उपज चावल, तम्बाकू मसाले, रबर, नारियल कपास आदि हैं। वार्षिक वर्षा अधिक होने के कारण यहाँ वन बहुत अधिक है वनो से लकडी व अन्य वनस्पति प्राप्त होती है। बम्बई, कोचीन, मगलौर आदि प्रमुख बन्दरगाह पश्चिमी तट पर हैं।

(2) **पूर्वी समुद्र तट का मदान**—ये मदान पूर्वी घाट और बगाल की खाडी के मध्य, उत्तर मे उडीसा के तट स दक्षिण म कन्याकुमारी तक दक्षिण-पूर्व दिशा म विस्तृत हैं। पश्चिमी तटो की अपेक्षा ये पूर्वी तट अधिक चौडे है। यहा इनकी चौडाई 150 से 450 Kms तक है। तटीय मदान के उत्तरी भाग को उत्तरी सरकार व दक्षिणी भाग को कर्नाटक तट कहते हैं। पूर्वी तट के मदानो म पश्चिमी तटीय भागो की अपेक्षा कम वर्षा होती है। औसत वार्षिक वर्षा लगभग 115 cms है। महानदी गोदावरी, कृष्णा कावेरी इस भाग की मुख्य नदियाँ है, जिनसे सिंचाई का काम भी लिया जाता है। उत्तरी भाग म वर्षा गर्मियो मे होती है और दक्षिणी भाग मे सर्दियो मे।

तम्बाकू, चावल और गन्ना इस भाग की प्रमुख उपज है आजकल इस भाग मे जूट की खेती भी प्रचलित हो गई है। पश्चिमी तट की अपेक्षा इस तट पर आर्थिक व औद्योगिक प्रगति कम हुई है। मद्रास और विशाखापट्टनम इस तट पर दो प्रमुख बन्दरगाह हैं। इनके अतिरिक्त भी कुछ छोटे बन्दरगाह हैं।

(V) थार का रेगिस्तान

स्थिति एव विस्तार—सिंध बिलोचिस्तान व अरावली पर्वत के मध्य थार का रेगिस्तान है। राजनतिक दृष्टि से भारत म थार के रेगिस्तान का भाग मुख्यत

राजस्थान के पश्चिमी व उत्तरी पश्चिमी भाग में विस्तृत है, जिनमें बीकानेर जोधपुर व जैसलमेर सम्मिलित हैं तथा पूर्वी पंजाब राज्य के दक्षिणी भाग के लगभग आधे पश्चिमी भाग में भी यह विस्तृत है। आगे उत्तर में पाकिस्तान की भावलपुर रियासत तक और पश्चिम में सिन्ध में थार जिले तक विस्तृत है।

सम्पूर्ण थार के रेगिस्तान का क्षेत्रफल लगभग 2 C0 लाख वर्ग Kms है, जिसका अधिकांश भाग भारत में स्थित है। राजस्थान में इसका विस्तार लगभग 650 Kms की लम्बाई और 325 Kms की चौड़ाई में है।

प्राकृतिक दशाएँ—थार का रेगिस्तान बालू रेत के समुद्र के समान है जहाँ चारों ओर रेत ही रेत दिखाई पड़ता है। यहाँ रेत के अनेक टीले हैं। कुछ टीले (dunes) तो 125 से 150 मीटर की ऊँचाई के भी मिलते हैं। रेत के आवरण के नीचे प्राचीन चट्टानों के टुकड़े ऊपर आती हैं। अनेक स्थानों पर निचली और टूटी फूटी चट्टानों के उभार दिखाई पड़ते हैं। तेज आँधी के द्वारा रेत के टीले एक स्थान से दूसरे स्थान पर उड़ कर चले जाते हैं। इस मरुस्थल के बीच में उत्तर से दक्षिण की ओर फैला हुई निचले व शुष्क घाटियाँ मिलती हैं। इस रेगिस्तान का ढाल साधारणत उत्तर-पूर्व से दक्षिण पश्चिम की ओर है। दूसरे शब्दों में ढाल हिमालय पर्वत से अरब सागर की ओर है।

इस भाग में अनेक छोटे छोटे पठार भी हैं जिनमें फलोदी जोधपुर मंडोर व जैसलमेर के पठार प्रमुख हैं। इसकी प्रमुख नदी लूनी है, जो अजमेर के दक्षिण पश्चिम में अरावली पर्वत माला से निकल कर 325 Kms की लम्बाई में बहती हुई कच्छ की खाड़ी में जा गिरती है। यह नदी वर्ष के अधिकांश भाग में सूखी पड़ी रहती है।

जलवायु—इस प्रदेश की जलवायु काफी शुष्क है। ग्रीष्म काल काफी गर्म और शीत ऋतु ठंडी होती है। गर्मी की ऋतु में बहुत गर्मी पड़ती है और तापमान ऊँचा हो जाता है, किन्तु रात सुहावनी व शीतल हो जाती है। दिन में तापमान 50 C के लगभग हो जाता है। दिन में बालू से लदी हुई भयंकर आँधियाँ व तूफान चलते हैं। यहाँ दैनिक तापांतर बहुत अधिक रहता है जो प्रत्येक ऋतु में 12 C से 15 C तक रहता है। सर्दियों में सर्दी अधिक पड़ती है। जाड़ों में तापमान लगभग 15 C रहता है। जाड़ों में दिन तो अधिक कष्टप्रद नहीं होते किन्तु रात्रि में कठोर शीत पड़ता है।

इस प्रदेश में वर्षा बहुत कम होती है। विभिन्न भागों में वर्षा की मात्रा भिन्न है। उत्तरी व उत्तरी पश्चिमी राजस्थान में वर्षा 5 से 10 cms तक होती है। कुछ भागों में तो वर्षों तक वर्षा की एक बूंद भी धरती पर नहीं पड़ती। किन्तु ज्यों ज्यों हम दक्षिण व दक्षिण-पूर्व की ओर जाते हैं वर्षा की मात्रा क्रमश अधिक होती जाती है। इस प्रदेश में औसत वार्षिक वर्षा 25 cms है। इस अल्प वर्षा में भी अनिश्चितता व अनियमितता के दो तत्त्व मिले रहते हैं।

प्राकृतिक वनस्पति—उष्ण व शुष्क जलवायु के कारण इस मरुभूमि की भूमि प्राय वनस्पतिहीन है। यहा की प्राकृतिक वनस्पति कांटदार झाडिया, बबूल, कीकर आदि है। ये घनी नही हैं बल्कि दूर-दूर छितरी हुई हैं। पत्तियाँ प्राय मोटी व छोटी होती हैं और जडें लम्बी होती हैं।

खनिज सम्पत्ति—बीकानेर विभाग म कोयले (लिग्नाइट), जिप्सम और मुल्तानी मिट्टी की खानें हैं जोधपुर डिवीजन मे जिप्सम सगमरमर और पत्थर की खानें है। जसलमर डिवीजन में सुन्दर रगीन छीटदार पत्थर पाये जाते है और पैट्रोल मिलने की काफी सम्भावनाऐं हैं। इनके अतिरिक्त इस प्रदेश म कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण खनिज पाये जाते है जो अणु शक्ति उत्पन्न करने के लिए उपयोगी हैं अत उनका विकास शीघ्रता से किया जा रहा है। साँभर झील से नमक बडी मात्रा में प्राप्त किया जाता है।

कृषि—कृषि की दृष्टि से यह प्रदेश पिछडा हुआ है, क्योकि पानी का अभाव है। बाजरा मोठ आदि की उपज शुष्क कृषि द्वारा की जाती है। गगानगर (बीकानेर डिवीजन) मे 'गग नहर' का स्वर्गीय बीकानेर नरेश श्री गगासिह ने निर्माण करवाया था, आज इस भाग म राजस्थान म सबसे अधिक गेहू उत्पन्न होता है। गन्ना, कपास व तिलहन अन्य उपज हैं।

कृषि मुख्य व्यवसाय है साथ ही पशु चराना भी महत्त्वपूर्ण है। भेड, बकरियाँ व ऊँट प्रमुख पशु हैं। आन्तरिक भागो मे यातायात के साधनो की कमी के कारण आर्थिक विकास नही हुआ। जनसख्या का औसत घनत्व लगभग 10 व्यक्ति प्रति वग किलोमीटर है। जसलमर म तो जनसख्या का औसत घनत्व केवल एक व्यक्ति प्रति वग किलोमीटर है। बीकानेर, जोधपुर और जसलमेर इस भाग के प्रमुख नगर हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 Divide India according to physical features and write a geographical account of the Sutlej Gangetic plain under the following heads —(a) Physical built, (b) Climate, (c) Products

भारत का भौतिक विभागो म बाँटते हुए सतलज-गगा के मदान का वणन प्राकृतिक बनावट जलवायु और उपज आदि शीर्षको पर कीजिए।

2 What do you know about the formation of the Himalayas ? How has it affected the economy of the country ?

हिमालय पवतो के निर्माण के बारे म आप क्या जानते हैं। इन्होने किस प्रकार देश के आर्थिक जीवन को प्रभावित किया है ?

3 Give a geographical description of the Himalayan region
हिमालय प्रदेश का भौगोलिक विवरण दीजिए। *(T D C, 1959)*

4 Compare the Eastern with the Western Ghats and account for the climatic variations
भारत के पूर्वी और पश्चिमी घाटों की तुलना कीजिए, विशेषकर जलवायु के अन्तर का कारण स्पष्ट कीजिए। (T D C, 1959)

5 Discuss the land forms and structure of tropical India How does the structure tell upon the economic life of a region ?
(T D C, 1962)

6 How do the physical features and land forms of Peninsular India affect the economy of that region ?
प्रायद्वीपीय भारत की प्राकृतिक आकृति और भूमि की बनावट उस क्षेत्र की आर्थिक व्यवस्था पर किस प्रकार प्रभाव डालती है ? (T D C 1963)

7 Discuss the structural differences in the make up of North and South India
उत्तर और दक्षिण भारत की बनावट के भेद का स्पष्टीकरण कीजिये।

8 प्राकृतिक क्षेत्र से आप क्या समझते हैं ? भारत का, उसके निर्माण के आधार पर, प्राकृतिक क्षेत्रों में विभाजन कीजिये और प्रत्येक क्षेत्र की विशेषताएं बताइये। (T D C Suppl, 1964)

9 हिमालय के उद्भव के विषय में आप क्या जानते हैं ? इस पहाड़ ने देश की आर्थिक-व्यवस्था पर क्या प्रभाव डाला है ?
(T D C Suppl, 1965)

10 भारत के किसी एक बड़े प्राकृतिक भाग का निम्न के विशेष संदर्भ में विवेचन करिये
(क) विस्तार, (ख) मिट्टी, (ग) जलवायु (घ) फसलें और (ङ) जन संख्या। (T D C, 1970)
[संकेत—इस प्रश्न के उत्तर में 'सतलज-गंगा ब्रह्मपुत्र नदियों के मैदान' का विवरण देना अधिक उपयुक्त है।]

5
भारत की जलवायु

प्रारम्भिक—

ऋतु और जलवायु का प्रभाव प्राकृतिक वातावरण तथा मानव जीवन पर अटूट और अविच्छिन्न रूप स पडता है। ऋतु मानव के जीवन और प्रकृतियो पर अपनी छाप अंकित कर देती है। अत इसका अध्ययन इतना अधिक महत्त्वपूण है कि प्राय सभी उन्नत देशो म ऋतु के अध्ययन के लिए पृथक ऋतु विभाग है जहा ऋतु म प्रतिक्षण होने वाले परिवतन का अकन किया जाता है। ऋतु तो किसी स्थान की समय विशेष की वायुमण्डलीय दशा है जब कि जलवायु आशिक रूप से औसत ऋतु है।

भारत की जलवायु की विशेषता

भारत एक विशाल दश है। यह उत्तर से दक्षिण तक लगभग 3 220 Kms और पूव से पश्चिम तक लगभग 2,975 Kms तक फला हुआ है। देश का क्षेत्रफल लगभग 32,68,090 वग Kms है। दश के कुछ भाग उष्ण कटिबन्ध म स्थित हैं तो कुछ भाग शीतोष्ण कटिबन्ध म, कुछ भागों स समुद्र बहुत ही दूर है तो कुछ भाग समुद्र के बिल्कुल निकट ही स्थित हैं। इस विशाल विस्तार को देखने हुए दश के भिन्न भिन्न भागो म भिन्न भिन्न प्रकार की जलवायु का पाया जाना स्वाभाविक ही है। एक ओर तो जसलमर (राजस्थान) वर्षा के लिए तरस जाता है, दूसरी ओर चेरापूजी (असम) म 1145 cms स 1270 cms वार्षिक वर्षा हो जाती है, इसी प्रकार पजाव की जलवायु विषम है तो तटीय भागा की जलवायु मृदुल है। राजस्थान के पश्चिमी भाग म झुलसा दने वाली गर्मी पडती है किन्तु नफा व लद्दाख म सदिया म भयकर सर्दी पडती है। प्रसिद्ध विद्वान् ब्लडफोड ने हमारे देश की जलवायु की विभिन्नताओ का उल्लेख करते हुए लिखा है, "हम भारत की जलवायुओं (climates) के विषय मे कह सकते हैं जलवायु (climate) के विषय से नहीं, क्योंकि स्वय विश्व मे जलवायु की इतनी विषमताएँ नहीं मिलती हैं जितनी कि अकेले भारत मे।' इतना ही नही एक अन्य विद्वान मासडन ने तो यहा तक लिख दिया है कि "विश्व की समस्त जलवायुयें (climates) भारत मे पाई जाती हैं।"[1] इतना होते

---

[1] Marsden *Geography for Senior Classes*, p 117

हुए भी भारत की जलवायु के मानसूनी क्रम ने इस विभिन्नता में इतनी अधिक समानता उत्पन्न कर दी है कि सारा देश मानसूनी जलवायु के अन्तर्गत ही आ जाता है।

मानसूनी जलवायु की विशेषताएँ

विश्व में पाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की जलवायु में मानसूनी जलवायु के अपने पृथक ही लक्षण हैं। काजी सईदउद्दीन अहमद[1] ने मानसूनी जलवायु की प्रमुख विशेषताएँ (अथवा लक्षण) इस प्रकार बतलाई हैं—'मानसूनी जलवायु की प्रमुख विशेषताएँ हैं तापमान का लगभग समान वितरण, कम तापान्तर और ग्रीष्म काल में मानसूनी हवाओं से काफी वर्षा और शुष्क शीत ऋतु जो कि 4 से 6 महीने तक रहती है। ग्रीष्म ऋतु बहुत गर्म (Hot) और आर्द्र तथा शीत ऋतु साधारण गर्म (Warm) और शुष्क रहती है।"

सामान्यतः किसी महीने में यहाँ का तापमान औसत रूप से 18 C से कम नहीं रहता। जब तक सूर्य लम्बवत रहता है, तब तक गर्मी की अधिकता रहती है। मरुस्थलीय सीमा पर तापमान का औसत कुछ अधिक पाया जाता है। वर्षा के पूर्व इस प्रदेश के हर भाग में तापक्रम अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है। दोनों दैनिक व मौसमी (Diurnal and Seasonal) तापान्तर यद्यपि कम होता है, किन्तु विषुवतरेखीय प्रदेशों की अपेक्षा तापान्तर अधिक स्पष्ट दिखाई देता है। तापान्तर वास्तव में वर्षा की मात्रा और समुद्र से दूरी पर निर्भर होता है। शुष्क एवं आन्तरिक भाग अपेक्षाकृत अधिक तापान्तर अनुभव करते हैं।

मानसूनी जलवायु प्रदेशों में औसत वार्षिक वर्षा 100 से 150 cms तक होती है। वर्षा की अनियमितता और अनिश्चितता मानसूनी जलवायु की प्रमुख विशेषताएँ हैं। न तो वर्ष के हर भाग में ही निश्चित रूप से वर्षा होती है और न देश के हर भाग में ही समान वर्षा होती है। वर्षा की मात्रा में अन्तर भूमि की बनावट और हवाओं की दिशा पर निर्भर होता है। शीत ऋतु आवश्यक रूप से शुष्क रहती है। इस जलवायु वाले प्रदेशों में विषुवतरेखीय प्रदेशों की अपेक्षा कम वर्षा होती है, वायु में आर्द्रता लगभग 30% रहती है।

मानसूनी जलवायु की प्राकृतिक वनस्पति वन हैं। गर्मी और ग्रीष्म ऋतु में वर्षा वनस्पति के उत्पादन में सहायक है। वर्षा के अन्तर के कारण वनस्पति में भी अन्तर दृष्टिगोचर होता है। मानसूनी जलवायु प्रदेश में पतझड़ वाले वृक्ष, जो गर्म शुष्क मौसम में अपने पत्ते गिरा देते हैं, प्रमुख हैं। केवल अधिक वर्षा वाले भागों में जहाँ 200 cms से अधिक वर्षा होती है सदाबहार वृक्ष पाये जाते हैं। साल, देवदार, महोगनी आदि प्रमुख वृक्ष हैं। आर्थिक दृष्टि से मानसूनी जलवायु प्रदेश के वन विषुवतरेखीय वनों से अधिक महत्वशील होते हैं।

---

1 Qazi Saied Ud Din Ahmed *Major Natural Regions* pp 35 to 40

भारत की जलवायु को प्रभावित करने वाले तत्त्व

चिब्बर[1] ने अपनी पुस्तक की भूमिका में लिखा है कि "किसी देश की जलवायु, बहुत अंशों तक उसकी प्राकृतिक बनावट पर निर्भर है, और साथ ही स्वयं जलवायु वहाँ के कृषि पदार्थों, वन पदार्थों एवं पशु पदार्थों के लिए उत्तरदायी है।" भारत की जलवायु का अध्ययन करने के पूर्व उन तत्त्वों पर विचार करना आवश्यक है, जो देश की जलवायु को प्रभावित करते हैं। ये तत्त्व निम्न हैं :—(1) भारत भूमध्यरेखा के निकट है, (2) कर्क रेखा भारत के लगभग मध्य में से होकर गुजरती है, (3) समुद्र तल से ऊँचाई देश में सर्वत्र समान नहीं है, (4) भारत के तीन ओर समुद्र हैं, (5) भारत के निकट कोई ठण्डी अथवा गर्म समुद्री धारा प्रवाहित नहीं होती है, एवं (6) भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत पूर्व से पश्चिम तक विस्तृत है।

(1) **भूमध्यरेखा से दूरी**—भूमध्यरेखा से दूरी भारतीय जलवायु को दो प्रकार से प्रभावित करती है—(क) तापमान की दृष्टि से और (ख) वर्षा की दृष्टि से। जो भू-भाग भूमध्यरेखा से जितना अधिक निकट होता है, वहाँ उतनी ही अधिक गर्मी पड़ती है। भारतवर्ष की दक्षिणी नोक भूमध्यरेखा से लगभग 8° उत्तरी अक्षांश पर है। भूमध्यरेखा से दूरी का प्रभाव निम्न तालिका में स्पष्ट हो जायगा—

(तापमान C में)

नगर	स्थिति (अक्षांश)	मई	जनवरी
नागपुर	22 0	42 6	14 3
इलाहाबाद	25 0	41 7	8 4
दिल्ली	28 3	40 4	6 3

इससे ज्ञात होता है कि नागपुर भूमध्यरेखा से लगभग 22° उत्तर में है, (अधिक निकट है)। वहाँ गर्मियों में तापमान 42 6 C और सर्दियों में 14 3 C हो जाता है। इलाहाबाद व दिल्ली भूमध्यरेखा से अधिक दूर हैं।

(2) **कर्करेखा भारत के लगभग मध्य से गुजरती है**—कर्करेखा देश को दो भागों (उत्तरी व दक्षिणी भारत) में विभक्त करती है। कर्करेखा के दक्षिण वाले भाग (अर्थात् दक्षिण भारत) इस *प्रकार कर्करेखा व भूमध्यरेखा के बीच में स्थित* हैं। इस कारण दक्षिण भारत में उष्ण कटिबन्ध के तुल्य जलवायु पाई जाती है। यहाँ तापमान वर्ष-पर्यन्त ऊँचा रहता है और वार्षिक तापान्तर अधिक नहीं होता। यहाँ यह भी यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि यद्यपि कर्करेखा भारत को स्पष्ट रूप से उष्ण कटिबन्ध और शीतोष्ण कटिबन्ध में विभक्त करती है किन्तु भारत में

1 Chhibber *India*, Vol I, Preface, p VII

तापमान के वितरण पर कर्करेखा की अपेक्षा देश की विशालता, समुद्र से दूरी व निकटता तथा भू रचना का अधिक स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। दक्षिण भारत में सर्वत्र ही तापान्तर समान नहीं होता है। समुद्र के निकटवर्ती भागों में तापान्तर कम पाया जाता है और समुद्र से दूर भागों में तापान्तर अधिक हो जाता है। इसके अतिरिक्त 21 जून को सूर्य कर्क रेखा पर (23½ उत्तरी अक्षांश) लम्बवत चमकता है। अत इस समय सूर्य उत्तरी भारत के निकटतम होता है। इस कारण मई जून के महीने उत्तरी भारत में सबसे गर्म महीने होते हैं।

(तापमान C में)

नगर	स्थिति (अक्षांश)	मई
जबलपुर	23 1	40 8
अहमदाबाद	23 2	41 6
जयपुर	26 5	^1 0

(3) समुद्र तल से ऊँचाई में असमानता—भारत की विशालता के कारण देश के सब भाग समुद्र-तल से समान ऊँचाई पर स्थित नहीं हैं। (समुद्र-तल से प्रति 300 फीट की ऊंचाई पर तापक्रम 1 C कम होता चला जाता है) अत जो भाग जितनी ऊँचाई पर स्थित होते हैं वे उतने ही ठण्ड होते हैं। यही कारण है कि ऊँचे पहाड़ों पर स्थित नगर गर्मियों में काफी ठण्डे रहते हैं। ग्रीष्मकाल में मैदानी भाग तो ताप से झुलस रहे होते हैं किन्तु पर्वतीय भागों पर बहुत सुहावना मौसम रहता है। ऊँचाई के कारण ही हिमालय पर्वत के ऊंचे भागों पर सदैव बर्फ जमी रहती है। निम्न तालिका से यह स्पष्ट होता है —

नगर	समुद्रतल से ऊँचाई	तापक्रम (C) मई	नगर	समुद्रतल से ऊँचाई	तापक्रम (C) मई
दार्जिलिंग	7 432	17 0	वाराणसी	250	40 5
उटकमंड	7 346	17 0	लखनऊ	370	40 4
आबू	3 945	20 0	कानपुर	410	38 5
बंगलौर	3 021	21 0	बरेली	570	39 5

इतना ही नहीं समान अक्षांशों में भिन्न नगरों के तापमानों में इनकी (समुद्रतल से) ऊँचाई में अन्तर के कारण अन्तर रहता है जैसा कि निम्न तालिका इसकी पुष्टि करती है —

नगर	स्थिति	ऊँचाई	तापमान C (जून)
मसूरी	30 2	6 940	24 5
देहरादून	30 1	2,240	35 5
अम्बाला	30 2	892	39 5

(4) **भारत के तीन ओर समुद्र है**—तटवर्ती प्रदेशों के तापमान को समुद्र सम करके उनके शीत तथा ग्रीष्म ऋतुओ के तापान्तर को बहुत कम कर देते हैं। इसके विपरीत, जो भाग समुद्र से दूर हैं वहा तापान्तर भी बहुत अधिक रहता है क्योंकि गर्मियो मे बहुत गर्मी और सर्दियो मे बहुत सर्दी पडती है। निम्न तालिका से इसके प्रभाव स्पष्ट प्रतीत होते हैं। इसके अतिरिक्त, भारत के तीन ओर समुद्र होने का दूसरा प्रमुख प्रभाव वर्षा पर भी पडता है, क्योकि मानसूनी हवाएँ जब समुद्र के ऊपर से गुजरती हैं तो नमी प्राप्त कर लेती हैं और भारत मे वर्षा करती हैं।

(तापमान C मे)

नगर	जून	दिसम्बर	नगर	जून	दिसम्बर
बम्बई	31	30	बीकानेर	42	24
त्रिवेन्द्रम	29	30	आगरा	40	24°
कलकत्ता	33	26	अलीगढ	39	23

(5) **समुद्र धारा का प्रभाव**—भारत के तटीय भाग के निकट कोई भी ठडी अथवा गर्म समुद्री धारा प्रवाहित नही होती, अत भारत की जलवायु इनसे प्रभावित नही होती। गर्म धाराएँ निकट की जलवायु को गर्म कर देती हैं व ठडी धाराएँ जलवायु को ठडा। उदाहरण के लिए गल्फ स्ट्रीम (चौडाई लगभग 50 Kms, गहराई 450 फैदम तापक्रम 26 6, गति 6 Kms प्रति घण्टा) उत्तरी अमरीका के किनारे के साथ-साथ उत्तर की ओर बहती है। न्यूफाउण्डलैंड के समीप लेब्रेडर की ठण्डी धारा से गल्फ-स्ट्रीम मिलती है, अत वहाँ बहुत धुन्ध उत्पन्न हो जाती है। यही गल्फ स्ट्रीम इगलैंड के निकट होकर जाती है। इसी प्रकार क्यूरोसीवो की गर्म धारा जापान के तटो को नही जमने देती है किन्तु उत्तर क्यूराइल की ठण्डी धारा आकर मिलती है, अत यहाँ भी कोहरा उत्पन्न हो जाता है।

(6) **हिमालय पर्वत की स्थिति**—भारत के उत्तर मे हिमालय पर्वत पूर्व दिशा से पश्चिम दिशा तक फैले हुए हैं। इससे भारत की जलवायु स्पष्ट रूप से दो प्रकार

से प्रभावित होती है। प्रथम, मध्य एशिया की ठण्डी व बर्फीली हवाएं भारत में नहीं आने पातीं जिससे यहां शीत का सा कठिन जाड़ा नहीं पड़ता।[1] हिमालय पर्वत के कारण भारत के उत्तरी मैदान का तापमान बढ़ा है। यदि यह मैदान उत्तर में ध्रुवों की ओर तक विस्तृत होता तो तापमान —18 C से —15 C तक अधिक होता। दूसरे समुद्र की ओर से आने वाली हवाएँ जो पानी से परिपूर्ण होती हैं, इनसे टकराकर वर्षा करती हैं और यह मानसूनी हवाओं को भारत से बाहर नहीं जाने देता है। इसी वर्षा पर देश की कृषि निर्भर है।

भारत की ऋतुएं

आरम्भ में यह स्पष्ट होना चाहिए कि भारत में एक ही प्रकार की जलवायु अयनवृत्तीय मानसूनी तुल्य (Tropical Monsoon Type) पाई जाती है। स्थानीय परिस्थितियों के कारण जलवायु में अन्तर आ जाता है। भारत की ऋतुओं की विशेषता है—उनका एक निश्चित ताल (Rhythm)।

ऋतुओं का विभाजन

डडले स्टाम्प[2] के अनुसार, भारत में तीन ऋतुएं होती हैं। (1) शीत ऋतु—अक्टूबर से फरवरी के अन्त तक। (2) ग्रीष्म ऋतु—मार्च के आरम्भ से जून के आरम्भ अथवा मध्य जून तक। (3) वर्षा ऋतु—जून के आरम्भ अथवा मध्य जून से सितम्बर अथवा अक्टूबर के अन्त तक।

कुछ भूगोलशास्त्रियों ने भारत की ऋतुओं को दूसरे आधार पर भी विभाजित किया है। मैक फार्लेन[3] और स्टेम्बर[4] ने दो ऋतुएं बतलाई हैं —(1) शुष्क ऋतु—अथवा उत्तरी-पूर्वी मानसून का समय जो मध्य दिसम्बर से मई के अन्त तक होता है। (2) आर्द्र ऋतु—अथवा दक्षिणी-पूर्वी मानसून का समय जो मई के अन्त से मध्य दिसम्बर तक होता है।

भारत सरकार के मौसम विज्ञान विभाग (The Indian Meteorologial Department) ने भारत की ऋतुओं को इस प्रकार विभक्त किया है—(I) उत्तर पूर्वी मानसून की ऋतु—(1) शीत ऋतु—जनवरी और फरवरी। (2) ग्रीष्म ऋतु—मार्च से मध्य जून। (II) दक्षिण पश्चिम मानसून की ऋतु—(3) वर्षा ऋतु—मध्य जून से मध्य सितम्बर। (4) मानसून लौटने की ऋतु—मध्य सितम्बर से दिसम्बर।

[यहां यह स्पष्ट कर देना अत्यन्त आवश्यक है कि ऋतुओं का महीनों में उपरोक्त वितरण कठोर नहीं है वरन् देश के विभिन्न भागों में इनमें स्थानीय परिस्थितियों के कारण कुछ परिवर्तन हो सकता है।]

---

1 *Quoted by* SPATE in his book India & Pakistan (*Ed* 1957 p 40) from Imperial Gaz (1909) Vol I

2 Dudley Stamp *Asia (Ed 1962)* p 210

3 Mc Farlane *Economic Geog (Ed 1945)* pp 290 291

4 Stember *The World*, p 268

(1) भारत मे शीत-ऋतु—

दिसम्बर तक सूय की किरणे विषुवतरखा क दक्षिणी भागा पर सीधी पडने लगती हैं।[1] इस समय विषुवतरेखा क उत्तरी भागों म शरदकाल होता है, क्योंकि यहां सूय की किरण तिरछी पडने लगती है। दिसम्बर व जनवरी भारत के सबस ठण्डे महीन होने हैं।

भारत मे, अक्टूबर स जनवरी तक तापक्रम नीचा रहता है, किन्तु तापक्रम उत्तर स दक्षिण तथा पश्चिम से पूव की ओर बढता जाता है। जनवरी के महीन मे पेशावर (पश्चिम पाकिस्तान) मे तापक्रम 10 C स भी कम हो जाता है, पजाब के उत्तरी मदान म 12 7 C से कम, गगा की घाटी मे बनारस मे 15 5°C स भी कम। जिस प्रकार जुलाई मास म इङ्गलड का मौसम होता है ठीक उसी प्रकार का मौसम उत्तरी भारत म दिन म रहता है किन्तु रातो म इङ्गलैंड की राता की अपेक्षा अधिक सर्दी पडती है और प्राय हल्का कोहरा भी दृष्टिगोचर होता है। दूसरी ओर, मद्रास मे जनवरी का अधिकतम तापक्रम 29 C स भी कुछ अधिक (Vide 'India 1962, p 5) रहता है। देश के अधिकाश भाग मे इस समय वायु मे आद्रता (Humidity) बहुत ही कम होती है और आकाश स्वच्छ रहता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि **उत्तरी भारत मे दक्षिणी भारत की अपेक्षा शीत ऋतु अधिक ठडी होती है।** इसके दो प्रमुख कारण है—प्रथम, दक्षिण भारत पर समुद्र का प्रभाव पडना है क्योंकि अधिकाश भाग समुद्र के निकट है जबकि उत्तरी भारत पर समुद्र का प्रभाव नही पडने पाता है क्योंकि भीतरी भाग समुद्र से काफी दूर हैं। द्वितीय, उत्तर के पहाडी भागो पर अधिक ऊँचाई होने के कारण, हिमपात होता है जो जलवायु को और भी अधिक ठण्डा कर देता है। इसके फलस्वरूप उत्तरी भारत के मदानी भागो म कभी कभी रात मे पाला भी पडता है। सूयास्त होने के बाद 2 3 घण्टे तक और सूर्योदय होने के 2 3 घण्टे के पहले प्राय कोहरा छाया रहता है। जनवरी मास म न्यूनतम तापक्रम श्रीनगर म —4 C शिमला म 1 6 C शिलाग म 3 C और दार्जिलिंग म 1 5 C (India 1962, pp 7 8) रहता है।

(2) भारत मे ग्रीष्म ऋतु—

भारत म ग्रीष्म ऋतु माच से मध्य जून तक माना जाता है। 21 माच के बाद सूय का रुख विषुवतरेखा के उत्तर की ओर होना आरम्भ हो जाता है और इसके साथ ही हमारे देश मे गर्मी का मौसम भी आरम्भ होने लगता है। ज्यो ज्यो सूय उत्तर की ओर बढता है गर्मी की उग्रता म वृद्धि होती जाती है। अप्रल म सूय

---

1 22 दिसम्बर को सूय की किरण दक्षिणी गोलार्द्ध म मकर रेखा पर सीधी पडती है।

की किरण दक्षिण भारत म पडनी आरम्भ हो जाती हैं, इस कारण वह महीना दक्षिण भारत का सबस गम महीना होता है।

नगर	तापक्रम अप्रैल	तापक्रम जून
त्रिवेन्द्रम	31 5	29 0
मसूर	34 8	29 4
बगलौर	33 5	29 0

मई म सूय की किरणे मध्य भारत के निकट पडन लगती हैं अत वहां मई का महीना सबस गम हाता है और 21 जून को सूय की किरणें कर्करेखा पर सीधी पडन लगती हैं और उत्तर म यह सबस गम महीना गिना जाता है। यही कारण है कि राजस्थान, पजाब और उत्तर प्रदेश म जून के महीने म सबसे अधिक गर्मी पडती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत मे सूय के साथ गर्मी उत्तर की ओर यात्रा करती है।[1]

इस मौसम म भारत के अधिकाश भागो म औसत तापक्रम 29 C स 35 C हो जाता है। परन्तु इन दिनो पहाडी स्थानो म ऊचाई के कारण, मदानी भागो की अपेक्षा अधिक ठडक रहती है। इसी कारण ग्रीष्म ऋतु के कष्टो से बचने के लिय धनी वग के कुछ लोग शिमला नैनीताल, देहरादून, मसूरी, दार्जिलिंग आदि पहाडी स्थानो मे चले जाते हैं। शिमला एव दार्जिलिंग म तापक्रम गर्मियो म भी हमेशा 21 C स कम ही रहता है।

निम्न तालिका म कुछ पहाडी स्थानो का जून म न्यूनतम तापक्रम बतलाया गया है—

	C		C
उटकमड	11 3	शिलाग	17
दार्जिलिंग	13 5	आबू	20
शिमला	15 5	देहरादून	23

स्थानीय व्यतिक्रम—

भारत के ग्रीष्म-काल म तीन स्थानीय व्यतिक्रम (Disturbing Features) उल्लखनीय हैं—(1) बगाल एव असम म काल बसाखी (Norwester) (2) उत्तरी भारत म धूल की आंधियां (Dust Storms) एव (3) दक्षिणी भारत म सबहुन वृष्टि (Mango Rains)।

(1) काल बसाखी (Norwester)—बगाल, असम पूर्वी पाकिस्तान व पूर्वी तटो पर अपराह्न म भीषण झझावात आते हैं। य तूफान बसाखी के अवसर पर

1 Chhibber *India* Vol I, p 133

अधिकता से आते हैं, अत इन्हें काल बैशाखी कहते हैं । इनका आगमन उत्तर पश्चिम से होता है इसलिए नारवेस्टर (Norwester) कहते हैं । ये समुद्र में ऊँची ऊँची लहरें उत्पन्न करके तटवर्ती भागों में बाढ़ सा दृश्य उत्पन्न कर देते हैं । कभी-कभी आँधी इतने वेग से चलती है कि गाँवों में झोपड़ियाँ उड़ जाती है वृक्ष समूल उखड़ जाते हैं और नदियों में नाव-दुर्घटनाएँ होती हैं । इन झंझावातों से बिजली की चमक और बादलों की गरज के साथ वर्षा की कुछ बूँदें भी पड़ती है । तापक्रम कम होकर ठण्डा हो जाता है । कृषि के लिए यह वर्षा बहुत उपयोगी होती है क्योंकि इस समय बंगाल व असम में धान की खेती प्रारम्भ हो जाती है और जूट के खेत जोतकर तैयार कर लिये जाते हैं ।

(2) धूल की आँधियाँ (Dust Storms)—उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब में तीसरे पहर प्राय धूल की विकराल आँधियाँ आया करती हैं । काली पीली धूल भरी आँधियाँ भीषण प्रकोप मचाती हैं । इन अंधड़ों से कभी कभी तो इतनी धूल आकाश पर छा जाती है कि दिन में ही रात जैसा अँधेरा छा जाता है । इनमें वर्षा नहीं होती और तापक्रम में भी गिरावट नहीं होती । कृषि की दृष्टि से इन आँधियों का महत्त्व नहीं होता है ।

(3) सवहन वर्षा (Mango Rains)—दिन के समय अत्यधिक गर्मी के कारण दक्षिणी भारत में भी वायु में सवहन प्रवाह जारी हो जाता है । अत वहाँ भी तीसरे पहर प्राय बादलों की गड़गड़ाहट के साथ वर्षा होती है । किन्तु इस वर्षा की यह विशेषता है कि इसके साथ आँधी नहीं आती । इस प्रकार की वृष्टि दक्षिणी भारत में आम की फसल के लिए बहुत लाभप्रद है अत इसे आम्र-वृष्टि (Mango Rains) भी कहते हैं ।

वार्षिक तापान्तर (Annual Range of Temperature)—

किसी स्थान के सबसे ठण्डे और सबसे गर्म महीने के औसत तापक्रमों का अन्तर वार्षिक तापान्तर कहलाता है । तापान्तर पर इन तीनों बातों का विशेष रूप से प्रभाव पड़ता है—(क) समुद्र से दूरी (ख) भूमध्यरेखा से दूरी, (ग) ऊँचाई । भारत के कुछ नगरों के सबसे गर्म व ठण्डे महीनों के अधिकतम तापक्रम का अध्ययन करने से निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं —

(1) पहाड़ी स्थानों पर वार्षिक तापान्तर अपेक्षाकृत कम होता है ।

नगर	मई (C)	दिसम्बर	वार्षिक तापान्तर
उटकमंड	21 3	18 3	3
दार्जिलिंग	16 2	10 2	6
शिलौंग	23 3	16 3	7

(2) उत्तर से दक्षिण की ओर वार्षिक तापान्तर कम होता है।

नगर	मई	दिसम्बर	वार्षिक तापान्तर
लुधियाना	40	21	19
दिल्ली	40	23	17
कोटा	42	26	16
इन्दौर	39	26	13
मैसूर	33	27	6
त्रिवेन्द्रम	33.7	30.1	0.6

(3) पश्चिम से पूर्व की ओर वार्षिक तापान्तर कम होता जाता है।

नगर	मई	दिसम्बर	वार्षिक तापान्तर
अम्बाला	40.0	22.0	18
अलीगढ़	40.7	23.3	17
लखनऊ	41.0	24.5	16.5
पटना	38.0	24.0	14.0

(4) दक्षिणी भारत में पूर्वी तट की अपेक्षा पश्चिमी तट का वार्षिक तापान्तर कम है।

नगर	मई	दिसम्बर	वार्षिक तापान्तर
पश्चिमी तट			
बम्बई	33	30	3
मंगलौर	33	32	1
त्रिवेन्द्रम	30	29.5	0.5
पूर्वी तट			
कलकत्ता	35	26.5	7.5
कटक	38	26.7	11.3
पुरी	32	20.7	5.3

(5) समुद्र तट पर भीतरी भाग की अपेक्षा पश्चिमी तट का वार्षिक तापान्तर कम होता है।

नगर	मई	दिसम्बर	वार्षिक तापान्तर
पूना	37°	29 4°	7 3°
मसूर	33°	27 0°	6 0°

(3) भारत मे वर्षा ऋतु—

'यह ठीक कहा गया है कि यद्यपि स्कूल का प्रत्येक विद्यार्थी भारतीय मानसून के विषय म जानता है। किन्तु सरकार का जलवायु विभाग अभी भी उसकी उत्पत्ति के सम्बन्ध मे पूर्णत निश्चिन्त नही है।"

भारत म वस तो वर्षा आरम्भ होने तथा उसके अन्त होने का निश्चित समय नही है परन्तु फिर भी यह कहा जा सकता है कि जुलाई और अगस्त के महीने हमारे देश म घनी वर्षा वाले महीने होते हैं और मध्य सितम्बर से वर्षा की मात्रा म पर्याप्त कमी हो जाती है। इस प्रकार अक्टूबर तक थोडी बहुत वर्षा होती रहती है।

'मानसून' का अर्थ—

मानसून शब्द अरबी भाषा के मौसिम से लिया गया है[1] जिसका अर्थ है **'हवाओं का उलट फेर अथवा 'प्रचलित हवाओ का मौसमी परिवर्तन'**। परन्तु इसका वास्तविक अर्थ है—दो मुख्य हवाओ का आदान प्रदान, जो वर्ष के दो विभिन्न ऋतुओ म बहती हैं। ये हवाएं है दक्षिणी-पश्चिमी मानसून और उत्तरी पूर्वी मानसून। गर्मियो म समुद्री हवाएँ चलती है जो कि समुद्र से स्थल की ओर आती है। इसके विपरीत जाडो म स्थलीय हवाएँ चलती है जो कि स्थल से समुद्र की ओर जाती हैं। इस प्रकार स्थूल रूप से छ महीने समुद्री हवाएँ तथा छ महीने स्थलीय हवाएँ चलती है। 'मानसून' से तात्पर्य हवाओ के इसी मौसमी परिवर्तन से है। यह ध्यान रहे कि हवाओ के इस मानसूनी क्रम की उत्पत्ति का प्रमुख कारण यह है कि भू मण्डल पर विस्तृत स्थलीय खण्ड तथा समुद्र पास पास हैं। यदि भूमण्डल पर जल अथवा स्थल म से किसी एक का भी अखण्ड आवरण होता तो हवाओ के इस मानसूनी क्रम की उत्पत्ति सम्भव न थी। भारत म कुल वर्षा प्राय मानसूनी हवाओ से ही होती है। हमारे देश मे वर्षा साल भर न होकर एक विशेष ऋतु मे ही होती है। अत इसे मानसूनी' वर्षा कहते हैं। इस प्रकार भारत मे 'मानसून' का अर्थ 'ऋतु' अथवा 'मौसम न समझकर 'वर्षा ऋतु' ही समझा जाता है।

---

[1] Cressey G B —*Asia's Lands and Peoples* (Ed 1944), p 420, *quoted by* Spate in his book '*India & Pakistan*', p 48

भारत मे भी दो मानसून—

एक ग्रीष्म ऋतु मे, दूसरा शरद ऋतु म आते हैं जो कि क्रमश गर्मी और शीत ऋतु म वर्षा करते हैं। इस प्रकार भारत म दो मानसूनो स वर्षा होती है —
(1) दक्षिणी-पश्चिमी मानसून—ग्रीष्म ऋतु में वर्षा होती है। (2) उत्तरी पूर्वी मानसून—शरद ऋतु म थोडी वर्षा होती है।

दक्षिणी-पश्चिमी मानसून—

भारत म वर्षा की दृष्टि से इसका महत्त्व बहुत अधिक है क्योकि देश की कुल वर्षा का लगभग 90 प्रतिशत से भी अधिक भाग इस मानसून स प्राप्त होता है।

जून म सूय कक रेखा अथवा उसके निकटवर्ती भागो म बिल्कुल सीधा चमकता है तो उत्तरी गोलाद्ध म—विशेषत एशिया महाद्वीप और भारत मे—गर्मी की तीव्रता और भी उग्र हो जाती है। सूय द्वारा निरन्तर गर्मी पाते रहने क कारण एशिया के विशाल क्षेत्र गम हो जाते हैं और इसके परिणामस्वरूप, एशिया महाद्वीप के समस्त थल भाग पर हवा का भार कम हो जाता है। मई के अन्त तक निम्न भार क्षत्र की पट्टी सूडान (अफ्रीका) से लेकर पश्चिमी राजस्थान तक और वहां से पश्चिमी बगाल तक फल जाता है। इस समय न्यून भार की दो पेटियाँ प्रमुख बन जाती है—प्रथम, साइबेरिया (मध्य एशिया) म बैकाल झील के निकट और द्वितीय पाकिस्तान म लाहौर के निकट। इस समय निम्न भार की दो उप पेटियाँ और होती है—एक तो छोटा नागपुर के समीप और दूसरी विषुवतरेखा पर। ठीक इसी समय दक्षिणी गोलाद्ध म शीत ऋतु होती है, क्योकि सूय उत्तरी गोलाद्ध म ककरेखा के निकट है, अत वहाँ उच्च भार पेटियाँ (High Pressure Belts) बन जाती हैं। हवाएँ सदव उच्च भार पटी स न्यून भार पेटी की ओर चलती हैं। इस समय विषुवतरेखा पर भी निम्न भार पटी है और उत्तर म चलने पर लाहौर क निकट भी। किन्तु लाहौर के निकट का निम्न भार अधिक गहरा (More Intense) है, क्योकि सूय विषुवतरेखा से अपेक्षाकृत अधिक दूर है। अत दक्षिणी गोलाद्ध स हवाएँ सब प्रथम विषुवतरेखीय निम्न भार की ओर बढ़ती हैं। य हवाएँ दक्षिणी-पूर्वी व्यापारिक हवाएं[1] कहलाती हैं। विषुवतरेखीय निम्न भार पर पहुँचने पर ये हवाये ही लाहौर के निकट भ र पटी की ओर पहुँचन का प्रयत्न करती हैं क्योकि वह पटी अधिक गहरी (More Intense) है। ज्योही ये हवायें विषुवतरेखा को पार करती

---

1 व्यापारिक हवाओ (Trade Winds) के नामकरण क दो कारण माने जाते हैं—
(क) प्राचीन काल म जब भाप से चलने वाले जहाज न थे इन हवाओ स जहाजो क चलन म बडी सहायता मिलती थी, जिसस समुद्र द्वारा होने वाले व्यापार म बडी सुविधा होती थी।
(ख) अग्रजी का 'Trade शब्द' Tread स निकला है जिसका अथ मार्ग या रास्ता है। इसलिये व हवाए जो सदा एक ही मार्ग या रास्त पर चलें Trade Wind कहलाई।

हैं त्योही इनका रुख दक्षिणी पश्चिमी हो जाता है, क्योंकि पृथ्वी पश्चिम स पूर्व की ओर घूमती रहती है, अत फरेल के नियम के अनुसार रुख म इस प्रकार का परिवर्तन हो जाता है। भूमध्यरेखा के उत्तर म वे उत्तरी हिन्द महासागर की हवाओं के साथ दक्षिण पश्चिम दिशा मे भारत के निम्नभार क्षेत्र की ओर प्रवाहित होने लगती हैं। य हवाएँ लगभग 6500 Kms लम्बी समुद्री यात्रा के पश्चात भारतीय भूमि म प्रवेश करती हैं, अत प्रचुर वाष्प स लदी होती हैं। साधारणत दक्षिणी पश्चिमी मानसून केरल के समुद्र तट पर जून के प्रथम पाँच दिनों म फट पडती है।

दक्षिणी पश्चिमी मानसून के आरम्भ होते ही बगाल की खाडी और प्राय अरब सागर स चक्रवात (Cyclones) उठने लगते हैं। दूसरे शब्दो म, मानसून का अग्रिम भाग चक्रवातो से आरम्भ होता है। समुद्र के निकट हवायें बहुत उग्र हो जाती हैं। स्थानीय जहाज समुद्रो मे जाने का साहस नही करते और बडे-बडे जहाजो को यात्रा मे बहुत कठिनाई उठानी पडती है। बम्बई के अतिरिक्त पश्चिमी तट के और सभी छोटे मोटे बन्दरगाह बन्द हो जाते हैं। चक्रवात देश के भीतर तक पहुँच जाते हैं, जो मानसून को देश भर मे फैलाने म सहायक होते हैं। परन्तु जैसे ही दक्षिणी पश्चिमी वायु प्रवाह व्यवस्थित हो जाता है, त्यो ही हवा की स्थिर गति इन तूफानो (चक्रवातो) को रोक देती है और फिर अक्टूबर तक इनके आरम्भ होने की सम्भावना नही रहती है। मानसून जून एव जुलाई तक आगे बढता ही रहता है और अगस्त तक स्थिर रहता है, किन्तु सितम्बर के तीसरे सप्ताह मे लौटना प्रारम्भ कर देता है। साधारणत दक्षिणी-पश्चिमी मानसून का आरम्भ व अन्त निश्चित समय पर ही होता है जसा कि निम्न तालिका स स्पष्ट होगा—

राज्य	वर्षा आरम्भ होने की तिथि	समाप्ति
असम	25 मई	36 अक्टूबर
बगाल	15 जून	15 स 30 अक्टूबर
महाराष्ट्र	5 जून	15 अक्टूबर
दक्कन	7 जून	—
मध्य प्रदेश	10 जून	15 अक्टूबर
राजस्थान	15 जून	20 सितम्बर
उत्तर प्रदेश	25 जून	30 सितम्बर
दिल्ली	30 जून	—
पजाब	1 जुलाई	1 स 21 सितम्बर

देश मे मानसून के प्रवेश से घन बादलो से आकाश आच्छादित हो जाता है और वायु मण्डल वाष्प से सतप्त हो उठता है। बादल अपनी सारी करुणा समेट कर भारी जल की बूदो के रूप में फूट पडते हैं। गर्जन व विद्युत-तर्जन के साथ वर्षा होती है। अधिकाश भारत म तापमान गिर जाता है और उत्तप्त पृथ्वी तृप्त हो

जाती है। यह ध्यान रहे कि इन हवाओं से लगातार वर्षा नहीं होती रहती है। मानसून की वर्षा बीच-बीच में रुक भी जाती है और कभी कभी इन रुकावट की अवधि इतनी अधिक हो जाती है कि फसलें सूख जाती हैं और अकाल पड़ जाता है। मानसूनी हवाएँ सम्पूर्ण देश के ऊपर बहकर वर्षा प्रदान करती हैं। इन हवाओं की गति प्राय 9 से 12 kms प्रति घण्टा होती है।

दक्षिण-पश्चिम मानसून की दो शाखाएं—

दक्षिण का पठार दक्षिणी-पश्चिमी मानसून को दो शाखाओं में विभक्त कर देता है। ये शाखाएँ (क) अरब सागर की शाखा और (ख) बंगाल की खाड़ी की शाखा कहलाती हैं। इनमें से प्रत्येक का विवरण हम दे रहे हैं —

(क) अरब सागर की शाखा—

बंगाल की खाड़ी की शाखा की तुलना में अरब सागर की शाखा अधिक शक्तिशाली है, किन्तु इसकी शक्ति पश्चिमी घाट पर ही क्षीण हो जाती है। अरब सागरीय मानसून भारत में तीन शाखाओं के रूप में प्रवेश करती है —

प्रथम शाखा—अरब सागर मानसून की यह शाखा सबसे पहले पश्चिमी घाट पर (जो कि इसके मार्ग में पड़ते हैं) बम्बई के निकट अपना सबसे पहला प्रहार करती है। अरब सागर की तीनों शाखाओं में यही शाखा सबसे अधिक शक्तिशाली है। यह शाखा अपनी पूरी शक्ति पश्चिमी घाट पर लगा देती है। यहाँ इसे अनिवार्यत 900 से 2100 मीटर की ऊँचाई पर चढ़ना पड़ता है और इस चढ़ाव के कारण पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढालों और पश्चिमी तट के मैदानों में अधिक वर्षा होती है। समुद्रतटीय मैदानों में जून के महीने में ही 75 cms से अधिक वर्षा हो जाती है और जुलाई के महीने में 100 cms से भी अधिक। महाबलेश्वर (ऊँचाई 1385 मीटर) में जुलाई की औसत वर्षा 254 cms है। मानसून के कुल महीनों में यहाँ 635 cms से अधिक वर्षा होती है अर्थात वर्षा ऋतु में प्रतिदिन की औसत वर्षा यहाँ पर लगभग 6 cms है जो कि लन्दन में होने वाली जुलाई की कुल वर्षा के बराबर है।

अब ये हवाएँ पश्चिमी घाट को पार करने के पश्चात (पश्चिमी घाट के) पूर्वी ढालों पर नीचे की ओर उतरती हैं। इनकी नमी तो पश्चिमी ढालों पर ही कम हो चुकी होती है, अत यहाँ नीचे उतरने के कारण और भी अधिक गर्म व शुष्क हो जाती है। परिणाम यह होता है कि दक्षिण के पठार पर पहुँचने पर यह वर्षा नहीं करती और यह भाग वृष्टि छाया प्रदेश (Rain Shadow Area) के अन्तर्गत आ जाता है। उदाहरण के लिए इस समय इसी मानसून से बंगलौर में केवल 17 cms ही वर्षा होती है।

दूसरी शाखा—अरब सागर मानसून की दूसरी शाखा विन्ध्याचल व सतपुड़ा पर्वतों के बीच नर्मदा व ताप्ती नदियों की घाटी में होकर छोटा नागपुर के पठार तक वर्षा करती हुई जाती है (क्योंकि निम्न भार की एक पेटी छोटा नागपुर के

पठार के निकट स्थित होती है) और वहाँ बंगाल की खाड़ी की शाखा से मिल जाती है। इस कारण छोटा नागपुर के पठार पर घनी वर्षा हो जाती है। इस शाखा के द्वारा ही पश्चिमी मध्य प्रदेश में वर्षा होती है।

तीसरी शाखा—अरबसागर मानसून की तीसरी शाखा पाकिस्तान में सिन्धु नदी के डेल्टा प्रदेश से पंजाब व राजस्थान के ऊपर से होती हुई, बिना वर्षा किये, पश्चिमी हिमालय तक जाती है। राजस्थान आदि में किसी प्रकार की भी पहाड़ी रुकावट न होने के कारण वर्षा बहुत ही कम होती है। इसके द्वारा सिंध (पाकिस्तान) व पश्चिमी राजस्थान में 25 cms से भी कम वर्षा होती है।

उत्तरी पश्चिमी भारत में कम वर्षा होने के कारण—उत्तरी पश्चिमी भारत तथा पाकिस्तान में जहाँ इन हवाओं का प्रमुख आकर्षण बिन्दु होता है बहुत ही कम वर्षा होती है। इसके प्रमुख कारण ये है —(1) मानसूनी हवाएँ बहुत दूर तक यात्रा कर चुकती है, अतः जब ये हवाएँ यहाँ पहुँचती हैं तो इनमें बहुत ही कम वर्षा रह जाती है। (2) पश्चिम की ओर से बिलोचिस्तान के पठार की ओर से आने वाली हवाएँ शुष्क होती हैं, जो वहाँ वर्षा नहीं करती है। (3) मार्ग में किसी प्रकार की महत्वपूर्ण रुकावट नहीं मिलती है, जो इन हवाओं को रोके और जिनसे वर्षा हो। अरावली पर्वत इन हवाओं के समान्तर है। (4) ऊँचे तापमान के कारण मिट्टी में नमी प्राय नहीं होती है। (5) सूर्य की तेज किरणों और बादलों के अभाव में तापमान काफी अधिक रहता है।

(ख) बंगाल की खाड़ी का मानसून—

अरबसागरीय मानसून की अपेक्षा बंगाल की खाड़ी की मानसून लगभग 10 दिन बाद भारत में प्रवेश करती है। देश के अधिकांश भाग में इसी मानसून से वर्षा होती है।

बंगाल की खाड़ी के मानसून की एक शाखा ब्रह्मा की पहाड़ियों (अराकान आदि) से जा टकराती है। इससे इन पर्वतों पर बहुत वर्षा होती है। उदाहरण के लिए अक्याब में जून से सितम्बर तक के चार महीनों में लगभग 440 cms वर्षा हो जाती है।

इस मानसून की दूसरी शाखा गंगा नदी के डेल्टे में से होकर असम की खासी व लुशाई की पहाड़ियों के मध्य में प्रवेश करती है, जहाँ इसको पहाड़ियों से घिर कर बलात ऊपर उठना पड़ता है। अधिक ऊँची उठने के कारण चेरापूंजी (1313 मीटर की ऊँचाई पर स्थित) स्थान पर असाधारण रूप से अधिक वर्षा होती है। चेरापूंजी की वार्षिक वर्षा लगभग 1079 cms है, जिसमें से लगभग 270 cms वर्षा अकेले जून के महीने में ही हो जाती है। जून से सितम्बर के चार महीनों में लगभग 825 cms वर्षा हो जाती है। यहाँ एक वर्ष में तो 2285 cms (अर्थात् 25 गज) वर्षा हो चुकी है। यह वर्षा इतनी अधिक है कि तीन मंजिल का मकान डूब सकता है। 14 जून, 1876 को एक ही दिन में यहाँ 105

वर्षा हुई थी। इन पहाड़ियों की चोटी के परे वर्षा की मात्रा बहुत कम हो है। उदाहरण के लिए चेरापूंजी से लगभग 401 Kms की दूरी पर खासी



चित्र 6—चेरापूंजी

पहाड़ियों पर स्थित शिलांग में जून से सितम्बर तक केवल 140 cms ही वर्षा होती है।

दूसरी शाखा की एक उप शाखा हिमालय पर्वत से टकराकर पश्चिम की ओर मुड़ जाती है। हिमालय पर्वत बहुत ऊँचे होने के कारण से मानसून उन्हें पार नहीं कर सकते। इसलिए हिमालय के दक्षिणी ढाल पर अधिक वर्षा होती है। यही कारण है कि दार्जिलिंग में 320 cms तथा नैनीताल में 200 cms वर्षा होती है। मानसून की यह शाखा पंजाब तक पहुँचती है। हिमालय पर्वत के सहारे-सहारे ये हवाएँ पश्चिम की ओर वर्षा करती हुई बढ़ती जाती हैं। जैसे ज्यों-ज्यों ये पश्चिम की ओर बढ़ती जाती हैं इनसे वर्षा की मात्रा कम होती जाती है। यही कारण है कि गंगा और सिन्धु के मैदान के पूर्वी भागों में वर्षा अधिक होती है और पश्चिमी भागों में कम। उदाहरण के लिए, इस मानसून से कलकत्ता में 170 cms पटना में 120 cms इलाहाबाद में 105 cms दिल्ली में 65 cms बीकानेर में 40 cms और [illegible] में केवल 7 cms ही वार्षिक वर्षा होती है।

इस मानसून की दूसरी विशेषता यह है कि हिमालय पर्वत के निकटवर्ती स्थानों में अधिक वर्षा [illegible] और [illegible] दक्षिण की ओर जिनते दूर हैं वर्षा की मात्रा कम है। [illegible] दूसरे शब्दों में उत्तर से दक्षिण की ओर वर्षा की मात्रा कम होती जाती है। उदाहरण के लिए नैनीताल 2 0 cms [illegible]

225 cms , गोरखपुर 125 cms , बरेली 110 cms की वर्षा की मात्रा की तुलन बनारस 103 cms , आगरा 70 cms और ग्वालियर 58 cms की वर्षा करने से यह तथ्य स्पष्ट होगा।

इस मानसून की तीसरी विशेषता यह है कि हिमालय की बाहरी श्रेणिय पर भीतरी श्रेणियों की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है। यहा पर भी (मैदानों व भाँति) वर्षा की मात्रा पूर्व से पश्चिम की ओर कम होने की प्रवृत्ति है। उदाहर के लिए, दार्जिलिंग में 320 cms वर्षा होता है तो भीतरी ओर स्थित म (Murree) में 88 cms , श्रीनगर में 65 cms और लेह में केवल 5 cms ।

बंगाल की खाड़ी की एक और उप शाखा बिहार के दक्षिणी भाग में व करती हुई छोटा नागपुर के पठार तक पहुँचती है। यहा पर अरब सागरीय मानसू की उपशाखा से मिलाप हो जाता है और भारी वर्षा होती है।

यह ध्यान रहे कि बंगाल की खाड़ी के मानसून के विकास में इस खाड़ी व विशेष सहयोग रहता है। यह खाड़ी काफी विस्तार में स्थल में दूर तक चली ग है। इस खाड़ी की वायु नम होती है तथा स्थल की वायु शुष्क होती है। इन दोन विभिन्न प्रकार की वायु के मिलने से यहा बहुत से चक्रवात उत्पन्न हो जाते हैं जो इ मानसून को सारे देश में फैला देते हैं। इन चक्रवातों का काफी महत्त्व है। इन्हीं द्वारा भारत के मध्यवर्ती भाग में भी वर्षा होती है।

दोनों मानसूनों की तुलना—

अरब सागर एवं बंगाल की खाड़ी के मानसून की तुलना इस प्रकार की सकती है —

(1) **शक्ति**—बंगाल की खाड़ी के मानसून की अपेक्षा अरब सागर का मानस अधिक शक्तिशाली होता है, किन्तु पश्चिमी घाट को पार करने पर उसकी श क्षीण हो जाती है।

(2) **महत्त्व**—देश के अधिकांश भाग में बंगाल की खाड़ी के मानसून से व होती है। इसकी तुलना में अरब सागर के मानसून का जलवृष्टि क्षेत्र कम है। इ प्रकार भारत की अर्थ-व्यवस्था में बंगाल की खाड़ी का मानसून अधिक महत्त्वशील है

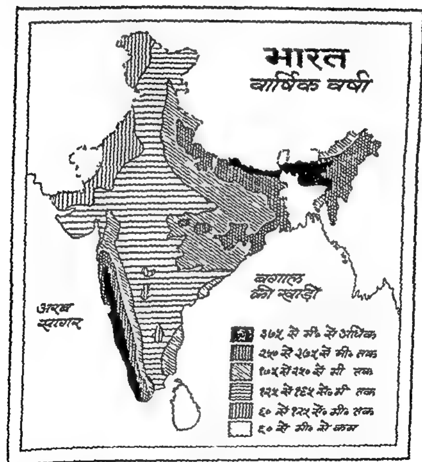
(3) **वर्षा-क्षेत्र**—अरब सागर के मानसून की वर्षा का अधिकांश क्षेत्र पहा व पठारी है। बंगाल की खाड़ी के मानसून मैदानी भागों में भी अधिक वर्षा करते हैं

(4) **चक्रवातों का महत्त्व**—बंगाल की खाड़ी के मानसून के विकास में स्थ नीय चक्रवातों का विशेष महत्त्व है। ये मानसून को सारे उत्तरी भारत में फैला दे हैं। अरब सागर में चक्रवात कम उत्पन्न होते हैं। केवल कुछ चक्रवात नर्मदा घाटी से देश में प्रवेश करते हैं।

(5) **वर्षा की प्रवृत्ति**—जिस क्षेत्र में बंगाल की खाड़ी के मानसून से व होती है, वहाँ वर्षा की मात्रा पूर्व से पश्चिम की ओर तथा उत्तर से दक्षिण की ओ कम होती जाती है। किन्तु अरब सागर के मानसून से होने वाली वर्षा के प्रदेशा

(1) 375 cms से अधिक वर्षा वाले भाग—

(a) नेफा, असम के कुछ पहाड़ी प्रदेश व दार्जिलिंग—इस क्षेत्र में बंगाल की खाड़ी से आने वाली मानसूनी हवाओं से वर्षा होती है। ये भाप से भरी हुई हवाएं असम की पहाड़ियों तथा उत्तरी-पूर्वी हिमालय प्रदेश से टकराकर उनके दक्षिणी ढालों पर बहुत अधिक वर्षा करती हैं, जिनका वार्षिक औसत 375 cms से अधिक रहता है। यहां वर्षा ऋतु काफी लम्बी होती है। वर्षा लगभग 9 महीने होती है।



चित्र 7

बंगाल की खाड़ी की मानसूनी हवाओं से लगभग 15 जून से वर्षा आरम्भ हो जाती है और अक्टूबर तक होती है। सबसे अधिक वर्षा यहां जुलाई के महीने में होती है। मानसून प्रारम्भ होने के पहले—मार्च से मध्य जून तक और मानसून समाप्त होने के बाद नवम्बर में—वर्षा चक्रवातों से होती है। इस प्रकार यहां दिसम्बर जनवरी

और फरवरी के महीने शुष्क रहते है। विश्व मे सबसे अधिक वर्षा प्राप्त करने वाला स्थान चेरापूंजी इसी क्षेत्र मे स्थित है, जहा वार्षिक वर्षा 1270 cms होती है।

(b) मालाबार तट—स्थूल रूप से गोआ बन्दरगाह से दक्षिण मे कुमारी अन्तरीप तक का भाग मालाबार तट कहलाता है। इसके उत्तरी भाग को छोडकर शेष समस्त भाग मे, दक्षिणी पश्चिमी मानसून की अरब सागर की शाखा से गर्मियो मे वर्षा होती है। इस क्षेत्र मे शुष्क मौसम छोटा होता है और नम मौसम लम्बा होता है। शुष्क मौसम प्राय जनवरी, फरवरी और मार्च के महीनो मे रहता है, शेष 9 महीने अप्रल से दिसम्बर तक वर्षा के होते हैं। इस भाग मे अधिक वर्षा होने का प्रमुख कारण यह है कि अरब सागर की मानसूनी शाखा जो भाप से लदी होती है जब देश मे प्रवेश करती है तो लगभग 50 Kms यात्रा करने के पश्चात् ही पश्चिमी घाट अवरोध के रूप मे खडे मिलते हैं अत वर्षा अधिक होती है।

(2) 250 से 375 cms तक वर्षा वाले क्षेत्र—

(a) कोकन तथा मालाबार का उत्तरी भाग—नर्मदा नदी के मुहाने से आरम्भ होकर गोआ बन्दरगाह तक का तटीय भाग कोकन-तट कहलाता है। इसमें भी बम्बई के उत्तर मे नर्मदा नदी के मुहाने तक अपेक्षाकृत कम वर्षा होती है। यहाँ दक्षिणी पश्चिमी मानसून से पाँच महीने—जून से अक्टूबर—तक वर्षा होती है। शेष सात महीने नवम्बर से मई तक शुष्क रहते हैं। ग्रीष्म ऋतु के मई मास मे थोडी वर्षा समुद्री हवाओ से भी होती है।

(b) असम का अधिकांश भाग—दक्षिणी-पश्चिमी मानसून की बगाल की शाखा से इस भाग मे वर्षा होती है। वर्षा का मौसम अपेक्षाकृत लम्बा होता है।

(3) 175 से 250 cms तक वर्षा वाले क्षेत्र—

पश्चिमी बगाल और पूर्वी बिहार (पूर्णिया)—इस भाग मे दक्षिणी-पश्चिमी मानसूनी हवाओ की बगाल की खाडी की शाखा से वर्षा होती है। मानसूनी हवाएँ लगभग 15 जून से प्रवेश करती हैं। किन्तु इसके पहले चक्रवातो से, जो मानसूनी हवाओ के अग्र भाग होते हैं वर्षा होती है। नारवेस्टर हवाओ से भी कुछ वर्षा होती है।

वर्षा लगभग $4\frac{1}{2}$ महीने—15 जून से अक्टूबर के अन्त तक होती है। इसी ऋतु मे सम्पूर्ण वर्षा का 90 प्रतिशत से भी अधिक भाग प्राप्त होता है। बिहार राज्य के पूर्वी भाग मे स्थित पूर्णिया जिला भी इस क्षेत्र मे ही है।

(4) 125 से 195 cms तक वर्षा वाले क्षेत्र—

(a) उत्तरी-पर्वतीय भारत—इस क्षेत्र मे, तराई का भाग एव कश्मीर का सम्पूर्ण भाग है। इस क्षेत्र मे पूर्व से पश्चिम की ओर वर्षा कम होती जाती है। मध्यवर्ती हिमालय मे 150 से 175 cms तक और पश्चिमी हिमालय मे 125 cms से अधिक वर्षा होती है। शीतकाल मे वर्षा प्राय हिम के रूप मे पडती है।

(b) उत्तरी-पूर्वी पठार व गगा की मध्य घाटी—इस भाग मे पूर्वी उत्तर

प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, पूर्वी मध्य प्रदेश आदि सम्मिलित हैं। वर्षा 15 जून से अक्टूबर तक होती है। यहाँ सबसे अधिक वर्षा जुलाई के महीने में होती है।

(५) 60 से 125 cms तक वर्षा वाले क्षेत्र—

इस क्षेत्र में पश्चिमी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश का पश्चिमी भाग, पूर्वी पंजाब और राजस्थान का दक्षिणी एवं पूर्वी भाग सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र में अधिकांश वर्षा दक्षिण-पश्चिमी मानसून से होती है। थोड़ी वर्षा शीतकाल में भूमध्यसागर की ओर से आने वाले चक्रवातों से भी हो जाती है जो गेहूँ आदि की उपज के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होती है। इस प्रदेश में वर्षा में परिवर्तन ऊँचा हो जाता है और नदियों में पानी गिर जाता है।

(6) 60 cms से कम वर्षा वाले भाग—

(a) दक्षिणी पंजाब, शेष राजस्थान (उत्तरी और पश्चिमी राजस्थान)—इस भाग को मरुस्थल शुष्क प्रदेश में रखा जा सकता है। यहाँ वर्षा बहुत ही अनिश्चित और कम होती है। कभी-कभी वर्षा बिल्कुल नहीं होती। जैसलमेर व बीकानेर इस प्रदेश के प्रतिनिधि नगर हैं। जैसलमेर में 10-12 cms वार्षिक वर्षा होती है। दोपहर में बहुत गर्म हवाएँ चलती हैं और भूमि भट्टी की तरह गर्म हो जाती है।

(b) पश्चिमी घाट के पीछे के प्रदेश—इस प्रदेश में तमिलनाडु व आन्ध्र के अन्दर के भाग, महाराष्ट्र का अधिकांश भाग और मैसूर राज्य शामिल हैं। यहाँ वर्षा में कमी का प्रमुख कारण यह है कि यह क्षेत्र वृष्टि छाया में आ जाता है।

निष्कर्ष—

उपरोक्त विवरण के पश्चात् स्पष्ट हो जायेगा कि वर्षा के वितरण एवं मात्रा की दृष्टि से स्थूल रूप से भारत के दो भाग[1] किये जा सकते हैं —

(a) निश्चित वर्षा वाले क्षेत्र—इसमें पश्चिमी बंगाल, असम, पश्चिमी मालाबार किनारा, पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढाल और नर्मदा की ऊपरी घाटी सम्मिलित हैं।

(b) अनिश्चित वर्षा वाले क्षेत्र—इसके अन्तर्गत उत्तर प्रदेश, पश्चिमी एवं उत्तरी राजस्थान, उत्तर प्रदेश की सीमा पर मध्य राजस्थान पठार, महाराष्ट्र व गुजरात राज्यों के भाग, पूर्वी घाट के ढाल के अतिरिक्त सम्पूर्ण तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश का दक्षिणी और पश्चिमी भाग, मैसूर और बिहार एवं उड़ीसा के कुछ जिले हैं।

---

1 Dass Gupta *Economic of Commercial Geography* (Ed 1959) p 536 37

भारत मे वर्षा का ऋतु के अनुसार वितरण (cms)

प्रदेश	ग्रीष्म ऋतु (मार्च से मई)	वर्षा ऋतु (जून से सितम्बर)	शरद ऋतु (अक्टूबर से नवम्बर)	शीत ऋतु (दिसम्बर से फरवरी)	वार्षिक वर्षा
असम	60	160	15 0	5 0	245 0
प० बंगाल	30	140	12 5	5 0	190 0
पूर्वी उत्तर प्रदेश	2 5	85	5 0	5 0	100 0
उत्तरी पंजाब	5 0	45	2 5	7 5	60 0
प० राजस्थान	2 5	30	0 25	1 2	34 0
पूर्वी मध्य प्रदेश	5 0	115	0 5	5 0	132 0
मद्रास तट	8 75	60	25 0	3 75	101 5
मालाबार	31 75	180	43 0	6 0	265 5

भारतीय मानसून की विशेषताएँ

भारतीय मानसून के समान कदाचित ऐसी अकेली आश्चर्यजनक वस्तु और कोई भी नहीं जिसके इतने चमत्कारिक प्रभाव हो।

भारत मे वर्षा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं —

(1) मानसून विश्वासघातक प्रकृति के है।

(2) भारत मे लगभग 90 प्रतिशत वर्षा मानसून हवाओ के द्वारा ही होती है। इसमे भी अधिकांश वर्षा दक्षिणी पश्चिमी मानसून से होती है।

(3) वर्षा हमारे देश मे वर्ष भर न होकर वर्ष के कुछ महीनो मे ही होती है। जुलाई से सितम्बर तक तीन महीनो मे वर्ष की कुल वर्षा का अधिकांश भाग प्राप्त होता है।

भारत एवं इंगलण्ड मे वर्षा का वितरण

अवधि	वार्षिक वर्षा का प्रतिशत	
	भारत	इंगलण्ड एवं वेल्स
जून से सितम्बर	79 0	32 0
अक्टूबर से दिसम्बर	9 0	30 5
जनवरी से फरवरी	2 5	17 5
मार्च से मई	9 5	20 0

(4) शरदकालीन वर्षा देश की कुल वर्षा का लगभग 10 प्रतिशत होती है। इस काल मे देश के अधिकांश भाग शुष्क हो रहते है।

(5) देश मे वर्षा का वितरण समान नहीं है। एक ओर मासिनराम [illegible] वार्षिक वर्षा 1270 cms होती है तो दूसरी ओर पश्चिमी राजस्थान के कुछ [illegible]

केवल 7 10 cms । इन दोनों सीमाओं के मध्य देश के विभिन्न भागों की वर्षा की मात्रा भिन्न है । पश्चिमी घाट पर 250 cms वर्षा होती है, जबकि दक्षिण के पठार पर मुश्किल से 50 cms ही वर्षा हो पाती है ।

(6) भारत म वर्षा बहुत स भागो म अनिश्चित है ।

उदाहरण क लिए नागपुर की विभिन्न वर्षों की वर्षा देखिये—

सन	वार्षिक वर्षा
1900	125 cms
1901	96 5 cms
1902	70 0 cms
1903	145 75 cms
1904	86 30 cms
1905	129 50 cms

उपरोक्त आँकडो से स्पष्ट हो जायगा कि सन 1902 व 1903 की वर्षा की मात्रा का अन्तर लगभग 75 cms है । केवल दो वर्षों—1900 और 1905 म वर्षा 125 cms के निकट रही ।

(7) वर्षा का कोई समय स्थिर नहीं है । कभी तो मानसून पहले आ जाते हैं और वर्षा भी शीघ्र ही आरम्भ हो जाता है और इस कारण वर्षा जल्दी समाप्त हो जाती है तथा फसलो को पूरे समय पानी नही मिल पाता है । कभी मानसून यदि देर से आते हैं तो वर्षा भी देर से ही आरम्भ होती है जिसस फसल को क्षति पहुँचती है ।

(8) जिस वर्ष मानसून खूब उठते हैं उस वर्ष वर्षा भी अच्छी हो जाती है लेकिन जिस वर्ष मानसून कमजोर (Weak) होते हैं उस वर्ष वर्षा भी कम होती है ।

(9) जिस क्षेत्र में मानसून का मार्ग है और पर्वत उसके मार्ग म रुकावट डालते है वहाँ अधिक वर्षा होती है । यदि मार्ग म पर्वत-श्रेणियाँ नहीं हैं तो कम वर्षा होती है ।

(10) मानसून से वर्षा बहुत जोरो की होती है जिसके कारण पानी के प्रवाह म वृद्धि हो जाती है और भूमि क उपजाऊ तत्त्व बहकर चले जाते हैं । तेज व अधिक वर्षा होने के कारण नदियो म बाढ भी खूब आती है । सन् 1955 म जमुना दामोदर गगा व अन्य नदियो म बहुत जोर की बाढ आई जिसके फलस्वरूप लाखो व करोडो रुपय की क्षति हुई ।

(11) कभी कभी वर्षा लगातार न होकर रुक जाती है तथा फिर कई दिनो के बाद फिर आरम्भ होती है । य अन्तर कभी-कभी जुलाई अथवा अगस्त क पूरे महीने अथवा अधिकांश समय क होते हैं जिनसे कृषि को बहुत क्षति पहुँचती है । एक बार इस प्रकार का अन्तर छ हफ्ते का पड़ा था ।

(12) भारतीय वर्षा की प्रवृत्ति पूर्व की ओर से पश्चिम की ओर कम होने की है।

(13) मानसून उठते समय समुद्र में बड़े तूफान उठते हैं और ज्वार भाटे आते हैं। इसके फलस्वरूप जन व धन की कभी-कभी काफी क्षति होती है।

(14) भारत में प्रत्येक महीने किसी न किसी भाग में काफी वर्षा हो जाती है। केन्ड्रयू[1] के अनुसार "जनवरी फरवरी में शीतकालीन चक्रवातों से उत्तरी भारत में वर्षा हो जाती है। मार्च में मेघगर्जन के साथ भीषण वात बंगाल और असम में अधिकतर चलने लगती है और उनसे जून तक, जबकि मानसून आरम्भ होता है, भारी वर्षा होती रहती है। फिर सामान्य मानसूनी वर्षा अक्टूबर तक होती रहती है और नवम्बर दिसम्बर में मानसून के लौटते समय मद्रास में भारी वर्षा हो जाती है।"

प्रति माह होने वाली भारत की वर्षा की प्रतिशत मात्रा इस प्रकार लेखाबद्ध की गई है—

माह	प्रतिशत	माह	प्रतिशत
जनवरी	1 0	जुलाई	26 2
फरवरी	1 5	अगस्त	22 4
मार्च	1 8	सितम्बर	13 8
अप्रैल	2 5	अक्टूबर	5 5
मई	5 6	नवम्बर	2 5
जून	16 3	दिसम्बर	0 9

मानसून का महत्त्व

"मानसून वास्तव में वह धुरी है जिस पर भारत के समस्त आर्थिक जीवन का चक्र घूमता है।" भारत के कृषि प्रधान देश होने से उचित एवं उपयुक्त वर्षा हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है। हमारे देश में 70 प्रतिशत से भी अधिक व्यक्ति कृषि व्यवसाय में संलग्न हैं। देश की राष्ट्रीय आय का आधे से भी अधिक भाग कृषि से प्राप्त होता है, अत कृषि की सफलता के लिए वर्षा भी आवश्यक है। निश्चित तथा पर्याप्त वर्षा वाले भागों में चाय, चावल जूट आदि कम परिश्रम से उत्पन्न कर लिया जाता है और दूसरी ओर, जिन भागों में बिना सिंचाई की सहायता से कृषि पदार्थ उत्पन्न नहीं किये जा सकते हैं उन क्षेत्रों में दुर्भिक्ष के भयानक दानव की छाया हमेशा ही दृष्टिगोचर होती रहती है। इसके अतिरिक्त घनी वर्षा वाले भाग, जैसे पश्चिमी घाट, पूर्वी हिमालय प्रदेश आदि में घने जंगल हैं जिनसे अनेक वस्तुएँ जैसे ईंधन इमारती लकड़ी चारा आदि अनेक वस्तुएँ प्राप्त की जाती है।

वर्षा का देश के उद्योगों के विकास पर भी प्रभाव पड़ता है। उद्योगों के

[1] Kendrew W G *Climate of the Continents* p 148

लिए शक्ति चाहिए। पट्रोल भारत म बहुत कम पाया जाता है कोयल का वितरण देश म समान नहो है। यह महगा होता है और एक स्थान से दूसरे स्थानो तक ल जान म व्यय अधिक हो जाता है। वर्षा से नदियो म पानी प्रवाहित होता है जिससे उपयोग म लाकर जल विद्युत बनाई जा सकती है। यह अत्यन्त सस्ती एव कभी न खत्म होन वाले स्रोत से प्राप्त की जाती है।

यही नहीं वर्षा हमारे आर्थिक जीवन को भी प्रवाहित किय बिना नही रह पाई है। भारत की आर्थिक व्यवस्था कृषि पर आधारित है और कृषि वर्षा पर। उचित वर्षा मनुष्य, पशु, सरकार व उद्योगपति सबके लिए आवश्यक है। यदि वर्षा ठीक होती है तो उद्योग धन्ध उत्पत्ति करत है उनम निर्मित वस्तुए हमारी आवश्यकताओ की पूर्ति करती हैं व्यापार म वृद्धि होती है, रेल तथा अन्य यातायात के साधनो को पर्याप्त व्यवसाय सामग्री मिलती है ताकि व काम म चल सकें। इससे उनकी अच्छी होन म सरकारी आय म वृद्धि होती है। राष्ट्रीय हित की अनेक योजनाए कार्यान्वित की जा सकती हैं। यह तभी हो सकता है जब कि वर्षा ठीक समय पर व उचित मात्रा मे हो।

इसके अतिरिक्त वर्षा कम हो या न हो ठीक समय पर न हो, तो फसल नष्ट हो जावगी, खाद्य पदार्थों की कमी होन स मँहगाई हो जावेगी गरीबी व बरोजगारी का ताण्डव नृत्य होन लगगा क्योकि उद्योग धन्ध भी, जो कृषि पदार्थों पर निर्भर हैं बन्द हो जावेंग सरकार की आय कम हो जावेगी। इस प्रकार अतिवृष्टि से भी यही प्रभाव पडेग क्योकि फसल नष्ट होगी, बाढ आवगी और सरकार को जनता की सुरक्षा एव व्यवस्था निमित्त अधिक राशि व्यय करना पडेगी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत का व सरकार का भविष्य वर्षा पर ही निर्भर है। वर्षा का इतना अधिक महत्त्व है तभी तो भारत के एक भूतपूर्व वित्त मन्त्री श्री विलसन ने कहा था कि *'भारतीय बजट वर्षा के साथ जुआ है'* (Indian budget is gamble in rains)।

राजस्थान और प० बगाल की जलवायु म विभिन्नता के कारण

स्थिति—

राजस्थान एव पश्चिमी बगाल की जलवायु एव उसम विभिन्नता क कारणो (तथ्यो) का अध्ययन करने के पूर्व उसकी स्थिति का भी स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए। राजस्थान राज्य भारत के उत्तरी-पश्चिमी भाग म पश्चिमी पाकिस्तान की सीमा पर स्थित है। इसकी भौगोलिक सीमा 23 3 स 30 12 उत्तरी अक्षाशो तथा 69 0 एव 75°17 पूर्वी देशान्तरो के मध्य है।[1] राजस्थान का क्षेत्रफल 3 42 274 वग Kms है। पश्चिमी बगाल गगा नदी की घाटी के पूर्वी भाग म 21 30 और 27 5 उत्तरी अक्षाशो तथा 65 57 और 89 10 पूर्वी देशान्तरो क मध्य स्थित है। यह राज्य

1 The *Imperial Gazetteer of India* Vol xxi

पूर्वी पाकिस्तान की पश्चिमी सीमा पर स्थित है। इस राज्य का क्षेत्रफल 86 192 वर्ग Kms है इस प्रकार स्थिति का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि दोनों राज्य लगभग समान अक्षांशों म स्थित हैं, बहुत अधिक अन्तर नहीं है। इस दृष्टि म दोनो राज्यों की जलवायु लगभग समान होनी चाहिए किन्तु ऐसा नहीं है। इन दोनों की जलवायु भिन्न है और इसके लिए निम्नलिखित कारण (तथ्य) उत्तरदायी हैं—

जलवायु मे विभिन्नता के कारण—

(1) **कर्करेखा**—राजस्थान के केवल दक्षिणी ओर (उदयपुर विभाग) को काटती हुई कर्करेखा गुजरती है जबकि पश्चिमी बगाल के लगभग मध्य म होकर कर्करेखा गुजरती है।

(2) **समुद्र से निकटता**—राजस्थान का कोई भी भाग समुद्र के निकट नहीं है उसके चारों ओर स्थलीय भाग है। पश्चिमी बगाल तो समुद्र के किनारे ही स्थित है, अत समुद्र यहा की जलवायु पर बहुत प्रभाव डालता है।

(3) **समुद्र तल की ऊँचाई**—राजस्थान समुद्र-तल से अधिक ऊँचा है। पश्चिमी बगाल राज्य समुद्र-तल से अधिक ऊँचा नहीं है। हा, उत्तरी भाग पहाड़ी होने के कारण अधिक ऊँचा है।

(4) **हवाओं की दिशा**—राजस्थान राज्य मानसूनी हवाओं के मार्ग म कोई अवरोध उपस्थित नहीं करता अत लगभग शुष्क रहता है। इसके विपरीत, पश्चिमी बगाल भरी हुई मानसूनी हवाओं के मार्ग म पडता है और उनका सर्वप्रथम स्वागत करता है। इसके अतिरिक्त मानसूनी हवाओं के अग्र भाग के रूप म चक्रवात भी वर्षा प्रदान करते हैं अत जलवायु आर्द्र है।

(5) **स्थानीय दशाएँ**—दोनों राज्यों के विभिन्न भागों म भू रचना की विभिन्नता म भी जलवायु म विविधता उत्पन्न की है।

अब हम उपरोक्त तत्त्वों (कारणों) का सामूहिक रूप से अध्ययन करेंगे। स्थूल रूप से राजस्थान म महाद्वीपीय जलवायु और पश्चिमी बगाल म उष्ण-कटिबन्धीय मानसूनी जलवायु (Tropical Monsoon Type) पाई जाती हैं।

(1) **शीत ऋतु**—इस राज्य म जाडे का मौसम काफी कठोर होता है, किन्तु सर्वत्र समान कठोर नहीं होता है। रात्रि विशेष रूप से कठोर शीत वाली होती हैं। कहीं कहीं तो तापमान हिमाक बिन्दु से भी नीचे पहुँच जाता है। किन्तु दिन म अधिक शीत नहीं पडता, वरन सुहावना होता है। आकाश प्राय स्वच्छ रहता है किन्तु सुबह व शाम को कोहरा-सा छा जाता है। कभी-कभी तो रात्रि के अन्तिम चरण म इतना गहरा कोहरा व धुध पडती है कि पाच छ कदम दूर की वस्तु भी नहीं दीखती, ऐसी स्थिति प्राय 10 11 बजे तक रहती है। ऐसी स्थिति प्राय दिसम्बर जनवरी म 4 6 दिन ही रहती है। राज्य के उत्तरी पश्चिमी भाग (रेगिस्तानी) म विशेष ठण्ड पडती है। दिन और रात्रि का तापान्तर अधिक होता है। सर्दियों म औसत तापमान 16 C रहता है। तापान्तर कभी कभी 20 C हो जाता है।

पश्चिमी बंगाल राज्य में शीत ऋतु इतनी कठोर नहीं होती। यहाँ सर्दियों का औसत तापमान लगभग 21 C है। दैनिक तापान्तर अधिक नहीं होता। किन्तु उत्तर के भाग पहाड़ी होने के कारण यहाँ सर्दियों में बहुत अधिक सर्दी पड़ती है व कभी बर्फ भी गिरती है। इसी कारण दार्जिलिंग का जनवरी में 2 C से भी कुछ कम तापमान हो जाता है।

निम्न तालिका में दोनों राज्यों के कुछ प्रतिनिधि स्थानों के तापमान (जनवरी के) न्यूनतम व अधिकतम तापमान (C) दिए गए हैं—

राजस्थान	न्यूनतम	अधिकतम	प० बंगाल	न्यूनतम	अधिकतम
आबू	10 4	18 8	दार्जिलिंग	1 9	8 3
बीकानेर	9 3	22 1	अलीपुर	12 6	28 4

(2) ग्रीष्म ऋतु—राजस्थान की स्थिति समुद्र से दूर होने के कारण समुद्र का प्रभाव नहीं पड़ता, अतः गर्मियों में बहुत गर्मी पड़ती है। गर्मी का मौसम अन्य मौसमों से बड़ा होता है। गर्मियों में, केवल ऊँचे पहाड़ी भाग (जैसे आबू) को छोड़कर शेष राजस्थान में बहुत गर्मी पड़ती है। विशेषतः पश्चिमी तथा उत्तर पश्चिमी राजस्थान में, रेगिस्तान होने के कारण बहुत गर्मी पड़ती है जो कष्टप्रद होती है। साधारणतः गर्मी का मौसम अप्रैल से आरम्भ होकर अगस्त सितम्बर तक रहता है। किन्तु मई व जून के महीने बहुत ही गर्म होते हैं अतः तापमान बहुत ऊँचे हो जाते हैं। वायु-मण्डल में शुष्कता बहुत होती है। दिन में बहुत गर्म हवाएँ जिन्हें लू कहते हैं चलती हैं। प्रायः सम्पूर्ण राजस्थान में गर्म हवाओं के साथ-साथ तीसरे पहर धूल से भरी हुई आँधियाँ चलती हैं, जिनके कारण कभी-कभी आकाश में इतना रेत छा जाता है कि दिन में ही रात्रि के समान घोर अन्धकार छा जाता है (ऐसा मैंने भी बीकानेर में सन् 1961 में और जैसलमेर में अनुभव किया था)।

वातावरण की शुष्कता, मिट्टी की प्रकृति (रेगिस्तान) और प्राकृतिक वनस्पति के अभाव के कारण रात्रि में तापमान अचानक गिर जाता है। दिन की कड़ी गर्मी के पश्चात् राजस्थान का मरु प्रदेश रात में ठण्डा हो जाता है क्योंकि धूप से तप्त बालू रेत रात होते-होते शीतल होने लगती है जिसके कारण हवा भी ठण्डी होने लगती है। यही कारण है कि इस भाग में गर्मी के मौसम में भी रातें शीतल और सुहावनी होती हैं। किन्तु राजस्थान के दक्षिणी भाग पठारी होने के कारण रातें सुहावनी नहीं होने पाती। अगले पृष्ठ की तालिका में राजस्थान के कुछ स्थानों का मई मास का न्यूनतम व अधिकतम तापमान C में दिया गया है।

नगर	स्थिति	अधिकतम	न्यूनतम
बीकानेर	उ० पश्चिम	41 7	27 7
जोधपुर	पश्चिम	40 8	26 3
अजमेर	मध्य-पूर्व	39 4	26 8
जयपुर	पूर्व	40 9	24 9
उदयपुर	दक्षिण	41 0	29 2
कोटा	दक्षिण-पूर्व	42 0	29 2

दूसरी ओर, पश्चिमी बंगाल राज्य की ग्रीष्म ऋतु की जलवायु ऐसी नही है। यद्यपि कर्क रेखा इस राज्य के लगभग मध्य में होकर जाती है, अत ग्रीष्म ऋतु में यहां इस कारण अधिक गर्मी पड़नी चाहिए किन्तु समुद्र की निकटता के कारण ऐसा नहीं है। राज्य का उत्तरी भाग समुद्र से दूर अवश्य है अत वहां समुद्र का प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं पड़ता और वहां काफी गर्मी पड़नी चाहिए। किन्तु यहां पर भूमि की बनावट ने जलवायु को प्रभावित कर दिया है। इस राज्य का उत्तरी भाग पहाड़ी है और समुद्र-तल से काफी ऊँचा है, इसलिए यहाँ गर्मियों में भी शीतल जलवायु रहती है और गर्मी की उग्रता नहीं सताती है। इस प्रकार, इस राज्य में ग्रीष्म ऋतु में न तो भीषण गर्मी पड़ती है और न लू ही चलती हैं। इस राज्य में गर्मियों में औसत तापक्रम लगभग 21°C रहता है। यहां मार्च, अप्रैल और मई में गर्मी के महीने होते हैं और इनमें भी अप्रैल का महीना सबसे अधिक गर्म होता है जबकि कहीं-कहीं तो थोड़े समय के लिए 35 C तक तापक्रम हो जाता है।[1] शाम के समय उत्तर पश्चिम की ओर से आँधियाँ आती हैं जिन्हें 'नॉरवेस्टर' (Norwester) कहते हैं। इनसे कुछ बूँदें भी पड़ जाती है जिसके कारण तापक्रम कम हो जाता है और ठंडक हो जाती है। इस प्रकार यहां के वातावरण में आर्द्रता का अंश अधिक पाया जाता है। लगभग मध्य जून में मानसून प्रारम्भ हो जाते हैं और गर्मी की उग्रता भी शान्त हो जाती है।

(3) वर्षा ऋतु—साधारण रूप से राजस्थान एक शुष्क प्रदेश है। भूमि की बनावट, वायु की दिशा और समुद्र से दूरी इसके प्रमुख तत्त्व हैं। गर्मी में अरब सागर से आने वाली हवाएँ बिना किसी अवरोध से टकराए मरुस्थलों को पार कर उत्तर-पूर्व की ओर निकल जाती हैं। अरावली के पश्चिमी ढालों पर ये हवाएं साधारण वर्षा करती हैं। केन्ड्रयू (Kendrew) का मत है कि अरब-सागर के मानसून की उत्तरी सीमा खम्भात की खाड़ी ही है तथा यह मानसून राजस्थान त

[1] *West Bengal*, Published by Indian Chamber of Commerce p

नहीं पहुँचती। बंगाल की खाड़ी की मानसूनी हवाएँ गंगा घाटी व बंगाल की लम्बी यात्रा करने के पश्चात् यहाँ पहुँचती हैं और इनमें नमी बहुत ही कम रह जाती है इसलिए ये हवाएँ बहुत अधिक वर्षा नहीं कर पाती। ये हवाएँ राजस्थान के पूर्वी तथा दक्षिणी-पूर्वी भागों में वर्षा करती हैं। राजस्थान में समय और मात्रा की दृष्टि से वर्षा अनिश्चित है।

राजस्थान में स्थूलरूप से वार्षिक वर्षा का औसत लगभग 50 cms है किन्तु कुछ भागों में तो यह औसत 10 cms से भी कम है। राजस्थान में उत्तर एवं उत्तर-पश्चिम से दक्षिण तथा दक्षिण पूर्व की ओर वर्षा की मात्रा बढ़ने की प्रवृत्ति है। सबसे कम वर्षा जैसलमेर में होती है। अरावली श्रेणी के उत्तर-पश्चिम में 25 cms से भी कम वर्षा होती है, किन्तु दक्षिणी भाग में लगभग 60 cms वर्षा होती है। इसके अतिरिक्त, चक्रवातों से कुछ वर्षा सर्दी में भी हो जाती है।

इसके विपरीत, पश्चिमी बंगाल में दक्षिणी पश्चिमी मानसूनी हवाओं की पूर्वी शाखा (बंगाल की खाड़ी की शाखा) से गर्मी में वर्षा होती है। मानसूनी हवाएँ लगभग 15 जून से इस राज्य में प्रवेश करती हैं। यह राज्य इन हवाओं के मार्ग में पड़ता है और हवाएँ नमी से लदी हुई होती हैं अतः यहाँ सब स्थानों पर खूब वर्षा होती है। पूरे राज्य में एक भी ऐसा स्थान नहीं है जहाँ 125 cms से कम वर्षा होती हो। इस राज्य में वर्षा की मात्रा पूर्व से पश्चिम की ओर घटने की प्रवृत्ति पाई जाती है। इस राज्य की औसत वार्षिक वर्षा लगभग 175 cms है। पहाड़ी प्रदेश व तराई के क्षेत्रों में 250 cms से भी अधिक वर्षा होती है। जाड़े की ऋतु प्राय शुष्क रहता है।

जलवायु के आधार पर भारत के भाग

जलवायु के आधार पर भारत का विभक्त करना आवश्यक है। इस दिशा में सन 1931 में प्रो० विलियमसन तथा श्री क्लार्क ने प्रयत्न किये, जिन्होंने भारत को वर्षा के वितरण पर 13 भागों में विभक्त किया। श्री केण्ड्र्यू (Kendrew) ने भी प्रयत्न किया। श्री डडले स्टाम्प ने अपनी पुस्तक 'एशिया' में श्री केण्ड्र्यू की योजना में साधारण परिवर्तन करके भारत के जलवायु के आधार पर दस भाग किये। सर्वप्रथम उन्होंने भारत को दो भागों में विभक्त किया—कर्क रेखा के उत्तर के भाग और कर्क रेखा के दक्षिण के भाग। हम श्री डडले स्टाम्प द्वारा जलवायु के आधार पर भारत के भागों का संक्षेप में विवरण दे रहे हैं —

(1) हिमालय प्रदेश—हिमालय पर्वत भारत के उत्तर में पूर्व से पश्चिम तक 2415 Kms तक विस्तृत है। विभिन्न भागों में इसकी अलग अलग ऊँचाई होने के कारण जलवायु में भिन्नता पाई जाती है। लगभग 2450 मीटर की ऊँचाई तक तो मनुष्य रह सकते हैं। इससे अधिक उच्च भाग का तापक्रम प्राय हिमांक बिन्दु पर पहुँच जाता है अतः मनुष्य नहीं रहते हैं। 2450 मीटर की ऊँचाई के भागों में शरद् काल में तापक्रम 4.5 C से 7 C तक ही रहता है और गर्मियों में यह तापक्रम

12 C से 18 C तक रहता है। इन भागों में प्रायः घनी वन गर्मी के मौसम में मैदानी गर्मी से बचने के लिये चले जाते हैं। शिमला, मसूरी व नैनीताल इसी क्षेत्र में आते हैं। पूर्वी भाग में अधिक वर्षा (लगभग 250 cms) व पश्चिमी भाग में कम वर्षा (75 cms से 100 cms) होती है।

स्पष्ट है कि पहाड़ी क्षेत्र व ठण्डा जलवायु होने के कारण ही यहाँ कम मनुष्य रहते हैं। मैदानी भागों का तो सर्वथा अभाव ही है। हाँ जिन पहाड़ी घाटियों में तापक्रम अपेक्षाकृत नीचा और कृषि के योग्य है वहाँ थोड़ी-बहुत खेती की जाती है।

(2) असम की पहाड़ियाँ एवं ब्रह्मपुत्र का निचला प्रदेश—भारत में यह सबसे अधिक वर्षा के भाग हैं। 1350 मीटर की ऊँचाई पर स्थित चेरापूंजी विश्व में सबसे अधिक वर्षा प्राप्त करने वाला स्थान इसी भाग में स्थित है। इस क्षेत्र की पहाड़ियों की ढालों पर घने वन छाये हुए हैं। पहाड़ी ढालों पर चाय के खेत हैं। इन भागों में गर्मी अधिक नहीं पड़ती है अतः वार्षिक तापान्तर कम रहता है। पहाड़ी भागों में सुविधा न होने के कारण बहुत कम लोग रहते हैं किन्तु ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी में आबादी अपेक्षाकृत घनी है।

(3) गंगा के मैदान का निचला भाग और उत्तरी पूर्वी समुद्र-तट—इस प्रदेश में बंगाल का दक्षिणी भाग और महानदी के डेल्टे के भाग भी सम्मिलित हैं। यह अच्छी जलवायु वाले भाग हैं। पूर्वी भागों में 175 cms से भी अधिक वर्षा हो जाती है किन्तु पश्चिमी भागों में वर्षा की मात्रा लगभग 125 cms ही रह जाती है। गंगा के डेल्टे के दलदली भागों में सुन्दर वन पाये जाते हैं।

(4) गङ्गा नदी का मैदान—इस भाग में बिहार और प्रायः सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश सम्मिलित है। इस क्षेत्र में वर्षा की यह विशेषता है कि पूर्वी भागों में तो वर्षा की मात्रा अधिक है और ज्यों-ज्यों पश्चिम की ओर अग्रसर होते जाते हैं, वर्षा कम होती जाती है। पूर्वी भागों में वर्षा अधिक होने के कारण कृषि में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है, परन्तु पश्चिमी भागों में वर्षा की मात्रा कम होती जाती है और वहाँ खेती के लिये सिंचाई आवश्यक है। पूर्वी भागों में विशेषतः चावल और गन्ने की खेती होती है और पश्चिमी भागों में गेहूँ, कपास और गन्ने की खेती मुख्य है।

ये भारत के घने बसे हुए भाग हैं। गर्मियों में इन भागों में अधिक गर्मी पड़ती है जाड़ों में बहुत अधिक सर्दी पड़ती है। दिसम्बर व जनवरी सबसे अधिक ठण्डे महीने होते हैं।

(5) उत्तरी-पश्चिमी शुष्क प्रदेश—इस प्रदेश में पंजाब का दक्षिणी भाग और राजस्थान सम्मिलित है। इस प्रदेश की जलवायु विषम है। गर्मियों में अधिक गर्मी व सर्दियों में अधिक सर्दी पड़ती है। रातें विशेषतः अधिक ठण्डी होती हैं। वार्षिक तापान्तर इस प्रदेश में अधिक है। वर्षा इस भाग में बहुत कम होती है। थोड़ी वर्षा गर्मियों में व थोड़ी जाड़ों में होती है। वर्षा की कमी के कारण कृषि बहुत

ही कम होती है। सिंचाई के बिना इस क्षेत्र में खेती प्रायः असम्भव है। अब इस क्षेत्र में बाँध आदि बनाये जा रहे हैं जिनसे कृषि में सहायता मिलती। गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा व दालें आदि इस भाग की प्रमुख उपज हैं। औद्योगिक दृष्टि से भी यह प्रदेश पिछड़ा हुआ है और अपेक्षाकृत कम जनसंख्या निवास करती है।

(6) उत्तरी पंजाब—इस भाग में भी वर्षा सर्दियों व गर्मियों—दोनों ऋतुओं में होती है, परन्तु मात्रा कम है। गर्मियों में अधिक गर्मी व सर्दियों में अधिक सर्दी पड़ती है। इस कारण वार्षिक तापान्तर की मात्रा अधिक होती है। गेहूँ इस प्रदेश की मुख्य उपज है।

(7) दक्षिण का पठार—यह भाग वृष्टि छाया में आ जाने के कारण यहाँ वर्षा कम होती है। वार्षिक वर्षा प्राय 50 cms होती है। इस भाग में गर्मी बहुत अधिक पड़ती है, सर्दी अधिक नहीं पड़ती। भूमि अधिकांश पठारी होने के कारण खेती के लिए अयोग्य है। नदियों की घाटियों और छोटे छोटे मैदानों में खेती होती है। खेती के लिए सिंचाई की आवश्यकता होती है जो तालाबों की सहायता से की जाती है।

(8) पश्चिमी तटीय प्रदेश का उत्तरी भाग—यहाँ गर्मियों के मौसम में ही वर्षा होती है। अरब सागर की मानसून से यहाँ पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढालों पर 500 cms से भी अधिक वर्षा होती है जबकि मद्रासी तटीय भागों में 250 cms से अधिक वर्षा हो जाती है। जलवायु सम रहता है और वार्षिक तापान्तर कम होता है।

(9) पश्चिमी तटीय प्रदेश का दक्षिणी भाग—यह भाग भी 250 cms से कम वर्षा प्राप्त करता है। विषुवत रेखा निकट होने के कारण गर्मियों में अपेक्षाकृत अधिक गर्मी पड़ती है। सर्दियों में ठण्ड अधिक नहीं पड़ती।

(10) पूर्व का दक्षिणी तटीय प्रदेश—यहाँ नवम्बर व दिसम्बर में अच्छी वर्षा होती है। गर्मियों में बहुत साधारण वर्षा होती है। इस कारण गर्मियों में अधिक तापक्रम रहता है। इस कारण यहाँ जाड़े व गर्मी के तापक्रमों में पर्याप्त अन्तर रहता है।

जलवायु का भारत के आर्थिक जीवन पर प्रभाव
(Influence of Climate on the Economic Life of India)

भारत का जलवायु देश के आर्थिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को बहुत प्रभावित करता है। इसीलिए प्राय कहा जाता है कि मिस्र देश के लिए जो महत्त्व नील नदी का है वही महत्त्व भारत के लिए मानसूनी जलवायु का है। इस कथन का तात्पर्य यह है कि मिस्र देश की आर्थिक समृद्धि नील नदी के कारण ही है। उसी प्रकार भारत की आर्थिक सम्पन्नता भी काफी अंशों तक यहाँ की जलवायु (जिसमें मानसून भी सम्मिलित है) पर निर्भर है। भारत के आर्थिक जीवन को जलवायु इस प्रकार प्रभावित करती है[1] —

1 डॉ० मामोरिया—भारत का वृहद् भूगोल, पृष्ठ 196 199।

(1) **कृषि प्रधान देश**—भारत की जलवायु खेती के लिए अधिक उपयुक्त होने के कारण ही यह कृषि प्रधान देश हो गया है। यहाँ की आर्थिक प्रणाली में कृषि का विशेष स्थान है। सन 1971 की जन गणना के अनुसार भी भारत में कृषि की ही प्रधानता है।

(2) **कृषि उपज में विभिन्नता**—भारत में जलवायु की विभिन्नता के फलस्वरूप यहाँ विभिन्न प्रकार की फसलें होती हैं। खाद्यान्नों में बाजरा मक्का आदि से लेकर चावल तक और व्यापारिक फसलों में तिलहन से लेकर जूट आदि विभिन्न फसलें होती हैं। कृषि से ही विभिन्न प्रकार के औद्योगिक कच्चे पदार्थ मिलते हैं जैसे—कपास, गन्ना जूट आदि।

(3) **शीत ऋतु का प्रभाव**—शीतकाल में भारत के किसी भाग में तापमान बहुत नीचे नहीं रहते, इस कारण कृषि के लिए लम्बा समय मिलता है। स्थानीय अपवादों को छोड़कर भारत में पाला व कोहरा नहीं पड़ता है। अतः भारत में शीतकाल में शीतोष्ण फसलें व ग्रीष्मकाल में उष्ण प्रदेशीय फसलें होती हैं।

(4) **भारत परिमाणात्मक उपज का देश है**—भारत में ग्रीष्मकालीन तापमान ऊँचे होते हैं, जिससे फसलें शीघ्रता से पक जाती हैं। जल्दी पक जाने के कारण दाने छोटे व कड़े रह जाते हैं और गुणात्मक दृष्टि से वे अच्छी नहीं होती। इसलिए कहा जाता है कि भारत गुणात्मक उत्पादक (Quality producer) नहीं वरन् परिमाणात्मक उत्पादक (Quantity producer) है। यह बात सर्दी व गर्मी दोनों ही फसलों के लिए लागू होती है।

(5) **वर्षाकाल में पशुओं के लिए अधिक चारा**—भारत में जून, जुलाई और अगस्त के महीनों में अधिकांश वर्षा होती है। इनमें ज्वार बाजरा और मक्का जैसी फसलें शीघ्रता से पक जाती हैं। इस काल में गर्म और नम जलवायु के कारण पौधों की बढ़वार तेजी से होती है अतः पशुओं को काफी मात्रा में चारा उपलब्ध हो जाता है।

(6) **शुष्क ऋतु में चारे की कमी**—भारत में मानसूनी जलवायु होने के कारण वर्षा सीमित महीनों में ही होती है, शेष महीने सूखे रहते हैं। इस कारण भारत में बड़े-बड़े घास के मैदान नहीं बन पाते। वर्षा में जो कुछ घास उग भी आती है, वह शुष्क मौसम में सूख जाती है। इस कारण भारत में चारे की कमी रहती है और पशुओं को जमा किया हुआ चारा शुष्क ऋतु में खिलाना पड़ता है।

(7) **बड़ी गर्मी से भयानक रोग**—बड़ी गर्मी के बाद होने वाली तेज वर्षा के कारण बहुत-सी बीमारियों के कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं। मलेरिया, हैजा, संग्रहणी आदि बीमारियाँ फैल जाती हैं और जीवन शक्ति क्षीण हो जाती है।

(8) **आलस्य एवं पुरुषार्थहीनता**—गर्मी और नमी के कारण बीमारियाँ तो फैलती ही हैं किन्तु साथ ही मनुष्य में आलस्य व पुरुषार्थहीनता भी उत्पन्न होती है,

किसका उत्पादन शक्ति पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव अधिक वर्षा वाले प्रदेशों में स्पष्ट दिखाई देता है।

(9) अनावृष्टि से अकाल—भारत में वर्षा के न होने से महान हानि है और कभी-कभी अनावृष्टि के फलस्वरूप अकाल आदि पड़ जाते हैं और आर्थिक-व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाती है।

(10) अतिवृष्टि से बाढ़ें—देश में वर्षा सीमित समय में किन्तु तेजी के साथ होती है जिससे नदियों में उफान पड़ता है। नदियों के किनारों के स्थान पर पानी ही पानी दिखाई पड़ता है। जन व धन की बहुत हानि होती है।

(11) कृषक भाग्यवादी—भारत में वर्षा विश्वासघातक प्रकृति की होने के कारण भारतीय कृषक भी निराशावादी व भाग्यवादी हो गया है।

(12) सिंचाई की आवश्यकता—देश में वर्षा अधिकतर वर्षा ऋतु में ही होती है तथा अनिश्चित व कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई की व्यवस्था करनी होती है। अतः भारत की अर्थ-व्यवस्था में सिंचाई का विशेष महत्त्व हो गया है। इस पर बहुत धन व्यय किया जाता है जिसके परिणामस्वरूप कृषि का प्रति एकड़ व्यय बढ़ जाता है।

(13) वेश भूषा पर प्रभाव—भारत में अधिक गर्मी पड़ने से ढीले व महीन कपड़े अधिक पसन्द किये जाते हैं। घुटने तक की धोती तथा शेष नग्न भाग भारत के कृषक का आदर्श पहनावा है।

(14) भवन निर्माण पर प्रभाव—देश में गर्मी पड़ने के कारण यहाँ मकान खुले हुए, छज्जे चौक व जालियों सहित होते हैं। भारत के पूर्वी एवं दक्षिणी भागों में वर्षा अधिक होने के कारण छत प्रायः ढालू रखते हैं।

(15) वनस्पति आदि की विभिन्नता—जलवायु की विभिन्नता के कारण वनस्पति में विभिन्नता पाया जाना स्वाभाविक ही है। एक ओर साल शीशम देवदारु आदि के घने वन दिखाई पड़ते हैं तो कहीं सवाई घास के मैदान और कहीं छितरी हुई काँटे वाली छोटी झाड़ियाँ। इनके ऊपर कागज, दियासलाई लाख, दवाई उद्योग आदि निर्भर हैं।

(16) जातीय गुणों का विकास—उत्तर के जिन प्रदेशों में गर्मियाँ उष्ण व शुष्क होती हैं व सर्दियाँ कठोर होती हैं, वहाँ के निवासी बलिष्ठ साहसी, कर्मशील होते हैं क्योंकि उन्हें अपने जीविकोपार्जन के लिए काफी परिश्रम करना पड़ता है जैसे—राजस्थान के मनुष्य। दूसरी ओर गंगा ब्रह्मपुत्र के मैदान में वर्षा पर्याप्त होने के कारण प्रकृति ही उनके भरण-पोषण के लिए वस्तुएं सुलभ कर देती है।

(17) आध्यात्मिक विकास—भारत की प्राचीन संस्कृति में आध्यात्मवाद के विकास में जलवायु का भी पर्याप्त योग है।

(18) कम औसत आयु—भारतीय मानव उष्ण कटिबंध का निवासी है, इस कारण वह शीघ्र ही परिपक्वावस्था को पहुँच जाता है और नष्ट भी जल्दी हो

जाता है । एक भारतीय की औसत आयु सन 1970 की जनगणना के अनुसार 50 वर्ष है, जो अन्य देशों की तुलना में कम है ।

(19) जनसंख्या का घनत्व—भारत में वर्षा की मात्रा के साथ-साथ प्राय जनसंख्या का घनत्व परिवर्तित होता है । अच्छी वर्षा वाले प्रदेशों में घनी जनसंख्या है और कम वर्षा वाले प्रदेशों में कम जनसंख्या है ।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 Point out the characteristics of Indian rainfall and discuss its effects on Indian agriculture
भारतीय वर्षा की विशेषताएँ बताइये तथा भारतीय कृषि पर पड़ने वाले प्रभावों का वर्णन करिये ।

2 Divide India into various zone (क्षेत्र) according to rainfall and account for the principal crops of each zone (T D C, 1961)

3 Account for the climatic variations in India and illustrate their effect on the agricultural products of the various regions
(T D C, 1962)

4 What are the characteristic features of Monsoon climate ? Discuss the factors which account for the difference between the climate of Rajasthan and West Bengal ?
मानसून जलवायु की क्या विशेषताएँ हैं ? उन तथ्यों पर प्रकाश डालिये, जिनके कारण राजस्थान और पश्चिमी बंगाल की जलवायु भिन्न है ।
(T D C 1964)

5 Discuss in detail the causes of the regional variation of the climate in India
भारतीय जलवायु की क्षेत्रीय विषमताओं के होने के कारणों का सविस्तार वर्णन कीजिये । (T D C Suppl 1964)

6 भारत में मानसून की क्या विशेषताएं है ? संक्षिप्त में बतलाइये कि मानसून का राजस्थान के आर्थिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा है ? (T D C, 1965)

7 मानसून जलवायु की क्या विशेषताएँ हैं ? उन तथ्यों पर प्रकाश डालिये जिनके कारण राजस्थान और पश्चिम-बंगाल की जलवायु विभिन्न है ।
(T D C Suppl 1966, 1967)

8 भारतीय मानसून की विशेषताओं का विवेचन कीजिये ।
(T D C Suppl, 1968)

9 मानसून जलवायु की क्या विशेषताए हैं ? उन तथ्यों पर प्रकाश डालिए जिनके कारण राजस्थान और पश्चिम बंगाल की जलवायु भिन्न है ।
(T D C, 1971)

6

भारत की मिट्टियाँ एवं समस्याएँ

प्रारम्भिक—मिट्टी से आशय

भू पृष्ठ की (Earth's crust) सबसे ऊपरी तह को ढकने वाले ढीले ढाले पदार्थ (Loose matter) को मिट्टी कहते है।[1] प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता ह्यू बैनेट ने मिट्टी को इस प्रकार परिभाषित किया है "भूतल पर मिलने वाली असंगठित पदार्थों की वह ऊपरी पर्त मिट्टी कहलाती है जो मूल चट्टानों तथा वनस्पति अंश के योग से बनती है।" मिट्टी की इस परिभाषा को विश्व के प्रायः सभी भूगोलशास्त्रियों का समर्थन प्राप्त है। इस परिभाषा से स्पष्ट है कि मिट्टी न केवल मूल चट्टानों का चूर्ण है, वरन् वनस्पति के सडे-गले अंश भी उसमें सम्मिलित होते हैं। चट्टानों के ऊपर सूर्य चन्द्रमा वायु जल, बर्फ तथा वनस्पति आदि का निरन्तर प्रभाव पडा करता है और उनके प्रभाव से चट्टानें शनै शनै टूटती रहती हैं तथा उनके छोटे छोटे टुकडे हो जाते है। इन छोटे छोटे टुकडों में वनस्पति का सडा गला भाग भी मिलता रहता है। यही मिट्टी है। डा० मामोरिया[2] के शब्दों में "चट्टानों के बारीक टुकडों को, जिसमें सडी गली वनस्पति मिली होती है, मिट्टी कहते है। मिट्टी की रचना विशेषकर चट्टान जलवायु तथा वनस्पति पर निर्भर रहती है किन्तु मिट्टी को वास्तविक रूप देने में जलवायु का विशेष स्थान रहता है। सोवियत रूस के भू गर्भशास्त्रियों ने मिट्टी के निर्माण के सम्बन्ध में यह सिद्धान्त बनाया है मिट्टी की रचना में जलवायु प्रमुख साधन है और समान जलवायु वाले प्रदेशों की मिट्टियों में बहुत सी समानताएं पाई जाती हैं, चाहे उन मिट्टियों का निर्माण भिन्न भिन्न चट्टानों से हुआ हो।

मिट्टी का महत्त्व

मिल्टन ने लिखा है "जैसे प्रकाश के साथ दीपक बंधा हुआ है वैसे ही हमारे प्राणों के साथ मिट्टी बंधी हुई है।" मिट्टी के बन्धन के बिना हम जड है—मिट्टी हमें जगाती है तो हमारा जन्म होता है मिट्टी हमें बुलाती है तो हमारी मृत्यु होती है। हमारा जीवन-मरण मिट्टी के माध्यम से ही है। समस्त वस्तुएं नश्वर हैं किन्तु

---

1 Randhawa *Agricultural and Animal Husbandary in India* p 25

2 Mamoria भारत का बृहत भूगोल पृष्ठ ४२६

मिट्टी अमर है। स्वर्गीय प० नेहरू न अपनी विख्यात पुस्तक 'विश्व इतिहास की एक झलक' मे तो यहाँ तक लिख दिया है 'एक दिन ऐसा आयेगा कि सूरज और चाँद निरे कोयले रह जायेंगे, तारे राख के कणो की तरह हवा मे उड़ेंगे, समन्दर सूख कर रेत के ढेर हो जायेंगे और हवा थक कर मुर्दे की मानिंद हो जावेगी—तब भी यह मिट्टी जिन्दा रहेगी क्योंकि मिट्टी कभी नही मिटती, कभी बाझ नही होती।" टी० रूजवेल्ट ने कहा है, 'यदि पृथ्वी से मिट्टी समाप्त हो जाए तो मानव सभ्यता के समाप्त होने मे अधिक देर नही लगेगी। भारत के अनेक कवियो[1] ने भी अपनी कविताओ मे मिट्टी की महिमा बताई है। स्वर्गीय प० नेहरू अपनी राख को खेतो मे विलीन कर प्रकृति के इस तकाज को पूरा करना चाहते थे—चमन मे हर तरफ, बिखरी हुई है दास्ता मेरी।' विलकाक्स (Wilcox) ने कहा है 'मानव सभ्यता का इतिहास मिट्टी का इतिहास है और प्रत्येक व्यक्ति की शिक्षा मिट्टी से ही प्रारम्भ होती है।' इस प्रकार, वास्तव मे मनुष्यो और राष्ट्रो का जीवन-माप-दण्ड उनके मिट्टी के समजन मे ही निहित है।

मिट्टी का आर्थिक महत्त्व—मिट्टी का आर्थिक महत्त्व बहुत होता है। यह मनुष्य तथा पशु जीवन को प्रभावित करती है। मनुष्य जीवन को मिट्टी अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है, क्योकि यह मनुष्य को भोजन, वस्त्र और निवास—जो कि तीन भौतिक आवश्यकताएँ होती है—अप्रत्यक्ष रूप से प्रदान करती है। मिट्टी कृषि सम्बन्धी आवश्यकताओ का एकमात्र आधार है। विश्व की आधी से अधिक जनसंख्या कृषि पर ही आधारित है। भारतीय कृषक की बहुमूल्य सम्पदा मिट्टी ही है। भारत मे 75 प्रतिशत व्यक्ति कृषि पर अवलम्बित है और चीन मे 80 प्रतिशत। यूरोप के देशो मे यद्यपि औद्योगिक विकास अधिक हुआ है किन्तु वहा भी जहा भूमि अनुकूल है, खेती का महत्त्व उद्योगो की तुलना मे कम नहीं है। संयुक्त राज्य अमेरिका कनाडा, ब्राजील आस्ट्रेलिया आदि देशो मे भी कृषि का पर्याप्त महत्त्व है। मिट्टी मनुष्यो को भोज्य पदार्थ और उद्योगो को कच्चा माल प्रदान करती है। जो देश अपने यहा की मिट्टी की उपयुक्त ढग से रक्षा करते हैं वे समृद्ध एव सम्पन्न हो

---

1 रवीन्द्रनाथ टगोर ने अपनी एक कविता में मिट्टी की इस महिमा को बड़े गद गद भाव से व्यक्त किया है—

मिट्टी के मोह से खिचकर
लौट चल मिट्टी की ओर
आँचल पसारकर मिट्टी
ताक रही है तेरा मुख

फलो हैं गोद उसकी
क्षितिज से क्षितिज तक
डोर में बँधे है उसकी
जन्म, मरण, अलख।

सकते हैं, किन्तु जो देश मिट्टी की उपेक्षा करते हैं वे रेगिस्तान में परिणत हो सकते हैं। अतः स्पष्ट है कि किसी भी देश के उत्थान में मिट्टी का महत्त्वपूर्ण योग रहा है।

भारत में मिट्टियों का वितरण

भारतीय मिट्टी को स्थूल रूप से दो भागों में बांटा जा सकता है—(1) लाई हुई मिट्टी तथा (2) स्थायी मिट्टी।

(1) लाई हुई मिट्टी (Transported Soil or Drift Soil)—

वर्षा वायु तथा अन्य किसी प्रकार से एक स्थान की मिट्टी दूसरे स्थान पर चली जाती है। इस प्रकार यह मिट्टी अपना मूल स्थान छोड़कर दूसरे स्थान पर चली जाती है। इस मिट्टी में हल्के और बारीक कणों की अधिकता होती है। इस मिट्टी में उपजाऊ तत्त्व भी बहुत होते हैं क्योंकि यह अनेक प्रकार की भूमि पर होकर आती है। भारत में सतलज गंगा के मैदान में यह मिट्टी पाई जाती है जो मुख्यतः नदियों द्वारा लाई गई है।

(2) स्थायी मिट्टी (Residual Soil)—

प्रायद्वीप भारत तथा हिमालय प्रदेश की मिट्टियाँ इसके अन्तर्गत आती हैं। वे मिट्टियाँ जो अपने निर्माण स्थान पर ही रहती हैं स्थायी मिट्टी कहलाती हैं।

भारतीय मिट्टियों का विभाजन

भारत की प्राकृतिक बनावट के आधार पर भौगोलिक दृष्टि से देश की मिट्टी को तीन प्रमुख समूहों (Groups) में विभक्त कर सकते हैं—(I) प्रायद्वीपीय भारत (Peninsular India) की मिट्टियाँ (II) उत्तरी मैदान की मिट्टियाँ एवं (III) हिमालय प्रदेश (Himalayan Region) की मिट्टियाँ।

(I) प्रायद्वीपीय भारत की मिट्टियाँ—

प्रायद्वीपीय भारत बहुत प्राचीन है अतः यहाँ की मिट्टियाँ भी प्राचीन और बहुत परिपक्व (Highly Mature) हैं। इस प्रदेश में मुख्यतः चार प्रकार (Types) की मिट्टियाँ मिलती हैं—(1) लाल मिट्टी (Red Soil) (2) काली मिट्टी (Black Cotton Soil or Regur) (3) हल्के लाल रंग की मिट्टी (Laterite Soil) तथा (4) कछारी मिट्टी (Alluvial Soil)।

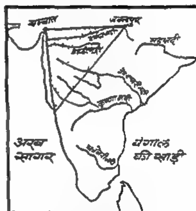
(1) लाल मिट्टी—लाल मिट्टी मुख्यतः प्रायद्वीपीय भारत की विशेष मिट्टी है। यह लगभग 2 लाख वर्ग किलोमीटर में फैली हुई है। इस मिट्टी का प्रदेश मध्य प्रदेश में बुन्देलखण्ड से लेकर धुर दक्षिण तक फैला हुआ है। यह तमिलनाडु, आन्ध्र, मैसूर, महाराष्ट्र का दक्षिणी-पूर्वी भाग, मध्य प्रदेश के अनेक भागों में पाई जाती है। इसके अतिरिक्त दक्षिणी बिहार, पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा, राजस्थान के दक्षिण पूर्वी भाग तथा उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में भी लाल मिट्टी पाई जाती है। इन प्रदेशों में मिट्टी का समान रंग नहीं है।

लाल मिट्टी गर्म और तर जलवायु में बारी-बारी से परिवर्तन के फलस्वरूप

प्राचीन रवेदार चट्टानों और परिवर्तित चट्टानों की टूट फूट के कारण बनती है। लौह पदार्थयुक्त चट्टानों के चूर्ण से तैयार होने के कारण ग्रीष्म ऋतु में जब इसकी ऊपरी पर्तों पर आ जाती है जिससे इसका लाल रंग हो गया है। कहीं कहीं इसका रंग भूरा चाकलेटी पीला, खाकी और कहीं कहीं तो काला भी पाया जाता है।

इस मिट्टी का निर्माण अनेक प्रकार की चट्टानों से हुआ है अतः इसकी गहराई तथा उर्वरा शक्ति में भिन्नता पाई जाती है। यह मिट्टी वस्तुतः रन्ध्रयुक्त (Porus) होती है। बहुत गहरी तथा बहुत बारीक होने पर ही उपजाऊ होती है। यही कारण है कि ऊँचे मैदानों पर पाई जाने वाली लाल मिट्टी उपजाऊ नहीं होती। इस मिट्टी में पोटाश एवं चूना तो काफी होता है किन्तु नाइट्रोजन, फासफोरस तथा वनस्पति का अंश (Humus), मग्नेशिया आदि की कमी होती है।

(2) काली मिट्टी—इस काली मिट्टी (Black Soil) अथवा कपास की काली मिट्टी (Black Cotton Soil) अथवा रेगर (Regur) भी कहते हैं। इसके काले रंग के कारण ऐसा नामकरण किया गया है इसके अतिरिक्त यह कपास की कृषि के लिए भी बहुत उपयुक्त है। तेलगू भाषा में काली मिट्टी को रेगडा[1] (Regada) कहते हैं। 'रेगडा शब्द' से ही 'रेगर (Regur) शब्द' की उत्पत्ति हुई है।



काली मिट्टी प्रदेश
चित्र 8

यदि एक रेखा खम्भात की खाड़ी से जबलपुर तक और जबलपुर से गोआ के निकटवर्ती तट खींचा जाय तो प्रायः सम्पूर्ण भाग काली मिट्टी वाला प्रदेश होगा। इस मिट्टी की पट्टी कहीं भी 225 kms से अधिक चौड़ी नहीं है। इस मिट्टी का क्षेत्रफल 5 लाख वर्ग kms है। राजनीतिक दृष्टि से महाराष्ट्र व मध्य प्रदेश और तमिलनाडु व आन्ध्र (बलारी, कुरनूल, कडप्पा अनन्तपुर, गुन्टूर कोयम्बटूर, त्रिचनापल्ली, सलेम, टिनेवली जिले) के अधिकांश भाग सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त गुजरात राज्य के भी कुछ भाग में यह मिट्टी पाई जाती है।

इस मिट्टी की उत्पत्ति के विषय में अनेक विद्वानों—जिनमें न्यूबाल्ड, हिजलोप, बनफोर्ड, आलडहाम, ल्यूयर आदि अधिक उल्लेखनीय हैं—ने खोज की है। हिजलोप का मत है कि भिन्न भिन्न प्रकार की मिट्टियों में विभिन्न वनस्पति के अंशों के मिश्रण के कारण इसका रंग काला हो गया है। बनफोर्ड ने भी हिजलोप के मत की पुष्टि

[1] Chhiber *India* Vol I p 206
पृ०, 7

की है। किन्तु अधिक मान्य मत है कि प्राचीन काल में ज्वालामुखी विस्फोट से निकले हुए लावा से यह मिट्टी बनी हुई है। इस मिट्टी की सतह की गहराई 0.25 मीटर से 15 मीटर तक मिलती है। पानी से भीगने पर यह मिट्टी फूल जाती है और चिपचिपी हो जाती है। इस कारण वर्षा ऋतु में इस पर हल चलाना बहुत ही कठिन है। सूखने पर यह मिट्टी बहुत सख्त हो जाती है और दरार पड़ जाती हैं।



चित्र 9

कुछ दरारें तो बहुत ही कम चौड़ी होती हैं किन्तु कुछ कई फीट गहरी होती हैं। इन दरारों में किनारे की मिट्टी के कण अन्दर गिरते हैं और दरारें पटता रहता है जिससे यह स्वयं ही टूट-फूटकर बारीक होती रहती है। इस मिट्टी में नमी रोक रखने की शक्ति बहुत होती है यही कारण है कि यद्यपि यह मिट्टी कम वर्षा (50 से 75 cms तक) वाले भागों में पाई जाती है किन्तु अधिक सिंचाई की आवश्यकता

नहीं पडती है। अन्दर काफी गहराई तक पहुँची हुई नमी को सूय की भीषण गर्मी भी लुप्त नहीं कर पाती। यह मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है और अनेक शताब्दियों तक बिना खाद दिये हुए भी इसकी उवरा शक्ति नष्ट नही होती है। यह मिट्टी कपास की उपज के लिए आदश समझी जाती है। इसके अतिरिक्त गेहूँ ज्वार एव तिलहन की अच्छी उपज होती है।

काली मिट्टी म लोहा, अलुमिना, चोवाश, चूना मैग्नेशिया तो काफी होते हैं किन्तु नाइट्रोजन, फासफोरस आदि की बहुत कमी होती है।

रूस तथा अमेरिका म भी काली मिट्टी पाई जाती है। भारत की काली मिट्टी बनावट म सयुक्त राज्य अमेरिका के एरीजोना प्रान्त की काली मिट्टी के सदृश है, क्योंकि दोनो ही लावा स बनी हैं। लेकिन उत्तरी अमेरिका के प्रेरीज प्रदेश तथा रूस के यूक्रेन प्रान्त की काली मिट्टियाँ भिन्नता रखती हैं क्योंकि वे लावा स नहीं बनी हैं वरन् उनका काला रग वनस्पति के अश की अधिकता के कारण है। इसलिए यह हमारे देश की काली मिट्टी की तरह चिकनी नही है वरन् भुरभुरी एव मुलायम है। अत इसे जोतना सरल है।

(3) हल्के लाल रग की मिट्टी (Laterite Soil)—'लैटेराइट शब्द 'later शब्द से बना है जिसका अथ है 'ईंट'। इस शब्द का प्रयोग सन 1807 म बचमन (Buchman) द्वारा किया गया था जबकि वह मालाबार, कनारा एव मैसूर क्षेत्र म यात्रा कर रहे थे। यह मिट्टी लटेराइट चट्टानो से बनने के कारण इस नाम स प्रसिद्ध हो गयी है।

यह मिट्टी भारत तथा मानसूनी वर्षा वाले अन्य उष्ण-कटिबन्ध के देशो की विशिष्ट मिट्टी है। मानसूनी देशो म मौसम के आधार पर हुई चट्टानो की क्षय की क्रिया द्वारा इस मिट्टी की रचना होती रहती है। यह मिट्टी प्रायद्वीपी भारत म विभिन्न प्रकार की चट्टानो म सम्बन्धित है। यह मिट्टी हल्के लाल रग अथवा भूरे रग अथवा पीत मिश्रित लाल रग की होती है। इसम ककड की प्रधानता होती है।

यह मिट्टी मद्रास तथा आन्ध्र के कुछ अशो, पूर्वी घाट के अधिकाश भाग महाराष्ट्र के दक्षिणी भाग और उडीसा म मुख्यत पाई जाती है।

लटेराइट मिट्टी छिद्रयुक्त (Porous) होती है और पानी को शीघ्र सोख लेती है। यह मिट्टी बहुत कम उपजाऊ होती है। नदियो की घाटियो म जहा उसमे अन्य प्रकार की मिट्टियाँ घुल मिल जाती हैं यह उपजाऊ हो जाती है। इस मिट्टी म मग्नीशिया चूने और नाइट्रोजन की कमी होती है और तेजाब की अधिकता रहती है।

(4) कछारी मिट्टी (Alluvial Soil)—इसे 'काँप' मिट्टी भी कहते हैं। यह मिट्टी दक्षिण भारत की नदी घाटियो और समुद्र तट के मैदानो म मिलती है। इसे यहाँ नदियो ने ला लाकर बिछाया है। प्रायद्वीप भारत की अधिकाश नदियाँ—महानदी, गोदावरी, कृष्णा व कावेरी आदि—बगाल की खाडी म

अपा उल्टे पूर्वी तट पर बाती हैं। अधिकाश नदियाँ वाली मिट्टी वाल प्रदेश मे निकलती हैं अत अपने साथ उपजाऊ मिट्टी भी वहा लाती हैं। इसके अतिरिक्त वर्षा ऋतु म बाढ़ आने क फलस्वरूप उड़ीसा और सँकरे तटीय भागा म उपजाऊ मिट्टी फल जाती है। इस मिट्टी मे पोटाश तथा चूने की अधिकता रहती है, किन्तु नाइट्रोजन, फॉस्फोरस आदि की कमी रहती है।

(II) उत्तरी मदान की मिट्टियाँ—

इस प्रदेश म मुख्यत तीन प्रकार की मिट्टियाँ मिलती हैं—(1) कच्छारी मिट्टी, (2) क्षारीय मिट्टी तथा (3) मरुस्थलीय अथवा रेगिस्तानी मिट्टी।

(1) कच्छारी मिट्टी—प्रायद्वीपी भारत क उत्तर म भारत का विशाल मदान है। भारत म यह पजाब राज्य व उत्तर प्रदेश राज्य म तथा बिहार बगाल व असम राज्य क भागो म पाई जाती है। यहाँ की मिट्टी का नदियो ने उत्तर के पर्वतीय प्रदेश को काट काट कर जमा किया है। इस मिट्टी को कच्छारी मिट्टी अथवा काँप मिट्टी कहते हैं। सम्पूर्ण क्षेत्र म इसकी परत एक के ऊपर एक बिछी हुई हैं। इस मिट्टी का विस्तार विशाल मदान के (पाकिस्तान सहित) 6½ लाख वग Kms म है। इन मदानो की चौडाई पश्चिम म 475 Kms से लेकर पूर्व म 140 Kms के मध्य है। यद्यपि इस मदान म मिट्टी की गहराई अभी तक ठीक प्रकार से मालूम नही हो पाई है किन्तु खुदाई करने पर 500 मीटर तक यह मिट्टी पाइ गयी है। यह मिट्टी उपजाऊपन की दृष्टि म सबस श्रेष्ठ है अत इस पर कृषि करना विशेष सुविधाजनक है। यह मिट्टी इस प्रदेश म अभी तक पूर्ण परिपक्व नहीं हुई है। किन्तु बहुत उपजाऊ है।

कच्छारी मिट्टी का वर्गीकरण—कच्छारी (काँप) मिट्टी वास्तव म दुमट मिट्टी है। अधिकाश स्थानो म यह पीली दोमट मिट्टी होती है तथा कुछ स्थानो म बलुई व चिकनी मिट्टी है। इस मिश्रण क अनुपात के आधार पर कच्छारी मिट्टी के अन्य उप विभाग किये जा सकत है। चिब्बर[1] ने कच्छारी मिट्टी को दो भागो म बाटा है—(क) नवीन कच्छार (Newer Alluvium) (ख) पुरातन कच्छार (Older Alluvium)। किन्तु डाक्टर मामोरिया न उपरोक्त दो उप विभागो के अतिरिक्त तीसरा उप विभाग (ग) नवीनतम कच्छार (Newest Alluvium) और बतलाया है।

(क) नवीन कच्छार—नदियो के निकटवर्ती भागो की भूमि म यह मिट्टी मिलती है। इसे खादर (Khadar) भी कहते हैं। नदियो के आस पास की भूमि जिसम प्रतिवर्ष नदियो की बाढ द्वारा मिट्टी की नवीन परत जमती रहती हैं खादर कहलाती हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि खादर क्षेत्र का विस्तार उस सीमा तक होता

1 Chhibber *India* Vol I p 214
2 Mamoria भारत का वृहद् भूगोल p 328

है, जहाँ तक साधारणत नदियों या बाढ़ का पानी चढ़ आया करता है। बाढ़ का पानी इसके धरातल पर अनेक महीनों तक जमा रहता है और सूख नहीं पाता है, अतः भूमि दलदली हो जाती है। यह मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है। सिंचाई की प्रायः आवश्यकता नहीं पड़ती। रबी की फसलें उत्पन्न की जाती हैं। चना मुख्य उपज है। गेहूँ की भी खेती की जाती है।

(ख) पुरातन कछार—यह मुख्यतः उन स्थानों की मिट्टी है जो नदियों व उनकी सहायक नदियों की बाढ़ के क्षेत्र में ऊँचे हैं। इसमें चिकनी मिट्टी की मात्रा काफी होती है। कहीं कहीं पर कंकड़ भी मिलते हैं जो वास्तव में अशुद्ध चूने की डेलियाँ हैं। इसे बांगर भी कहते हैं। इसका रंग कुछ श्यामवर्ण होता है।

यह मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है अतः प्रायः गहरी खेती की जाती है। प्रति वर्ष दो फसलें उत्पन्न कर ही ली जाती हैं। किन्तु सिंचाई की सुविधा होने पर तीन फसलें भी उत्पन्न की जा सकती हैं। गेहूँ तथा गन्ना प्रमुख फसलें हैं।

(ग) नवीनतम कछार—भारत के उत्तरी मैदान में ब्रह्मपुत्र व गंगा नदी के डेल्टे के भाग में यह मिट्टी मिलती है। यहाँ प्रतिवर्ष नई मिट्टी की परत जमती रहती हैं। इस मिट्टी में वनस्पति अंश एवं जीवांश बहुत होते हैं। डेल्टे में होने के कारण भूमि दलदली हो गई है, इसमें उपजाऊ तत्व बहुत घने होते हैं। कृषि योग्य क्षेत्रों में चावल तथा जूट प्रमुख उपज है, अन्य भागों में सुन्दरी वृक्ष हैं।

(2) क्षारीय मिट्टी (Alkaline Soil)—इस बड़े मैदान में कम वर्षा वाले भागों में बहुत सी क्षारीय मिट्टी पाई जाती है। उत्तर प्रदेश के उत्तरी भाग, बिहार, पश्चिमी पंजाब व राजस्थान में जहाँ कम वर्षा होती है, भूमि की ऊपरी सतह पर सफेद रंग की पर्त सी बिछ जाती है। इसमें भूमि बेकार हो जाती है और कोई पैदावार नहीं हो पाती। इस भूमि को ऊसर, कल्लर, बंजर अथवा रेह भूमि भी कहते हैं।

क्षारीय क्षेत्रों की उत्पत्ति दो प्रकार से होती है—प्रथम, हिमालय पर्वत से जो नदियाँ निकलती हैं, वे हजारों किलोमीटर पर्वतीय भाग में बहती हैं और निरन्तर क्षय होने वाली चट्टानों में निहित अनेक प्रकार के क्षार और लवण (जैसे सोडियम, कैल्सियम, मैग्नीशियम आदि) नदियों के पानी में घुलता रहता है। जब नदियाँ मैदानी भाग में बहती हैं तो ये घुले हुए नमक और क्षार पानी के साथ साथ भूमि की निचली पर्तों में जाकर एकत्रित होते रहते हैं। धीरे धीरे निचली पर्तों में समाये हुए पानी की सतह पानी की ऊपरी सतह से मिल जाती है। जब शुष्क ऋतु में पानी की भाप बहुत तेज गति से बनने लगती है, तो नीचे का नमकीन पानी छेदों में होकर ऊपर खिंचने लगता है। इस प्रकार पानी भाप बनकर उड़ता रहता है और उसके साथ घुल कर आये हुए नमकों की सतह जमती रहती है। यही जमा हुआ सफेद पदार्थ क्षार अथवा 'रेह' कहलाता है। यह पर्त धरातल पर फैल जाती है और भूमि को बंजर बना देती है। यह रेह एक नमकीन पदार्थ है जिसमें कैल्सियम, सोडियम व मैग्नीशियम नमक होते हैं। यह रेह वर्षा के पानी में निकटवर्ती क्षेत्र

भी फैल जाती है। द्वितीय, नहरी क्षेत्रों में बहुत अधिक सिंचाई करने से भी क्षार (रेह) भूमि पर फैल जाती है। किसान यह सोच कर कि दुबारा पानी मिलने में कठिनाई होगी, अपने खेतों को पानी से खूब भर देते हैं। इससे खेतों के पानी का भीतरी सतह के नमकीन जल से संयोग हो जाता है और फिर लवणयुक्त पानी ऊपरी सतह पर आकर खेत में भरे हुए पानी से मिलने लगता है और इस प्रकार क्षार फैल जाती है।

भारत में क्षारीय क्षेत्र अनेक हैं, जिनमें उत्तर प्रदेश उल्लेखनीय है, जहाँ 21 लाख एकड़ भूमि क्षार फैल जाने से कृषि के लिए बेकार हो गई है। पंजाब में भी क्षार फैल जाने से 5 लाख एकड़ भूमि क्षार से व्यर्थ हो गई है। पश्चिमी बंगाल में भी बहुत-सी भूमि इससे खराब हो रही है।

(3) मरुस्थलीय अथवा रेगिस्तानी मिट्टी[1] (Desert Soil)—गंगा के मैदान पर दक्षिणी पश्चिमी भाग में थार का रेगिस्तान है। राजनैतिक दृष्टि से दक्षिणी पंजाब तथा राजस्थान इसके अन्तर्गत आते हैं। रेगिस्तानी मिट्टी को बलुई मिट्टी कहते हैं। इसके कण मोटे और ढीले (अर्थात अलग-अलग) होते हैं। सूर्य की गर्म किरणों से यह मिट्टी शीघ्र ही गर्म हो जाती है और रात्रि में यह शीघ्र ही ठण्डी हो जाती है। इस मिट्टी में नमी को रोक रखने की शक्ति बहुत कम होती है। हवा बहुत तेज चलती है जिससे रेत के टीले (Sand dunes) एक स्थान से दूसरे स्थान पर उड़ते रहते हैं। इस मिट्टी में अनेक प्रकार के घुलनशील लवण काफी मात्रा में पाये जाते हैं किन्तु इस मिट्टी में जीवांश की बहुत कमी होती है। सिंचाई की सुविधा प्राप्त होने पर कृषि सफलतापूर्वक की जा सकती है। राजस्थान में गंगानगर (बीकानेर डिवीजन) इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

(III) हिमालय प्रदेश की मिट्टियाँ—

हिमालय एक नवीन पर्वत है अतः इस प्रदेश की मिट्टियाँ अभी पूरी तरह से नहीं बन पाई हैं इस कारण इस प्रदेश की मिट्टियाँ नई ही मानी जाती हैं। हिमालय प्रदेश में मिट्टी बहुत ही कम होती है, इसके दो प्रमुख कारण हैं—(1) हिमालय प्रदेश में 6,100 मीटर की ऊँचाई पर तो सर्वत्र ही बर्फ ढँकी रहती है और (2) हिमालय के पर्वतीय प्रदेश में चट्टानों की प्रधानता है।

इस प्रदेश में पाई जाने वाली मिट्टी के कण बहुत मोटे होते हैं और इसकी गहराई भी बहुत कम है। इनकी अधिक गहराई नदियों की घाटियों में अधिक है। हिमालय पर्वत की मिट्टी अनेक प्रकार की है। यहाँ की पर्वतीय ढाल पर या तो घने वन हैं अथवा ढाल पर सीढ़ीदार खेत बना लिये गये हैं। पश्चिमी हिमालय के ढालों पर कुछ अच्छी किस्म की मिट्टी मिलती है। मध्य हिमालय क्षेत्र में जो मिट्टी मिलती है उसमें वनस्पति के अंशों की कुछ अधिकता है अतः बहुत उपजाऊ है।

---

1 **Sokolowsky** *Soils of India*

हिमालय प्रदेश मे मुख्यत दो प्रकार की[1] मिटटी पाई जाती है—प्रथम, हिमालय के दक्षिणी भाग की मिटटी जिसके कण पर्याप्त बडे होते हैं और कंकड व छोटे छोटे पत्थर भी काफी मिले रहते हैं। इस मिटटी म उवरा शक्ति नही होती है। अत कृषि के लिए सवथा अयोग्य है। द्वितीय, हिमालय प्रदेश म अनक स्थानो पर चूने की चटटानो से प्राप्त मिटटी मिलती ह। नैनीताल, मसूरी आदि के निकट इस प्रकार की ही मिटटी पाई जाती है। ऐसी भूमि म जगल—विशेषत चीड और साल क पाये जाते हैं।

भारतीय मिट्टी की समस्याएँ

भारतीय मिटटी म नाइट्रोजन की पर्याप्त कमी है। भारत म हजारो वर्षो से कृषि हो रही है। कृषि की फसलें भूमि के उपजाऊ तत्वो को खीच लेती हैं जिसका प्रभाव यह होता है कि भूमि क उपजाऊ तत्व कम हो जाते हैं। शाही कृषि आयोग (Royal Commission on Agriculture) क समक्ष तत्कालीन भारत के कृषि सलाहकार ने बतलाया था कि 'भारत मे अधिकाश भूमि जिस पर खेती होती है, सैकडों वर्षों से जोती जा रही है और अधिकतम निधनता की स्थिति मे पहुँच गई है। यह इतनी निधन होगई है कि इसके आगे उसके निधन होने की कोई सम्भावना नहीं है। यद्यपि इस कथन म हम अतिशयोक्ति प्रतीत होती ह, परन्तु फिर भी यह अवश्य कहना पडेगा कि इसमे कुछ तथ्य अवश्य है। कनल ग्रेन क शब्दो म 'वास्तव म भारत हमारे नेत्रो क समक्ष ही शुष्क हो रहा है।' यदि भूमि म उचित खाद दी जाय तो उसकी उवरा शक्ति नष्ट नही होने पाती। वर्षा और हवा म मिटटी की ऊपरी तह हट जाती है और भूमि की उवरा शक्ति क्षीण हो जाती है। अत भारतीय मिटटी की तीन समस्याए स्पष्ट रूप स दृष्टिगोचर होती हैं —(I) ऊसर अथवा रेह की समस्या।[2] (II) भूमि की गिरती हुई उत्पादन शक्ति की समस्या, तथा (III) मिटटी के कटाव की समस्या।

(I) ऊसर अथवा रेह की समस्या

रेह की समस्या भूमि पर अधिक जल के कारण होती है। जिन भागो म नहरो द्वारा सिंचाई होती है, वहा प्राय कृषक अपने खेतो म आवश्यकता से अधिक पानी भर देते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि भौगर्भिक जल की सतह स यह जल मिल जाता है। बाद म जब भूमि का पानी सूखने लगता है तो जल-वाष्प के साथ नमक भी भूमि के ऊपर आकर जमने लगता है। इस प्रकार भूमि के ऊपर सफेद रग का क्षारीय पदाथ बिछ जाता है। इस क्षारीय पदाथ की अधिकता के

---

1 चिब्बर ने अपनी पुस्तक *India*, Vol I, pp 225 227 पर हिमालय प्रदेश की मिटिटया का 4 भागो म बाटा है—(1) चाय की मिटटी (2) टरशरी मिटटी (3) आग्नेय मिटिटयाँ और (4) चूने के पत्थर एव डोलामाइट मे बनी मिटिटया।

2 **Mamoria** *Agricultural Problems of India*, pp 48 71

कारण भूमि बेकार हो जाती है और कृषि के योग्य नहीं रहती। इस प्रकार रेह की भूमि ऊसर हो जाती है। ऐसी रेह की भूमि को विभिन्न भागों में विभिन्न नामों से पुकारते हैं, जैसे उत्तर प्रदेश में 'रेह अथवा ऊसर' महाराष्ट्र में 'चापन अथवा कल' और पंजाब में 'राखर अथवा थर' कहते हैं। रेह पौधों को अंकुरित नहीं होने देता, अतः ऐसी भूमि कृषि के लिए अयोग्य हो जाती है। ऐसा भी देखा गया है कि वर्षा तेज होने पर वर्षा का पानी रेह को निकटवर्ती भूमि पर फैला देता है और उसे भी बेकार कर देता है। उत्तर प्रदेश तथा पंजाब में अधिक सिंचाई के कारण 'रेह' का क्षेत्र बढ़ता जा रहा है।

समस्या के निवारण हेतु सुझाव—

इस प्रकार यह एक गम्भीर समस्या है। रेह की समस्या के निवारण के निम्नलिखित सुझाव हैं—

(1) **जल निकासी का प्रबन्ध**—रेह की समस्या का मूल कारण है खेतों में अधिक पानी का रहना। अतः इसके लिए यह जरूरी है कि एक स्थान पर आवश्यकता से अधिक पानी एकत्रित नहीं होने देना चाहिए। यह तभी हो सकता है जब जल की निकासी का उचित प्रबन्ध हो।

(2) **गन्धक का चूरा**—मिट्टी में गंधक का चूरा मिलाने से भूमि पुनः कृषियोग्य हो जाती है। एक हेक्टेयर (1 Hectare = 2 471 acres) भूमि में 500 किलोग्राम (1 Kgm = 2 2046 lbs) गंधक का चूरा पर्याप्त रहता है। भारत के लिए यह तरीका अधिक उपयुक्त नहीं है क्योंकि भारतीय कृषक निर्धन हैं।

(3) **अन्य साधन**—प्रति हेक्टेयर भूमि में 5 मीट्रिक टन जिप्सम पानी में घोलकर डाल देने से मिट्टी में नमक की मात्रा का प्रभाव नहीं रहता। भारत में जिप्सम काफी मात्रा में मिलता है।

(4) **अनुसन्धान कार्य**—सरकार को चाहिए कि रेह की समस्या को काफी गम्भीर समझे और इस समस्या से मुक्ति दिलाने के लिए अनुसन्धान कार्य का प्रबन्ध करे।

(II) भूमि की गिरती हुई उत्पादन-शक्ति की समस्या

भूमि को उर्वर रखने के साधन—

अतीत काल से भारत में खेती का उद्यम चला आ रहा है। भूमि को उर्वर रखने के लिए अनेक साधन हैं। उनमें से तीन प्रमुख हैं —

पहला साधन तो यह है कि भूमि से एक बार फसल प्राप्त करके उसे एक या दो वर्षों तक परती छोड़ देना चाहिए। इससे भूमि को विश्राम मिलेगा और भूमि वायु से नाइट्रोजन प्राप्त कर लेगी। यद्यपि यह साधन प्राकृतिक है परन्तु भारत जैसे घने बसे हुए देश में जहाँ जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है यह उपयुक्त एवं व्यावहारिक नहीं है।

दूसरा साधन फसलों के हेर-फेर का है। एक ही खेत में प्रति वर्ष अथवा

म म भिन्न भिन्न फसलें तैयार करने म भूमि के उपजाऊ तत्वो का शीघ्र ही ा नही होता है । यदि एक मौसम म गहू बोया जाय तो दूसर मौसम म ज्वार ारा और तीसरे म दालें उत्पन्न की जा सकती हैं। परन्तु यह साधन भी भारत लिए अव्यावहारिक प्रतीत नही होता ।

उपयुक्त दोनो साधन तो प्राकृतिक हैं । तीसरा साधन कृत्रिम है और वह है ा म खाद देना । खाद म भूमि की उवरा शक्ति बढती ह ।

भारत म खाद की पूर्ति के निम्न साधन उपलब्ध है —(1) गोबर और मूत्र की खाद, (2) कूडे की खाद, (3) मल तथा मूत्र की खाद (4) मछली की द, (5) हड्डी की खाद (6) हरी खाद (7) खली की खाद, (8) रक्त की (9) गन्दे पानी की खाद, और (10) रासायनिक खाद ।

(1) गोबर और गौ मूत्र की खाद—भारत के कृषक निधन हैं अत उनके ए यह खाद महत्वशील है क्योंकि यह सस्ती है । भारत म प्रतिवष औसत रूप 1 35 करोड टन गोबर उपलब्ध होता है । इसका 25 प्रतिशत से भी अधिक भाग धन के रूप म जला दिया जाता है । भारतीय कृषक गोबर के कण्डे बनाकर जला ता है । शाही कृषि कमीशन ने अपनी रिपोर्ट म बतलाया है कि गाँवो में कण्डों के तिरिक्त प्राय कोई इधन सामग्री नही दिखाई पडती । एक विद्वान ने गोबर के हत्व को बतलाते हुए लिखा है कि कण्डो को जलाने के साथ हम अपनी उन्नति ी जला रहे है ।" डा० वायलकर के अनुसार गोबर की कुल उत्पत्ति का 40% ाद देने म, 40% जलाने म और 20% अनुचित तरीके से नष्ट हो जाने के काम ाता है ।" इसके अतिरिक्त गौ मूत्र जो कि इधर उधर फलकर गन्दगी व बीमारियां ्लाता है खाद के रूप म प्रयुक्त किया जा सकता है । परन्तु इसके लिए प्रचार ावश्यक ह ।

वन विभाग तथा अन्य स्थानीय सस्थाओ को चाहिए कि गांवो के निकटवर्ती क्षेत्रो म वन लगावे, उससे अन्य लाभो के अतिरिक्त एक लाभ यह भी होगा कि कृषको को सस्ता ईधन उपलब्ध हो सकेगा और गोबर का खाद के रूप म पूरा उपयोग हो सकेगा ।

(2) कूडे की खाद—कूडे-करकट आदि से भी सस्ती व अच्छी खाद प्राप्त की जा सकती है । गाव के बाहर गड्ढे खोदकर उनम गाँव भर का कूडा करकट पत्तियां व अन्य गन्दगियां को डाल देते हैं । जब ये गड्ढे भर जाते हैं तो ऊपर से मिट्टी की एक तह डाल देते हैं । कुछ समय के बाद यह श्रेष्ठ खाद बन जाती है । इस प्रकार गाँव की सफाई भी रहती है और कूडा आदि का भी सदुपयोग हो जाता है । चीन तथा जापान म इस प्रकार की खाद के प्रयोग किये गये हैं तथा वहाँ इस दिशा म बहुत सफलता मिली है ।

(3) मल तथा मूत्र की खाद (Night Soil)—यह एक श्रेष्ठ खाद है चीन जापान तथा पाश्चात्य देशो ने इस खाद से काफी लाभ उठाया है, परन्तु भारत

म किसान इसका प्रयोग करने में संकोच करते हैं क्योंकि इसे वे अस्पृश्य समझते हैं तथा इसमें दुर्गन्ध आती है।

मल की खाद को दो प्रकार से प्रयोग किया जा सकता है। मल को सुखा कर पाउडर बना लिया जाय और फिर इसका चूर्ण प्रयोग में लाया जाय। दूसरा तरीका यह हो सकता है कि मल बड़े तालाबों में रखकर हवा अथवा गैस के द्वारा इसकी दुर्गन्ध को हटा दिया जाय और फिर मल का प्रयोग किया जाय।

मल की अपेक्षा मूत्र में नाइट्रोजन की मात्रा अधिक होती है। अतः स्थान स्थान पर मूत्रालय बनाये जायें जहाँ से मूत्र एकत्रित करने का प्रबन्ध हो। नगर पालिकाओं को चाहिए कि मल और मूत्र से खाद तैयार करायें और कृषि विभाग उसका प्रचार कर तथा विक्रय में योग दें।

(4) मछली की खाद—मछली की खाद बहुत अच्छी व कीमती होती है। भारत में तो मछली की खाद का प्रयोग होता ही नहीं है। जापान में चावल और चाय के खेतों में इसका भी प्रयोग करते हैं। यह खाद फलों के वृक्षों के लिए तो बहुत ही अच्छी होती है। मछलियों का तेल आदि निकालने के पश्चात शेष भाग खाद के काम आ सकता है। इसके अतिरिक्त जो मछलियाँ सड़कर खराब हो जाती हैं, उनको भी खाद के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।

(5) हड्डी की खाद[1]—हड्डी की खाद का भारत में प्रचलन बहुत ही कम है, परन्तु पाश्चात्य देशों ने इसका प्रयोग खूब किया है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि भारत में प्रति वर्ष मरने वाले जानवरों की लगभग 6 लाख टन हड्डियाँ होती हैं, जिनमें केवल 33 प्रतिशत भाग ही एकत्रित किया जाता है और इसमें से भी चौथाई भाग से खाद तैयार की जाती है।

हड्डियों को पीसकर फास्फेट खाद बनाई जाती है। इस समय भारत में 98 मिलें हैं जो प्रतिवर्ष 1.40 लाख टन हड्डी पीसती हैं।

कुटी हुई हड्डी और छोटे छोटे टुकड़े जो लगभग 75 हजार टन होते हैं, इंग्लैण्ड, फ्रांस, बेलजियम, पश्चिमी जर्मनी, अमरीका और लंका आदि देशों को भेजे जाते हैं। इससे लगभग 22 करोड़ रुपये के मूल्य की विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।

(6) हरी खाद—मटर, उड़द, अरहर आदि के पौधे खेत में उगा लेते हैं। फसल पर फलियाँ तो चुन लेते हैं और खेत में चला देते हैं जिससे इन पौधों की पत्तियाँ और जड़ें मिट्टी में मिल जाती हैं। इस प्रकार भूमि में उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है। भारत में यह प्रणाली अधिक लोकप्रिय नहीं है।

(7) खली की खाद—भारत में मूंगफली, तिल, सरसों आदि अनेक तिलहन बड़ी मात्रा में उगते हैं। तिलहन से तेल निकाल लेने के पश्चात शेष भाग खली रह

---

1 केन्द्रीय खाद्य और कृषि मंत्रालय के हाट एवं निरीक्षण निदेशालय की इस विषय पर प्रकाशित रिपोर्ट के आधार पर।

जाती है। हमारे देश में तिलहन बहुत बडी मात्रा में विदेशों को भेज दिये जाने के कारण खली प्रचुरता म उपलब्ध नही हो पाती है। खली की खाद से भूमि की उवरा शक्ति मे बहुत ही वृद्धि हो जाती है। परन्तु भारत म इसके प्रयोग के साथ ही यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि यहाँ कृषका का सहारा वल ही हैं और उन्हें शक्ति देने के लिये खली की बडी आवश्यकता है। अत भारत म खली का खाद के रूप म अधिक प्रयोग करना लाभदायक न होगा।

(8) रक्त की खाद—रक्त की खाद बहुमूल्य खाद होती है। ताजे रक्त म 2 5 प्रतिशत तक और शुष्क रक्त म 10 से 15 प्रतिशत तक नाइट्रोजन मिलता है। इस खाद के प्रयोग करने स भूमि की उवरा शक्ति म आश्चयजनक वृद्धि होती है। इस खाद को अधिकतर फलो के वृक्षो म काम म लाते हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि भारत म कसाईखाना स 10 हजार टन तक रक्त की खाद तयार की जा सकती है।

(9) गन्दे पानी की खाद—गन्दे पानी का भी खाद के रूप म प्रयोग किया जा सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका म इसके परीक्षण किये गये और यह निष्कर्ष निकाला गया कि यह भी एक अच्छी खाद है। वहाँ विशेषकर पश्चिमी भागो म इसका भी खाद के रूप म प्रयोग किया जाता है। रूस मे मास्को के लूबलाइन फार्मों म नगर के गन्दे पानी को खाद के रूप म सिंचाई के काम म लेते हैं। जमनी व फ्रास के भी कुछ भागो म इसका प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त गन्दे पानी की कीचड भी खाद के काम म लाई जा सकती है। कीचड म नाइट्रोजन, पोटाश और फास्फोरिक एसिड आदि की प्रचुरता रहती है।

भारत म इसका प्रयोग नही होता है। केवल नगरो आदि म, जहाँ मनुष्य अपने बगलो अथवा मकानो म बगीचे आदि लगा लेते हैं, प्रयोग कर लेते हैं अन्यथा गन्दे पानी को नदियो सदा बहने वाले नालो या समुद्र म बहा देते हैं। जहाँ ये साधन उपलब्ध नही होते हैं वहाँ गन्दे पानी के नालो को शोषक स्थान म ले जाकर समाप्त कर देते हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि भारत म प्रतिदिन लगभग 5 करोड गैलन गन्दा पानी बहाया जाता है। इसम से केवल 50 लाख गैलन गन्दे पानी का ही मुश्किल स प्रयोग हो पाता है, शेष नष्ट हो जाता है।

(10) रासायनिक खाद—रासायनिक खाद खेतो की उवरा शक्ति को बढाने म अत्यन्त ही सहायक सिद्ध हुई है। यह खाद तत्काल प्रभाव दिखलाती है, अत खाद को फसल बोने के कुछ समय पूर्व ही डालना चाहिए। यदि इस खाद को फसल बोने से बहुत समय पहले डाल दिया जाय तो इसका प्रभाव बहुत ही कम होता है। इसके अतिरिक्त मात्रा का भी विशेष ध्यान रखना पडता है क्योकि यदि खेत म अधिक रासायनिक खाद डाल दी जाय तो भूमि खराब होने का डर रहता है। इसलिये प्राय रासायनिक खाद के साथ गोबर की अथवा अन्य खाद भी डाल देते है।

भारत म सरकार द्वारा सचालित सिंदरी (बिहार) म रासायनिक खाद का कारखाना है। यह कारखाना लगभग 3 लाख टन रासायनिक खाद प्रति वर्ष तयार

करता है। पूर्वी रेलवे इस खाद को भारत के विभिन्न भागों में ले जाती है। इस कारखाने का विस्तृत विवरण 'भारत में सरकारी उद्योग' के अध्याय में दिया गया है।

एक कारखाना नांगल क्षेत्र में स्थापित किया जा चुका है। ग्वालियर के निकट नागदा में कार्बन डाइसल्फाइड के एक नये कारखाने की स्थापना तीन लाख रुपये की लागत से हो चुकी है, जिसकी उत्पादन क्षमता 6 टन प्रतिदिन की होगी।

(III) मिट्टी का कटाव
(Soil Erosion)

मिट्टी के कटाव का अर्थ—

हवा, पानी या हिम के द्वारा जब धरातल की मिट्टी अपने स्थान से किसी अन्य स्थान में स्थानान्तरित हो जाती है तो इस प्रक्रिया को मिट्टी का कटाव कहते हैं।

इन सबमें पानी के साधन—वर्षा नदियाँ तथा समुद्र—मिट्टी के कटाव करने में बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। हिमखण्ड (Glacier) के रूप में बर्फ पिघलती हुआ बर्फ एवं कोहरा भी मिट्टी के कटाव की सहायता पहुँचाते हैं।

भूमि के कृषि एवं चरागाह के लिए ठीक तथा संतुलित प्रयोग से मिट्टी का क्षयीकरण नहीं होता है किन्तु ऐसा नहीं होने से मिट्टी का क्षयीकरण हो जाता है। मनुष्य ने लकड़ी व अन्य वन पदार्थों के लाभ में प्राकृतिक वनस्पति को काट डाला और मिट्टी को वर्षा व वायु की दया पर छोड़ दिया। इसके परिणाम स्वरूप मिट्टी का कटाव आरम्भ हुआ। स्थायी मिट्टी (Residual soil) में ऊपर से 20 cms की गहराई तक ही पौधों के लिए भोजन के पदार्थ होते हैं। एक बार यह कटाव द्वारा नष्ट हो जाता है तो एक ऐसा खजाना नष्ट हो जाता है जिसकी पूर्ति होना कठिन है। मानव की यह कितनी बड़ी मूर्खता है कि प्रकृति की इस बड़ी भेंट (Gift)—मिट्टी को खोने में इतना लापरवाह है।

मिट्टी के कटाव के भयंकर परिणाम होते हैं। मिट्टी का कटाव शनैः शनैः होता है अतः इसे 'रेंगती हुई मृत्यु' (Creeping Death) भी कहा गया है। इसके परिणाम भूमि पर ही नहीं वरन् मनुष्य पर भी अप्रत्यक्ष रूप से पड़ते हैं। इससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति इतनी द्रुतगति से नष्ट होती है कि उसका तात्कालिक कोई प्राकृतिक अथवा कृत्रिम उपचार होना प्रायः असम्भव है। डा० एच० एच० बेनेट के शब्दों में मिट्टी के कटाव ने प्राचीन युगों की सभ्यताओं को मटियामेट कर दिया है। जो कभी विश्व की सर्वाधिक उर्वर भूमि मानी जाती थी वही आज उजाड़ पड़ी है और इन सभ्यताओं के विनष्ट नगर अब उसकी निर्जनता में मुँह छिपाये पड़े हैं। प्राचीन साम्राज्य के सुन्दर और रंगीन स्थानों में आज निर्जनता और विषाद का साम्राज्य है। कल के नन्दन-कानन आज चरागाह के रूप में बदल गये हैं। थार का रेगिस्तान जहाँ आज रेत के टीले अठखेलियाँ कर रहे हैं, अपने खण्डहरों के अतीत के गौरव का गीत गा रहा है। प्राचीन उर्वर और सांस्कृतिक

केंद्र रेत में परिणत हो गये हैं। मानव द्वारा मिट्टी का बहिष्कार और विनाश भी इसमें कम उत्तरदायित्व नहीं रखता। आज भी मानव मिट्टी का ठीक उपयोग न करके अपनी रंगीन दुनियाँ में विनाश का बीज बो रहा है।

मिट्टी के कटाव के रूप—

मिट्टी के कटाव के दो प्रमुख रूप होते हैं—(1) धरातली कटाव अथवा चादरदार कटाव (Sheet Erosion), और (2) नालीदार कटाव (Gully Erosion)।

(1) **धरातली कटाव**—इस प्रकार के कटाव में एक क्षेत्र के धरातल के ऊपर की मिट्टी की पर्त अपना स्थान छोड़ देती है। यह क्रिया धीमी गति से होती है। अतः अचानक ज्ञात होता है कि धरातल की मिट्टी बिल्कुल गायब हो गई है और नीचे के कड़े धरातल का आवरण ऊपर निकल आया है। इस प्रकार का कटाव जल एवं वायु दोनों के द्वारा ही होता है। यह कटाव प्रायः तब होता है जबकि भूमि पर से प्राकृतिक वनस्पति को काट कर अथवा जलाकर अथवा अन्य किसी प्रकार से (जैसे—अनियन्त्रित चराई द्वारा) हटा दिया जाता है और धरातल की मिट्टी की ऊपरी पर्त को जल धीरे धीरे बहाकर ले जाता है। असम, उत्तरी बिहार व उत्तर प्रदेश के कुमायूं प्रदेश में जल द्वारा धरातली कटाव स्पष्ट दिखाई देता है। राजस्थान के उत्तरी एवं पश्चिमी अनेक भागों में वायु द्वारा ऐसा कटाव होता है।

(2) **नालीदार कटाव**—इस प्रकार का कटाव प्रायः नाले व नालियों के रूप में होता है। जब पानी वेग के साथ बहता है तो उसकी धाराएँ मिट्टी को कुछ गहराई तक काट देती हैं और भूमि के धरातल पर नाली के रूप में खड्डे पड़ जाते हैं। ये नालियाँ क्रमशः बड़ी होती जाती है। नालीदार कटाव से बहुत दूर तक भूमि ऊबड़-खाबड़ हो जाती है। ऐसा कटाव समतल एवं ढालू दोनों प्रकार के क्षेत्रों में हो सकता है। इस प्रकार के कटाव का विस्तार बहुत शीघ्रता से होता है अतः इसे आरम्भ में ही रोक देना चाहिए। धरातली कटाव की अपेक्षा नालीदार कटाव अधिक खतरनाक होता है। ऐसे कटाव से अच्छे उपजाऊ क्षेत्र भी बीहड़ तथा अनुपजाऊ क्षेत्रों में परिणत हो जाते हैं। चम्बल नदी के दोनों ओर इस प्रकार का कटाव बहुत देखने में आता है।

मिट्टी के कटाव की गति—

मिट्टी के कटाव की गति को प्रभावित करने वाले प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं —

(1) **वर्षा का रूप**—वर्षा जितनी अधिक तेज होगी मिट्टी का कटाव भी उतना ही अधिक होगा। हल्की वर्षा में कटाव की सम्भावना कम होती है क्योंकि वर्षा के पानी को मिट्टी सोख लेती है जो लाभप्रद होता है। किन्तु मूसलाधार वर्षा द्वारा कटाव तेज गति से होता है क्योंकि जल अपने साथ मिट्टी को बहाकर ले जाता है। इसके अतिरिक्त यदि वर्षा की गति अधिक है तो जल अपने साथ कंकड़-पत्थर भी बहाकर ले जाता है जो भूमि को काटने में सहायक होते हैं।

(2) वायु की गति—आँधियाँ व तेज हवायें मिट्टी के कटाव में सहायक होती हैं। आँधियाँ अपने साथ मिट्टी को उड़ाकर ले जाती हैं व दूर-दूर के स्थानों में डालती जाती हैं। राजस्थान के निवासियों को इसका स्पष्ट अनुभव है। गर्मियों में धूल भरी पीली अथवा काली आँधियाँ चला करती हैं।

(3) मिट्टी के कणों की बनावट—ढीली मिट्टियाँ सरलता से कटकर बह जाती हैं अथवा उड़ जाती हैं। इसके विपरीत कठोर मिट्टी में कटाव को निरुत्साहित करती है। दूसरे शब्दों में, मुलायम, शीघ्र घुलने वाली तथा खुले कणों की भूमि में अधिक कटाव होता है, और, कठोर, अघुलनशील तथा परस्पर सम्बद्ध कणों वाली भूमि में कटाव कम होता है।

(4) भूमि का ढाल—भूमि का ढाल भी कटाव की गति को प्रभावित करता है। भूमि जितनी अधिक ढालू होगी, कटाव की गति भी उतनी ही अधिक होगी। कम ढालू भूमि एवं समतल भूमि पर कटाव अपेक्षाकृत कम होता है।

(5) वनस्पति की दशा—यदि भूमि पर घनी वनस्पति है तो भूमि का कटाव अधिक नहीं होता। इसके विपरीत वनस्पतिहीन भूमि पर कटाव अधिक होता है।

(6) भूमि का उपयोग—भूमि का उपयोग यदि चरागाह के रूप में होता है तो मिट्टी का कटाव अधिक होता है।

मिट्टी के कटाव के कारण—

मिट्टी के कटाव होने के अनेक कारण हैं। इन्हें दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं—(I) प्राकृतिक कारण, और (II) कृत्रिम कारण। प्रमुख कारणों का उल्लेख इस प्रकार किया गया है—

(I) प्राकृतिक कारण—

(1) जल द्वारा कटाव—मिटटी के कटाव में जल का महत्व बहुत अधिक है। जल द्वारा मिटटी का कटाव दोनों प्रकार का होता है—धरातली अथवा चादरदार कटाव नालीदार कटाव अथवा गहरा कटाव।

विशेषज्ञों ने बतलाया है कि 15 cms तक की गहरी मिटटी के ऊपर ही भूमि की उर्वरा शक्ति निर्भर होती है और भूमि की ऊपरी सतह की 2.5 cms मिटटी की पर्त लगभग चार सौ वर्षों में तैयार हो पाती है अतः मिटटी का कटाव अत्यन्त हानिकारक है।

(i) नदियों द्वारा मार्ग बदलना—कभी-कभी नदियाँ अपना मार्ग बदल लेती हैं, इस प्रकार नवीन मार्ग में मिटटी का कटाव बहुत तेजी से हो जाता है।

(ii) नदियों की बाढ़—नदियों की बाढ़ें भी मिटटी का कटाव बहुत तेजी से व स्पष्ट दीखने वाला करती है। अनेक भागों से मिटटी बहाकर ले जाती है और दूसरे क्षेत्रों में जमा कर देती हैं। भारत की अनेक नदियों में वर्षा ऋतु में बाढ़ आती हैं और मिटटी का कटाव भी करती है। ये बाढ़ सैकड़ों वर्ग Kms क्षेत्रों की मिटटी काट कर बहा ले जाती है।

(iii) सीमित काल में तेज वर्षा—भारत में अधिकांश वर्षा कुछ ही दिनों में हो जाती है। अनेक स्थानों पर तो वर्षा मूसलाधार होती है। इस वर्षा के पानी की भारी मात्रा का प्रबल प्रवाह विशाल क्षेत्र के धरातल की मिट्टी को काट कर बहा ले जाता है।

(iv) समुद्री कटाव—कभी कभी समुद्र-तट की भूमि समुद्र के तूफान तथा ज्वार भाटे से कटकर बह जाती है। केरल के समुद्र-तट का निरीक्षण करने से यह अधिक स्पष्ट हो जावेगा।

(2) वायु द्वारा कटाव (Wind Erosion)—आँधियां तथा तेज हवाएँ चलने से भी मिट्टी का कटाव होता है। ये आँधियाँ भूमि की ऊपरी पत की ढीली मिट्टी को उड़ाकर ले जाती हैं और दूसरे स्थान पर निक्षेप कर देती हैं। इस प्रकार धरातली कटाव हो जाता है। शुष्क भागों में गर्मियों में आँधियां चला करती हैं और मिट्टी के कण उड़ने लगते हैं। वायु तीन क्रियाएँ करती हैं—धरातल के कणों को काटना उनको उस स्थान से उड़ा कर ले जाना और दूसरे स्थान पर निक्षेप करना। उत्तरी एवं पश्चिमी राजस्थान, पंजाब के दक्षिणी पश्चिमी भाग हरियाना एवं गुजरात आदि भागों में वायु द्वारा मिट्टी के कटाव के स्पष्ट उदाहरण मिलते हैं जहाँ भीषण आँधियाँ चला करती है। राजस्थान में बालू रेत के टीलों पर से हवा मिट्टी को उड़ाकर ले जाती है तथा दूसरे स्थानों पर जमा कर देती है और इस प्रकार नये टीले बन जाते हैं। वायु द्वारा मिट्टी रेल तथा सड़क मार्गों पर भी इकट्ठी हो जाती है जिससे यातायात में रुकावट उत्पन्न होती है।

(3) हिम द्वारा कटाव (Glacial Erosion)—जिन भागों में हिम खण्ड क्रियाशील होते हैं वहाँ भी कटाव होता है। हिमखण्ड धीरे धीरे नीचे की ओर खिसकते हैं और इस क्रिया के फलस्वरूप उनके नीचे की भूमि का कटाव होता है। भूमि के कटाव की मात्रा हिमखण्ड के आकार और उनकी गति पर निर्भर होती है। भारत में हिमखण्ड केवल हिमालय पर्वत के ऊँचे भागों में पाये जाते हैं इसलिए इनके द्वारा होने वाला भूमि का कटाव भी उन्हीं भागों तक सीमित है। ये भाग निर्जन हैं अतः वहाँ हिम द्वारा कटाव कोई महत्त्वशील समस्या नहीं है।

(4) गुरुत्वाकर्षण शक्ति द्वारा कटाव—पर्वतीय भागों में गुरुत्वाकर्षण द्वारा कटाव (Gravity Erosion) महत्त्वशील हैं। पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के कारण चट्टानें जब नीचे गिरती हैं तो अपने साथ और भी चट्टानें गिराती चलती हैं और इस प्रकार कटाव होता है। इसके द्वारा प्रभावित होने वाला क्षेत्र भी सीमित एवं निर्जन होने के कारण जन-जीवन के लिए कोई विशेष समस्या उत्पन्न नहीं करता है।

(II) कृत्रिम कारण—

मानव के दुर्व्यवहार' (Misbehaviour) से भी मिट्टी का कटाव होता है जैसा कि स्पष्ट है—

(1) वनों को नष्ट करना—बढ़ती हुई जनसंख्या के निवास एवं खाद्य पदार्थों

की कृषि के हेतु अथवा मकान आदि बनाने के अभिप्राय से वन काट दिए जाते हैं तो मिट्टी का [illegible] कटाव आरम्भ हो जाता है। [illegible] मिट्टी नहीं बहा पाता है। इसके अतिरिक्त वृक्ष मिट्टी के कणों को मजबूती से पकड़े रहते हैं अतः पानी अथवा हवा मिट्टी का कटाव नहीं कर पाते हैं।

(2) अनियन्त्रित चराई—अमेरिका में प्रयोग द्वारा पता लगा है कि घास के मैदानों में प्रति एकड़ [illegible] मिट्टी की क्षति होती है जबकि बिना घास की भूमि पर प्रतिवर्ष 40 टन मिट्टी की क्षति होती है। पर्वतीय भागों में जानवरों द्वारा भूमि की घास बहुत ही अधिक चर ली जाती है जिससे वे स्थान [illegible] हो जाते हैं, जो [illegible] मिट्टी का कटाव कर देती है।

(3) मिट्टी का उपयोग—सामान्य ढंग से [illegible] बनाने के लिए [illegible] मिट्टी खोद ली जाती है जिससे गड्ढे बन जाते हैं और अधिक मात्रा में मिट्टी [illegible] उपयोग कर लिया जाता है।

(4) कृषि के अवैज्ञानिक तरीके—ढालों के किनारे पर भूमि पर खेती न करने के कारण मिट्टी आसानी से बह जाती है।

(5) लगातार कृषि—किसी एक ही खेत पर लगातार कृषि करते रहने से उस भूमि की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है और मिट्टी कमजोर हो जाती है। ऐसी भूमि पर वनस्पति एवं उपज क्रमशः कम होती चली जाती है और मिट्टी का कटाव होने लगता है।

(6) झूम कृषि प्रणाली—इस प्रणाली की खेती पिछड़े हुए क्षेत्रों में की जाती है। वनों को आग लगाकर अथवा अन्य प्रकार से नष्ट करके भूमि पर खेती करते हैं। ये लोग स्थान परिवर्तन करके कृषि करते हैं अर्थात् जहाँ अभी खेती कर रहे हैं वहाँ अगली बार खेती प्रायः नहीं करते वरन् अन्य क्षेत्र के वनों को नष्ट कर उस भूमि पर कृषि करते हैं। ऐसा निरन्तर करने से वनों का नाश होता है और मिट्टी का कटाव होता है। भारत में असम, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश आदि राज्यों में आदिवासियों द्वारा ऐसी खेती की जाती है।

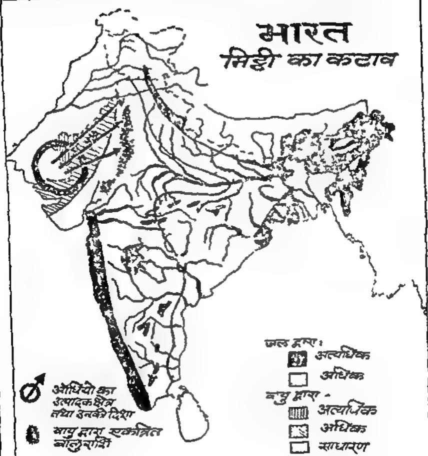
भारत में मिट्टी के कटाव के क्षेत्र—

भारत में तीनों प्रकार की ही मिट्टी का कटाव पाया जाता है। चादरदार कटाव असम, उत्तरी बिहार और कुमायूं (उत्तर प्रदेश) में होता है।

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र और दक्षिण भारत के अन्य भागों में गहरा कटाव हो रहा है।

मध्य प्रदेश, राजस्थान और पंजाब के दक्षिणी पूर्वी भाग में हवा द्वारा मिट्टी का कटाव हो रहा है। राजस्थान का थार या रेगिस्तान आधा मील प्रतिवर्ष की गति से बढ़ रहा है। राजस्थान में इस प्रक्रिया [illegible] शताब्दी में प्रति वर्ग मील 6 करोड़ मन उपजाऊ मिट्टी का विनाश हुआ है।

उत्तर प्रदेश में भूमि के कटाव से 5 लाख एकड से 10 लाख एकड तक भूमि प्रभावित है। आगरा, अवध व बुन्देलखण्ड में चादरदार कटाव पिछले 200 वर्षों से हो रहा है, जिससे लगभग एक फीट गहराई तक की मिट्टी बह गई है।



चित्र 10

राजस्थान व मध्य प्रदेश में चम्बल नदी मिट्टी के कटाव को सबसे अधिक प्रोत्साहित करने वाली मानी जाती है। इन क्षेत्रों को देखने से ज्ञात होता है कि यह विशाल भूखण्ड अनेक नालों और खड्डों में विभक्त हो गया है और इनमें से कुछ तो ऐसे हैं जिनमें पूरी की पूरी सेना समा जाय। इस भूमि पर खेती करने की बात तो

दरकिनार है और [illegible] पशुपालन के लिए भी अनुपयुक्त है। यमुना और नाल नालो-दार [illegible] नमूने हैं।

इस तरह उनकी सहायक नदियाँ भी धीरे धीरे किन्तु क्रम से मिट्टी का कटाव करती रही हैं। [illegible] प्रति वर्ष 10 करोड़ टन मिट्टी [illegible] लगे है।

मिट्टी के कटाव को रोकने के सुझाव—

डॉ० एच० एच० बैनेट के अनुसार, मिट्टी के कटाव ने प्राचीन युगों की सभ्यताओं का विनाश कर दिया है जो कभी संसार की सर्वाधिक उर्वर भूमि मानी जाती थी वह आज उजाड़ पड़ी है और इन सभ्यताओं के विनष्ट नगर अब उनकी [illegible] छिपाए पड़े हैं।[1] मिट्टी के कटाव के अत्यन्त भयंकर परिणाम होते हैं अतः इसे रोकने की ओर प्रायः सब देशों का ध्यान आकर्षित हुआ है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में इसकी आवश्यकता बहुत ही अधिक है। डॉ० राधाकमल मुकर्जी ने भूमि के कटाव को भारतीय कृषि के लिए अकेला सबसे भयंकर खतरा कहा है। मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए नीचे कुछ परामर्श दिए जाते हैं—

(1) वृक्षारोपण (Afforestation)—नये सिरे से वन बड़े पैमाने पर लगाने चाहिए। इसका प्रभाव यह होगा कि नदियों की गति नियमित होगी और मिट्टी के कटाव में बाधा पड़ेगी। इन वनों को वायु की दिशा को ध्यान में रखते हुए विकसित करना चाहिए जिससे वे 'हवा के बाधक' (Wind Breakers) सिद्ध हों। नदियों, सीमाओं के सहारे के किनारे खेती के लिए अनुपयुक्त भूमि तथा रेगिस्तानी भागों में वन लगाने चाहिए।

(2) वनों की रक्षा—मिट्टी के कटाव के विरुद्ध वन वास्तव में रक्षा-कवच का काम करते हैं। जो वन हमारे देश में हैं उन वनों की रक्षा करना आवश्यक है। वनों में से अधिक ईंधन और लकड़ियों के लिए वृक्ष नहीं काटने चाहिए। सुरक्षित तथा ग्रामीण क्षेत्र के वनों की रक्षा अत्यन्त आवश्यक है।[2] संयुक्त राष्ट्र संघ (U N O) के कृषि और खाद्य विभाग के डायरेक्टर श्री एन० सी० डाड ने भारत की कृषि के लिए जो परामर्श दिए हैं उनमें से एक यह भी है कि जंगलों को काटने की प्रणाली पर कड़ा नियन्त्रण कर मिट्टी के कटाव पर नियन्त्रण किया जाना चाहिए। वन रक्षा के लिए सरकार को और अधिक प्रभावशाली कदम उठाने चाहिए।

(3) चराई नियन्त्रण—सरकार को चाहिए कि चराई के क्षेत्रों पर पर्याप्त नियन्त्रण रखे। यदि आवश्यक हो, तो कुछ भागों में चराई के ऊपर पूर्णतः प्रतिबन्ध लगा दिया जाय। अनियन्त्रित चराई से मिट्टी का कटाव बहुत होता है। भेड़ बकरियाँ

---

1 मामोरिया, पृष्ठ 3[illegible]5

2 Sir Harold Glovert *Soil Erosion*, p 32

छोटी छोटी वनस्पति को जड़ से उखाड़ देती है और उनके खुरों से मिट्टी ढीली हो जाती है, फलस्वरूप मिट्टी का कटाव होने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ बन जाती है।

(4) बांधों का निर्माण—बांधों से भी मिट्टी के कटाव रोकने में सहायता मिलती है। पानी को बहाने के लिए नालियों का निर्माण करना चाहिए। इससे नालीदार कटाव नहीं होगा। बांध निर्माण से बाढ़ की समस्या भी हल हो जाती है।

(5) घुमावदार खेत—पहाड़ी क्षेत्रों में जहाँ खेती होती हो घुमावदार सीढ़ीनुमा खेत बनाने चाहिए। इससे पानी के प्रवाह में शिथिलता आती है और भूमि का कटाव कम हो जाता है। संयुक्त राज्य अमरीका में ऐसे प्रयोग पर्याप्त सफल हुए हैं। परन्तु भूमि के प्रकार भूमि की रक्षा करनी चाहिए। सड़क के आस पास भूमि को इस प्रकार नहीं खोदना चाहिए कि उसमें गहरे गड्ढे हो जाय। घास के क्षेत्रों की रक्षा करना भी वांछनीय है।

(6) खेतों की मेड़बन्दी—खेतों के चारों ओर मेड़ लगा देनी चाहिए। इससे पानी की प्रवाह गति रुक जायगी और खेतों के बाहर पानी अपेक्षाकृत कम होने से मिट्टी का कटाव कम होगा।

(7) पानी बहाने के मार्गों का निर्माण—अधिक वर्षा होने के कारण पानी नाले आदि नालियों में बहने लगता है जिससे बाद में भूमि का अधिक कटाव होने लगता है। पानी के बहाने के लिए उचित नालों का निर्माण करना चाहिए जिससे वर्षा का पानी इन निर्मित नालों में हो होकर बहे। इस प्रकार नालीदार कटाव नहीं होगा।

(8) ढालू भूमि पर कृषि—ढालू भूमि पर कृषि करना चाहिए और खेतों के किनारों पर झाड़ियाँ लगानी चाहिए। इससे वर्षा व हवा के साथ मिट्टी का कटाव कम होगा।

(9) नालों को बन्द करना—जिन भागों में मिट्टी कट कट कर नालियां बन गई हैं अथवा दरार पड़ गई है उनके मुँह पर मिट्टी अथवा बालू से भरे बोरे रख कर रोक लगा देनी चाहिए। कुछ समय पश्चात् इन दरारों में बह कर आने वाली मिट्टी एकत्रित हो जायगी और ये दरारें व नालियां अपने आप भर जायगी। इसके पश्चात् इन भागों में कटाव रोकने के लिए शीघ्र उग आने वाली झाड़ियाँ घास व अन्य वृक्ष लगा देने चाहिए जिससे बहाव कम हो जायगा और भूमि का कटाव नहीं होगा।

(10) भूमि को समतल करना—ऊँची नीची भूमि पर हवा व पानी द्वारा कटाव तीव्र गति से होता है। अतः जहाँ तक सम्भव हो ऊँची नीची भूमि को समतल करने का प्रयत्न करना चाहिए। जहाँ यह सम्भव नहीं हो वहाँ वृक्ष लगा देने चाहिए।

(11) अन्य उपाय—मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए वे उपाय ही उपयुक्त होते हैं जो मिट्टी को स्थानान्तरित होने में अवरोध उत्पन्न करते हैं। इसके अतिरिक्त नग्न भूमि पर भी कटाव अधिक होता है। अतः भूमि को हरित आवरण (वनों) से ढँकने का प्रयत्न करना चाहिए।

भूमि का कटाव और सरकार का योग—पंचवर्षीय योजनाएँ

भारत का कुल क्षेत्रफल लगभग 32 70 करोड हेक्टयर है जिसमें से लगभग 14 5 करोड हेक्टयर भूमि[1] को वायु तथा जल के कटाव होने का सदा भय बना रहता है। पिछले 24 वर्षों से कुछ राज्यों में भू संरक्षण (Soil conservation) के उपायों का प्रयोग आरम्भ हो चुका है। इन प्रयोगों में प्रमुख बांधों का निर्माण, शुष्क खेती करना, सीढ़ीदार खेत बनाना, वन लगाना आदि उल्लेखनीय हैं।

प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल—

भू संरक्षण के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना में लगभग 1 करोड़ 60 लाख रुपए का प्रावधान था।

सन 1951 में भू रक्षण समिति की स्थापना हजारीबाग (बिहार) में की जा चुकी है। इसके अतिरिक्त देशव्यापी आधार पर भू संरक्षण का कार्य दिसम्बर 1953 से आरम्भ किया गया जबकि योजना आयोग के परामर्श के अनुसार केन्द्रीय खाद्य एवं कृषि मंत्रालय के अन्तर्गत एक केन्द्रीय भू संरक्षण बोर्ड (Central Conservation Board) की स्थापना की गई है। इस केन्द्रीय भू संरक्षण बोर्ड के निम्न मुख्य कार्य हैं —(1) मिट्टी सम्बन्धी गवेषण तथा सर्वेक्षण का कार्य करना, (2) राज्यों की नदी घाटी योजनाएँ तैयार करने और मिट्टी के संरक्षण के कार्यों में सहायता करना (3) प्राविधिक (Technical) कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करना एवं (4) केन्द्रीय सरकार को आर्थिक सहायता के लिए सिफारिश करना।

प्राय सभी राज्यों में भू संरक्षण मण्डल स्थापित हो चुके हैं। विभिन्न क्षेत्रों की विशेष समस्याओं के समाधान के उपाय निकालने के लिए आठ गवेषण तथा सर्वेक्षण केन्द्र[2] स्थापित किये गये हैं। ये केन्द्र निम्नलिखित राज्यों में स्थापित किए गए—

(1) उत्तर प्रदेश	देहरादून
(2) राजस्थान	कोटा
(3) राजस्थान	जोधपुर
(4) बिहार	हजारीबाग
(5) मैसूर	बेलारी
(6) आन्ध्र	मान्डिनगर
(7) तमिलनाडु	उटकमंड
(8) पंजाब	चण्डीगढ़

---

1 Third Five Year Plan (*Summary*) p 80

2 *Ibid*

द्वितीय पचवर्षीय योजना—

द्वितीय आयाजना काल म भू सरक्षण कायक्रम म और अधिक सर्वेक्षण, मवषण प्रशिक्षण की तथा कन्द्र म राज्या का और अधिक टक्नाकल तथा वित्तीय सहायता की व्यवस्था का गई। इस याजना म लगभग 19 करोट रुपय का प्रावधान किया गया।

द्वितीय योजना म 20 लाख एकड भूमि म मदबन्दी (Contour bunding) की गयी जोकि लक्ष्य था। 1 करोड 20 लाख एकड भूमि का सर्वेक्षण किया गया। जोधपुर म 'मरुस्थल वन व अनुसधान कन्द्र' (The Desert Afforestation and Research Station) का पुनसङ्गठन, (Central Arid Zone Research Institute) का पुनसङ्गठन UNESCO के सहयोग स किया गया।

प्रथम व द्वितीय पचवर्षीय याजना अवधि म भू सरक्षण का दिशा म प्रगति बहुत ही मन्द रहा। महाराष्ट्र राज्य म अवश्य उल्लेखनीय प्रगति हुई। राजस्थान, आध्रप्रदेश व तमिलनाडु राज्या म साधारण काय हुआ। शेष राज्यो म काई विशेष प्रगति नही हुई।

तृतीय पचवर्षीय योजना—

इस याजना म भू सरक्षण काय के लिए 77 कराड रुपया का प्रावधान किया गया।

तृतीय योजनाकाल म लगभग 1 करोड 10 लाख एकड कृषि भूमि म मेड लगाई जान का लक्ष्य रखा था। इस योजनाकाल मे 1 कराड 50 लाख एकड भूमि मे सर्वेक्षण किया जाने का लक्ष्य रखा गया था।

तृतीय पचवर्षीय याजना म भू सरक्षण के लिए 77 करोड रुपया का प्रावधान किया गया था। इस योजना काल म लगभग 44 लाख हेक्टेयर भूमि पर भू सरक्षण का काय किया गया। भूमि पुनरुद्धार कायक्रम के अतगत लगभग 19 लाख हेक्टेयर भूमि का पुनरुद्धार किया गया। लगभग 70 लाख हक्टयर भूमि पर शुष्क कृषि पद्धति का अपनाया गया। अखिल भारतीय मिट्टी एव भूमि उपयोग सर्वेक्षण याजना के अतगत 4 लाख हक्टेयर भूमि का सर्वेक्षण किया गया।

चौथी पचवर्षीय योजना—

चतुथ पचवर्षीय याजना म भू सरक्षण आदि क लिए 151 कराड रुपये व्यय करन का प्रावधान किया गया है। याजनावधि मे 56 लाख हेक्टेयर भूमि का सर्वेक्षण करने का लक्ष्य रखा है। इसक अतिरिक्त 10 लाख हक्टेयर भूमि का पुनरुद्धार किया जायगा।

नदिया एव उनकी सहायक नदियो के लिए याजना बनाई जायेंगी। चौथी याजना म घास क मदानो का विकास, वना की रक्षा एव विस्तार, बडे खडडा को भरन वाल भूमि जहाँ खेती हानी है, सीढीदार खेतो के निमाण को प्रोत्साहन आदि दन क अनक कायक्रम हैं।

पंचवर्षीय योजनाओं में भू संरक्षण पर व्यय

योजना	व्यय प्रावधान
प्रथम पंचवर्षीय योजना	1 60 करोड़ रुपय
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	18 00 करोड़ रुपय
तृतीय पंचवर्षीय योजना	77 00 करोड़ रुपय
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	151 00 करोड़ रुपय

तीस वर्षीय योजना—

20 करोड़ एकड़ भूमि में भू संरक्षण उपायों से सुधार के लिए तीस वर्ष की आयोजना बनाई गई है और तृतीय व चतुर्थ पंचवर्षीय योजनाएँ भी उसका एक अंग है। प्रत्येक पंचवर्षीय योजना के लिए उत्तरोत्तर उच्च लक्ष्य निर्धारित किया गया है। 1966 तक 1 करोड़ 15 लाख एकड़, 1971 तक दो करोड़ एकड़ 1976 तक 4 करोड़ एकड़, 1981 तक 6 करोड़ एकड़ और 1986 तक 7 करोड़ एकड़ भूमि को भू-संरक्षण में लाया जायगा।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 भारत में विभिन्न प्रकार की मिट्टियाँ पाई जाती हैं। देश में मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए क्या प्रयत्न किए जा रहे हैं? (T D C 1961)

2 भारतीय मिट्टी की क्या समस्यायें हैं? भारतवर्ष में मिट्टी के कटाव की समस्या का वर्णन कीजिए। भारत सरकार ने इस समस्या को हल करने के लिए क्या काम किए हैं? (T D C 1965)

3 भारत में विभिन्न प्रकार की मिट्टियाँ पाई जाती हैं, संक्षिप्त में परिचय दीजिए। उत्तरी मैदान में तथा दक्षिणी भारत में पाई जाने वाली मिट्टियों की विशेषता बताइये। (T D C Suppl 1966)

4 भारत में 1950 से भूमि क्षरण रोकने के क्या प्रयत्न किए गये हैं? (T D C 1969)

7

भारतीय वन

प्रारम्भिक—वनों की आवश्यकता एवं महत्त्व

वन मनुष्य के चिरसंगी हैं। आदिकाल से उनका और मनुष्य का साथ रहा है। डॉ० पी० एच० चटरबक के शब्दों में, वन प्रत्येक देश की राष्ट्रीय सम्पत्ति होते हैं और सभ्यता के लिए उनकी अति आवश्यकता है। किसी देश के लिए वन प्रकृति की ओर से उपहार हैं। सभ्यता के विकास से पूर्व भूपटल पर अधिकांश भाग वनों से आच्छादित था। परन्तु सभ्यता के विस्तार एवं जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि ने वनों को क्रूरता के साथ नष्ट करने के लिए प्रेरित किया। अनेकानेक स्थानों पर नगर स्थापित हो गये, खेती हेतु मैदान बन गये, यातायात के लिए मार्गों का निर्माण हुआ और ईंधन के लिए वृक्ष काटना आरम्भ कर दिये गये। इस प्रकार वनों के क्षेत्र में कमी हो गई और भारत भूमि अपने हरित आवरण के अपहरण से नग्न हो गई।

देश की समृद्धि में वनों का महत्त्वपूर्ण योग होता है। स्वर्गीय पंडित जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में, "उगता हुआ पेड़ प्रगतिशील राष्ट्र का प्रतीक है।" इसी सम्बन्ध में स्वर्गीय सरदार पटेल ने कहा था 'यदि हम राष्ट्रीय समृद्धि में वृद्धि करना चाहते हैं तो वृक्षों का उपयोग हमारी राष्ट्र-नीति का महत्त्वपूर्ण अंग होना चाहिए।' जिन देशों ने वनों की अवहेलना की अथवा उन्हें नष्ट किया है उन्हें अंत में पछताना ही पड़ा है। अफ्रीका और पश्चिमी एशिया के अनेक राष्ट्र इसी गलती के शिकार हुए हैं और आज उनका अस्तित्व केवल इतिहास के पन्नों में शेष है। स्वयं हमारे देशवासियों ने वनों की उपेक्षा कर भारी हानि उठाई और उठा रहे हैं।

वनों से लाभ

वनों से होने वाले लाभ दो भागों में विभक्त किये जा सकते हैं —(I) प्रत्यक्ष लाभ, तथा (II) अप्रत्यक्ष लाभ।

(I) प्रत्यक्ष लाभ—

(1) **बहुमूल्य लकड़ी**—वनों से विभिन्न प्रकार की लकड़ियाँ जैसे—शीशम, सागवान, देवदार, चीड़ आदि प्राप्त होती हैं। मुलायम लकड़ी से फर्नीचर,

दियासलाई आदि बनती है तथा मजबूत लकड़ी वह जहाज, रेल के डिब्बे व अन्य वस्तुओं के निर्माण में प्रयुक्त होता है। वनों के कारण ही लकड़ी का व्यापार चलता है। इसके अतिरिक्त ईंधन की भी प्राप्ति होती है। भारत को वनों से प्रतिवर्ष लगभग 35 करोड़ रुपए की लकड़ी प्राप्त होती है।

(2) जड़ी बूटी—वनों से अनेक प्रकार की जड़ी-बूटियाँ प्राप्त होती हैं जिनका प्रयोग अनेक औषधियों में होता है। भारत में तो प्राय सभी आयुर्वेदिक औषधियाँ जड़ी बूटियों पर आधारित होती हैं।

(3) वन उत्तम चरागाह—वन उत्तम चरागाह का काम देते हैं तथा पशुओं का चारा इनसे ही सुलभ होते हैं। भारत में लगभग 3½ करोड़ पशु वनों पर ही पलते हैं।

(4) पशु—वन में अनेक किस्म के पशु-पक्षी पाये जाते हैं, जिनका कई भाँति से उपयोग किया जाता है। खालें, सींग व मांस की प्राप्ति होती है।

(5) श्रेष्ठ खाद—वनों में वृक्षों की पत्तियाँ गिरती रहती हैं जो गल-सड़ कर श्रेष्ठ खाद बन जाती हैं।

(6) रोजगार—वनों से अनेक व्यक्तियों को काम मिल जाता है जैसे लकड़ी काटने वाले, वन विभाग के कर्मचारी, लाख आदि इकट्ठा करने वाले। अनुमान है कि भारत में लगभग 80 लाख व्यक्ति वनों से प्रत्यक्ष रूप से अपना जीविकोपार्जन करते हैं।

(7) सरकारी आय में वृद्धि—वनों से सरकारी आय बढ़ती है। अनेक पहाड़ी रियासतों की आय का साधन वन-सम्पत्ति हो रहा है। भारत सरकार को वनों से प्रति वर्ष लगभग 47 करोड़ रुपये की आय होती है जिसमें से इन पर लगभग 20 करोड़ रुपये व्यय हो जाते हैं। इस प्रकार सरकार को वनों से प्रतिवर्ष लगभग 27 करोड़ रुपये की शुद्ध आय होती है।

(8) उपयोगी पदार्थ—वनों से सवाई, भाभर घास व बाँस आदि प्राप्त होते हैं, जिनसे कागज बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त वनों से लाख, रबर, गोंद, कत्था, तारपीन का तेल आदि अनेक महत्त्वशील पदार्थ प्राप्त होते हैं।

(II) अप्रत्यक्ष लाभ—

(1) बाढ़ पर रोक—पहाड़ी ढालों एवं मैदानों में घने जंगल होने के कारण नदियों की गति में शिथिलता आ जाती है। इससे बाढ़ आने की सम्भावना बहुत कम हो जाती है। भारत में सन 1966 में लगभग 40 लाख एकड़ भूमि में बाढ़ आई और 25 करोड़ रुपये की हानि हुई सन 1955 में 22.50 लाख एकड़ भूमि में बाढ़ आई।

(2) वर्षा—घने वन बादलों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं जिसके फलस्वरूप वर्षा अधिक हो जाती है। प्रत्यक्ष उदाहरण मिस्र का दिया जा सकता है। पहले वहाँ वर्ष में केवल 6 दिन ही औसत रूप में वर्षा हुआ करती थी, परन्तु बाद में वहाँ असंख्य वृक्ष लगा दिये गये जिसके फलस्वरूप वहाँ औसत रूप से अब

लगभग 40 दिन वर्षा होती है। यहाँ यह बतलाना भी आवश्यक है कि प्रारम्भ म
वर्षा ही वनों की स्थिति का निर्धारण करती है परन्तु बाद में वन वर्षा को प्रभावि
करने लग जाते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि वनों का वर्षा पर और वर्षा का वन
पर प्रभाव पड़ता है। इसी कारण वनों को 'वृष्टि का संचालक' (Regulators o
Rainfall) भी कहा जाता है।

(3) नमी की रक्षा—वनों में वृक्षों के अतिरिक्त अनेक प्रकार की छो
घास होती हैं जो पृथ्वी को ढक रखती हैं, इससे पृथ्वी की नमी शीघ्रता से नहीं सूख
पाती। प्रयोग द्वारा सिद्ध किया गया है कि सूर्य की गर्मी वन रहित भूमि पर व
से ढँकी हुई भूमि की अपेक्षा 12 गुना अधिक होती है, और वन रहित भूमि
वनाच्छादित भूमि की अपेक्षा पानी भाप बनकर चार गुनी मात्रा में उड़ता है
साथ ही ये घासें मिट्टी के निर्माण में सहायक होती हैं। मिट्टी में वनस्पति त
प्रदान करके उसे उर्वरा बनाती हैं।

(4) वायुमंडल में आर्द्रता—वनों द्वारा वायुमंडल में आर्द्रता बढ़ती है क्यों
वृक्षों की पत्तियाँ भूमि के नीचे से पानी लेती हैं और पत्तों की सतह से पानी भ
बनकर उड़ता है। डा॰ पावेल के शब्दों में, "घने वनों के कारण पृथ्वी पर सूर्य
तक किरणें नहीं पहुँच पाती साथ ही वे वाष्पीकरण क्रिया में भूमि में आ
बनाए रखने में भी सहायता देती हैं।' इस प्रकार वनों के ऊपर के वायुमंडल
तथा वनों के निकटवर्ती क्षेत्रों में आर्द्रता बनी रहती है। प्रयोग द्वारा यह सिद्ध ह
है कि इस आर्द्रता का दायरा वनों के ऊपर 1525 मीटर (लगभग 5000 फीट)
ऊँचाई तक होता है।

(5) मिट्टी के कटाव पर रोक—वर्षा के पानी के लिए वन 'छतरी' का
करते हैं। वन मिट्टी के कटाव को रोकने में सहायक होते हैं क्योंकि हवा घन
में मिट्टी का कटाव अधिक नहीं कर पाती और वर्षा का पानी भी घने वन
मिट्टी का कटाव कम कर पाता है। स्पष्ट उदाहरण सामने हो है। मनुष्य ने च
के वनों को क्या काटा कि भूमि को हरीता प्रदान करने वाले साधन को ही
कर दिया। फिर क्या था चम्बल ने जो चाहा सो किया। उसने उसके कलेव
अपनी पैनी धार से खोखला कर डाला। सोना उगलने वाली फसलों को उ
करने वाली मिट्टी वहीं सो वहाँ जम मिला भयानक खोहों को जो चम्बल
ऐसी और अपने भयावह मुँह बाए खड़े हैं।

(6) दुर्भिक्ष पर रोक—वनों से अकाल का भय कम हो जाता है
सम्बन्ध में स्वर्गीय सरदार पटेल के अनुसार दुर्भिक्ष से सदा के लिए बचने का
बड़ा उपाय है वृक्ष लगाना और वृक्ष बचाना।

(7) मार्ग परिवर्तन—घने वनों में प्रवाहित होने वाली नदियाँ अपना
नहीं बदल पातीं। जिन भागों में वन नहीं हैं वहाँ नदियाँ अपना मार्ग सुगम
बदल लेती हैं जिससे अनेक गाँव तट जाते हैं और ...

म ह्वांगहो नदी को 'शोक की नदी' इसलिए कहते हैं कि यहाँ जगल साफ कर देने के कारण यह नदी अनेक बार अपना मार्ग परिवर्तन कर चुकी है, जिसके कारण बहुत हानि होती है।

(8) तापमान पर नियन्त्रण—वनों को जलवायु को सम करने वाला (Moderators of Climate) भी कहते हैं। वनों के भीतर अथवा उनके समीप का तापमान वन रहित भूमि की अपेक्षा कम होता है। प्रयोग द्वारा सिद्ध हुआ है कि यदि वनों में गर्मी में अधिक से अधिक तापमान 30 C है और सर्दी में कम से कम तापमान 17 C है, तो वनों के काटने के पश्चात् उन्हीं स्थानों में गर्मी का तापमान बढ़कर 39 C तथा सर्दी का तापमान 13 C हुआ। इससे यह सिद्ध होता है कि वन तापमान की विषमता को कम करते हैं।

(9) पानी का उच्च स्तर—नग्न पहाड़ एवं भूमि पर वर्षा का पानी तीव्र गति से भूमि काटता हुआ अपने साथ मिट्टी को बहाता हुआ चला जाता है, जिसके अनेक दुष्परिणाम होते हैं। परन्तु वन वर्षा को आमन्त्रित (Invite) करके उसकी उचित आवभगत भी करते हैं। प्रयोग द्वारा सिद्ध हुआ है कि जितनी वर्षा का पानी वनों की धरती में दो मिनट में सोखा गया उतना ही वर्षा का जल सोखने में बंजर भूमि को 5 घण्टे लगे। अतः वनों की सहायता से पानी धरती में सोखा जाता है जो धीरे धीरे कुओं, तालाबों, झरनों व नदियों में जाता है। इसके अतिरिक्त वन प्रदेश में पेड़ों की जड़ें पृथ्वी में असंख्य छिद्र कर देती हैं जिनके फलस्वरूप पानी का स्तर ऊँचा उठ जाता है तथा कुएँ खोदने पर पानी कम गहराई पर ही मिल जाता है।

(10) रेगिस्तान प्रसार पर रोक—वन रेगिस्तान के प्रसार को रोकते हैं तथा आगे नहीं बढ़ने देते। मनुष्य ने राजस्थान और उत्तर प्रदेश के सीमावर्ती वनों पर कुल्हाड़ी क्या चलाई कि मरुस्थल को आने का बुलावा दे डाला। स्वर्गीय पन्त ने कहा था 'यदि रेगिस्तान के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकना है एवं मानव सभ्यता की रक्षा करना है तो वन सभ्यता के क्षय को अवश्य रोकना चाहिए।' थार का रेगिस्तान शनैः शनैः आगे बढ़ रहा है। यदि घने वन हों तो इसका प्रसार रुक सकता है। इस प्रकार वन प्रहरी का काम करते हैं।

(11) प्राकृतिक सौंदर्य—वन देश की प्राकृतिक सुन्दरता के द्योतक हैं। यदि देखा जाय तो भारतीय दार्शनिक विचार धारा का जन्म और पोषण वनों में ही हुआ है। ईश्वर का चिन्तन करने वाले आज भी वनों में विचरते हैं। इस प्रकार वनों ने भारतीय आध्यात्मिक जीवन को भी प्रभावित किया है।

(12) देश की रक्षा—वन वायु-सम्बन्धी सेना के निरीक्षण और आक्रमण के विरुद्ध बचाव का कार्य भी करते हैं। इस्पात उद्योग के पूर्व सामुद्रिक आक्रमण करने अथवा बचने के लिए जहाज व नावें प्रदान करते थे।

(13) बेरोजगारी दूर करने में सहायक—वनों से अनेक व्यक्तियों को रोजी मिलती है। लकड़ी चीरने, काटने एवं लाने ले जाने में अनेक व्यक्ति लगे हुए हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि वनों से अनेक प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभ हैं। प्रसिद्ध विद्वान पटरबक के शब्दों में, 'वनों का अप्रत्यक्ष महत्त्व सबसे अधिक है।'

भारतीय वन

किसी भी देश में वनों का वितरण वर्षा, तापमान, वायु तथा प्रकाश पर निर्भर होता है। मिट्टी का महत्त्व केवल स्थानीय होता है। इन तत्वों में भी वर्षा ही वनों के वितरण को पर्याप्त प्रभावित करती है। भारत एक विशाल देश है जिसमें उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में कुमारी अन्तरीप तक तथा पश्चिम में राजस्थान जैसे शुष्क प्रदेश से लेकर पूर्व में असम तक विभिन्न तापक्रम, वर्षा की मात्रा, प्राकृतिक बनावट एवं मिट्टियाँ पाई जाती हैं। इस कारण भारत में अनेक प्रकार के वन पाये जाते हैं।

प्रत्येक देश में समस्त भूमि के क्षेत्र के कम से कम 25 प्रतिशत क्षेत्र में वन का होना वांछनीय है।[1] हमारे देश में लगभग 7.53 लाख वर्ग Kms.[2] में हरा सोना (Green Gold) वन फैला हुआ है जो कि देश के कुल क्षेत्रफल का लगभग 23 प्रतिशत है।[3] इस प्रकार अन्य देशों की तुलना में हमारे देश में वन का क्षेत्र कम है, जिसकी पुष्टि निम्न तालिका करेगी —

विभिन्न देशों में वनों का क्षेत्र

देश	वन (कुल भूमि का प्रतिशत)
फिनलैंड	75%
स्वीडन	55%
रूस	45%
आस्ट्रिया	40%
कनाडा	30%
सं० रा० अमेरिका	25%
भारत	23%

इंगलैंड में वहाँ की कुल भूमि के 6 से 7 प्रतिशत क्षेत्र में वन हैं तथा पाकिस्तान में वहाँ की कुल भूमि के लगभग 5% क्षेत्र में वन हैं। भारत में प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र केवल 0.2 हेक्टेयर है जबकि विश्व का यह औसत 1.6 हेक्टेयर है।

वनों का वर्गीकरण

भारतीय वनों का वर्गीकरण दो आधार पर कर सकते हैं—(I) प्रकृति के आधार पर, तथा (II) शासन के आधार पर।

---

1 Gorrie : *Land Management*, p. 11
2 India 1970, p. 249
3 *Ibid.*

(I) प्रकृति के आधार पर

किसी स्थान विशेष की भू रचना, जलवायु तथा मिट्टी की दशाओं का प्रतिबिम्ब उस स्थान की वनस्पति में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। यही कारण है कि प्राय वनस्पति को जलवायु का मापदण्ड कहा जाता है। भारत की विशालता को देखते हुए विभिन्न प्रकार की जलवायु व भूमि की बनावट स्वाभाविक है। यह विशेषत वर्षा तथा तापमान के वितरण पर निर्भर होते हैं। हम देखते हैं कि हिमालय पर्वत का ढाल, असम की पहाड़ियाँ तथा पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढाल भारत में अधिक वर्षा वाले भाग हैं, अत इन भागों में ही देश के सघन वन हैं। इसके विपरीत राजस्थान में विशेषत पश्चिमी राजस्थान में वर्षा का अभाव होने के कारण यहाँ वन कम पाये जाते हैं।

भारत में वन निम्न प्रकार के पाये जाते हैं—(1) सदाबहार वन, (2) पतझड़ वाले वन या मानसूनी वन, (3) पर्वतीय वन (4) उष्ण घास के क्षेत्र, (5) मरुस्थलीय वन, (6) नदी तट के वन, एवं (7) डेल्टा वन।

(1) सदाबहार वन (Tropical Wet Evergreen Forests)—

भारत के वर्षा वितरण के नक्शे को देखने से ज्ञात होगा कि जिन भागों में 200 cms प्रतिवर्ष से अधिक वर्षा होती है, उन भागों में सदाबहार वन पाये जाते हैं। भारत में सदाबहार वनों का वितरण इस प्रकार है—

(क) **उत्तरी-पूर्वी भारत**—गारो खासी जयंतिया और लुशाई की पहाड़ियाँ कछार तथा हिमालय के ढालों पर।

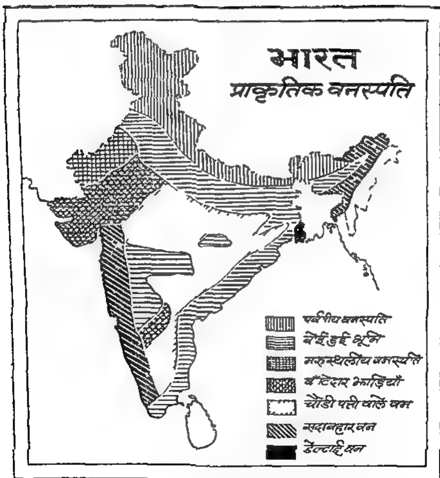
(ख) **हिमालय की तराई**—इन्हें तराई के वन कहते हैं और ये निचले ढालों तक फैले हुए हैं।

(ग) **पश्चिमी घाट**—पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढाल पर सदाबहार वन फैले हुए हैं। दूसरे शब्दों में, महाराष्ट्र मैसूर व केरल के भागों में इसी प्रकार के वन पाये जाते हैं।

(घ) **अंडमान द्वीप समूह**—प्राय सम्पूर्ण अंडमान द्वीप समूह में ये वन पाये जाते हैं।

सदाबहार वन लगभग 1 500 मीटर की ऊँचाई तक पाये जाते हैं। इन वृक्षों में यह विशेषता होती है कि पत्ते सदैव हरे रहते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि इनमें पतझड़ नहीं होता। वनस्पति की विविधता तथा अधिकता होने के कारण समस्त एक प्रकार के वृक्षों में किसी समय नये पत्ते आ रहे होते हैं तो दूसरे प्रकार के वृक्षों के पत्तों में पतझड़ हो सकता है। इस प्रकार यहाँ सदैव हरियाली ही दृष्टिगोचर होता है। इस प्रकार के वनों में कुछ पेड़ तो बहुत ऊँचे होते हैं। कुछ वृक्ष तो 45 मीटर (150 फीट) से भी अधिक ऊँचे होते हैं। इन वृक्षों के नीचे तथा निकटवर्ती भागों में बाँस बेंत व नाड़ के वृक्ष दिखाई पड़ते हैं। सदाबहार वनों के वृक्षों की पत्तियाँ प्राय चौड़ी होती हैं।

भारत के सदाबहार वनों का आर्थिक दृष्टि से बहुत कम उपयोग हो पाया है, क्योंकि ये वन बहुत घने हैं और लताओं व झाड़ियों ने तो इन वनों को और भी अधिक घना कर दिया है। इस कारण इन वनों में यातायात के साधनों की बहुत कमी है व काम करना कठिन है। इन भागों में न तो रेल हैं और न पक्की सड़कें हैं। यदि सड़क आदि बना भी दी जावें तो इनको सुरक्षित रखना भी कठिन है। यही कारण है कि इन वनों के उपयोग के लिए सड़कों आदि का निर्माण किया ही नहीं गया है। अनेक वृक्षों की लकड़ियाँ बहुत कड़ी होती हैं और अब तक व्यावसायिक कार्यों में बहुत कम प्रयोग की गयी हैं।



चित्र 11

इन वनों में महोगनी, एबोनी, रबर, लौह-काष्ठ, साल शीशम, रोजवुड, बाँस आदि के वृक्ष प्रमुख हैं। आजकल इन क्षेत्रों में रबड़ व मसाले के वृक्ष लगाये जाने के प्रयास हो रहे हैं।[1]

[1] Chibber *India* Part III, p 131

(2) पतझड वाले वन या मानसूनी वन (Tropical Deciduous or Monsoon Forests)—

भारत के जिन भागों में 100 से 200 cms तक वार्षिक वर्षा होती है, वहाँ ये उष्ण कटिबन्धीय पतझड वाले वन पाये जाते हैं। वर्ष के गर्म शुष्क मौसम में सूर्य की गर्मी से बचने के लिए वृक्ष अपने पत्तों को त्याग देते हैं। यह ध्यान रहे कि ये वन शीतोष्ण कटिबंधीय पतझड वाले वनों से बिल्कुल भिन्न हैं। शीतोष्ण कटिबन्ध के वनों में वृक्ष शीत के प्रारम्भ में अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं। भारत में मानसूनी वनों का वितरण इस प्रकार है—

(क) हिमालय के ढाल के निचले ढालों में जो पूर्वी पंजाब से असम तक फैले हैं मानसूनी वन पाये जाते हैं।

(ख) उत्तर की रूसी सीमा से लेकर उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा और पश्चिमी बंगाल के भागों में ये वन पाये जाते हैं।

(ग) दक्षिण के पठार के मध्यवर्ती भाग, छोटा नागपुर का पठार, महानदी की घाटी के ऊपरी भाग व मध्य प्रदेश की पहाड़ियों में ये वन पाये जाते हैं।

(घ) दक्षिणी भारत के पूर्वी भाग में जिसमें नल्लामलाय की पहाड़ियाँ और मद्रास में पूर्वीघाट पर्वत माला के भाग सम्मिलित हैं।

(ङ) पश्चिमी घाट पर्वतमाला पर सह्याद्रि वन प्रदेश के पूर्व में उत्तर से दक्षिण तक फैली हुई पट्टी में।

मानसूनी वन में अनेक वृक्ष 30 से 35 मीटर (100 से 120 फीट) ऊँचे होते हैं। आर्थिक दृष्टि से ये वन मूल्यवान होते हैं। प्रमुख वृक्ष साल, सागौन, देवदार, महुआ, शीशम व चन्दन आदि हैं। इनकी लकड़ी का उपयोग फर्नीचर, रेल के स्लीपर बनाने व जहाजों में होता है। इसके अतिरिक्त यहाँ शहतूत, आँवला, कत्था व बाँस आदि के वृक्ष पाये जाते हैं।

मानसूनी वन इतने मूल्यवान हैं कि इनको सरकार ने अधिकतर 'सुरक्षित' कर रखा है जिससे असावधानी व वृथा प्रयोग से जनता इन्हें नष्ट न कर दे।

(3) पर्वतीय वन (Alpine Forests)—

पर्वतीय वनस्पति में ऊँचाई तथा वर्षा की मात्रा के अनुसार अन्तर उत्पन्न हो जाता है। हिमालय पर्वत श्रेणी के पूर्वी भाग में वर्षा अपेक्षाकृत अधिक होती है और पूर्वी भाग में कम होती है। इस कारण हिमालय के पूर्वी और पश्चिमी भाग की वनस्पति में भारी अन्तर है।

अध्ययन की सुविधा के लिए हिमालय पर्वत प्रदेश की वनस्पति को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं—(क) पश्चिमी हिमालय प्रदेश के वन (ख) पूर्वी हिमालय प्रदेश के वन।

(क) पश्चिमी हिमालय प्रदेश के वन—इस उपविभाग में वर्षा की न्यूनता का वनस्पति पर बहुत ही स्पष्ट प्रभाव दिखाई पड़ता है। विभिन्न ऊँचाई पर वनस्पति में अन्तर है जिसका अध्ययन हम इस प्रकार कर सकते हैं —

(i) 900 मीटर की ऊँचाई तक—वर्षा कम होने के कारण 900 मीटर की ऊँचाई तक घास के क्षेत्रों में छोटे छोटे वृक्षों, पौधों और झाड़ियों की अधिकता है। यहाँ के निवासियों का मुख्य व्यवसाय पशु चराना है। नदियों की घाटियों में तथा चश्मों के पार्श्ववर्ती भागों में ऊँचे वृक्ष पाये जाते हैं। इनका कारण यह है कि यहाँ उष्ण जलवायु है।

(ii) 900 से 1800 मीटर की ऊँचाई तक—इस भाग में वर्षा की मात्रा कम हो जाती है और तापक्रम भी कम रहता है। यहाँ चीड़ के वन पाये जाते हैं। इनकी लकड़ी हल्की व उपयोगी होती है व पैकिंग के बक्स बनाने के लिए विशेष रूप से प्रयोग में लायी जाती है। कहीं कहीं साल के वृक्ष भी देखे जाते हैं। आवागमन व यातायात के साधनों के विकास के अभाव में इन वनों का पूरा विदोहन नहीं हो पाया है।

(iii) 1800 से 3000 मीटर की ऊँचाई तक—इस प्रदेश में कोणधारी वन पाये जाते हैं। इन वनों को कोणधारी वन इसलिये कहते हैं कि अधिकांश वृक्षों की पत्तियाँ नुकीली होती हैं। ये वन साइबेरिया के टैगा प्रान्त के वनों से मिलते जुलते हैं। टैगा प्रदेश में पाये जाने वाले वृक्षों की प्राय सभी किस्में इन वनों में मिलती हैं। चीड़ सनोवर देवदारु स्प्रूस, नील पाइन आदि के वृक्ष यहाँ मुख्यत पाये जाते हैं। इन वनों का उपयोग नहीं के बराबर हो हुआ है क्योंकि इन भागों में जनसंख्या तो केवल नाममात्र की है और यातायात के साधनों का भी विकास नहीं हुआ है।

(iv) 3000 से 5000 मीटर की ऊँचाई तक—इस प्रदेश में अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ पाई जाती हैं जिनमें छोटे छोटे वृक्ष झाड़ियाँ, घास व फूलों के पौधे सम्मिलित हैं। बर्च सिल्वर फर लार्च आदि प्रमुख हैं। इस भाग के ऊपरी क्षेत्र में झाड़ियों का स्थान धीरे धीरे घास ले लेती है। 4 500 मीटर के ऊपर वाले भागों में सदा बर्फ जमी रहती है।

(ख) पूर्वी हिमालय प्रदेश के वन—हिमालय के पूर्वी भाग में वनों की पेटियाँ कुछ भिन्न हैं जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(i) 1 200 मीटर की ऊँचाई तक—इस भाग में वार्षिक वर्षा 150 cms तक की है। इन वनों की सदाबहार वनों से काफी समानता है किन्तु इनके बीच में साल व कुछ अन्य पतझड़ वाले वृक्ष भी काफी मिलते हैं। इन वनों में घास और बाँस के झाड़ों की भी अधिकता रहती है। इसके अतिरिक्त साल, ओक आदि के भी वृक्ष होते हैं। इन्हें तराई के वन भी कहते हैं।

(ii) 1 100 से 2 400 मीटर की ऊँचाई तक—ये वन सदाबहार वन हैं। इन वनों में यूरोपीय किस्म के वनों की अधिकता है। इन वनों में ओक लारेल मैपिल, चेस्ट आदि के वृक्ष प्रमुख हैं। ये वन तराई प्रदेश के वनों के जितने सघन नहीं हैं।

(iii) 2 400 से 3 600 मीटर की ऊँचाई तक—ये वन कोणधारी वन हैं। इन वनों की वनस्पति प्राय उसी प्रकार की है, जैसी पश्चिमी हिमालय के

सड़ी और चिकनी होती है। इस लकड़ी का औद्योगिक महत्त्व नहीं होता, क्योंकि इसकी लकड़ी के भीतर विचित्र प्रकार की गाँठ होती है।

(II) शासन के आधार पर

ऊपर वनों का वर्गीकरण प्रकृति के वितरण के अनुसार देखा, अब हम भारत के वनों का शासन की दृष्टि से वर्गीकरण देखेंगे। भारत में अंग्रेजों के आने के पूर्व काफी वन थ, परन्तु बाद में अंग्रेजों ने भी वनों का महत्त्व समझा। लार्ड डलहौजी के समय भारत सरकार ने वनों की रक्षा का कार्य अपने अधिकार में ले लिया तथा सन 1855 में एक परिपत्र निकालकर अपनी वन नीति घोषित की और वनों को निम्नलिखित भागों में विभक्त किया —

(1) सुरक्षित वन (Reserved Forests)—इन वनों पर सरकार का पूर्णत अधिकार रहता है। इन वनों में बहुमूल्य लकड़ी के वृक्ष होने के कारण ही सरकार इन पर अपना अधिकार ही नहीं रखती वरन उन वनों को देश की जलवायु व प्राकृतिक कारणों से भी सुरक्षित रखती है। ऐसे वनों में सरकार की देख रेख में पुराने (सूखे हुए) वृक्षों को ही काटा जा सकता है। इन वनों में पशु चराना पूर्णत वर्जित है। इस प्रकार के वनों का क्षेत्रफल 52 प्रतिशत है।

(2) रक्षित वन (Protected Forests)—इन पर भी सरकार का अधिकार होता है। इनका महत्त्व केवल इनसे प्राप्त होने वाली बहुमूल्य लकड़ी के कारण है। इन वनों में पशु चराने के लिये पूर्णत निषेध तो नहीं है परन्तु ऐसा करने के लिये सरकारी आज्ञा लेना आवश्यक है। लकड़ी काटने के लिये भी आज्ञा प्राप्त करना आवश्यक है। इस प्रकार के वनों का क्षेत्रफल 24 प्रतिशत है।

(3) स्वतन्त्र तथा श्रेणी रहित (Unclassed Forests)—सरकार ऐसे वनों को प्राय ठेके पर देती है। ठेकेदार इन वनों में से इच्छानुसार लकड़ी काटते रहते हैं तथा साधारण शुल्क लेकर पशुओं को भी चराया जाता है। इस प्रकार के वनों का क्षेत्रफल 24 प्रतिशत है।

[यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सरकार को अधिकार है कि वन के किसी भी भाग को सुरक्षित (Reserved) घोषित कर दे, अथवा वन के किसी भी भाग को बीस वर्षों के लिए बन्द कर दे।]

राज्यों के अनुसार वनों का वितरण

भारत संघ के 7 53 लाख वर्ग Kms क्षेत्र में वनों का विस्तार है।[1] मध्य प्रदेश राज्य में सबसे अधिक वन हैं जो लगभग 134 5 हेक्टयर में फैले हुए हैं। दूसरे शब्दों में मध्य प्रदेश का लगभग 31% भाग वनों से ढका हुआ है। मध्य प्रदेश के पश्चात दूसरा राज्य जहाँ वन सबसे अधिक हैं असम है। इस राज्य के लगभग 63 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में वन हैं।

1 India'—1970, p 249

भारत के विभिन्न राज्यो मे वनों का वितरण निम्न तालिका म ज्ञात हो जावगा—

राज्य	वन-क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)	वनाच्छादित भूमि का %	राज्य	वन-क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)	वनाच्छादित भूमि का %
मध्य प्रदेश	134 5	30 8%	तमिलनाडु	17 5	13 5%
असम	63 1	42 0%	राजस्थान	13 0	3 5%
महाराष्ट्र	62 8	12 6%	केरल	9 8	22 0%
आ० प्र० प्रदेश	49 2	18 2%	गुजरात	8 5	5 0%
उडीसा	40 5	26 3%	प० बगाल	8 3	9 0%
बिहार	35 3	19 5%	जम्मू व का०	5 5	22 5%
उत्तर प्रदेश	33 9	11 1%	पजाब	3 3	2 5%
मसूर	25 0	13 0%	सघीय क्षत्र	8 5	›10%

हमारी वन-सम्पदा

वन सम्पत्ति दो प्रकार की होती है—(I) मुख्य उपज (Major Products) और (II) गौण उपज (Minor Products)। मुख्य उपज उस कहत हैं जिसम वृक्षो का ही उपयोग हो। उदाहरण के लिए वृक्ष चीर कर ईधन के लिए लकडी प्राप्त करना वृक्षो क लट्ठे आदि बनाना। गौण उपज में लिए पत्तो को गौण रूप से काम म लते हैं जसे—कागज की लुगदी बनाना दियासलाई बनाना बीज प्राप्त करना।

(I) मुख्य उपज—

भारत म आजकल जिन वृक्षो की किस्मो का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण उपयोग हो रहा है उनम स प्रमुख निम्नलिखित है—

(1) देवदारु (Deodar)—इसकी गणना सदाबहार वृक्षो म की जाती है। यह वृक्ष हिमालय पवत पर 1675 मीटर स 2450 मीटर की ऊँचाई तक पाया जाता है। हिमालय के उत्तरी-पश्चिमी भाग के लगभग 5 हजार वग Kms म इसके वन हैं। इसके अतिरिक्त कश्मीर व हिमाचल प्रदेश के पहाडी क्षेत्रो म भी इनके वृक्ष पाये जाते है। इसका वृक्ष सौ फीट स भी अधिक ऊँचा होता है। इसकी लकडी मूल्यवान व कठोर होती है। रलव के स्लीपर इसकी लकडी स बनाये जाते हैं। इसकी लकडी तेलयुक्त व सुगंधित होती है।

(2) साल (Sal)—यह वृक्ष उत्तर प्रदेश बिहार असम छोटा नागपुर उडीसा व मध्य प्रदेश मे विशेषत पाया जाता है। उप हिमालय प्रदेश म कांगडा म असम तक यह वृक्ष मिलता है। उत्तर प्रदेश म यद्यपि 7 हजार वग Kms म इसके वृक्ष पाये जाते है किन्तु केवल एक तिहाई क्षेत्र म ही अच्छे वृक्ष हैं। गगा की घाटी के निकटवर्ती क्षेत्र म साल पर्याप्त होता है, जिसकी लकडी कठोर व मजबूत होती है, अत इसका प्रयोग रेलवे के स्लीपरो के लिये किया जाता है।

(3) चीड़ (Pine)—इसका वृक्ष सदाबहार वाला होता है व इसकी पत्तियाँ नुकीली होती है। यह 900 से 1800 मीटर की ऊँचाई तक के भागों में प्राप्त हो जाता है। इसकी ऊँचाई 20 मीटर से 30 मीटर तक होती है। कश्मीर हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश और नेपाल में यह विशेषत पाया जाता है।

चीड़ की लकड़ी मुलायम होने के कारण इससे समावेष्टन (Packing) के सन्दूक (विशेषत चाय, साबुन आदि के) बनाये जाते हैं। उत्तर प्रदेश और हिमाचल प्रदेश में तारपीन का तेल व बिरोजा बनाने के लिए भी चीड़ का प्रयोग होता है।

(4) सागवान (Teak)—सागवान बहुत महत्वशील वृक्ष होता है। यह विशेषत मध्य प्रदेश पश्चिमी घाट नीलगिरि आदि में अन्य वृक्षों के साथ मिलता है किन्तु विशुद्ध सागवान के वृक्ष हिमालय के निचले ढालों पर पाये जाते हैं।

इसकी लकड़ी कठोर होने के कारण रेल के स्लीपर व जहाज आदि के काम में विशेषत आती है। पश्चिमी घाट के क्षेत्र से कुछ लकड़ी निर्यात भी की जाती है।

(5) समोवर—यह नुकीली पत्ती का वृक्ष हिमालय पर 2 300 मीटर से 3 हजार मीटर तक की ऊँचाई पर मिलता है। इसके वृक्ष अनेक हैं किन्तु इतनी ऊँचाई से लकड़ी लाना बहुत कठिन है। इसकी लकड़ी मुलायम होने के कारण दियासलाई कागज की लुगदी व पैकिंग के सन्दूक बनाने के काम आती है।

(6) शीशम—इसकी लकड़ी कठोर व मजबूत होती है और फर्नीचर रेल के डिब्बे नाव आदि बनाने के काम आती है। उत्तर प्रदेश, पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल के पर्वतीय भागों में यह विशेषत मिलता है।

(7) चन्दन—दक्षिण भारत में चन्दन के वृक्ष हैं। इसकी लकड़ी कोमल व सुगन्धित होती है। चन्दन की लकड़ी से तेल निकाला जाता है जो अनेक काम में आता है। इसकी लकड़ी छोटे छोटे खिलौने व धार्मिक कार्यों में उपयोग की जाती है।

(8) सुन्दरी—इसकी लकड़ी मुख्यत नाव बनाने के काम आती है। नाव व अन्य वस्तुएँ भी इसकी लकड़ी से बनती हैं।

(9) हल्दू—यह प्राय समस्त भारत में मिलता है। इसकी लकड़ी फर्नीचर व अन्य छोटा मोटा सामान बनाने के काम आती है।

(10) धूप—पश्चिमी घाट तथा अण्डमान द्वीप में वृक्ष बहुत हैं। इन वृक्षों में एक प्रकार का गोंद निकाला जाता है और लकड़ी मुलायम होने के कारण दियासलाई उद्योग एवं पैकिंग के काम आता है।

(11) बबूल—यह प्राय शुष्क भागों में पाया जाता है। राजस्थान में प्राय सर्वत्र मिलता है। यह कांटेदार वृक्ष है जिसकी पत्तियाँ छोटी होती हैं। इसकी लकड़ी भी मजबूत होती है। इसकी लकड़ी जलाने व खाल कमाने रंगने के काम आता है।

(II) गौण उपज (Minor Products)—

लकड़ी के अतिरिक्त भारत के वनों में अनेक गौण उपज अथवा छोटी उपज भरी पड़ी हैं। इन उत्पादनों में से अनेक तो वर्तमान समय में भी महत्वशील हैं एवं

कुछ का भविष्य बडा उज्ज्वल है। इसम से अनक पदार्थों का औद्योगिक महत्त्व बहुत है। वस तो भारतीय वनो म छोटी उपज इतनी विभिन्नता म है कि उन सबका गिनाना कठिन काम है अत यहा हम केवल उन्ही उपजा का वणन कर रह ह जा व्यावहारिक दृष्टि से महत्वशील है —

(1) लाख—भारत मे लाख बहुत प्राचीन काल म उत्पन्न हाती आई है। अथववद म लाख क कीडे का वणन और यजुर्वेद म औषधिया म लाख क प्रयोग का उल्लख मिलता है। महाभारत म पाण्डवा का नष्ट करन क लिए कौरवो द्वारा लाख गह निमाण करन का वृत्तान्त मिलता है।

लाख उत्पन्न करने वाले क्षेत्र—लाख एक प्रकार के कीटा के द्वारा उत्पन्न की जाती ह, जा कि विभिन्न वृक्षा पर रहत है। लाख उत्पन्न करन के लिय कुसुम का वक्ष सबस श्रेष्ठ माना जाता ह। कुसुम का वक्ष जगली किन्तु बहुमूल्य है। इसकी लकडी कडी हाती है जो कि अनक कामा म आती है, फल खाय जात है और बीजा से तल निकाला जाता है। कुसुम क अतिरिक्त खर, पलास, पीपर बर, बबूल गूलर, बरगद शीशम इमली, अजीर अरहर ढाक, कीकर आदि अन्य वक्ष ह जिन पर लाख क कीडे रहत हैं।

उत्पादन क्षत्र—ससार म लाख उत्पादन का प्राय 90 प्रतिशत भाग भारत म ही उत्पन्न हाता ह। भारत मे लाख उत्पादन के महत्त्वपूर्ण क्षेत्र निम्न हैं —(1) बिहार—छोटा नागपुर डिवीजन, सथाल परगना और गया क जिल। (2) मध्य प्रदेश—बिलासपुर रायपुर भडारा उमरिया, बालाघाट, छिंदवाडा, जबलपुर माडला, रायगढ और होशगाबाद। (3) पश्चिमी बगाल—मुर्शिदाबाद मालदा व बाकुडा जिल। (4) असम—खासी जैतिया व गारो की पहाडिया कामरूप व शिवसागर जिल। (5) उडीसा—नवापुर मयूरभज, क्योंझर जिल। (6) उत्तर प्रदश—मिर्जापुर। (7) गुजरात राज्य—पचमहल व बडोदा जिल।

उत्पादन—कुल उत्पादन म बिहार राज्य व मध्य प्रदश का भाग क्रमश 60 प्रतिशत और 20 प्रतिशत रहता है। लगभग 35 लाख व्यक्ति लाख स सम्बन्धित उद्योग म लग हुए ह।

उपयोग—मध्य काल मे लाख का व्यवहार कपडा व चमडा रँगने, चूडियाँ बनान लकडी क खिलौने व अन्य माजा पर रोगन करन के लिय ही होता था। टवर्नियर न सन 1676 म लिखा है—'भारत म लाख क रग का प्रयोग कपडा छापन क लिय और राल का प्रयाग मोहर लगाने तथा पालिश बनान के लिय किया जाता था। किन्तु विज्ञान की प्रगति के साथ लाख क अन्य उपयोग भी हान लग ह। आजकल इसका प्रयोग ग्रामोफोन के रिकार्ड, पट, वार्निश पालिश लिथाग्राफ स्याही और अधिकतर बिजली के कल-पुर्जों क बनान के लिए होता है। किन्तु भारत म लाख के उपभोग की मात्रा पर्याप्त कम है क्योंकि यहाँ उद्योग धन्धो का पूर्ण विकास नहीं हो पाया है। अनुमान है कि भारत अपन कुल लाख उत्पादन

लुग्दी बनाई जाती है। लकड़ी की लुग्दी से कृत्रिम रेशम भी आजकल बनाया जाने लगा है।

(5) गोंद—अनेक वृक्षों—बबूल, साल, आम, बड़ आदि—से गोंद प्राप्त किया जाता है। गोंद का प्रयोग चिपकाने तथा खाने के काम में होता है।

(6) चमड़ा कमाने का पदार्थ—बबूल, तुखद और आंवला आदि वृक्षों की छाल चमड़ा कमाने के काम आती है। बबूल राजस्थान में तुखद दक्षिणी और पश्चिमी भारत में और आंवला (जोधपुर) में प्रचुरता से पाया जाता है।

(7) तेल—असम व हिमालय प्रदेश पर विशेष प्रकार के वृक्षों से एक तरह का रस प्राप्त होता है, जिसे रेजिन (Resin) कहते हैं। इस रस से तारपीन का तेल निकाला जाता है और बची हुई वस्तु बिरोजा कहलाती है, जिसका प्रयोग रंग बनाने के काम आता है। मैसूर व दक्षिण भारत में चन्दन का तेल निकालते हैं। नीम से भी तेल निकाला जाता है। मध्य प्रदेश व महाराष्ट्र में महुआ का तेल भी निकाला जाता है।

(8) फल—समुद्री किनारों पर नारियल के वृक्ष पाये जाते हैं, जिनका प्रयोग खाने व तेल निकालने में होता है। खजूर व आम आदि का भी प्रयोग होता है।

(9) दवाइयां—जंगलों से प्राप्त अनेक पदार्थों का उपयोग दवा निर्माण करने में होता है।

(10) प्लाइवुड—इसका प्रयोग खेल के सामान व अन्य वस्तुएँ बनाने के काम में होता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत में वनों का आर्थिक महत्व बहुत है जिसको सरकार ने भी 'वन विधान' 1918 में स्वीकार किया है। वनों की उपज पर अनेक उद्योग धन्धे आधारित हैं। प्रतिवर्ष हम लगभग 50 लाख टन ईंधन व 25 लाख टन इमारती लकड़ी प्राप्त होती है। भारत में अन्य देशों की अपेक्षा प्रति व्यक्ति बहुत ही कम लकड़ी उपयोग होती है।

भारत के वनों में लगभग 14 हजार प्रकार की वनस्पति बतलाई जाती है जिसमें से लगभग 3 हजार का विविध व्यवसायों में प्रयोग होता है।

भारतीय वनों के प्रमुख दोष

भारतीय वनों के प्रमुख दोष (अथवा पिछड़पन के कारण) निम्नलिखित हैं—

(1) अपर्याप्त क्षेत्र—भारत में वनों का क्षेत्र काफी कम है। यहाँ के लगभग 23 प्रतिशत भाग में ही वन पाये जाते हैं जबकि आर्थिक दृष्टि से कम से कम 25 प्रतिशत भाग में वन अवश्य ही होने चाहिए।

(2) असमान वितरण—भारतीय वनों का एक दोष यह भी है कि यहाँ वनों का समान वितरण नहीं है। देश के अनेक भागों—बरार के भागों, छोटा नागपुर हिमालय की तराई आदि—में बहुत ही घने वन हैं जबकि राजस्थान के पश्चिमी भाग में तो वनों का अभाव ही है। अतः देश के सब भागों को पर्याप्त वनों तक नहीं है।

(३) वनों की विभिन्नता—भारत में एक ही विशाल क्षेत्र में एक ही प्रकार के पेड़ नहीं मिलते अतः विभिन्न प्रकार के वृक्षों को सम्मिलित करने में समय तथा व्यय अधिक लगता है।

(४) यातायात के साधनों की कमी—यातायात के साधनों की पर्याप्त उन्नति न होने के कारण सघन पहाड़ों से लकड़ी सुगमता से नहीं लाई जाती है। मनुष्यों द्वारा लकड़ी लाने में समय और व्यय दोनों ही अधिक लगते हैं।

(५) अज्ञान—ग्रामीण मनुष्यों का जीवन-स्तर निम्न होने के कारण अच्छी किस्म की लकड़ी का उपयोग पूरा नहीं होता है तथा न लकड़ी काटने में सावधानी नहीं रखी जाती और बहुत कुछ उत्तम जाति की लकड़ी यों ही व्यर्थ नष्ट हो जाती है।

(६) ऊँचाई पर जंगल—बहुत से जंगल अधिक ऊँचाई पर होने के कारण उनका उपयोग करना ही कठिन है। हिमालय के पूर्वी भागों के वन और पश्चिमी घाट के कुछ वन आज तक भी कठिनाई के कारण नहीं काटे गये हैं।

(7) त्रुटिपूर्ण सरकारी वर्गीकरण—सरकार ने वनों के वर्गीकरण में ठीक अनुपात नहीं रखा। सुरक्षित वन, रक्षित वन और अवर्गीकृत वन क्रमशः 52%, 24% और 24% हैं।

(8) कम वेतन—वन विभाग में काम करने के लिए आकर्षक वेतन आदि नहीं हैं। अतः अच्छे व्यक्तियों की सेवाएँ उपलब्ध नहीं हो पातीं।

(9) अनुसंधान कार्य में शिथिलता—भारत के वनों में अनुसंधान कार्य अभी पिछड़ा हुआ है। सन् 1878 में स्थापित वन अनुसंधानशाला देहरादून ने इस ओर कुछ कार्य अवश्य किया है। किन्तु देश में इस प्रकार की अन्य संस्थाएँ भी भिन्न-भिन्न भागों में स्थापित होनी चाहिए।

(10) पुराने तरीके—देश में लकड़ी काटने के पुराने तरीके ही काम में लाये जाते हैं। नये वैज्ञानिक तरीकों से लकड़ी काटने से व्यर्थ ही लकड़ी नष्ट नहीं होती है। बहुत सी बहुमूल्य व उपयोगी लकड़ियों के विषय में जो भारत में विद्यमान हैं अब भी पता नहीं लगा कि वे कौन कौन से कामों में प्रयोग की जा सकती हैं।

(11) बढ़ती हुई जनसंख्या—भारत में जनसंख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है अतः नये नगर (चण्डीगढ़) बसाये जा रहे हैं, नये कारखाने (भिलाई, दुर्गापुर आदि में) बनाये जा रहे हैं सड़कें मकान आदि बनाये जा रहे हैं और वन साफ किये जा रहे हैं।

(12) वन जलाना—प्रति वर्ष लगभग 5000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र के जंगल खेती व कोयला बनाने के लिए दिये जाते हैं।[1] कृषि के लिए भूमि प्राप्त करने के लिए वनों का संहार किया जा रहा है।

1 Benn *Resources of the Empire Timber and Timber Products* p 63

सरकारी एवं अन्य संस्थाएँ

देहरादून की वन्य अनुसंधानशाला (Forest Research Institute)—

देहरादून में 6 Kms पश्चिम की ओर हिमालय के आँचल में स्थित वन्य अनुसंधानशाला भारत में एक ऐसी शिक्षण संस्था है जो वन सम्पत्ति तथा उससे सम्बंधित समस्त विषयों पर अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की संस्था है।

इसकी स्थापना सन 1878 में तत्कालीन उत्तर पश्चिमी प्रान्त की सरकार ने की थी जिसमें भारतीय शिक्षार्थियों को केवल फॉरेस्टर्स तथा रेंजर्स क्लास के लिए प्रविष्ट किया जाता था। दो वर्षीय रेंजर्स कोर्स भारतवासियों को अपने देश में शिक्षा प्राप्त करने की सर्वोच्च शिक्षा समझी जाती थी। इस विषय की उच्च शिक्षा भारत के बाहर इंगलैंड, फ्रांस तथा जर्मनी में सुलभ थी। सन 1884 में यह संस्था केन्द्रीय सरकार के हाथ में चली गई और इसका नाम 'इम्पीरियल फॉरेस्ट कालेज' रख दिया गया। सन 1906 में इसका नाम बदल कर 'वन्य अनुसंधानशाला' (Forest Research Institute) रखा गया। अभी तक यह संस्था इसी नाम से पुकारी जाती है।

वन्य अनुसंधानशाला में शिक्षार्थियों के प्रशिक्षण के अतिरिक्त वन्य सम्पत्ति के विविध प्रयोग होते हैं। सन 1952 में वन्य सम्पदा के प्रयोगों के लिए दस पृथक विभाग निश्चित किये गये हैं। अनुसंधानशाला अपनी किस्म की एक ही संस्था है।

इसके अतिरिक्त इण्डियन फॉरेस्ट रेन्जर्स कॉलेज, देहरादून और मद्रास फॉरेस्ट कालेज कोयम्बटूर की संस्थाएँ भी उल्लेखनीय हैं जहाँ प्रति वर्ष क्रमश 70 और 35 शिक्षार्थियों को शिक्षा देकर तैयार कर दिया जाता है। देश के अन्य भागों में भी ऐसी संस्थाओं की स्थापना की आवश्यकता है। इङ्गलैंड में ऐसी पाँच संस्थाएँ हैं।[1]

उन्नति के लिए कुछ परामर्श

हम देख चुके हैं कि भारत के वनों में कुछ दोष है। इन दोषों को दूर करने और वनों के विकास के हेतु निम्नलिखित परामर्श लाभप्रद सिद्ध होंगे —

(1) उपयुक्त वितरण—भारत में वनों का बहुत ही असमान वितरण है एवं आवश्यकता से कम वन है। इस दिशा में 12 मई 1952 के वन नीति प्रस्ताव में यह सुझाव दिया गया कि देश की समस्त भूमि के कम से कम एक तिहाई (33.3%) क्षेत्र में वन बनाये रखने का लक्ष्य होना चाहिए, 60% पहाड़ी क्षेत्र में और 20% मैदानी क्षेत्र में।

(2) अनुपयुक्त भूमि पर वन—हिमालय दक्षिणी पठार और विन्ध्याचल के क्षेत्रों में ही सबसे अधिक वन है जबकि सतलज गंगा के मैदानों में वन कम हैं। आजकल कृषि के लिए भूमि की बहुत माँग है। अतः हमारी पंचवर्षीय योजना में

---

1 *An Official Reference Book* Britain 1958

भी यह सुझाव दिया गया है कि कृषि के लिए अनुपयुक्त भूमि पर धन शनैः वनों का विस्तार किया जाय।

(3) वनों का पुनर्स्थापन—जमींदारी उन्मूलन के भय से जंगलों को काट कर 62 प्रतिशत अधिक लकड़ी काटी गई। अतः इन वनों का पुनर्स्थापन तथा वन विकास की योजनाओं में इन्हें प्राथमिकता देनी चाहिए।

(4) गाँवों में ईंधन व्यवस्था—गाँवों में ईंधन की कमी है। विश्व के मनुष्यों को प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष औसत रूप से 9 मन लकड़ी प्राप्त होती है जबकि भारत में यह औसत 20 सेर से भी कम है और संयुक्त राज्य अमरिका में यह औसत लगभग 9 मन है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में ईंधन की कमी को दूर करने के हेतु गाँवों में ईंधन के लिए पत्थर के कोयले का प्रचार बढ़ाने का परामर्श दिया गया था।

(5) वैज्ञानिक तरीके—वृक्षों को काटने के लिए वैज्ञानिक साधन अपनाये जावें ताकि लकड़ी का विनाश न हो।

(6) वन क्षेत्र में वृद्धि—मनुष्य निर्मित वन क्षेत्र में वृद्धि की जानी चाहिए। इस समय हमारे देश के कुल वन क्षेत्र के लगभग 1.2 प्रतिशत क्षेत्र में मनुष्य द्वारा निर्मित वन हैं जबकि जापान में यह प्रतिशत 40 है।

(7) कटाव वाले क्षेत्र में वन—भूमि के कटाव वाले क्षेत्रों में अधिक वन लगाये जाने चाहिए ताकि भूमि का क्षय न हो। साथ ही, रेगिस्तान के विस्तार को रोकने के लिए राजस्थान में वन अधिक लगाने चाहिए।

(8) नहरों के किनारे वन—आजकल हमारे देश में सिंचाई के लिये अनेक बाँध और नहरें बनाई जा रही हैं। इन नहरों तथा बाँधों के किनारों पर भी वृक्षों को लगाना चाहिए।

(9) खेतों की सीमा पर—खेतों की सीमाओं पर अनेक प्रकार के उपयोगी वृक्ष लगाये जा सकते हैं। जापान और इटली के कृषक अपने खेतों की सीमाओं पर ऐसे वृक्ष लगाते हैं।

(10) यातायात विकास—वनों में यातायात के साधनों में वृद्धि करनी चाहिए। इससे वन पदार्थों का उचित उपयोग होगा व कम मूल्यों पर ये पदार्थ मदानी भाग में आ सकेंगे।

(11) सम्मेलन—समय समय पर विभिन्न राज्यों के वन अधिकारियों का सम्मेलन बुलाना चाहिए। इसका प्रभाव यह होगा कि प्राविधिक विषयों पर विचार विनिमय हो और आपस की कठिनाइयों को दूर करने के लिए परामर्श आदान प्रदान किये जावें।

(12) आर्थिक वन लगाना—भारत में औद्योगिक लकड़ी का उत्पादन कम है। तीनों पंचवर्षीय योजनाओं और उसके पश्चात् अब तक (1968) वन विकास पर 1.20 अरब रुपए व्यय किये जा चुके हैं किन्तु औद्योगिक लकड़ी का उत्पादन

1 10 करोड़ घन मीटर अभी हो रहा है। इस गति से सन् 1975 तक औद्योगिक लकड़ी का उत्पादन 1 30 करोड़ घन मीटर हो सकेगा जबकि मांग 2 20 करोड़ घन मीटर लकड़ी की होगी। अतः केन्द्रीय खाद्य एवं कृषि मन्त्री के अनुसार, औद्योगिक लकड़ी प्राप्त होने वाले ऐसे वृक्षों को लगाना चाहिए जो दस वर्षों में ऐसी लकड़ी दे सकें।

(13) लकड़ी की माँग में वृद्धि—औद्योगिक लकड़ी की माँग में वृद्धि की जानी चाहिए। भारत में इस समय (1969) औद्योगिक लकड़ी का प्रति व्यक्ति वार्षिक उपयोग 0 02 घन मीटर है, जबकि संयुक्त राज्य अमरीका में यह 1 8 घन मीटर, इंगलैण्ड में 0 6 घन मीटर, एशिया के प्रशान्त-क्षेत्र में 0 1 घन मीटर है।

(14) विकास कोष की स्थापना—समन्वित वन विकास योजना के लिए, राष्ट्रीय अथवा क्षेत्रीय आधार पर एक विकास-कोष स्थापित किया जाना चाहिए। इसके लिए बंगलौर अधिवेशन (1968) में भी प्रस्ताव किया गया था और छठे विश्व-वन-काँग्रेस (1968) ने भी परामर्श दिया था। हमारे विचार में वनों के लिए विनियोगों को आकर्षित करना सरल नहीं है क्योंकि प्रारम्भिक विनियोग और आय (yield) में दीर्घ समय विलम्ब (long time lag) है।

(15) अनुसंधानशालाओं की स्थापना—देश में वन्य पदार्थों की अन्वेषण शालायें विभिन्न भागों में स्थापित करनी चाहिए। इससे शोध कार्य में सुविधा मिलेगी और वन विकास के लिए मार्ग प्रशस्त होगा।

(16) वन महोत्सव—श्री के० एम० मुंशी द्वारा जुलाई 1950 में प्रचारित 'वन महोत्सव' प्रत्येक वर्ष मनाये जावें तथा इन पौधों की रक्षा की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया जावे। स्व० श्री मुंशी ने वन-महोत्सव का आधार इन शब्दों में व्यक्त किया था, "वृक्ष का अर्थ है जल, जल का अर्थ है रोटी, और रोटी ही जीवन है।" विश्व के लगभग 50 देशों में वर्ष के किसी न किसी भाग में वृक्षारोपण उत्सव मनाया जाता है। उदाहरण के लिए, जापान में इस दिन को 'हरा सप्ताह' (Green Week), इसराइल में नव वर्ष के वृक्षों का दिवस (New year's Day of Trees) तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में आर्बर डे (Arber Day) कहते हैं।

मत्स्यपुराण ने वृक्ष लगाने के महत्त्व को इस प्रकार व्यक्त किया है, 'दस कुएँ खोदना एक तालाब खोदने के और दस तालाब खोदना एक झील खोदने के प्रभाव के बराबर है, दस झीलें खोदना एक सुपुत्र प्राप्त करने के तुल्य है किन्तु एक वृक्ष लगाने का वही प्रभाव होता है जो दस सुपुत्र प्राप्त करने का होता है।' स्वर्गीय सरदार पटेल ने भी वनों की सुरक्षा एवं नये वृक्षों को लगाने का महत्त्व बतलाते हुए कहा था, "यदि हमें जीवित रहना है तो वृक्षों के विनाश को रोकना और वन लगाना आवश्यक है।"

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए तो वनों का और भी अधिक महत्त्व है। योजना-आयोग का यह कथन उपयुक्त ही है—"वनों को अब कृषि की दासी

किलोमीटर वन-क्षेत्र में और कमी हो गई। द्वितीय योजना अवधि में सुरक्षित और श्रेणी रहित वन क्षेत्र में कमी हुई किन्तु रक्षित-वन क्षेत्र में वृद्धि हुई।

इस योजना-काल में जोधपुर में एक मरुस्थल वृक्षारोपण अनुसंधान केन्द्र की स्थापना की गई। इसके अतिरिक्त राजस्थान की पश्चिमी-सीमा के किनारे तक लगभग 55 किलोमीटर लम्बी व 7 किलोमीटर चौड़ी, वृक्षों की एक पट्टी लगाई गई है जिसका प्रमुख उद्देश्य रेगिस्तान प्रसार के रोकने में वनों के योग पर अनुसंधान करना है।

इस योजना के अंतिम वर्ष 1960 61 में विभिन्न प्रकार की लकड़ियों का लगभग 50 करोड़ रुपये मूल्य था और गौण उपज (बांस घास आदि) का मूल्य लगभग 11 करोड़ रुपये था।

(III) तृतीय पंचवर्षीय योजना और वन—

इस योजना में वनों के विकास पर 46 करोड़ रुपये व्यय[1] किये जाने का प्रावधान था, जबकि वास्तव में लगभग 47 करोड़ रुपये व्यय हुए हैं। अर्थात् द्वितीय योजना की तुलना में लगभग ढाई गुनी राशि।

तृतीय योजना काल में देश की दीर्घकालीन आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए वनों के विकास के लिए कार्यक्रम बनाया गया। साथ ही पिछली योजनाओं के अपूर्ण कार्यों को आगे बढ़ाया गया। इस योजना में वनों का विस्तार, वन अनुसंधान व प्रशिक्षण, चरागाहों का विकास, यातायात की सुविधा के लिए मार्ग निर्माण व अनेक लाभप्रद कार्यक्रमों पर अधिक ध्यान दिया गया।

इस अवधि में औद्योगिक एवं व्यापारिक उपयोग के लिए वृक्ष लगाने का कार्यक्रम तेजी से कार्यान्वित किया गया। शीघ्रता से बढ़ने वाले वृक्षों को लगाने के लिए एक विशेष कार्यक्रम बनाया गया। कागज की लुगदी, दियासलाई आदि उद्योगों में काम आने वाले वृक्षों की तेजी से बढ़ने वाली किस्मों को लगाया गया। इस काल में वनों का सर्वे व सीमा निश्चित करने सम्बन्धी व्यवस्था की गई, चरागाहों तथा मण्डलों में सुधार किए गए तथा वन अनुसंधान का संगठन किया गया। देहरादून की वन अनुसंधानशाला का भी तीव्र गति से विकास किया गया। इसके अतिरिक्त वनों में काम करने वाले श्रमिकों को और अधिक सुविधाएँ देने के प्रयत्न किए गए।

वार्षिक योजनाएँ (1966-69)—

चौथी पंचवर्षीय योजना ठीक समय पर लागू न की जा सकने के कारण वार्षिक योजनाएं बनाई गईं जिनमें वन विकास कार्यक्रम भी सम्मिलित रहे। 1966 से 1969 की अवधि में एक एक वर्षीय तीन योजनाओं पर लगभग 45 करोड़ रुपये व्यय हुए। वन साधनों का पूर्व निवेश सर्वे भी संयुक्त-राष्ट्र-संघ की तकनीकी

---

1 Fourth Five Year Plan p 65

तथा आर्थिक सहायता से किया गया था अभी भी चालू है। यह सर्वेक्षण 9 राज्यों म चालू है। इस सर्वेक्षण के द्वारा क्षेत्र विशेष म वन सम्पत्ति का विस्तृत ज्ञान हो जाता है जिससे उसका आर्थिक शोषण उपयुक्त ढग से किया जा सकता है।

वर्ष 1966 67 म शीघ्र उगने वाले पेडो को लगाने के लिए एक विस्तृत योजना बनाई गई। इस वर्ष भी वनो मे यातायात की सुविधाएँ बढाने, ईंधन प्राप्त होने वाले वृक्ष नये वन क्षेत्र म वृद्धि, लकडी काटने के तरीको म सुधार वन साधनो का सर्वेक्षण आदि अनेक कार्यक्रमो पर कार्य किया गया।

वर्ष 1967 68 म गत वर्ष के कार्यों का और आगे बढाया गया तथा शीघ्रता से उगने वाले औद्योगिक व व्यापारिक उपयोग के वृक्षो को लगाने का कार्यक्रम और तेजी से कार्यान्वित किया गया।

वर्ष 1968 69 मे भी शीघ्रता से उगने वाले वृक्षों का लगाने का कार्यक्रम चालू रहा। लगभग 2 लाख हेक्टेयर भूमि पर वनो की पुन स्थापना की गई और 35 हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र म सचार की व्यवस्था की गई।

(IV) चौथी पचवर्षीय योजना और वन—

चौथी पचवर्षीय योजना (1969 74) म वन विकास के लिए 92 55 करोड रुपये व्यय करने का प्रावधान किया गया है।[1]

इस योजना म वनो के सम्बन्ध म तीन प्रमुख उद्देश्य रखे गये है—प्रथम, वनो की उत्पादकता (Productivity) म वृद्धि करना, द्वितीय, वन विकास को वनो पर आधारित उद्योगो से समन्वित करना, और तृतीय, ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के सहायक (Support) के रूप म वन विकास करना।[2]

इस चौथी योजना अवधि म सागौन बास बेत दियासलाई की लकडी आदि के उत्पादन म वृद्धि के प्रयत्न और अधिक किए जायेंगे। इस योजना मे वनों के विकास का कार्यक्रम इस प्रकार रखा गया है—(i) 4 लाख हेक्टेयर भूमि पर शीघ्र उगने वाले वृक्ष लगाये जावेंगे (ii) 4 लाख हेक्टेयर भूमि पर वनो की पुनर्व्यवस्था, (iii) 3 4 लाख हेक्टेयर भूमि पर आर्थिक दृष्टि से लाभदायक वृक्षारोपण, (iv) 1■ हजार किलोमीटर लम्बी सडको का निर्माण (v) 2 लाख हेक्टेयर भूमि पर पशुओं के लिए चारा, (vi) मिट्टी के कटाव रोकने के लिए पहाड़ी क्षेत्रो, नदियो के किनारे बीहड व बजर भूमि पर वृक्ष लगाये जावेंगे।

इस योजनावधि म गोहाटी (असम) तथा जबलपुर (मध्य प्रदेश) मे नए क्षेत्रीय अनुसन्धान-केन्द्र (Research Centres) स्थापित किए जावेगे।[3] वन

---

1 Fourth Five Year Plan p 207

2 *Ibid*

3 *Ibid* p 208

'अकाल पाँच वर्षों में तीन में और बड़े अकाल पचास वर्षों में एक में पड़ते हैं। देश की वर्तमान विकट खाद्य समस्या को हल करने के लिये सिंचाई की सहायता अनिवार्य है।' कृषि के बल द्वारा को पोषण के लिए एवं मनुष्य तथा पशु-जीवन को काल के ग्रास से निकालने के लिए तथा भारी संकट और कष्ट को दूर करने के लिए सिंचाई ही एकमात्र सफल कुंजी है।

भारत में सिंचाई का इतिहास

भारत में सिंचाई उतनी ही पुरानी है जितनी कि यहाँ की कृषि। कई हजार वर्ष पूर्व भी भारत में सिंचाई की जाती थी। नदियों पर बाँध बना कर और उनमें से नहरें निकाल कर सिंचाई की जाती थी। ऐसे बाँधों को उन दिनों 'सेतुबन्ध' कहते थे। चाणक्य ने अब से लगभग 2500 वर्ष पूर्व लिखा था 'सेतुबन्ध कृषि के आधार होते हैं। इनके अभाव में नदियाँ जलप्लावित होकर (बाढ़) नगरों तथा गाँवों को बहा ले जाती हैं और उससे महान धन जन का विनाश हो जाता है।' यह कथन इस बात का स्पष्ट संकेत है कि अति प्राचीन काल में भारतीय बाँध बनाना एवं सिंचाई करना जानते थे। भारत कृषि प्रधान देश है। विश्व में सबसे अधिक सिंचाई का क्षेत्र भारत ही में है। इतना ही नहीं, रूस, अमेरिका, जापान, मिस्र एवं इटली आदि देशों में सम्मिलित रूप से सिंचाई का जितना क्षेत्र है उससे भी अधिक क्षेत्र में सिंचाई भारत में होती है। भारत में जितनी लम्बी नहरें हैं वे पृथ्वी की परिधि के तीन चक्कर लगा सकती हैं। फिर भी भारत में सिंचाई के साधनों का चरम विकास नहीं हो पाया है। आँकड़े भारत की नदियों में जितना पानी प्रवाहित होता है उससे देश के समस्त क्षेत्रफल को 60 cms की गहराई तक सींचा जा सकता है परन्तु इसका अभी तक पूरा उपयोग नहीं किया जा सका। इस समय सिंचाई के लिए जितना पानी उपयोग में लाया जा रहा है उससे सम्पूर्ण देश का पूरा क्षेत्रफल 5 cms से कम गहराई तक सींचा जा सकता है।

भारत में सिंचाई की आवश्यकता

भारत एक विशाल देश है और साथ ही कृषि प्रधान भी। वुल्फ (Wolff) ने ठीक ही कहा है "यदि वर्षा नहीं आती है तो कृषि व्यवसाय स्थगित हो जाता है। देश की समस्त जनसंख्या का सन 1961 की जन गणना के अनुसार लगभग 83 प्रतिशत भाग कृषि अथवा उससे सम्बन्धित अन्य कार्यों में संलग्न है। भारत में प्रकृति द्वारा प्रदत्त जल, कतिपय दोषों के कारण देश की फसलों के लिए समय पर आवश्यक नमी प्रदान नहीं कर पाता अतः सिंचाई आवश्यक हो गई है। भारत में सिंचाई की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से हुई —

(1) अति-वृष्टि एवं अल्प-वृष्टि—ये दोनों ही कृषि के लिए घातक हैं और भारत में दोनों का ही सदैव खतरा बना रहता है। कभी अति वृष्टि प्रलय का रूप लेकर आती है तो कभी अल्प वृष्टि मौत का पयाम लेकर। बिहार में तो पिछले कुछ वर्षों से बाढ़ों व सूखे की कुछ अजीब लुका छिपी सी हो रही है। कभी एक तो कभी दूसरा और कभी तो दोनों ही मिलकर ताण्डव नृत्य करते हैं। प्रकृति के इस व्यंग्य

से बिहार तिलमिला उठा है उधर दक्षिणी भारत को सूखे का काफी पुराना मज है। पश्चिमी राजस्थान बेचारे ने तो वर्षा की आस ही छोड दी है, अत केवल सिंचाई ही उनको उबार सकती है। शायद ही कोई वर्ष ऐसा निकलता हो जबकि देश के किसी न किसी भाग मे अकाल न पडता हो।

(2) अनिश्चित वर्षा—भारत मे मानसूनी हवाओ से वर्षा होती है और व समय के बंधन को नही मानती। इन मानसूनो म यह विशेषता होती है कि कभी तो ये समय से पहले आ जाते हैं और कभी देर से। यदि मानसून समय से पहले आ जाते हैं तो जल्दी ही खत्म भी हो जाते हैं और बाद मे सिंचाई की आवश्यकता पडती है। यदि किसी वर्ष मानसून देर से आते हैं तो आरम्भ म सिंचाई की आवश्यकता पडती है। इसके अतिरिक्त राजस्थान, पजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि कुछ ऐसे भाग हैं जहा वर्षा बिल्कुल अनिश्चित होती है। अत सिंचाई की आवश्यकता हुई।

(3) अनियमित वितरण—वितरण के सम्बन्ध म भी मानसून का कुछ अपना ही ढग है। असम बगाल, महाराष्ट्र व केरल पर तो उसकी विशेष कृपा है। वहा तो यह दिल खोलकर अपना खजाना लुटाती चलती है पर आगे बढी कि हाथ खीचना शुरू किया। बिहार, उत्तर प्रदेश और पजाब म क्रमश वह और अधिक कृपण होती जाती है और जितनी दूरी यह तय करती जाती है उतनी ही वर्षा की मात्रा घटती जाती है। राजस्थान बेचारा तो ताकता ही रह जाता है। शायद इसी कुढन के मारे वह सूखता और जलता रहता है। भेद भाव भी हो तो किसी हद तक। भारत की औसत वार्षिक वर्षा 105 cms है किन्तु वहा असम मे (चेरापूंजी) 1270 cms और पश्चिमी राजस्थान (विशेषत जैसलमेर) म 2 cms से 5 cms। दक्षिणी भारत बेचारा बडा अभागा है। पर इतना बदनसीब तो नहा है जितना राजस्थान क्योकि दक्षिण भारत म 50 cm से 100 cms तक वर्षा हो ही जाती है।

(4) मौसमी वर्षा—हमारे देश म मानसून हवाओ से वर्षा होती है जोकि केवल एक मौसम म (गर्मी के अन्तिम समय) म होती है। शीतकाल म तो देश पानी की दो बूदो के लिए तरस जाता है। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव देश की शीत कालीन कृषि पर पडता है क्योकि इस समय तापक्रम अनेक कृषि की उपज के अनुकूल होता है। अत इस समय सिंचाई के बिना सफलता के साथ कृषि नहीं की जा सकती।

(5) तेज बौछारो मे वर्षा—भारतीय वर्षा की एक विशेषता यह भी है कि यह तेज बौछारो के रूप म होती है हल्की हल्की नहीं। इसका परिणाम यह होता है कि वर्षा के पानी को पर्याप्त मात्रा म पृथ्वी नही सोख पाती और पानी बह जाता है, पृथ्वी की प्यास पूरी नहीं बुझ पाती और कृषि उपज के लिए बार-बार सिंचाई करना आवश्यक हो जाता है।

(6) कृषि क्षेत्र मे वृद्धि—पानी की कमी के कारण देश की बहुत सी भूमि पर कृषि नही हो रही है यदि होती भी है तो बहुत कम। यदि सिंचाई की व्यवस्था

कर दी जावे तो कृषि के क्षेत्र में निश्चित रूप में वृद्धि हो सकती है। राजस्थान नहर बन जाने पर राज्य में कृषि का क्षेत्र बढ़ जावेगा।

(7) दुर्भिक्ष की रोक थाम—सिंचाई के साधनों से दुर्भिक्ष रोक जा सकते हैं। अनावृष्टि से जो दुर्भिक्ष होते हैं वे विकसित सिंचाई के साधनों से रोके जा सकते हैं।

(8) विशेष आवश्यकता—मानसून का गेहूँ और चना से तो मानो मेल ही नहीं खाता। यह तो भला हो उस भूमध्यसागर का जो उन बेचारों का तरस खाकर अपने चक्रवात इस ओर भेज देता है। पर वे बेचारे भी करें तो क्या करें। यहाँ आते-आते उनकी जान ही निकल जाती है। इसलिये बरस भी तो कितना ? सारे जाड़े में 2 cms या 5 cms। मनुष्य काफी समय तक गेहूँ चावल, कपास आदि की चीख पुकार सुनता रहा। अन्त में उससे न रहा गया और उसने उनका दुःख निवारण करने के लिए कुएँ, तालाब और नहरें बनाई। कुछ फसल भारत में ऐसी भी होती है जिन्हें अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक पानी की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए गन्ना व चावल ऐसी ही फसलें हैं। अतः ऐसी फसलों की उपज के लिए सिंचाई की आवश्यकता होती है।

(9) मिट्टी की प्रकृति—भारत में कुछ मिट्टियाँ इस प्रकार की पाई जाती हैं जिनमें बार-बार पानी देने की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए बालू मिट्टी ऐसी ही प्रकृति की होती है। अतः ऐसे क्षेत्रों में बिना सिंचाई की सहायता के कृषि नहीं हो सकती है। राजस्थान में गंगानगर जिले की सम्पन्नता सिंचाई पर ही निर्भर है।

(10) औद्योगिक विकास—सिंचाई की सुविधाएं बढ़ने से देश के अनेक उद्योगों का विकास हो सकता है। लम्बे रेशे की कपास की कमी है, अतः आवश्यकता पूर्ति के लिए आयात करनी पड़ती है जूट की कमी है तिलहन का क्षेत्र बढ़ाया जा सकता है।

(11) यातायात की सुविधाएं—रेल व सड़कें अभी देश की सम्पूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ हैं। ये साधन महंगे भी हैं। यदि नहरों का उचित विकास किया जाय तो जल-यातायात पूरक के रूप में सिद्ध होगा और रेल व सड़क यातायात का भार कम किया जा सकता है। जल-यातायात अन्य सभी साधनों से सस्ता भी होता है। यूरोप व संयुक्त राज्य अमेरिका में अनेक नदियाँ व झीलों को नहरों द्वारा यातायात के लिए जोड़ दिया गया है।

(12) कृषकों का जीवन-स्तर—भारत में अधिकांश व्यक्ति खेती में लगे हुए हैं। मिट्टी व जलवायु विभिन्न प्रकार की उपज के योग्य है। सिंचाई की सुविधाएँ पर्याप्त होने से उत्पादन में वृद्धि होगी जिसके फलस्वरूप कृषक की आय बढ़गी और इस प्रकार कृषकों के जीवन-स्तर में वृद्धि होगी।

(13) खाद्य समस्या—भारत में सम्पूर्ण कृषि-योग्य भूमि का उपयोग नहीं

हो पाया है उधर जनसंख्या में द्रुतगति से वृद्धि हो रही है, जिससे फलस्वरूप खाद्यान्नों की अधिक आवश्यकता होती जा रही है अत आवश्यकता इस बात की है कि सिंचाई की सुविधाओं म वृद्धि की जाय, जिससे अधिक भूमि का उपयोग हो सके और खाद्य पदार्थों की पर्याप्त उपलब्धि हो सके। आजकल करोड़ों रुपये के खाद्यान्न आयात किए जाते हैं।

(14) आर्थिक योजनाओं की सफलता के लिए—भारत के नियोजित आर्थिक विकास क लिए पचवर्षीय योजनाओं के अतगत काय किए जा रहे हैं। इनम कृषि विकास भी मुख्य है। कृषि कायक्रमों म सिंचाई के साधनों का विकास प्रमुख है। सिंचाई के विकास स योजना के कृषि उत्पादन के लक्ष्य पूरे हो सकते हैं। अतिरिक्त कृषि उत्पादन का निर्यात करके विदेशी मुद्रा कमाई जा सकती है।

अत स्पष्ट है कि भारत म सिंचाई केवल आवश्यक ही नहीं, वरन् अनिवार्य है।

सिंचाई के प्रभाव
(Effects of Irrigation)

उचित मात्रा म सिंचाई से लाभ हो होते हैं किन्तु अधिक अथवा कम मात्रा म सिंचाई करने स हानियां होती हैं। अत हम पहले सिंचाई स लाभ तथा उसके पश्चात अधिक एव कम मात्रा म सिंचाई के प्रभावों की विवेचना करेंगे।

सिंचाई से लाभ—

(1) वर्षा की अनिश्चितता का सुरक्षा—सिंचाई के साधन उपलब्ध हो जाने पर कृषक को प्रकृति पर पूणरूप से निभर रहने की आवश्यकता नहीं रह जाती है। समय पर वर्षा न होने स अथवा वर्षा के अपर्याप्त होने पर भी कृषि को बहुत हानि नहीं पहुँचती है।

(2) प्रति हक्टेयर उपज मे वृद्धि—व्यवहार म देखा गया है कि सिंचाई स प्रति हेक्टेयर उपज मे वृद्धि हुई है। ऐसा अनुमान किया गया है कि किसी भी सिंचित क्षेत्र की उपज असिंचित क्षेत्र की उपज की दोगुनी से चारगुनी तक हो जाती है। उदाहरण के लिए कपास की उपज असिंचित क्षेत्र की अपेक्षा सिंचित क्षेत्र म अधिक होती है।

(3) कृषि क्षेत्र में वृद्धि—सिंचाई के कारण कृषि क्षेत्र म सरलता स वृद्धि हो जाती है, क्योंकि जिन भागों म वर्षा के अभाव म कृषि नहीं हो सकती है, वहाँ सिंचाई उपलब्ध कर देने से उपज होने लगती है। बीकानेर डिवीजन म गंगा-नहर बन जाने से कृषि-क्षेत्र म वृद्धि हुई है। इसी प्रकार देश म बनने वाली विभिन्न नदी घाटी योजनाओं के पूरा हो जाने पर कृषि के क्षेत्र में वृद्धि अवश्य हो होगी। इसलिए कहा जाता है, 'भारतवर्ष एक नये मिस्र की वृद्धि कर लेता है।'[1]

[1] Stamp *Chisholm's Handbook of Commercial Geography* (Ed 1937) p 573

(4) पानी का उच्च स्तर—सिचाई के कारण भूमि में अन्दर के पानी का स्तर ऊँचा हो जाता है। इसका प्रभाव यह होता है कि कुएँ आदि खोदने पर पानी कम गहराई पर ही मिल जाता है। उत्तर प्रदेश में बहुत कम गहराई पर ही पानी मिल जाता है।

(5) अनेक फसलें सम्भव—सिंचाई की सहायता से वर्ष भर निरन्तर कृषि का व्यवसाय चलता रहता है, क्योंकि एक फसल तैयार हो जाने के पश्चात दूसरी फसल बो दी जाती है। इससे कृषक की आर्थिक स्थिति में भी सुधार होता है।

(6) गहरी खेती सम्भव—सिंचाई की सहायता से गहरी खेती सम्भव है, यदि सिंचाई की सुविधा न हो तो गहरी खेती सम्भव नहीं है।

(7) विशेष फसलों की सुविधा—गन्ना चावल आदि कुछ ऐसी फसलें हैं जिन्हें अधिक पानी की आवश्यकता होती है। सिंचाई की सहायता से ये फसलें अच्छी तरह हो जाती हैं।

(8) अकाल से रक्षा—लवडे (Loveday) के शब्दों में 'छोटे अकाल पाँच वर्षों के चक्रों में और बड़े अकाल पचास वर्षों के चक्रों में पड़ते रहते हैं।' सिंचाई अकाल पीड़ित क्षेत्रों की रक्षा करती है क्योंकि यह अकाल से बचने का एक अनुपम साधन है। अतः यह कहा जा सकता है कि सिंचाई "अकाल के विरुद्ध बीमा कराने के समान है।"

(9) नहरों के अन्य उपयोग—सिंचाई वाले क्षेत्रों को ही नहरें लाभ नहीं पहुँचातीं वरन् उनसे अन्य लाभ भी उठाये जाते हैं। उदाहरण के लिए बंगाल में नहरें यातायात के काम में भी आती हैं, राजस्थान नहर बन जाने पर सिंचाई के अतिरिक्त उसको नाव चलाने के काम में भी लिया जायगा। उत्तर प्रदेश में गंगा की नहर के प्रपातों से जल विद्युत भी उत्पन्न की जाती है।

(10) खाद्य समस्या का निवारण—देश की खाद्य-समस्या को सुलझाने में सिंचाई के साधनों का बड़ा योग है। देश की सरकार खाद्य समस्या को पूर्णतः सुलझाने के लिए सिंचाई के साधनों का विकास व विस्तार कर रही है।

(11) सरकार को लाभ—सिंचाई के द्वारा सरकार को भी अनेक प्रकार से लाभ होता है। प्रथम, मालगुजारी द्वारा सरकार की आय में वृद्धि हुई है। द्वितीय, उत्पादक नहरों से भी सरकार को आय होती है। तृतीय, सिंचाई देश में जनसंख्या के असमान वितरण को दूर करने में भी सहायक हुई है। अन्त में, सिंचाई में उन्नति होने के कारण प्रजा में सुख शान्ति और आर्थिक समृद्धि हो रही है।

अधिक सिंचाई के प्रभाव (Effects of Excessive Irrigation)—

अधिक सिंचाई (Excessive Irrigation) से अनेक दुष्परिणाम होते हैं उनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं :—

(1) क्षार का फैल जाना—अधिक सिंचाई का एक प्रभाव यह होता है कि भूमि पर क्षार (Alkaline) फैल जाता है और भूमि बेकार हो जाती है। पूर्वी

पंजाब, उत्तर प्रदेश एवं महाराष्ट्र राज्यों में पृथ्वी पर क्षार फैल जाने से बहुत सी भूमि कृषि के अयोग्य हो गई है। महाराष्ट्र राज्य में नीरा की घाटी में क्षार वाली भूमि प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है।

(2) **भूमि में पानी की अधिकता**—अधिक सिंचाई के कारण कभी कभी भूमि में पानी की अधिकता (Water Logging) हो जाती है, जिसके परिणाम स्वरूप कुछ रासायनिक प्रतिक्रियाएँ होने लगती हैं और भूमि बेकार हो जाती है।

(3) **कृषि भूमि की हानि**—भूमि का वह भाग जिसमें नहरें बनाई जाती हैं, कृषि के लिए अनुपयुक्त हो जाता है।

(4) **मिट्टी का उपयोग नहीं**—नदी द्वारा लाई हुई मिट्टी मैदानों पर बिछने की बजाय नहरों में एकत्रित हो जाती है, अतः उसका कोई उपयोग नहीं हो पाता।

(5) **पानी का अपव्यय**—नहरों द्वारा सिंचाई से कभी-कभी समय पर जल नहीं मिलता अतः जब पानी उपलब्ध होता है तो कृषक आवश्यकता से कहीं अधिक पानी दे देता है। हावर्ड (Howard) के शब्दों में, "पानी के इस दुरुपयोग से, यह निश्चित है कि भूमि की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है।'

(6) **नहरें टूटने से हानि**—अत्यधिक सिंचाई के लिए बहुत-से तालाब व बाँध बनाये जाते हैं। कभी-कभी नहरों व तालाबों के टूट जाने से धन-जन की बड़ी हानि होती है।

(7) **लड़ाई झगड़ों को प्रोत्साहन**—जिन क्षेत्रों में अधिक सिंचाई होती है, वहाँ नहर के पानी के ऊपर आपस में लड़ाई झगड़े व मुकद्दमेबाजी खूब होती है। उत्तर प्रदेश के अनेक गाँवों में अधिकांश झगड़े सिंचाई के पानी के लिए ही होते हैं। इसी प्रकार राजस्थान के बीकानेर डिवीजन के गंगानगर जिले में भी इसी प्रकार के मुकद्दमों की अधिकता है। इस प्रकार मुकद्दमेबाजी भारत का राष्ट्रीय खेल हो गया है।

(8) **बीमारियों का प्रकोप**—अधिक सिंचाई वाले भागों में पानी नहरों के आस पास बिखर जाता है और दलदल अथवा कीचड़ का रूप धारण कर लेता है, जिसके कारण बीमारी फैलाने वाले कीड़े-मकोड़े व जीव-जन्तु एवं मच्छर आदि उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार ये स्थान 'मलेरिया व अन्य संक्रामक बीमारियों के जन्म-स्थान बन जाते हैं।'

भारत में आर्थिक सम्पन्नता के लिए सिंचाई आवश्यक है अथवा शक्ति

प्रारम्भिक—

आर्थिक ढाँचे और प्राकृतिक साधनों को देखते हुए, किसी देश में सिंचाई, शक्ति से अधिक आवश्यक है तो किसी देश में शक्ति, सिंचाई से अधिक आवश्यक है, और किसी देश में दोनों ही—सिंचाई और शक्ति—आवश्यक हैं। उदाहरण के लिए, इंगलैण्ड और जापान में शक्ति पर ही वहाँ की सम्पन्नता निर्भर है दूसरी ओर मिस्र व सूडान की सम्पन्नता सिंचाई पर ही निर्भर है। भारत, पाकिस्तान और चीन आदि देशों की सम्पन्नता सिंचाई व शक्ति दोनों पर ही निर्भर है। भारत—

की अर्थव्यवस्था में यदि सिंचाई अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है तो शक्ति का भी कम महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। विदेशी शासन के अन्तर्गत भारत में न तो सिंचाई का आवश्यक स्तर तक विकास किया गया और न शक्ति का। भारत में सिंचाई तथा शक्ति—इन दोनों का पृथक-पृथक महत्व है, अतः इनका महत्व भी पृथक-पृथक ही देखेंगे।

आर्थिक सम्पन्नता के लिए क्या सिंचाई आवश्यक है—

अति प्राचीन काल से भारत एक कृषि प्रधान देश रहा है और आज भी है। देश की लगभग 70 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या कृषि व्यवसाय में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से लगी हुई है। अतः यदि हम देश की आर्थिक उन्नति करनी है तो इन कृषकों की आर्थिक उन्नति पर सर्वप्रथम ध्यान देना होगा। इसके लिए सिंचाई का विकास ही एकमात्र उपाय है, क्योंकि मानसूनों का स्वभाव विश्वासघाती है। पिछले वर्षों में राजस्थान में, विशेषतः उत्तरी व पश्चिमी भाग में अकाल की काली छाया और गहरी होती गई। कृषकों को कृषि-व्यवसाय स्थगित करना पड़ा अनेक मनुष्य तथा लगभग हजारों पशु काल के कराल गाल में चले गये, अनेक कृषकों को अपना गाँव छोड़कर दूसरे स्थान पर पलायन करना पड़ा। यदि सिंचाई के पर्याप्त साधन होते तो राष्ट्र की इतनी हानि न होती। गंगानगर क्षेत्र में सिंचाई की सुविधाएँ होने के कारण, कृषि-व्यवसाय स्थगित नहीं हुआ। राजस्थान नहर का यदि पूरा निर्माण हो चुका होता तो उस क्षेत्र में भी कठिनाई नहीं होती। सर चार्ल्स ट्रेवेलियन ने तो यहाँ तक कहा है कि "भारत में सिंचाई ही सब कुछ है, भूमि से भी अधिक मूल्यवान पानी है।"

आज के युग में कोई भी राष्ट्र बड़े उद्योगों के अभाव में समृद्ध नहीं हो सकता, और अनेक उद्योगों के लिए कच्चा माल प्राप्त होता है कृषि से, जैसे वस्त्र उद्योग, चीनी उद्योग आदि। अतः इन उद्योगों के लिए कच्चा माल अधिक प्राप्त करने के लिए सिंचाई ही एक आवश्यक अनिवार्यता है। इससे देश की अर्थव्यवस्था तीन प्रकार से प्रभावित होती है—प्रथम, कृषि पर निर्भर उद्योगों को पर्याप्त कच्चा माल मिल जाता है जिससे ऐसे उद्योग निरन्तर चलते रहते हैं तथा देश के लोगों को रोजगार के साधन खुलते हैं, द्वितीय ऐसे उद्योगों का पर्याप्त विकास हो जाता है जिसके फलस्वरूप वह उद्योग देश की आवश्यकता की तो पूर्ति करता ही है किन्तु विदेशों में भी पक्का माल निर्यात करके देश के लिए विदेशी मुद्रा का भी अर्जन करता है, और तीसरे, देश के कच्चे माल की आवश्यकता की पूर्ति करने के पश्चात कच्चे माल को निर्यात करके और भी अधिक विदेशी मुद्रा प्राप्त की जा सकती है। अतः देश की आर्थिक सम्पन्नता के लिए सिंचाई आवश्यक है।

सन 1939 तक भारत विदेशों को खाद्यान्न निर्यात करता रहा है किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्त करने के पश्चात से देश निरन्तर खाद्यान्नों का आयात कर रहा है। खाद्यान्नों के निरन्तर आयात से देश की अर्थव्यवस्था लड़खड़ा जाती है और

दीर्घकालीन प्रभाव यह होता है कि अन्य देशों की राजनीतिक दासता की जंजीरें देश की आर्थिक व्यवस्था को कठोरता से जकड़ लेती हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात् हम अरबों रुपया का खाद्यान्न अब तक आयात कर चुके हैं और अब भी कर रहे हैं। यदि इस राशि की मशीनें आयात की होती तो देश आर्थिक सम्पन्नता के पथ पर एक कदम और आगे बढ़ गया होता, किन्तु अनाज का आयात करने के फलस्वरूप हमारे कन्धों पर बोझा और भी बढ़ गया है। यदि यही राशि सिंचाई के विकास पर व्यय की जाती तो देश की कृषि की उपज में स्थायी रूप से अवश्य वृद्धि होती और खाद्य समस्या, खाद्य समस्या ही नहीं होती।

भारतीय अर्थव्यवस्था वास्तव में कृषि पर अवलम्बित है क्योंकि राष्ट्रीय आय का लगभग आधा भाग कृषि से ही प्राप्त होता है। अतः राष्ट्रीय आय के इस भाग को प्राप्त करने में निश्चितता तथा इस भाग में वृद्धि करने के उद्देश्य से सिंचाई के साधनों का विकास अनिवार्य है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि सिंचाई से न केवल कृषि व कृषक की उन्नति होती है वरन् उद्योगों का विस्तार, व्यापार में उन्नति, उत्पादन का विस्तार, क्रय शक्ति में वृद्धि, सरकारी आय में वृद्धि, दुर्भिक्ष सहायता-व्यय में कमी, जनसंख्या का उचित वितरण एवं बेकारी कम होती है और जन साधारण के रहन सहन के स्तर में वृद्धि होती है, और इन सबके कारण अन्त में देश की सम्पूर्ण अर्थ-व्यवस्था का विकास होता है जिसके फलस्वरूप, देश आर्थिक समृद्धि और सम्पन्नता की ओर अग्रसर होता है।

आर्थिक सम्पन्नता के लिए क्या शक्ति आवश्यक है—

वर्तमान युग में वे देश ही समृद्ध हैं जो औद्योगिक दृष्टि से विकसित हैं और औद्योगिक विकास तभी सम्भव है जबकि शक्ति के समुचित साधन उपलब्ध हों। संयुक्त राज्य अमरिका, इंगलण्ड, जर्मनी, फ्रांस, रूस, जापान आदि आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न एवं शक्तिशाली देश हैं। अन्य कारणों में शक्ति के साधनों की सुलभता भी प्रमुख है। विश्व का लगभग 40 प्रतिशत कोयला उत्पादन संयुक्त राज्य अमेरिका करता है, व्यक्तिगत देशों में जल विद्युत उत्पन्न करने वाले देशों में भी संयुक्त राज्य अमेरिका का ही प्रथम स्थान है और विश्व में सबसे अधिक पट्रोलियम भी संयुक्त राज्य अमेरिका ही उत्पन्न करता है जिसका परिणाम स्पष्ट है। वहाँ औद्योगिक विकास चरम सीमा पर हुआ है और वह विश्व में आर्थिक दृष्टि से सबसे अधिक सम्पन्न देश है।

इङ्गलण्ड का कोयला-उत्पादक देशों में तीसरा स्थान है अतः वहाँ भी औद्योगिक विकास बहुत हुआ। इङ्गलण्ड में कृषि व सिंचाई का विकास नहीं हुआ, केवल शक्ति के विकास के कारण इसकी आर्थिक सम्पन्न देशों में गणना की जाती है। शक्ति के विकास के कारण जर्मनी, फ्रांस, रूस, जापान आदि आज भी आर्थिक सम्पन्न देश हैं दूसरी ओर अफ्रीका के अधिकांश देश, ब्रह्मा, पाकिस्तान, नेपाल,

भूटान, ईरान, ईराक आदि देश औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं—इसका प्रमुख कारण शक्ति के साधनों का अविकसित होना भी है।

मनुष्य को अपना जीवन बनाए रखने में जो महत्त्व भोजन का है और कृषि की सफलता के लिए जो स्थान जल का है, ठीक वही स्थान उद्योगों के सचालन में शक्ति का है। आर्थिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में शक्ति के साधनों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक कृषि की बहुत कुछ सफलता शक्ति पर ही निर्भर है। उद्योग धन्धे, परिवहन एवं सचार आदि सभी तो शक्ति के साधनों पर निर्भर हैं। बिना शक्ति के समुचित साधनों के आज कोई भी देश पूर्ण आर्थिक-सम्पन्नता की कल्पना नहीं कर सकता। जिस देश में शक्ति के साधनों का अभाव हो वहाँ अन्य बातों के अनुकूल होते हुए भी आर्थिक विकास की गति धीमी हो जाती है। इसके विपरीत जिस देश में शक्ति के विकसित साधन उपलब्ध हों वहाँ कृषि, उद्योग, व्यापार, परिवहन सभी की चहुँमुखी उन्नति हो सकती है क्योंकि शक्ति के साधनों की सहायता से यान्त्रिक कृषि सम्भव है बड़े उद्योग, लघु उद्योग, जल, थल तथा वायु के आवागमन के साधनों का विकास हो सकता है। देश में बेकारी की समस्या का सदैव के लिए अन्त हो सकता है। यह है शक्ति के साधनों का महत्त्व। अतः स्पष्ट है कि यदि किसी देश को शक्तिशाली और समृद्ध बनना है तो वहाँ शक्ति के साधनों का उचित विकास आवश्यक है। सर हेनरी फोर्ड ने विश्व की भौतिक प्रगति में शक्ति के साधनों की महत्ता बतलाते हुए कहा है कि भौतिक संस्कृति का स्रोत विकसित शक्ति है।

भारत अब औद्योगिक क्षेत्र में द्रुत गति से बढ़ रहा है। देश में कोयले के विशाल भण्डार हैं, नदियों में अक्षय शक्ति छिपी पड़ी है, देश के अनेक भागों में भारी मात्रा में पट्रोलियम के बड़े भण्डार होने की सम्भावना है आवश्यकता है इनके उचित विदोहन की। हमारी राष्ट्रीय सरकार भी शक्ति के साधनों के महत्त्व को भली भाँति समझ चुकी है और इनके विकास के लिए आवश्यक कदम उठा रही है। अनेक नदी घाटी योजनाएं बन चुकी हैं, अनेक बन रही हैं, जिनसे सिंचाई के अतिरिक्त जल विद्युत भी प्राप्त करने का प्रमुख उद्देश्य है। पट्रोलियम की खोज पर करोड़ों रुपये व्यय किए जा रहे हैं। तारापुर (बम्बई) का अणु शक्ति गृह पूरा बन गया है। अन्य अणु शक्ति-गृह निर्माण की अवस्था में हैं। वर्तमान युग में जो देश शक्ति के साधनों के विकास की ओर ध्यान नहीं देते वे औद्योगिक विकास की दौड़ में पीछे रह जावेंगे तथा उनकी शक्ति व प्रतिष्ठा विश्व के राष्ट्रों में कम हो जावेगी।

अन्तिम विचार—

भारत की आर्थिक व्यवस्था गतिशील (Dynamic) है अतः सिंचाई एवं शक्ति' दोनों का ही समुचित विकास आवश्यक है। भारत कृषि की दृष्टि से उतना विकसित नहीं है जितना होना चाहिए। इसी प्रकार औद्योगिक दृष्टि से भी उतना विकसित नहीं है जितना होना चाहिए। अतः दोनों का ही विकास होना आवश्यक

है और इसके लिए प्रयत्न भी किए जा रहे हैं। भारत अभी संक्रान्ति-काल (Transitional Period) से गुजर रहा है अत दोनो ही—सिंचाई एव शक्ति आर्थिक सम्पन्नता के लिए आवश्यक हैं। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो ज्ञात होगा कि भारत की आर्थिक सम्पन्नता के लिए सिंचाई एव शक्ति, विकास के लिए दो अनिवार्य पहलू हैं। अत यदि केवल एक का ही विकास किया जाता है तो असन्तुलित (Lop-sided) विकास ही हो सकेगा, जो आर्थिक सम्पन्नता के लिए अवरोध ही सिद्ध होगा। भारत की आर्थिक सम्पन्नता के लिए सिंचाई एव शक्ति एक दूसरे के पूरक हैं, प्रतिस्पर्धी नहीं अत दोनो का ही समान रूप से महत्त्व तथा आवश्यकता है।

सिंचाई और पचवर्षीय योजनाएँ

भारत का क्षेत्रफल 32 68 करोड हेक्टेयर है। एक अनुमान के अनुसार केवल 8 2 करोड हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई हो सकती है—4 5 करोड हेक्टेयर भूमि पर बडी एव मध्यम सिंचाई योजनाओ द्वारा और 3 7 करोड हेक्टेयर भूमि पर छोटी सिंचाई योजनाओ द्वारा।

भारत मे औसतरूप से लगभग 16 8 करोड हेक्टेयर-मीटर धरातलीय जल (Surface water) उपलब्ध है। वतमान अवस्था म इसमे से केवल 5 6 करोड हेक्टेयर मीटर जल को सिंचाई के काम म लिया जा सकता है जिससे 6 करोड हेक्टेयर भूमि मे सिंचाई हो सकती है। धरातलीय जल की इस मात्रा के अतिरिक्त लगभग 2 2 करोड हेक्टेयर मीटर भूगर्भिक जल का उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार, कृषि के लिए भारत म कुल 7 8 करोड हेक्टेयर मीटर जल ही अभी उपलब्ध है।

योजनावधियो मे सिंचाई के साधनो का विकास—

भारत की पचवर्षीय योजनाओ म सिंचाई के साधनो के विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया गया है। कृषि उत्पादन वृद्धि पर योजनाओ की सफलता बहुत कुछ निर्भर है, और सिंचाई के साधनो के विकास पर कृषि उत्पादन वृद्धि निर्भर है।

प्रथम पचवर्षीय योजना—प्रथम पचवर्षीय योजना के प्रारम्भ के समय (1950 51 म) भारत म 20 8 करोड हेक्टेयर भूमि म सिंचाई होती थी। इस योजना काल म 380 करोड रुपय सिंचाई के विकास पर व्यय किये गये। इस योजना काल म 1 9 करोड हेक्टेयर भूमि म सिंचाई का और अधिक विस्तार हुआ। इस प्रकार वर्ष 1955 56 मे भारत मे सिंचाई का क्षेत्र 22 8 करोड हेक्टेयर हो गया।

द्वितीय पचवर्षीय योजना—इस योजना काल मे सिंचाई आदि के विकास पर लगभग 800 करोड रुपय व्यय करने का प्रावधान था। इस अवधि म छोटी व मध्यम श्रेणी की लगभग 195 योजनाएँ बनाई गई। इस योजना काल म सिंचाई के नवीन क्षेत्र मे अधिक वृद्धि नही हुई। इस अवधि मे केवल 57 लाख हेक्टेयर नई भूमि सिंचाई के अन्तगत आई। वर्ष 1960 61 म भारत मे लगभग 2 83 करोड हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई हो रही थी।

तृतीय पंचवर्षीय योजना—इस योजना काल में सिंचाई आदि के विकास पर 572 करोड़ रुपए व्यय किए गए। इस अवधि में लगभग 80 लाख हेक्टेयर नई भूमि पर सिंचाई की गई। इस प्रकार तृतीय पंचवर्षीय योजना के अंतिम वर्ष 1965 66 में भारत में कुल 3 63 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई हो रही थी।

वार्षिक योजनाएँ—प्रथम वार्षिक योजना (1966-67) में तृतीय पंचवर्षीय योजना के अपूर्ण कार्यों को चालू रखा गया तथा उन्हीं योजनाओं को कार्यान्वित करने का प्रयत्न किया गया जिनसे शीघ्र लाभ मिलने की आशा थी। इस वार्षिक योजना में बड़ी व मध्यम सिंचाई योजनाओं पर लगभग 132 करोड़ रुपए व्यय किए गये। इस वर्ष छोटी सिंचाई योजनाओं पर लगभग 23 करोड़ रुपए अतिरिक्त व्यय किये गये।

द्वितीय वार्षिक योजना (1967 68) में इस बात पर विशेष ध्यान दिया गया कि जिन सिंचाई योजनाओं का निर्माण कार्य लगभग पूरा होने का था, उन्हें पूरा किया जाय। इस योजना में बड़ी व मध्यम सिंचाई योजनाओं तथा बाढ़ नियन्त्रण कार्यक्रमों पर 147 करोड़ रुपये तथा छोटी योजनाओं पर लगभग 108 करोड़ रुपये व्यय किए गये।

तृतीय वार्षिक योजना (1968 69) में भी द्वितीय वार्षिक योजना की भाँति ही लगभग पूरी होने वाली योजनाओं को पूरी करने का प्रयत्न किया गया। बड़ी व मध्यम सिंचाई योजनाओं तथा बाढ़ नियन्त्रण कार्यक्रमों पर लगभग 155 करोड़ रुपये और छोटी सिंचाई योजनाओं पर 90 करोड़ रुपए व्यय किए गए।

चौथी पंचवर्षीय योजना (1969 74)—चौथी पंचवर्षीय योजना में बड़ी, मध्यम एवं छोटी योजनाओं[1] द्वारा सिंचाई का विस्तार किए जाने एवं वर्षा व सिंचाई व्यवस्था के अभाव वाले क्षेत्रों को प्राथमिकता दी जाने की व्यवस्था है। सिंचाई की छोटी योजनाओं में निजी योजनाओं के लिए कृषकों को सहायता दी जाने, उनके लिए वित्तीय व्यवस्था की जाने की व्यवस्था है। छोटे कृषकों के लाभार्थ योजनाओं को प्राथमिकता देने का प्रस्ताव है। भूमिगत जल का सर्वेक्षण व विकास किया जावेगा।

चौथी योजना में बड़ी एवं मध्यम सिंचाई योजनाओं द्वारा 57 लाख हेक्टेयर की अतिरिक्त सिंचाई-सम्भाव्यता (Irrigation Potential) उत्पन्न की जाने का लक्ष्य है। इसमें से 55 लाख हेक्टेयर चालू योजनाओं (Continuing Schemes) से और 2 लाख हेक्टेयर नई योजनाओं (Schemes) से उत्पन्न होगी। यह आशा

---

1 सिंचाई की छोटी परियोजनाएँ (Minor Projects) वे कहलाती हैं जिन पर लागत व्यय 50 लाख रुपये से कम हो, सिंचाई की मध्यम परियोजनाएँ (Medium Projects) वे हैं जिन पर लागत 50 लाख रुपये से अधिक किन्तु 5 करोड़ रुपए से कम हो बड़ी परियोजनाएँ (Major Projects) वे हैं जिनकी लागत 5 करोड़ रुपए से अधिक हो।

है कि चौथी योजना में अतिरिक्त सिंचाई उपयोग (Additional Irrigation Utilisation) 42 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर हो जावेगा।

चौथी योजना के अन्त (1973-74) तक देश में कुल 4 34 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई करने का लक्ष्य रखा है।

चौथी योजना में बड़ी तथा मध्यम सिंचाई योजनाओं पर 953 8 करोड़ रुपये एवं छोटी योजनाओं पर 515 7 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान किया गया है।[1]

भारत में सिंचाई की उन्नति के सुझाव

भारत में सिंचाई का विकास अभी तक आदर्श रूप में नहीं हुआ है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् से सरकार इस दिशा में निरन्तर प्रयास कर रही है किन्तु अभी तक पूर्णरूप से सफल नहीं हो पाई है। इस सम्बन्ध में भारत सरकार ने मैसूर के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री निजलिंगप्पा की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया, जो निजलिंगप्पा समिति के नाम से जानी जाती है। इस समिति ने अपना प्रतिवेदन (Report) जनवरी 1965 में प्रस्तुत किया। इस प्रतिवेदन में, भारत में सिंचाई की उन्नति के लिए अनेक सुझाव दिए गये हैं, जिनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं—

(1) **नवीन योजनाओं का उद्देश्य**—नवीन योजनाओं का निर्माण राष्ट्र के अधिकतम हित को ध्यान में रखकर करना चाहिए। इसके अतिरिक्त इनका प्रमुख उद्देश्य खाद्यान्न के उत्पादन में वृद्धि करना होना चाहिए।

(2) **लाभ को प्रमुखता**—इस समिति ने लाभ को प्रमुख स्थान दिया है। इस समिति के मतानुसार प्रत्येक सिंचाई योजना में कम से कम 50 प्रतिशत लाभ तो होना ही चाहिए, अर्थात् 100 रुपये की विनियोजित पूंजी 150 रुपये हो जावे। समिति का लाभ के प्रश्न को गौण तथा राष्ट्र के हित को प्रमुखता देनी चाहिए थी।

(3) **सिंचाई योजनाओं में समन्वय**—इस समिति ने कहा है कि सिंचाई की जो योजनाएँ बनाई जायें उसमें ध्यान रखा जाय कि लघु, मध्यम तथा बड़ी योजनाओं में आवश्यक समन्वय अवश्य होना चाहिए अन्यथा सिंचाई का आदर्श विकास नहीं हो सकेगा।

(4) **अपूर्ण योजनाओं को प्राथमिकता**—जो योजनाएँ पहले से हाथ में ली जा चुकी हैं और उनका निर्माण-कार्य अभी तक पूरा नहीं हुआ है, उन योजनाओं को पूरा करने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि विनियोग की गई पूंजी का उपयोग व लाभ प्राप्त होने लगेगा।

(5) **राशि का पूर्ण उपयोग**—इस समिति ने इस बात पर विशेष बल दिया है कि जो राशि सिंचाई के लिए निर्धारित की जाती है उसका पूरा उपयोग सिंचाई के लिए ही किया जाना चाहिए अन्य किसी मद में हस्तान्तरित नहीं करनी चाहिए।

---

1 *Fourth Five Year Plan*, pp 252 & 253

(6) जल शुल्क का लगाना—समिति ने सुझाव दिया है कि जिन भागों में कृषकों को सिंचाई से लाभ प्राप्त होना आरम्भ हो गया है, उन भागों में कृषकों से सिंचाई से प्राप्त लाभों का 25 से 40 प्रतिशत तक जल शुल्क (Water Rates) भाग वसूल किया जाय। इस जल शुल्क की दरों पर प्रत्येक पाँचवें वर्ष विचार करना चाहिए और दरों में संशोधन किया जाय। हम यह सुझाव अभी वर्तमान परिस्थितियों में उचित नहीं लगता।

(7) सुधार शुल्क देने वाले क्षेत्रों में नई योजनाएँ—समिति ने सलाह दी है कि जिन क्षेत्रों में कृषक सुधार शुल्क देने को तैयार हों वहाँ सिंचाई की नई योजनाएँ प्रारम्भ करने को प्राथमिकता देनी चाहिए।

निजलिंगप्पा समिति के उपरोक्त सुझावों के अतिरिक्त निम्नलिखित अन्य सुझाव भी हैं —

(1) सहकारी समितियों की स्थापना—कृषि क्षेत्रों में सहकारी समितियों की स्थापना की जानी चाहिए जो ट्यूब वैल व पम्पिंग सैट अच्छे बीज उत्तम खाद एवं ट्रैक्टर आदि की व्यवस्था करें।

(2) आर्थिक सहायता—छोटी सिंचाई योजनाओं को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से सरकार की ओर से ऋण और अनुदान देने का प्रबन्ध होना चाहिए।

(3) प्रचार एवं प्रसार—ट्यूब-वैल व पम्पिंग सैट लगाने के लिए प्रचार आदि करना चाहिए विशेषतः उन क्षेत्रों में जहाँ नहरों का निर्माण निकट भविष्य में सम्भव नहीं हो।

(4) उपलब्ध साधनों का अधिकतम उपयोग—देश के विभिन्न भागों में सिंचाई के जो साधन भी उपलब्ध हों उनका समुचित उपयोग एवं विकास करना चाहिए।

(5) अनुसन्धान कार्य—देश में सिंचाई से सम्बन्धित अनुसन्धान कार्य की बहुत आवश्यकता है।

(6) समन्वित कार्यक्रम—सिंचाई की योजनाओं के लिए केन्द्र तथा राज्यों में उचित समन्वय होना चाहिए। कई बार केन्द्र समय पर वित्तीय सहायता नहीं देता, जैसे राजस्थान नहर के मामले में।

(7) योजना व्यय ठीक हो—जब कोई सिंचाई योजना बनाई जाती है उस समय उसकी अनुमानित व्यय राशि कम बतलाई जाती है किन्तु बाद में धीरे धीरे उस राशि में बहुत अधिक वृद्धि कर दते है। इसका फल यह होता है कि बाद में वित्तीय कठिनाइयाँ आती हैं और योजना के निर्माण की गति धीमी हो जाती है।

सिंचाई के साधन

भारत की विशालता को देखते हुए यहाँ विभिन्न प्रकार की भू रचना का पाया जाना स्वाभाविक है और यही कारण है कि समस्त भारत में एक ही प्रकार की सिंचाई के साधन उपयोग में नहीं आते।

हमारे देश में सिंचाई के तीन प्रमुख साधन हैं —(I) कुँए (II) तालाब, और (III) नहरें।

(I) कुँए—

भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से कुँओं द्वारा सिंचाई होती है। पृथ्वी के गर्भ में संचित जल राशि को प्राप्त करने का मुख्य साधन कुएँ हैं। कुँआ द्वारा सिंचाई का साधन भारत का अपना है। कुँआ भारतीय किसान की आवश्यकताओं तथा आर्थिक स्थिति के सर्वथा अनुकूल भी है। कुँए खोदने के लिए तीन आवश्यक बातें हैं—प्रथम, पानी कम गहराई पर हो दूसरे, भूमि पथरीली न हो और तीसरे, उस क्षेत्र का पानी खारा न हो।

कुँए के गुण—(1) कुँओं के द्वारा कृषक अपनी आवश्यकतानुसार ही पानी निकालता है अतः खेतों में न तो क्षार फैलती है और न खेत की भूमि जल-संपृक्त (Water Logging) ही होने पाती है। (2) कुँए खोदने के लिए न तो कुशल इंजीनियरों की आवश्यकता पड़ती है और न मशीनों की ही। कृषक अपनी कम पूँजी व अपने श्रम द्वारा कुँआ बना लेता है। (3) कुँओं द्वारा सिंचित भूमि का प्रति एकड़ उत्पादन अन्य साधनों द्वारा सिंचाई वाले क्षेत्रों से अधिक होता है। उदाहरण के लिए तम्बाकू की फसल उत्तम होती है और उसकी उपज बढ़ जाती है। (4) पानी निकालने के लिए पशुओं (बैल, भैंस आदि) के अतिरिक्त कभी कभी कुछ आदमियों की भी आवश्यकता पड़ती है। इसमें गाँव के मजदूरों को भी काम मिल जाता है।

कुँए के दोष—एक ओर तो कुँए के कुछ गुण हैं तो दूसरी ओर कुछ दोष भी हैं जिनमें प्रमुख ये हैं—(1) कुँओं द्वारा सिंचाई का क्षेत्र सीमित रहता है। (2) कुँओं के ऊपर सिंचाई के लिए सदैव निर्भर नहीं रहा जा सकता है। गर्मी में सिंचाई के समय अनेक कुँए सूख जाते हैं। अनावृष्टि के समय जब भूमिगत जल स्तर बहुत नीचे चला जाता है तो अधिकांश कुँए बेकार हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त, अधिक समय तक लगातार पानी खींचे जाने पर भी कुँए सूख जाते हैं। (3) कुँओं द्वारा की गई सिंचाई नहरों द्वारा की जाने वाली सिंचाई से मँहगी होती है। साथ ही परिश्रम भी अधिक करना पड़ता है। (4) अनेक कुँओं का पानी खारा होता है जो सिंचाई के लिए अधिक उपयुक्त नहीं होता है। (5) नहरों द्वारा सिंचाई करने से पानी के साथ उपजाऊ मिट्टी भी आ जाती है, लेकिन कुँए के पानी में यह नहीं होती है।

कुँओं द्वारा सिंचाई का क्षेत्र एवं वितरण—एक अनुमान के अनुसार भारत में सिंचाई के कुल क्षेत्र के लगभग 25 प्रतिशत भाग में कुँओं द्वारा सिंचाई होती है तथा इनकी संख्या लगभग 30 लाख है।

भारत में पंजाब, हरियाना, राजस्थान, उत्तर प्रदेश व बिहार के कुछ भागों में कुँओं द्वारा सिंचाई होती है। उत्तर प्रदेश व पंजाब की भूमि चलनी की तरह, कुँओं से छिदी पड़ी है। केवल उत्तर प्रदेश में ही दस लाख से भी अधिक कुँए हैं तथा

मिट्टी आदि का बाँध बनाकर गहरे झील या तालाब निर्माण कर लिए जाते हैं, जिनमें वर्षा ऋतु में पानी एकत्रित हो जाता है। वर्षा ऋतु के पश्चात् इन तालाबों से सिंचाई करते हैं किन्तु ग्रीष्म ऋतु में अधिकांश तालाब तो पूर्णतया सूख जाते हैं। कभी-कभी तो वर्षा ऋतु में भी ये तालाब पूरे नहीं भर पाते हैं।[1]

आधुनिक युग में भी, जबकि विज्ञान की काफी उन्नति हो चुकी है और सिंचाई के अनेकानेक साधन उपलब्ध हैं तालाबों का व्यवहार सिंचाई के लिए भारत के कुछ भागों में व्यापक रूप से होता है। भारत में सबसे अधिक तालाब तमिलनाडु, आन्ध्र, मैसूर, मध्य प्रदेश एवं राजस्थान के दक्षिण पूर्वी भाग (उदयपुर, अलवर व भरतपुर) में मिलते हैं। वर्षा ऋतु में दक्षिणी भारत की अधिकांश नदियाँ जल प्रवाह के वेग से बढ़ जाने से तालाबों की एक लम्बी पंक्ति का रूप धारण कर लेती हैं जिनमें ऊपर स्थित तालाब से नीचे वाले तालाब में पानी धीरे धीरे रिसता रहता है। यही क्रम सभी नदियों के पठारी भाग में आदि से अन्त तक जारी रहता है। दक्षिणी भारत के पठारी भाग में ऊबड़ खाबड़ स्थलों पर छोटे छोटे खेत हैं और ये छोटे छोटे खेत भी बिखरे हुए (Scattered) हैं। इन खेतों की सिंचाई के लिए तो छोटे छोटे तालाब ही उपयुक्त हैं, क्योंकि बड़े तालाबों से नहरें आदि निकाल कर सिंचाई करने से साधारण कृषक बड़े व्यय को सहन कर सकता है।

मद्रास में चिंगलपुट जिले में आठवीं व नवीं शताब्दी में दो विशाल तालाब (कावेरी पक्कम और मन सागर) बनाये गये थे। मदुरा से रामनद तक तालाबों की एक बड़ी श्रृंखला है जो वायुयान से देखने में बड़ी सुन्दर दिखाई पड़ती है। आन्ध्र में निजामसागर और मैसूर में कृष्णराजासागर की गणना भारत के बड़े तालाबों में की जाती है। ये सिंचाई के उद्देश्य से बनाये गये थे। राजस्थान के उदयपुर, जोधपुर व जयपुर नरेशों ने भी अपने अपने राज्यों में बड़े तालाबों का निर्माण करवाया था। उदयपुर विभाग में जयसमंद, राजसमंद व पिछोला झील जोधपुर में प्रतापसागर व बालसमंद अलवर में विजयसागर झील आदि उल्लेखनीय हैं। किन्तु यह ध्यान रहे इन झीलों के निर्माण का उद्देश्य सिंचाई न था बल्कि जनता की दैनिक घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति करना था।

(iii) नहरें—

रायल कृषि कमीशन के मतानुसार "भारत में नहरों का महत्त्व सिंचाई के अन्य साधनों के सम्मिलित महत्त्व से भी अधिक है।" भारत के कुल सिंचित क्षेत्र का लगभग 45 प्रतिशत भाग नहरों द्वारा ही सिंचित है। हमारे देश में नहरों की सम्पूर्ण लम्बाई 80 हजार मील से भी अधिक है।

अधिकांश नहरें उत्तरी भाग में हैं। इसके प्रमुख कारण ये हैं—

(1) गंगा यमुना आदि नदियों में वर्ष भर पानी भरा रहने के कारण इनसे

---

1 Moore *A Dictionary of Geography* p 168

नहरें निकालने में यह सुविधा होती है कि नहरों में भी वर्ष भर पानी रहता है और वर्षपर्यन्त सिंचाई हो सकती है।

(2) उत्तर भारत में 'नदियों का जाल-सा बिछा हुआ है' अतः नहरें अधिक निकाली गई हैं।

(3) उत्तर भारत के मैदान का ढाल क्रमिक है। भूमि ऊँची-नीची नहीं है। अतः नहरों के खोदने और उनके उपयोग में सरलता रहती है।

(4) उत्तर भारत की मिट्टी मुलायम है। इस कारण नहरें खोदने में परिश्रम और व्यय कम करना पड़ता है।

(5) अनेक स्थानों पर सहायक नदियाँ और नाले आदि आकर नदियों में मिल जाते हैं, जिससे नदियों में पानी की कमी नहीं रहने पाती।

(6) उत्तर भारत की भूमि उपजाऊ है और विभिन्न उपज के लिए उपयुक्त तापक्रम पाये जाने के कारण भी इस क्षेत्र में नहरें अधिक हैं और सिंचाई के मूल्य को सरलतापूर्वक चुकाया जा सकता है। यदि भूमि बंजर होती अथवा उपयुक्त तापक्रम न होता, तो इस क्षेत्र में नहरों का विकास न हो पाता।

इसके विपरीत, दक्षिणी भारत में नहरों का विकास नहीं हो पाया है। इसका कारण यह है कि दक्षिण में भूमि पठारी होने के कारण कठोर व ऊँची-नीची है, जहाँ नहरें नहीं बन सकतीं। दक्षिण की नदियाँ बरसाती हैं और उनमें वर्ष भर पानी न रहने के कारण सिंचाई के लिए नहरें लोकप्रिय नहीं हो पाई हैं अतः वहाँ तालाबों द्वारा सिंचाई होती है।

वर्गीकरण—

पानी की दृष्टि से नहरें दो प्रकार की होती हैं—(1) नित्यवाही अथवा स्थायी नहरें (Perennial canals) और (2) अनित्यवाही अथवा बरसाती नहरें (Inundation canals)।

(1) अनित्यवाही नहरें—ऐसी नहर बनाने के लिए नदियों पर बाँध निर्माण करने की आवश्यकता नहीं होती। बाढ़ को रोकने अथवा उसके प्रकोप को कम करने के लिये नदी के पानी को नहरों द्वारा सिंचाई के लिये काम में लेते हैं। इन नहरों में पानी तभी आ सकता है जबकि नदी के पानी का स्तर एक निश्चित ऊँचाई से अधिक हो। इन नहरों में दो प्रमुख दोष हैं—प्रथम, जब नदी का पानी घट जाता है तो इन नहरों में पानी नहीं रहता और वे सूख जाती हैं, दूसरे, इन नहरों द्वारा वर्ष भर सिंचाई नहीं हो सकती है। आजकल तो ऐसी नहरों का निर्माण ही नहीं होता है और जो इस प्रकार की पुरानी नहरें हैं उन्हें नित्यवाही नहरों में परिवर्तित किया जा रहा है।

(2) नित्यवाही नहरें—इन नहरों से वर्ष भर सिंचाई होती है, अतः इन्हें स्थायी नहरें अथवा सदा बहने वाली (नित्यवाही) नहरें कहते हैं। ये नहरें या तो नदियों पर बाँध बना कर निकाली जाती हैं अथवा सदा बहने वाली नदियों से

निकाली जाती है। अब हमारे देश में इसी प्रकार की नहरों का निर्माण भारत सरकार कर रही है।

भारत में नदियों के पानी का केवल 5 6 प्रतिशत भाग उपयोग में लाया जाता है, शेष समुद्र में बह जाता है, अतः अधिक नहर निर्माण करने का पर्याप्त क्षेत्र है। भारत मे निम्न राज्यों में नहरों द्वारा सिचाई होता है —(1) उत्तर प्रदेश, (2) पूर्वी पजाब, (3) महाराष्ट्र (4) बिहार (5) मध्य प्रदेश और (6) दक्षिण भारत के कुछ क्षेत्र विशेषत मद्रास और आंध्र।

उत्तर प्रदेश की नहरें—

उत्तर प्रदेश में नहरें बहुत पुरानी है। विभाजन के पहले सबसे अधिक नहरें पंजाब में थी, लेकिन अधिकांश नहरें पाकिस्तान में रह जाने के कारण अब भारत में सबसे अधिक नहरें उत्तर प्रदेश में है। इस राज्य के पूर्वी भागों विशेषत इलाहाबाद के पूर्वी भाग में पर्याप्त वर्षा हो जाने के कारण सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। किन्तु इसके पश्चिमी भाग में सिचाई की आवश्यकता पड़ती है और इस कारण अधिकांश नहरें इसी क्षेत्र में है। उत्तर प्रदेश की प्रमुख नहरें निम्नलिखित हैं —

निर्माण का वर्ष	नहर का नाम	शाखाओं सहित लम्बाई
1830	पूर्वी यमुना नहर	1,450 Kms
1854	ऊपरी गंगा नहर	5 650 Kms
1874	आगरा नहर	1 600 Kms
1878	गंगा की निचली नहर	4 825 Kms
1928	शारदा नहर	12 345 Kms

(1) पूर्वी यमुना नहर—यह नहर बहुत पुरानी है। इस नहर का निर्माण कार्य शाहजहाँ के समय आरम्भ हुआ था और सन 1830 से सिंचाई का कार्य आरम्भ हो गया। यह नहर यमुना नदी के बाए किनारे से फैजाबाद के निकट से निकाली गई है। इसकी लम्बाई 1 450 Kms है जिससे 2 लाख हेक्टेयर भूमि में सिचाई होती है। मेरठ सहारनपुर मुजफ्फरनगर और बुलन्दशहर के जिलों में इससे सिंचाई होती है।

(2) ऊपरी गंगा नहर—यह नहर गंगा नदी के दाहिने किनारे से हरिद्वार के निकट से निकाली गई है। यह नहर सन् 1854 में बन कर तयार हो गई थी। आजकल गंगा की निचली नहर और आगरा नहर को भी इसी नहर से पानी दिया जाता है। मुख्य नहर हरिद्वार से कानपुर तक है। मुख्य नहर की लम्बाई 354 Kms और शाखाओं की लम्बाई 5,650 Kms है। इस नहर पर 7 स्थानों पर कृत्रिम झरने बना कर जल विद्युत बनाई जाती है। इस नहर से उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर मेरठ सहारनपुर अलीगढ़ कानपुर, बुलन्दशहर आदि जिलों में सिंचाई होती है। यह नहर लगभग 7 लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई करती है। इसके सिंचाई क्षेत्रों में विशेषत गेहूँ गन्ना और कपास की उपज होती है।

(3) आगरा नहर—यह नहर सन 1874 में यमुना नदी के दाहिने किनारे पर दिल्ली से 18 Kms दक्षिण में ओखला नामक स्थान से निकाली गई है। मुख्य नहर 160 Kms लम्बी है। इसकी शाखाओं व उपशाखाओं सहित लम्बाई लगभग 1,600 Kms है। इसके द्वारा सिंचित क्षेत्र लगभग 1.5 लाख हैक्टेयर है। दिल्ली, मथुरा, आगरा, भरतपुर, गुड़गाँव आदि क्षेत्रों में इससे सिंचाई होती है।

(4) गंगा की निचली नहर—यह नहर सन् 1878 में बुलन्दशहर जिले के नरोरा नामक स्थान से निकाली गई है। इस नहर की शाखाओं सहित लम्बाई लगभग 4,825 Kms है।

इस नहर से अलीगढ़ का कुछ भाग, एटा, इटावा, कानपुर का कुछ भाग, इलाहाबाद व फर्रुखाबाद के जिलों में सिंचाई होती है। यह नहर लगभग 4.8 लाख हैक्टेयर भूमि में सिंचाई करती है।

(5) शारदा नहर—यह नहर सन 1928 में नेपाल और भारत की सीमा पर स्थित बनबासा नामक स्थान से निकाली गई है। शारदा नदी नेपाल से निकल कर टनकपुर के समीप उत्तर प्रदेश में प्रवेश करती है। यद्यपि मुख्य नहर 45 Kms ही लम्बी है परन्तु यह विश्व की बड़ी नहरों में मानी जाती है क्योंकि शाखाओं और उपशाखाओं सहित इसकी लम्बाई लगभग 12,345 Kms है। प्रति सैकण्ड 9½ हजार घन फीट पानी देने की इसकी क्षमता है। यह नहर लगभग 21.5 लाख हैक्टेयर भूमि को सींचती है। यह रुहेलखण्ड तथा अवध के क्षेत्रों के अतिरिक्त सीतापुर, लखनऊ, हरदोई, इलाहाबाद, फैजाबाद, पीलीभीत आदि भागों में भी सिंचाई करती है। सन् 1960-61 में शारदा बाँध बनाया गया है जिससे लगभग 70 हजार हैक्टेयर अतिरिक्त भूमि पर सिंचाई होती है।

(6) अन्य नहरें—बेतवा नदी यमुना की एक शाखा है। सन 1885 में झाँसी से 25 Kms दूर परिच्छा नामक स्थान से बेतवा नहर निकाली गई है। इससे लगभग 80,000 हैक्टेयर भूमि में सिंचाई होती है। झाँसी और हमीरपुर के जिलों में इससे सिंचाई होती है।

केन नदी से पन्ना नामक स्थान पर केन नहर निकाली गई है। यह नहर सन् 1906 में चालू की गई थी। इस नहर से विशेषतः बाँदा जिले में सिंचाई होती है। केन नदी यमुना की सहायक है।

उत्तर प्रदेश के दक्षिणी भाग में यमुना की एक अन्य सहायक धासना नदी में मऊ नामक स्थान पर एक नहर निकाली गई है। यह नहर सन 1910 में तैयार हुई। इस नहर की तीन शाखाएँ हैं। यह हमीरपुर जिले में सिंचाई करती है।

सोन नदी की सहायक घाघरा से भी एक नहर निकाल कर मिर्जापुर जिले में सिंचाई की जाती है। उपरोक्त के अतिरिक्त अन्य कई योजनाओं पर कार्य हो रहा है व अनेक योजनाएँ पूरी हो रही हैं।

पूर्वी पंजाब एवं हरियाना की नहरें—

पंजाब में वार्षिक वर्षा का औसत 60 cms से कम, भूमि उपजाऊ, नदियों की सुविधाजनक स्थिति, नदियों में वर्ष भर पानी रहने आदि के कारण इस क्षेत्र में नहरों का बहुत विकास हुआ। विभाजन का इस क्षेत्र की नहरों पर विशेष प्रभाव पड़ा क्योंकि अधिकांश बड़ी-बड़ी नहरें पाकिस्तान में चली गईं। इसके अतिरिक्त एक समस्या यह उत्पन्न हो गई कि कुछ नहरों का उत्पत्ति-स्थान तो भारत में है, लेकिन वे पाकिस्तान में प्रवाहित होती हैं। पूर्वी पंजाब की मुख्य नहरें निम्नलिखित हैं—

(1) पश्चिमी यमुना नहर—इस नहर का निर्माण फिरोजशाह तुगलक ने करवाया था। यह यमुना नदी के दाहिने किनारे पर स्थित ताजवाला स्थान से निकाली गई है। इस नहर की तीन प्रमुख शाखाएँ हैं। इस नहर की उप शाखाओं सहित लम्बाई 3 050 kms है। इस नहर से इन क्षेत्रों में सिंचाई होती है —रोहतक, अम्बाला, हिसार करनाल व दिल्ली। इस नहर से लगभग 4 लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई होती है।

(2) सरहिन्द नहर—यह नहर सन 1862 में बनी। सतलज नदी के रुपर नामक स्थान से यह नहर निकाली गई है। इस नहर की कुल लम्बाई 6,000 Kms है जो प्राय 5 75 लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई करती है। इस नहर से लुधियाना फीरोजपुर, हिसार व फरीदकोट, नाभा व पटियाला (पूर्वी पंजाब) आदि में सिंचाई होती है।

(3) अपर बारी दोआब नहर—यह सन 1859 में बनी। यह नहर रावी नदी से माधोपुर के निकट से निकाली गई है। इस नहर की कुल लम्बाई 2,900 kms है। इससे पंजाब राज्य के अमृतसर और गुरदासपुर जिलों की लगभग 3 25 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई होती है। यह नहर पाकिस्तान के लाहौर जिले में भी सिंचाई करती है।

पंजाब की नई नहरें—सन् 1954 में व्यास और रावी नदी को नहर द्वारा मिला दिया गया है, ताकि व्यास नदी से निकलने वाली पुरानी तथा प्रस्तावित नई नहरों को पानी पर्याप्त मिलता रहे।

नागल की नहरें सतलज नदी से भाकरा नामक स्थान से निकाली गई हैं। ये नहरें सन 1954 में तैयार हो गई थी और लगभग 20 लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई करती हैं। इन नहरों से अम्बाला पटियाला हिसार के कुछ भाग करनाल, उत्तरी राजस्थान में सिंचाई हो रही है।

बिस्त दोआब नहर—यह भी सन् 1954 में तैयार हुई है और भाकरा नागल की शाखा है। यह सतलज नदी पर नोवा शहर से निकाली गई है और इस नहर की शाखाओं सहित लम्बाई 145 Kms है। यह नहर लगभग 2 25 लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई करती है। इससे सबसे अधिक सिंचाई जालन्धर में होती है

(30 हजार हैक्टेयर भूमि म)। ब्यास व सतलज के दोआब में जालंधर और होशियारपुर के भागा म सिंचाई की जाती है।

महाराष्ट्र राज्य की नहरें—

महाराष्ट्र राज्य मे नहरो के विकास के लिए अधिक अनुकूल दशाएँ नही हैं। प्रमुख कठिाई भूमि की रचना है। लेकिन फिर भी जिन स्थाना म नहरें खादन की सुविधा एव आवश्यकता है, वहाँ नहरा का निर्माण कर दिया गया है।

गादावरी प्रवरा, मुठा नीरा, कृष्णा तथा घाटप्रभा नदिया से नहरें निकाली गई हैं। प्राय इन नहरा का बनाने के लिये बडे बडे बाँध बना लिये गय हैं, जिनस नहरें निकाल ली गई हैं।

इस क्षत्र की प्रमुख नहरें निम्न हैं —(1) गादावरी नदी की नहरें (2) प्रवरा नहर (3) मुठा नहर (4) नीरा नहर (5) कृष्णा नहर (6) घाटप्रभा नहर। महाराष्ट्र राज्य म सिचाई की अनक याजनाएँ विचाराधीन ह, जिनक पूरा हो जान पर सिंचाई क क्षेत्र म वृद्धि होगी।

मध्य प्रदेश की नहरें—

मध्य प्रदेश मे अग्रलिखित नहरें महत्वपूर्ण है—

(1) महानदी नहर—यह नहर महानदी से रुद्री नामक स्थान स निकाली गई ह। इस नहर की शाखाओ सहित लम्बाई लगभग 1,600 Kms है। मुख्य नहर की लम्बाई 305 Kms है। इस नहर स, विशेषत रायपुर जिल म, सिंचाई हाती है। इस क्षत्र म चावल की उपज होती है और भूमि भी उपजाऊ है।

(2) वन गगा नहर—यह नहर वन गगा नदी से निकाली गई है। यह नहर 45 Kms लम्बी ह तथा इसकी दो शाखाओ की लम्बाई 80 Kms है। इस नहर से बालाघाट और भण्डारा जिल म सिंचाई होती है।

(3) तन्दुला नहर—तन्दुला और सुखा नदियो क सगम पर दो बाँध बना लिय गय हैं। तन्दुला नदी पर 2 Kms लम्बा और सुखा नदी पर $1\frac{3}{4}$ Kms लम्बा बाँध है। इन दाना बाधा म 90 कराड घन फुट पानी रखन की क्षमता है। यह नहर इन्ही बांधा स निकाली गई है। इस नहर से रायपुर और दुग जिलो म सिंचाई होती है।

बिहार की नहरें—

बिहार राज्य म गडक और सोन नदिया स नहरें निकाली गइ हैं। प्रमुख नहरें निम्नलिखित हैं —

(1) पूर्वी सोन नहर—यह नहर सोन नदी क दाहिने किनारे से निकाली गई है। पटना क निकट यह गगा नदी से मिला दी गइ है अत इसे पटना नहर भी कहत हैं। पटना और गया के जिलो मे इसमे सिंचाइ होती है।

(2) पश्चिमी सोन नहर—इस नहर को सोन नदी के बाएँ किनार स निकाला गया है। इस नहर की दो शाखाएँ हैं—एक तो बक्सर क निकट व दूसरी

(सारा नहर) उत्तर पूर्व की ओर बह कर गंगा में मिल जाती है। यह नहर शाहाबाद जिले में सिंचाई करती है।

(3) त्रिवेणी नहर—यह नहर गंडक नदी से त्रिवेणी नामक स्थान से निकाली गई है। यह नहर उत्तर बिहार के चम्पारन जिले में सिंचाई करता है।

दामोदर घाटी, कोसी व गंडक घाटी योजनाओं के पूरे हो जाने पर अधिक सिंचाई हो सकेगी।

पश्चिमी बंगाल की नहरें—

पश्चिमी बंगाल में वर्षा काफी होने के कारण सिंचाई की आवश्यकता नहीं है। अतः नहरों का विकास नहीं हुआ है। पश्चिमी भाग में जहाँ वर्षा अपेक्षाकृत कम होता है, दामोदर नदी से एक नहर निकाली गई है जिसका नाम दामोदर नहर है। इस नहर से बर्दवान जिले में सिंचाई होती है।

दक्षिणी भारत की नहरें—

महानदी, गोदावरी, कृष्णा व कावेरी नदियों के डेल्टा के मैदान में इन नदियों की शाखाओं से नहरें निकाल कर सिंचाई की जाती है। अन्य भागों में भूमि पथरीली होने के कारण तालाबों द्वारा ही विशेषतः सिंचाई की जाती है। प्राय बड़े बड़े बाँध अथवा तालाबों में पानी एकत्रित करके नहरों द्वारा सिंचाई करते हैं।

(1) पेरियार योजना—पेरियार नदी केरल राज्य में सिंचाई घाट से निकल कर अरब सागर में गिरती है। यहाँ 900 मीटर की ऊँचाई पर एक बाँध बनाकर इस नदी के पानी को रोक कर एक झील का निर्माण किया गया है। इस पेरियार झील में 15 अरब घन फीट पानी एकत्रित करने की क्षमता है। यहाँ से 3 Kms लम्बी सुरंग काटकर पानी को पूर्व की ओर ले जाया गया है, जिससे मदुरा जिले की लगभग $1\frac{1}{2}$ लाख एकड़ भूमि में सिंचाई होती है। मुख्य नहर लगभग 50 Kms लम्बी है।

(2) मदूर योजना—यह बाँध कावेरी नदी पर मैटूर नामक स्थान पर पहाड़ी भाग में बनाया गया है। यहाँ से इसका पानी 200 Kms लम्बी नहर द्वारा कावेरी के डेल्टा प्रदेश में पहुँचाया गया है। इस बाँध की गणना विश्व के बड़े बाँधों में की जाती है।

(3) कृष्णराजा-सागर बाँध—यह मैसूर राज्य की बड़ी योजना है। इससे जो मुख्य नहर निकाली गई है, उसका नाम इरविन नहर है। इस नहर से सवा लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होती है। इस योजना से मैसूर राज्य की बहुत-सी भूमि कृषि-योग्य हो गई है। 18 हजार एकड़ भूमि में तो गन्ने की ही खेती होती है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. भारतीय कृषि में सिंचाई का इतना महत्व क्या है? (T D C, 1959)

2 What methods of irrigation are practised in Northern India ? Give details about the Chambal Project (चम्बल योजना)

(T D C 1961)

3 Which one is more essential for India's economic prosperity—irrigation or power ? Argue your case rationally keeping in view the natural resources and economic structure of the country

भारत की आर्थिक सम्पन्नता के लिए कौन सा अधिक आवश्यक है—सिंचाई अथवा शक्ति ? देश के आर्थिक ढाचे और प्राकृतिक साधनों को ध्यान में रखते हुए बौद्धिक उत्तर देने का प्रयास कीजिये। (T D C 1964)

4 भारत के विभिन्न प्रान्तों में नहरों द्वारा सिंचाई का विस्तृत वर्णन कीजिए। राजस्थान नहर का आर्थिक महत्त्व बताइए। (T D C, 1966)

9

भारत की नदी-घाटी योजना

प्रारम्भिक—निर्माण द्वारा शान्ति

भारत आज एक शांति के दौर में से गुजर रहा है। यह शांति तोप और तलवार से नहीं हो रही यह हो रही है ठोस निर्माण द्वारा। भारत की विशाल महत्वाकांक्षापूर्ण योजनाएं विशेषतः नदी परियोजनाएं उसके बांध, बिजलीघर, सिंचाई के साधन इस मूक और शांति के मूर्त रूप और इस उभरते हुए भारत के भाग्योदय के महान स्मारक हैं। स्व० प्रधान मन्त्री पं० नेहरू ने एक नदी परियोजना का उद्घाटन करते हुए कहा था "मेरे लिए तो आज यही स्थान मन्दिर, गुरुद्वारा, गिरजाघर और मस्जिद है जहां मानवता के कल्याण के लिए मानव कल्याण करते हैं।"

नदी घाटी योजना की आवश्यकता

भारत की राजनीतिक स्वतन्त्रता के पश्चात उसकी आर्थिक उन्नति के कार्यों को शीघ्रता से आगे बढ़ाना नितान्त आवश्यक हो गया है। यदि हम चाहते हैं कि निश्चित अवधि में हमारे देशवासियों का रहन-सहन ऊंचा हो जावे तो दुर्भिक्ष और निर्धनता को दूर भगाना होगा, कृषि में आधुनिक साधनों का प्रयोग करना होगा नवीन उद्योग ■ ■ स्थापित करने होंगे और प्रकृति की प्रत्येक देन को सुचारु रूप से उपयोग करने के प्रयत्न करने होंगे। संतोष की बात है कि प्रकृति ने उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हमें पर्याप्त साधन भी प्रदान किये हैं। देश के सामने अनेक समस्याएँ हैं। हमें दुर्भिक्ष के दानव को सदैव के लिए नष्ट करना है, खाद्य पदार्थों के उत्पादन में स्वावलम्बन ही नहीं, वरन् निर्यात भी करना है, उद्योग धन्धों का विस्तार करना है, उनके लिए कच्चा माल व शक्ति के साधन उपलब्ध करने हैं, देशवासियों के जीवन-स्तर को ऊंचा करना है। हम यह सुविधा है कि इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पर्याप्त साधन हैं, केवल उनका ठीक तरीके से उपयोगमात्र ही करना है।

हमारे देश में अनेक नदियाँ हैं, जिनमें से अथाह जल शक्ति उपलब्ध हो सकता है। यदि इन नदियों का उचित उपयोग न किया जाय और इन पर नियन्त्रण नहीं किया जाय तो देश में अकाल का दानव बार-बार प्रकट होकर ताण्डव-नृत्य

करने लगे । वर्षा-काल में हमारे देश की नदियों म जल की विशाल मात्रा एकत्रित हो जाती है। यह कहानी वाल दानव के समान ही शक्तिशाली और उच्छ खल हो जाती है । अत उसे यदि हम जल दानव कहकर पुकारें ता गलत न होगा । बाढ का दानव सकडा व हजारा नही वरन लाखा व्यक्तियो व उनकी सम्पत्ति को निगल जाता है। बाढ के द्वारा हान वाले व्यापक विनाश के रोमाचकारी दृश्य उत्पन्न हो जात हैं। किन्तु कहानी वाले दानव के समान यदि इस जल-दानव को भी हम काम म लगा सकें ता यह हमारा सबसे बडा मित्र हो सकता है। चाहो तो उससे खेतों म सिंचाई कराओ उससे कारखाना क लिए बिजली उत्पन्न कराओ और उससे यातायात क लिए जल-माग बनवाओ। वास्तव म हमारी बहु-उद्देशीय योजनाओ का यही आधार है। उक्त योजनाओं के अन्तगत जल रूपी दानव का बाँध रूपी शीशी म बन्द करके उससे सिंचाई कराई जाती है कारखाना और घरा क लिए बिजली उत्पन्न कराई जाती है और यातायात क लिए जल माग बनवाय जात हैं।

बहु-उद्देशीय योजना का अर्थ

'बहु-उद्देशीय योजना' का शाब्दिक विश्लेषण करने स स्पष्ट होता है कि यह तीन शब्दो से मिल कर बनी है—(1) बहु, (2) उद्देशीय, और (3) योजना। अत इसका शाब्दिक अथ हुआ—वह योजना जो केवल एक उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही तयार न की जावे वरन अनेक उद्देश्यों की पूर्ति के हेतु तयार की जावे। सक्षेप म, कहा जा सकता है कि बहु-उद्देशीय योजना स तात्पय ऐसी योजना स है जिसके उद्देश्य एक न होकर अनेक हैं।

बहु-उद्देशीय योजना के उद्देश्य

सामान्यत बहु-उद्देशीय योजना का निमाण निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिए किया जाता है—

(1) बाढ़ नियन्त्रण (Flood Control)—वर्षा-काल म अनेक नदियो म भयकर बाढ आ जाती है और प्रलय का दृश्य उपस्थित हो जाता है। चारो ओर पानी ही पानी दिखाई पडता है। जन धन पशु सबका क्रूर विनाश होने लगता है। बाँध बना कर नदियो का जल कृत्रिम झीलो म एकत्रित कर लिया जाता है। इससे वर्षा-काल म नदियो म जो अधिक जल आता है जिसके कारण बाढ आया करती है उसे इन बाँधो से रोक लिया जाता है। इस प्रकार विस्तृत क्षेत्रों म बाढ की विभीषिका कम हो जाती है।

(2) सिंचाई की सुविधा (Irrigation)—देश म मानसून हवाओ से वर्षा होती है जो स्वभाव स विश्वासघातक हैं। इसके अतिरिक्त पूरे देश म वर्षा की मात्रा भी समान नही है। अत बाँध बनाकर उनसे कम वर्षा वाले क्षेत्रो म सिंचाई करना इन योजनाओं का एक प्रमुख उद्देश्य है।

(3) जल विद्युत का उत्पादन (Hydro electricity)—किसी भी देश की आर्थिक व औद्योगिक प्रगति उस समय तक नहीं हो सकती जब तक कि वहाँ

सस्ते शक्ति के साधन उपलब्ध न हो। इन बाँधो के जल का उपयोग सस्ती जल विद्युत बनाने म भी किया जाता है। भारत जस देश म जहाँ पट्रोल की बहुत कमी है और कोयल की खानो का ठीक वितरण नही है, जल विद्युत उत्पादन की बहुत आवश्यकता है।

(4) जल यातायात का विकास (Water Communication)—यातायात का सबसे सस्ता साधन जल यातायात है। देश के औद्योगिक उत्पादन के कच्च माल को एक स्थान स दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए यह आवश्यक है कि जल मार्गों का विकास किया जावे। नहरो का प्रयोग सिंचाई के अतिरिक्त यातायात के लिए भी हो सकता है। दामोदर नदी से दुर्गापुर के निकट एक ऐसी नहर निकाली गई है, जिसमे 65 Kms तक जल यातायात होता है। इससे दामोदर घाटी और कलकत्ता के बीच परिवहन हो रहा है तथा रेलो का भार कम हो रहा है। राजस्थान नहर के द्वारा भी कांदला तक परिवहन हो सकेगा।

(5) वन एव भूमि सरक्षण (Forests and Soil Conservation)—इन योजनाओ का एक मुख्य उद्देश्य नए वन लगाना और पुराने वनो को विकसित करना है। इसम भूमि का कटाव भी रुकेगा क्योकि व अनियन्त्रित रूप स बहने वाली नदियो के प्रभाव को नियन्त्रित कर देत हैं। जो भूमि पहले बजर थी उसे पुन प्राप्त कर सकते हैं।

(6) मछली व्यवसाय को प्रोत्साहन—नदियो को रोककर जो बाँध बनाये जाते है, उनम मछलियाँ भी पालते हैं। इससे देश म मछली का व्यवसाय बढ़ेगा और देश म मछलियो की जो कमी है उसे भी दूर करने म सहायता मिलेगी।

(7) पीने के जल का व्यवस्था—नदियो की घाटियो के अधिकाश भागो म मनुष्य व पशु जल के लिए नदियो पर ही निर्भर करते हैं। इन बहु उद्देशीय योजनाओ का एक उद्देश्य यह भी होता है कि उस क्षेत्र के मनुष्यो व पशुओ को वर्ष भर तक स्वच्छ पीने का जल उपलब्ध होता रहे।

(8) मलेरिया का नियन्त्रण (Malaria Control)—नदियो की घाटियो म अनेक स्थलो पर अभी भी दलदल हैं। अनेक ऐसे स्थान हैं जो नीचे हैं और मानसून काल म वहाँ नदी का जल एकत्रित हो जाता है और वर्ष के अधिकाश भागो म इसी प्रकार जमा रहता है। ऐसे भाग मच्छरो की उत्पत्ति के केन्द्र व मलेरिया के कारण बन जाते है। बहु-उद्देशीय योजना के अन्तगत मच्छरो का नाश और मलेरिया पर नियन्त्रण की चेष्टा की जाती है।

(9) मनोरजक स्थानो की सुलभता—बाँधो के निकट मनोरजक स्थानो व क्रीडा-स्थलो के विकास का प्रयत्न किया जाता है। बाँधो म नौका विहार व मछली के शिकार की व्यवस्था कर दी जाती है तथा निकटवर्ती क्षेत्रो म सुन्दर दृश्यो को सुरक्षित रखने की चेष्टा की जाती है। इनसे निकटवर्ती औद्योगिक केन्द्रो के निवासियो को मनोरजक स्थान प्राप्त हो जाते हैं और भ्रमण-केन्द्रो के विकास स राष्ट्रीय आय म भी वृद्धि होती है।

(10) अन्य उद्देश्य—बहु उद्देशीय योजनाओं के अनेक अन्य उद्देश्य भी हो सकते हैं जैसे, पशुओं के लिए चारा उपलब्ध करना, ईंधन प्राप्त करना, लघु व कुटीर उद्योगों का विकास आदि।

बहु-उद्देशीय योजनाओं का आरम्भ

संयुक्त राज्य अमेरिका ने टनसी घाटी योजना (Tennesse Valley Project) में जो सफलता प्राप्त की उसने इस विचार को अनेक देशों में प्रोत्साहन दिया। यहाँ एपेलेशियन पर्वत से टेनेसी नदी पश्चिम की ओर प्रवाहित होती है। उस नदी में प्राय बाढ़ आ जाती थी, जिससे मनुष्यों तथा सम्पत्ति की बड़ी क्षति होती थी। अत इस नदी की बाढ़ के वेग एवं पानी को कम करने के लिए बीस बाँध बनाये गये और इन बाँधों में एकत्रित पानी को सिंचाई तथा जल विद्युत के काम में लेने लगे। इस प्रकार एक ही योजना से अनेक काम होने लगे। इस प्रकार की योजना को **बहु-उद्देशीय योजना** अथवा **बहु सूत्री योजना** अथवा **बहुमुखी योजना** अथवा **बहुध्येयी योजना** कहने लगे।

प्रमुख नदी घाटी योजनाएँ

नीचे भारत की प्रमुख नदी घाटी योजनाओं का विवरण दिया जा रहा है—

(1) दामोदर घाटी योजना (Damodar Valley Project) (पश्चिमी बंगाल एवं बिहार राज्यों के लिए)—

परिचय—दामोदर नदी बिहार के पालामऊ जिले में छोटा नागपुर के पठार में लगभग 900 मीटर की ऊंचाई से निकलती है। इसका उदगम स्थान कर्क रेखा के निकट उत्तर में 85 देशान्तर के निकट है। इस नदी की कुल लम्बाई लगभग 600 Kms है। बाराकुर जमुनियाँ और बोकारो इसकी प्रमुख सहायक नदियां हैं। बिहार व बंगाल की सीमा पर इसमें बाराकुर नदी मिलती है। यहाँ इसकी घाटी की चौड़ाई लगभग 30 Kms है। पहले यह नदी पूर्व की ओर बहती है किन्तु बर्दवान नगर के निकट आकर दक्षिण की ओर मुड़ जाती है। यह नदी लगभग 290 Kms बिहार में प्रवाहित होकर पश्चिम बंगाल में प्रवेश करती है और बाद में कलकत्ता से लगभग 50 Kms नीचे (फालता के सामने) हुगली नदी में मिल जाती है। आज से लगभग 200 वर्ष पहले दामोदर नदी कलकत्ता से लगभग 80 Kms उत्तर में हुगली नदी में गिरती थी, किन्तु अब यह कलकत्ता से लगभग 50 Kms दक्षिण में हुगली नदी में गिरती है। इस प्रकार पिछले लगभग 200 वर्षों में यह नदी अपना मुहाना 130 Kms दक्षिण में बनाने लगी। इस नदी को शोक की नदी कहते हैं क्योंकि इस नदी में प्राय बाढ़ आया करती है जिससे जान व माल की बहुत क्षति होती है। यद्यपि अब इस उच्छृंखल नदी का मानमर्दन हो चुका है और उसमें आने वाली बाढ़ें एक बीती हुई कहानी बन चुकी हैं।

सूत्रपात—सर्वप्रथम सन 1883 में भारत की अंग्रेजी सरकार ने बाढ़ रोकने की दृष्टि से जाँच की एवं सन् 1886 में एक योजना बनी, जिसके अनुसार दामोदर

नदी एवं उसकी सबसे बड़ी सहायक नदी बाराकुर पर 16 बाँध बनाने का विचार किया गया, किन्तु योजना कार्यान्वित नहीं की गई। सन् 1920 में दूसरी योजना बनी, वह भी कागजों पर रह गई।

सन् 1943 में इसकी भयंकर बाढ़ से बहुत क्षति हुई। सरकार ने डॉ० भाभा की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की जिसने यह योजना बनाई, तत्पश्चात् सन 1946 (मई) में योजना को वर्तमान रूप मिला। किन्तु कार्य सन 1948 से ही आरम्भ हो सका।



चित्र 12

क्षेत्र—दामोदर घाटी कलकत्ता के उत्तर पश्चिम में है। दामोदर घाटी का क्षेत्र पश्चिम में कोडरमा से प्रारम्भ होकर पूर्व में कलकत्ता तक विस्तृत है। इस क्षेत्र की प्रमुख नदी दामोदर और उसकी 9 सहायक नदियाँ हैं। दामोदर घाटी में बिहार

के पांच और पश्चिमी बंगाल के चार जिले सम्मिलित हैं। घाटी की कुल जनसंख्या लगभग 50 लाख और क्षेत्रफल 23,950 वर्ग Kms है।

प्रबन्ध—इस योजना का कार्य दामोदर घाटी कारपोरेशन द्वारा हो रहा है। यह कारपोरेशन केन्द्रीय लेजिसलेचर के एक्ट द्वारा जुलाई 1948 में स्थापित किया गया है। इस कारपोरेशन के भागीदार भारत सरकार, बिहार सरकार व पश्चिमी बंगाल सरकार हैं। इसका नियन्त्रण एक चेयरमेन व दो सदस्यों द्वारा हो रहा है। इस कारपोरेशन का कार्यालय कलकत्ता में है।

व्यय—दामोदर घाटी योजना के सम्पूर्ण होने के लिए 170 करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान है। पहले व्यय राशि का अनुमान 55 करोड़ रुपये था। इस राशि का प्रबन्ध भारत सरकार, बिहार सरकार व पश्चिमी बंगाल सरकार करेंगी। संयुक्त राज्य अमरिका से इस योजना के लिए 3 8 करोड़ डालर का ऋण प्राप्त हो चुका है। अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ ने दामोदर घाटी योजना के लिए 8 82 करोड़ रुपये की सहायता देना स्वीकार कर लिया है।

उद्देश्य—दामोदर घाटी योजना के अनेक उद्देश्य हैं, उनमें से प्रमुख निम्न हैं :—(1) सिंचाई के लिए नहरों का निर्माण करना। (2) जल विद्युत उत्पन्न करके उद्योग धन्धों के लिए शक्ति उपलब्ध करना तथा नगर व ग्रामीण क्षेत्रों में प्रकाश का प्रबन्ध करना। (3) बाढ़ पर नियन्त्रण करना। (4) पर्याप्त पानी देकर जल मार्गों का विकास करना तथा नाव यातायात को सुलभ बनाना। (5) मछली-पालन तथा व्यवसाय को प्रोत्साहन देना। (6) वन क्षेत्र में वृद्धि करना। (7) मिट्टी के कटाव को रोकना। (8) मलेरिया पर नियन्त्रण करना।

योजना—दामोदर घाटी योजना संयुक्त राज्य अमरिका की टेनेसी घाटी योजना के रूप में बनाई गई है। सम्पूर्ण योजना के अन्तर्गत 8 बांध तथा एक बरेज का निर्माण रखा गया है। आर्थिक कारणों मशीनों की उपलब्धि में कठिनाई आदि समस्याओं के कारण दामोदर घाटी योजना को दो चरणों (Stages) में पूरा करने की योजना है। प्रथम चरण में चार बांध, तीन जल विद्युत केन्द्र और एक बरेज बनाने की योजना है। तिलया, कोनार, मथान और पचेत पहाड़ी प्रत्येक पर एक एक बांध बनाने की योजना है। तिलया, मथान और पचेत पहाड़ी प्रत्येक पर एक एक विद्युत केन्द्र का निर्माण होगा। दुर्गापुर में बरेज बनेगा। द्वितीय चरण में अय्यर, बोकारो, बालपहाड़ी और बर्मो-बाघो का जल विद्युत के लिए निर्माण किया जावेगा।

इस योजना के अन्तर्गत 8 बांधों तथा बरेज का विवरण इस प्रकार है :—

प्रथम चरण—दामोदर घाटी योजना के प्रथम चरण में 4 बांधों तथा एक बरेज का निर्माण हो रहा है :—

(1) तिलया बांध (Tilaiya Dam)—यह बांध बिहार राज्य के हजारीबाग जिले में बाराकुर नदी पर उसके तथा दामोदर नदी के संगम से 210 Kms ऊपर बनाया गया है। यह बांध पूर्वी रेलवे लाइन के कोडरमा स्टेशन के दक्षिण में

है तथा इसकी गणना भारत म सबस बड बिजली घरो म की जाती है । इस समय इसम 1½ लाख थमल बिजली उत्पन्न करने की क्षमता है और पूरी क्षमता की विद्युत उत्पन्न कर रहा है ।

इसकी जल विद्युत् जमशदपुर व हीरापुर (बनपुर) म स्थित इस्पात क कारखाना म, घाटसिला (Ghatsila) म स्थित ताँब की खाना व शोधक कारखाना म, पश्चिमी बगाल व बिहार का कोयला खाना म आसनसोल सिंदरी व कलकत्ता तथा इनक निकटवर्ती भागा म सीमण्ट क नये कारखाना तथा इ जीनियरिंग उद्योग मे प्रयाग की जा रही है ।

दामोदर घाटी योजना के अ तगत यहाँ दो लाख किलावाट जल विद्युत उत्पन्न करन की योजना है । बाद म दामोदर घाटी के अ य जल विद्युत गह और बोकारो का विद्युत्-गृह एक-दूसर स तारो द्वारा मिला दिय जावेंगे ।

(4) बर्मो—यह भी दामोदर नदी पर ही बनाया जायेगा । इसस 28 हजार किलोवाट जल विद्युत और एक लाख थमल बिजली प्राप्त हा सकेगी ।

सम्भावित लाभ अथवा प्रभाव—दामोदर घाटी योजना पूरी हो जाने पर अनेक लाभ होंग, जिनम स प्रमुख निम्नलिखित है —

(1) बाढ़ नियन्त्रण—दामोदर नदी क क्रूरतापूण अत्याचार स बगाल व बिहार तिलमिला उठे थ । वर्षा ऋतु म यह नदी चारा ओर तबाही मचा दती थी । जो भी उसकी भयानक लपेट म आता सदा के लिए सवनाश के गत म खो जाता । आज भी इन राज्यो के निवासी दामोदर के तीव्र प्रवाह म बहत हुए मनुष्य जान वरो, खतो वृक्षो आदि के वीभत्स दृश्यो को नही भूल सके हैं हालांकि अब इस उच्छ ङ्खल नदी का मानमदन हो चुका है और उसम आने वाली बाढ़ें एक बीती हुई कहानी बन चुकी है । उच्छखल दामोदर नदी अब झीलो की एक कतार मात्र ही रह गई है और बाढ समस्या अब पूणतया हल हो चुकी है ।

(2) वन क्षत्र मे वृद्धि—दामोदर घाटी कारपोरेशन न घाटी क ढालो व बजर भूमि पर नये वन लगान व पुरान वना का रक्षा क लिए योजना बनाई है । कारपोरशन द्वारा 3 हजार एकड भूमि म वन लगाय जा चके हैं । बिहार वन विभाग के सहयोग स लगभग 20 हजार एकड भूमि म वन लगाये जा चुक है। इस प्रकार पथरील व भूर क्षेत्र हरी वनस्पति स ढक गय है । इन वना स इमारती लकडी ईधन चारा व अ य पदाथ मिलेंग ।

(3) मिट्टी के कटाव से सुरक्षा—दामोदर घाटा क ऊपरी क्षत्र (Upper Attachment Area) म लगभग 7 हजार वग मील मिट्टी क कटाव स पीडित हैं । अब उस क्षत्र म मिट्टी की सुरक्षा की जा रही है । इसस भूमि की उत्पादन शक्ति तो बढ़गी कि तु साथ ही बाधो के तला म मिट्टी भी जमा न हो पावगी ।

(4) मछली पालन—दामोदर घाटा क चारा बडे बाँधा का उपयाग बडी मात्रा म मछली-पालन क लिए किया जा सकता है । अभी तो तिलय्या व कोनार

दो बाँधों मे मछली पालन का कार्य व्यापारिक पैमाने पर किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त खाद्य-पदार्थ तो उपलब्ध होगा ही किन्तु साथ ही स्थानीय मनुष्यों को रोजगार भी मिलेगा।

(5) मलेरिया नियन्त्रण—दामोदर घाटी योजना से एक महत्वपूर्ण लाभ यह भी हुआ है कि मलेरिया उन्मूलन काफी अंश तक हो चुका है। आशा है, निकट भविष्य में इस समस्या का पूर्णत निवारण हो जावेगा।

(6) सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि—दामोदर नदी, जो अभी तक केवल एक मौसमी नदी थी, अब इसमे वर्षपर्यन्त सिंचाई हो सकेगी। दुर्गापुर बैरेज से (140+90+2,270 Kms) लगभग 2,500 Kms लम्बी नहरें व उप-नहरें सिंचाई के लिए निकाली गई हैं। निचली घाटी मे 10 लाख एकड़ से भी अधिक भूमि पर सिंचाई होने का अनुमान है।

(7) कृषि क्षेत्र में प्रभाव—पहले केवल 1 85 लाख एकड़ भूमि पर ही कृषि होती थी, किन्तु अब 10 44 लाख एकड़ भूमि खरीफ की फसल के लिए और 3 लाख एकड़ भूमि रबी की फसल के लिए उपलब्ध है। इस योजना ने सीढ़ीनुमा खेती व फसलों का हेर फेर (Terracing and Rotation of Crops) सम्भव कर दिया है। इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र में पहले जहाँ वर्षा मे एक फसल भी अनिश्चित थी, वहाँ अब दो अथवा इससे अधिक फसलें सम्भव हो गई हैं। दामोदर नदी की निचली घाटी की भूमि, जिसमे पश्चिमी बंगाल के बर्दवान, हावड़ा व बाकुरा जिले हैं, अत्यन्त ही उपजाऊ क्षेत्र हैं। चावल, गन्ना व जूट की खेती के क्षेत्र मे व उत्पादन मे वृद्धि होगी जिससे अनेक समस्याओं का निवारण हो जायेगा।

(8) सस्ती जल विद्युत—दामोदर घाटी योजना से बड़ी मात्रा में सस्ती जल विद्युत उपलब्ध हो रही है। इससे विभिन्न क्षेत्रो मे चहुँमुखी प्रगति होगी।

बोकारो थर्मल प्रोजक्ट तथा तिलय्या जल विद्युत गृह बन जाने के पश्चात विद्युत की माग निरन्तर बढ़ रही है।

(9) खनिज क्षेत्र मे—हमारे देश में दामोदर घाटी क्षेत्र खनिज की दृष्टि से सबसे धनी है। देश के कुल लोहे का 98%, कोयले का लगभग 90% अभ्रक का 70% क्रोमाइट का 70% मैंगनीज का 10% इस क्षेत्र में भण्डार है। इसके अतिरिक्त तांबा जस्ता, चूने का पत्थर, चीनी मिट्टी आदि अन्य खनिज भी पाये जाते हैं। सस्ती जल विद्युत प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होने पर खानों को सस्ती शक्ति प्राप्त होगी।

(10) यातायात मे सुविधा—अनेक रेलें विद्युत से चलाई जावेगी। पूर्वी रेलवे हावड़ा मुगलसराय सैक्शन और दक्षिण-पूर्वी रेलवे के हावड़ा-खड़गपुर सैक्शन पर रेलों को जल विद्युत से चलाने की योजना बनाई जा चुकी है तथा इस दिशा में कार्य भी तेजी से हो रहा है। दामोदर घाटी कारपोरेशन ने हावड़ा बर्दवान सैक्शन की रेल को विद्युत देना स्वीकार कर लिया है, बल्कि इस सैक्शन के एक भाग (हावड़ा-बंदल सैक्शन) को सन् 1957 से ही जल विद्युत दे रहा है।

दुर्गापुर बैराज से बायीं ओर से निकाली गई नहर 135 km. लम्बी है जो सिंचाई व यातायात दोनों ही के लिए है। इस नहर के द्वारा कलकत्ता व कोयला क्षेत्रों के मध्य पानी के मार्ग की समस्या को सरल बनाया जा सकेगा। इससे सड़क मार्ग व रेल मार्ग पर न तो भार कम होगा ही किन्तु बाढ़ से भी बचा होगा।

(11) **स्वच्छ जल की उपलब्धि**—इस योजना के पूरे हो जाने पर औद्योगिक व घरेलू कामों के लिए प्रचुर मात्रा में स्वच्छ जल उपलब्ध होगा। कई कस्बे व गाँव जो नदी से काफी दूर स्थित हैं वहाँ स्वच्छ जल की कमी है। इन बाँधों से स्वच्छ जल की निरन्तर पूर्ति होती रहेगी और इस समस्या का निवारण सदैव के लिए हो जायगा।

(12) **पुनर्निवास**—निस्सन्देह ये बाँध इस क्षेत्र में औद्योगिक व कृषि के क्षेत्र में पर्याप्त विकास करेंगे किन्तु उनके पूर्ण हो जाने तक लगभग 75 हजार व्यक्तियों को अपने निवास स्थान आदि छोड़ने पड़ेंगे। लगभग 71 हजार एकड़ भूमि खो जायगी (will be lost) जिसमें से सौभाग्य से लगभग आधी भूमि खराब भूमि है और बहुत कम लोग निवास करते हैं। इनके अतिरिक्त लगभग 45 हजार मकान भी इन बाँधों के गर्भ में समा जावेंगे। तिलय्या, कोनार और बोकारो में तो पुनर्निवास कार्य पूरा हो चुका है और मैथान व पंचेत पहाड़ी क्षेत्र में यह कार्य जारी है। नये क्षेत्रों में उपयुक्त सड़कें, पक्की बस्तियाँ, कुँए, सामुदायिक केन्द्र, पूजा के स्थान, स्कूल, खेल के मैदानों आदि की सुविधा है।

(13) **औद्योगिक क्षेत्र में**—इस घाटी में देश के अनेक औद्योगिक खनिज बड़ी मात्रा में दबे पड़े हैं और अब बाँध व बिजली बनाकर इन खनिजों का उपयोग द्रुत गति से किया जा रहा है अतः देश के औद्योगिक विकास में इस क्षेत्र का विशेष महत्त्व है। इस दृष्टि से ही इस क्षेत्र को अब भारत का रूर (जर्मनी का प्रमुख विश्वविख्यात औद्योगिक क्षेत्र रूर प्रदेश है जो रूर नदी के उत्तर में है) कहा जाने लगा है। इस योजना के पूर्ण हो जाने पर सिंदरी के खाद के कारखाने, चितरंजन के इंजन बनाने के कारखाने, आसनसोल में टेलीफोन के कारखाने, आसनसोल व जमशेदपुर के लोहे व इस्पात के कारखानों और अन्य कारखानों को जल विद्युत प्राप्त होगी।

(14) **अन्य लाभ**—यह योजना महान् है क्योंकि इससे पीड़ित मानवता का कल्याण होने वाला है। इस योजना को पूरा करने में हजारों श्रमिक तथा कर्मचारी लगे हुए हैं अतः इस क्षेत्र में रोजगार की पर्याप्त वृद्धि हुई है। अनेक गृह उद्योगों की स्थापना एवं विकास की पूरी सम्भावना है। सस्ती जल विद्युत उपलब्ध होने के कारण इमारती लकड़ी, लाख व रेशम सम्बन्धी उद्योगों के विकास की भी सम्भावना है। अतः कुछ समय पूर्व जो महानाश का क्षेत्र कहा जाता था अब वह भारत का औद्योगिक प्राण बनता जा रहा है। स्व० पं० नेहरू ने भी इसके लिए कहा था, इस घाटी में नया भारत उत्पन्न हो रहा है। यह हमारे स्वप्नों का भारत है।

(2) भाकरा-नांगल योजना (पंजाब, हरियाना एवं राजस्थान राज्यों के लिए)—

परिचय—भाखरा-नांगल योजना भारत की सबसे बड़ी योजनाओं में से एक है। यह हिमाचल प्रदेश के विलासपुर जिले में शिवालिक पहाड़ियों के नीचे सतलज नदी पर बना है।[1] सन 1909 में पंजाब के तत्कालीन गवर्नर सर लुई डेन ने भाकरा स्थान को देखकर कहा था कि यहां एक विशाल बाँध बनाया जा सकता है। परन्तु उस समय कुछ किया नहीं जा सका। सन 1919 में सिंचाई के लिए बाँध बनाने की योजना प्रस्तुत की गई। सन् 1944 में यह योजना भारत सरकार के समक्ष पूर्ण रूप में प्रस्तुत की गई और सरकार ने इस योजना को स्वीकार कर लिया। दिसम्बर सन 1946 में इस योजना पर कार्य आरम्भ किया गया किन्तु देश के विभाजन तथा अन्य कारणों से कार्य स्थगित कर दिया गया। इस योजना पर जनवरी सन 1948 से पुनः द्रुतगति से कार्य आरम्भ किया गया। इस योजना पर 175 15 करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान है।

उद्देश्य—भाकरा नांगल योजना के प्रमुख उद्देश्य निम्न हैं—(1) सतलज एवं यमुना नदी के बीच के भाग के लिए सिंचाई के साधनों को उपलब्ध करना। (2) सरहिन्द नहर में पानी की मात्रा में वृद्धि करके उसके सिंचाई के क्षेत्र में वृद्धि करना। (3) बीकानेर क्षेत्र को सिंचाई के लिए सुविधाएँ प्रदान करना। (4) जल विद्युत का निर्माण तथा वितरण करना।

योजना—भाकरा-नांगल योजना का मुख्य उद्देश्य सतलज नदी के जल को सिंचाई व विद्युत उत्पन्न करने के लिए प्रयोग में लाना है। इस योजना के प्रमुख भाग निम्नलिखित हैं —

(क) भाकरा योजना[2]—(1) सतलज नदी पर भाकरा स्थान पर 226 मीटर ऊँचा बाँध। (2) भाकरा बाँध के बायीं ओर एक जल विद्युत गृह। (3) भाकरा की नहरी व्यवस्था।

(ख) नांगल योजना—(1) नांगल गाँव के निकट 29 मीटर ऊँचा बाँध। (2) 65 Kms लम्बी नांगल-जल प्रणाली (Nangal Hydel Channel)। (3) गंगूवाल और कोटला स्थान पर एक एक जल विद्युत गृह। (4) 1,104 Kms लम्बी नहरें व लगभग 3,360 Kms लम्बी उप-नहरें।

भाकरा नांगल-योजना लगभग पूरी हो चुकी है। इस पर 175 15 करोड़ रुपये व्यय हुए हैं। स्व० नेहरू ने इस योजना को अक्टूबर 1963 में राष्ट्र को समर्पित किया था।

भाकरा बाँध स्व० प्रधान मन्त्री प० नेहरू के शब्दों में, 'भाकरा बाँध का निर्माण एक चमत्कारपूर्ण एक विराट वस्तु है इसे देखकर रोमांच हो जाता है।'

---

1 भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 'सिंचाई और बिजली का विकास'।

2 *India* 1970 p 290

गाह ने इस बाँध को देखकर कहा था कि 'भाखरा बाँध एशिया के अन्य अनेक देशों के लिए प्रेरणा का स्रोत हो सकता है। इस विकास योजना को एक मित्र देश में घटित देखकर हमें गर्व का अनुभव होता है।'

सतलज नदी पर, रूपड़ (पंजाब) से लगभग 80 Kms की दूरी पर, भाखरा गाँव के निकट एक तंग घाटी में भाखरा बाँध बनाया गया है। 'यह बाँध 226 मीटर (740 फीट) ऊँचा है।'[1] अर्थात् दिल्ली की कुतुबमीनार की ऊँचाई से यह बाँध लगभग तीन गुना है। इसकी गणना विश्व के सबसे ऊँचे बाँधों में होती है। ऊँचाई की दृष्टि से भाखरा-बाँध का स्थान विश्व के बाँधों में तीसरा है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि विश्व में सबसे ऊँचा बाँध अभी तक अमरिका का हूवर बाँध था। वास्तव में, इस बाँध पर प्रत्येक भारतीय को गर्व होना चाहिए। इस बाँध के निर्माण के लिए यह आवश्यक था कि सतलज नदी के प्रवाह की दिशा को बदला जाय। अतः इस उद्देश्य के लिए दो बड़ी-बड़ी सुरंगों का—जिनकी लम्बाई एक एक Km है और व्यास 15 15 मीटर है, निर्माण किया गया। इनमें से नदी के पानी को निकालकर नींव डालने का काम किया गया था। बाँध की नींव बहुत गहरी है, कहीं कहीं तो यह नींव नदी के तल से 67 मीटर गहरी है। खुदाई का काम मशीनों द्वारा किया गया है।

भाखरा बाँध दो ऊँची पहाड़ियों के मध्य बनाया गया है। इस बाँध की ऊँचाई नदी के तल से 226 मीटर है। बाँध के नीचे की चौड़ाई 180 मीटर है। बाँध की लम्बाई तल पर 90 मीटर व ऊपर 530 मीटर है। इस प्रकार इस बाँध की आकृति अँग्रेजी के वी' (V) अक्षर की भाँति है। इस बाँध के बन जाने पर लगभग 164 वर्ग Kms में पानी भरा रहता है। इसके जलाशय में, जिसका नाम गोविन्दसागर है लगभग एक करोड़ क्यूबिक मीटर पानी एकत्र करने की क्षमता है।

भाखरा की नहरें—भाखरा की मुख्य नहर लगभग 175 Kms लम्बी है जो रोपड़ से निकल कर पूर्वी पंजाब के भाग में होती हुई हिसार जिले (हरियाना) की सीमा पर स्थित टोहाना तक पहुँचती है। भाखरा की मुख्य नहर और उसकी शाखाओं की लम्बाई 1 095 Kms और उपशाखाओं की लम्बाई 3 110 Kms है जबकि पलस्तरयुक्त नहरों और शाखाओं की लम्बाई 565 Kms है। भाखरा नहर प्रणाली के चार मुख्य भाग हैं —

(1) **भाखरा की मुख्य नहर व शाखाएँ**—भाखरा की मुख्य नहर विश्व में सबसे लम्बी और सबसे बड़ी पलस्तरयुक्त नहर है। यह नहर रोपड़ से आरम्भ होती है और पूर्वी पंजाब के इलाकों में से गुजरती हुई लगभग सीधी जिला हिसार

---

1 *Major Water and Power Projects of India* (Govt of India Publication) p 11

(हरियाना) की सीमा तक जाती है। यहाँ यह दो शाखाओं—एक पलस्तरयुक्त (भाकरा मेन ब्राच) और दूसरी बिना पलस्तर की (फतेहाबाद ब्राच) और तीनो उप नहरो म विभक्त हो जाती है।

(2) बिस्त दोआब नहर—यह नई नहर है जो रोपड के दाहिन हाथ की ओर म निकाली गइ है। यह पजाब म होशियारपुर, जाल धर और कुछ अन्य जिला म सिंचाई की सुविधा दे रहा है।

(3) नरवाना शाखा नहर—यह भाखरा की प्रमुख नहर म स 50वें Kms पर निकाली गई है। यह नहर 104 Kms लम्बी और पलस्तरयुक्त है। यह नहर सरहिन्द म अम्वाला तक रलव लाइन क समान्तर चलता है और रास्ते म अनेक नदिया—पटियाला नदी घग्गर नदी, टागरी नदी मारकडा नदी और सरस्वती नदी को पार करती है। इस नहर का मुख्य उद्देश्य सिरसा ब्राच क लिए पानी देना है। इसक अतिरिक्त हरियाना क जिला करनाल के कुछ भागा म सिंचाई होनी है।

(4) सरहिन्द नहर प्रणाली—भाकरा नहर प्रणाली का एक पहलू सरहिन्द नहर म पानी की मात्रा लगभग 10 गुनी अधिक बनाना है। इसस पूर्वी पजाब के नय क्षेत्रो म सिंचाई होनी है। कई पुरानी नहरा म पानी की मात्रा बढ सकेगी।

नागल योजना—नागल बाँध भी निर्माण कौशल का चमत्कार है। नागल गाँव क निकट भाकरा बाँध से 12 Kms नीचे नागल बाँध स्थित है। यह बाँध 305 मीटर लम्बा और 29 मीटर ऊँचा है। इससे जो नहर निकाली गई है उसकी लम्बाइ 65 Kms है। यह नहर रोपड स्थान पर भाकरा नहर स मिल जाती है। नागल नहर सतलज नदी के समा तर चलती है। यह नहर भाकरा की मुख्य नहर और उसकी उपशाखाओ को पानी देती है। इसक अतिरिक्त इसस भारी मात्रा म जल विद्युत भी उत्पन्न की जा रही है। यह नहर शिवालिक पवत की तराई के बडे ही कठिन तथा बीहड प्रदश म होकर गुजरती है।

नागल बाँध हर प्रकार से तयार हो गया है। इस बाँध म 26 हजार एकड फुट पानी एकत्रित किया जा सकता है।

दो बिजली घर—नागल नहर पर दो बिजली घर बनाय गये हैं—पहला बिजलीघर नागल नहर के 20वें किलोमीटर पर गगूवाल म और दूसरा 30व किलोमीटर पर कोटले स्थान पर। इन दोनो स्थानो पर प्राकृतिक प्रपात हैं जहाँ से नहर 80 मीटर की ऊँचाई स गिरती है। इन दोनो बिजलीघरा म से प्रत्यक म 23 24 हजार किलोवाट के तीन विद्युत उत्पादक यन्त्र लगाय गये हैं। गगूवाल का बिजली घर सन 1955 मे बिजली बनाने लगा है तथा इस बिजली घर पर 62 करोड रुपये के व्यय का अनुमान है। भाकरा नागल योजना क जल विद्युत गृहा से पजाब के अमृतसर, लुधियाना पटियाला, जलधर भटिंडा फाजिल्का, फीरोजपुर, धारीवाल, कपूरथला, रोपड, नाभा, मोगा, हरियाना के अम्वाला, रोहतक, पानीपत भिवानी, हिसार, फीरोजपुर करनाल सोनपत आदि, एव राजस्थान के बीकानेर

गगानगर, चूरू, सीकर झुंझुनू आदि कस्बा, नगरों व जिलों म जल विद्युत पहुँच गई है। हरियाना सरकार ने दावा किया है कि राज्य के प्रत्यक गाव म वि द्युत पहुँचा दी गयी है।

योजना से लाभ—भाखरा नागल योजना पजाब हरियाना व राजस्थान राज्यो की सम्मिलित याजना है। भारत की बहुमुखी नदी घाटी याजनाओ म भाखरा नागल योजना सबस बडी है। यही नहीं यह योजना विश्व की बहुमुखी नदी घाटी याजनाओ म एक विशिष्ट स्थान रखती है। इस याजना स निम्नलिखित लाभ हैं—

(1) **अतिरिक्त भूमि मे सिचाई**—इस याजना स पजाब हरियाना व राजस्थान की लगभग 14 50 लाख हेक्टर भूमि पर सिचाइ हान का अनुमान है। इस योजना स लाभ मिलना आरम्भ हो गया है।

(2) **अकाल दानव का अत**—पजाब, हरियाना व राजस्थान क सूखे प्रदेश अनक शताब्दियों स सहायता के लिए पुकार कर रहे थे। इनका अनक बार भयकर अकाल का सामना करना पड रहा था। इस योजना के पूर्ण हो जाने पर महान सतलज नदी क जल का अब मानव की सवा के लिए दोहन होने लगा है जो इस सूखी प्यासी और आतपग्रस्त भूमि की वर्षपर्यन्त सिचाई के लिए प्रयुक्त हो रहा है। इसस यहाँ की शुष्क भूमि मुस्कराते और लहलहाते हुए खेतो म परिवर्तित हो रही है। अकाल का दानव यहा से पलायन कर गया है।

(3) **कृषि उपज मे वृद्धि**—इन क्षेत्रों म गेहू, चावल गन्ना लम्बे रेशे की कपास, तिलहन व अन्य कृषि पदार्थों की उपज म वृद्धि हो रही है।

(4) **पशुओं के लिए चारा**—इस क्षेत्र म अब पशुओ क लिए पर्याप्त चारा उत्पन्न हो रहा ह। अत इस क्षत्र म पशुओ व उनस सम्बन्धित उद्योग (जस डेरी उद्योग, ऊन उद्योग आदि) विकसित हो रह हैं।

(5) **व्यापारिक मण्डियों की स्थापना**—इस क्षत्र म खाद्य पदार्थों व औद्योगिक कृषि पदार्थों की उपज म वृद्धि होने क कारण अनक कस्बे व्यापारिक मण्डियो क रूप म बदल रह ह।

(6) **जल विद्युत की प्राप्ति**—इस याजना स लगभग 6 लाख किलोवाट जल विद्युत प्राप्त हो सकगी। अत सूती वस्त्र चीनी ऊनी वस्त्र कागज आदि क कारखान स्थापित होने की सम्भावना है। हनुमानगढ (बीकानेर विभाग) म कृत्रिम खाद का कारखाना स्थापित किया जा सकता है। हरियाना के शत प्रतिशत गाँवा म विद्युत पहुँच चुकी है।

(7) **राजगार क साधनों म वृद्धि**—नय बड उद्योग व लघु एव कुटीर उद्योगों के विकास हान स लाखों व्यक्तियों को राजगार की सम्भावनाए हो गइ हैं।

(3) हीराकुड योजना—

परिचय—उडीसा राज्य गत सकडो वर्षा स महानदी की विनाशकारी बाढ़ो स तथा अकाल म पीडित रहा है। महानदी का उद्गम मध्य प्रदेश के रायपुर जिल

म है। इस नदी की लम्बाई लगभग 885 Kms है। इसमे प्रतिवर्ष 7 40 करोड एकड फीट पानी का प्रवाह होता है, जिसमे से 5 प्रतिशत से भी कम भाग काम मे आता है शेष बगाल की खाडी मे प्रवाहित हो जाता है।

योजना—इस योजना को दो चरणो (Two Stages) मे पूरा किया गया है—

प्रथम चरण—(1) महानदी पर हीराकुड बाँध का निर्माण, (2) हीराकुड पर जल विद्युत गृह।

द्वितीय चरण—(1) हीराकुड के नीचे टीकापारा और नीरा स्थानों पर एक एक बाध (2) चिपलिमा (Chiplima) विद्युत गृह।

प्रथम चरण सन 1948 मे हीराकुड बाध निर्माण का काय आरम्भ किया गया क्योंकि यह बाध सबसे सरल और शीघ्र फलदायी माना गया है। यह बाध उडीसा मे सम्बलपुर से 10 Kms पश्चिम की ओर महानदी पर हीराकुड स्थान पर बनाया गया है।

उडीसा मे महानदी के मुख्य प्रवाह पर बना हीराकुड ससार का सबसे लम्बा बाँध है। इसकी पूरी लम्बाई—एक छोर से दूसरे छोर तक—4,800 मीटर है। जलाशय का क्षेत्रफल 904 वग Kms है—जो एशिया मे सबसे बडी कृत्रिम झील है। इसमे 47 लाख 20 हजार एकड फुट पानी तो हमेशा रहता है और इसमे 66 लाख एकड फुट पानी सचय करने की क्षमता है। इसके तट का दायरा 645 Kms है। इस बाँध की अधिकतम ऊँचाई 60 मीटर है। बाँध के दाहिनी ओर 10 Kms और बायीं ओर 9 5 Kms लम्बे मिट्टी के दो पुश्ते (बाध) हैं।

हीराकुड बाध योजना की विशेषता है, उसकी नहर प्रणाली। इस प्रणाली मे तीन मुख्य नहरें हैं। दाहिनी ओर की नहर का नाम 'बरगढ नहर' है, बायी ओर दो नहरें—ससन नहर और सम्बलपुर नहर—है। ये तीनो नहरें हीराकुड जलाशय से निकलती हैं।

हीराकुड बाध बन जाने पर महानदी पर दो बाध और बनाने की योजना है। पहला बाध तो मीनपुर जिले के टीकापारा स्थान पर और दूसरा नीरा स्थान पर बनेगा। बाँध बनाकर तीन नहरें निकालने की योजना है। सरकारी अनुमान के अनुसार यह बाध 100 वर्षों मे भी अधिक काम देगा।

हीराकुड पर जल विद्युत गृह भी बनकर पूरा हो चुका है जिसकी जल-विद्युत शक्ति उत्पादन क्षमता 1 23 लाख किलोवाट है। यहाँ से जल विद्युत हीराकुड, रूरकेला पुरी, सम्बलपुर सुन्दरगढ कटक आदि अनेक स्थानो पर पहुँचाई जा रही है।

हीराकुड योजना का प्रथम चरण पूरा हो चुका है जिस पर 67 82 करोड रुपये व्यय हुए हैं। इस दूसरी योजना से लगभग 16 लाख एकड भूमि पर सिंचाई हो सकेगी, जो कटक और पुरी जिलो मे है।

द्वितीय चरण पर लगभग 15 करोड रुपये व्यय हुए है। चिपलिमा विद्युत-

गृह बन कर पूरा हो गया है जिसकी उत्पादन शक्ति 72 हजार किलोवाट है। हीराकुड जल विद्युत्-गृह का विस्तार हो चुका है। इस प्रकार दूसरे चरण का भी निर्माण सितम्बर 1963 म हो चुका है। इस प्रकार सम्पूर्ण हीराकुड बाँध योजना की जल विद्युत उत्पादन शक्ति (चिपलिमा 72 000 किलोवाट + हीराकुड 1 98,000 किलोवाट) 2 70 लाख किलोवाट है।

सम्भावित लाभ—इस योजना के पूरे हो जाने पर बाढ पर नियन्त्रण हो गया है। बाँध से जो तीन नहरें निकाली गई हैं उनमे व उनकी शाखाओं से सिंचाई हो रही है। चावल की उपज म पर्याप्त वृद्धि हुई है। छोटे जहाज हीराकुड बाँध तक आ सकेंगे, जिससे फलस्वरूप जल यातायात म और भी सुविधा होगी। इस योजना स 2 70 लाख किलोवाट विद्युत उत्पन्न होगी। इस योजना म सबसे अधिक लाभ सम्बलपुर, सातपुर कटक व पुरी जिलों को होगा। बाँध स लगभग 130 Kms दूर राजगापुर म सीमेण्ट के एक कारखाने की स्थापना हो चुकी है। रूरकेला के लोहे के कारखाने को भी यहीं स विद्युत दी जा रही है। कागज, कपड़ा चीनी सीमेण्ट, एल्यूमीनियम आदि के अनेक कारखाने स्थापित हो जावेंगे। इस प्रकार इस क्षेत्र के औद्योगिक विकास म इस योजना का पूर्ण योग है।

(4) नागार्जुनसागर योजना—

परिचय—यह दक्षिण भारत की सबसे बडी योजना है। यह बहुमुखी योजना आन्ध्र के प्रयत्नों स पूरी की जा रही है। इसका शिलान्यास स्व० प० नेहरू ने दिसम्बर सन् 1955 में किया था। यह योजना लगभग पूरी हो गई है।

इस योजना के अनुसार नागार्जुन कोंडा म कृष्णा नदी के आर-पार 113 मीटर ऊँचा पक्का बाँध बनाया गया है। यह बाध दक्षिण भारत म सबसे ऊँचा है। बाँध का स्थान आन्ध्र राज्य के गन्टूर जिले म मछरला रेलवे स्टेशन स 16 Kms दूर और नन्दीकोंडा गाव स 2 5 Kms नीचे है। इस बाँध की लम्बाई 1450 मीटर है।

योजना के तीन खण्ड—यह योजना तीन खण्डों म पूरी होगी। पहला खण्ड पचवर्षीय योजना म सम्मिलित कर लिया गया है और पूरा हो गया है।

योजना के प्रथम खण्ड मे नदी के दाहिने किनारे पर 225 Kms लम्बी एक नहर बनाई गई है जिसम 14 हजार घनफुट पानी प्रति सैकण्ड जाता है। नदी के बायें किनारे पर भी एक नहर बनाई गई है जो 175 Kms लम्बी है। योजना म इस खण्ड पर 75 करोड़ 8 लाख रुपया व्यय होने का अनुमान है। इससे गन्टूर, कुनूल, नीलौर खम्मम और नलगोंडा जिलों म 2 13 लाख हेक्टेयर भूमि म सिंचाई होगी।

योजना के दूसरे खण्ड मे बाँध और नहरें पूरी हो जावेगी। तीसरे खण्ड म एक जल विद्युत-गृह बन जावेगा जिसम 75 हजार किलोवाट विद्युत प्राप्त हो जावेगी।

योजना के पूरे होने पर आन्ध्र म सुख व समृद्धि का युग आ जायगा।

इस योजना में उद्योगों को विद्युत प्राप्त होगी और खाद्य उत्पादन में लगभग 14 लाख टन की वृद्धि होगी। पूरी योजना पर 162 करोड़ व्यय होने का अनुमान है।

(5) कोसी योजना—

पश्चिम कोसी नदी का उदगम स्थान हिमालय पर्वत (नेपाल की पहाड़ियां) में है। वहाँ से यह नेपाल राज्य में बहती हुई बिहार राज्य में प्रवेश करती है। फिर बिहार राज्य में ही आगे चलकर गंगा नदी में मिल जाती है। इस नदी में अनेक बार बाढ़ आती रही हैं जिसमें मनुष्य, पशु एवं सम्पत्ति का बहुत विनाश होता है। पिछले 200 वर्षों में यह नदी 125 किलोमीटर पीछे हट गई है।

उद्देश्य—ऊपर बतलाया जा चुका है कि इस योजना का मुख्य उद्देश्य बाढ़ रोकना ही है। यह एक बहुमुखी योजना है अतः इसके निम्न अन्य उद्देश्य भी हैं — (1) सिंचाई की सुविधा प्रदान करना (2) जल विद्युत उत्पादन, (3) भूमि का कटाव रोकना (4) जल मार्गों का विकास (5) मछली व्यवसाय का विकास, (6) मलेरिया पर नियन्त्रण।

योजना—नेपाल और भारत सरकार के मध्य इस योजना के विषय में 25 अप्रैल 1954 में एक समझौता हो चुका है। नेपाल के राजा महेन्द्र ने 2 मई 1959 को कोसी बाँध का शिलान्यास किया था। इस योजना पर 85 35 करोड़ रुपये खर्च होंगे। कोसी नदी योजना दो चरणों (Stages) में पूरी की जावेगी।

प्रथम चरण—(1) नेपाल में हनुमाननगर के समीप छत्र-कन्द्रा के आर-पार कोसी नदी पर 237 75 मीटर ऊँचा एक बाँध बनाया गया है। इस जलाशय में 14 5 लाख हेक्टयर मीटर पानी एकत्रित करने की क्षमता है।

(2) कोसी नदी के दोनों ओर लगभग 250 Kms लम्बे दो पुश्ते बनाये जावेंगे। इनका उद्देश्य बाढ़ को रोकना होगा।

(3) बायां ओर कोसी नहर प्रणाली। यह नहर कोसी बाँध के पूर्व से निकाली जावेगी।

हनुमाननगर के निकट का बाँध पूरा हो गया है। थोड़ पुश्ते और बायी नहर पर काफी काम हो चुका है। यह सब पूरा हो जाने पर बिहार राज्य में पूर्णिया और सहरसा (Purnea and Saharsa) जिले की लगभग 14 लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई हो सकेगी।

द्वितीय चरण—(1) कोसी जल विद्युत-गृह—पूर्वी कोसी नहर पर एक जल विद्युत-गृह स्थापित किया जा रहा है जिसकी क्षमता 20 हजार Kw होगी। इस पर 6 17 करोड़ रुपये व्यय होंगे। विद्युत गृह द्वारा उत्पन्न बिजली का आधा भाग नेपाल उपयोग करेगा और शेष आधा भाग बिहार राज्य उपयोग करेगा।

(2) पश्चिमी कोसी नहर—कोसी बाँध के दाहिनी ओर लगभग 115 किलोमीटर लम्बी मुख्य नहर बनाई जावेगी। इस नहर से नेपाल की 30 हजार

एकड भूमि और बिहार राज्य की लगभग 8 लाख एकड भूमि म सिचाई होगी। इस काय पर लगभग 20 करोड रुपय व्यय होग।

(3) कोसी की पूर्वी-नहर का विस्तार—कोसी की पूर्वी मुख्य नहर का विकास किया जावेगा। इसमे महरसा (बिहार) जिले की लगभग 1 60 लाख हक्टेयर भूमि म सिंचाई होगी। इस विस्तृत कायक्रम पर लगभग 7 करोड रुपये व्यय होगे।

(6) तुङ्गभद्रा योजना (आध्र प्रदेश व मसूर राज्य)—

परिचय—तुङ्ग और भद्रा दो नदिया है जो मसूर राज्य के वाराह पवत से निकलती हैं। आग चलकर दोनो नदिया मिल जाती ह और तुङ्गभद्रा नदी कहलाती है। तुङ्गभद्रा नदी कृष्णा नदी की सहायक ह।

योजना—तुङ्गभद्रा योजना आन्ध्र प्रदेश राज्य और मसूर राज्य के सहयोग से बनाई जा रही है। इस योजना क प्रमुख भाग य हैं—

(1) तुङ्गभद्रा नदी पर एक बाध—यह बाँध मसूर राज्य के बेलारी (Bellary) जिले मे मल्लापुरम स्थान पर—जो बजवाडा हुबली रेलवे पर स्थित होस्पट स्टेशन से लगभग 5 Kms पश्चिम म स्थित है—तुङ्गभद्रा नदी पर बनाया गया है। इस बाध की लम्बाई लगभग 2441 मीटर और ऊँचाइ लगभग 49 4 मीटर है। इसके जलाशय जिसका नाम पम्पासागर है का क्षेत्रफल लगभग 365 वग किलोमीटर है। इस जलाशय म लगभग 4 लाख हक्टेयर मीटर पानी एकत्रित किया जा सकता ह। यह बाँध जुलाइ 1956 म बन कर पूरा हो चुका है।

(2) बायीं ओर की नहर—यह नहर 227 Kms लम्बी है। यह नहर व इसकी प्रमुख शाखाए बन चुकी हैं। इस पर एक विद्युत गह भी बनाने का योजना थी। यह विद्युत-गृह भी पूरा बन चुका है।

(3) निम्न स्तर नहर—(Low Level Canal)—यह नहर 350 Kms लम्बा है। यह नहर भी बन कर तयार हो गइ है। इस नहर पर दो जल विद्युत-गृह बनाय गय हैं।

बायी ओर की नहर एव निम्न-स्तर नहर, दोनो स आन्ध्र व मसूर राज्यो का लगभग 3 30 लाख हेक्टयर भूमि पर सिंचाई हो सकगी।

(4) उच्च-स्तर नहर (Higher Level Canal)—यह नहर 195 Kms लम्बी होगी एव बाँध क दाहिनी ओर स निकाली जावगी। यह नहर दो चरणो (Stages) म पूरी की जावगी। इसका प्रथम चरण पूरा हो गया है एव दूसरे चरण पर निर्माण काय हो रहा है। इस नहर स 1 82 लाख हक्टयर भूमि म सिंचाई हो सकेगी।

दाहिना ओर दो जल विद्युत-गृह बनाए गय हैं। इनम स एक जल विद्युत गृह का निर्माण बाँध क ठीक नीचे किया गया है और दूसरा विद्युतगृह यहाँ स 22 5 किलोमीटर दूर हाम्पी (Hampi) नामक स्थान पर बनाया गया है। बाँध क विद्युत

गृह में चार विद्युत उत्पादक इकाइयाँ (Generating Units) लगाई गई हैं जिनमें प्रत्येक की उत्पादन क्षमता 9 हजार किलोवाट है। दूसरे विद्युत-गृह में भी इतनी ही क्षमता की चार विद्युत उत्पादक इकाइयां लगाई गई हैं। बाँध के नीचे बायीं ओर एक विद्युत स्टेशन का और निर्माण किया गया है जहां 3 जैनरेटर, प्रत्येक 9 हजार किलोवाट क्षमता वाले लगाये गये हैं।

योजना से लाभ—इस योजना के पूरा हो जाने पर आन्ध्र प्रदेश राज्य और मैसूर राज्य के आर्थिक समृद्धि के स्रोत खुल गये हैं। इस योजना से निम्नलिखित लाभ हैं—

(1) **कृषि क्षेत्र में वृद्धि**—इस योजना के पूरी हो जाने पर मैसूर व आंध्र प्रदेश राज्यों में सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि होगी। अभी तक 4 लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई क्षमता उत्पन्न हो चुकी है।

(2) **कृषि उत्पादन में वृद्धि**—सिंचित क्षेत्र में वृद्धि होने के परिणामस्वरूप कृषि उपज में भी अवश्य ही वृद्धि होगी। एक अनुमान के अनुसार इन दोनों राज्यों में कुल खाद्यानों के उत्पादन में 3 25 लाख टन और मुद्रा प्रदायक फसलों में लगभग 4 20 लाख टन की वृद्धि होगी।

(3) **मछली उत्पादन में वृद्धि**—इस बाँध में मछली पालन के प्रयत्न किए जा रहे हैं। आशा है बड़ी मात्रा में मछली प्राप्ति होगी, जिससे एक ओर तो भोज्य पदार्थ उपलब्ध होगा और दूसरी ओर लोगों को कार्य मिलेगा।

(4) **मण्डियों की स्थापना**—कृषि उपज में वृद्धि होने के परिणामस्वरूप पुरानी मण्डियों का विकास होगा और अनेक नई मण्डियों की स्थापना होगी।

(5) **उद्योगों की स्थापना**—इस योजना से प्राप्त जल विद्युत का उपयोग वस्त्र, कागज सीमेण्ट व चीनी उद्योग में हो रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी विद्युत का वितरण करके लघु एवं कुटीर धन्धों को विकसित किया जा सकेगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि आन्ध्र व मैसूर राज्यों के आर्थिक विकास में तुङ्गभद्रा योजना महत्वशील योग प्रदान कर रही है।

उत्तर प्रदेश की प्रमुख योजना

रिहान्द घाटी योजना—

यह उत्तर प्रदेश की सबसे बड़ी योजना है। रिहान्द नदी सोन नदी की सहायक नदी है। मध्य प्रदेश में उदयपुर की पहाड़ियों से निकल कर रिहान्द नदी उत्तर की ओर बहती हुई गहरवार गाँव के पास से गुजरती हुई सिंघरिया के पास सोन नदी में मिल जाती है। पहली बार देखने पर रिहान्द एक अनाकर्षक व छोटी पहाड़ी नदी लगती है। रिहान्द नदी के हाथों में उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले के अत्यधिक पिछड़े हुए किन्तु अत्यधिक समृद्धि भाग की कुञ्जी है।

योजना—मिर्जापुर जिले में रिहान्द सोन के संगम से 45 Kms दूर पीपरी स्थान पर रिहान्द नदी पर एक बाँध बनाया जा रहा है। यह बाँध 91 मीटर ऊँचा

मीर 930 मीटर लम्बा होगा। इस बाँध में 90 लाख घन फीट पानी आ सकेगा। इस योजना के लिए वर्तमान स्थल छठी बार चुना गया है। इसके लिए चट्टानों की प्रकृति, सचय-क्षमता और बहुमूल्य कोयला भण्डारों को पानी से डूबने से बचाने का ध्यान रखा गया है। केवल 12 Kms दूर ही सिंगरौली में कोयले के भण्डार हैं।

इस योजना के अन्तर्गत विद्युत उत्पन्न करने के 6 यन्त्र लगाये जावेंगे, जिनमें से प्रत्येक की शक्ति 46 750 किलोवाट होगी। इनमें से 3 यन्त्र आरम्भ में लगाये जायेंगे और शेष बाद में। सन् 1970 तक 1 40 लाख किलोवाट विद्युत उत्पन्न की जा सकेगी। बिजली पैदा करने की लागत अब तक एशिया में सबसे सस्ती रहेगी—2 27 पाई प्रति यूनिट। इस विद्युत का उपयोग उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग, बिहार के पश्चिमी भाग, विन्ध्य प्रदेश व मध्य प्रदेश कर सकेंगे।

यदि भविष्य में विभिन्न योजनाओं को आपस में मिलाया गया तो रिहान्द बाँध को निसन्देह केन्द्र में स्थित होने का लाभ होगा क्योंकि यह दामोदर घाटी योजना से केवल 260 Kms हीराकुड से 320 Kms और लखनऊ से 360 Kms है।

सम्भावित लाभ—इस योजना से निम्न लाभ प्राप्त होने की सम्भावना है —(1) उत्तर प्रदेश के 16 पूर्वी जिलों के 4 हजार नलकूपों के लिए उक्त योजना से विद्युत प्राप्त हो सकेगी। (2) इससे लगभग 16 लाख एकड़ भूमि में सिंचाई हो सकेगी। (3) लगभग 3 लाख टन के अन्न उत्पादन में वृद्धि का अनुमान है। (4) सीमान्त भूमि पर, जहाँ अभी तक खेती सम्भव नहीं थी अब खेती हो सकेगी। (5) मछली व्यवसाय की उन्नति हो सकेगी। (6) रेलों को जल विद्युत की सुविधा मिल सकेगी। (7) बाढ़ पर नियन्त्रण हो सकेगा। (8) भूमि का कटाव कम हो जायगा। वनों का विकास हो सकेगा। (9) इस योजना के क्षेत्र में लोहा, कोयला, अभ्रक, बाक्साइट सीसा आदि खनिज पदार्थ पाये जाते हैं अतः इन खनिज पदार्थों का उचित उपयोग हो सकेगा और अनेक नये उद्योग स्थापित हो जावेंगे।

इस योजना के लिए भारत अमेरिका टेक्निकल कॉरपोरेशन एग्रीमेण्ट के अन्तर्गत 1 करोड़ 10 लाख डालर का समझौता हो चुका है। इस योजना के लिए एक कण्ट्रोल बोर्ड की स्थापना हो चुकी है तथा योजना पर काम चालू हो गया है।

राजस्थान की योजनाएं[1]

जल की दृष्टि से भारत के अन्य राज्यों की अपेक्षा प्रकृति राजस्थान पर कम उदार है। दक्षिणी और दक्षिणी पूर्वी भागों को छोड़कर राज्य में सर्वत्र वर्षा अनियमित एवं अनिश्चित है। राजस्थान का उत्तरी एवं पश्चिमी भाग तो रेगिस्तानी ही है। अतः राजस्थान सरकार ने अनेक योजनाएँ बनाई हैं जो प्रगति पर हैं।

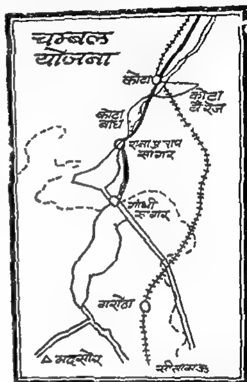
---

1 विस्तृत विवरण के लिए देखिये—'हमारा राजस्थान' लेखक सक्सेना एवं हक्कू, प्रकाशक स्टूडेण्ट्स बुक कम्पनी, जयपुर।

(I) चम्बल नदी योजना—

वर्षा के अभाव मे पीडित कृपको की प्रमुख आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए राजस्थान और मध्य प्रदेश सरकारो ने राज्य की सबसे बडी नदी चम्बल को बाँध कर प्रकृति पर आक्रमण करने की सयुक्त योजना बनाई है।

चम्बल का परिचय—उत्तरी मध्य प्रदेश व राजस्थान की वरद कामधेनु चम्बल नदी का प्राचीन नाम चर्मावती है। इसका उदगम स्थान विन्ध्याचल पर्वत है। यह ग्वालियर इन्दौर व सीतामऊ के पास से होती हुई राजस्थान मे प्रवेश करती है और राजस्थान म कोटा व धौलपुर के निकट बहती हुई उत्तर प्रदेश म यमुना नदी म मिल जाती है। यह **यमुना नदी की सबसे बडी सहायक नदी है** इस नदी म लगभग 55 000 वर्गमील क्षेत्र का पानी आता है। चम्बल की लम्बाई 1,045 Kms और अधिकतम चौडाई 730 मीटर है, जो कि गर्मियो मे पानी की एक क्षीण रेखा मात्र ही रह जाती है। काली सिन्ध, बनास और पार्वती इसकी मुख्य सहायक नदियाँ हैं।



चित्र 13

सूत्रपात— चम्बल योजना का सूत्रपात सवप्रथम सन् 1943 म जल विद्युत के लिए कोटा के पास एक बाँध बनाये जाने के रूप मे हुआ। इसके पश्चात सन 1945 तक यह विचार तीन बाँध और विद्युत केन्द्रो की योजना मे परिवर्तित हो गया और सन 1950 तक इसमे 12 लाख एकड भूमि की सिंचाई के लिए प्रस्तावित कोटा सिंचाई बाँध और नहरो का निर्माण काय भी सम्मिलित कर लिया गया।

चम्बल योजना—योजना आयोग द्वारा चम्बल योजना के इस प्रारूप को स्वीकृति प्रदान की गई—(क) चम्बल नदी पर तीन बाँधो का निर्माण (गाधीसागर बाँध, राणा प्रताप सागर बाँध और कोटा बाँध अर्थात जवाहर सागर बाँध) (ख) उपरोक्त तीनो बाँधो म प्रत्यक पर एक एक जल विद्युत गृह (ग) कोटा के निकट कोटा बरेज का निर्माण, (घ) बाँधो से सिंचाई क उद्देश्य स नहरो का निर्माण, (ङ) मध्य प्रदेश

सिंचाई एवं शक्ति—चम्बल योजना के पूरे हो जाने पर अर्थात् योजना के तीनों चरणों का निर्माण पूरा हो जाने पर इस योजना में कुल 5.66 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई हो सकेगी। जहाँ तक जल विद्युत का सम्बन्ध है इन जल विद्युत गृहों की उत्पादन क्षमता 385 मेगावाट शक्ति होगी।

योजना पर व्यय—योजना पर व्यय के सम्बन्ध में जो अनुमान लगाये गये वे बड़े विस्मयजनक हैं। योजना के व्यय का प्रारम्भिक अनुमान केवल 38 करोड़ रुपये था जो शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की भाँति निरन्तर बढ़ता ही गया। 38 करोड़ रुपये से 51 करोड़ रुपये फिर 71 करोड़ रुपये, फिर 81 करोड़ और फिर 91 करोड़ पर पहुँचता हुआ यह अब 1 अरब रुपये के समीप आ गया है। आश्चर्य नहीं कि सारी योजना के पूरा होते-होते यह राशि 1 अरब को भी पार कर जाय।

सम्भावित लाभ—इतिहासकारों के कथनानुसार भारतीय सभ्यता का उद्भव और विकास नदियों के तट पर हुआ है। यही कथन अब चम्बल योजना क्षेत्र में पुनः चरितार्थ होने जा रहा है। इस योजना से प्रमुख सम्भावित लाभ निम्नलिखित हैं —

(1) **सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि**—इस योजना के पूरी हो जाने पर कुल 5.66 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई हो सकेगी। राजस्थान के कोटा, बूंदी, भरतपुर और सवाई माधोपुर जिलों की 19 तहसीलों व मध्य प्रदेश की 12 तहसीलों में सिंचाई होगी।

(2) **जल विद्युत प्राप्ति**—इस योजना से लगभग 385 मेगावाट जल विद्युत तैयार हो सकेगी। कोटा, लाखेरी, सवाईमाधोपुर, दौसा, जयपुर, सांभर, अजमेर, ब्यावर तथा मार्ग में पड़ने वाले राज्य के अन्य ग्रामों में बिजली पहुँच जायेगी।

(3) **कृषि उत्पादन में वृद्धि**—सिंचाई के लिए पानी मिलते ही यहाँ की प्यासी भूमि पर्याप्त अन्न उत्पन्न करेगी और यह क्षेत्र अन्न भण्डार का रूप ले लेगा। अनुमान है कि 1.25 करोड़ टन अनाज का वार्षिक उत्पादन बढ़ेगा।

कपास का वर्तमान उत्पादन 3 हजार मन से बढ़ कर 13 लाख मन वार्षिक हो जायेगा। एन० वी० गाडगिल कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार गन्ने का उत्पादन भी खूब बढ़ेगा। अतः गन्ना पैदा करने वाले क्षेत्र की एक पेटी (Belt) बनाई जानी चाहिए। अभी लगभग 6 लाख मन गन्ना उत्पन्न होता है। योजना के पूरा हो जाने के बाद गन्ने का उत्पादन 90 लाख मन तक पहुँच जायेगा। इसके अतिरिक्त तिलहन की उपज में भी वृद्धि होगी।

(4) **लघु उद्योगों का विकास**—घरेलू उपयोग के बर्तन, चमड़े के जूते, सूती व ऊनी होजियरी, खेल कूद का सामान, रबर व प्लास्टिक की वस्तुएँ आदि अनेक लघु उद्योगों का विकास हो सकेगा।

(5) **बड़े उद्योगों का विकास**—इस योजना के फलस्वरूप इन क्षेत्रों में अनेक बड़े उद्योग भी स्थापित हो सकेंगे। दो सूती वस्त्र कारखाने, दो चीनी बनाने के

कारखाने, एक शराब बनाने का कारखाना व एक सीमेण्ट बनाने का कारखाना आदि और स्थापित हो सकते हैं।

लाखेरी व सवाई माधोपुर के सीमेण्ट के कारखाना को सस्ती जल विद्युत् प्राप्त हो सकेगी। एक सीमेण्ट का कारखाना रामगंज मंडी में भी स्थापित किया जा सकता है। सांभर झील के निकट नमक से कास्टिक सोडा व ब्लीचिंग पाउडर का कारखाना स्थापित किया जा रहा है। खनिज पदार्थों को निकालने में भी सस्ती जल विद्युत प्राप्त हो सकेगी।

इसके अतिरिक्त इस योजना से सांभर झील का नमक, मकराने का संगमरमर, जयपुर व भीलवाडा का घीया पत्थर, जयपुर, किशनगढ कोटा व भीलवाडा की सूती मिलो, उदयपुर की जावर की खानो तथा जयपुर के धातु उद्योगो को बहुत सस्ती जल विद्युत प्राप्त होगी।

इस क्षेत्र की मिट्टी अब सोना उगलेगी और विद्युत शक्ति से चलने वाले कारखाने गरीबी व बेकारी के अन्धकार को दूर कर देंगे।

(II) जवाई परियोजना[1]—

जवाई नदी राजस्थान के दक्षिण पश्चिम मे जोधपुर विभाग के पाली जिले मे प्रवाहित है। यह लूनी नदी की सहायक नदी है।

योजना का आरम्भ—सन 1904 05 में जोधपुर राज्य के इंजीनियर डा० होम ने जवाई नदी पर एरिनपुरा रेलवे स्टेशन (पश्चिमी रेलवे का दिल्ली-अहमदाबाद लाइन पर एक छोटा स्टेशन) से लगभग 2 Kms दूर एक बाध बनाने के लिए सर्वेक्षण करके योजना बनाई। परन्तु आर्थिक एवं तान्त्रिक सुविधाओ के अभाव में यह योजना केवल कागज पर ही रह गई। दूसरी बार सन 1936 में इस योजना के लिए सर्वेक्षण किया गया किन्तु इस बार भी कार्य आरम्भ न हो सका। इसके पश्चात सन 1943 में जोधपुर राज्य के तत्कालीन मुख्य इंजीनियर श्री एफ० एफ० फरगुसन ने पुन इस स्थान का भारत सरकार के तत्कालीन कृषि विशेषज्ञ सर विलियम स्टाम्प तथा मद्रास राज्य के तत्कालीन मुख्य इंजीनियर दीवान बहादुर श्री आयंगर की सहायता से सर्वेक्षण किया तथा प्रतिवेदन तत्कालीन महाराज के समक्ष प्रस्तुत किया जो स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार मई 1947 में इस योजना पर कार्य आरम्भ हुआ।

योजना—जवाई नदी जोधपुर डिवीजन के जालोर जिले के दक्षिणी पूर्वी कोण में अरावली पर्वत के पश्चिमी ढाल से निकलकर लगभग 25 Kms बहने के पश्चात दो पहाडियो के मध्य से निकलती है। यहा पर बाध बनाया गया है। यह

---

1 *The Jawai Project* Published by Govt of Jodhpur, 1949 के आधार पर।

बाँध गनिगुरा स्टेशन से लगभग 2 kms और मुजरपुर से लगभग 10 kms दूर है। मुजरपुर से गनिगुरा स्टेशन 8 kms दूर है।

1904-05 में यह योजना केवल सिंचाई के लिए बनाई गई थी बाद में 1943 में 4 हजार किलोवाट जल विद्युत उत्पादन करने की योजना भी सम्मिलित की गई किन्तु केन्द्रीय जल तथा शक्ति आयोग ने इसकी जल विद्युत योजना को स्थगित कर दिया है। अतः अब जवाई योजना से केवल सिंचाई ही हो सकता है।

यह बाँध पूरा हो गया है। इस बाँध की लम्बाई 923.50 मीटर व ऊँचाई 34.75 मीटर है। इसकी नींव 15 मीटर गहरी है। इस बाँध का केचमेन्ट लगभग 10 वर्ग मील है। इसमें 100 वर्ग मील क्षेत्र का 70,000 क्यूसेक पानी एकत्रित होता है। इस क्षेत्र में औसत वार्षिक वर्षा 60 cms है।

इस बाँध से 22 kms लम्बी मुख्य नहर निकाली गई है। इस मुख्य नहर से 4 शाखायें और निकाली जायगी जो लगभग 110 kms लम्बी होंगी। इस योजना पर 3 करोड़ से भी कुछ अधिक राशि के व्यय का अनुमान है। इस योजना से 46 हजार एकड़ भूमि में सिंचाई हो सकेगी।

(III) राजस्थान नहर योजना[1]—

अति प्राचीन सिन्धु सभ्यता जिन रेत के टीलों में लोप हो गई सिसक रही है जहाँ सरस्वती और दृषद्वती नदियाँ कभी अपना मार्ग खो बैठी थीं वहाँ विनाश के नये चरण प्रयत्न कर रहे हैं और थार के मरुस्थल की चुनौती देते हुए बढ़ रहे हैं जिन्होंने जहाँ मधुर बस्तियों को उजाड़ दिया उन्नत गर्वीली सभ्यता एवं शिखरों को रेत में मिला दिया वहीं पुन लहलहाते खेतों को जन्म देंगे क्रीडांगन बनायेंगे और आज जहाँ प्रति वर्ग किलोमीटर चार व्यक्ति रहते हैं उस निर्जन प्रदेश को नये परिवारों पायल की रुनझुन भरा व कलरव वीणा के स्वरों बाँसुरी की तानों और मंजीरा तथा नगाड़ों की धमक और थपक से गुंजरित कर देंगे।

संक्षिप्त इतिहास—भारत सरकार के समक्ष सन् 1948 में एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई जिसमें सुझाव दिया गया कि राजस्थान के विकास के लिए सतलज पर 'हरीके' बाँध से नहरें निकाली और राजस्थान नहर बनाने का काम भाखड़ा योजना के साथ ही आरम्भ हो। सन् 1951 में राजस्थान नहर की योजना को जल विद्युत आयोग ने अपने हाथ में लिया। सन 1957 में राजस्थान सरकार ने इस योजना को स्वीकार कर लिया। योजना आयोग इसे पहले ही स्वीकार कर चुका था।

राजस्थान निर्माण के ठीक 9 वर्ष पश्चात 30 मार्च 1958 को राजस्थान की नवीन भाग्य रेखा राजस्थान नहर का शिलान्यास तत्कालीन गृह-मन्त्री स्वर्गीय श्री गोविन्दवल्लभ पन्त द्वारा किया गया।

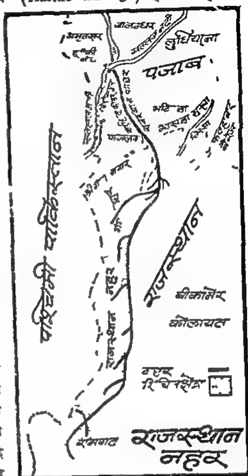
---

1 'राजस्थान नहर योजना' राज्य की प्रमुख सिंचाई परियोजना है। यह नदी घाटी योजना नहीं है।

योजना—पूर्वी पजाब राज्य मे सतलज नदी और व्यास नदी के सगम के ठीक नीचे सतलज नदी पर 'हरीके बाध (Harike Barrage) है। इस हरीके बाध से 'राजस्थान नहर' निकाली जा रही है। पूरी नहर 685 60 Kms (426 मील) होगी। राजस्थान नहर योजना दो चरणो मे पूरी की जावेगी —

(1) राजस्थान फीडर—इसकी कुल लम्बाई 215 60 Kms होगी जिसमे प्रथम 180 Kms पजाब व हरियाना मे (सरहिन्द फीडर के निकट बहता हुई) है। इस प्रकार 180 Kms पजाब व हरियाना मे बहने के पश्चात् राजस्थान मे प्रवेश करती है। इस भाग का निर्माण पूरा हो गया है।

(2) राजस्थान मुख्य नहर—यह भाग पूर्णत राजस्थान मे होगा और इसकी लम्बाई 470 Kms होगी। कुछ दूर राजस्थान व पजाब की सीमा के निकट बहने के पश्चात यह सूरतगढ़ (बीकानेर विभाग) की ओर मुडती है और जैसलमेर की ओर दक्षिण पश्चिम होता हुए 685 60वे Kms पर रामगढ (जैसलमेर) गाँव के निकट समाप्त हो जावेगी।



चित्र 14

नहर की अधिकतम चौडाई (तल मे) 37 मीटर और गहराई 7½ मीटर होगी। जैसलमेर जिले मे अपने अन्तिम सिरे पर इसकी चौडाई (तल मे) 17 मीटर व 9 मीटर होगी।

योजना की प्रगति—राजस्थान नहर योजना दो चरणो मे पूरी की जाने की योजना है। प्रथम चरण के अन्तर्गत सम्पूर्ण फीडर 215 6 किलोमीटर और 195 किलोमीटर राजस्थान नहर का भाग तथा सूरतगढ व नोहरा की शाखाओ का निर्माण किया गया था। यह भाग पूरा हो गया है। सन् 1965 मे भारत के तत्कालीन उप राष्ट्रपति (भूतपूर्व राष्ट्रपति) डा० राधाकृष्णन ने बीकानेर विभाग की हनुमानगढ़ तहसील मे

तलवाड़ा झील के निकट राजस्थान नहर की नौरंगदेसर शाखा में पानी छोड़ा। यह पानी अनेक गाँवों (महारवाला, मसीतवाली, सिलवाड़ा, रणजीतपुरा, नौरंगदेसर और चालीवाली तथा हनुमानगढ़ तहसील के पन्तिवाली गाँवों) तक पहुँच गया। नहर के बायी ओर कुछ ऊँचाई पर स्थित लूनकरनसर, जामसर तथा बीकानेर क्षेत्र की जलपूर्ति के लिए 100 क्यूसेक क्षमता का एक लिफ्ट चैनल का निर्माण किया जा रहा है।

द्वितीय चरण में मुख्य नहर के शेष भाग तथा नोहरा शाखा से नीचे की सम्पूर्ण वितरण व्यवस्था का निर्माण सम्मिलित है। जनवरी 1971 तक 345 Kms लम्बी नहर बन चुकी थी।

सन् 1963 के अनुमान के अनुसार यह योजना 1977-78 तक पूरी होने की आशा थी किन्तु धन की कमी के कारण इसमें विलम्ब होगा।

सतलज, व्यास और रावी इन तीन नदियों के समस्त जल का उपयोग राजस्थान नहर के कारण हो सकेगा। रावी नदी के पानी को व्यास नदी में मिलाया गया है और व्यास नदी सतलज नदी में मिलती है।

सिचाई—राजस्थान नहर के नामकरण की सार्थकता इस तथ्य में निहित है कि इसका पानी विशेषरूप से राजस्थान के ही काम आवेगा और वह भी ऐसे प्यासे क्षेत्र में जिसने प्रकृति के कोप को अत्यन्त प्रलयंकर रूप में देखा है।

राजस्थान नहर का मुख्य प्रवाह क्षेत्र बीकानेर और जोधपुर डिवीजन का पश्चिमी भाग है जो पश्चिमी पाकिस्तान की सीमा के निकट है। इस नहर से राजस्थान में आया हुआ एक तिहाई से भी अधिक थार का रेतीला व निर्जल मरुस्थली भू भाग हरा भरा हो उठेगा।

यह नहर बीकानेर डिवीजन में हनुमानगढ़, सूरतगढ़, अनूपगढ़, रायसिंह नगर तथा बीकानेर तहसीलों और जोधपुर डिवीजन में जैसलमेर जिले की नाचणा, जैसलमेर तथा रामगढ़ तहसीलों की विस्तृत भूमि का सिंचन करेगी।

इस योजना से लगभग 33 लाख एकड़[1] क्षेत्र में सिंचाई होने का अनुमान है जिसका सर्वेक्षण किया जा चुका है।

यह योजना लगभग 1977-78 तक पूरी होगी तथा दो चरणों में विकसित होगी। प्रथम चरण में केवल 10 लाख एकड़ की बारहमासी सिंचाई हो सकेगी। दूसरा चरण वर्षा के अतिरिक्त पानी के एकत्रीकरण के लिए रावी और व्यास पर एक बाँध के निर्माण के साथ प्रारम्भ होगा। तभी सम्पूर्ण क्षेत्र के लिए बारहमासी सिंचाई उपलब्ध करना सम्भव होगा। जनवरी 1971 तक लगभग 3.50 लाख एकड़ भूमि में सिंचाई हो रही थी।

---

1 केन्द्रीय जल तथा विद्युत आयोग के प्रधान द्वारा दिये गये भाषण के आधार पर।

व्यय—आरम्भ में जब यह योजना बनाई गई थी तो राजस्थान नहर योजना पर व्यय का अनुमान 66 करोड़ रुपये था। सन 196० में व्यय का अनुमान 184 करोड़ रुपये कर दिया गया। इस योजना को पूरी होने में सन् 1971 में व्यय का अनुमान 274 करोड़ रुपये किया गया है। आशा है कि इस राशि में अभी और भी काफी वृद्धि होगी।

सम्भावित लाभ—राजस्थान नहर, गंग नहर के रूप में ही इस प्रदेश में नहीं लाई जा सकती है, यह तो विज्ञान सिद्ध एक ऐसा अद्वितीय प्रयास है जो रंगीन रेगिस्तान को आने वाले वर्षों में लहलहाते हुए नन्दन वन के रूप में परिवर्तित कर देगा। जहां आज धूल के तूफान उठते हैं वहां मरुडा मीलों तक जहाजी बेड़े चलेंगे और जहां आज पानी के अभाव में लोगों का जीवन निष्क्रिय-सा बन रहा है वहां उद्योग धन्धे विद्युत और कल-कारखानों की भरमार हो जायगी। इस नहर से सम्भावित लाभ इस प्रकार हैं —

(1) सिंचित क्षेत्र में वृद्धि—इस नहर से गंगानगर, बीकानेर जिला में लगभग 28.75 लाख एकड़ भूमि में अतिरिक्त सिंचाई हो सकेगी। सन 1952 में लगभग 3½ हजार एकड़ भूमि[1] में सिंचाई हो रही थी और जनवरी सन 1971 में 3.50 लाख एकड़ भूमि में।[1] इस प्रकार सिंचित क्षेत्र में वृद्धि हुई है।

(2) कृषि उपज में वृद्धि—इस योजना से खाद्यान्नों में लगभग 25 लाख टन और कपास में लगभग 1½ लाख गांठों के उत्पादन में वृद्धि होने का अनुमान है। सरकारी अनुमान के अनुसार यह योजना पूरी हो जाने पर देश की वर्तमान खाद्यान्न की कमी का लगभग 25 प्रतिशत भाग[1] पूरा करेगी।

(3) रेगिस्तान प्रसार में रुकावट—थार का रेगिस्तान जो रेंगता हुआ आगे बढ़ रहा है वह नहीं बढ़ सकेगा। थार के रेगिस्तान के लगभग एक तिहाई भाग में सिंचाई हो सकेगी।

(4) अकाल पर रोक—यह भाग सदियों से शुष्क रहा है और हमेशा यह स्थिति बनी रहती है। यह कष्टमय स्थिति दूर होगी। मनुष्यों को केवल जीवित रहने के लिए बादलों की ओर ही नहीं देखते रहना पड़ेगा।

(5) पेय जल की सुलभता—इस क्षेत्र में पानी की कमी के कारण पेय-जल का कष्ट रहता है वह दूर हो जावेगा। बीकानेर, जैसलमेर व लूनकरनसर क्षेत्रों की जलपूर्ति के लिए लिफ्ट चैनल का निर्माण किया जा रहा है।

(6) पुनर्वास—राजस्थान नहर क्षेत्र में लगभग 18 हजार परिवार बसाये जावेंगे। इससे राज्य के अन्य भागों में जनसंख्या का अधिक दबाव नहीं पड़ेगा।

(7) नई बस्तियां—मरुस्थल के इस भाग में पानी पहुंचने से और गांव कस्बे और दूसरी बस्तियां बनेंगी।

---

1 ये आंकड़े राजस्थान विधान सभा में 30 मार्च 1971 को बताए गये थे।

(8) उद्योगों की स्थापना—कृषि की पैदावार पर निर्भर चीनी, कपड़ा आदि उद्योगों में नए कारखाने स्थापित किए जायेंगे और विभिन्न लघु एवं कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन मिलेगा।

(9) सरकारी आय में वृद्धि—सरकारी अनुमान के अनुसार राजस्थान नहर क्षेत्र से सरकार को $2\frac{1}{4}$ करोड़ रुपये की अतिरिक्त वार्षिक आय होगी।

(10) वन विकास आदि—इस भाग में वन-क्षेत्र की वृद्धि होगी, सघन कृषि व्यवस्था में सहायता मिलेगी, मिट्टी का कटाव रुकेगा और मछली व्यवसाय को प्रोत्साहन मिलेगा।

(11) यातायात विकास—इस क्षेत्र में आबादी के बस जाने से यहाँ यातायात का विकास अवश्य हो किया जायेगा। रेल-मार्ग, सड़क मार्ग और जल मार्गों का विकास होगा।

(12) रोजगार में वृद्धि—इस योजना से लगभग 50 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिलने की सम्भावना है, जिसके फलस्वरूप राज्य में बेरोजगारी की समस्या कुछ सीमा तक हल होने में सहायता मिलेगी।

(13) टिड्डी दल के आक्रमण का कम भय—इस नहर के बन जाने से टिड्डी दलों के आक्रमण से भी राहत मिलेगी क्योंकि वर्तमान मरुक्षेत्र टिड्डी दलों के अण्डे देने के लिए सर्वोत्तम क्षेत्र है।

(14) सीमा सुरक्षा—देश की सीमा सुरक्षा की दृष्टि से राजस्थान नहर का महत्वपूर्ण योग होगा। इस समय भारत व पाकिस्तान की सीमा पर इस क्षेत्र में जनसंख्या प्रायः शून्य-तुल्य है। नहर निर्माण हो जाने से इस क्षेत्र में भारी संख्या में लोग बस जावेंगे अतः प्रशासन में सुविधा होगी और देश की सीमा और अधिक सुरक्षित हो जावेगी।

(IV) भाखरा की परियोजना—

पूर्वी पंजाब में सतलज नदी पर भाखरा बाँध बन रहा है। राजस्थान सरकार का भी इस परियोजना में 15.2% भाग है। इस योजना से राजस्थान की लगभग 6 लाख एकड़ भूमि में सिंचाई हो सकेगी। इससे बीकानेर विभाग के गंगानगर जिले की भादरा, नोहर, सूरतगढ़, हनुमानगढ़, रायसिंह नगर, पदमपुर और गंगानगर की तहसीलों में सिंचाई हो सकेगी।

अन्य छोटी योजनायें—

राजस्थान में उपरोक्त तीन (चम्बल, जवाई और भाखरा) योजनाओं से सिंचाई में वृद्धि अवश्य होगी। इनके अतिरिक्त निम्नलिखित छोटी योजनाओं पर भी कार्य हो रहा है—

(1) पार्वती परियोजना—इसके अन्तर्गत भरतपुर जिले में धौलपुर से लगभग 50 Kms दूर पार्वती नदी पर एक जलाशय बनाया गया है जिससे पार्वती नदी की बायीं तरफ नहर निकालकर लगभग 35 हजार एकड़ भूमि में सिंचाई हो

रही है। यह योजना सन 1961 मे पूरी हो गई है। उस पर 1 10 करोड रुपये व्यय हुए हैं।

(2) गुढा परियोजना—बूंदी म लगभग 20 Kms दूर मेजा नदी पर मिट्टी का एक बांध बनाया गया है, जिससे दानो ओर नहरें बनाकर 37 हजार एकड भूमि म सिंचाई हो रही है। इस योजना पर 71 लाख रुपये व्यय हुए हैं। यह योजना भी सन् 1961 म पूरी हो गई है।

(3) मोरेल परियोजना—सवाई माधोपुर जिले म लालसोट स लगभग 15 Kms दूर मोरेल नदी पर मिट्टी का बांध बनाया गया है। इस बांध व इसस निकलने वाली नहरो का निर्माण हो चुका है। अभी 14 हजार एकड भूमि म सिंचाई हो रही है।

(4) जग्गर परियोजना—हिंडौन के समीप जग्गर नदी पर मिट्टी का एक बांध बनाकर 9 हजार एकड भूमि म सिंचाई हो सकेगी। यह परियोजना लगभग पूरी हो चुकी है।

(5) कालीसिल परियोजना—इस परियोजना म मोरेल की सहायक कालीसिल नदी पर करौली प्रान्त म मिट्टी का बांध व नहरें बनाई जावेंगी। यह परियोजना पूरी होने वाली है। इस योजना म 14 000 एकड भूमि पर सिंचाई होगी।

(6) मेजा बांध—यह भीलवाडा (उदयपुर) जिले म मण्डल के पास कोठारी नदी पर बनी बडी योजना है। इसस 'मण्डल' को अतिरिक्त पानी मिलता है।

(7) गम्भीरी परियोजना—चित्तौडगढ स 32 Kms दक्षिण म गम्भीरी नदी पर एक बांध बनाकर (3,850 लाख किवा फीट) पानी एकत्रित किया गया है। इसके दोनो किनारो पर नहरें बनाई गई हैं। इनसे सिंचाई हो रही है।

(8) बांकली परियोजना—अरावली पर्वत के पश्चिमी ढालो स निकलने वाली सूकडी नदी पर जो शुष्क, रतीले किन्तु उपजाऊ मैदान म बहती हुई लूनी नदी म मिल जाती है—मिट्टी का बांध बनाया गया है। इसस जालौर क्षेत्र मे सिंचाई हो रही है।

(9) सरेरी परियोजना—मानसी नदी के पानी को उपयोग म लाने के लिए एक मिट्टी का बांध सरेरी रेलवे स्टेशन स—जो पश्चिमी रेलवे की अजमेर चित्तौडगढ शाखा पर है—कुछ किलोमीटर दूर पश्चिम म बनाया गया है। इस योजना पर 30 लाख रुपये व्यय हुए हैं। यह योजना सन 1960 म बन कर पूरी हो गई है।

(10) नमूना परियोजना—बनास नदी पर नाथद्वारा (उदयपुर) स लगभग 8 Kms दूर मिट्टी का बांध बनाया गया है। यह योजना 1959 म पूरी हो गई।

उपरोक्त के अतिरिक्त राजस्थान मे लगभग 12 अन्य छोटी योजनाओ पर सिंचाई के लिए काम हो रहा है।

इस अध्याय म दी गई योजनाओ के अतिरिक्त भारत के विभिन्न राज्यों म अनेक योजनाएँ कार्यान्वित हो रही हैं। जब सब योजनाएँ पूरी हो जावेंगी तब भारत

कृषि तथा औद्योगिक क्षेत्रों में विश्व के अन्य विकसित देशों की तुलना में पीछे न रहेगा। इसके अतिरिक्त अनेक क्षेत्रों में बाढ़ का भय भी कम हो जायगा तथा मनुष्यों एवं पशुओं की क्षति भी काफी कम हो जायगी। बाढ़ की हानि का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि "यदि बाढ़ से क्षति न हो तो हमारी राष्ट्रीय आय में लगभग 100 करोड़ रुपये की वृद्धि हो जाय।"[1]

UNIVERSITY QUESTIONS

1 बहुमुखी योजनाओं से आप क्या समझते हैं? हाल में बनी दो बड़ी योजनाओं का विवरण दीजिये। (T D C, 1959)

2 भारत में जल विद्युत शक्ति के महत्त्व और विकास की सम्भावना पर प्रकाश डालिये। दामोदर घाटी योजना का विवरण दीजिये। (T D C, 1960)

3 What methods of irrigation are practised in Northern India? Give details about the Chambal Project (T D C, 1961)
उत्तरी भारत में सिंचाई के कौन-कौन से साधन प्रयोग में लाये जाते हैं? चम्बल योजना विस्तार से बतलाओ।

4 What do you know about the Damodar Valley Project? How do such projects add to our economic efficiency? (T D C 1962)
दामोदर घाटी योजना के विषय में आप क्या जानते हैं? ऐसी योजनाएँ हमारी आर्थिक क्षमता में किस प्रकार वृद्धि करती हैं?

5 What do you know about the Bhakra Nangal Project? Discuss the advantages accruing from it specially to Rajasthan (T D C, 1963)
भाखरा-नांगल योजना के विषय में आप क्या जानते हैं? उससे क्या लाभ हैं विशेषकर राजस्थान को?

6 Give a detailed account of the Chambal Project Who are the beneficiaries and to what extent? (T D C, 1964)
चम्बल योजना का विस्तृत विवरण दीजिये। कौन इससे कितने लाभ के भागी हैं?

7 भारतवर्ष की मुख्य बहु उद्देशीय योजनाएं कौन सी हैं? हीराकुड योजना का

---

1 केन्द्रीय जल विद्युत आयोग के अध्यक्ष श्री कंवरसैन द्वारा आकाशवाणी दिल्ली से प्रसारित वार्ता से।

वर्णन कीजिये तथा बताइये कि इस योजना से किन क्षेत्रों में लाभ प्राप्त हुए हैं ? (T D C Suppl 1965)

8 बहु उद्देशीय योजनाओं का आर्थिक महत्त्व समझाइये। जवाई नदी परियोजना का विस्तृत वर्णन कीजिये (T D C 1966)

9 भारत के विभिन्न प्रान्तों में नहरों द्वारा सिंचाई का विस्तृत वर्णन कीजिये। राजस्थान नहर का आर्थिक महत्त्व बताइये। (T D C Suppl 1966)

10 भारत की किसी एक विशाल बहुमुखी नदी घाटी योजना का विवरण दीजिये। इस योजना से प्राप्त सिंचाई जल विद्युत एवं अन्य लाभों का उल्लेख करिये। (T D C, 1968)

11 राजस्थान नहर के बारे में आप क्या जानते हैं ? इससे राजस्थान को क्या लाभ मिलेंगे ? (T D C Suppl, 1968)

12 दक्षिण भारत की किसी एक बहु उद्देशीय नदी घाटी योजना के लाभों का विवेचन करिये। (T D C, 1969)

13 राजस्थान की किसी एक नदी घाटी योजना का विवेचन कीजिये। (T D C, 1970)

[संकेत—चम्बल योजना का विवरण देना चाहिए। राजस्थान नहर योजना का विवरण नहीं देना चाहिए।]

10

कृषि एवं उसकी समस्याएँ

प्रारम्भिक—कृषि का महत्त्व

प्रत्येक देश में कृषि विशेष महत्त्व रखती है। यदि देखा जाय तो विश्व के प्रत्येक देश में सबसे पहले कृषि का ही विकास हुआ। औद्योगिक विकास कृषि के विकास के बाद ही हुआ। खेती को किसी भी प्रदेश की सभ्यता का स्तर नापने का मापदण्ड कहा गया है। कृषि मनुष्यों के लिए खाद्य पदार्थ प्रदान करती है और अनेक उद्योगों का कच्चा माल भी। उद्योग धन्धों के विकास का देश के लिए जितना महत्त्व है उतना ही, वरन् उससे भी अधिक कृषि के विकास का है। इंगलैण्ड के उदाहरण से हम कथन की पुष्टि हो जावेगी। इंगलैण्ड ने उद्योग धन्धों के विकास की ओर ही अपना ध्यान विशेष रूप से केन्द्रित रखा, क्योंकि वह आवश्यक खाद्य पदार्थ एवं कच्चे पदार्थ अपने उपनिवेशों से प्राप्त करता रहा। परन्तु अब केवल कुछ उपनिवेशों के अतिरिक्त सभी स्वतन्त्र हो गये हैं अतः इङ्गलण्ड के आर्थिक जीवन के सम्मुख अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं। इसलिए प्रत्येक देश अपने औद्योगिक विकास के साथ ही कृषि के विकास की ओर भी विशेष ध्यान रखता है। यदि कोई देश इस ओर ध्यान न दे तो शान्ति काल में तो पूर्ति कर सकता है, परन्तु युद्धकाल में खाद्यान्नों का आयात असम्भव भी हो सकता है।

भारत में कृषि का धन्धा अतीत काल से महत्त्वशील रहा है और आज भी है। एक दार्शनिक के शब्दों में "भारत के मनुष्यों की समृद्धि की तुलना एक उस वृक्ष से कर सकते हैं जिसकी जड़ कृषि है शाखाएँ व पत्तियाँ क्रमशः वस्तु निर्माण तथा व्यापार हैं यदि इसकी जड़ को क्षति पहुँचती है तो इसकी शाखाएँ टूट जाती हैं, पत्तियाँ गिर जाती हैं और सम्पूर्ण वृक्ष सूख जाता है।" सन 1872 में देश की जनसंख्या का 60 प्रतिशत भाग और सन 1941 में 73 प्रतिशत भाग कृषि पर निर्भर था। आज भी जनसंख्या का 75 प्रतिशत से भी अधिक भाग कृषि पर ही अवलम्बित है। विश्व में चीन के अतिरिक्त भारत में ही इतनी बड़ी संख्या में लोग अपनी जीविका के लिए कृषि पर निर्भर हैं जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट है —

देश	कृषि पर निर्भर कुल जनसंख्या का प्रतिशत
भारत	75%
जापान	55%
फ्रांस	25%
प० जर्मनी	15%
स० रा० अमरिका	10%
इंगलण्ड	7%

कृषि का महत्त्व इससे भी स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्र की कुल आय का लगभग आधा भाग कृषि से ही प्राप्त होता है।

जी० डी० एच० कोल के शब्दों में, "भारत की आर्थिक समस्या की कुन्जी कृषि के मापदण्ड में सुधार और उपज शक्ति बढाने में निहित है, न कि बडे पमाने के उद्योगों के निर्माण में। कृषकों की क्रय शक्ति में वृद्धि ही औद्योगिक विकास के लिए एक सुदृढ आधार प्रस्तुत कर सकेगी।

भारत में कृषि

पृथ्वी के धरातल के लगभग 7 5 प्रतिशत भाग से ही सम्पूर्ण विश्व के लिए खाद्यान्न और उद्योग धन्धों के लिए कच्चे माल की पूर्ति हो जाती है। भारत में कुल क्षेत्रफल के लगभग 53 प्रतिशत क्षेत्र में खेती होती है जिसमें से 9 प्रतिशत के लगभग भूमि परती छोड दी जाती है। इस प्रकार केवल 44 प्रतिशत भाग पर ही खेती होती है। भारत में सबसे अधिक खेती सतलज गंगा के मैदान में ही होती है, जहाँ देश की कुल खेती के क्षेत्र का आधे से कुछ ही कम भाग है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि भारत में सारे संसार की कृषि के क्षेत्र का लगभग 13 प्रतिशत भाग है।

भारतीय कृषि के पिछडे होने के कारण अथवा समस्याएँ

आश्चर्य की बात है कि कृषि भारत का मुख्य व्यवसाय होने तथा लगभग 75% जनसंख्या इसी व्यवसाय में संलग्न होने पर भी हमारे देश में कृषि अवनत दशा में है। संयुक्त राज्य अमरिका, आस्ट्रेलिया, रूस, अर्जेण्टाइना इटली आदि देशों में कृषि उद्योग में कम व्यक्ति लगे होने पर भी ये देश कृषि में भी उन्नत हैं। डा० क्लाउडस्टन के शब्दों में, 'भारत में हम पिछडी हुई जातियाँ रखते हैं, हम पिछडे हुए उद्योग भी रखते हैं और कृषि दुर्भाग्यवश उनमें से एक है।' भारत में कृषि के अवनत होने के निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं —

(1) **भूमि के छोटे छोटे टुकडे**—भारतीय कृषकों के पास छोटे छोटे खेत हैं, जिनमें कृषक श्रम व पूंजी का पूर्णत उपयोग नहीं कर पाता है। भारत में कृषि श्रम जाँच कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार दो एकड अथवा इससे छोटे खेत हो सबसे अधिक है। पंजाब में लगभग 25 प्रतिशत कृषक ऐसे हैं जो एक एकड अथवा उससे

कम भूमि पर खेती करते है। इन छोटे छोटे खेतों में भी निरन्तर बँटवारे होते रहते है। इसका प्रमुख कारण यह है कि देश की जनसंख्या की वृद्धि बहुत हो रही है। यदि अन्य देशों की भारत से तुलना करें तो ज्ञात होगा कि भारत में खेती का आकार बहुत ही छोटा है। संयुक्त राज्य अमरिका में खेती का औसत आकार 145 एकड़, डेनमार्क में 40 एकड़ हालैंड में 26 एकड़, फ्रांस में 26 5 एकड़, जर्मनी में 21 5 एकड़ और इंगलैण्ड में 14 5 एकड़ है।

खेतो के उपविभाजन का एक परिणाम यह होता है कि खेत छिटके हुए हो जाते हैं जिनमे अधिक श्रम व व्यय होता है और कार्यक्षमता नहीं बढ़ने पाती है।

(2) जनसंख्या मे वृद्धि—भारत की जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि तो होती है परन्तु उसी अनुपात में कृषि की भूमि में वृद्धि न होने के कारण भूमि पर अधिक भार पड़ता है। देश में उद्योग धन्धों में इतनी वृद्धि नहीं हुई है कि वे देश की बढ़ती हुई जनसंख्या को खपा लें, अतः इन लोगों को विवश होकर कृषि पर ही निर्वाह करना पड़ता है और परिणामस्वरूप खेतों का बटवारा होता है।

(3) भूमि का असमान वितरण—कुछ कृषकों के पास तो बिल्कुल ही भूमि नहीं है व कुछ के पास बहुत कम है। कुछ मनुष्यों (जमीदारों) के पास इतनी भूमि है कि वे किसानों को बोने के लिए दे देते हैं और कर वसूल करते हैं। अतः किसान के हृदय में अपनत्व की भावना न रहने के कारण खेतों में स्थायी सुधार आदि की ओर ध्यान नहीं रहता है।

(4) प्राचीन तरीके—भारतीय कृषक आज भी कृषि में अपने पुराने तरीकों को ही अपनाता है। वह खेती में पुराने हल का जिसको एक पाश्चात्य विद्वान ने 'लकड़ी का टुकड़ा' बतलाया है प्रयोग करता है। कहते हैं 'समय परिवर्तनशील है और हरेक में परिवर्तन ले आता है' परन्तु समय इसमें परिवर्तन नहीं ला सका। हल चलाने के लिए बैलों का प्रयोग होता है जो कमजोर होते हैं, क्योंकि अर्द्ध नग्न एवं भूखा किसान इन्हें अच्छा चारा नहीं दे सकता है।

(5) अशिक्षा—भारतीय कृषक बिल्कुल ही अपढ़ होते हैं। अतः उन्हें कृषि में उन्नति के उपाय, कीटाणुओं से रक्षा, खाद देने आदि के विषय में समझाया जाय तो उसका विशेष फल नहीं होता है। साथ ही भारतीय कृषक रूढ़िवादी हैं और इस कारण वे कृषि के पुराने तरीकों में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं करते हैं।

(6) ऋणग्रस्तता—'भारतीय कृषक ऋण में जन्म लेता है, ऋण में पलता है और ऋण में ही मर जाता है।' इसका प्रमुख कारण सामाजिक कुरीतियाँ हैं। कृषक मृत्यु भोज विवाह आदि अवसरों पर समाज में अपना स्थान रखने के लिए बहुत सा ऋण ले लेता है।

(7) जलवायु—भारतीय कृषि को वर्षा का जुआ कहना अनुपयुक्त न होगा। यहाँ वर्षा अनिश्चित होने के कारण कृषि को बहुत हानि पहुँचती है। कभी तो मानसून निश्चित समय से पहले आ जाते हैं और कभी देर से। इसके अतिरिक्त

कभी तो वर्षा इतनी कम होती है कि पर्याप्त पानी भी नहीं मिल पाता और कभी अतिवृष्टि से हानि हो जाती है।

(8) सिंचाई के साधनों की कमी—यद्यपि विश्व में सबसे अधिक नहरें भारत में ही हैं, फिर भी सिंचाई के साधनों का विकास आवश्यक है। सरकार इस ओर प्रयत्नशील है।

(9) फसल के शत्रु—अनेक प्रकार के कीड़े फसल को नष्ट कर देते हैं। अनेक प्रकार के कीड़े पौधों की जड़ में लग जाते हैं। दीमक, चींटे, चूहे, टिड्डियाँ, घासटिड्डे आदि फसल को काफी हानि पहुँचाते हैं। अनुमान किया गया है कि "कीड़े समस्त पृथ्वी की दस प्रतिशत फसलों को नष्ट कर देते हैं।"

(10) खाद का अभाव—हमारे देश में कृषक ईंधन के रूप में गोबर का प्रयोग करता है। गोबर का खाद सस्ती व अच्छी होती है। इस दशा को देखते हुए एक विद्वान ने तो यहाँ तक कहा है कि 'गोबर के साथ हम अपनी उन्नति को भी जला रहे हैं। अतः कृषक अपने खेतों में उपयुक्त खाद नहीं दे पाता है, जिसके फलस्वरूप उपज भी कम होती है।

(11) अच्छे बीज का अभाव—हमारे कृषक को निर्धनता के कारण श्रेष्ठ किस्म के बीज उपलब्ध नहीं हो पाते हैं, जिसके फलस्वरूप फसल अच्छी नहीं होती है।

(12) पूँजी की कमी—भारतीय कृषक के पास पूँजी की कमी होने से वह खेतों के लिए खाद अच्छे पशु व अन्य सुधार के लिए व्यय नहीं कर सकता है। इस कारण भारतीय कृषक विस्तृत खेती करता है, गहरी खेती नहीं करता।

(13) भण्डार एवं विक्रय की कठिनाइयाँ—भारतीय कृषक फसल तैयार हो जाने के पश्चात् समस्त फसल को एक साथ ही बाजार में ले जाते हैं जिससे प्रदाय (Supply) बढ़ जाती है और भाव गिर जाते हैं। इसका कारण यह है कि किसानों के पास फसल को सुरक्षित रखने के लिए भण्डार नहीं हैं। इसके अतिरिक्त, मण्डियों एवं गाँवों में व्यापारी व उनके एजेण्ट कृषकों को ठगने का ही प्रयत्न करते हैं और पूरा मूल्य नहीं देते हैं।

(14) सहायक उद्योग धन्धों की कमी—कृषक के पास सहायक धन्धों की कमी के कारण वर्ष में बहुत से भाग में वे बेकार रहते हैं। शाही कमीशन के अनुसार 'किसानों को साल में चार महीने तक कोई काम नहीं रहता।' डॉ० राधाकमल मुकर्जी के अनुसार 'उत्तरी भारत में केवल 200 दिन के लिए कृषकों को काम मिल सकता है।' डॉ० स्टोडर के अनुसार 'साल भर में केवल 5 महीने ही मद्रासी किसान खेती में लगे रहते हैं। श्री कीटिंग के अनुसार, दक्षिण बम्बई 180 से 190 दिवस के लिए खेतों में अधिक कार्य रहता है।'

(15) सरकारी उदासीनता—भारत में विदेशियों का राज्य रहा और उन्होंने अपने स्वार्थवश भारतीय कृषि के विकास की ओर विशेष प्रयत्न नहीं किये। परन्तु अब यह बात नहीं है।

उन्नति के कुछ परामर्श

हमने ऊपर देखा कि किन प्रमुख कारणों से हमारे देश में कृषि अवनत दशा में है। यदि इनको जड़ से उन्मूलन कर दिया जाय तो यहाँ कृषि में उन्नति हो सकती है। यहाँ हम कृषि की उन्नति के लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत करते हैं —

(1) सहकारिता का प्रचार—देश की कृषि की उन्नति के लिए सहकारिता का प्रचार आवश्यक है। इसमें भूमि पर किसानों का अधिकार तो रहता है किन्तु प्रत्येक कृषक अपने अपने खेतों में ही खेती नहीं करता। कुछ कृषक अपने खेतों को मिलाकर बड़ा लेते हैं और सम्मिलित रूप से एक निश्चित योजना से कार्य करते हैं। फसल तैयार होने पर खेत व परिश्रम के आधार पर फसल को आपस में वितरण कर लेते हैं। विभिन्न गाँव पंचायतों द्वारा इस दिशा में योग देने से कार्य में सुविधा हो सकती है। पाटिल रिपोर्ट तथा कृष्णप्पा ने भी सहकारिता खेती पर बल दिया है।

(2) किसान सहकारी बैंक—किसानों की आर्थिक सहायता के लिए किसान सहकारी बैंक की स्थापना की जानी चाहिए। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि सन् 1961 में 'फार्मर्स कोआपरेटिव बैंक आफ इण्डिया लि०' (किसान सहकारी बैंक) दिल्ली में रजिस्टर्ड हो चुका है। बैंक के संयोजक हैं भारत कृषक समाज और फार्मर्स फोरम।

बैंक के उद्देश्य हैं कृषि तथा अन्य उद्देश्यों के लिए किसान (अपने सदस्य) को धन उपलब्ध करना और बैंक सुविधाएँ उपलब्ध करना। किसानों की सहकारी संस्थायें किसानों के अन्य गैर राजनैतिक संगठन और अन्य व्यक्ति (जिनकी संख्या कुल सदस्या की संख्या के दस प्रतिशत से अधिक नहीं होगी) उसके सदस्य बन सकते हैं। बैंक का एक शेयर 100 रुपये का है व पूँजी 1 करोड़ रु० है।

(3) वैज्ञानिक तरीके—कृषकों को चाहिए कि कृषि में नवीन वैज्ञानिक तरीके अपनायें। यह परामर्श देना तो सरल है, परन्तु कार्यान्वित करने में अनेकों कठिनाइयाँ हैं। इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए सहकारिता ही एकमात्र उपाय है। ट्रैक्टर को भारतीय कृषक नहीं खरीद सकता अतः सहकारिता के आधार पर ट्रैक्टर का प्रयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार वैज्ञानिक खादों का भी प्रयोग करना चाहिए ताकि भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़े।

(4) अच्छे बीज—श्रेष्ठ किस्म के बीज बोने से खेती की उपज में 15 प्रतिशत से 20 प्रतिशत तक वृद्धि हो जाती है। अतः अच्छे किस्म के बीजों का ही उपयोग करना चाहिए। बम्बई तथा पंजाब में अच्छे किस्म के बीज बोकर प्रयोग किया गया है तथा यह प्रयोग सफल हुआ है।

(5) सामूहिक खेती—इस प्रणाली द्वारा खेती करने से उत्पादन में वृद्धि अवश्य हो सकती है। 10-12 गाँवों के समूह बनाकर उनमें सामूहिक खेती करने से स्थिति में सुधार की पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं। इसका प्रयोग साम्यवादी देशों में विशेष

रूप से किया गया है, किन्तु पोलैंड के साम्यवादी नेता गोमुल्का के शब्दों में यह प्रणाली पूर्णतः सफल सिद्ध नहीं हुई है।

(6) शिक्षा—कृषकों की उन्नति व रूढ़िवादिता दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें शिक्षित किया जाय, नई मशीनों, खादों आदि की विशेषतायें समझाई जायें। सरकार को चाहिये कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी बच्चों को निःशुल्क शिक्षा अनिवार्य करे तथा प्रौढ़ शिक्षा का भी प्रबन्ध करे।

(7) कुटीर उद्योगों का विकास—कृषक वर्ष में 5-7 महीने बेकार बैठा रहता है, अतः कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देना अनिवार्य है। इससे उसकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी।

(8) सिंचाई की व्यवस्था—भारत की कृषि को उन्नत बनाने के लिए यह आवश्यक है कि सिंचाई के साधन उपलब्ध किये जावें ताकि यदि किसी वर्ष वर्षा कम हो अथवा देर से हो तो हानि न हो। भारत सरकार ने कई योजनाएँ बनाई है, जिनमें दामोदर घाटी योजना, भाखरा नांगल, हीराकुड, चम्बल आदि पूरी हो चुकी हैं।

(9) टिड्डी एवं कीटाणु—हमारे देश में कभी-कभी टिड्डियों का आक्रमण हो जाता है। ये जिस भाग पर भी आक्रमण करती हैं उसे साफ ही कर देती हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कीटाणु भी कृषि को क्षति पहुँचाते हैं। इनको रोकने के लिए सरकार प्रयत्नशील है।

(10) अनुसन्धानशालायें—सरकार को चाहिए कि स्थान-स्थान पर अनुसन्धानशालाएँ स्थापित करे ताकि कृषि की उन्नति हो सके। भारत में कृषि सम्बन्धी शिक्षा और शोधकार्य के लिए तृतीय पंचवर्षीय योजनाकाल में पाँच अन्य कृषि विश्वविद्यालयों की स्थापना पर सरकार विचार कर रही है। इन पर 4 करोड़ रुपये व्यय होंगे।

(11) भण्डार—भारत सरकार को चाहिए कि गाँवों में गोदाम बनवाये अथवा छोटी परन्तु पक्की बस्तियाँ बनवाये, जिनमें साधारण शुल्क लेकर कृषकों को अपना अनाज रखने की सुविधा हो और वे अपनी फसल के उचित दाम प्राप्त कर सकें।

(12) आर्थिक सहायता—कृषकों को सस्ती आर्थिक सहायता सुलभ होनी चाहिए। भारतीय राज्य बैंकों की स्थापना 1 जुलाई 1955 को हो चुकी है जिसने अब तक अनेक जिलों व उप जिलों में अपनी शाखाएँ स्थापित कर दी हैं। इससे थोड़ी सहायता अवश्य ही मिल रही है।

(13) फसल प्रतियोगिता—विभिन्न भागों में फसल प्रतियोगितायें सरकार को संगठित करनी चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि कृषक अधिक से अधिक उत्पादन करने का प्रयत्न करेंगे और अधिक उत्पादन करने के लिए अच्छे बीज, श्रेष्ठ खाद व अन्य आधुनिक तरीके अपनायेंगे और एक बार लाभ होने पर फिर उन्हीं

साधारा को अपनायेंगे। केन्द्रीय व अनेक राज्य सरकारों ने इस प्रकार की प्रसार प्रतियोगिताएँ संगठित करना आरम्भ कर दी हैं जिनके फल अच्छे हो रहे हैं।

(14) भूमि वितरण—जिस भूमि पर भूमि के मालिक कृषि नहीं करते हो उस भूमि को कृषकों में वितरित कर दिया जाय। सन्त विनोबा भावे के प्रयत्न इस ओर अत्यन्त ही सराहनीय हैं।

कृषि और पंचवर्षीय योजनाएँ

स्पष्ट है कि भारतीय कृषि की अवस्था बहुत खराब है। प्रथम योजना आयोग ने भी बतलाया कि ग्रामीण जनसंख्या का लगभग एक तिहाई भाग खेतिहर मजदूरों का है उनमें से भारी बहुमत ऐसे लोगों का है जो कठिनता से अपना पेट भरते हैं।'

पंचवर्षीय योजनायें—

प्रथम पंचवर्षीय योजना 2 069 करोड़ रुपये की बनाई गई थी, जिसमें 361 करोड़ रुपये की राशि कृषि तथा सामुदायिक विकास' के लिए नियत की गई थी। यह राशि सम्पूर्ण व्यय राशि (2 069 करोड़ रुपये) का 17.5 प्रतिशत है। इस योजनाकाल में कृषि क्षेत्र में काफी विकास हुआ। प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि 31 मार्च 1956 को खतम हो गई।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना 1 अप्रैल 1956 से लागू हुई। द्वितीय पंचवर्षीय योजना की कुल व्यय की राशि 4 800 करोड़ रुपये की थी। इसमें से कृषि तथा सामुदायिक विकास पर 667 करोड़ रुपये व्यय किये जाने की व्यवस्था थी। इस प्रकार स्पष्ट है कि द्वितीय योजनाकाल में पहली योजना की अपेक्षा लगभग 63 प्रतिशत राशि अधिक व्यय की जाने की व्यवस्था थी।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में कृषि विकास के लिए 1 281 करोड़ रुपये रखे गये थे। इसमें से कृषि उत्पादन पर लगभग 226 करोड़ रुपये व्यय हुए। द्वितीय योजना में इसके लिए 98 करोड़ रुपये रखे गये थे। निम्न तालिका[1] से तुलनात्मक स्थिति ज्ञात होगी —

विभिन्न योजनाओं में कृषि एवं सम्बन्धित तत्वों पर व्यय

योजना	व्यय प्रावधान
प्रथम पंचवर्षीय योजना	361 करोड़ रु०
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	667 करोड़ रु०
तृतीय पंचवर्षीय योजना	1 089 करोड़ रु०[2]
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	2 728 करोड़ रु०*

चौथी पंचवर्षीय योजना में कृषि के लिए 2728 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 भारतीय कृषि की समस्याओं का विवेचन कीजिये। इन समस्याओं को हल करने के लिए सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं में जो चेष्टा की है उनका संक्षेप में वर्णन कीजिए।
(T D C 1971)

1 *Third Five Year Plan (Summary)* p 69

2 *Fourth Five Year Plan* p 54 and 57

11

कृषि की उपज

भारत मे कृषि पदार्थों का वर्गीकरण

भारत की प्राकृतिक दशा, जलवायु तथा मिट्टी की विभिन्नता के कारण देश म अनेक प्रकार की कृषि उपज का उत्पादन होता है।

भारत म कृषि की विभिन्न उपजों का अध्ययन निम्न आधार पर कर सकते हैं—(I) खाद्य पदार्थ—गेहूं चावल, जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि। (II) औद्योगिक पदार्थ—गन्ना कपास, पाट रबर। (III) पेय पदार्थ—चाय कहवा। (IV) व्यापारिक पदार्थ—तिलहन, तम्बाकू, गरम मसाले। (V) अन्य पदार्थ—फल एवं तरकारियां।

उपरोक्त वर्गीकरण के आधार पर कृषि-पदार्थों का विवरण तीन अध्यायों के अन्तर्गत दिया जा रहा है। इस अध्याय म केवल खाद्य पदार्थ पर अध्ययन करेंगे।

(I) खाद्य पदार्थ
(Food Crops)

(1) गेहूं (Wheat)—

महत्त्व—खाद्यान्नों म गेहूं का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इसका प्रमुख कारण इसकी उपयोगिता है। गेहू म काफी मात्रा म विटामिन, प्रोटीन और कार्बोहाइडेट मिलते है। इस कारण भोजन काफी सन्तुलित रहता है। इतनी मात्रा मे ये तत्त्व अन्य खाद्यान्नों म नही पाये जाते हैं। गेहू (जौ के अतिरिक्त) मे एक यह भी विशेषता है कि यह भिन्न भिन्न जलवायु म उत्पन्न हो जाता है। यही कारण है कि संसार के शायद समस्त धनी जनसंख्या वाले देशों म थोडा बहुत गेहू अवश्य उत्पन्न होता है। इसीलिए परसीवल ने कहा है कि संसार की अधिकाधिक जातियां गेहूँ के ऊपर निर्भर हैं। विश्व म गेहू की खेती का कुल क्षेत्रफल संसार म अन्य सभी अनाजों से अधिक है।

उपज की दशाएं—गेहू की उपज की दशाओं को दो भागों म विभक्त कर सकते है—(अ) भौगोलिक दशाएँ तथा (ब) आर्थिक दशाएं। गेहू विभिन्न प्रकार की जलवायु और मिट्टी म उत्पन्न किया जा सकता है। मिट्टी की अपेक्षा गेहू की खेती मे जलवायु का अधिक महत्त्व है। यह शीतोष्ण प्रदेशों का प्रमुख पौधा है। भारत म यह रबी की फसल है।

(अ) भौगोलिक दशाएं—(1) तापक्रम—गेहूं की उपज के लिए 15° से 26° C तक का तापक्रम चाहिए। बोने के समय 15° C का तापक्रम गेहूं की उपज के लिए प्रायः न्यूनतम सीमा निर्धारित करता है किन्तु अधिक उच्चतम तापक्रम की प्रायः कोई सीमा नहीं है। साधारणतः 26° C के तापक्रम से अधिक में गेहूं नहीं होने पाता है। गेहूं के बोते समय लगभग 8° C तापक्रम होना चाहिए अन्यथा अंकुर नहीं निकलता। गेहूं पकते समय ऊँचे तापक्रम की आवश्यकता होती है किन्तु उच्च तापक्रम की अवधि दीर्घ नहीं होनी चाहिए क्योंकि गेहूं झड़ने लग जाता है। पकते समय 21° से 26° C का तापक्रम आदर्श होता है। गंगा की घाटी (विशुद्ध रूप से मानसूनी [illegible] के कारण) में गेहूं की फसल उसकी मात्रा की अपेक्षा शीघ्र पक जाती है, क्योंकि वहां गर्मी कुछ अधिक ही पड़ती है।

(2) वर्षा—संसार में गेहूं उत्पन्न करने वाले भागों में प्रायः 25 Cms से 90 Cms वार्षिक वर्षा होती है। प्रो० ई० बेकर के अनुसार 25 Cms से 100 Cms तक वर्षा वाले भागों में गेहूं अच्छी तरह हो सकता है। इससे अधिक पानी हानिकारक है और यही कारण है कि जिन भागों में 100 Cms से अधिक वार्षिक वर्षा होती है वहां गेहूं की खेती नहीं हो सकती है। जिन भागों में आवश्यकता से कम वर्षा होती है वहां सिंचाई द्वारा इसकी खेती की जा सकती है। यही कारण है कि पूर्वी पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में जहां वर्षा आवश्यकता से कम होती है और कभी भी 75 Cms से अधिक नहीं होती, गेहूं की खेती सिंचाई की सहायता से अत्यन्त सफल हुई है। एक अनुमान के अनुसार उत्तर प्रदेश में लगभग 43%, पंजाब, हरियाणा और राजस्थान में गेहूं क्षेत्र के लगभग 45% भाग में सिंचाई द्वारा गेहूं की खेती होती है। गेहूं को बोते समय पानी की आवश्यकता है लेकिन बहुत अधिक वर्षा (जैसी पश्चिमी बंगाल व असम में होती है) हानिप्रद होती है।

इस प्रकार गेहूं की प्रारम्भिक अवस्था में ठण्डा व आर्द्र जलवायु श्रेष्ठ रहता है। फसल पकते समय शुष्क उष्ण और धूप का चमकीला मौसम अच्छा रहता है। गेहूं को बोते समय तथा फसल पकने के समय से कुछ पूर्व यदि साधारण वर्षा भी हो जाती है तो यह अत्यन्त लाभप्रद होता है। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान व पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कभी-कभी दिसम्बर जनवरी में चक्रवातीय वर्षा हो जाती है जिसके फलस्वरूप गेहूं के दाने मोटे व किस्म अच्छी हो जाती है। यदि न्यूनतम आवश्यक पानी—वर्षा अथवा सिंचाई द्वारा—उपलब्ध हो जाता है गेहूं तो का पौधा बहुत अधिक शुष्कता भी सहन कर लेता है।

(3) मिट्टी—यह ध्यान रहे कि गेहूं की उपज के लिए मिट्टी उतना महत्त्वपूर्ण तत्त्व नहीं है जितना कि जलवायु। इस प्रकार गेहूं अनेक प्रकार की मिट्टियों में हो सकता है किन्तु इसके लिए सबसे उत्तम मिट्टी या तो भारी दुमट (Heavy loam) हो या हल्की चिकनी मिट्टी। जिस मिट्टी में नाइट्रोजन तत्त्व अधिक होते हैं, वह मिट्टी बहुत अच्छी समझी जाती है। काली मिट्टी में बहुत बढ़िया किस्म का गेहूं होता है।

मिट्टी का काला रंग नाइट्रोजनिक पदार्थों की अधिकता के कारण होता है। दक्षिणी रूस (यूक्रेन), साइबेरिया, आस्ट्रेलिया एवं संयुक्त राज्य अमेरिका (सस्केचवान, टैक्सास आदि) के काली मिट्टी वाले प्रदेशों में भी गेहूँ की खेती होती है। भारत में काली मिट्टी के प्रदेशों में गेहूँ की खेती इसलिए नहीं की जाती क्योंकि वहां मुद्रादायिनी (Cash Crop) कपास का उत्पादन किया जाता है। अतः भारत में तो सतलज गंगा का मैदान ही गेहूँ उत्पन्न करने वाला भाग है।

(4) खाद—गेहूँ के उत्पादन से भूमि की प्राकृतिक उर्वरा शक्ति समाप्त होने लगती है अतः उसे पुनः शक्ति प्रदान करने के लिए व्यवस्थित रूप से खाद देना आवश्यक है। रासायनिक खाद में अमोनियम सल्फेट, नाइट्रेट आदि विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। भारत में अधिकतर गोबर की अथवा कूड़े कर्कट की खाद ही विशेषरूप से प्रयोग की जाती है किन्तु आजकल वैज्ञानिक खादों का प्रयोग भी सरकार के प्रचार के कारण बढ़ रहा है।

(5) भूमि का ढाल—गेहूँ के उत्पादन में भूमि का ढाल भी एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। गेहूँ की विस्तृत खेती (Extensive cultivation) के लिए समतल भूमि आदर्श मानी जाती है ताकि उस पर ट्रैक्टर व अन्य मशीनों का प्रयोग सरलता से किया जा सके, किन्तु गहरी खेती (Intensive cultivation) वाले प्रदेशों में अच्छे ढाल की आवश्यकता होती है ताकि पानी का निकास होता रहे, अन्यथा जड़ों में पानी एकत्रित होने से गेहूँ का पौधा सड़ जाता है। एक विद्वान ने बतलाया है कि लहरदार (Undulating) भूमि गेहूँ के उत्पादन के लिए सर्वश्रेष्ठ होती है।

(ब) आर्थिक दशाएँ—(1) श्रमिक—गेहूँ की खेती के लिए सस्ते श्रमिकों की भी आवश्यकता होती है। इसका कारण यह है कि भारत में कृषि करने के ढंग प्राचीन हैं मशीनों का प्रयोग नहीं होता है अतः खेत को बोने, फसल काटने तथा दानों का निकालने में पर्याप्त श्रम की आवश्यकता होती है। खेतों को जोतने बीज बोने, गेहूँ काटने व साफ करने में ट्रैक्टर हारवेस्टर तथा कम्बाइन आदि यन्त्रों का प्रयोग करने से अधिक श्रमिकों की आवश्यकता नहीं होती है।

(2) पूंजी—जिन देशों में गेहूँ की विस्तृत खेती की जाती है (जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, अर्जेण्टाइना, आस्ट्रेलिया रूस आदि) वहां अधिक पूंजी की आवश्यकता पड़ती है। इसके विपरीत, जिन देशों में गेहूँ की गहरी खेती की जाती है वहां अपेक्षाकृत बहुत कम पूंजी की आवश्यकता पड़ती है। भारत में गहरी खेती होने के कारण बहुत अधिक पूंजी की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इसी प्रकार पश्चिमी पाकिस्तान में भी गेहूँ की खेती में बहुत अधिक पूंजी की आवश्यकता नहीं पड़ती है क्योंकि वहाँ भी गहरी खेती ही होती है।

उपज के क्षेत्र—गेहूँ प्रायः उन क्षेत्रों में उत्पन्न किया जाता है जहाँ चावल के उत्पादन के लिए अनुकूल भौगोलिक दशाएँ प्राप्त नहीं हैं इसलिए गेहूँ व चावल में प्रतियोगिता नहीं होती। गेहूँ का क्षेत्र सिंचाई के साधनों के अपूर्ण विकास

के कारण सीमित है। यदि एक रेखा बम्बई से कलकत्ता तक खींची जावे तो विदित होगा कि इस रेखा के उत्तरी तथा पश्चिमी भागों में भारत के कुल गेहूँ उत्पादन की मात्रा का 90 प्रतिशत से भी अधिक उत्पन्न करने वाला भाग है। विश्व के गेहूँ उत्पादक देशों में भारत का चतुर्थ स्थान है। प्रथम रूस, दूसरा संयुक्त राज्य अमरीका, तीसरा कनाडा व चौथा भारत है। भारत में खाद्यान्नों के कुल क्षेत्रफल के लगभग 12% भाग में गेहूँ की खेती होती है।



चित्र 15

विभाजन के पहले देश में सबसे अधिक गेहूँ पैदा करने वाला भाग पंजाब का था परन्तु मुख्य उत्पादन-क्षेत्र (मान्टगुमरी, लायलपुर व मुल्तान जिले) पश्चिमी पाकिस्तान में चले गए हैं। अब गेहूँ उत्पादक राज्यों में उत्तर प्रदेश का प्रथम स्थान आता है क्योंकि भारत में सबसे अधिक गेहूँ इसी राज्य में

इस राज्य मे गेहू की वार्षिक उपज का औसत 15 16 लाख टन है जाकि भारत के कुल गहू उत्पादन का लगभग 20 प्रतिशत है।

(3) मध्य प्रदेश—गेहू उत्पादन की दृष्टि से मध्य प्रदेश का भारत म तीसरा स्थान है। यद्यपि इस राज्य म पूर्वी पजाब राज्य की अपना गहूँ का क्षेत्र कही अधिक है किन्तु भूमि उतनी अच्छी न हाने तथा सिंचाई की उतनी सुविधाए न हाने के कारण उपज की मात्रा कम है। यहाँ गेहू का औसत वार्षिक उत्पादन 13 14 लाख टन है।

गेहू के उत्पादन की दृष्टि से ग्वालियर, होशगाबाद और सागर जिले सबसे महत्वशील हैं। इनके अतिरिक्त जबलपुर भोपाल, उज्जन, रीवा निमाड जिला म भी गेहू की खती होता है।

(4) राजस्थान—राजस्थान के पूर्वी भागा—जयपुर अलवर भरतपुर कोटा, बूदी आदि म गहू की खेती हाती है। बीकानेर डिवीजन के गगानगर जिले मे गगा नहर बन जान के कारण अब राजस्थान म यही सबसे अधिक गेहू उत्पन्न होता है। गगानगर को राजस्थान का खाद्य भडार कहते हैं। राजस्थान म आजकल 10 लाख टन स भी अधिक गहूँ उत्पन होता है। राजस्थान नहर बन जान के पश्चात इस राज्य में गहूँ के उत्पादन म बहुत अधिक वृद्धि हागी।

(5) महाराष्ट्र राज्य—इस राज्य म खानदश, नासिक बुलडाणा अकोला और अमरावती आदि जिला म गहूँ की खती होता है। इस राज्य म प्रति एकड उपज भी कम है। यहाँ गहूँ का वार्षिक उत्पादन लगभग 3½ लाख टन होता है। महाराष्ट्र के लगभग 4 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि म गहू की खती होती है। आवश्यकता पूर्ति के लिये अन्य स्थानों से गहूँ मँगवाया जाता है।

(6) गुजरात राज्य—गुजरात राज्य म बडौदा नासिक व अहमदाबाद गेहू उत्पादक जिल हैं। यहाँ भी गहूँ की प्रति हेक्टेयर उपज बहुत कम है। वार्षिक उत्पादन लगभग 3 लाख टन गहू है।

(7) अन्य—इन राज्यो के अतिरिक्त साधारण मात्रा म गहू मसूर राज्य (शिमोगा धारवाड बलगाँव जिला) और बिहार राज्य (पटना मुजफ्फरपुर जिला) म भी होता है।

गेहूँ का क्षेत्रफल—भारत म आजकल (1969 70) म लगभग 1 66 करोड हेक्टेयर भूमि म खती हो रही है जबकि सन् 1950 51 म केवल 97 लाख हेक्टेयर भूमि म खती हो रही था। इस प्रकार गत बीस वर्षों म गहूँ के उत्पादन-क्षेत्र म काफी वृद्धि हुई है। अग्रलिखित तालिका म भारत का गेहू का क्षेत्र बताया गया है —

भारत में गेहूँ का क्षेत्रफल[2]

वर्ष	करोड़ हेक्टेयर
1950 51	0 97
1955 56	1 23
1960 61	1 29
1965 66	1 26
1967 68	1 49
1968 69	1 59
1969 70	1 66

उत्पादन की मात्रा—निम्न तालिका स्पष्ट करेगी कि कौन-सा राज्य गेहूँ के कुल उत्पादन का कितना प्रतिशत उत्पन्न करता है :—

राज्य	देश की कुल उपज का प्रतिशत
उत्तर प्रदेश	40
पंजाब व हरियाणा	20
मध्य प्रदेश	10
महाराष्ट्र व गुजरात	7
बिहार	6
राजस्थान	5
अन्य राज्य	12
योग	100

उपरोक्त तालिका को देखने पर ज्ञात होता है कि गेहूँ उत्पादन में उत्तर प्रदेश का प्रथम स्थान है और पंजाब एवं हरियाणा का दूसरा।

विश्व के गेहूँ उत्पादक देशों में भारत का चतुर्थ स्थान प्राप्त है। भारत में गेहूँ के उत्पादन की मात्रा[1] पिछले वर्षों में इस प्रकार रही :—

वर्ष	लाख टन
1950 51	63 6
1955 56	86 2
1960 61	108 2
1965 66	107 2
1966 67	115 3
1967 68	165 4
1968 69	186 5
1969 70	200 9
1970 71	211 0 (अनु०)

1 *Source* Ministry of Food & Agriculture

चारे के रूप में काम आते हैं। बिस्किट उद्योग गेहूँ पर ही निर्भर है। इसके अतिरिक्त कपड़े की मिलों में कलफ आदि देने के लिए माँडी बनाने के काम आता है।

व्यापार—भारत में गेहूँ की कुल उपज का लगभग 45 प्रतिशत भाग उत्पादन के केन्द्रों में ही खप जाता है और शेष लगभग 55 प्रतिशत मण्डियों में विक्रय के लिए पहुँचता है। गेहूँ का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार थोड़ा होता है क्योंकि केवल वे ही राज्य गेहूँ भेज पाते हैं जहाँ आवश्यकता से अधिक गेहूँ उत्पन्न होता है।

सन 1914 तक भारत अपने गेहूँ उत्पादन का लगभग 14 प्रतिशत भाग विदेशों को निर्यात करता रहा। सन 1920 तक भारत विदेशों को गेहूँ भेजता रहा। इसके पश्चात् आस्ट्रेलिया, कनाडा तथा अर्जेन्टीना आदि देशों में गेहूँ का उत्पादन बढ़ गया तथा विदेशों में भारतीय गेहूँ से घोर प्रतिस्पर्धा होने लगी, जिसके फलस्वरूप भारतीय गेहूँ के निर्यात की मात्रा में कमी हो गई। फिर भी सन 1938 39 तक भारतीय गेहूँ विदेशों को निर्यात होता रहा। सन 1942 से भारत में गेहूँ का निर्यात बिलकुल ही बन्द हो गया। इसके पश्चात देश में गेहूँ की कमी हो गई तथा भारत गेहूँ का आयात करने वाला देश हो गया।

भारतीय संसद में बतलाया गया है कि 17 वर्षों (1947 64) में भारत में लगभग 2,500 करोड़ रुपयों का अनाज आयात किया गया है। पिछले कुछ वर्षों में भारत ने निम्नलिखित मात्रा में गेहूँ का आयात किया —

वर्ष	लाख टन में
1956	11 13
1960	38 1
1961	30 9
1966	73 3
1967	64 0
1968	35 0
1969	22 0
1970	18 4

भारत में 1967 68 में 378 करोड़ रुपये के मूल्य का और 1968 69 में 259 करोड़ रुपये के मूल्य का गेहूँ आयात किया गया। आशा है कि देश में गेहूँ का आयात निकट भविष्य में बहुत कम होने लगेगा क्योंकि देश में कृषि का क्षेत्र, उपज की मात्रा और रासायनिक खाद के उपयोग में वृद्धि हो रही है।

गेहूँ का अधिकांश भाग संयुक्त राज्य अमेरिका से आयात किया जाता है। कनाडा, अर्जेन्टाइना व आस्ट्रेलिया अन्य देश हैं जहाँ से गेहूँ आयात किया जाता है। भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य 1 अप्रैल 1971 को एक समझौता हुआ

है जिसके अनुसार वह भारत को 15 7 लाख टन गेहूँ (नये पी० एल० 480 समझौते के अन्तगत) देगा।

(2) चावल (Rice)—

महत्त्व—चावल खाद्यान्न के रूप में अतीत काल से प्रयोग होता रहा है। चावल का उत्पत्ति स्थान प्राचीन मानव सभ्यता के अज्ञात गर्भ में छिपा हुआ है। इसका उत्पत्ति स्थान भारत अथवा चीन माना जाता है। भारत में चावल का सब प्रथम उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है। भारत से यह पौधा मिस्र ले जाया गया तथा यहीं से लगभग 500 वर्ष पूर्व यूरोप और 225 वर्ष पूर्व अमरिका पहुचा। आज भी विश्व में चावल पैदा करने वाले प्रमुख भाग दक्षिणी पूर्वी एशिया में ही हैं।

यद्यपि संसार में गेहूं का उपभोग अधिक है लेकिन सत्य बात तो यह है कि शीतोष्ण प्रदेश के निवासियों के लिए गेहू जितना उपयोगी व आवश्यक है चावल भी उष्ण कटिबन्ध के निवासियों के लिए उतना ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि चावल पर संसार की लगभग आधी जनसंख्या निर्भर है। विकजर एवं बनेट के अनुसार संसार के निवासियों में 5 में से 4 चावल या गेहू खाना पसन्द करते हैं।

उपज की दशाएं—चावल की उपज के लिए उच्च तापक्रम अधिक वर्षा उपजाऊ मिट्टी व अधिक श्रमिकों की आवश्यकता होती है—

(1) तापक्रम—चावल की खेती के लिए वार्षिक तापक्रम 24 C से 26 C होना आवश्यक है। चावल के बढ़ने की आरम्भिक अवस्था में 20 C बीच की अवस्था में 24°C और फसल काटने के समय थोड़े काल के लिए 26 C के तापक्रम श्रेष्ठ समझे जाते हैं। एकमाइन (Akemine) के अनुसार चावल के पौधे के जमने के लिए भी कम से कम 10 C से 12 C का तापक्रम आवश्यक है और फसल के पकने के लिए अधिक से अधिक 40 C या औसत रूप से 10 C से 35 C तक तापक्रम रहना चाहिए। उत्तरी गोलार्द्ध में जुलाई महीने की 24°C वाली समताप रेखा (Isotherm) चावल के क्षेत्रों की उत्तरी सीमा और दक्षिणी गोलार्द्ध में जनवरी की 24 C वाली समताप रेखा इसकी दक्षिणी सीमा निर्धारित करती है। जापान, दक्षिणी कोरिया व उत्तरी चीन में 16 C के तापक्रम में चावल की खेती कर ली जाती है किन्तु भारत में ऐसा नहीं है।

(2) वर्षा—चावल की खेती के लिए अधिक पानी की आवश्यकता होती है। इसके लिए 125 Cms से 200 Cms तक की वार्षिक वर्षा पर्याप्त होती है। जिन भागों में वर्षा की मात्रा कम होती है वहाँ चावल की खेती सिंचाई की सहायता से की जा सकती है। किन्तु इसमें कठिनाई अधिक होती है और प्रति हेक्टेयर उपज भी कम होती है। हिमालय की तराई गंगा का डेल्टा तथा मालाबार तट आदि भागों में वर्षा अधिक होने के कारण पानी की कमी नहीं रहती किन्तु पंजाब, उत्तर प्रदेश और पूर्वी तटीय भागों में डेल्टाओं में सिंचाई द्वारा चावल उत्पन्न किया जाता है। बाढ़ के पानी में चावल का पौधा आश्चर्यजनक गति से बढ़ता है। वास्तव में,

चावल उत्पादन के लिए तापक्रम उतना अधिक महत्त्वशील तत्त्व नहीं है जितना कि जल, क्योंकि स्पष्ट है कि कश्मीर में चावल गर्मी में उगता है जहाँ सर्दियों में भूमि पर बर्फ जमी रहती है। यदि भारत के वार्षिक वितरण और चावल की उपज के क्षेत्रों के मानचित्रों की तुलना करें तो स्पष्ट होगा कि वर्षा की कमी के साथ साथ चावल का महत्त्व भी कम होता जाता है।

(3) मिट्टी—चावल की खेती के लिए उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। यह नदियों के द्वारा लाई गई मिट्टी व कच्छारी (alluvial) मैदानों में पैदा होती है। मिट्टी में एक आवश्यक बात यह भी होनी चाहिए कि सतह के नीचे पानी रखने की क्षमता हो। मिट्टी में उपयुक्त खाद देने से उर्वरा शक्ति में वृद्धि हो जाती है।

चावल की खेती पहाड़ी क्षेत्रों में भी होती है परन्तु वहाँ परिश्रम बहुत करना पड़ता है। पहाड़ी ढालों को सीढ़ीनुमा काटकर छोटी छोटी क्यारियाँ बना लेते हैं। कभी कभी तो कोई क्यारी 60 Cms से 90 Cms की ही होती है। पहाड़ी क्षेत्रों में बिना सिचाई के चावल की खेती नहीं हो सकती है। बहते हुए झरनों अथवा वर्षा के तालाबों में एकत्रित पानी से सिंचाई की व्यवस्था हो जाती है।

(4) सस्ते श्रमिक—चावल की खेती के लिए अधिक मात्रा में सस्ते श्रमिकों की आवश्यकता होती है। इसका कारण यह है कि आरम्भ से अन्त तक समस्त कार्य हाथ द्वारा ही किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में चावल मशीनों की सहायता से ही उत्पन्न किया जाता है। इटली ने भी पौधों को उखाड़कर पुनः बोने के लिए मशीनें तैयार की हैं। श्रीलंका में इन मशीनों का प्रयोग बढ़ रहा है। भारत में चावल के उत्पादन-सम्बन्धी समस्त कार्य हाथ द्वारा होने के कारण अधिक श्रमिकों की आवश्यकता होती है।

उपज के क्षेत्र—चावल उत्पन्न करने वाले देशों में भारत का दूसरा स्थान है, चीन का स्थान प्रथम है। चीन और भारत के बाद चावल उत्पादक देशों का क्रम इस प्रकार है—पाकिस्तान, इण्डोनेशिया, थाईलैंड और बर्मा। यही नहीं, भारत में ही सबसे अधिक क्षेत्र में चावल की खेती होती है। ऐसा अनुमान है कि हमारे देश में कुल कृषि-योग्य भूमि के 30 प्रतिशत भाग में चावल की ही खेती होती है। कॉमनवेल्थ इकोनोमिक कमेटी, लन्दन ने विश्व के चावल सम्बन्धी जो आँकड़े प्रकाशित किये हैं, उनके अनुसार भारत संसार के समस्त चावल उत्पादन का 20 प्रतिशत से भी अधिक उत्पन्न करता है।

विश्व में चावल की कुल खेती के क्षेत्र का लगभग 33 प्रतिशत भाग भारत में ही है। पिछले वर्षों में भारत में चावल की उपज का क्षेत्र[1] इस प्रकार था —

---

[1] *Source* Ministry of Food and Agriculture

वर्ष	करोड़ हेक्टेयर
1950 51	3 0
1955 56	3 1
1960 61	3 4
1965 66	3 5
1966 67	3 5
1967 68	3 6
1968 69	3 7
1969-70	3 76

यदि भारत के वार्षिक वर्षा तथा चावल उत्पादक क्षेत्रों के मानचित्रों का एक साथ अध्ययन किया जाय तो ज्ञात होगा कि ज्यों ज्यों समुद्र तटीय भागों से देश के भीतर की ओर बढ़ते हैं तो वर्षा की कमी के साथ-साथ चावल की खेती का महत्व भी कम होता जाता है।

(1) पश्चिमी बंगाल—भारत म चावल उत्पादन करने वाले राज्यों म इस राज्य का प्रमुख स्थान है। यहाँ की लगभग 60 प्रतिशत भूमि पर चावल की खेती होती है। यहाँ नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी होने के कारण अधिक खाद दन की आवश्यकता नहीं पड़ती किन्तु कभी कभी बाढ़ से फसल को बहुत हानि पहुचती है। इस राज्य म चावल की तीनो फसल होती हैं—अमन औस और बोरो। जाड़े की फसल अमन का यहाँ विशेष महत्व है और बोरो का सबसे कम। यहाँ इन फसलों का सापेक्षिक वितरण इस प्रकार है —

चावल की फसल	उत्पादन
अमन	78 प्रतिशत
औस	20 प्रतिशत
बोरो	2 प्रतिशत

पश्चिमी बंगाल म चावल की खेती जितनी भूमि पर होती है उसका 75% अमन के लिए प्रयुक्त होता है और उपज का 78% इसी फसल स प्राप्त होता है किन्तु प्रति हेक्टेयर उत्पादन की दृष्टि स बोरो ही महत्वशील है।

सुन्दरवन के दक्षिणी भाग के अतिरिक्त राज्य के प्राय प्रत्येक जिले म चावल की खेती होती है। चावल इस राज्य के निवासियों का मुख्य भोजन है, किन्तु घनी जनसंख्या होने के कारण चावल की प्राय कमी रहा करती है। यहाँ चावल का प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग 314 पौण्ड है।

यहाँ के कुछ जिले तो स्वावलम्बी है और कुछ जिलों म आवश्यकता-पूर्ति के लिए पर्याप्त चावल नहीं होता। हावड़ा, हुगली और चौबीस-परगना आदि जिलों म चावल का क्षेत्र कम है क्योंकि वहाँ औद्योगिक विकास अधिक हुआ है। जलपाईगुड़ी, दिनाजपुर, बर्दमान दार्जिलिंग, मिदनापुर आदि जिलों म अधिक चावल होता है।

पश्चिमी बंगाल राज्य में चावल की उपज बढ़ाने के अनेक प्रयत्न किये जा रहे हैं। बहुत-सा परती भूमि, जिस पर पहले कृषि नहीं की जाती थी, अब चावल की खेती के अनुकूल बनाई जा रही है। इसके अतिरिक्त दामोदर नदी की घाटी में नई भूमि भी चावल की खेती के अनुकूल बनाई जा रही है। सिंचाई के साधनों का



चित्र 16

विकास करके पुरानी भूमि पर उत्पादन बढ़ाया जा रहा है। वैज्ञानिक तरीका व श्रेष्ठ खादों का प्रयोग करके भी चावल की उपज बढ़ाने के सफल प्रयोग किये गये हैं। श्रेष्ठ किस्म के बीजों का भी प्रयोग किया जा रहा है। अनेक स्थानों पर घेरक जाति के चावल का बीज के रूप में प्रयोग किया गया है, जिससे उपज प्रति एकड़ 31 5 मन तक पहुँच चुकी है।

(2) आन्ध्र—विषुवत रेखा के तथा समुद्र के निकट होने के कारण, चावल की खेती के लिए दशाएँ बहुत अनुकूल हैं। चावल उत्पादन की मात्रा एवं क्षेत्रफल की

(8) मसूर—यहाँ दोनों ऋतुओं में वर्षा हो जाती है, अतः चावल की तीन फसलें उगाई जाती हैं। तालाबों के द्वारा सिंचाई की सुविधा है। बेलगाँव, मसूर व धारवाड़ जिले चावल की उपज के लिए मुख्य हैं।

(9) केरल—यहाँ तटीय मैदानों तथा पहाड़ी ढालों पर चावल की खेती की जाती है। बाँध बना कर नदियों के पाट तथा झीलों के प्रदेश में से जलमग्न भूमि को खेती के लिए प्राप्त किया गया है। कोलाम, मालाबार और त्रिवांकुर जिले चावल उत्पादन के मुख्य जिले हैं। वर्ष 1969 70 में यहाँ 14 25 लाख टन और इससे पिछले वर्ष 1968 69 में 14 लाख टन चावल का उत्पादन हुआ। किन्तु जनसंख्या अधिक होने के कारण चावल की कमी रहती है।

(10) अन्य—उपरोक्त के अतिरिक्त असम (ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी), पूर्वी पंजाब राज्य, हरियाना महाराष्ट्र (अमरावती, गोन्दिया) हिमालय प्रदेश में भी थोड़ा चावल होता है। इन दिनों राजस्थान में भी थोड़ा चावल उत्पन्न किया जाने लगा है किन्तु चावल मोटी किस्म का होता है। कश्मीर की घाटी में भी थोड़ा किन्तु अच्छी किस्म का चावल होता है। मध्य प्रदेश व गोआ में भी चावल का उत्पादन होता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत के अधिकांश भागों में चावल की खेती होती है। भारत में दो क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ चावल प्रायः बिल्कुल नहीं उत्पन्न होता—(1) काली मिट्टी वाला क्षेत्र और (2) राजस्थान के मरुस्थलीय व अर्द्धमरुस्थलीय भाग।

राज्यानुसार उत्पादन—राज्यानुसार चावल उत्पादन की दृष्टि से प्रथम पश्चिमी बंगाल, द्वितीय आन्ध्र प्रदेश और तृतीय तमिलनाडु राज्य का है।

उपज की मात्रा—भारत में चावल की उपज बढ़ाए जाने के अनेक यत्न हो रहे हैं। तृतीय पंचवर्षीय योजना में चावल का उत्पादन लक्ष्य 4 50 करोड़ टन रखा गया था जो पूरा नहीं हो पाया। पिछले वर्षों में भारत में चावल का उत्पादन इस प्रकार हुआ था —

चावल का उत्पादन[1]

वर्ष	करोड़ टन
1950 51	2 09
1955 56	2 75
1960 61	3 45
1965 66	3 06
1966 67	3 04
1967 68	3 80
1968 69	3 97
1969 70	4 10
1970 71	4 3 (अनुमानित)

[1] *Source* Ministry of Food and Agriculture

योजना आयोग के अनुमान के अनुसार सन् 1980-81 में देश में लगभग 6.5 करोड़ टन चावल उत्पन्न किया जा सकेगा।

प्रति हेक्टेयर उपज—भारत में चावल की प्रति हेक्टेयर उपज वर्ष 1950-51 में केवल 668 kg थी किन्तु अच्छे बीजों के प्रयोग, रासायनिक खाद के प्रयोग व सुधरे हुए ढंग से कृषि करने के कारण, प्रति हेक्टेयर उपज में निरन्तर वृद्धि हो रही है, जैसा कि निम्न तालिका[1] से स्पष्ट है —

वर्ष	प्रति हेक्टेयर उपज (किलोग्राम में)
1950 51	668
1955 56	874
1960 61	1013
1965 66	869
1966 67	863
1967 68	1032
1968 69	1076
1969 70	1073

अन्य देशों से तुलना—यदि भारत में चावल की प्रति हेक्टेयर उपज की तुलना अन्य देशों के चावल की उपज से करें तो ज्ञात होगा कि हम अभी तक पिछड़े हुए हैं। नवीनतम उपलब्ध आँकड़े इस प्रकार हैं —

देश	प्रति हेक्टेयर उपज (किलोग्राम)
जापान	5 090
सं० रा० अमरिका	4 850
इटली	4,690
सं० अरब गणराज्य	4 120
सोवियत रूस	2 673
लंका	1,845
थाईलण्ड	1 720
ब्रह्मा	1 450
पाकिस्तान	1,570
भारत	1 073

[1] *Source* Ministry of Food and Agriculture

यह उल्लेखनीय है कि चावल का प्रति हेक्टयर विश्व का औसत उत्पादन 2000 किलोग्राम है।

विभिन्न उपयोग—चावल का प्रमुख उपयोग खाद्यान्न के रूप में होता है। इसका भूसा जानवरों के लिये श्रेष्ठ भोजन है। इसके अतिरिक्त इसके तने व भूस का अनेक कामों में प्रयोग किया जाता है। इसके भूस को सीमेण्ट में मिलाकर ध्वनि रोधक (Sound proof) दीवारें बनाई जाती हैं। इनसे झाड़ू, टोप, कागज, चटाई आदि अनेक घरेलू एवं व्यापारिक वस्तुएँ बनाई जाती हैं। इसके अतिरिक्त चावल के भूसे से 'एक्टीवेटेड कोन' भी बनाया जाता है जो अनेक पदार्थों को साफ करने में काम आता है।

व्यापार—हमारे देश में चावल का विदेशी व्यापार सरकार के नियन्त्रण में होता है। चावल बहुत से मनुष्यों का भोजन होने के कारण इसका आन्तरिक व्यापार भी होता है। पूर्वी पंजाब, आन्ध्र व मध्य प्रदेश में चावल आवश्यकता से अधिक होता है, अतः देश के अन्य भागों में भेजते हैं। तमिलनाडु, पश्चिमी बंगाल व केरल में यद्यपि बहुत चावल उत्पन्न होता है किन्तु इन क्षेत्रों में जनसंख्या अधिक होने के कारण आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पाती है तथा अन्यत्र से भी मँगवाते हैं।

युद्ध-काल के तथा देश के विभाजन के प्रभाव तथा अन्य कारणों से देश में खाद्यान्नों की कमी हुई जिसके फलस्वरूप विदेशों से चावल भी आयात करना पड़ा। बर्मा, थाइलैण्ड, हिन्द चीन, पूर्वी पाकिस्तान व मिस्र विशेषतः हमें चावल भेजने वाले देश हैं।

पिछले वर्षों में भारत ने चावल का जो आयात किया है, उसका विवरण निम्न तालिका से स्पष्ट होगा —

चावल का आयात

वर्ष	आयात का मूल्य (करोड़ रुपये)
1967 68	54 76
1968 69	57 45
1969 70	58 20

भविष्य—भारत सरकार चावल की पैदावार बढ़ाने की ओर प्रयत्नशील है। दामोदर, कोसी तथा महानदी योजनाओं के पूरा हो जाने के पश्चात चावल की उपज व क्षेत्र में वृद्धि होगी। मलेरिया वाले प्रदेशों में दलदलों को भर कर चावलों का क्षेत्र बढ़ाया जा सकेगा। जापानी पद्धति से चावल उत्पन्न करने के विभिन्न भागों में प्रयत्न हो रहे हैं जिससे प्रति एकड़ उपज में अवश्य ही वृद्धि होगी। सरकार ने कटक में एक केन्द्रीय चावल अनुसंधानशाला स्थापित कर दी है जहां चावल की खेती के बारे में नई खोज की जाती है।

भारत में जौ[1]

वर्ष	क्षेत्रफल (करोड़ हेक्टेयर)	उपज (करोड़ टन)	प्रति हेक्टेयर उपज (किलोग्राम में)
1950 51	3 11	2 38	764
1955 56	3 42	2 81	824
1960 61	3 20	2 81	879
1965 66	2 63	2 37	903
1967 68	3 37	3 50	1038
1968 69	2 75	2 42	879
1969 70	2 76	2 71	982
1970 71	3 25 (अनुमानित)	3 20 (अनुमानित)	1110 (अनु०)

विभिन्न उपयोग—भारत में गरीब व्यक्तियों का भोजन जौ ही है। यूरोप एवं अमेरिका में अन्य उपयोगों के अतिरिक्त जौ पशुओं के खिलाने के काम में भी लाया जाता है। इसके अतिरिक्त जौ का प्रयोग विदेशों में शराब बनाने के काम में खूब होता है। भारत में भी जौ की शराब बनाने के कुछ कारखाने हैं। जौ का प्रयोग मद्य-बाज सार (Malt extract) तथा स्प्रिट बनाने के काम आता है।

व्यापार—भारत में जौ का व्यापार महत्वशील नहीं है। इसका कारण यह है कि उत्पादन के क्षेत्रों में ही खप जाता है। पहले भारत अपने कुल उत्पादन का लगभग 1 प्रतिशत भाग जौ इंगलैण्ड को निर्यात करता था, किन्तु अब वह भी बन्द हो गया है।

(4) मक्का (Maize)—

परिचय—यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि मक्का का उत्पत्ति स्थान संयुक्त राज्य अमरिका है। भारत में सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में पुर्तगाल वाले इसे लाये थे।

उपज की दशाएँ—यह शीतोष्ण कटिबन्ध का पौधा है। भारत में यह खरीफ की फसल है।

(1) **तापक्रम**—इसके बढ़ने के लिए 150 से 180 दिन धूप चाहिए। इसके लिए 20 C से 22 C तक का तापक्रम आदर्श रहता है।[2] पकते समय अधिक तापक्रम की आवश्यकता होती है।

(2) **वर्षा**—इसके लिए वार्षिक वर्षा 75 Cms से 100 Cms तक पर्याप्त

---

[1] *Source* Ministry of Food and Agriculture

[2] Huntington Williams & Falkenburg *Economic and Social Geography*

होती है। कम वर्षा वाले भागों में सिंचाई की सहायता से खेती की जा सकती है। पाला इसकी खेती के लिए हानिकारक है।

(3) मिट्टी—मक्का के लिए उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसकी खेती के लिए बालूदार दुमट मिट्टी बहुत अच्छी रहती है।

उपज के क्षेत्र—भारत में सबसे अधिक मक्का उत्तर प्रदेश में होती है। मक्का उत्पादन करने वाले अन्य भाग बिहार, पूर्वी पंजाब और कश्मीर मध्य प्रदेश हैं। सरकारी आंकड़ों के अनुसार भारत में अब प्रतिवर्ष लगभग 1 करोड़ हेक्टेयर भूमि में मक्का की खेती होती है। विश्व में सबसे अधिक मक्का संयुक्त राज्य अमरिका उत्पन्न करता है।

उत्पादन की मात्रा—भारत में प्रति वर्ष 56 लाख टन मक्का उत्पन्न होती है। भारत में अमरीकी मक्का बोने से उपज में पर्याप्त वृद्धि हो सकती है। अमरिका में इस मक्का के बोने से 20 से 25 प्रतिशत तक उत्पादन बढ़ गया है। भारत में 8 प्रतिशत भूमि में यह मक्का बोई जाती है। इसमें एक दोष यह है कि बीज एक बार ही बोया जाता है दूसरी बार बोने के लिए नया बीज मेल से तैयार करना पड़ता है। वर्ष 1969-70 में लगभग 5.8 करोड़ हेक्टेयर में मक्का की खेती की गई व उत्पादन लगभग 5.7 करोड़ टन हुआ।

भारत में प्रति हेक्टेयर मक्का की उपज 968 किलोग्राम होती है। अमरिका में प्रति हेक्टेयर लगभग 4,550 किलोग्राम मक्का होती है।

विभिन्न उपयोग—यूरोप तथा अमरिका में मक्का पशुओं को खिलाने के काम आती है, परन्तु भारत में निर्धन मनुष्यों का भोज्य पदार्थ है। इसके डण्ठल व भूसा पशुओं को खाने के लिए दे देते हैं। मक्का से स्टार्च भी तैयार किया जाता है। इससे ग्लूकोज भी बनाया जाता है।

व्यापार—मक्का का विदेशी व्यापार नगण्य है। यह बहुत थोड़ी मात्रा में विदेशों को भेजी जाती है। मक्का का आन्तरिक व्यापार भी बहुत कम है।

(5) ज्वार—

परिचय—भारत में ज्वार की खेती बहुत प्राचीन काल से होती आई है। कुछ विद्वान ज्वार का उत्पत्ति-स्थान भारत ही मानते हैं, परन्तु कुछ विद्वानों का मत है कि इसकी उत्पत्ति सर्वप्रथम अफ्रीका में हुई।

उपज की दशाएँ—ज्वार समशीतोष्ण कटिबन्ध की उपज है। इसके लिए गर्म जलवायु तथा कम पानी की आवश्यकता होती है। 60 Cms से 75 Cms वार्षिक वर्षा इसके लिए उपयुक्त होती है। अधिक वर्षा वाले भागों में ज्वार उत्पन्न नहीं हो सकती है। कम वर्षा वाले भागों में साधारण सिंचाई से इसकी खेती हो जाती है। इसके लिए उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है।

उपज के क्षेत्र—भारत में पूर्व के अधिक वर्षा वाले भागों के अतिरिक्त ज्वार

प्राय सम्पूर्ण भारत में पैदा होती है। महाराष्ट्र गुजरात आन्ध्र तमिलनाडु और मध्य प्रदेश दक्षिणी भारत के प्रमुख ज्वार उत्पादक क्षेत्र हैं। इसके अतिरिक्त पूर्वी पंजाब, राजस्थान और पश्चिमी उत्तर प्रदेश भी ज्वार उत्पादक क्षेत्र हैं। बम्बई में ज्वार प्राय शुष्क खेती द्वारा उत्पन्न की जाती है। ज्वार का क्षेत्रफल लगभग 1 8 करोड़ हेक्टेयर है। भारत में ज्वार की उपज लगभग 97 लाख टन (1969 70) वार्षिक है। प्रति हेक्टेयर उपज 315 किलोग्राम है।

उपयोग—दक्षिण भारत में कृषकों का मुख्य भोजन है। डाक्टर वोयेलकर ने अपनी कृषि रिपोर्ट में ज्वार के चारे को बहुत अच्छा एवं पोषक बतलाया है। उत्तर भारत में ज्वार के चारे की मांग बहुत रहती है इस कारण पूर्वी पंजाब व उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में ज्वार केवल चारे के लिये उत्पन्न करते हैं। इसके अतिरिक्त ज्वार से अरारूट भी तैयार किया जाता है। भारतीय सूती मिलों में अरारूट की मांग दिन प्रतिदिन कलफ देने के लिये बढ़ रही है।

(6) बाजरा—

परिचय—बाजरे के उत्पत्ति-स्थान के विषय में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है। यह अनुमान है कि इसका उत्पत्ति स्थान भारत अथवा अफ्रीका है। यह हमारे देश में गरीब कृषकों का भोजन है।

उपज की दशाएँ—इसके लिये गर्म व शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। 5 Cms से 50 Cms वार्षिक वर्षा वाले भागों में यह हो जाता है। साधारण मिट्टी में भी इसकी खेती हो जाती है।

उपज के क्षेत्र—तमिलनाडु महाराष्ट्र गुजरात, उत्तर प्रदेश और पूर्वी पंजाब बाजरा उत्पादन करने वाले क्षेत्र हैं। इनके अतिरिक्त राजस्थान और आन्ध्र में कम वर्षा वाले भागों की भी मुख्य उपज बाजरा है। हमारे देश में बाजरा उत्पन्न करने का क्षेत्र लगभग 1 25 करोड़ हेक्टेयर है और वार्षिक उत्पादन लगभग 53 लाख टन है। यदि इसकी खेती में सुधार किया जाय तो 25 प्रतिशत उत्पादन में वृद्धि हो सकती है।

व्यापार—बाजरे की स्थानीय खपत होने के कारण इसका व्यापार महत्वशील नहीं है। पहले थोड़ा बाजरा अरब सूडान व यूरोपीय देशों को भेजा जाता था।

(7) दालें—

भारत में दालों का विशेष महत्व है क्योंकि ये हमारे भोजन का एक प्रधान अंग हैं। दालों में प्रोटीन की पर्याप्त मात्रा होती है। इसके अतिरिक्त मिट्टी की उर्वरा शक्ति को पुनः प्राप्त करने के लिए भी दालों की खेती की जाती है क्योंकि दालों की जड़ों में नाइट्रोजन एकत्रित हो जाता है इसलिए दालों की फसल के बाद खेतों की उर्वरा शक्ति में वृद्धि हो जाती है। हमारे देश में चना अरहर मसूर मूंग, उड़द आदि दालें विशेषतः उत्पन्न की जाती हैं।

चना—चना काफी उपयोगी दाल है, गरीब किसान इसे अन्य खाद्यान्नों में मिलाकर खाते हैं। इसके अतिरिक्त घोड़ा तथा बैल के लिए यह भोजन का आवश्यक अंग है। इसके छिलके भी पशुओं को खिलाये जाते हैं। चने को पीस कर बेसन बनाया जाता है जिससे अनेक खाद्य पदार्थ बनाये जाते हैं। उत्तर प्रदेश में सबसे अधिक चना उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, आन्ध्र, महाराष्ट्र और पश्चिमी बंगाल में भी चने की खेती होती है। भारत में चने की प्रति एकड़ उपज लगभग 425 पौण्ड प्रति एकड़ है।

अरहर—अरहर को प्रायः गन्ने के साथ बो देते हैं। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, मद्रास, बिहार, पश्चिमी बंगाल और असम में इसकी खेती काफी होती है। उपरोक्त के अतिरिक्त मैसूर, असम, उत्तर प्रदेश में मूंग और राजस्थान, उत्तर प्रदेश आदि में उड़द खूब होते हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 कपास, चावल और चाय का भारतीय जीवन में क्या आर्थिक महत्त्व है तथा देश के किस भाग की भौगोलिक परिस्थितियाँ इनके उत्पादन के अनुकूल हैं? (T D C, 1959)

2 भारत में तिलहन का उत्पादन और उसका आर्थिक महत्व बताइये। (T D C 1958)

3 What climatic and soil conditions are necessary for the growth of rice, sugar cane and tea ? (T D C 1961)

12

कृषि की उपज
(क्रमश 2)

इस अध्याय म अ तमत हम केवल औद्योगिक पदार्थों का ही अध्ययन करेंगे ।

(II) औद्योगिक पदाथ

किसी भी दश के औद्योगिक विकास म कृषि पदार्थों का भी महत्त्वपूर्ण योग होता है, क्योकि व कारखाना के लिए कच्चे माल का साधन होते हैं । यहा हम प्रमुख औद्योगिक फसलो—गन्ना, कपास जूट और रबर का अध्ययन करेंगे ।

(1) गन्ना—

महत्त्व—गन्ना एक प्रमुख औद्योगिक फसल है । गन्न का मूल उत्पादक स्थान भारत ही माना जाता है । अथववद म जिसकी रचना इसा से लगभग पाच हजार वष पूव मानी जाती है सवप्रथम गन्ने का उल्लेख मिलता है । आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थो म भी गन्ने के गुण व दोषो क विषय म उल्लेख मिलता है । अत स्पष्ट है कि भारत गन्न का उत्पत्ति-स्थान है । विश्व के गन्ना उत्पादक क्षेत्र का 35 प्रतिशत से भी अधिक क्षत्र भारत मे ही है और सबसे अधिक गन्ना हमार देश म ही उत्पन्न होता है ।

उपज की दशाए—गन्ना उष्ण कटिबन्ध तथा उनके निकटवर्ती क्षेत्रो का पौधा है । इसक लिए ऊँचा तापक्रम, अधिक वर्षा एव उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है —

(1) तापक्रम—गन्न की खेती के लिए ऊँचे तापक्रम की आवश्यकता होनी है । वार्षिक तापक्रम 15 5 C स 24 C तक का होना आवश्यक है । फसल काटने के कुछ दिनो पूव उष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है । बहुत अधिक सर्दी गन्ने क लिए हानिकारक है ।

(2) वर्षा—गन्ने के लिए आरम्भ व मध्य भाग म पानी की पर्याप्त आवश्यकता होती है । वार्षिक वर्षा 150 Cms की आवश्यकता होती है । इससे कम वर्षा वाले भागो मे गन्ने की खेती सिंचाई की सहायता से ही की जा सकती है । गगा ब्रह्मपुत्र के मदान क लगभग 75 प्रतिशत भाग म गन्ना सिचाई द्वारा ही उत्पन्न किया जाता है । इसी प्रकार पश्चिमी पाकिस्तान व पश्चिमी द्वीप समूह के कुछ भागो म गन्ने की खेती सिचाइ द्वारा ही होती है । गन्ना पकत समय शुष्क जलवायु अच्छी

होती है। यदि इस समय वर्षा हो जाती है तो गन्ने का रस पतला और पनीला हो जाता है। इसलिए गन्ने के लिए आरम्भ तथा मध्य काल में ही पानी की आवश्यकता होती है। पाला गन्ने के लिए हानिकारक है।

(3) मिट्टी—गन्ने के लिए बहुत उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता रहती है। इसके लिए दोमट अथवा हल्की चिकनी मिट्टी उपयुक्त रहती है। जिन मिट्टियों में पानी सोखने की क्षमता नहीं होती, वे इसके लिए सर्वथा अनुपयुक्त होती हैं। जिस मिट्टी में फास्फोरस तथा चूने का अंश होता है वह इसकी उपज में वृद्धि कर देता है।

गन्ने की खेती से भूमि की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है विशेषतः नाइट्रोजन तत्त्व की कमी हो जाती है अतः भूमि की उर्वरा शक्ति को स्थायी अथवा वृद्धि करने के हेतु निरन्तर खाद की आवश्यकता होती है। एमोनिया सल्फेट तथा हड्डियों का खाद श्रेष्ठ रहती है।

(4) भूमि का ढाल—गन्ने की खेती के लिए भूमि का ढाल भी महत्त्वपूर्ण है। गन्ने के खेतों में अधिक समय तक पानी नहीं रुकना चाहिए। खेतों में पानी स्थिर रहने से गन्ने का विकास रुक जाता है।

(5) सस्ते श्रमिक—गन्ने की खेती में फसल तैयार हो जाने पर अधिक संख्या में श्रमिकों की आवश्यकता होती है। यदि उपयुक्त समय पर गन्ना नहीं काटा जाय तो रस अच्छा नहीं निकलता है। पश्चिमी द्वीप समूह में हब्शी गुलामों से यह कार्य लिया जाता है। भारत में श्रमिकों की समस्या नहीं है।

खेती का ढंग—गन्ने का प्रतिवर्ष बोने की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि एक बार गन्ना बो देने के पश्चात् तीन वर्ष तक गन्ना बोने की आवश्यकता नहीं होती है। गन्ना काटते समय जड़ से नहीं काटा जाता, पौधे को ऊपर से ही काट लेते हैं। गन्ने का बीज से नहीं बोते बल्कि इसकी गाँठों को ही बो देते हैं।

बुवाई तथा कटाई—आजकल भारत में गन्ने की दो फसलें उत्पन्न की जाती हैं—एक जल्दी पकने वाली दूसरी देर में पकने वाली। साधारणतः गन्ना माघ के महीने में बो दिया जाता है। जल्दी पकने वाली फसल प्रायः 8-9 महीने में तैयार हो जाती है और नवम्बर दिसम्बर में काट ली जाती है। दूसरी फसल लगभग 11-12 महीने में तैयार होती है और फरवरी में काट ली जाती है। इस प्रकार शक्कर के कारखानों को अधिक समय तक गन्ना उपलब्ध होता रहता है।

उपज के क्षेत्र—यद्यपि भारत के बहुत से भागों में गन्ना होता है किन्तु गन्ना उत्पादक प्रमुख क्षेत्र उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल, पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र तथा गुजरात हैं। भारत में सबसे अधिक गन्ना उत्तर प्रदेश में होता है। यहाँ भारत के गन्ने के कुल उत्पादन का लगभग 55 प्रतिशत भाग उत्पन्न होता है। बिहार और पूर्वी पंजाब गन्ना उत्पादन करने वाले अन्य मुख्य क्षेत्र हैं। ये तीनों भाग मिलकर समस्त भारत की कुल गन्ना उपज का लगभग 80 प्रतिशत भाग उत्पन्न करते हैं।

बिहार और पूर्वी पंजाब कुल भारत के गन्ने का क्रमश 15 और 12 प्रतिशत भाग उत्पन्न करते हैं।

उत्तर प्रदेश—समस्त भारत के उत्पादन का लगभग आधा क्षेत्र उत्तर प्रदेश म ही है। उत्तर प्रदेश म गन्ना उत्पादन वाले आठ प्रमुख जिले हैं। ये जिले (1) शाहजहापुर, (2) फैजाबाद, (3) गोरखपुर, (4) आजमगढ (5) जौनपुर, (6) वाराणसी (7) बलिया और (8) लखनऊ हैं। इनमे सबसे अधिक गन्ना गोरखपुर जिले मे होता है इसीलिये गोरखपुर को भारत का जावा कहते है। इसके अतिरिक्त गन्ना उत्पादक अन्य जिले ये हैं—मेरठ मुजफ्फरनगर बुलन्दशहर शाहजहांपुर, बरेली, गोण्डा, लखीमपुर सीतापुर पीलीभीत रामपुर आदि। इस प्रकार उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग तराई व पश्चिमी दोआब म गन्ने का क्षेत्र फैला हुआ है।

बिहार—बिहार राज्य म (1) दरभगा, (2) मुजफ्फरपुर गन्ना उत्पादन करने के प्रमुख क्षेत्र हैं। इनके अतिरिक्त सारन व चम्पारन म भी पर्याप्त गन्ना होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि बिहार म अधिकाश गन्ना उत्तरी बिहार म होता है।

बगाल—पश्चिमी बगाल म वर्दवान मुख्य गन्ना उत्पादक जिला है। इसके अतिरिक्त हुगली, मुर्शिदाबाद चौबीस परगना और नदिया म भी गन्ना उत्पन्न होता है। यहा के गन्ने की किस्म साधारण है।

पजाब एव हरियाना—पूर्वी पजाब म (1) अमृतसर और हरियाना म एव (2) रोहतक जिलो म गन्ना होता है। पजाब के गन्ने म उत्तर प्रदेश तथा बिहार के गन्ने की अपेक्षा मिठास कम होती है। इसका कारण मिट्टी का अन्तर है क्योंकि पजाब की मिट्टी म कैलसियम अपेक्षाकृत कम है। इस राज्य म गन्ने की फसल पूर्णत सिंचाई पर निर्भर है।

उक्त क्षेत्र उत्तर भारत के गन्ना उत्पादक क्षेत्र हैं। हमारे देश म गन्ना दक्षिण भारत मे भी होता है। यहा गन्ना उत्पादन होने के प्रमुख कारण ये हैं। यहाँ ठण्ड अधिक नही पडती है पाला नहा पडता है और पूर्वी समुद्रतट के डेल्टाओ तथा अन्य भागो की मिट्टी अच्छी है। यही कारण है कि दक्षिणी भारत का गन्ना अच्छा होता है। उत्तर भारत के गन्ने म मिठास अपेक्षाकृत अधिक होता है।

दक्षिण भारत म गन्ना उत्पादक क्षेत्र तमिलनाडु (कोयम्बटूर टिनवली और मदुरा), आन्ध्र (गोदावरी व कृष्णा के डेल्टा) और महाराष्ट्र (बेलगाँव, पूना और शोलापुर) प्रमुख हैं। महाराष्ट्र म एक एकड भूमि म 31 टन गन्ना पैदा होता है। महाराष्ट्र के अहमदनगर शोलापुर और पूना जिलो के नहरी क्षेत्रो म यह प्रति एकड 42 टन तक पहुँच चुका है। इनके अतिरिक्त आन्ध्र और मैसूर म भी गन्ना होता है। गुजरात राज्य म अहमदाबाद क्षेत्र म भी गन्ना होता है।

भारत मे गन्ने की उपज आदर्श दशा मे नहीं होती—भारत म गन्ने की उपज क्षेत्रो का वितरण और वहाँ की जलवायु का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि गन्ने की अधिकतर खेती जिन क्षेत्रो में होती है, वहाँ की जलवायु उसके लिये आदर्श नही

अवज्ञानिक तरीके से की जाती है। (4) एक बार गन्ना बोने के पश्चात तीन वर्ष के बाद लाल जड़' की बीमारी फैल जाती है जिससे गन्ने को क्षति होती है। (5) भारत में प्रति एकड़ गन्ने की उपज कम है। प्रयत्न करने पर प्रति एकड़ 40 से 50 प्रतिशत की वृद्धि की जा सकती है। भारतीय केन्द्रीय गन्ना समिति इस दिशा में प्रयत्नशील है।

उपज कम होने के कारण—भारत में प्रति हेक्टेयर गन्ने की उपज कम होने के निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं—(1) भारत में अच्छी किस्म का गन्ना नहीं बोया जाता। (2) गन्ने की खेती वैज्ञानिक ढंग से नहीं की जाती। (3) गन्ना उत्पादक अनेक क्षेत्रों में अभी तक सिंचाई की उपयुक्त व्यवस्था नहीं है। (4) भारत में गन्ने के खेत छोटे छोटे व बिखरे होने के कारण उनमें उपज कम होती है और सुधार के उपाय करना कठिन हो जाता है। (5) गन्ना उष्ण कटिबन्ध का पौधा है परन्तु भारत में अधिकांश गन्ना उत्तर प्रदेश में, जो शीतोष्ण कटिबन्ध में है उगाया जाता है। अतः प्रति एकड़ कम उपज होना स्वाभाविक है। (6) प्रायः गन्ने की फसल पूर्णतः पकने के पूर्व ही काट लेते हैं भारत में कृषक इसकी देख भाल नहीं करते अतः गन्ने की प्रति एकड़ उपज कम होती है। (7) गन्ने की खेती से भूमि की उर्वरा शक्ति पर्याप्त नष्ट हो जाती है जिसकी पूर्ति कृत्रिम साधनों से खाद द्वारा की जा सकती है। अनेक कारणों से उपयुक्त खाद नहीं देने के कारण प्रति एकड़ गन्ने की उपज कम होती है।

सरकारी प्रयत्न—भारत सरकार गन्ने की किस्म में वृद्धि एवं प्रति एकड़ उपज में वृद्धि करने की ओर ध्यान दे रही है। अनेक गवेषण संस्थाएँ सरकार ने स्थापित की है जोकि गन्ने की खेती व गन्ने की किस्म में उन्नति की दि संलग्न हैं। सुगरकेन ब्रीडिंग इन्स्टीटयूट कोयम्बटूर इण्डियन सुगरकेन इन्स्टीटयूट, लखनऊ इण्डियन सेन्ट्रल सुगरकेन कमेटी नई दिल्ली तथा अ प्रादेशिक सरकारी संस्थाएँ इस ओर विशेष ध्यान दे रही हैं। पंचवर्षीय योजना में गन्ना विकास के लिए पर्याप्त धन की व्यवस्था की गई है।

सरकार ने गन्ना उत्पादकों को खाद की सुविधाएं प्रदान की हैं ताकि खा का अधिक से अधिक उपयोग हो सके और उपज में वृद्धि हो। सरकार ने स 1954 से खाद को उधार देने की व्यवस्था की है। इसमें यह सुविधा दी है कि उधार ली गई खाद का मूल्य कृषक फसल काटने के पश्चात चुका सकते हैं। इसके अतिरिक्त सिंचाई के क्षेत्र में वृद्धि हो रही है जिससे गन्ने के क्षेत्रफल में वृद्धि होगी।

पंचवर्षीय योजनाएँ—प्रथम पंचवर्षीय योजना में सन 1955 56 तक 80 लाख रुपये की लागत से 10 लाख एकड़ भूमि में गन्ने की उपज बढ़ाने की योजना बनाई गई थी। द्वितीय योजना में सन् 1960 61 तक 7 80 करोड़ टन गन्ना पैदा करने का लक्ष्य रखा गया था।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में गन्ना विकास पर 13 760 करोड़ रुपये व्यय

करने की सिफारिश की गयी है। 1973 74 तक 15 करोड टन गन्ना उत्पन्न करने का लक्ष्य रखा है।

भविष्य—देश म शक्कर के उत्पादन म वृद्धि की जा रही है। द्वितीय पच वर्षीय योजना म शक्कर क उत्पादन म वृद्धि की योजना है। शक्कर म वृद्धि के लिय गन्ने की उपज भी बढ़ाई जावगी। अनेक नदी घाटी योजनाएँ तैयार हो रही हैं व अनेक तो पूरी होन वाली हैं जिनस सिंचाई की सुविधाएँ अधिक प्राप्त हो सकेंगी और गन्न क क्षेत्रफल म अवश्य ही वृद्धि होगा। छोटी छोटी योजनाएँ जस कोयना योजना, तुगभद्रा योजना नागार्जुन योजना व चम्बल योजना भी इस दिशा म सहायक होगी। दक्षिणी भारत म अनुकूल जलवायु होने के कारण वहा गन्ने के क्षेत्रफल की वृद्धि की ओर पर्याप्त ध्यान देना आवश्यक है। जावा, क्यूबा, हवाईद्वीपो की विधियो को यदि स्थानीय परिस्थितियो के अनुसार अपनाया जावे तो उपज म पर्याप्त वृद्धि की सम्भावनाएँ हैं।

(2) **कपास**—

परिचय—कपास का उत्पत्ति स्थान भारत है। ऋग्वेद जैसे प्राचीन ग्रन्थ मे सूत के धागा (यज्ञोपवीत) का उल्लेख मिलता है। ग्रीस के एक प्रसिद्ध इतिहासकार **हैराडोटस**, जो भारत भी आय थे, आश्चर्य प्रकट किया है कि 'भारतीय एक ऐसी ऊन के वस्त्र पहनते हैं जो भेड़ बकरियो के शरीर पर नहीं होती वरन पेड पौधो की शक्ल म उगाई जाती है। आज विश्व म **रुई उत्पादक देशो मे भारत का दूसरा स्थान है**। सयुक्त राज्य अमरिका का प्रथम स्थान है। चीन ब्राजील और मिस्र का क्रमश तीसरा चौथा और पाचवां स्थान है।

भारत म कपास का क्षेत्रफल विश्व के कुल कपास क्षेत्र का लगभग 20 प्रतिशत भाग है जबकि उपज केवल 9 प्रतिशत ही है। कम सी भारत म लम्बे और मध्यम रेशे की कपास भी होता है किन्तु छोटे रेशे की कपास अधिक होती है।

उपज की दशाएँ—कपास उष्ण कटिबन्ध का पौधा है। इसके लिए ऊँचे ताप क्रम और कम वर्षा की आवश्यकता होती है। भारत म यह खरीफ की फसल है।

(1) **तापक्रम**—कपास की खेती के लिए 21°C स 30 C तक का तापक्रम आवश्यक होता है। तापमान 15 C म कम कभी नहीं होना चाहिए। इसके लिए धूपीला मौसम अच्छा होता है। अच्छी धूप स ही रेशे म चमक आती है।

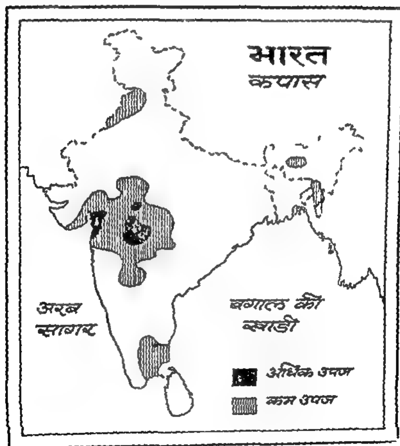
(2) **वर्षा**—कपास के लिए 75 Cms स 115 Cms तक की वार्षिक वर्षा की आवश्यकता होती है। जिन स्थानो म 100 Cms से कम वार्षिक वर्षा होती है, वहाँ सिंचाई के द्वारा कपास की खेती होती है। फसल पकन क कुछ दिनो पूर्व स मौसम खुला हुआ रहना चाहिए अन्यथा वर्षा फसल को खराब कर देती है। सयुक्त राज्य अमेरिका भारत व पाकिस्तान क कुछ भागो म और मिस्र व पीरू (दक्षिणी अमेरिका) क प्रत्येक भाग म कपास की खेती सिंचाई की सहायता स होती है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सिंचाई द्वारा खेती करने से कपास की प्रति एकड

गुजरात, पंजाब व हरियाणा, राजस्थान और आंध्र में कपास की खेती के क्षेत्र में वृद्धि हुई है।

उपज क्षेत्रों का विश्लेषण—भारत में कपास की खेती का क्षेत्र बहुत बिखरा हुआ है। कपास उगाने वाले विभिन्न क्षेत्रों का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है —

(1) गुजरात राज्य—कपास उत्पादन क्षेत्र की दृष्टि से गुजरात राज्य को तीन उप विभागों में विभक्त किया जा सकता है—(क) उत्तरी गुजरात में अहमदाबाद महसाना बनासकण्ठा जिलों में साबरमती नदी के पार उत्तरी सौराष्ट्र व कच्छ में



चित्र 18

'वागड़' किस्म की कपास पैदा होती है। (ख) मध्य गुजरात के भड़ौच, बड़ौदा, खेड़ा पंचमहल साबरकण्ठा जिलों में मुख्यतः भड़ौच किस्म की कपास उगती है। (ग) दक्षिणी गुजरात के सूरत व भड़ौच जिले कपास उत्पादक प्रमुख जिले हैं जिनमें 'सूरती' कपास उगती है।

इस क्षेत्र म कपास की उपज प्राय वर्षा पर ही निर्भर है। यहा 250 से 600 पौंड प्रति एकड कपास होती है। सबसे अधिक कपास की उपज दक्षिणी गुजरात मे और सबसे कम उत्तरी गुजरात म होती है। अधिकतर क्षेत्र म देशी किस्म की ही कपास उत्पन्न होती है। पिछले कुछ दशकों से देशी कपास की जगह श्रेष्ठ किस्म की कपास उगाने के प्रयत्न हो रहे हैं जिससे उसकी किस्म म सुधार हुआ है।

(2) महाराष्ट्र राज्य—कपास उत्पादन क्षेत्र की दृष्टि से महाराष्ट्र राज्य को दो उप विभागो मे विभक्त किया जा सकता है—(क) खानदेश क्षेत्र—इस क्षेत्र मे कपास की उपज के ये जिले हैं—पश्चिमी खानदेश पूर्वी खानदेश, नासिक, अहमद नगर, पूना और शोलापुर। (ख) नागपुर क्षेत्र—पूर्वकालीन बम्बई राज्य का पुनगठन होने के पश्चात पुराने मध्य प्रदेश के जो प्रमुख कपास उत्पादक जिले थे वे तत्कालीन बम्बई राज्य (वर्तमान महाराष्ट्र राज्य) म सम्मिलित हो गये हैं। इस क्षेत्र म कपास की उपज के य जिले हैं—नागपुर, वर्धा, अकोला अमरावती और बुलडाना। नान्देड व बीड जिलो मे भी कपास होती है।

(3) मध्य प्रदेश—मध्य प्रदेश अभी भी भारत के कपास उत्पादन क्षेत्रो म प्रमुख स्थान रखता है। यहा कपास उत्पन्न करने वाले प्रमुख भाग य हैं—नीमाड इन्दौर, धार, देवास, झाबुआ, उज्जैन मन्दसौर और रतलाम। नीमाड, इन्दौर व धार जिलो म 'ऊमरा' रुई होती है और शेष भाग मे 'मालवी' कपास होती है।

(4) राजस्थान—इस राज्य के कोटा, बूदी, झालावाड, बासवाडा और टोंक जिलो मे मालवी' कपास होती है। उदयपुर, चित्तौड और झालावाड म राजस्थान-देशी व राजस्थान अमरीकी कपास होती है। बीकानेर डिवीजन के गगानगर क्षेत्र मे पजाब देशी व पजाब-अमरीकी कपास होती है।

(5) पजाब व हरियाना राज्य—देश का विभाजन होने के पूर्व पजाब का कपास उत्पन्न करने की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था। मध्यम व लम्बे रेशे की प्राय 80 प्रतिशत कपास पजाब म ही होती थी। किन्तु विभाजन के पश्चात कपास उगाने वाले अधिकाश भाग पाकिस्तान को मिले। शेष भाग मे कपास उगाने के पुन प्रयत्न किये जा रहे हैं। लुधियाना अम्बाला करनाल भटिंडा जालधर आदि जिले मुख्य उत्पादक हैं।

(6) उत्तर प्रदेश—पहले उत्तर प्रदेश के बडे-बडे क्षेत्रो म कपास उत्पन्न की जाती थी। किन्तु यह क्षेत्र शनै शनै घटता चला गया। गगा और यमुना के मैदान म तथा रुहेलखण्ड व बुन्देलखण्ड मे कपास विशेषरूप से होती है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश म कपास की खेती सिंचाई द्वारा की जाती है। सिंचाई वाले क्षेत्रो म प्रति एकड 650 पौंड तक कपास हो जाती है और बिना सिंचाई वाले भागो म यह उपज 350 पौण्ड है। उत्तर प्रदेश म अधिकतर छोटे रेशे वाली कपास होती है।

(7) तमिलनाडु एव आन्ध्र—इन राज्यो को यद्यपि अन्य प्रदेशो की अपेक्षा

कम कपास उत्पन्न करने वाला माना जाता है किन्तु यहाँ की कपास महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके रेशे लम्बे होते हैं। कहीं कहीं तो इन रेशों की लम्बाई 1 इंच तक होती है। इन राज्यों में कपास चुने हुए कुछ क्षेत्रों में ही होती है। तुंगभद्रा नदी के तटीय भागों, दक्षिणी किनारा व तंजौर के भागों में कपास की खेती होती है। आन्ध्र के पश्चिमी भागों में कपास बहुत होती है।

(8) मैसूर— मैसूर राज्य की भी भारत के प्रमुख कपास उत्पादक प्रदेशों में गणना की जाती है। इनमें बिलारी जिले में सबसे अधिक कपास होती है। मैसूर में कपास उत्पन्न करने वाले दो क्षेत्र मुख्य हैं—(क) मलाहट्टी क्षेत्र—यह काली मिट्टी का क्षेत्र है। इसमें मैसूर जिले के कुछ भाग जैसे शिमोगा, हसन, चीतलदुर्ग आदि सम्मिलित हैं। कपास की खेती वर्षा पर ही निर्भर है। यहाँ अधिकतर देशी कपास होती है। (ख) बोआहट्टी क्षेत्र—यह लाल मिट्टी का क्षेत्र है। यहाँ वर्षा व सिंचाई—दोनों की सहायता से कपास की खेती होती है। इस क्षेत्र में अमरिकन कपास होती है।

(9) असम—असम में कपास अधिकतर पहाड़ियों के ऊँचे भागों में उत्पन्न की जाती है। राज्य में कुल कपास उत्पादन का लगभग 50 प्रतिशत भाग गारो पहाड़ियों पर होता है। थोड़ी बहुत मात्रा में कपास खासी, जयन्तिया, लुशाई और नागा पहाड़ियों पर भी होती है। यहाँ कपास का औसत वार्षिक उत्पादन लगभग 8,000 गाँठ (प्रत्येक 392 पौंड की) है। कपास की खेती का क्षेत्रफल लगभग 34 हजार एकड़ है। यहाँ की अधिकांश कपास भारत के अन्य राज्यों को भेज दी जाती है।

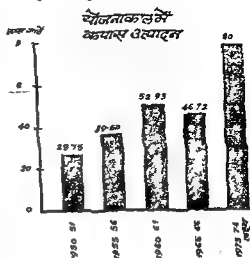
(10) अन्य—बिहार, उड़ीसा और पश्चिमी बंगाल में भी यत्र-तत्र थोड़ी कपास होती है। बिहार में कपास उत्पादक मुख्य क्षेत्र सारन, मुजफ्फरपुर, संथाल परगना, हजारीबाग व राँची जिले हैं। उड़ीसा में यह मुख्यतः कटक, सुन्दरगढ़ आदि जिलों में होती है। पश्चिमी बंगाल में मध्य रेशे की कपास पैदा करने के प्रयोग हो रहे हैं।

पंचवर्षीय योजना लक्ष्य—निम्न तालिका में विभिन्न पंच-वर्षीय योजनाओं में कपास उत्पादन का निर्धारित लक्ष्य बतलाया गया है —

योजना	उत्पादन लक्ष्य (लाख गाँठें)
प्रथम पंचवर्षीय योजना	—
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	51
तृतीय पंचवर्षीय योजना	70
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	80

उत्पादन — विश्व के बाजारों में औद्योगिक माल के लिए आज [illegible] कृषि सम्पत्तियों में [illegible] का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। संसार के लगभग 60 देशों में इस

व्यापारिक आधार पर पैदा किया जाता है। परन्तु इसका 80 प्रतिशत से अधिक उत्पादन केवल अमरिका, भारत, रूस, चीन, मिस्र पाकिस्तान और ब्राजील देशों में होता है। ऊपर बतलाया जा चुका है कि भारत में विश्व के कपास उत्पादन के कुल क्षेत्र का लगभग 20 प्रतिशत है, किन्तु विश्व के कुल कपास उत्पादन का लगभग 9 प्रतिशत भाग ही भारत में होता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि विश्व में रूई उत्पादन का लगभग 90 प्रतिशत भाग छः देशों (संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, भारत, चीन, मिस्र व ब्राजील) में उत्पन्न होता है। जबकि शेष 10 प्रतिशत कपास विश्व के 40 देशों में होती है जोकि दूर-दूर स्थित हैं।



चित्र 19

भारत में आजकल औसत से 55 लाख गाँठ कपास उत्पन्न होती है। पिछले वर्षों में कपास के उत्पादन की मात्रा निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट होती है। ये आँकड़े खाद्य तथा कृषि मन्त्रालय के अर्थ और अंक विभाग द्वारा प्रकाशित किये गये हैं —

भारत में कपास का उत्पादन[1]

वर्ष	उत्पादन
1950 51	28 75 लाख गाठ
1955 56	39 60 लाख गाँठें
1960 61	52 93 लाख गाँठें
1965-66	46 72 लाख गाठ
1967 68	54 54 लाख गाठ
1968 69	52 70 लाख गाँठें
1969 70	52 33 लाख गाँठ
1970 71	54 20 लाख गाठ (अनुमानित)
1973 74	80 00 लाख गाठ (लक्ष्य)

नोट—एक गाँठ=180 किलोग्राम

1 *Source*—Ministry of Food and Agriculture

चौथी योजना म 80 लाख गाँठें उत्पन्न करने का लक्ष्य रखा गया है।

प्रति हेक्टेयर उपज—यद्यपि कपास उत्पादक देशो म भारत का दूसरा स्थान है, कि तु हमारे देश म कपास की प्रति हेक्टेयर उपज अन्य देशो का तुलना म कम है। निम्न तालिका म कपास उत्पादक प्रमुख देशो की वर्ष 1970 की औसत उपज बतलाई गई है —

देश	उपज प्रति हेक्टेयर (किलोग्राम)
सोवियत रूस	840
मैक्सिको	790
सयुक्त अरब गणराज्य	590
सयुक्त राज्य अमरिका	540
सूडान	360
पाकिस्तान	280
भारत	110

स्थूलरूप म, विश्व म कपास का प्रति हेक्टेयर औसत उत्पादन 340 किलो ग्राम है।

(क) निर्यात व्यापार—भारत मे छोटे रेशे की कपास पर्याप्त होती है अत देश की आवश्यकता की पूर्ति करने के पश्चात भी निर्यात के लिए बच रहती है। छोटे रेशे की कपास से बढ़िया वस्त्र नहा बन पाते हैं। देश क विभाजन के पहले कपास निर्यातक देशो म भारत का दूसरा स्थान था सयुक्त राज्य अमरिका का प्रथम। भारत से कपास जापान, इ गलैड यूरोप के कुछ अन्य देश, चीन आदि को निर्यात की जाती है।

वर्ष	निर्यात
1961 62	3 20 लाख गाँठें
1962 63	3 30 लाख गाँठें
1963 64	2 75 लाख गाँठें
1965 66	2 25 लाख गाँठें
1968 69	2 84 लाख गाँठें
1969 70	3 60 लाख गाँठें

(एक गाँठ=180 किलोग्राम)

भारतीय रुई क सबसे बड ग्राहक जापान एव इ गलैड हैं। चीन हमारे कपास का नया ग्राहक है, किन्तु राजनैतिक कारणो से चीन से अब व्यापार बन्द है।

(ख) आयात व्यापार—भारत म आवश्यकता की पूर्ति के लिए लम्बे रेश की

पर्याप्त रुई न होने के कारण विदेशों से आयात करना पड़ता है। नीचे की तालिका से आयात की मात्रा ज्ञात होती है —

वर्ष	आयात (गाँठें)
1961 62	8 70 लाख
1962 63	8 20 लाख
1965 66	5 20 लाख
1966 67	4 00 लाख
1967 68	7 55 लाख
1968 69	3 47 लाख
1969 70	8 50 लाख
1970 71	13 25 लाख (अनुमानित)

(प्रत्येक गाठ=180 किलोग्राम की)

उपरोक्त आँकड़ों से ज्ञात होता है कि भारत में विदेशी रुई का आयात निरन्तर घट रहा है। 1968 69 में भारत ने लगभग 3 5 लाख गाठों का आयात किया जो कि पिछले आठ वर्षों में सबसे कम है। कपास के आयात में गिरावट के मुख्य कारण ये हैं—(1) देश में पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत लम्बे रेशे की रुई के उत्पादन के क्षेत्र में वृद्धि हुई। देश में प्रतिवर्ष 22 लाख लम्बे रेशे की गाठों की आवश्यकता होती है जिसमें लगभग 16 लाख लम्बे रेशे की कपास की गाँठें भारत में ही उत्पन्न होने लगी हैं। (2) भारत से वागीक कपड़े के निर्यात में कमी हुई है।

मिस्र अमेरिका, सूडान, पाकिस्तान और पूर्वी अफ्रीका से विशेषत भारत कपास का आयात करता है। सबसे अधिक कपास मिस्र व सूडान से आयात की जाती है। संयुक्त राज्य अमरिका का तीसरा स्थान है।

भारत और संयुक्त राज्य अमरिका के मध्य 1 अप्रैल 1971 को एक समझौता हुआ है जिसके अनुसार वह भारत को 2 5 लाख गाँठें कपास (नए पी० एल० 480 समझौते के अन्तर्गत) देगा।

भविष्य—भारत में छोटे रेशे की कपास तो पर्याप्त होती है किन्तु बड़े रेशे की कपास की कमी रहती है। देश में बड़े रेशे की कपास के उत्पादन की मात्रा में वृद्धि होने की पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में कपास की 51 लाख गाँठ उत्पन्न करने का लक्ष्य रखा था और तृतीय योजना में 70 लाख गाँठों का उत्पादन लक्ष्य रखा था। चौथी योजना में 80 लाख गाँठों का लक्ष्य रखा गया है।

(3) जूट (Jute)—

कदाचित डाक्टर बुकानन हैमिल्टन (Dr Buchanan Hamilton) प्रथम वनस्पति शास्त्री थे, जिन्होंने बंगाल में जूट का उत्पादन खोजा। ऐसा ज्ञात होता है

कि डाक्टर राक्सबरी (Dr Roxbury) प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने इस रेशे के लिए जूट शब्द का प्रयोग किया। कुछ लेखकों का मत है कि उड़ीसा म इस पौध के लिए प्रचलित 'झाट' (Jhot) शब्द स जूट का शब्द निकला है। बुकानन हैमिल्टन ने इसके लिए 'पाट' शब्द का प्रयोग किया। यह एक साधारण बंगाली शब्द है।[1]

परिचय—जूट का उत्पत्ति स्थान भारत है। विभाजन के पहले जूट उत्पादन म भारत का एकाधिकार था और विश्व के कुल जूट उत्पादन का 97 प्रतिशत जूट भारत म ही उत्पन्न होता था। अब विश्व के कुल जूट उत्पादन का लगभग 33 प्रतिशत भारत मे तथा 65 प्रतिशत पाकिस्तान म उत्पन्न होता है। जूट का प्रमुख उद्योग समावेष्टन (Packing) सम्बन्धी सामान बनाने के काम आता है। इसके अतिरिक्त कम्बल, मोटे कपडे, तौलिए व चादर आदि बनाने के लिए जूट को अन्य पदार्थों के साथ मिला लेते हैं।

उपज की दशाएँ—जूट उष्ण कटिबन्ध की उपज है। इसके लिए ऊँचा तापक्रम अधिक वर्षा और अधिक उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है।

(1) तापक्रम—जूट की उपज के लिए ऊंचे तापक्रम की आवश्यकता होती है। वार्षिक तापक्रम 25 C से 35 C के बीच आदर्श होता है।

(2) वर्षा—जूट की खेती म वर्षा भी महत्त्वशील है क्योंकि इसके लिए प्राय अन्य सभी फसलों की अपेक्षा अधिक पानी की आवश्यकता होती है। 200 Cms स 254 Cms तक की वार्षिक वर्षा इसके लिये उपयोगी एव आवश्यक होती है।

(3) मिट्टी—जूट की किस्म मिट्टी के स्वभाव पर निर्भर होती है। यद्यपि चिकनी मिट्टी म जूट की उपज अधिक होती है, परन्तु इसम उत्पन्न किये गये जूट का रेशा पानी मे भिगाने पर ठीक तरह से नही फूलता है। रेतीली मिट्टी मे उगाया हुआ जूट अच्छा नही माना जाता क्योंकि इसका रेशा मोटा हो जाता है। अत नदियो द्वारा लाई गई दुमट मिट्टी इसका खेती के लिए आदर्श होता है।

जूट की खेती म एक बात और भी ध्यान देने की है। इसकी खेती से भूमि की उवरा शक्ति शीघ्र ही नष्ट हो जाती है नाइट्रोजन का तत्त्व तो बिल्कुल ही खत्म हो जाता है। कृत्रिम खाद भी इस दिशा म विशेष लाभदायक सिद्ध नही हुई है। इसलिये नदियो के डेल्टा मे, जहाँ नदियाँ नई मिट्टी लाती रहती हैं अथवा बाढ के क्षेत्रों म इसकी खेती की जाती है। यही कारण है कि गगा, ब्रह्मपुत्र के डेल्टो म जूट की खेती विशेष रूप से होती है।

(4) स्वच्छ पानी—जूट के क्षेत्र म स्वच्छ पानी का होना भी आवश्यक है। पौधे को पकने तक खेत म नहीं छोड़ते। इनमे जब फूल आने लगते हैं तभी पौधों को काट कर उनके बंडल बनाकर खेतो मे डाल देते हैं। 4 5 दिन म जब पत्तियाँ

---

[1] *The Imperial Gazetteer of India* Vol III (Ed 1908), pp 203 204

मुरझा कर गिर जाती हैं तो इन बण्डलों को 20 25 दिन तक तालाबों अथवा गड्ढो मे पडा रखते हैं जिससे पौधा के रेशे फूल जाते हैं। इसके पश्चात पौधा को निकाल कर रेशे निकाल लेते है और स्वच्छ पानी से धोकर सुखा देते हैं। रेशे जितने स्वच्छ व मीठे पानी म धोये जाते हैं उतनी ही अच्छी उनकी किस्म होती है क्योंकि इससे रेशो म चमक आ जाती है।

(5) सस्ता श्रम—जूट की खेती के लिए भी सस्ते श्रमिकों की आवश्यकता होती है क्योंकि तैयार पौधा को काटने तथा वण्डल बनाने के लिए आवश्यक रूप से श्रमिकों की आवश्यकता होती है। अमरिका की मिसीसिपी और मिसोरी नदियो की घाटी म जूट उत्पादन की प्राय समस्त बातें उपलब्ध होते हुए भी वहाँ जूट की खेती न होने का एक कारण यह भी है कि वहाँ सस्ते श्रमिक उपलब्ध नहीं हैं। भारत मे लगभग 20 लाख किसान परिवार जूट की खेती करते है।

बुवाई और कटाई—मार्च म मई तक जूट की बुवाई हो जाती है। यह पौधा 3-4 मीटर (10 12 फीट) ऊँचा हो सकता है और जुलाई से सितम्बर तक इसकी कटाई हो जाती है। पश्चिमी बगाल म अप्रल-मई मे जूट वो देते हैं और अगस्त सितम्बर तक काट लेते हैं। बिहार व असम म मार्च-अप्रल और उडीसा म मई-जून के महीने म जूट बोते हैं।

विभाजन का प्रभाव—देश के विभाजन का जितना प्रभाव जूट की खेती व जूट उद्योग पर पडा उतना प्रभाव अन्य किसी उपज अथवा उद्योग पर नही पडा। विभाजन स पूर्व जितनी भूमि पर जूट की खेती होती थी, उसका लगभग 29 प्रतिशत भाग भारत का मिला और 71 प्रतिशत भाग पाकिस्तान को। जहाँ तक उपज का सम्बन्ध है भारत म अविभाजित भारत के कुल उत्पादन का 28 प्रतिशत भाग ही हिस्से म आया। दूसरे शब्दो म जूट की खेती के इस 29 प्रतिशत भाग म कुल उत्पादन का 28 प्रतिशत भाग ही उत्पन्न होता था।

बगाल के ममनसिंह ढाका फरीदपुर कोमिल्ला, रगपुर बागरा, राजशाही और पावना आदि प्रमुख जूट उत्पादक-क्षेत्र पाकिस्तान म चले गये।

उपज के क्षेत्र—भारत के जूट उत्पादक क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

पश्चिमी बगाल—विभाजन के फलस्वरूप जूट उत्पादन के अधिकांश क्षेत्र पूर्वी पाकिस्तान मे चले गये। इस प्रकार भारत के पास पश्चिमी बगाल राज्य मे जूट की खेती का क्षेत्र कम रह गया है किन्तु आज भी यह भारत म जूट उत्पादन का प्रमुख क्षेत्र है। भारत का लगभग आधा जूट इस राज्य म ही होता है। गगा डेल्टा जूट उत्पादन का प्रमुख क्षेत्र है। डेल्टा के धुर-दक्षिणी भाग को छोडकर (जहाँ क्षारीय मिट्टी है) प्राय सभी जगह जूट उत्पन्न किया जाता है। जूट उत्पादक प्रमुख जिले बर्दवान मुर्शिदाबाद नादिया और हुगली हैं। पूर्वी बगाल (पाकिस्तान) की अपेक्षा पश्चिमी बगाल म जूट कम उत्पन्न होता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि

जि डाक्टर राक्सबरी (Dr Roxbury) प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने इस रेशे के लिए जूट शब्द का प्रयोग किया। कुछ लेखकों का मत है कि उड़ीसा में इस पौधे के लिए प्रचलित झोट' (Jhot) शब्द से 'जूट' का शब्द निकला है। बुकानन हैमिल्टन ने इसके लिए पाट' शब्द का प्रयोग किया। यह एक साधारण बंगाली शब्द है।[1]

परिचय—जूट का उत्पत्ति-स्थान भारत है। विभाजन से पहले जूट उत्पादन में भारत का एकाधिकार था और विश्व के कुल जूट उत्पादन का 97 प्रतिशत जूट भारत में ही उत्पन्न होता था। अब विश्व के कुल जूट उत्पादन का लगभग 33 प्रतिशत भारत में तथा 65 प्रतिशत पाकिस्तान में उत्पन्न होता है। जूट का प्रमुख उद्योग समावेष्टन (Packing) सम्बन्धी सामान बनाने में काम आता है। इसके अतिरिक्त कम्बल, मोटे कपड़े, तौलिए व चादरें आदि बनाने के लिए जूट को अन्य पदार्थों के साथ मिला लेते हैं।

उपज की दशाएँ—जूट उष्ण कटिबन्ध की उपज है। इसके लिए ऊंचा ताप क्रम अधिक वर्षा और अधिक उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है।

(1) तापक्रम—जूट की उपज के लिए ऊँचे तापक्रम की आवश्यकता होती है। वार्षिक तापक्रम 25°C से 35 C के बीच अच्छा होता है।

(2) वर्षा—जूट की खेती में वर्षा भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसके लिए प्राय अन्य सभी फसलों की अपेक्षा अधिक पानी की आवश्यकता होती है। 200 Cms से 254 Cms तक की वार्षिक वर्षा इसके लिये उपयोगी एवं आवश्यक होती है।

(3) मिट्टी—जूट की किस्म मिट्टी के स्वभाव पर निर्भर होती है। यद्यपि चिकनी मिट्टी में जूट की उपज अधिक होती है, परन्तु इसमें उत्पन्न किये गये जूट का रेशा पानी में भिगोने पर ठीक तरह से नहीं फूलता है। रेतीली मिट्टी में उगाया हुआ जूट अच्छा नहीं माना जाता क्योंकि इसका रेशा मोटा हो जाता है। अतः नदियों द्वारा लाई गई दुमट मिट्टी इसकी खेती के लिए आदर्श होती है।

जूट की खेती में एक बात और भी ध्यान देने की है। इसकी खेती से भूमि की उर्वरा शक्ति शीघ्र ही नष्ट हो जाती है नाइट्रोजन का तत्त्व तो बिल्कुल ही खत्म हो जाता है। कृत्रिम खाद भी इस दिशा में विशेष लाभदायक सिद्ध नहीं हुई है। इसलिए नदियों के डेल्टा में जहाँ नदियाँ नई मिट्टी लाती रहती हैं अथवा बाढ़ के क्षेत्रों में इसकी खेती की जाती है। यही कारण है कि गंगा ब्रह्मपुत्र के डेल्टा में जूट की खेती विशेष रूप से होती है।

(4) स्वच्छ पानी—जूट के क्षेत्र में स्वच्छ पानी का होना भी आवश्यक है। पौधे का पतन तक खेत में नहीं छोड़ते। इसमें जब फूल आने लगते हैं तभी पौधों को काट कर उनके बंडल बनाकर पानी में डाल देते हैं। 4 5 दिन में जब पत्तियाँ

[1] *The Imperial Gazetteer of India* Vol III (Ed 1908) pp 203 204

मुरझा कर गिर जाती हैं तो इन बण्डलों को 20 25 दिन तक तालाबों अथवा गड्ढों मे पड़ा रखते हैं जिससे पौधों के रेशे फूल जाते हैं। इसके पश्चात् पौधों को निकाल कर रेशे निकाल लेते हैं और स्वच्छ पानी में धोकर सुखा देते हैं। रेशे जितने स्वच्छ व मीठे पानी में धोये जाते हैं उतनी ही अच्छी उनकी किस्म होती है क्योंकि इससे रेशे में चमक आ जाती है।

(5) **सस्ता श्रम**—जूट की खेती के लिए भी सस्ते श्रमिकों की आवश्यकता होती है क्योंकि तयार पौधों को काटने तथा बण्डल बनाने के लिए आवश्यक रूप से श्रमिकों की आवश्यकता होती है। अमेरिका की मिसीसिपी और मिसौरी नदियों की घाटी में जूट उत्पादन की प्राय समस्त शर्तें उपलब्ध होने हुए भी वहाँ जूट की खेती न होने का एक कारण यह भी है कि वहाँ सस्ते श्रमिक उपलब्ध नहीं है। भारत में लगभग 20 लाख किसान परिवार जूट की खेती करते हैं।

बुवाई और कटाई—माच से मई तक जूट की बुवाई हो जाती है। यह पौधा 3 4 मीटर (10 12 फीट) ऊँचा हो सकता है और जुलाई से सितम्बर तक इसकी कटाई हो जाती है। पश्चिमी बगाल में अप्रेल मई में जूट बो देते हैं और अगस्त-सितम्बर तक काट लेते हैं। बिहार व असम में माच-अप्रल और उडीसा में मई-जून के महीने मे जूट बोते हैं।

विभाजन का प्रभाव—देश के विभाजन का जितना प्रभाव जूट की खेती व जूट उद्योग पर पडा, उतना प्रभाव अन्य किसी उपज अथवा उद्योग पर नही पडा। विभाजन के पूर्व जितनी भूमि पर जूट की खेती होती थी, उसका लगभग 29 प्रतिशत भाग भारत को मिला और 71 प्रतिशत भाग पाकिस्तान को। जहाँ तक उपज का सम्बन्ध है, भारत में अविभाजित भारत के कुल उत्पादन का 28 प्रतिशत भाग ही हिस्से में आया। दूसरे शब्दों में जूट की खेती के इस 29 प्रतिशत भाग में कुल उत्पादन का 28 प्रतिशत भाग ही उत्पन्न होता था।

बगाल के ममनसिंह ढाका फरीदपुर, कामिल्ला, रगपुर, बोगरा, राजशाही और पावना आदि प्रमुख जूट उत्पादक-क्षेत्र पाकिस्तान मे चले गये।

उपज के क्षेत्र—भारत के जूट उत्पादक क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

पश्चिमी बगाल—विभाजन के फलस्वरूप जूट उत्पादन के अधिकांश क्षेत्र पूर्वी पाकिस्तान में चले गये। इस प्रकार भारत के पास पश्चिमी बगाल राज्य मे जूट की खेती का क्षेत्र कम रह गया है किन्तु आज भी यह भारत में जूट उत्पादन का प्रमुख क्षेत्र है। भारत का लगभग आधा जूट इस राज्य में ही होता है। गगा डेल्टा जूट उत्पादन का प्रमुख क्षेत्र है। डेल्टा के सुदूर दक्षिणी भाग को छोडकर (जहाँ क्षारीय मिट्टी है) प्राय सभी जगह जूट उत्पन्न किया जाता है। जूट उत्पादक प्रमुख जिले बदवान मुर्शिदाबाद, नादिया और हुगली हैं। पूर्वी बगाल (पाकिस्तान) की अपेक्षा पश्चिमी बगाल मे जूट कम उत्पन्न होता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि

पश्चिमी बंगाल में जनसंख्या घना होने के कारण खाद्यान्नों को प्राथमिकता दी गई है, अतः अधिकांश कृषि योग्य क्षेत्र चावल उगाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

असम राज्य—जूट उत्पादन की दृष्टि से भारत में असम राज्य का द्वितीय स्थान है। जूट उत्पादन का प्रमुख क्षेत्र ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी है। जूट अधिक उत्पन्न करने वाले जिले ये हैं—नौगाँव, कामरूप, ग्वालपाड़ा, गारोहिल आदि। इनमें भी नौगाँव व कामरूप जिले समस्त असम की 90 प्रतिशत जूट उत्पन्न करते हैं। असम राज्य भारत के कुल जूट उत्पादन का 25 से 30 प्रतिशत भाग उत्पन्न करता है।

बिहार राज्य—इस राज्य में पूर्णिया, मुजफ्फरपुर, चम्पारन और सारन जिले जूट उत्पादन के मुख्य जिले हैं। इस राज्य में भारत का लगभग 15 प्रतिशत जूट उत्पन्न होता है।

उड़ीसा—इस राज्य में महानदी के डेल्टा का भाग जूट का मुख्य उत्पादक क्षेत्र है। प्रमुख जूट उत्पादक जिला कटक है जहाँ से उड़ीसा राज्य के कुल जूट उत्पादन का लगभग 85 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त पुरी व बालासोर जूट उत्पादक अन्य जिले हैं।

उत्तर प्रदेश—यहाँ पूर्वी जिलों तथा तराई के भागों में जूट उत्पन्न किया जाता है। गोंडा, बहराइच, गोरखपुर खीरी आदि जूट उत्पादक जिले हैं। यहाँ जूट का उत्पादन कम है। औसत रूप से प्रतिवर्ष 90 हजार गाँठ जूट उत्पन्न होता है।

अन्य क्षेत्र—इनके अतिरिक्त त्रिपुरा, आन्ध्र (विशाखापट्टनम), तमिलनाडु (कुल्दाई भाग) में जूट के लिए नई भूमि प्रयोग में लाई गई है।

देश में जूट की खेती के क्षेत्र में वृद्धि करना आवश्यक है अतः अनेक नये क्षेत्रों में जूट की खेती को जाने लगी है। 'जूट रिसर्च कमेटी' ने बिहार, उड़ीसा, असम व केरल में उत्तर प्रदेश के तराई के भाग में तमिलनाडु में, पश्चिमी बंगाल के कूचबिहार में जूट का उत्पादन-क्षेत्र बढ़ाने का प्रयत्न किया है।

यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि जूट उत्पन्न करने के लिए क्षेत्रों में एक सीमा से अधिक वृद्धि नहीं की जा सकती है। इसका कारण यह है कि जूट और चावल एक ही प्रदेश में उगते हैं। अतः एक के क्षेत्रफल में वृद्धि तभी की जा सकती है जब दूसरे के क्षेत्रफल में अनिवार्यतः कमी की जाय। देश में खाद्यान्न की स्थिति देखते हुए यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि कम से कम कुछ वर्षों तक तो चावल के क्षेत्र में कमी नहीं की जा सकती है वरन् वृद्धि की ही आवश्यकता है। केवल नये क्षेत्रों में ही जूट की खेती को स्थान दिया जा सकता है। साथ ही यह भी ध्यान देना है कि नये प्रदेशों में श्रेष्ठ किस्म का जूट (भौगोलिक कारणों से) नहीं उगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए पूर्वी बंगाल (पाकिस्तान) की अपेक्षा पश्चिमी बंगाल (भारत) में जूट अपेक्षाकृत घटिया किस्म का उत्पन्न होता है। उत्तर प्रदेश एवं बिहार में तो और भी घटिया किस्म का जूट उत्पन्न होता है।

पिछले वर्षों म जूट का उत्पादन क्षेत्र इस प्रकार था[1] —

वर्ष	क्षेत्र (हैक्टेयर)
1950 51	57 हजार
1955 56	7 04 लाख
1960 61	6 29 लाख
1965 66	7 57 लाख
1966 67	7 98 लाख
1967 68	8 80 लाख
1968 69	5 30 लाख
1969 70	7 70 लाख

पचवर्षीय योजना लक्ष्य—निम्न तालिका म विभिन्न पचवर्षीय योजनाओ म जूट के उत्पादन का निर्धारित लक्ष्य बतलाया गया है —

योजना	अवधि	उत्पादन लक्ष्य (लाख गाँठें)
प्रथम पचवर्षीय योजना	(1950 51 स 1955 56)	53
द्वितीय पचवर्षीय योजना	(1955 56 से 1960 61)	50
तृतीय पचवर्षीय योजना	(1960 61 से 1965 66)	62
चतुर्थ पचवर्षीय योजना	(1969 70 स 1973 74)	74

उत्पादन—देश का विभाजन हो जाने के फलस्वरूप भारत के जूट उत्पादन क्षेत्र व मात्रा दोनो ही म कमी हुई है किन्तु फिर भी आज भारत विश्व के कुल जूट-उत्पादन का 32 प्रतिशत स भी अधिक भाग उत्पन्न कर रहा है। पाकिस्तान की तुलना म भारत जूट का आधा उत्पादन करता है। गत वर्षों म भारत में जूट का उत्पादन[2] इस प्रकार रहा —

वर्ष	गाँठें
1950 51	33 00
1955 56	42 32
1960 61	41 34
1965 66	44 71
1966 67	53 48
1967 68	63 20
1968 69	30 52
1969 70	56 09
1970 71	52 00
1973 74	74 00 (लक्ष्य)

1 खाद्य एव कृषि मन्त्रालय व अर्थ-सकलन निदेशालय की रिपोर्ट के अनुसार।

2 *Source*—Ministry of Food and Agriculture

उपरोक्त आकडा के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वर्ष 1967 68 मे जूट का भारत मे रिकार्ड उत्पादन हुआ किन्तु अगले वर्ष (1968 69) उत्पादन म गत वर्ष (1967 68) की तुलना म उत्पादन 50% से भी कम हुआ। प्रमुख कारण जूट के क्षेत्रफल म कमी है।

कुल उत्पादन का 65 प्रतिशत पाकिस्तान म, 32 प्रतिशत भारत म और शेष लगभग 3 प्रतिशत अन्य देशा मे होता है। जूट उत्पादक देशो मे पाकिस्तान के बाद भारत का दूसरा स्थान है।

प्रति हेक्टेयर उपज—भारत म जूट की उपज प्रति हेक्टेयर लगभग 1040 किलोग्राम है। जूट की प्रति हेक्टेयर उपज वर्ष 1969 70 मे 1311 किलोग्राम थी जो सबसे अधिक थी और सबसे कम वर्ष 1968 69 म रही जो 1038 किलोग्राम थी। निम्न तालिका मे यह अधिक स्पष्ट होगा —

वर्ष	प्रति हेक्टेयर उपज (किलोग्राम म)
1950 51	1043
1955 56	1082
1960 61	1183
1965 66	1064
1966 67	1210
1967 68	1293
1968 69	1038
1969 70	1311

भारत म प्रति हेक्टेयर जूट की सबसे अधिक उपज असम म है और सबसे कम उडीसा म है।

जूट का व्यापार—विभाजन के पश्चात जूट का भारत म अभाव हो गया और जूट पाकिस्तान स ही उपलब्ध हो सकता था अत वहा से ही म जूट का आयात करना पडा किन्तु पाकिस्तान का रुख भारत के हित म न होने के कारण भारतीय जूट मिलो को हानि उठानी पडी। हम अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिए पाकिस्तान स जूट का आयात करते हैं। किन्तु अब भारत बहुत ही साधारण मात्रा म जूट का आयात करता है।

(4) रबर—

परिचय—रबर राष्ट्र के लिए अत्यन्त आवश्यक तथा सामरिक महत्त्व का पदार्थ होता है। रबर एक विशेष प्रकार के वृक्ष के दूध स तैयार किया जाता है। भारत म रबर का पहला सबसे पहले सन् 1902 म केरल म परियर नदी के किनारे की गई थी। भूमध्यरेखीय भागो म प्राकृतिक अवस्था म रबर के पेड मिलते हैं। आवश्यक रबर के पेड लगाकर खेती बढाई जा सकती है।

उपज की दशाएँ—रबर की उपज के लिए ऊँचे तापक्रम व अधिक वर्षा की आवश्यकता होनी है। यह उष्ण कटिबंध की उपज है।

इसके लिए 25 C से 32 C का तापक्रम और 250 Cms वार्षिक वर्षा की आवश्यकता होती है। लगातार वर्षा होना या लम्बा सूखा मौसम रबर के लिए हानिकारक होता है। इसके लिए उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। लाल चिकनी मिट्टी इसके लिए विशेष रूप से अच्छी होती है।

उपरोक्त आवश्यकताओं के अतिरिक्त सस्ते श्रमिकों की भी आवश्यकता होती है इसका कारण यह है कि रबर के वृक्षों से दूध एकत्रित करने के लिए मानवीय श्रम की आवश्यकता होती है।

क्षेत्र तथा उत्पादन – भारत में रबर उत्पादन का क्षेत्र दक्षिण भारत तक ही सीमित है क्योंकि वहां इसके उत्पादन की आदर्श दशाएं मिलती हैं। केरल मद्रास और मैसूर रबर के मुख्य उत्पादक है। बहुत थोड़ी मात्रा में रबर असम और अंडमान द्वीप में भी होता है। ये भारत के कुल रबर उत्पादन का निम्नलिखित प्रतिशत उत्पन्न करते हैं —

रबर उत्पादन में राज्यों का योग

राज्य	कुल उत्पादन का प्रतिशत
केरल	87 प्रतिशत
तमिलनाडु	10 प्रतिशत
मैसूर	2 प्रतिशत
अन्य	1 प्रतिशत

रबर वृक्षों में आरोपित कुल क्षेत्र 3 45 लाख एकड़ था जिसका विभाजन विभिन्न राज्यों में इस प्रकार था —

राज्य	क्षेत्र (एकड़)
केरल	2,98,450
तमिलनाडु	42,631
मैसूर	3,949
अण्डमान	422
	3,45,452

वर्ष	उत्पादन
1914	50 टन
1940	12 हजार टन
1951	17 हजार टन
1955	22 हजार टन
1960	26 4 हजार टन
1965	49 40 हजार टन
1970	89 90 हजार टन

बागान कमीशन रिपोर्ट के अनुसार भारत के रबर बागान का क्षेत्रफल विश्व के बागान क्षेत्र का केवल 2 3 प्रतिशत था और उत्पादन की तुलना म 1 22 प्रति शत था। भारत म प्रति एकड रबर का वार्षिक उत्पादन अन्य सभी देशों की तुलना मे प्राय सबसे कम है जो 304 पौंड है। विश्व के कुल रबर उत्पादन का भारत लगभग 2 7% भाग उत्पन्न करता है।

भारत म रबर के उत्पादन म क्रमश वृद्धि हो रही है क्योंकि स्पष्ट है कि भारत म सन 1914 मे केवल 50 टन रबर का ही उत्पादन हुआ जबकि सन् 1970 के अन्त मे 89 हजार टन से भी अधिक रबर का उत्पादन हुआ। किन्तु आज स्थिति यह है कि भारत म जितना रबर होता है वह भारतीय रबर के कारखाना मे ही खप जाता है और विदेशो से भी पर्याप्त मँगाना पडता है। रबर का उत्पादन बढ़ाने के लिए एक दस वर्षीय योजना बनाई गई है जिसके अनुसार कम रबर पैदा करने वाली 70 हजार एकड भूमि म अच्छी किस्म के वृक्ष लगाये जायेंगे।

सन् 1947 म 'रबर एक्ट' के अन्तर्गत भारत सरकार ने 'रबर-बोर्ड' की स्थापना कर दी है, जिसका मुख्य कार्य भारत मे उत्पन्न रबर का मूल्य निर्धारण करना, विक्रय का प्रबन्ध करना तथा सरकार को रबर के आयात के सम्बन्ध म परामर्श देना है।

श्रम तथा पूजी—बागान कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार भारतीय रबर बागान म लगभग एक लाख व्यक्ति काम करते हैं, इसके अतिरिक्त पर्याप्त संख्या म व्यापारी और बिचौलिए भी जीविका उपार्जन करते हैं।

100 एकड से बडे बागान म कुल मिलाकर लगभग 10 करोड रुपये की पूजी लगी हुई है जिसम लगभग 76 प्रतिशत पूजी भारतीय है और शेष विदेशी।

व्यापार—पहले इगलैंड, जर्मनी, जापान व अमरिका आदि देशो को भारत से रबर निर्यात कर दिया जाता था, किन्तु अब देश म ही रबर से सम्बन्धित और अनेक उद्योगो जसे मोटर साइकिल के टायर व ट्यूब, गद्दे तकिए, वाटरप्रूफ कपडा, विद्युत आदि का विकास हो रहा है, अत निर्यात की सम्भावनाए क्षीण होती जा रही हैं वरन् आयात ही करना पडता है। इस सम्बन्ध म चिन्ता की विशेष बात यह है कि विश्व मे रबर की कमी है और उसका दाम बढ़ता जा रहा है अत भारत को रबर आयात का ज्यादा मूल्य ही नही चुकाना पडेगा, बल्कि माल प्राप्त करने म भी कठिनाई का सामना करना पडेगा।

अन्तिम विचार—बागान कमीशन के अनुमानानुसार देश म सन 1975 मे 74 लाख टन रबर की खपत होगी। इस प्रकार सन 1975 म प्राकृतिक रबर की माग पूरी करने के लिए लगभग 20 हजार टन अतिरिक्त रबर का उत्पादन बढ़ाना होगा। यह उत्पादन तभी बढ सकता है जब प्रति एकड 800 पौण्ड उत्पादन के हिसाब से 3 लाख 60 हजार एकड भूमि म अधिक उपज वाला रबर लगाया जाय।

भारत म रबर उत्पादको म अनेक के पास भूमि के छोटे छोटे टुकडे ही हैं

अत एक रबर उत्पादक के पास कम से कम चार एकड भूमि रबर के उत्पादन के लिए अवश्य ही होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त बडे बडे रबर बागानो को रासायनिक पदार्थों तथा उवरकों आदि की प्राप्ति के लिए सहकारी सगठन स्थापित करने चाहिए। पुराने पेडो के स्थान पर नये रबर के वृक्ष लगाने चाहिये। नई भूमि पर सरकारी सस्थाओ द्वारा ही वृक्ष लगवाने चाहिये। साथ ही रबर के उत्पादन व्यय मे भी कमी करना अनिवार्य प्रतीत होता है। सरकार कृत्रिम रबर बनाने का एक कारखाना स्थापित करने का विचार कर रही है जिससे रबर की माँग की पूर्ति हो सके।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 भारत के अनेक भागों मे गेहूँ, पटसन और गन्ने के उत्पादन का विवरण दीजिये। ये वस्तुएँ सब जगह क्या नही पैदा होती ? (T D C, 1960)

2 What climatic and soil conditions are necessary for the growth of rice, sugar cane and tea ? (T D C 1961)

3 रबर की पैदावार दक्षिणी भारत मे ही क्यो होती है ? भारत मे रबर उत्पादन की वतमान स्थिति पर प्रकाश डालिए। (T D C, 1966)

4 जूट या गन्ने के भारत मे भौगोलिक विवरण पर प्रकाश डालिये। जूट या गन्ने का उत्पादन 1950 से कितना बढा है ? (T D C, 1969)

13

कृषि की उपज
(क्रमश 3)

इस अध्याय के अ तगत पेय पदार्थ (चाय व कहवा) अर्थात पौध वाली उपज[1] (Plantation Crops) (रबर के अतिरिक्त) व्यापारिक पदार्थ (तिलहन व तम्बाकू और गम मसाले) एवं अन्य पदार्थों का अध्ययन करेंगे।

(III) पेय पदार्थ
(Beverages)

चाय एव कहवा पेय पदार्थों के अन्तगत हैं। इनका प्रयोग यूरोपीय देशो सयुक्त राज्य अमरिका कनाडा और आस्ट्रेलिया आदि म अधिक होता है।

(1) चाय (Tea)—

परिचय—चाय एक पौध की सुखाई हुई पत्तियाँ हैं। चाय का उत्पत्ति स्थान भारत म असम की पहाड़ियाँ मानी जाती हैं। कुछ विद्वान चाय का उत्पत्ति स्थान चीन को मानत हैं। भारत म प्रथम बार सन् 1820 म चाय के पौधे की खोज हुई थी। लार्ड विलियम बटिंक के प्रयत्नो स सन 1834 म सरकारी तौर पर चाय की खेती प्रमाण रूप म हुई और सन् 1852 तक यह उद्योग भली भाँति स्थापित हो गया। इसक पश्चात सन् 1865 म सरकार न इस पर स अपना अधिकार हटा लिया और चाय उगान आदि का काम उद्योगपतियो क लिए छोड़ दिया। इस प्रकार स्पष्ट है कि चाय की खती भारत म पिछल प्राय सौ वर्षों से हो रही है। आज भारत को विश्व का चाय उद्यान एव चाय की दूकान' कहना अनुपयुक्त न होगा।

विभिन्न किस्मों की चाय का उत्पादन—चाय का उत्पादन भारत क विभिन्न क्षेत्रों में होता है। य क्षत्र एक-दूसर स न कवल काफी दूरी पर हैं बल्कि भूमि तथा जलवायु का परिस्थितियाँ भी अलग अलग हैं। इसलिए इन प्रत्येक क्षत्र म पैदा होने वाली चाय की मादकता सुगन्धि तथा स्वाद म अपनी अलग विशेषता होती है। असम म भारत का कुल उत्पादित चाय का लगभग 55 प्रतिशत भाग

---

[1] पौध-वाली उपज (Plantation Crops) तीन होती हैं—चाय, कहवा और रबर। किन्तु व्यापार क महत्त्व की दृष्टि स चाय सबस महत्त्वपूर्ण है।

होता है और वहाँ की चाय अपनी तेज सुर्गंध, रग व मादकता के लिये प्रसिद्ध है। हिमालय के उच्च स्थलों पर उत्पान्ति चाय इतनी सुरस तथा स्वादिष्ट हानी है कि उतना सुरस तथा स्वाद दुनिया के किसी भाग में भी पैदा होने वाली चाय मे नही मिलता। हिमालय के नीचे पश्चिमी बगाल के मैदानो में पदा होने वाली चाय मे सुरसता तथा मादकता दोना ही मिलती हैं। दक्षिणी भारत विशेषकर नीलगिरि तथा कानन देवास मे उपजने वाली चाय अपनी मादकता, रग तथा सुर्गंध के लिय प्रसिद्ध है। इस प्रकार से विभिन्न प्रकारो, श्रेणियो तथा किस्मा की चायो का उत्पादन होता है।

उपज की दशाएँ—चाय के लिये नम और गम जलवायु की आवश्यकता होती है।

(1) तापक्रम—चाय की खेती के लिये 24°C से 30 C का तापक्रम आवश्यक है। पाला इसके लिये हानिकारक है।

(2) वर्षा—यदि वष भर वर्षा का उचित वितरण हो तो इसके लिय 150 Cms वर्षा कम से कम आवश्यक होती है। अत 150 Cms से 200 Cms की वार्षिक वर्षा इसके लिये उपयुक्त हानी है। लम्बे शुष्क मौसम इसकी खेती के लिय हानिप्रद होते हैं।

चाय की जलवायु सम्बन्धी आवश्यकताओं के विषय म सी० आर० हॉलण्ड ने इस प्रकार विवेचना की है—चाय की कृपि के लिये नम व तर जलवायु चाहिये। तापमान 35 C से अधिक न होने पाए और न ही 12 C से कम जिसम वषा का वार्षिक औसत 250 Cms तक हो जिसम लम्बा शुष्क मौसम न पाया जाता हो, जहाँ प्रातःकालीन धुन्ध (Morning mist) प्राय होती हो, जहाँ के धूल विहीन वायुमण्डल मे सूय तैजी से चमका करता हो, जहा किसी भी मौसम मे गम हवा न चलती हो, जहाँ भूमि में प्रवेश करने वाली तथा हल्की-हल्की बौछारो के रूप म पडने वाली (न कि मूसलाधार) वर्षा होती हो।

(3) भूमि का ढाल—चाय की खेती मे खेतो का ढाल भी अत्यन्त महत्त्वपूण है। इसके लिए बहता हुआ पानी विशेष लाभदायक होता है क्योकि स्थिर पानी चाय के पौधे को हानि पहुँचाता है। यही कारण है कि पहाडी भागो म अनक कठिनाइयाँ होते हुए भी चाय की खेती पहाडी ढालो पर ही की जाती है। समुद्रतल स 600 स 1800 मीटर ऊँचे पहाड की ढाल चाय की खेती के लिय उपयुक्त है। इससे अधिक ऊँचाई पर तापक्रम की न्यूनता तथा पाले की कठोरता व अधिकता के कारण चाय के बागान नही लगाये जात।

(4) मिट्टी—चाय की खेती के लिए उपजाऊ तथा हल्की मिट्टी की आवश्यकता होती है। मिट्टी म यदि लोह के तत्त्व हो तो और भी अच्छा है। पहाडा के ढाल की मिट्टी पानी के साथ बह जाती है जिसके कारण मिट्टी क उपजाऊ तत्त्व भी

बह जाते हैं। अत प्रति वर्ष खाद देने की आवश्यकता भी होती है। लंका मे पोटेशियम सल्फेट की रासायनिक खाद प्रयोग की जाती है। भारत में खली की खाद और हरी खाद का प्राय उपयोग करते है। असम के बगीचो में चाय की झाडियों को छाटने से जो टहनियाँ गिरती हैं, इन्हें भी भूमि मे गाड दिया जाता है। इस प्रकार मिट्टी को प्रतिवर्ष वनस्पति तत्त्व प्राप्त होता रहता है जो भूमि की उवरा शक्ति को बनाये रखने में अत्यन्त सहायक होती है। मिट्टी मे ह्यूमस तत्त्व की उपस्थिति आवश्यक है।

चाय की सुगन्ध भी मिट्टी पर निर्भर होती है। दार्जिलिंग की मिट्टी में अपेक्षाकृत फास्फोरस और पोटाश अधिक होने के कारण वहाँ की चाय मे सुगन्ध अच्छी होती है।

(5) श्रमिक—चाय की खेती में सस्ते श्रमिकों की अत्यन्त आवश्यकता होती है। इसका कारण यह है कि पत्तियाँ तोड़ने के लिए मशीनो का प्रयोग नहीं हो सकता है। रूस ने (सन 1958 में) चाय की झाडियों पर से पत्तियाँ तोड़ने की एक मशीन का आविष्कार किया है। यह मशीन 100 से 120 व्यक्तियों तक के बराबर काम कर सकती है। यह ध्यान रहे कि चाय की पत्तियाँ चुनने वाली संसार में यह पहली मशीन है जो आविष्कृत हुई है। अत चाय की खेती घनी आबादी वाले देशों में ही लाभप्रद होती है, जैसे चीन, भारत, लंका आदि। पहाड़ी क्षेत्र में मनुष्य बसे भी कम रहते हैं अत श्रमिकों की समस्या रहती है। इन भागो में मैदानी क्षेत्रो से श्रमिक आ जाते हैं। चाय के बगीचों में पत्तियाँ तोड़ने का काम प्राय स्त्रियाँ किया करती हैं।

(6) पूँजी—चाय की खेती में बड़ी मात्रा में पूँजी की भी आवश्यकता होती है। चाय का बगीचा लगाने के लगभग तीन वर्ष बाद चाय की पत्तियाँ तोड़ी जाती हैं अत इस अवधि में पूँजी बँधी रहती है। पत्तियाँ हाथ से तोड़े जाने के कारण श्रमिकों को मजदूरी भी अधिक दी जाती है। इसके अतिरिक्त श्रमिकों की आवश्यकता पत्तियों को चुनते समय ही पड़ती है। पत्तियाँ वर्ष में तीन बार—अप्रैल मई, जुलाई अगस्त और अक्टूबर नवम्बर में चुनी जाती हैं। इस प्रकार शेष समय में वे बेकार रहते हैं। अत चाय की खेती के लिए पूँजी के व्यय के साथ साहस करने की क्षमता की भी आवश्यकता है।

उपज के क्षेत्र—भारत में चाय उत्पादन की दो स्पष्ट पट्टियाँ हैं। प्रथम पट्टी उत्तर भारत में है जो 23 उत्तरी अक्षांश और 33 उत्तरी अक्षांश के मध्य में स्थित है। यह पट्टी भारत की कुल चाय का लगभग 80% भाग उत्पन्न करता है। चाय उत्पादन की दूसरी पट्टी दक्षिण भारत में है जिसका विस्तार लगभग 10 उत्तरी अक्षांश से 13 उत्तरी अक्षांश के मध्य है। भारत में चाय की खेती 8 10 लाख एकड़ भूमि में होती है और 8 070 चाय के रजिस्टर्ड बगीचे हैं।[1]

[1] टी बोर्ड द्वारा प्रकाशित आँकड़ों से।

चाय की उपज का लगभग 80 प्रतिशत भाग उत्तरी भारत में होता है और शेष दक्षिण भारत म ।



चित्र 20

(क) उत्तरी भारत—चाय के अधिकाश बगीचे उत्तरी भारत म है। उत्तरी भारत मे चाय उत्पादन करने वाले प्रमुख भाग निम्नलिखित है —

(1) असम—हिमालय का दक्षिणी ढाल सूर्यमुखी है और अधिक ताप एव जलवृष्टि प्राप्त करता है और ध्रुवीय मद हवाओं से सुरक्षित है। भारत के चाय उत्पादक क्षत्रो म असम[1] सबस महत्त्वशील है। यहा सन 1935 से चाय की खेती होती

---

1 "*ASSAM*" p 5 Published by Directorate of Information and Publicity, Govt of Assam

आ रही है। सम्पूर्ण भारत के कुल चाय-उत्पादन का लगभग 55 प्रतिशत भाग यहीं उत्पन्न होता है। असम में चाय के बगीचे दो भागों में हैं। पहला ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी—इसमें दराग शिवसागर और लखीमपुर जिले प्रमुख हैं। अधिकांश चाय इसी क्षेत्र में उत्पन्न होती है। दूसरा क्षेत्र सुरमा नदी की घाटी है—यह असम के दक्षिणी भाग में है, जिसमें सिलहट व कछार के जिले प्रमुख हैं। इस भाग का अधिकांश अंश पूर्वी पाकिस्तान में है। अतः पहला क्षेत्र—ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी ही प्रमुख उत्पादक भाग है। असम में 4 लाख एकड़ से भी अधिक भूमि पर चाय की खेती होती है एवं यहाँ कुल 1046 चाय के बगीचे हैं जिनमें लगभग 50 लाख व्यक्ति काम करते हैं।

इन दो क्षेत्रों के अतिरिक्त एक तीसरा क्षेत्र और है जो कि हिमालय के निचले भागों में, सिक्किम और भूटान के दक्षिण में लगभग 10 मील चौड़ी एक पट्टी है। इस पट्टी के एक किनारे पर कड़ी छिद्रमय लाल पट्टी है जिस पर चाय की खेती विशेषरूप से की जाती है।

(2) पश्चिमी बंगाल—भारत का दूसरा चाय उत्पादक क्षेत्र पश्चिमी बंगाल है जहाँ देश की कुल चाय उत्पादन का लगभग 25 प्रतिशत भाग उत्पन्न होता है। दार्जिलिंग और जलपाइगुड़ी इस भाग के प्रमुख चाय उत्पादक क्षेत्र हैं। थोड़ी चाय त्रिपुरा में भी होती है। दार्जिलिंग की चाय बहुत अच्छी मानी जाती है।

(3) बिहार—इस क्षेत्र में हजारीबाग राँची और पूर्णिया के जिले प्रमुख हैं।

(4) अन्य—इनके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश (गढ़वाल और अल्मोड़ा) और पूर्वी पंजाब (काँगड़ा) में भी थोड़ी चाय उत्पन्न होती है। काँगड़ा में हरी चाय होती है।

(ख) दक्षिणी भारत—दक्षिणी भारत में तमिलनाडु केरल और मैसूर चाय उत्पादक क्षेत्र हैं। चाय का सबसे अधिक उत्पादन तमिलनाडु में अन्नामलाई, नीलगिरि और कोयम्बटूर जिले केरल राज्य के मध्य ट्रावनकोर, कानन देवन, मालाबार तट तथा मैसूर व महाराष्ट्र राज्यों में होता है। बागान उद्योग जाँच कमीशन के अनुसार उत्तर भारत के विपरीत दक्षिणी भारत में चाय का उत्पादन वर्ष पर्यन्त होता है।

उत्पादन—चीन विश्व में अधिक चाय उत्पादन करने वाला देश है, किन्तु वहाँ के आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं। दूसरा स्थान भारत का है। यद्यपि भारत में चाय की प्रति एकड़ उपज अन्य देशों की तुलना में कम है किन्तु यहाँ उत्पादन की मात्रा अधिक है।

भारत प्रतिवर्ष 35 करोड़ किलोग्राम से भी अधिक चाय का उत्पादन कर रहा है जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट है —

चाय का उत्पादन

वर्ष	उत्पादन (करोड किलोग्राम)
1950	28 0
1955	30 [illegible]
1960	32 0
1965	36 5
1966	37 5
1967	38 0
1968	39 7
1969	39 3
1970	41 7
1973 74	42 0 (लक्ष्य)

प्रति व्यक्ति उपभोग—भारत म चाय का प्रति व्यक्ति औसत वार्षिक उपभोग यद्यपि प्रतिवर्ष बढ रहा है, किन्तु फिर भी अभी कम है। इन्टरनेशनल टी कमेटी द्वारा प्रकाशित (1968) आकडों के अनुसार इंगलैंड मे प्रति व्यक्ति चाय का वार्षिक उपभोग 9 20 पौण्ड है। अभी भारत म औसत वार्षिक उपभोग 360 ग्राम है। गत वर्षों के चाय के प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग के आंकडे इस प्रकार हैं —

वर्ष	प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग (ग्राम)
1955 56	257
1960 61	293
1965 66	341
1967 68	356
1968 69	360

पूजी और श्रमिक[1]—अधिकृत आँकडा के अनुसार चाय उद्योग म इस समय लगभग 11ა 06 करोड रु० की पूजी लगी हुई है। इसम स 64 2 प्रतिशत पूजी ब्रिटिश कम्पनियो की है और 35 8 प्रतिशत पूजी (4 051 करोड रु०) भारतीय पूजी है। चाय बागानो म 10 लाख से भी अधिक व्यक्ति लगे हुए हैं।

व्यापार—भारत विश्व म केवल सबसे अधिक चाय उत्पन्न करने वाला देश ही नही है, वरन् सबसे अधिक चाय निर्यात करने वाला भी है। आज विश्व के

1 'बागान उद्योग जाँच कमीशन की रिपोर्ट तथा टी बोर्ड द्वारा प्रकाशित आँकडा से।

चाय व्यापार का लगभग 55 प्रतिशत भाग भारत के हाथ में ही है। केन्द्रीय वित्तमन्त्री ने शिलोंग (असम) में चाय सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा था, 'भारत की अर्थव्यवस्था में चाय का विशेष स्थान बन गया है, क्योंकि उसके कारण उद्योगों का दृष्टि से विकसित देशों से पूंजीगत माल व औद्योगिक कच्चा माल, जिसकी हम अपने देश के औद्योगिक विकास के लिए आवश्यकता पड़ती है खरीदने की क्षमता बढ़ती है।' चाय भारत के उन बड़े उद्योगों में से है जिससे देश को विदेशी मुद्रा बड़ी मात्रा में प्राप्त होती है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग 125 करोड़ रुपये के मूल्य की चाय निर्यात हो रही है। भारत सरकार को चाय के निर्यात कर के रूप में राजस्व में लगभग 21 करोड़ रुपये प्रतिवर्ष प्राप्त होते हैं।

गत वर्षों में भारत से चाय के निर्यात की मात्रा इस प्रकार रही —

वर्ष	करोड़ किलोग्राम
1950	18 2
1955	16 7
1960	19 5
1965	19 9
1966	17 9
1967	20 5
1968	21 0
1969	20 08
1970	17 41
1973 74	24 4 (लक्ष्य)

देश में चाय के उत्पादन का 75 प्रतिशत से भी कुछ अधिक भाग विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है और शेष देश में खप जाता है। पहले चाय निर्यात की मात्रा अन्तर्राष्ट्रीय चाय समझौता सन् 1933 द्वारा निर्धारित की जाती थी। इस समझौते को अनेक बार आगे बढ़ाया गया और 31 मार्च 1955 को यह समझौता खत्म हो गया। चाय के निर्यात की मात्रा अब टी एक्ट 1953 के अन्तर्गत टी बोर्ड की लाइसेंसिंग कमेटी (Licensing Committee of Tea Board) द्वारा निश्चित की जाती है।

विश्व के चाय निर्यात के आंकड़ों को देखने से ज्ञात होता है कि अन्य चाय निर्यातक देशों में मध्य भारत का स्थान अभी सबसे अधिक महत्त्वशील है। भारत से चाय लगभग 78 देशों को निर्यात की जाती है जिनमें ये प्रमुख हैं—इंगलैण्ड, संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा, आयरलैण्ड, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, ईरान, अरब, मिस्र, टर्की और रूस। रूस एवं संयुक्त अरब गणराज्य भारतीय चाय के नये किन्तु महत्त्वपूर्ण ग्राहक हैं।

भारतीय चाय निर्यात के उपरोक्त आँकड़े देखने से निम्नलिखित तथ्य निकलते हैं (1) इंगलैण्ड हमारी चाय का सबसे बड़ा ग्राहक पहले भी था और अब भी है। भारत से चाय निर्यात का लगभग 70% भाग इंगलैण्ड ही मँगवा लेता है। (2) पहले सोवियत रूस भारतीय चाय आयात नहीं करता था किन्तु अब यह भारतीय चाय के बड़े ग्राहकों में से है। (3) भारतीय चाय के निर्यात की मात्रा प्राय सभी देशों में कम हो रही है। अतः सरकार को चाहिए कि इस ओर गम्भीरता से ध्यान दे व चाय के निर्यात को न गिरने दे।

आजकल चाय निर्यात का केन्द्र कलकत्ता है जहाँ से देश के कुल चाय निर्यात का लगभग 80 प्रतिशत भाग भेजा जाता है। यह चाय निर्यात करने वाला दूसरा प्रमुख बन्दरगाह है। थोड़ी चाय कोचीन बन्दरगाह से भी भेजी जाती है। पहले चिटगाँव भी चाय निर्यात करने का मुख्य बन्दरगाह था किन्तु यह अब पाकिस्तान में है।

चाय निर्यात प्रोत्साहन एवं सरकार—यह स्पष्ट है कि विदेशी मुद्रा अर्जन में चाय का बहुत महत्वशील योग है। किन्तु भारतीय चाय को अब विदेशों में काफी कठिनाई उठानी पड़ रही है। अतः सरकार ने चाय निर्यात को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से कुछ कदम उठाये हैं जिनमें प्रमुख निम्न हैं —(1) चाय निर्यात पर से मात्रा का प्रतिबन्ध हटा लिया गया है। अब चाय चाहे जितनी ही मात्रा में निर्यात की जा सकती है। (2) सरकार ने निर्यात कर में भी कमी की है। पहले चाय पर निर्यात कर 53 पैसे प्रति किलोग्राम लगता था किन्तु सन 1961 से सरकार ने इस कर को घटा कर 44 पैसे प्रति किलोग्राम कर दिया है। मार्च 1963 से इस कर को बिल्कुल समाप्त कर दिया गया है। (3) चाय के प्रत्येक ऐसे टीन पर जिसमें 20 किलोग्राम से अधिक चाय न हो 40 पैसे की दर से अतिरिक्त उत्पादन शुल्क लगाया है जो कि इस चाय के निर्यात होते समय वापस लौटा दिया जाता है। (4) भारतीय चाय बोर्ड ने इंगलैण्ड अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड व मिस्र आदि देशों में अपने संवर्द्धन (Promotion) कार्यालय स्थापित किये हैं। (5) चाय बोर्ड ने अनेक अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों में भी भाग लिया है।

तृतीय पंचवर्षीय योजना—तीसरी योजना में चाय का उत्पादन लक्ष्य 90 करोड़ पौण्ड (9,000 लाख पौण्ड) रखा था। इस तीसरी योजना में चाय का निर्यात लक्ष्य 61 करोड़ पौण्ड रखा था।

समस्याएँ—(1) झाड़ियों को पुन लगाने की समस्या (The Problem of Replanting)—चाय उत्पादन क्षेत्र के लगभग 41 5 प्रतिशत भाग में 50 वर्ष पुरानी चाय की झाड़ियाँ हैं। दार्जिलिंग में 51 प्रतिशत झाड़ियाँ 50 वर्ष से पुरानी झाड़ियाँ हैं और 33 प्रतिशत झाड़ियाँ 21 से 50 वर्ष पुरानी हैं। एक झाड़ी का आर्थिक जीवन लगभग 40 वर्ष होता है। इस आधार पर देश की लगभग 30 प्रतिशत चाय की झाड़ियों को तुरन्त ही दुबारा लगाने की आवश्यकता है।

(2) कर भार की समस्या—चाय उद्योग की वर्तमान कर-नीति में परिवर्तन

आवश्यक है। उत्पादन-कर, निर्यात-कर कृषि आय कर विक्रय कर, व अन्य प्रकार के करो को सम्मिलित करते हुए चाय उद्योग पर 20 स अधिक कर लगते हैं। इन उद्योगपतियो की माँग है कि इन करो को कम किया जाय।

(3) अनुसन्धान की समस्या—पहले भारत मे चाय के अनुसन्धान के लिए कोई अनुसधान शाला नही थी, किन्तु सन 1963 म चाय बोर्ड के सहयोग स 'भारतीय विज्ञान तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद' एक चाय अनुसन्धान सस्थान (Tea Research Association) स्थापित किया गया है।

(4) कम उपभोग—भारत म चाय का उपभोग बहुत कम होता है। आजकल हमारे देश म चाय का वार्षिक उपभोग लगभग 18 करोड पौण्ड है। भारत मे प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग लगभग 356 ग्राम है जबकि इगलण्ड म यह उपभोग 9 5 पौण्ड है।

सण्ट्रल टी बोर्ड भारत म चाय का उपभोग बढाने के विभिन्न प्रयत्न कर रहा है।

(5) कम उपज—भारत म प्रति एकड चाय की उपज बहुत कम होती है। लका म प्रति एकड लगभग 1 हजार पौण्ड चाय उत्पन्न होती है, जबकि भारत के मुख्य चाय उत्पादन क्षेत्र असम मे यह अब केवल 450 पौण्ड ही है।

चाय की प्रति एकड उपज म वृद्धि के लिये उपयुक्त खादो का प्रयोग वाछनीय है। चाय के क्षेत्र म वृद्धि करके उपज की मात्रा म वृद्धि की जा सकती है।

(6) पैकिंग की समस्या—चाय के पैकिंग मे उपयुक्त जल व वायु सिद्ध (Water and Air Proof) कागज आदि की आवश्यकता होती है, जो प्राय विदेशो से आयात किया जाता है। अत इसका उत्पादन देश म ही करना चाहिए। लकडी की पेटियो की बडी मात्रा म आवश्यकता होती है।

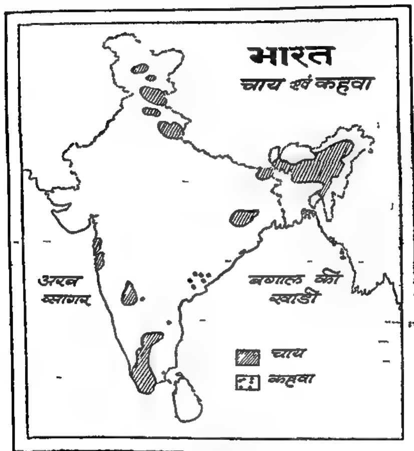
(7) राष्ट्रीयकरण की समस्या—इन दिनो चाय उद्योग के राष्ट्रीयकरण की माँग भी हो रही है। इसके पक्ष के लोग कहते हैं कि इस समय भारत के चाय उद्योग पर एक प्रकार से ब्रिटिश उद्योगपतियो का एकाधिकार है। देश मे 7 89 330 एकड भूमि म चाय बोई जाती है जिसम से 80 प्रतिशत पर ब्रिटिश कम्पनियो का नियन्त्रण है। इसके अतिरिक्त इस उद्योग म लगी हुई 51 करोड रुपये की पूजी मे स 70 प्रतिशत ब्रिटिश पूजीपतियो की है। इसके अतिरिक्त इस उद्योग के अन्य पहलू भी मुट्ठी भर विदेशी कम्पनियो के अधिकार म हैं।

(2) कहवा (Coffee)—

भारत मे कहवे की प्रथम उत्पत्ति—सन 1600 के लगभग बाबाबूदन साहिब ने पोलीगर और उसके अनुयायियो को चन्द्रगिरि पहाडी पर परास्त करके अपने साथियो स कहा कि वह (बाबाबूदन साहिब) तीर्थयात्रा करने मक्का शरीफ जा रहे हैं। वहाँ से लौटने पर उन्होंने अपने साथियो को एक अच्छा समाचार दिया कि वह वहाँ स एक आश्चर्यजनक वृक्ष के सात बीज लाय हैं जो कि भोज्य-पदार्थ व पेय पदार्थ

दोनो के ही काम आते हैं। उन बीजों को चन्द्रगिरि पहाडी पर बो दिया गया। उसी दिन से चन्द्रगिरि पहाडी का नाम बाबाबूदन पहाडी पड गया। इस प्रकार बाबाबूदन साहिब ने ही वास्तव मे भारत म सवप्रथम कहवा-वृक्ष के उत्पादन की नीव डाली।

ब्राजील व पूर्वी-द्वीप समूह मे भारत से कहवे के पौधे ले जाये गये—इतिहास म इसके प्रमाण हैं कि बाबाबूदन की पहाडियो से कहवे के पौधे डच-पूर्वी द्वीपसमूह और ब्राजील ले जाय गय। डच पूर्वी द्वीपसमूह म सवप्रथम भारत के मालाबार से



चित्र 21

सन् 1696 मे कॉफी के पौधे ले जाकर बोए गय थे। सन् 1760 मे गोआ (भारत) से रियोड-जनिरो (ब्राजील—दक्षिणी अमरीका) कहवे के पौधे ले जाय गये और इस प्रकार ब्राजील म कहवे की खेती का श्रीगणेश हुआ।

भारत में विकास—भारत म लगभग दो शताब्दियो तक कहवा की कृषि ने कोई विकास नही किया। सन् 1799 म ईस्ट इण्डिया कम्पनी का ध्यान व्यापारिक—

उपज के रूप में कहवे की खेती की ओर गया और इसी समय तलीचेरी (Tellicherry in Andhra State) प्रयोगात्मक रूप में कहवे की खेती की गई और इसके बाद दक्षिण भारत में घाट की ढालों पर भी इसकी खेती की जाने लगी। आधी शताब्दी से भी कम अवधि में पहाड़ियों की ऊँचाइयों पर वन साफ कर दिए गये और कहवे के मुस्कराते हुए बगीचे लहलहाने लगे। सन् 1872 में भारत से लगभग 25 हजार टन कहवा विदेशों को निर्यात किया गया।

कहवा का उत्पादन मुख्यतः निर्यात के लिए ही किया जाता था। तीसवीं दशक (thirties) में मन्दी का समय आया और फलस्वरूप 3 लाख एकड़ कहवे का क्षेत्र घटकर 1940-41 में 1.81 लाख एकड़ रह गया।

उपज की दशायें—कहवा के लिए उपज की दशायें चाय की उपज की दशाओं के लगभग समान होती हैं। यह समशीतोष्ण कटिबन्ध का पौधा होना है जिसे गर्म व तर जलवायु की आवश्यकता होती है।

(1) **तापक्रम**—कहवा उत्पादन के लिए ऊँचे तापक्रम की आवश्यकता होती है। 12°C से 26°C तक का तापक्रम ठीक रहता है। 10°C से कम तापक्रम वाले क्षेत्रों में इसकी उपज नहीं हो सकती है।

(2) **वर्षा**—इसके लिये अधिक पानी की आवश्यकता होती है। साधारणतया 150 Cms से 175 Cms तक की वार्षिक वर्षा पर्याप्त होती है किन्तु यदि भूमि का ढाल उचित हो और पानी बहता रहे तो 250 Cms की वार्षिक वर्षा के क्षेत्रों में भी यह उत्पन्न हो जाता है। चाय की झाड़ियों की भाँति इसकी जड़ों में भी पानी नहीं रुकना चाहिये इसलिये पर्वतीय ढालों पर बने हुए खेत इसके लिये सबसे उपयुक्त होते हैं।

(3) **मिट्टी**—कहवा के लिये उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। लोह युक्त मिट्टी इसके लिये सर्वश्रेष्ठ होती है। मिट्टी में वनस्पति अंश बहुत होने चाहिए अतः जिन भागों में जंगल काट कर कहवे की खेती की जाती है वहाँ इसका उत्पादन बहुत अधिक होता है।

पाला और आँधी इस पौधे के लिए अत्यन्त हानिकारक होते हैं। सूर्य की सीधी किरणों को यह सहन नहीं कर सकता है। इस कारण कहवे के वृक्षों के पास ही सिनकोना, ओक, केले अथवा रबर के छायादार वृक्ष लगा देते हैं जिनसे कहवा के वृक्षों की रक्षा होती रहे। 900 से 1500 मीटर तक की ऊँचाई वाले ढलान इसके लिए बहुत उपयुक्त होते हैं। इससे अधिक ऊँचाई पर इसके पौधे नहीं पनप सकते हैं।

कहवा का वृक्ष—वैसे तो कहवे का वृक्ष बहुत ऊँचा होता है किन्तु इसको

---

1 कहवा-सम्बन्धी अधिकांश सामग्री भारतीय काफी बोर्ड द्वारा प्रकाशित The Story of Indian Coffee में से साभार ली गई है। लेखक काफी बोर्ड के कृतज्ञ हैं जिसने उपयोगी सामग्री हमें भेजी है।

काटते रहते हैं और 1 1½ मीटर ऊँचा ही रखते हैं ताकि रक्षा भी हो सके और फल सुगमता से तोड़े जा सकें। कहवे का वृक्ष जब तीन वर्ष का होता है, तभी से फल देने लगता है लेकिन जब यह पाँच वर्ष का होता है तब से फल अच्छे आने लगते हैं। कहवे के वृक्ष से 50 वर्ष तक फल प्राप्त किये जा सकते हैं। इसके लिए वर्ष भर तक इन वृक्षों को उचित खाद देनी पड़ती है, कीटाणुओं व बीमारियों से रक्षा करनी पड़ती है और समय समय पर उस छाया को ठीक रखने के प्रयत्न करने पड़ते हैं, जिनके नीचे ये वृक्ष उगते हैं।

भारत में कहवे के वृक्ष वर्ष भर में केवल एक उपज देते हैं। इसके वृक्ष में मार्च-अप्रैल में फूल फूलते हैं। इन फूलों के ही गोल व छोटे फल बन जाते हैं। ये फल नौ दस महीनों में पक जाते हैं। जो वृक्ष अधिक ऊँचाई पर होते हैं उनके फल पकने में अधिक समय लग जाता है। कुछ क्षेत्रों में सितम्बर के महीने और दूसरे क्षेत्रों में जनवरी के महीने में फसल पक कर तैयार हो जाती है। केवल पके हुए फल ही तोड़े जाते हैं अतः कई बार तक फल तोड़े जाते हैं।

कहवे की किस्में—मुख्यतः विश्व में कहवा तीन प्रकार का होता है—(1) अरेबिका (Coffea Arabica) (2) रोबस्टा (Coffea Robusta), और (3) लिबरिका (Coffea Liberica)। भारत में प्रायः प्रथम दो किस्मों की कहवे की उपज होती है। भारत में कुल कहवे के उत्पादन-क्षेत्र के लगभग 62% भाग में अरेबिका कॉफी उगाई जाती है।

सन् 1910 में जावा से भारत में रोबस्टा किस्म की कॉफी लाई गई, तब से इसके क्षेत्रफल में लगातार वृद्धि हो रही है। इस समय कहवा उत्पादन के कुल क्षेत्र के लगभग 38% भाग में रोबस्टा कहवे की खेती हो रही है। अरेबिका कॉफी अपनी अच्छी किस्म के लिए प्रसिद्ध है। रोबस्टा कॉफी कीड़ों व बीमारी का प्रतिरोध करने में सफल होती है प्रति एकड़ उपज भी अधिक होती है और उस पर अधिक व्यय भी नहीं करना पड़ता है।

बाजार के लिए कहवे की तैयारी—कहवे के फल में से बीजों को निकाल कर, इन्हें (बीजों को) सुखा कर भून लेते हैं और पीस लेते हैं। इस प्रकार बाजार में जो कॉफी मिलती है वह चूर्ण (Powder) के रूप में मिलती है। कहवे को चाय की भाँति ही गर्म पानी में डालकर अच्छी तरह घोल लेते हैं। फिर इसमें आवश्यकतानुसार दूध व चीनी डाल लेते हैं। अब काफी पीने के लिए तैयार हो जाती है।

कहवे के फलों में से बीज दो प्रकार से निकाले जाते हैं। प्रथम तरीका, आर्द्र अथवा धोने की प्रणाली (Wet or Washing Method) कहलाती है। इस प्रणाली में फल के ऊपर की झिल्ली और गूदे को मशीनों द्वारा धोकर अलग कर लेते हैं। फल के अन्दर प्रायः दो फलियाँ होती हैं जिनमें बीज होते हैं। अब इन फलियों को धूप में इतना सुखाते हैं कि बहुत ही साधारण नमी रहने देते हैं। अब फली के ऊपर की झिल्ली को उतार लेते हैं और बीजों (अर्थात दानों) को निकाल लेते हैं।

दूसरी प्रणाली यह है कि कहवे के फल जब पक जाते हैं तो इन फलों को ही धूप मे इतना अधिक सुखाते हैं कि फल के ऊपर का छिलका अन्दर का गूदा और फलियो की ऊपरी झिल्ली भी सूख जाती है। अब मशीनो के द्वारा इन फलियो को निकाल कर बीज प्राप्त कर लेते हैं।

उत्पादन के क्षेत्र—भारत मे विश्व के कुल कहवा क्षेत्र का लगभग दो प्रतिशत भाग है जबकि ब्राजील (द० अमेरिका) म यह लगभग 70 प्रतिशत है। हमारे देश का कहवा क्षेत्र एव उत्पादन प्राय दक्षिण भारत तक ही सीमित है। नवीनतम आँकडा (1969 70) के अनुसार भारत म कहव की उपज लगभग 62 900 हेक्टेयर भूमि मे होती है।

कहवे के क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत के राज्यो का क्रम[1] इस प्रकार है —

राज्य	क्षेत्रफल
मसूर	1,52,550
तमिलनाडु	61 500
केरल	46 000
आन्ध्र	83
(i) महाराष्ट्र	190
(ii) उडीसा	20
(iii) असम	3

इस प्रकार स्पष्ट है कि मसूर, तमिलनाडु व केरल राज्य ही भारत म सबसे अधिक कहवा उत्पादक राज्य है। विश्व म कहवा उत्पादन के लिए इतनी अधिक उपयुक्त पहाडियाँ बहुत ही कम है जितनी कि भारत की पहाडिया है। अधिक ऊँचाई, सूर्यमुखी ढालें, उष्णकटिबन्धीय धूप, पर्याप्त वर्षा, वनस्पतियुक्त मिट्टी आदि कहवा उत्पादन की आदश दशाए इन पहाडिया पर पाई जाती हैं।

मसूर राज्य म बाबाबूदन की पहाडियाँ, तमिलनाडु राज्य म नीलगिरि अनामलाइ काफी उत्पादन करने वाली मुख्य पवत-श्रेणियाँ हैं। कुग (दोनो उत्तरी व दक्षिणी) और नीलगिरि पहाडियाँ जो आशिक रूप से मद्रास व आशिक रूप से मैसूर राज्य म स्थित हैं भी काफी उत्पादक पहाडियाँ हैं। केरल राज्य म नलियमपथी और कम्मान पहाडिया पर कहवा हाता है। असम बगाल उडीसा एव मध्य प्रदेश म भी कहवा उत्पादन के प्रयत्न हो रहे हैं।

भारत म लगभग 27 हजार बगीचे कहव के हैं जिनम लगभग 60 प्रतिशत बगीचे भारतीयो के हैं और शेष यूरोपीयनो के अधिकार म हैं।

उत्पादन मात्रा—विश्व के कुल कहवा उत्पादन का लगभग 1 प्रतिशत

1 *The Story of Indian Coffee*, p 3

भाग भारत मे उत्पन्न होता है विश्व म सबमे अधिक कहवा ब्राजील (दक्षिणी अमेरिका) म होता है। वहाँ विश्व के कुल कहवा उत्पादन का 70 प्रतिशत भाग उत्पन्न होता है।

भारत म कहव का 1970 71 म उत्पादन 75 हजार टन था। सन् 1947-1953 के बीच औसत उत्पादन 22 4 हजार टन प्रतिवर्ष था और 1934-40 का औसत उत्पादन 16 हजार टन था।

पिछल वर्षों म भारत क कहवा उत्पादन की मात्रा इस प्रकार रही —

वर्ष	हजार टन
1950 51	24 6
1955 56	35 0
1960 61	44 1
1965-66	60 6
1967 68	71 0
1969-70	62 9
1970 71	75 0

प्रति व्यक्ति उपलब्धता—भारत मे प्रति व्यक्ति वार्षिक कहवा की उपलब्धता इस प्रकार है —

वर्ष	प्रति व्यक्ति उपलब्धता (औंस)
1955 56	68
1960 61	82
1965 66	71
1966 67	86
1967 68	53
1968 69	47

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत मे प्रति व्यक्ति कहवे की उपलब्धता [illegible] कम होती जा रही है।

कॉफी बोर्ड का परिचय—सन् 1940 म भारत सरकार न कॉफी बाजार विकास अध्यादेश (Coffee Market Expansion Ordinance, XIII of 1940) जारी करके 21 दिसम्बर 1940 को भारतीय कॉफी-बाजार विकास बोर्ड की स्थापना की जिसका प्रमुख उद्देश्य था—भारत व विदेशों मे कॉफी क विक्रय को [illegible] प्रकार से नियन्त्रित करना।

वर्तमान कॉफी बोर्ड पूर्वकालीन भारतीय उत्तराधिकारी है। भारत सरकार ने 1942 म

पास किया जिसमे 1955 म सशोधन किये गये और अब इस अधिनियम का नाम कॉफी अधिनियम (VII of 1942) है।

कॉफी बोर्ड कॉफी उत्पादकों व्यापारियों श्रमिकों उपभोक्ताओं और जिन राज्यों म कॉफी उत्पन्न की जाती है वहाँ के प्रतिनिधियों का सगठन है। यह बोर्ड तमाम कॉफी उत्पादन को एकत्रित करता है देश व विदेश म भारतीय कॉफी का प्रचार करता है कॉफी के विक्रय व निर्यात का प्रबन्ध करता है।

भारतीय कहवा बोर्ड ने कहवा उत्पादन विकास की एक योजना बनाई है। इसके साथ ही कहवे की प्रति एकड उपज बढ़ाने की भी योजना है। भारत में इस समय प्रति एकड 312 पौण्ड कहवे की उपज है जो अन्य देशो की तुलना म कम है जो नीचे की तालिका से स्पष्ट हो जायगा —

देश	प्रति एकड़ उपज
कोलम्बिया	600 पौण्ड
ब्राजील	500 पौण्ड
पूर्वी अफ्रीका	400 पौण्ड
भारत	312 पौण्ड

कहवा उद्योग म हमारे यहाँ लगभग एक लाख व्यक्ति लगे हुए हैं।

व्यापार—कहवा की हाट व्यवस्था 'कहवा बोर्ड' के हाथ में है। कहवे का जो उत्पादन होता है, वह कहवा-अधिनियम के अन्तर्गत कहवा बोर्ड को सौंप दिया जाता है। कहवा-बोर्ड कहवा की बिक्री भारतीय निर्यातकों को करता है और देश में आन्तरिक उपभोग के लिए माल को विक्रय करता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार म भारत के कहवे के व्यापार का स्थान बहुत ही नगण्य है। विश्व के कुल कहवा निर्यात म भारत का भाग 1% से भी कम रहता है। भारतीय कहवे के मुख्य ग्राहक ये हैं—इटली पश्चिमी जर्मनी बेल्जियम फ्रान्स, रूस, इगलैड एव स्विटजरलैण्ड आदि।

भारत से कहवे का निर्यात

वर्ष	निर्यात (हजार टन)
1951 52	2 2 टन
1956 57	15 2 टन
1961 62	29 7 टन
1965 66	28 0 टन
1967 68	35 0 टन
1968 69	28 7 टन
1969 70	32 4 टन

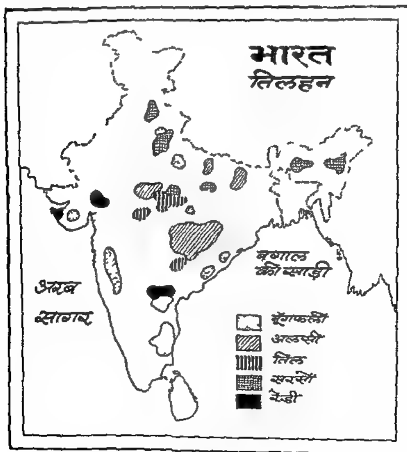
कहवा निर्यात करने वाले मुख्य बन्दरगाह मगलौर, तलीचरी कालीकट और मद्रास हैं। कुल कहवा निर्यात का 76 प्रतिशत मगलौर से, 11 प्रतिशत तलीचरी से, 10 प्रतिशत कालीकट से और 3 प्रतिशत मद्रास से निर्यात किया जाता है।

(IV) व्यापारिक पदार्थ

इसके अन्तर्गत तिलहन, तम्बाकू व गर्म मसाला का अध्ययन करेंगे।

(1) तिलहन—

महत्व—जिन बीजों को पेरने से तेल निकलता है, उन्हें 'तिलहन (Oil seeds) कहते हैं। विश्व में तिलहन व वनस्पति तेलों के उत्पादन में भारत का



चित्र 22

अत्यन्त महत्वशील स्थान है। तिलहन भारत की राष्ट्रीय सम्पदा है तथा विदेशी मुद्रा कमाने में बहुत सहायक है। तिलहन पेरने से जो खली प्राप्त होती है, वह पशुओं का पुष्टिकारक भोजन है। वनस्पति तेलों से हमारी भोजन-सम्बन्धी दैनिक

आवश्यकताओं की भी पूर्ति होती है। इन तेलों का उपयोग भोजन बनाने, वनस्पति घी, साबुन, मोमबत्ती, औषधियों, सौन्दर्य प्रसाधन, रंगरोगन, वार्निश आदि वस्तुओं के बनाने में होता है।

भारत में तिलहन के आकार के अनुसार ये दो प्रकार के पाये जाते हैं—(अ) छोटे दाने का तिलहन—इसमें अलसी, सरसों, राई व तिल मुख्य हैं। (ब) बड़े दाने वाला तिलहन—इसमें मूंगफली, बिनौला, रेंडी, नारियल आदि मुख्य हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि छोटे दानों का तिलहन अधिकतर उत्तरी भारत में और बड़े दाने का तिलहन दक्षिणी भारत में उत्पन्न होता है।

भारत में कृषि-योग्य भूमि के लगभग 8 प्रतिशत भाग में तिलहन की खेती होती है और वार्षिक उत्पादन 75 लाख टन के लगभग है।

उत्पत्ति क्षेत्र—दक्षिणी भारत देश के कुल तिलहन के आधे से भी अधिक भाग को उत्पन्न करता है। उत्तरी भारत में अपेक्षाकृत कम तिलहन होने का प्रमुख कारण यह है कि यहाँ अधिक भूमि में खाद्यान्न उत्पन्न किये जाते हैं। महत्त्व के अनुसार दक्षिणी भारत में तिलहन उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों का क्रम इस प्रकार है—तमिलनाडु, आन्ध्र, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात। उत्तरी भारत में तिलहन उत्पन्न करने वाला प्रमुख राज्य उत्तर प्रदेश है। पूर्वी पंजाब, राजस्थान, बिहार व पश्चिमी बंगाल तिलहन उत्पन्न करने वाले प्रमुख अन्य भाग हैं।

अब हम प्रमुख तिलहनों का विवरण संक्षेप में दे रहे हैं।

(अ) छोटे दाने का तिलहन—

(1) अलसी—छोटे बीज वाली अलसी का उत्पत्ति स्थान अफगानिस्तान माना जाता है। वहीं से यह यूरोप, भारत व एशिया के अन्य देशों में फैली। अर्जेण्टाइना, भारत व संयुक्त राज्य अमेरिका तीनों मिलकर विश्व की अलसी का 80 प्रतिशत से भी अधिक उत्पन्न करते है।

उपज की दशाएँ—यह विभिन्न प्रकार की जलवायु में हो जाता है। भारत में यह रबी की फसल है। इसके लिए वार्षिक वर्षा 75 Cms से 150 Cms तक होनी चाहिए। वैसे तो अलसी सभी प्रकार की मिट्टी में हो जाती है किन्तु काली मिट्टी वाले प्रदेश में खूब होती है वैसे गंगा के मैदान की दुमट मिट्टी में भी होती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत में अलसी की उपज के लिए दो प्रमुख क्षेत्र हैं—पहला काली मिट्टी वाला भाग और दूसरा गंगा सिंधु का मैदान। सबसे अधिक अलसी उत्तर प्रदेश मे होती है दूसरे नम्बर पर महाराष्ट्र व गुजरात का स्थान आता है। इसके अतिरिक्त मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, आन्ध्र, पूर्वी पंजाब और राजस्थान (कोटा) में इसकी उपज होती है।

अलसी का तेल वार्निश व रंगरोगन के काम आता है।

व्यापार—अलसी व इसका तेल दोनों ही भारत से विदेशों को निर्यात किये जाते हैं। यूरोप के देशो मे इंगलैण्ड, फ्रांस, बेल्जियम, इटली भारतीय अलसी के प्रमुख

ग्राहक हैं। इनके अतिरिक्त जापान, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड को भी यहाँ से अलसी निर्यात की जाती है। अब भारत के अनेक भागों में अलसी का तेल निकालने की मिलें स्थापित होती जा रही हैं जिनमें तेल निकाला जाता है। अतः आजकल अलसी अधिक मात्रा में न भेजकर अलसी का तेल निर्यात करने की प्रवृत्ति हो रही है। बम्बई निर्यात करने का प्रमुख बंदरगाह है।

(2) **सरसों एवं राई**—सरसों एवं राई अधिकांश रूप से उत्तरी भारत में ही उगाई जाती है। इनके लिए उपजाऊ मिट्टी व शुष्क शरद ऋतु की आवश्यकता होती है। उत्तर प्रदेश इन फसलों के उगाने में सबसे अधिक महत्वशील है। भारत में सरसों की कुल उपज का लगभग आधा भाग उत्तर प्रदेश में ही प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त ये पूर्वी पंजाब, बिहार, पश्चिमी बंगाल में काफी होती हैं।

सरसों का तेल खाने के काम में भी आता है एवं विदेशों को निर्यात भी किया जाता है। सरसों का निर्यात इंगलैण्ड, फ्रांस, बेल्जियम एवं इटली को काफी होता है। राई विदेशों को नहीं भेजी जाती है।

(3) **तिल**—तिल का उत्पत्ति-स्थान अफ्रीका माना जाता है। वहाँ से भारत एवं अन्य देशों में इसका विस्तार हुआ। भारत में तिल गर्म भागों में बोया जाता है और ठण्डे भागों में भी। अतः यह रबी की भी फसल है और खरीफ की भी। यह काली मिट्टी वाले प्रदेशों में भी होता है और बलुई मिट्टी वाले भागों में भी। यही कारण है कि यह भारत में उत्तर से दक्षिण तक होता है।

महाराष्ट्र, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, बिहार तथा पश्चिमी बंगाल तिल उत्पन्न करने वाले प्रमुख भाग हैं। इनके अतिरिक्त आन्ध्र तथा राजस्थान में भी तिल की खेती होती है। तिल की खेती का क्षेत्र मूंगफली के अतिरिक्त सब तिलहनों में अधिक है।

तिल की मिठाइयाँ भी बनती हैं परन्तु तिल का तेल निकाल कर खाने के काम अधिक आता है। वनस्पति घी बनाने में मूंगफली के तेल के साथ तिल का तेल भी जमाया जाता है।

भारत में तिल का क्षेत्रफल एवं उत्पादन[1]

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)	उत्पादन (लाख टन)	प्रति हेक्टेयर उत्पादन (किलोग्राम)
1950 51	22 0	4 45	202
1955 56	22 9	4 67	204
1960 61	21 7	3 18	147
1965 66	24 8	4 25	171
1967 68	26 5	4 45	168
1968 69	24 1	4 15	172
1969 70	23 0	4 33	291

1 *Source* Ministry of Food and Agriculture

भू०, 18

तिल के कुल उत्पादन का लगभग 75 प्रतिशत भाग तो प्रदेश में ही काम आ जाता है और शेष निर्यात कर दिया जाता है। इंगलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी इटली, मिस्र आदि को भारत से तिल भेजा जाता है। देश में तिल का तेल निकालने के अनेक कारखाने स्थापित हो गये हैं, अतः अब विदेशों को तिल के निर्यात की मात्रा में कमी हो रही है लेकिन तिल के तेल का निर्यात किया जाने लगा है।

(ब) बड़े दाने का तिलहन—

(1) मूंगफली—मूंगफली का उत्पत्ति स्थान ब्राजील (दक्षिणी अमेरिका) माना जाता है। भारत में सर्वप्रथम इसकी खेती सन 1800 के लगभग दक्षिण भारत में हुई। मूंगफली की खेती क्षेत्र और उत्पादन दोनों ही दृष्टि से भारतवर्ष में विश्व के अन्य देशों की अपेक्षा अधिक होती है।

उपज की दशाएँ—मूंगफली उष्ण कटिबन्ध की उपज है। आरम्भ में इसे ऊँचे तापक्रम की आवश्यकता होती है। 20 C से 26 C तक का तापक्रम इसके लिए पर्याप्त होता है। इसे अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती है। 50 Cms से 75 Cms की वार्षिक वर्षा इसके लिए पर्याप्त होती है। पाला इसकी खेती के लिए अत्यन्त हानिप्रद होता है। वैसे तो इसके लिए हल्की दुमट मिट्टी अच्छी रहती है, किन्तु यह साधारण मिट्टी में हो जाती है। काली मिट्टी के प्रदेश तथा दक्षिणी पठार की लाल मिट्टी में भी इसकी उपज होती है।

उपज—भारत में तिलहन उत्पादन की कुल भूमि के लगभग 40 प्रतिशत भाग में मूंगफली होती है। खाद्य एवं कृषि मन्त्रालय द्वारा प्रकाशित आँकड़ों के अनुसार भारत में मूंगफली का क्षेत्रफल एवं उत्पादन इस प्रकार है —

मूंगफली का क्षेत्रफल एवं उत्पादन[1]

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टयर)	उत्पादन (लाख टन)
1950 51	44 94	34 81
1955 56	51 33	38 62
1960 61	64 63	48 12
1965 66	74 28	42 30
1967 68	75 53	57 31
1968 69	70 91	44 76
1969 70	72 19	51 43
1970 71		60 00

खाद्य एवं कृषि मन्त्रालय द्वारा प्रकाशित आँकड़ों के अनुसार आजकल (1969 70) भारत में 70 लाख हेक्टयर से भी अधिक भूमि में मूंगफली की खेती हमारे देश में हो रही है।

1 *Source* Ministry of Food and Agriculture

भारत मे मूगफली की खेती का प्रादेशिक वितरण उतना ही अवगानिक है जितना कि गन्ने का है। मूगफली का 80 प्रतिशत उत्पादन दक्षिणी भारत म होता है जबकि उत्तरी भारत की जलवायु इसके लिए अधिक अनुकूल है और गन्ने का 80 प्रतिशत उत्पादन उत्तरी भारत म होता है जबकि दक्षिणी भारत की जलवायु इसके लिए अधिक अनुकूल है।

अधिकाश मूगफली दक्षिणी भारत म ही होती है। तमिलनाडु राज्य मूगफली के उत्पादन म सबस आग है जहाँ देश की कुल मूगफली की उपज का आधे से भी अधिक भाग होता है। तमिलनाडु के अतिरिक्त गुजरात, महाराष्ट्र मसूर, आन्ध्र और मध्य प्रदेश मूगफली उत्पादन म प्रमुख हैं। राजस्थान एव पजाब म भी मूगफली की खेती होती है।

भारत म मूगफली का प्रति हेक्टेयर उपज इस प्रकार है—

वर्ष	प्रति हेक्टेयर उपज (किलोग्राम)
1950 51	775
1955 56	752
1960 61	745
1965 66	570
1967 68	759
1968 69	631
1969 70	712

व्यापार—देश मे मूगफली के उत्पादन का लगभग 75 प्रतिशत भाग देश म ही खप जाता है। आजकल हमार देश म वनस्पति घी का उत्पादन एव माग में पर्याप्त वृद्धि हो रही है। वनस्पति घी बनाने के लिए मूगफली की माग बहुत रहती है। दक्षिणी भारत म भोजन म इसका उपयोग खूब होता है। इसके अतिरिक्त मूगफली को मिट्टी म भून कर भी खात हैं।

पहले भारत म मूगफली का निर्यात खूब होता था, किन्तु अब देश म माग बढ जाने के कारण इसके निर्यात म कमी हो गई है। सबस अधिक मूँगफली मद्रास बन्दरगाह से बाहर भेजी जाती है। बम्बई बन्दरगाह का मूगफली के निर्यात क महत्त्व की दृष्टि स दूसरा स्थान है।

भारत से मूगफली और मूगफली का तेल इगलैड फ्रास, बेल्जियम इटली कनाडा और जमनी म भेजे जाते हैं।

(2) अण्डी—अण्डी (castor seeds) का उत्पत्ति का स्थान अफ्रीका माना जाता है। यह उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्ध का पौधा है किन्तु भारत मे सवत्र ही इसकी खेती होती है। विश्व म सबस अधिक अण्डी भारत म ही उगाई जाती है, बहुत थोडी मात्रा म मचूरिया, इण्डोचीन और ब्राजील में होती है।

उपज की दशाएँ—गर्म भागों में तो वर्ष में इसकी दो उपज हो जाती हैं, किन्तु ठण्डे क्षेत्रों में इसकी एक फसल ही होती है। इस पौधे के लिए शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। अधिक पानी इसके लिए हानिकारक होता है। यह पौधा पाला सहन नहीं कर सकता है वैसे तो अण्डी सभी प्रकार की मिट्टियों में हो जाती है किन्तु दुमट मिट्टी इसके लिए श्रेष्ठ रहती है।

उपज—आन्ध्र और तमिलनाडु में इसकी उपज सबसे अधिक होती है। इनके अलावा महाराष्ट्र, गुजरात, मैसूर व दक्षिणी क्षेत्र अण्डी के अन्य उत्पादक हैं। उत्तरी भारत में उत्तर प्रदेश मध्य प्रदेश बिहार और उड़ीसा अण्डी उत्पादक क्षेत्र हैं। भारत में अण्डी की खेती का क्षेत्रफल 10 लाख एकड़ से भी अधिक है।

अण्डी का तेल दवाइयाँ, रोगन बनाने व हवाई जहाज में तेल देने के काम आता है। इसके तेल में यह विशेषता है कि यह बहुत नीचे तापक्रम में भी नहीं जमता है।

व्यापार—भारत से अण्डी के बीजों का तो निर्यात महत्त्वशील नहीं है, किन्तु इसके तेल का निर्यात होता है। लगभग 60 प्रतिशत तेल तो देश में ही काम आ जाता है और शेष निर्यात किया जाता है। भारत से सबसे अधिक अण्डी का तेल इंगलैंड आयात करता है दूसरा स्थान संयुक्त राज्य अमरीका का है। इनके अतिरिक्त फ्रांस, बेल्जियम इटली भी भारत से इसका आयात करते हैं।

(3) **बिनौला**—यह कपास का बीज होता है अतः कपास उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में ही प्राप्त होता है। महाराष्ट्र व गुजरात मध्य प्रदेश, पूर्वी पंजाब, उत्तर प्रदेश आदि बिनौले के मुख्य उत्पादक क्षेत्र हैं। भैंसों को बिनौला खिलाने से अच्छा दूध मिलता है। अब बिनौले से तेल भी निकाला जाने लगा है जिसका उपयोग वनस्पति घी बनाने के काम में होता है। बिनौले से तेल निकालने के पश्चात् खली की उपयोगिता भी कम नहीं होती है। इसे जानवरों को खिलाया जाता है और उच्च कोटि की खाद भी बनाई जाती है। थोड़ी मात्रा में बिनौले यूरोप के देशों को भेजे जाते हैं। भारत में प्रतिवर्ष 20 लाख टन बिनौले होते हैं।

भारत में बिनौले का क्षेत्र व उत्पादन[1]

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)	उत्पादन (लाख टन)	प्रति हेक्टेयर उपज (किलोग्राम)
1950 51	58 82	10 13	172
1955 56	80 86	13 91	172
1960 61	76 10	18 65	245
1965 66	79 42	16 83	212
1967 68	79 95	19 67	246
1968 69	76 85	18 95	247
1969 70	77 12	19 88	232

[1] *Source* Ministry of Food and Agriculture

(4) खोपरा—नारियल के वृक्ष उष्ण कटिबंध में समुद्री किनारों तथा द्वीपों में पाये जाते हैं। इसके लिए ऊँचे तापक्रम और अधिक वर्षा की आवश्यकता होती है। वार्षिक तापक्रम 24°C से 30 C और कम से कम 125 Cms की वार्षिक वर्षा पर्याप्त होनी है। वसे तो इसके लिए उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है, किन्तु रतीली भूमि में भी यह हो जाता है। नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी इसके लिए बहुत अच्छी होती है। वृक्ष 8 10 वर्ष में तयार हो जाते हैं और फिर 70 80 वर्ष तक उसमें फल आते रहते हैं। प्रत्येक वृक्ष में प्रतिवर्ष 60 70 फल प्राप्त होते रहते हैं। प्रति एकड़ 4 5 हजार नारियल प्राप्त हो जाते हैं।

नारियल से दो वस्तुयें प्राप्त होती हैं—गिरी जिसे खोपरा कहते हैं और जटा। नारियल में तेल की मात्रा काफी रहती है, अत इसका व्यापारिक महत्व काफी है। नारियल का तेल भोजन, सिर में डालने और वनस्पति घी बनाने के काम में आता है।

भारत में लगभग 15 लाख एकड़ भूमि में नारियल के वृक्ष हैं। अधिकांश वृक्ष दक्षिणी भारत में समुद्री किनारे पर हैं। तमिलनाडु करल और मैसूर नारियल के प्रमुख उत्पादन केन्द्र हैं। उड़ीसा, महाराष्ट्र, पश्चिमी बंगाल और असम में भी नारियल के वृक्ष पाये जाते हैं।

उपरोक्त के अतिरिक्त पोस्त, महुआ आदि तिलहन भी भारत में होते हैं।

तिलहन का व्यापार—भारत के विदेशी व्यापार में तिलहन का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। भारत के निर्यात व्यापार में तिलहन का पांचवां स्थान है। द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व भारत जितना माल इङ्गलैण्ड को निर्यात करता था उसका 30 प्रतिशत भाग तिलहन का ही होता था इटली को निर्यात किये जाने वाले माल में 15 प्रतिशत भाग तिलहन का ही होता था। परन्तु देश में अधिक मात्रा में तिलहन का निर्यात करना हानिप्रद है। डॉक्टर वाक्लकर ने तो यहां तक कहा है कि तिलहन का निर्यात करना भारतीय मिट्टी की उर्वरा शक्ति को निर्यात करना है। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित हैं —

(1) भारत में औद्योगिक विकास शीघ्रता में हो रहा है। अनेक उद्योग धंधे तिलहन पर निर्भर हैं। उदाहरण के लिये तेल निकालना, वनस्पति घी उद्योग रंग पेण्ट व वार्निश बनाना मुर्गा घृत तेल बनाना, साबुन बनाना आदि। यदि तिलहन का निर्यात किया जायगा तो इन उद्योगों को क्षति होगी। इसके अतिरिक्त भारत में तेल भोजन बनाने के काम में भी आता है। तमिलनाडु व बंगाल में तो विशेषतः तेल का उपयोग भोजन बनाने में होता है। तिलहन के निर्यात होने से तेल महंगा होगा जिसका प्रभाव करोड़ों भारतीयों पर पड़ेगा।

(2) मशीनों आदि को चिकना करने के लिये भी तेल की आवश्यकता होती है। विदेशों से तेल आयात करने से महँगा भी पड़ता है और देश की पूंजी का अपव्यय भी होता है। अत देश के अन्दर ही तेल तयार किया जाय। इसके लिए तिलहन के निर्यात को रोकना होगा।

(3) विदेशो को तिलहन भेजने से विदेशो म ही तेल निकलता है और देश म खली की कमी रह जाती है । खली पशुओ को खिलान स व हृष्ट पुष्ट भी हो जात है और दूध भी अच्छा प्राप्त होता है । खली का उपयोग खाद के रूप मे भी होता है ।

(4) निर्यात करने म आतरिक भाग स बन्दरगाह तक ले जाने व उतारने चढाने स माग म बहुत सा तिलहन नष्ट हो जाता है । अत इस क्षति को बचाने के लिए भी निर्यात को रोकना आवश्यक हो जाता है ।

(5) देश की माँग को देखते हुए देश म तेल उद्योग के विकास की पर्याप्त सम्भावनाए हैं । तेल निकालने की अनेक मिलें और स्थापित हो सकती हैं जिनम बहुत से मनुष्यो को रोजगार मिल सकता है ।

वतमान प्रवत्ति—आजकल तिलहन के निर्यात यापार मे कमी हो गई है । इसके अनक कारण है । भारत म वानिश साबुन वनस्पति घी आदि उद्योगो के विकास के साथ ही तल की माग बढ गई है अत स्थानीय बाजार ही विस्तृत है । दूसरा कारण यह है कि सरकार भी तिलहन के निर्यात को देश के हित म देखते हुए प्रोत्साहन नही दे रही है । तीसरा कारण अन्य देशो जस—सयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील अर्जे टाइना आदि म तिलहन की पदावार बढ जाने के कारण भारतीय तिलहन की विदशो म माँग कम हो गई है । इसके अतिरिक्त भारतीय तिलहन का भाव भी कुछ अधिक होन के कारण निर्यात म कमी हुई है । य प्रमुख कारण हैं जिनके कारण आजकल भारत के तिलहन क निर्यात म कमी हो गई है ।

(2) तम्बाकू—

परिचय—सम्भवत तम्बाकू ही सबसे अधिक घरेलू यसन है । तम्बाकू को धनी व्यक्तिया का आश्वासन तथा निधनों का सन्तोष कहा गया है । तम्बाकू का मूल स्थान दक्षिणी अमेरिका माना जाता है । भारत म तम्बाकू की खती लगभग चार सौ वर्ष पूर्व आरम्भ हुई थी । अनुमान है कि सन 1508 म पुर्तगाल वाल इस भारत म लाय थ । भारत म उच्च कोटि की तम्बाकू नहा होती है । वस तो तम्बाकू की अनेक जातिया हैं किन्तु व्यापारिक तम्बाकू की केवल दो ही जातियाँ—निकोटियाना टोबेकम (Nicotiana Tobacum) और निकोटियाना रस्टिका (Nicotiana Rustica) प्रसिद्ध हैं । इनम स प्रथम वग की तम्बाकू वर्जीनिया तम्बाकू के नाम स पुकारते हैं । यह सुनहरे रग की होती है तथा इसकी महक तम्बाकू सवन करने वाल बहुत पसन्द करते हैं । इसका उपयोग सिगरेट सिगार व चुरुट बनाने म किया जाता है । दूसरे वग की तम्बाकू का उपयोग खाने व हुक्के की तम्बाकू सु घनी बनान म होता है ।

विश्व म चीन मे तम्बाकू का क्षत्र सबसे अधिक है । दूसरा स्थान सयुक्त राज्य अमरिका का और तीसरा स्थान भारत का है ।

उपज की दशाए—यद्यपि तम्बाकू एक उष्ण-कटिबन्धीय पौधा है किन्तु यह विभिन्न प्रकार की जलवायु म उत्पन्न हो सकता है । यह अद्ध उष्ण कटिबन्धीय और

शीतोष्ण कटिबन्धीय भागो मे भी उत्पन्न हो जाता है। तम्बाकू की खेती अयनवृत्तीय क्षेत्र (Tropics) मे कही भी की जा सकती है यहाँ तक कि स्कॉटलैंड के कुछ भागो म भी इसकी कृषि सफलतापूर्वक की जा रही है।

(1) तापक्रम—तम्बाकू के लिए ऊँचे तापक्रम की आवश्यकता होती है। इसके लिए 15 C से 35 C तक का तापक्रम उपयुक्त रहता है। तम्बाकू पकते समय ऊँचा तापक्रम व शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है।

(2) वर्षा—तम्बाकू की खेती क लिए 50 Cms स 100 Cms वार्षिक वर्षा पर्याप्त होती है। इसके लिये भारी वर्षा हानिकारक होती है और कम वर्षा वाले क्षेत्रो म सिंचाई का सहारा लेना पडता है। यदि वर्षा कम होती है तो उसका प्रभाव पत्तियो पर पडता है, क्योकि पत्तिया कठोर और मोटी हो जाती हैं। पत्तियो के पकते समय मौसम शुष्क रहना चाहिए क्योकि उस समय मामूली वर्षा हो जाने पर भी उसकी किस्म बिगड जाती है। इसीलिये पकते समय स्वच्छ, चमकीला तेज धूप व वर्षारहित मौसम होना चाहिये।

चाय व कहवा की भाँति तम्बाकू के लिए भी पाला बहुत हानिकारक है। एक ही श्वेत पाला तम्बाकू की सम्पूर्ण फसल को नष्ट करने के लिए पर्याप्त होता है।

(3) मिट्टी—तम्बाकू के लिए अत्यन्त उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। हल्की दोमट मिट्टी इसके लिए बहुत अच्छी होती है। चूना तथा पोटाश के अंशो से युक्त मिट्टियो म यह भली भाँति बढती है। इसकी खेती म एक विशेष बात यह होती है कि यह मिट्टी के उपजाऊ तत्वो को शीघ्र ही नष्ट कर देती है, अत समय समय पर खाद देने की आवश्यकता रहती है। अमोनियम सल्फेट, सुपरफास्फेट और पोटाशियम सल्फेट की खाद अच्छी रहती है। मूगफली की खली के साथ अमोनियम सल्फेट सुपर फास्फेट और पोटाशियम भी मिलाकर खाद देने से बहुत अच्छे परिणाम निकले हैं।

यह ध्यान रहे कि पत्तियो का आकार प्रकार, स्वाद व गन्ध मिट्टी की किस्म पर ही निर्भर है। नदियो की कछारी या डेल्टाई मिट्टी पठार की लाल व काली मिट्टी और समुद्र तट की बलुई मिट्टी म भी तम्बाकू की खेती हो जाती है।

(4) भूमि का ढाल—तम्बाकू की खेती के लिए भूमि का ढाल भी महत्त्वपूर्ण है। इसकी जडो म पानी एकत्रित नहीं होना चाहिए। तम्बाकू की खेती 4 हजार फीट की ऊँचाई तक भी की जा सकती है। ढाल के कारण ही नदियो की ढालू घाटियाँ व पठारी भाग इसके लिए ठीक माने जाते हैं।

(5) सस्ते श्रमिक—तम्बाकू की खेती म सस्ते श्रमिको की भी आवश्यकता पडती है। तम्बाकू के पौध लगाने, काटने, पत्तियो के सुखाने व तैयार करने म हाथ से ही सब काम किया जाता है। अत सस्ते श्रमिक इसके उत्पादन म महत्त्वपूर्ण है।

उपज के क्षेत्र—भारत म तम्बाकू उत्पन्न करने वाले दो प्रमुख क्षेत्र हैं—प्रथम दक्षिणी क्षेत्र और दूसरा पूर्वी क्षेत्र। दक्षिणी क्षेत्र मे आन्ध्र मसूर, महाराष्ट्र

व गुजरात हैं। आन्ध्र, महाराष्ट्र और मैसूर राज्यों में भारत के कुल तम्बाकू उत्पादन का लगभग 75% क्षेत्र है। पूर्वी क्षेत्र में पश्चिमी बंगाल, बिहार एवं उत्तर प्रदेश प्रमुख हैं।

(1) आन्ध्र राज्य—इस राज्य में गंटूर, कृष्णा, पूर्वी गोदावरी तथा पश्चिमी गोदावरी के जिले तम्बाकू उत्पादन में प्रमुख जिले हैं। इन सबमें भी गंटूर जिला तम्बाकू उत्पादन की दृष्टि से सबसे अधिक महत्त्वशाली है क्योंकि राज्य के तम्बाकू उत्पादन क्षेत्र का लगभग 60 प्रतिशत भाग इसी जिले में स्थित है। इस क्षेत्र की मिट्टी गहरी है और कपास वाली मिट्टी से बनी हुई है। इसमें चूने का अंश काफी है। यहाँ पर अगस्त में बीज बोये जाते हैं अक्टूबर व नवम्बर में पौधों के रोपन का कार्य होता है और जनवरी से मार्च तक काट लिया जाता है। गोदावरी तथा कृष्णा नदियों के डेल्टाओं में वर्जीनिया तम्बाकू का उत्पादन होता है। इस राज्य में आजकल 1 25 लाख टन तम्बाकू का उत्पादन हो रहा है।

(2) तमिलनाडु (मद्रास) राज्य—यहाँ तम्बाकू उत्पादन करने में दक्षिणी तमिलनाडु क्षेत्र ही प्रमुख है। इसमें मदुराई जिला ही तम्बाकू उत्पादन करने वाला प्रमुख जिला है। यहाँ की तम्बाकू उच्च कोटि की वर्जीनिया तम्बाकू है। अतः त्रिचनापल्ली में सिगार बनाने का काम होता है। यहाँ का तम्बाकू चुरूट बनाने के लिए ब्रह्मा को भी निर्यात किया जाता है।

(3) महाराष्ट्र राज्य—इस राज्य के सतारा, बलगाँव, कोल्हापुर और करा जिले तम्बाकू उत्पादक प्रमुख जिले हैं। यहाँ विशेषतः बीड़ी का तम्बाकू उत्पन्न किया जाता है। इस राज्य में आजकल 15 हजार टन तम्बाकू उत्पन्न हो रहा है।

(4) गुजरात राज्य—इस राज्य में बड़ौदा, सागसी, खेरा, नडियाद जिले तम्बाकू उत्पादन के प्रमुख क्षेत्र हैं। यहाँ भी बीड़ी का तम्बाकू उत्पन्न किया जाता है। यहाँ इस समय 83 हजार टन तम्बाकू का वार्षिक उत्पादन हो रहा है।

(5) पश्चिमी बंगाल—इस राज्य में जलपाइगुड़ी व दिनाजपुर तम्बाकू उत्पादन के प्रमुख जिले हैं। इनके अतिरिक्त माल्दा, हुगली व कूचबिहार में भी थोड़ी बहुत तम्बाकू होती है। इस राज्य में लगभग 13 हजार टन वार्षिक तम्बाकू का उत्पादन हो रहा है।

(6) बिहार राज्य—इस राज्य में तम्बाकू उत्पन्न करने वाले तीन प्रमुख जिले हैं—पूर्णिया, दरभंगा और मुजफ्फरनगर। थोड़ी तम्बाकू मुंगेर जिले में भी होती है। इस राज्य में भी लगभग 15 हजार टन वार्षिक तम्बाकू का उत्पादन हो रहा है।

(7) उत्तर प्रदेश—इस राज्य में बनारस, मेरठ, बुलन्दशहर, सहारनपुर प्रमुख जिले हैं। बनारस की पान में खाने की तम्बाकू प्रसिद्ध है। यहाँ आजकल 12 हजार टन वार्षिक तम्बाकू का उत्पादन हो रहा है।

(8) पजाब—इस राज्य में अमृतसर, फिरोजपुर और जालन्धर जिलों म तम्बाकू का उत्पादन होता है।

तम्बाकू उत्पादन क्षेत्र—भारत म तम्बाकू के अन्तगत खेती का क्षेत्र इस प्रकार रहा —

वर्ष	क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)
1950 51	3 5
1955 56	4 1
1960 61	4 0
1965 66	3 7
1967 68	4 2
1968 69	4 1
1969 70	4 3

तम्बाकू उत्पादन मात्रा—भारत म तम्बाकू की मात्रा (लाख टनो मे) इस प्रकार रही —

1950 51	2 6
1955 56	3 0
1960 61	3 0
1965 66	2 9
1967 68	3 7
1968 69	3 5
1969 70	3 3
1973 74	4 5 (लक्ष्य)

भारत म तम्बाकू का प्रति हेक्टेयर औसत उत्पादन लगभग 840 किलो ग्राम है।

सरकारी प्रयत्न—तम्बाकू की उन्नति व विकास के लिए भारत सरकार ने सन् 1945 मे 'भारतीय केन्द्रीय तम्बाकू समिति (Indian Central Tobacco Committee) की स्थापना की। इस समिति न पाँच अनुसधान केन्द्र स्थापित किये है जो इस प्रकार हैं—(1) केन्द्रीय तम्बाकू अनुसन्धान-सस्थान, राजमुन्द्री (आन्ध्र), (2) गन्तूर (3) पूसा (बिहार), (4) दीनहाटा (प० बगाल), (5) हन्सूर (मसूर)। इनके अतिरिक्त केन्द्रीय तम्बाकू अनुसधान सस्थान के अन्तगत य उपकेन्द्र और भी स्थापित किय हैं—बीडी तम्बाकू अनुसन्धान उपकेन्द्र, निपानी (महाराष्ट्र), बीडी तम्बाकू अनुसन्धान योजना, आनन्द (महाराष्ट्र) और हुक्का-तम्बाकू अनुसन्धान उपकेन्द्र, फीरोजपुर (पजाब)।

विदेशी व्यापार—भारत के विदेशी व्यापार म तम्बाकू के निर्यात का भी प्रमुख स्थान है। देश के निर्यात म तम्बाकू को नवाँ स्थान प्राप्त है।

इगलड, आयरलण्ड, आस्ट्रेलिया, जापान इण्डोनेशिया, अदन, बेल्जियम, हॉलैण्ड, डे माक आदि देशो को भारत से तम्बाकू भेजी जाती है। ब्रिटेन हमारा मुख्य ग्राहक है।

परामर्श—भारत म तम्बाकू के क्षेत्रफल म वृद्धि करन की अपेक्षा उसकी किस्म तथा प्रति एकड उपज बढाने क प्रयत्न करने चाहिय। तम्बाकू अनुसधान की देश मे अत्यन्त आवश्यकता है। भारतीय केन्द्रीय तम्बाकू समिति ने इस दिशा म कुछ प्रयत्न किये है और अभी तक चार मुख्य अनुसधान केन्द्रो की स्थापना भी की है। तम्बाकू उद्योग क लिए दो करोड रुपये की पूजी स तम्बाकू उत्पादन की सहायता क लिए एक वित्त निगम की स्थापना की जाय। इसक अतिरिक्त तम्बाकू-कर उसकी किस्म क अनुसार लगाना चाहिए। आजकल तम्बाकू पर त्रुटिपूर्ण तरीके स कर लगाया जाता है क्योंकि रद्दी किस्म की 20 पैसे पौण्ड वाला तम्बाकू पर भी उतना ही कर लगाया जाता है जितना कि 2 रुपये पौण्ड वाली तम्बाकू पर। इसके अतिरिक्त तम्बाकू की हाट-व्यवस्था की ओर भी सरकार को ध्यान देना चाहिए। तम्बाकू क निर्यात को प्रोत्साहन दन क लिए सन 1956 म 'तम्बाकू निर्यात प्रोत्साहन परिषद्' की स्थापना की जा चुकी है।

(3) मसाले (Spices)—

हमारे देश म अनक प्रकार क मसाले उत्पन्न होते है। मसालो की उपज प्राय दक्षिण भारत म ही अधिक होती है क्योंकि वहाँ की जलवायु गर्म है।

(1) काली मिर्च—करल काली मिर्च उत्पन्न करन का प्रमुख क्षेत्र है। विश्व म काली मिर्च क निर्यात करने वाल देशो म भारत का स्थान प्रथम है। भारत क विदेशी व्यापार म काली मिर्च का स्थान भी महत्वपूर्ण है क्योंकि इसम देश को काफी मात्रा म कठोर मुद्रा उपलब्ध होता है। काली मिर्च क निर्यात म भारत को इतना महत्व का स्थान दूसर विश्व-युद्ध क बाद ही मिला। भारत प्रतिवर्ष लगभग 15 हजार टन काली मिर्च निर्यात करता है। सयुक्त राज्य अमरिका भारतीय काली मिर्च का सबस बडा ग्राहक है जो कुल निर्यात का लगभग 60 प्रतिशत मगवाता है। इण्डोनेशिया इस दिशा म भारत का आजकल प्रतिद्वन्द्वी बन रहा है। सयुक्त राज्य अमेरिका के अतिरिक्त थोडा मिर्च यूरोप क देशो को भी भेजी जाती है। भारत सरकार न काली मिर्च क निर्यात को प्रोत्साहन दन क लिय निर्यात प्रोत्साहन समिति की स्थापना की है जो नये बाजारो की तलाश कर रही है।

(2) दाल चीनी—यह एक वृक्ष की छाल होती है। करल, मद्रास और मैसूर म इसक वृक्ष पाय जात हैं। इसक अतिरिक्त कुर्ग और बम्बई भी थोडी दाल चीनी उत्पन्न करत हैं। भारत म प्रतिवर्ष लगभग 1500 टन दाल-चीनी उत्पन्न

की जाती है। राज्यों के अनुसार दाल चीनी उत्पादन के नवीनतम् आँकड़े इस प्रकार हैं —

राज्य	उत्पादन
केरल	600 टन
मसूर	440 टन
कुर्ग	250 टन
तमिलनाडु	200 टन
महाराष्ट्र	5 टन

(3) लाल मिर्च—यह तमिलनाडु महाराष्ट्र, बंगाल, राजस्थान व उत्तर प्रदेश में विशेषत उत्पन्न होती है। इनके अतिरिक्त अन्य स्थानों में भी इसकी उपज होती है।

(4) अन्य—उपरोक्त के अतिरिक्त सोंठ, इलायची, जायफल, जावित्री, तेजपात लौंग, अदरक, हल्दी आदि अनेक मसाले भारत में उत्पन्न होते हैं।

(V) अन्य पदार्थ

फल एवं तरकारियाँ—

भारत में विभिन्न प्रकार की जलवायु होने के कारण विभिन्न प्रकार के फल व तरकारियाँ पैदा किये जाते हैं। डा० बनर्स के अनुसार भारत में 2.5 करोड़ एकड़ भूमि पर फल उत्पन्न किये जाते हैं। हमारे देश में 60 लाख टन से भी कुछ अधिक फल वर्ष भर में उत्पन्न होते हैं।

(1) नारंगी—इसके लिए अधिक पानी गर्म जलवायु और उपजाऊ बलुदार मिट्टी की आवश्यकता होती है। मध्य प्रदेश और असम में नारंगी बहुत होती है। नागपुर की नारंगियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं।

(2) आम—भारत का प्रसिद्ध फल है और भारत का एकाधिकार भी है। सबसे अधिक आम गंगा की घाटी में होता है। राज्यों के अनुसार उत्तर प्रदेश, बिहार दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान महाराष्ट्र व मध्य तमिलनाडु मुख्य आम उत्पादक क्षेत्र हैं विदेशों को भी भारतीय आम निर्यात किये जाने लगे हैं।

(3) केला—महाराष्ट्र, तमिलनाडु बंगाल और असम में केले बहुत होते हैं। केले पकते भी जल्दी हैं और नष्ट भी शीघ्र हो जाते हैं।

इसके अतिरिक्त अमरूद, नीबू लीची आदि फल भी होते हैं। अंगूर व अन्य कई फल विदेशों से भी आयात किये जाते हैं।

आलू—उत्तर प्रदेश से बंगाल तक आलू उत्पादक प्रमुख क्षेत्र है। भारत के आलू उत्पादन क्षेत्र का 75 प्रतिशत भाग इसी क्षेत्र में है। भारत में प्रति एकड़ 225 मन और इंगलैण्ड में 185 मन आलू होते हैं। 95 प्रतिशत आलू जाड़े की फसल में प्राप्त होते हैं और शेष गर्मी में।

इसके अतिरिक्त विभिन्न भागों में अनेक प्रकार की तरकारियाँ उत्पन्न होती हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 Draw a map of India to locate the areas producing tea and coffee

2 Discuss the conditions necessary for growth of tea and coffee Indicate the places where they are grown ?

3 Name five important oil seeds of India describing the areas where they are grown and the uses to which they are put

4 What are the economic effects of export of oil-seeds from India ? To what countries are these oil-seeds exported ?

5 Why is cotton produced in the Deccan but not so much in Bengal what is in the Uttar Pradesh but not much in Madras rice in Bengal but not in Punjab tea and coffee in the Nilgiris but only tea in the Himalayas ?

(R U B A 1955)

6 Discuss the conditions favouring the growth of—
(i) Coffee (ii) Tobacco

7 What are plantation crops of India ? Which of these is the most important in India's foreign trade ? Describe the conditions favourable for its growth and indicate the regions of its production

(R U , B Com 1960)

8 Explain the geographical conditions under which tea and coffee are cultivated in different parts of India What are their prospects in the foreign markets ?

(Raj B Com 1962)

9 State the conditions of growth areas of production and final disposition of any two of the following —
(a) Rice (b) tea (c) oil seeds

(Raj , B Com 1964)

14

भारत मे पशुधन

विषय प्रवेश—

जिस देश म पशुओं का आदर होता है, उस देश म सभ्यता का विकास होता है, भूमि की उवरा शक्ति बन्ती है और बालक स्वस्थ होते हैं। स्वस्थ एव बलिष्ठ पशु देश को समृद्धि प्रदान करते हैं चाहे वह सयुक्त राज्य अमरिका, इगलण्ड और रूस जैसा औद्योगिक देश हो चाहे डेनमाक और न्यूजीलण्ड जसा पशु उद्योग प्रधान देश। इन देशो के निवासी इस बात को भली भाति जानते हैं तभी तो वे पशुओ का इतना अधिक ध्यान रखते हैं। इसके विपरीत हमारे देश म जहां गौमाता की पूजा का ढोग रचा जाता है, पशुओ की दशा वास्तव मे बडी ही शोचनीय है। भारत कृषि प्रधान देश होने के कारण यहा समृद्धि का मुख्य आधार पशुधन है। उसकी उन्नति के बिना खेती मे सुधार की बात सोची भी नहा जा सकती। ग्रामीण क्षेत्रों म पशुओ की उपक्षा करके हम सतुलित कृषि उन्नति के लिए कल्पना भी नही कर सकते। श्री डालिंग ने कहा है, "भारत म पशुओ के बिना खेती पर हल नही चलता गोदाम और काठ रिक्त रहते हैं और अन्न पान का स्वाद आधा रह जाता है क्योकि शाकाहारी देश मे दूध, घी या मक्खन न मिलने स अधिक बुरा क्या हो सकता है।'

भारत मे पशुधन की समस्याएँ

हमारे देश म पशुधन की सबसे बडी विशेषता यह है कि 'यह सख्या मे ससार की सभी देशों मे आगे तथा क्षमता मे सभी देशों के पीछे है'। यही कारण है कि पशु सख्या की दृष्टि स हमारी समृद्धि के द्योतक हैं परन्तु क्षमता की दृष्टि से हमारी दरिद्रता के प्रतीक हैं। ससार के लगभग एक तिहाई (30 प्रतिशत) पशु भारत म पाये जाते हैं। परन्तु यहा के पशुधन की दशा अच्छी नही है वे शक्तिहीन हड्डियो के ढाँचे म उलझे हुए प्रतीत होते हैं। मानव वृद्धि के स्थान पर यदि पशु वृद्धि की जावे तो देश की अनेक समस्याओ का निराकरण हो सकता है। भारतीय पशुधन की अनेक समस्याएँ हैं जिनम से कुछ प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं —



चित्र 23

(1) **चारे की कमी**—भारत म पशुओ के लिए पर्याप्त चारा नही है। अनुमान है कि भारत म चारे की आवश्यकता का लगभग 75 प्रतिशत भाग ही उत्पन्न होता है। हरा चारा पशुओ को स्वस्थ रखने के लिए बहुत आवश्यक है। यह वर्षा ऋतु म तो उपलब्ध हो जाता है किन्तु बाद म कठिनाई होती है। भारत के पश्चिमी भागो म वर्षा कम होने के कारण चारे की समस्या सदैव बनी रहती है। राजस्थान के जैसलमेर जोधपुर आदि क्षेत्रो म सन् 1967 1968 व 1969 म लगातार अकाल पड़ने के कारण, चारा पर्याप्त मात्रा म उपलब्ध न हो सका जिसके कारण हजारो पशुओ की मृत्यु हो गई। डॉ० मामोरिया के अनुसार देश म चारे की कमी के कारण एक तिहाई पशुओ की मृत्यु भूख स होती है।

समाधान—चारे की कमी को इन तरीको से दूर किया जा सकता है—(i) चारे की फसल, जैसे ज्वार अरहर आदि उत्पन्न करने को प्रोत्साहन देना (ii) बेकार व ऊबड़ खाबड़ भूमि म जो कृषि व अन्य कार्यों म काम नही आती है उस पर घास अथवा इसी प्रकार की फसल उगा कर (iii) वर्षा ऋतु के पश्चात् हरी घास के गट्ठर बना कर पृथ्वी के नीचे गड्ढ बनाकर या ऐसे कमरो म जहाँ हवा न जाती हो रख देना चाहिए (iv) तिलहन की उपज बढ़ानी चाहिए ताकि खली आदि अधिक मात्रा म उपलब्ध हो सके (v) चरागाहो म उत्तम किस्म की घास उत्पन्न करना चाहिए और वतमान चरागाहो का उचित प्रबन्ध करना चाहिए।

(2) **पशुओं की खराब नस्ल**—भारत म पशुओ की नस्ल अच्छी नही है। यही कारण है कि देश मे डेयरी उद्योग व ऊन उद्योग का सतोषजनक विकास नही हो पाया है। भारत म अच्छी नस्ल के सांडो की बहुत कमी है। अनुमान है कि देश मे लगभग 10 लाख अच्छे सांडो की आवश्यकता है।

समाधान—सांडो की कमी के लिए कृत्रिम-गर्भाधान केन्द्र स्थापित किए जाने चाहिए। इनम एक सांड 500 स 600 गायो को गर्भवती कर देता है। भेड़ ऊंट आदि की नस्ल को भी इसी प्रकार सुधारा जा सकता है। तीनो पचवर्षीय योजनाओ म अनेक कृत्रिम-गर्भाधान केन्द्र स्थापित किए गये हैं। चौथी योजना म ऐसे केन्द्रो की संख्या और बढ़ाई जावेगी।

(3) **पशुओ के रोग**—भारत मे अनेक पशु विभिन्न रोगो स ग्रसित हैं। उनके पीने का पानी व रहने का स्थान प्रायः गन्दा होता है जिसके कारण वे बीमार हो जाते हैं। इसस पशु मर भी जाया करते है व आगे की नस्ल और खराब होने की सम्भावना हो जाती है।

समाधान—देश म उपयुक्त स्थानो पर पशु चिकित्सालय स्थापित किए जाने चाहिए। इसका दायित्व सरकार पर ही है। कृषको व पशु पालको को समय-समय पर पशु चिकित्सालय सम्बन्धी साधारण प्रशिक्षण देना चाहिए कोई विशेष बीमारी फैलते ही उसे रोकने के लिए रोग निरोधक टीके लगाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

(4) **उचित देख भाल की समस्या**—पशुओ की प्राय उचित देख भाल नही

की जाती । दूध न देने वाले पशु जब दूध देना बन्द कर देते हैं तो उन्हें स्वतन्त्र छोड़ दिया जाता है उनके चारे का प्रबन्ध तक नहीं किया जाता है । योजना आयोग ने ठीक ही कहा है कि जब गाय दूध देना बन्द कर देती है तो उसका राशन बन्द कर दिया जाता है और उसको स्वयं अपना पेट भरने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया जाता है । इसी प्रकार बूढ़े बैल भैंस व ऊँटों को भी छोड़ देते हैं ।

समाधान—ऐसे बेकार पशुओं को गोसदन, अथवा इसी प्रकार की संस्थाओं में भेज देना चाहिए । यदि पशु का स्वामी देख भाल करने में समर्थ है तो उसे स्वयं को ही देख भाल करनी चाहिए ।

(5) किसान की निर्धनता—भारत के पशुओं के पिछड़ेपन का एक प्रमुख कारण कृषक तथा पशु-पालक की निर्धनता भी है । निर्धनता का प्रभाव यह होता है कि वह न तो श्रेष्ठ नस्ल के पशु खरीद सकता है और रोगी होने पर उचित चिकित्सा भी नहीं करा पाता है, तथा पौष्टिक एवं पर्याप्त चारा भी नहीं खिला सकता जिसके कारण उनके पशु कमजोर रहते हैं ।

समाधान—किसानों की निर्धनता दूर करना स्वयं एक जटिल समस्या है अतः सरकार को चाहिए कि वह पशुओं की देख भाल आदि के लिए ऋण प्रदान करने की सुविधाएँ दे ।

(6) अत्यधिक कार्य भार—भारत में पशुओं पर कार्य भार अधिक है और पौष्टिक चारा मिलता नहीं । अतः ऐसे पशुओं का शक्तिहीन होना स्वाभाविक है ।

समाधान—पशुओं पर अनुचित कार्य भार नहीं डालना चाहिए ।

(7) पशुओं के रहने की अस्वास्थ्यकर दशाएँ—भारत में पशु बहुत गन्दी दुर्गन्धयुक्त तथा अस्वास्थ्यकर दशाओं में रखे जाते हैं । मूत्र व गोबर आदि पूरी तरह नहीं उठाये जाते हैं ।

समाधान—पशुओं को स्वच्छ व हवादार स्थानों में रखने की व्यवस्था की जानी चाहिए । समय-समय पर कीटाणुनाशक पदार्थों का इन स्थानों पर प्रयोग करना चाहिए ।

(8) उद्योग की गौण अवस्था—भारत में पशुपालन मुख्य व्यवसाय न होकर कृषि का गौण उद्योग है । पशु या तो कृषक वर्ग के पास हैं अथवा निर्धन व मध्यम वर्ग के पास हैं । कृषक बैल आदि उपयोगी पशुओं की ही पूरी चिन्ता नहीं करता और मध्यम वर्ग अर्थाभाव के कारण उचित चारे आदि की व्यवस्था नहीं कर पाता ।

समाधान—भारत में पशु उद्योग को महत्त्व देना चाहिए । डेनमार्क, हॉलैंड, न्यूजीलैंड आदि देशों की भांति यहां पशु-उद्योग का विकास करना चाहिए ।

(9) धार्मिक कारण—भारत में लगभग 10 प्रतिशत पशु बेकार व अनुत्पादक हैं । इन पशुओं को जीवित रखने के लिए काफी व्यय आता है । ये पशु देश पर तो भार हैं ही, किन्तु नस्ल को भी बिगाड़ते हैं ।

समाधान—अन्य देशों में तो ऐसे बेकार पशुओं का वध कर दिया जाता है

किन्तु भारत में धार्मिक कारणों से अधिकांश जनता इसको सहन नहीं कर सकती अत ऐसे पशुओं को गौसदन जैसी संस्थाओं में अलग ही रखना चाहिए।

(10) पशुपालन शिक्षा का अभाव—पशु पालन का कार्य वे करते हैं जो कि उचित पशु-पालन कला से अपरिचित हैं। भारत में शिक्षित वर्ग अभी पशु पालन उद्योग की ओर आकर्षित नहीं हुआ है।

समाधान—पशु-पालन की शिक्षा देने के लिए पशु विद्यालयों व पशु-महाविद्यालयों की बड़ी संख्या में स्थापना की जानी चाहिए तथा इनमें शिक्षा मँहगी नहीं होनी चाहिए।

(11) प्रचार का अभाव—इस उद्योग का अब तक कोई विशेष प्रचार नहीं हो पाया है। अत लोगों को इसके विषय में जानकारी नहीं है और उत्साह नहीं बढ़ पाता।

समाधान—कृषि तथा पशु पालन विकास की पशु प्रदर्शनियाँ, मेले एवं प्रतियोगिता आदि आयोजित कर के प्रचार करें कि पशु-पालन उद्योग भी एक लाभकारी उद्योग है।

(12) सहकारिता का अभाव—भारत में सहकारिता का अन्य क्षेत्रों में थोड़ा बहुत विकास हुआ है, किन्तु पशु उद्योग की ओर सहकारिता का बिल्कुल ही अभाव है।

समाधान—चारे उत्पादित माल के विक्रय पशुओं का क्रय विक्रय, पशुओं की चिकित्सा सम्बन्धी व्यवस्था सहकारिता के आधार पर की जा सकती है।

सरकार द्वारा पशुओं की दशा सुधारने के लिए किए गये प्रयत्न

अथवा

पंचवर्षीय योजनाओं में पशुधन का विकास

भारत सरकार ने भी देश के लिए पशुधन के महत्त्व को समझा है और राष्ट्रीय समृद्धि के लिए बनाई गई पंचवर्षीय योजनाओं में पशुधन विकास के लिए प्रावधान किए हैं। पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत पशुधन विकास के लिए निम्नलिखित राशि व्यय करने का प्रावधान किया —

योजना	करोड़ रुपये
प्रथम पंचवर्षीय योजना	8
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	67
तृतीय पंचवर्षीय योजना	120
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	91

सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं में पशुओं की दशा सुधारने के निम्नलिखित प्रयत्न किए हैं —

6 (1) आधार ग्राम योजना (Key Village Scheme)—इस योजना को प्रथम पचवर्षीय योजना काल म आरम्भ किया गया था। इसके अन्तगत अनेक काय श्रम सम्मिलित हैं जिनम प्रमुख य हैं —नस्ल सुधार केन्द्रो की स्थापना, पशु रोगा की रोकथाम के कायक्रम उचित चारे की व्यवस्था आदि। इसके लिए कुछ गावो क क्षेत्र का एक खण्ड म शामिल कर लिया गया। वष 1968 69 म भारत म लगभग 490 आधार ग्राम खण्ड स्थापित हो चुक थ। चौथी पचवर्षीय योजना काल म 60 आधार ग्राम खण्ड स्थापित किय जान का लक्ष्य रखा है।

(2) गौशाला विकास योजना—इस योजना के अ तगत सरकार निजी क्षेत्र की गौशालाओ म स कुछ का चुन लेती है और फिर उनका सुधार एव विकास करती है एव आर्थिक सहायता भी करती है। कमजोर रोगी एव बेकार पशुओ को गोसदन म भेज दिया जाता है। द्वितीय योजना काल म 246 तथा तृतीय योजना काल में 168 गौशालाओ को विकास क लिए चुना गया था। इस प्रकार लगभग 424 गौशालाओ का विकास हो रहा है।

(3) गौसदन योजना—इसका उद्देश्य बेकार, कमजोर, रोगी तथा वृद्ध पशुओ को अच्छे पशुओ से अलग रखना है, अत ऐसे पशुओ को यहा भेज दिया जाता है जहा उनकी देखभाल की जाती है एव चारे की व्यवस्था की जाती है। प्रथम योजना काल म 25 द्वितीय म 34 और तृतीय योजना काल म 2 गौसदन स्थापित किय गय। इस प्रकार तीनो योजनाओ म देश म 61 गौसदन स्थापित किए गय।

(4) चारा विकास योजना—इस योजना क अन्तगत गाँवो म चारे उपजाने के तरीका का प्रदशन करने वाले फार्मो की स्थापना चारे की पौध बाटने की व्यवस्था पशुओ की खूराक स सम्बन्धित समस्याओ पर अनुसधान किया जाता है। यह योजना प्रत्येक राज्य म चालू की जा चुकी है किन्तु कोई उत्साहप्रद परिणाम नही निकले। चतुथ योजना काल म पाँच नये चारा बैंक (Fodder Banks) 25 मिश्रित फाम इकाइया, 50 बीज उत्पादक फाम स्थापित किये जायेंगे और 25 बीड विकसित किए जावेंग।

(5) पशु रोगो की रोकथाम—तीनो पचवर्षीय योजनाओ मे राज्यो के विभिन्न भागो में पशु चिकित्सालय स्थापित किय गय हैं जिनमे प्रशिक्षित डाक्टर काय करत हैं। चौथी योजना काल म अनेक पशु चिकित्सालय स्थापित किए जावेंगे और प्रमुख जिला मुख्यालयो में रोगो की जाँच क लिए प्रयोगशालाएँ स्थापित की जावेंगी। इन चिकित्सालयो मे कृत्रिम गर्भाधान की भी व्यवस्था है। तृतीय योजना काल के अन्त तक देश म लगभग 8 हजार पशु चिकित्सालय थे। चौथी योजना म 200 नये पशु चिकित्सालय खोले जावेंगे।

(6) आवारा पशुओं को पकडने की योजना—पकडे गय आवारा पशुओ म काम के योग्य पशुओ को गर्भाधान केन्द्रो म भेज दिया जाता है और बेकार पशु गौसदन म भेज दिये जाते हैं। यह योजना पजाब हरियाना, उत्तर प्रदेश मध्यप्रदेश,

दिल्ली और जम्मू तथा कश्मीर में लागू है। चौथी योजना में अन्य राज्यों में भी इस योजना का विस्तार किया जायेगा।

(7) खानाबदोश पशुपालक योजना—राजस्थान, उत्तर प्रदेश, गुजरात तथा आन्ध्र राज्यों में खानाबदोश पशु-पालकों को स्थायी रूप से बसाने के उद्देश्य से यह योजना बनाई गई है। इस योजना के अन्तर्गत खानाबदोश पशुपालकों के पशुओं को चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएँ देना, बंजर पड़ी हुई भूमि पर उनको बसाना आदि कार्य किये जाते हैं।

(8) बध्याकरण योजना—इस योजना के अन्तर्गत प्रजनन के अयोग्य पशुओं और घटिया नस्ल के पशुओं की बधिया कर देते हैं। राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, बंगाल, त्रिपुरा, मैसूर आदि के राज्यों में यह कार्यक्रम योजना काल में आरम्भ कर दिया गया है।

(9) पशु-पालने की योजना—इस योजना के अन्तर्गत सरकार अच्छी नस्ल की गायों के बछड़े खरीद लेती है और सहकारी नस्ल सुधार संस्थाओं आदि को निःशुल्क दे देती है। इसी प्रकार सुअर-पालन के अनेक केन्द्र स्थापित किए गये हैं। मुर्गी पालन विकास के लिए क्षेत्रीय मुर्गी पालन फार्मों की स्थापना की गई है। विश्व खाद्य प्रोग्राम के अन्तर्गत मुर्गियों के भोजन के लिए लगभग 20 हजार टन मक्का सहायता के रूप में प्राप्त की है। भेड़ विकास के लिए भेड़ तथा ऊन अनुसंधान केन्द्र, भेड़ प्रजनन केन्द्र आदि स्थापित किए गये हैं। केन्द्रीय भेड़ तथा अनुसंधान केन्द्र राजस्थान में स्थापित किया गया है। चतुर्थ योजना काल में 8 नये तथा बड़े भेड़ प्रजनन फार्म स्थापित किये जायेंगे।

(10) शिक्षा एवं अनुसंधान—भारत में पशुपालन तथा चिकित्सा सम्बन्धी प्रशिक्षण देने के लिए अनेक कॉलेज स्थापित किये गये हैं। बम्बई, मद्रास, पटना, इज्जतनगर (उत्तर प्रदेश) एवं मथुरा में पोस्ट ग्रेजुएट शिक्षा की भी व्यवस्था है। तीसरी योजना में प्रत्येक राज्य में एक-एक पशु अनुसंधान केन्द्र स्थापित करने की योजना थी किन्तु केवल प्रारम्भिक कार्यवाही की जा सकी।

भारत में पशुधन

भारत विशाल देश होने के कारण, यहाँ विभिन्न प्रकार की जलवायु और भू रचना है, जिसके कारण यहाँ अनेक प्रकार के पशु दृष्टिगोचर होते हैं। हमारे देश में आर्थिक महत्व के अग्रांकित प्रमुख पशु मिलते हैं —

भारत का पशुधन

(संख्या करोड़ में)

पशु	1956	1961
गाय-बैल	15.9	17.6
भैंस	4.5	5.1
भेड़	3.9	4.0
बकरियाँ	5.5	6.1
घोड़े एवं टट्टू	0.1	0.1
ऊँट, गधे, सुअर आदि	0.7	[illegible]

(1) गाय और बल[1]—सख्या की दृष्टि से विश्व के अन्य देशों की अपेक्षा सबस अधिक गाय व बैल भारत म ही पाये जाते हैं। सन् 1966 की पशु गणना के अनुसार भारत म लगभग 17 6 करोड गाय-बल हैं। इनका प्रादेशिक वितरण अस-मान है। अधिकाश गाय व बल उत्तरी भारत म पाय जाते हैं। भारत क नक्शे मे यदि देहरादून दार्जिलिंग कटक और अहमदाबाद नगरो को रेखाओ से मिला दें तो ज्ञात होगा कि इस आयताकार क्षेत्र म ही देश के अधिकाश गाय व बल पाय जाते



चित्र 24

हैं। राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पजाब, पूर्वी महाराष्ट्र व गुजरात म अधिकतर गाय व बल पाये जाते हैं। अकेले उत्तर प्रदेश म समस्त भारत के लगभग 15 प्रतिशत गाय

1 पशुओ सम्ब धा आँकडे Indian Livestock Statistics 1966 से लिय गय है। गवा केन परम आवजन न —ऋग्वद।
(अर्थात् हम गाय क द्वार म अधिक ज्ञान प्राप्त करें)।

व बैल पाये जाते हैं। दक्षिण में मद्रास के अतिरिक्त गोदावरी व कृष्णा नदी के डेल्टाओं में भी गाय व बैल विशेषत पाये जाते है।

अनुमान किया जाता है कि भारत मे बोई गई भूमि के प्रति सौ एकड पर सौ गाय बैल पाये जाते हैं जबकि हॉलैंड में यह संख्या 40 और मिस्र में 25 है। अत स्पष्ट है कि भारत में बोई हुई एक एकड भूमि पर गाय व बैल का निर्वाह होता है जबकि हालैण्ड व मिस्र में क्रमश 2½ और 4 एकड भूमि उपलब्ध है।

हमारे देश मे गाय व बैलो की संख्या यद्यपि काफी है, किन्तु इनकी दशा अच्छी नही है, अधिकांश कुपकाय एव हड्डी पसली के अवशेष मात्र है। भारत में इन पशुओं को उचित मात्रा में चारा भी उपलब्ध नही हो पाता है जबकि कुछ दशा में इन्हे पर्याप्त मात्रा मे अनाज खिलाया जाता है। भारतीय गाय बहुत ही कम दूध देती है व बैलो की क्षमता कम है। दूध के विषय में विवेचन इसी अध्याय में 'भारत में दुग्ध व्यवसाय' शीर्षक के अन्तर्गत किया गया है। स्थूल रूप से प्रथम पंचवर्षीय योजना आयोग के प्रतिवेदन के अनुसार हमारे देश के कुल दूध उत्पादन का लगभग 42 प्रतिशत दूध गायों से ही प्राप्त होता है। भारतीय गाय औसत रूप से 1½ किलो दूध प्रतिदिन देती है जो कि अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है।

(2) भैंस—विश्व की भैंसों में लगभग आधी भैंसें भारत में ही है। सन् 1966 की पशु गणना के अनुसार भारत मे 5.28 करोड भैंसें हैं। भैंस को प्राय दूध की दृष्टि से ही पालते हैं क्योंकि गाय की अपेक्षा भैंस अधिक दूध देती हैं। भैंसों की संख्या कम होने व दूध अधिक देने के कारण इनका मूल्य गाय की अपेक्षा अधिक होता है।

(3) बकरियाँ—सन् 1966 की पशु गणना के अनुसार भारत मे लगभग 6.4 करोड बकरियाँ हैं। भारत में बकरियाँ भी बहुत पाली जाती हैं व अनेक व्यक्ति इनको चराने में लगे हुए हैं। बकरियों के लिए कम स्थान व कम चारे की आवश्यकता होती है अत नगरों में भी अनेक व्यक्ति इन्हे पालते हैं। भारत में कुल दूध उत्पादन का 2 प्रतिशत से भी कम दूध बकरियों से प्राप्त होता है। इसका दूध हल्का होने के कारण बच्चे व प्राय बीमार मनुष्य ही उपयोग करते हैं।

इसके अतिरिक्त बकरियों को बकरे पैदा करने के लिए ही विशेषत पाला जाता है, क्योंकि अधिकतर बकरे का माँस ही प्रयोग किया जाता है।

(4) भेड़ें—1966 की पशु गणना के अनुसार भारत में लगभग 4.2 करोड भेडें हैं। भारत में ये मुख्यत दो पट्टियों में पाई जाती हैं। पहली पट्टी दक्षिणी कश्मीर से आरम्भ होकर काठियावाड और गुजरात तक विस्तृत है और दूसरी पट्टी बम्बई, दक्षिणी और मध्य हैदराबाद पूर्वी मैसूर और दक्षिणी मद्रास में। यहाँ यह उल्लेख्य है कि भारत में अधिक वर्षा वाले भागों में भेडें नहीं हैं। अधिकांश भेडें 50 से 100 सेन्टीमीटर वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में पाई जाती हैं। उत्तर प्रदेश बिहार [illegible]

नहा। भारत की समस्त भेडा का लगभग 30 प्रतिशत भाग अकेले राजस्थान मे ही मिलता है।

भेडें ऊन व माँस के लिए पाली जाती हैं। उत्तरी भारत की भेडों का ऊन दक्षिणी भारत की अपेक्षा अच्छा होता है।

(5) मुर्गिया—सन् 1961 की पशु गणना के अनुसार भारत मे लगभग 11 20 करोड मुर्गियाँ हैं। मुर्गियाँ विशेषत अडा प्राप्ति के लिए पाली जाती हैं। इसके अतिरिक्त मुर्गे का माँस भी खाया जाता है, भारत म अडा का स्थानीय महत्व ही है। यातायात के साधन सुलभ न होने के कारण इनका व्यापार बहुत ही कम है।

(6) ऊँट—ऊँट रेगिस्तानी भागा म अत्यन्त उपयोगी पशु होता है राजस्थान व पजाब के शुष्क भागा म ऊँट विशेषत पाये जाते हैं। ऊँट सवारी करने हल चलाने, पानी खीचने तथा बोझा ढोने के काम म विशेषत आते हैं। भारत म इनकी सख्या 6 लाख से अधिक है।

(7) घोडे—सन 1956 की तुलना म 1966 म घोडा की सख्या घटी है। सन 1956 मे घोडा की सख्या $14\frac{3}{4}$ लाख थी, जो सन 1966 मे $11\frac{1}{2}$ लाख रह गई। इनका प्रयोग भारत मे अधिकतर ताँगा व सवारी के लिए होता है।

पशुओ मे उपलब्ध वस्तुएँ

पशुओ से हमको अनेक प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। उनम म चमडा खालें, ऊन हड्डिया, गोबर सीग एव दूध मुख्य हैं।

चमडा और खालें—भारत म पशुओ की सख्या बहुत अधिक होने के कारण मरने वाले पशुओ की सख्या भी अधिक है। इसके अतिरिक्त प्रतिदिन हजारो पशु माँस के लिए भी काटे जाते हैं जिनकी खालें भी प्राप्त होती हैं। ऐसा अनुमान किया गया है कि भारत म प्रतिवर्ष गाय और बैल की लगभग दो करोड खालें, $2\frac{1}{2}$ करोड खालें बकरे की, 1½ करोड खालें भेडों की उपलब्ध होती हैं।

वैसे तो चमडे का काम प्रत्येक गाँव व नगर म होता है परन्तु बडे पैमाने पर कानपुर आगरा, मद्रास व बम्बई म विशेषत है। कानपुर म चमडे के अन्य कारखानो के अतिरिक्त एक कारखाना सरकार का भी है। महाराष्ट्र व मद्रास राज्य म भी चमडे के कारखाने हैं जिनम चमडा कमाया जाता है और अनेक प्रकार की वस्तुएँ निर्मित की जाती हैं। भारत के निर्यात व्यापार म खालो व चमडे का महत्वपूर्ण स्थान है। अधिकाश चमडा मद्रास के बन्दरगाह से निर्यात किया जाता है।

हड्डियाँ एव सींग—भारत म प्रतिवर्ष मरे हुए जानवरो की लगभग 6 लाख टन हड्डियाँ होती हैं जिनम से अनुमान है कि केवल 25 प्रतिशत भाग ही एकत्रित किया जाता है। देश म हड्डियाँ पीसने के थोडे मे कारखाने भी स्थापित हो गये हैं। हड्डियाँ व उनका चूरा विदेशो को लगभग 1 करोड रुपये का वार्षिक निर्यात किया जाता है। हड्डियो म अनेक वस्तुएँ बनाई जाती हैं। सीग भी काम के होते हैं। बटन, कघियाँ आदि अनेक वस्तुएँ सींगो से बनाई जाती हैं।

ऊन—भारत में ऊन विशेषत भेडो से प्राप्त की जाती है। भारतीय भेडो की ऊन बहुत बढिया किस्म की नही होती है। उत्तर भारत की भेडो की ऊन दक्षिण भारत की ऊन से अपेक्षाकृत अच्छी होती है क्योकि दक्षिण भारत की ऊन प्राय छोटी, रूखी और भूरे रंग की होती है। भारत में प्रति भेड से औसत रूप से एक किलो ऊन प्राप्त होती है, जबकि आस्ट्रेलिया की भेडो से लगभग 4 किलो प्रति भेड ऊन प्राप्त होती है। अकेले राजस्थान राज्य से देश के कुल ऊन उत्पादन का लगभग 30 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है जो कि अधिकांश अन्य राज्यो व विदेशो में निर्यात कर दी जाती है।

भारत में प्रतिवर्ष लगभग $5\frac{1}{2}$ करोड पौंड ऊन प्राप्त की जाती है जिसमे से लगभग 60 प्रतिशत भाग विदेशो को विशेषत इङ्गलैण्ड और संयुक्त राज्य अमरीका को निर्यात कर दी जाती है। पूर्वी पंजाब राजस्थान व दक्षिण भारत—प्रत्येक मे ऊन की किस्म व भेडो की नस्ल में उन्नति के लिए केन्द्र स्थापित किये गये हैं।

गोबर—भारत में प्रतिवर्ष लगभग 80 करोड टन गोबर प्राप्त होता है जिसमें से आधे से अधिक तो ईंधन के रूप में जला दिया जाता है। गोबर का प्रयोग सस्ती व अच्छी खाद के रूप में होता है।

भारत में दुग्ध व्यवसाय

दूध की उपलब्धि—

भारत में अन्य देशो की तुलना मे अधिक गायें हैं। दूध का उत्पादन भी संयुक्त राज्य अमरीका के अतिरिक्त भारत में ही सबसे अधिक होता है किन्तु फिर भी हमारे देश में दुग्ध व्यवसाय बहुत ही पिछडा हुई दशा में है। भारत में दूध की उपलब्धि निम्न तालिका में बतलायी गयी है —

भारत में दूध का उत्पादन

वर्ष	उत्पादन (करोड मीट्रिक टन)
1950 51	1 7
1955 56	1 9
1960 61	2 1
1965 66	2 0
1968 69	2 1
1969 70	2 2
1973 74	2 5 (लक्ष्य)

भारत में औसत गाय, अन्य देशो की गायो की अपेक्षा बहुत कम दूध देती है। इसी कारण भारतीय गायो को चाय के प्याले की गाय (Tea cup Cow) भी कहा जाता है।

भारत सरकार के प्रकाशन के अनुसार हमारे देश में दूध के कुल उत्पादन का लगभग 42 प्रतिशत भाग गायो से प्राप्त होता है 54 प्रतिशत भैंसो से 2 प्रतिशत भाग बकरियो से।

भारत में आजकल प्रति व्यक्ति दूध का दैनिक औसत उपभोग लगभग 5 औंस है जो बहुत ही कम है। ठीक स्वास्थ्य के लिए प्रति व्यक्ति को कम से कम प्रतिदिन 15 20 औंस दूध आवश्यक है। भारत की तुलना में संयुक्त राज्य अमरीका में प्रति

दिन प्रति व्यक्ति औसत उपभोग लगभग सात गुना कनाडा आस्ट्रेलिया एवं न्यूजीलण्ड में इस गुना से भी अधिक है।

भारत में दूध का उपयोग इस प्रकार होता है—लगभग 50 प्रतिशत घी बनाने में 30 प्रतिशत पीने में और शेष मिठाई एवं अन्य कामों में आ जाता है। आजकल भारत में वनस्पति घी अधिक बनने के कारण दूध से घी बनाने के व्यवसाय को ठेस पहुँची है। क्योंकि नगरों में प्राय शुद्ध घी में वनस्पति घी मिलाकर रखते हैं और इस प्रकार शुद्ध घी प्राय उपलब्ध नहीं हो पाता है।

भारत में दुग्ध-शालाएँ (Dairies)—

भारत में दुग्ध व्यवसाय सगठित स्थिति में नहीं है। पचवर्षीय योजनाओं में विभिन्न डयरी-परियोजनाओं के दो प्रमुख उद्देश्य थे—उत्पादकों को लाभकारी मूल्य उपलब्ध कराना और उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर दूध की नियमित पूर्ति कराना।

भारत में इस समय 95 दुग्धशालाएँ[1] (Dairy Farms) कार्य कर रही हैं जिनका विश्लेषण इस प्रकार है —

53 तरल-दुग्ध फार्म
34 पायलेट दुग्धशालाएँ
5 दुग्ध चूर्ण कारखाने
3 मक्खन उत्पादक कारखाने

95 योग

उपरोक्त के अतिरिक्त 37 अन्य दुग्ध योजनाएँ और 6 दुग्ध उत्पादन फार्म योजनाएँ पूरी होने वाली हैं।

बम्बई से उत्तर की ओर आनन्द नामक स्थान पर एक बहुत बड़ा 'डेरी' है जो 'आनन्द डेरी' के नाम से पुकारी जाती है। बम्बई नगर को यहाँ से लगभग पाँच हजार गैलन दूध प्रतिदिन मिलता है। भारत में दुग्ध चूर्ण बनाने के 4 कारखाने हैं जो आनन्द (बम्बई) अमृतसर, महसाना (गुजरात) और राजकोट (गुजरात) में स्थित हैं। ये चारों कारखाने औसत रूप से प्रतिदिन 17 टन दुग्ध चूर्ण और बच्चों का दुग्ध आहार उत्पन्न करते हैं। अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) बरौनी (बिहार) और जूनागढ़ (गुजरात) के मक्खन उत्पादक तीन कारखानों के अतिरिक्त आनन्द कलकत्ता दिल्ली अमृतसर, महसाना और राजकोट के मक्खन सयन्त्र औसत रूप से प्रतिदिन 15 टन घी और मक्खन तयार करते हैं। मिरज (महाराष्ट्र) और विजयवाडा (आन्ध्र प्रदेश) में दुग्ध पदार्थ बनाने के कारखाने पूरे हो चुके हैं। मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश) में सहकारिता के आधार पर बच्चों का दुग्ध आहार बनाने का कारखाना चालू हो गया है।

---

1 India 1970, p 254

यूरोस्माव नार्डिक प्रोग्राम म अ नगत तीन दुग्ध चूर्ण सय त्र लगाय जा रहे हैं—दो पजाब म और एक हरियाणा म। न्यूजीलण्ड सरकार ने, कोलम्बो योजना प्रोग्राम क अन्तगत एक लाख पोण्ड की दुग्ध डरा मिलीगुडी (प० बगाल) म स्थापित करने के लिए सहायता देना स्वीकार कर लिया है। इनके अतिरिक्त यूनीसफ (UNICEF) ने कलकत्ता दुग्ध योजना के लिए 1 40 लाख डॉलर और विजयवाडा दुग्ध चूर्ण कारखान के लिए 1 75 लाख डालर की सहायता देना स्वीकार कर लिया है।

भारत मे डेरी उद्योग की कठिनाइयाँ—

दुग्ध-व्यवसाय भारत का प्राचीन उद्योग है किन्तु यह घरेलू उद्योग क रूप म ही प्रचलित रहा। विश्व म सबसे अधिक गायें व भैंसें भारत म हैं और सयुक्त राज्य अमरिका क अतिरिक्त सबसे अधिक दूध भी भारत म ही होता है फिर भी यहाँ डरी उद्योग विकसित नही हो पाया है। भारत म डरी उद्योग क सम्मुख अनक कठिनाइयाँ हैं जिनक कारण यह उद्योग यहाँ उन्नति नही कर पाया है। प्रमुख कठिनाइयाँ निम्नलिखित हैं —

(1) **कम दूध**—भारतीय गायें व भस अन्य देशा की तुलना म कम दूध देती हैं, अत डेयरी फाम म विनियोग किए गय धन क अनुपात म लाभ नही होता इसलिए देश के उद्योगपति इस ओर आकर्षित नही हुए।

(2) **जनता की उदासीनता**—भारत म अधिकाश व्यक्ति दूध पीना घी खाना और मावा खाना पसन्द करते हैं डरी द्वारा उत्पादित दुग्ध चूर्ण स तयार किया हुआ दूध या मक्खन पीना व खाना पसन्द नही करते।

(3) **मँहगे पदार्थ**—डेरी के बने हुए पदार्थ महगे प्रतीत होते हैं अत जन साधारण म डेरी पदार्थ अधिक लोकप्रिय नहा हो पाये हैं।

(4) **पशुओ की खराब नस्ल**—भारत म गाय और भसो की नस्ल अच्छी नहा होने के कारण डेरी फाम अधिक विकसित नही हो सक।

(5) **चारे की कमी**—भारत म चारे का उत्पादन व्यावसायिक पमाने पर नही होने के कारण, चारे की समस्या बनी रहती है। हरा चारा तो बरसात के दिनो म ही उपलब्ध होता है। राजस्थान के जसलमर, बाडमर, जोधपुर, बीकानेर जिलो म अच्छी नस्ल की गायें है किन्तु अकाल के कारण हजारो पशु मर गय।

(6) **आर्थिक कठिनाइयाँ**—आर्थिक कठिनाइयाँ भी भारत क डरी विकास मे रुकावट बनी रहती हैं। धन की कमी के कारण आवश्यक उपकरण नही खरीदा जा सकता है।

(7) **शीत भण्डारों की कमी**—भारत म शीत भण्डारो की कमी है, उपकरण मँहगे है अत इनका अभाव भी उद्योग क विकास म रुकावट है।

(8) **उपकरणो की कमी**—हमारे देश म डेयरी उद्योग सम्बन्धी उपकरणो का उत्पादन बहुत ही कम है, विदेशो से मगवाने म अनेक कठिनाइयाँ हैं।

(9) पशुओं के रोगों की उपचार-व्यवस्था का अभाव—भारत में अभी तक पशु रोग चिकित्सा विज्ञान का सन्तोषजनक विकास नहीं हो पाया है।

(10) अनुसन्धान एवं शिक्षा की कमी—देश में डेरी उद्योग में सम्बन्धित अनुसन्धान व शिक्षा की व्यवस्था की कमी है।

उपरोक्त कारणों से भारत में डेरी-उद्योग का विकास नहीं हो पाया है।

दुग्ध व्यवसाय की उन्नति के उपाय—

स्पष्ट है कि भारत में दुग्ध व्यवसाय अत्यन्त ही पिछड़ी दशा में है, अतः इसकी उन्नति के लिए निम्नलिखित परामर्श लाभदायक सिद्ध होंगे —

(1) चारे की व्यवस्था—भारत में पशुओं के लिए पर्याप्त चारा नहीं है। भारत में कृषि-योग्य भूमि में से बहुत सा भाग बेकार पड़ा है चालू परती में भूमि बेकार पड़ी है। इन पर आवश्यक चारा पैदा करना चाहिए। भारत में चारे की आवश्यकता का 75 प्रतिशत भाग ही उत्पन्न होता है। हरा चारा पशुओं को स्वस्थ रखने के लिए बहुत आवश्यक है। यह वर्षा ऋतु में तो उपलब्ध हो जाता है लेकिन बाद में कठिनाई होती है। अतः यदि हरे चारे को पृथ्वी के नीचे गड्ढा अथवा बन्द मकानों में इस प्रकार रखा जाय कि वहाँ हवा प्रवेश न करे तो वह भी लाभप्रद होता है। कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि यदि चारे का समुचित प्रबन्ध हो, तो गाय के दूध में 30 प्रतिशत तक वृद्धि हो सकती है।

(2) नस्ल सुधारना—इसके लिए यह आवश्यक है कि अच्छे किस्म के साँड हों। भारत में 10 लाख अच्छे साँडों की आवश्यकता होती है। सरकार प्रतिवर्ष 750 साँड तैयार करती है। इसके अतिरिक्त जनता भी कुछ अच्छे साँड तैयार करती है, जिनकी संख्या कम है।

अतः साँडों की कमी के लिए कृत्रिम प्रजनन साधन (Artificial Insemination) केन्द्र खोलने चाहिए। इनमें एक साँड 500 से 600 गायों को गर्भवती कर देता है। पंचवर्षीय योजनाओं में अनेक कृत्रिम प्रजनन केन्द्र स्थापित किये गये हैं। इसी प्रकार भैंसों की नस्ल भी सुधारी जा सकती है।

(3) रोगों की रोक थाम—कृषक की कार्यशील पूँजी का बड़ा अंश पशुओं के रूप में ही होता है। अतः यदि कृषक का कोई पशु मर जाता है तो कृषक को गहरी आर्थिक हानि होती है। पशुओं की बीमारी तथा उनके उपचारों की दशा में भारतीय पशु चिकित्सा संस्था इज्जतनगर (बरेली के निकट) ने अनेक खोजें की हैं। किन्तु कृषकों को इनके विषय में अवगत नहीं कराया जा सका है। इसके अतिरिक्त कृषक अपनी रूढ़िवादिता के कारण अस्पतालों में अपने पशुओं को ले जाना पसन्द नहीं करता। अस्पतालों की भी संख्या कम है और अनेक गाँवों से दूर भी हैं। अतः अधिक अस्पताल खोलने चाहिए और डॉक्टरों को गाँवों में नियमित रूप से दौरा करना चाहिए ताकि गाँव वाले अधिक से अधिक उपयोग कर सकें। इसके अतिरिक्त पशुओं को बीमारी से बचाने के लिये साफ जगह में बाँधना चाहिए

साफ पानी एव उचित चारा देना चाहिए। पचवर्षीय योजनाओ म पशुओ के अस्पतालो एव औषधि स्थानो की सख्या म वृद्धि की जान की योजना है। पहल देश मे दो हजार चिकित्सालय व औषधि-स्थान थे।

(4) सहकारी समितियों की स्थापना—डनमार्क म सहकारिता के आधार पर यह व्यवसाय बहुत उन्नति कर गया है। भारतवष म भी सहकारी सस्थाए स्थापित करना आवश्यक है। ये समितियाँ लोगो को पशुओ के लिए चारा व अन्य पदाथ तथा अच्छी किस्म के पशु खरीदने को ऋण द और दूध को एकत्रित करने वितरण का काय करें। ये समितियाँ दूध को एकत्रित करके अपनी शाखाओ या प्रतिनिधियो के द्वारा नगरो म दूध बचें। इसके अतिरिक्त मक्खन व घी आदि का वितरण भी लाभप्रद होगा।

(5) दुग्ध मण्डलो की स्थापना—विभिन्न राज्यो म अनिवाय रूप स दुग्ध मण्डल स्थापित किय जान चाहिए जिनम सभी वग के प्रतिनिधि हो। इनका मुख्य काय इस व्यवसाय की उन्नति के प्रयत्न करना हो।

(6) व्यावसायिक शिक्षा एव अनुसन्धान—भारत म दुग्ध व्यवसाय सम्ब शिक्षा देने वाली सस्थाओ का पूण अभाव ही है। इस समय देश म 9 ऐसे शि केन्द्र (Veterinary Colleges) है जिनम 275 शिक्षार्थी शिक्षा पा सकते हैं। इस अतिरिक्त इज्जतनगर (उत्तर प्रदेश म बरेली के निकट) एक अनुसन्धानशाला भी है आगरा म भी एक दुग्धशाला है। बगलोर की दुग्धशाला का विस्तार हो रहा है।

करनाल मे राष्ट्रीय दुग्ध गवेषणशाला स्थापित की जा चुकी है। यह सस्थ दुग्धशाला उद्योग के विभिन्न पहलुओ पर गवेषण काय कर रही है और दुग्धशाला क लिए आवश्यक कमचारियो को प्रशिक्षण देती है। इस सस्था की सात शाखाय हैं जिनमे दुग्धशाला स सम्बन्धित प्राय सभी विषयो पर शिक्षा की व्यवस्था की गई है। इस सस्था पर लगभग दो करोड रुपये व्यय हुए हैं। इस शाला के अतिरिक्त पूर्वी, दक्षिणी और पश्चिमी क्षत्रो के लिए तीन प्रादेशिक केन्द्र है।

तृतीय पचवर्षीय योजना मे—1 लाख स अधिक जनसख्या वाले अथवा नय औद्योगिक 55 नगरो म दूध सप्लाई की योजनाएँ आरम्भ की जान की योजना थी। देहातो मे दूध का उपयोग करने के लिए 8 क्रीम बनान के कारखाने 4 दूध का चूरा बनान के कारखाने और 2 पनीर बनान के कारखान स्थापित किये जाने की योजना थी। तृतीय योजना म दूध विकास के लिए 36 करोड रुपये रख गये थ।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 Name the important animal products found in India How far are they utilised ?

2 Discuss the present position of Dairy farming in India Suggest measures to improve the industry

3 भारत के पशुधन को सुधारने के लिए उपयुक्त सुझाव दीजिये। इस दिशा म भारत सरकार न अब तक क्या किया है ?

(T D C, 1968)

15

भारत मे मछलियाँ

विषय प्रवेश—

मछली पुष्टिकारक खाद्य-पदार्थ है। यह विटमिन प्रोटीन तथा खनिज-क्षार से भरपूर है। इस खाद्य-पदार्थ को प्राप्त करने के लिए खेती की तरह असुविधाएँ नही उठानी पडती क्योंकि इसके लिए न तो भूमि जोतने की आवश्यकता होती है और न वर्षा अथवा सिंचाई की समस्याएँ उत्पन्न होनी हैं और न फसल के पकने की प्रतीक्षा करनी पडती है। मछलियाँ, यदि सावधानी से पकडी जावें तो भोजन का अटूट भण्डार हो जाय क्योंकि कुछ प्रकार की मछलियाँ तो एक साथ ही करोडो अण्डे देती है।

मछलियो का आर्थिक महत्त्व

वर्तमान युग मे मछलियो का आर्थिक महत्त्व बढ रहा है। मछलियो का निम्नलिखित आर्थिक महत्त्व है :—

(1) **बेरोजगारी मे कमी**—मछली व्यवसाय के विकसित होने से देश की बेरोजगारी की समस्या का कुछ अंश तक निवारण हो जाता है, क्योंकि अनेक व्यक्ति मछली पकडने उनके विक्रय तथा मछली पकडने के उपकरणो के निर्माण में लग जाते हैं। जापान मे 20 लाख व्यक्ति (कुल जनसंख्या का 20% से भी अधिक) कनाडा मे 65 हजार व्यक्ति और इंगलैण्ड मे 25 हजार व्यक्ति इस धन्धे मे अपनी जीविका उपार्जन करते हैं।

(2) **खाद**—मछलियों मे खनिज-क्षार और प्रोटीन आदि अनेक महत्त्वशील पदार्थ होते हैं। मछलियो की खाद यद्यपि मँहगी होती है किन्तु अत्यन्त श्रेष्ठ प्रकार की खाद होती है। भारत मे मछलियो की कुल पकड का लगभग 10 प्रतिशत भाग खाद के काम मे लिया जाता है।

(3) **तेल की प्राप्ति**—मछली का तेल अनेक प्रकार से काम मे लाया जाता है। साबुन बनाने चमडा रंगने इस्पात बनाने मशीनो को चिकना करने आदि अनेक कार्यों मे इसका उपयोग होता है। मछली के जिगर (Liver) का तेल अनेक औषधियो मे काम आता है। भारत मे शार्क मछली का तेल निकालने के तीन कारखाने हैं जिनकी वार्षिक उत्पादन-क्षमता 70 हजार गैलन है।

(4) **अन्य पदार्थों की प्राप्ति**—मछली से अनेक अन्य पदार्थ प्राप्त होते हैं। सरेश, दाँत, खाल, खाद के ऊपर के गिने आदि काम में लाये जाते हैं।

(5) **खाद्य पदार्थ**—मछली खाद्य पदार्थ के रूप में काम में लाई जाती है, अतः अन्य खाद्य पदार्थों की बचत होती है, इंगलैण्ड, जापान, नार्वे, फ्रांस, इटली व अन्य यूरोपीय देशों, अमेरिका आदि में मनुष्य के भोजन में मछलियाँ महत्त्वपूर्ण भाग होती हैं। भारत में बंगाल व मद्रास में मछलियों का विशेष रूप से उपयोग होता है। पूर्वकालीन केन्द्रीय कृषि मन्त्री के शब्दों में, हम और भी अधिक भोजन प्राप्ति के लिए जल साधनों अर्थात् समुद्र की ओर ध्यान देना है। मार्च 1967 में हिन्द महासागर पर हुई गोष्ठी में डॉ० पी० एन० वाडिया ने कहा कि भारत के समुद्रों में मछली पकड़ने के उद्योग को विकसित करना अत्यन्त आवश्यक है। यदि ऐसा हो गया तो भारत की कठिन खाद्य-समस्या बहुत कुछ हल हो जायगी।

(6) **पशुओं को**—यद्यपि भारत में तो नहीं किन्तु विदेशों में गाय व भैंसों को मछलियाँ खिलाई जाती हैं। इससे दूध की मात्रा में वृद्धि होती है। मुर्गियों को मछली खिलाने से अधिक मात्रा में अधिक पौष्टिक अण्डे प्राप्त होते हैं।

(7) **विदेशी मुद्रा का अर्जन**—अधिक माँग वाले क्षेत्रों में मछलियों का (डिब्बों में बन्द कर अथवा सुखाकर) निर्यात किया जाता है और इस प्रकार विदेशी मुद्रा का अर्जन किया जाता है। नार्वे से निर्यात होने वाली वस्तुओं के कुल मूल्य का लगभग $\frac{1}{3}$ भाग मछलियों का ही होता है।

भारत में मछलियाँ

भारत के पास यद्यपि 3.75 लाख वर्ग Kms के लगभग मछली पकड़ने का क्षेत्र है परन्तु इसका केवल थोड़ा-सा अंश ही (5 प्रतिशत के लगभग) उपयोग में लाते हैं। अन्य देशों की तुलना में, भारत इस दिशा में बहुत ही पिछड़ा देश है। इस उद्योग के इतने पिछड़े हुए होने के प्रमुख कारण यहाँ की धार्मिक भावनाएँ तथा शासकीय उदासीनता हैं। अनुमान है कि हमारे देश के 40 प्रतिशत से भी अधिक मनुष्य मछली का उपयोग करते हैं। परन्तु प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है, जैसा कि तालिका से स्पष्ट है।

प्रति व्यक्ति वार्षिक खपत (पौण्डों में)

जापान	90
ब्रह्मा	70
संयुक्त राज्य अमरीका	40
लंका	16
भारत	4

भारत में मछली उत्पादन

भारत में प्रतिवर्ष 16 लाख टन मछली का उत्पादन होता है जिसमें से 70% समुद्र की मछलियाँ होती हैं और 30 प्रतिशत ताजा पानी की मछलियाँ। भारत को पोषक तत्त्व की दृष्टि से प्रति वर्ष 40 लाख टन मछलियाँ चाहिए। पिछले वर्षों में भारत में मछली का उत्पादन इस प्रकार रहा है :—

भारत में मछली उत्पादन[1]

वर्ष	उत्पादन (लाख टन)
1955	8 3
1961	9 5
1966	13 6
1967	14 2
1968	15 2
1969	16 0
1974	19 7 (लक्ष्य)

मछली पकड़ने के क्षेत्र

अध्ययन की सुविधा के लिए मछली का विवरण उनके पकड़े जाने के स्थानों के आधार पर करेंगे। हमारे देश में मछलियाँ दो क्षेत्रों में पकड़ी जाती हैं —(1) देश के आन्तरिक भागों में—जिनमें नदी, झील, तालाब मुख्य हैं। (2) सामुद्रिक तटीय भागों में।

भारत में मछली उत्पादन[2] (लाख टनों में)

वर्ष	सामुद्रिक	आन्तरिक	कुल उत्पादन
1950	5 80	2 37	8 17
1951	5 33	2 18	7 52
1955	5 96	2 43	8 39
1956	7 18	2 94	10 12
1960	8 79	2 81	11 60
1961	6 84	2 77	9 61
1965	8 24	5 07	13 31
1966	8 90	4 77	13 67
1967	8 63	5 37	14 00
1968	9 04	6 22	15 26

(1) आन्तरिक भागों की मछलियाँ—

देश के आन्तरिक भागों में मछलियाँ निम्नलिखित क्षेत्रों से प्राप्त की जाती हैं —

(1) **नदियों की मछलियाँ**—भारत में अनेक नदियाँ हैं। ये नदियाँ मछली पकड़ने के क्षेत्र हैं। मछलियों में एक विशेषता होती है कि वे बाढ़ के पानी में खूब बढ़ती हैं। गंगा व उसकी सहायक नदियों में (उत्तर प्रदेश, बिहार व बंगाल में), नर्मदा, ताप्ती व गोदावरी नदियों से (मध्य प्रदेश में), कृष्णा, कावेरी (दक्षिण में),

---

1 India 1970, p 254

2 *Source* Directorate of Economics and Statistics, Govt of India Ministry of Food Agriculture Community Development and Co-operation Indian Agriculture in Brief (Tenth ed), 1970 p 86

महानदी (उड़ीसा) और ब्रह्मपुत्र नदी से (असम में) विशेषत मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

(2) झीलों की मछलियाँ—नदियों के मार्ग परिवर्तन, पहाड़ी खड्डों में पानी के एकत्रित होने तथा रेगिस्तानी क्षेत्र में कहीं-कहीं पानी एकत्रित होने से झीलों का अस्तित्व हो जाता है और इनमें से मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। बंगाल, बिहार और (असम) राज्यों में अनेकों झीलें है, जिनमें मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

(3) तालाब—अनेक स्थानों में जहाँ तालाब होते हैं मछलियाँ प्राप्त की जाती हैं। उत्तर भारत में और विशेषत दक्षिण भारत में तालाबों से भी मछलियों को पकड़ते है।

(4) नहरें—उत्तर प्रदेश पंजाब व हरियाना में नहरों में भी मछलियाँ पकड़ते हैं।

(5) बाँध—देश में अनेक बाँधों का निर्माण हो रहा है। उनमें भी काफी संख्या में मछलियों की प्राप्ति की सम्भावना है।

(6) डेल्टा प्रदेश—नदियों के डेल्टाओं में मछलियाँ अण्डे देती हैं, अत वहाँ भी मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

(7) दलदली भाग—कलकत्ते के निकट दलदली भागों में भी बहुत थोड़ी मात्रा में मछलियाँ पाई जाती हैं।

(8) धान के खेत—कदाचित आश्चर्य हो किन्तु यह सत्य है कि केरल तमिलनाडु, आन्ध्र बिहार और पश्चिमी बंगाल में धान के अनेक खेतों में भी मछलियाँ पाली जाती है।

योजना आयोग ने अपने प्रतिवेदन में बताया है कि आन्तरिक भागों की मछलियों के उत्पादन-सम्बन्धी आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं। फिर भी अनुमान किया जाता है कि कुल मछली के उत्पादन का लगभग 30 प्रतिशत भाग मीठे पानी की मछलियाँ होती है। इन मछलियों का स्थानीय महत्त्व अधिक होता है और उत्पादन के केन्द्रों में ही प्राय सभी मछलियाँ खप जाती हैं।

(2) समुद्री मछलियाँ—

भारत का समुद्री किनारा 6,050 Kms लम्बा है जिसमें 3.75 लाख वर्ग Kms के लगभग मछली पकड़ने का क्षेत्र है परन्तु भारतीय मछुए समुद्र में दूर जाकर मछलियाँ नहीं पकड़ते हैं। समुद्री किनारे के निकट 100 फदम से गहरे समुद्र का क्षेत्र लगभग 3,65,000 वर्ग Kms है। परन्तु इसमें से केवल थोड़े ही क्षेत्र में मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

भारतीय मछुए तट से 10 से 15 Kms से अधिक दूर जाकर मछलियाँ प्राय नहीं पकड़ते हैं। इसके दो प्रमुख कारण हैं। प्रथम, तो भारतीय मछुओं के पास मछली पकड़ने के आधुनिक यन्त्रादि नहीं हैं तथा जहाज भी नहीं हैं जिनकी सहायता

से वे दूर तक जा सकें। दूसरे, मछलियों को रखने के लिए शीत भण्डारों का अभाव है। भारत की जलवायु गर्म होने के कारण मछलियाँ शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं।

हैरिंग पोमफ्रेट मुलट मकरल ज्यू मार्टिन भारतीय सामन, हिल्सा आदि मुख्य पकड़ी जाने वाली मछलियाँ हैं।

मछलियों का प्रादेशिक वितरण

मछलियों का भारत में प्रादेशिक वितरण अत्यन्त असमान है जिसका मुख्य कारण वर्षा की असमानता व प्रदेशों की समुद्र से दूरी में विषमता है। भारत में मछलियों का प्रादेशिक वितरण इस प्रकार है —

(1) पश्चिमी बंगाल—देश के विभाजन के फलस्वरूप बंगाल के मछली उत्पादन के कुल क्षेत्र का लगभग 80 प्रतिशत भाग पूर्वी बंगाल (पूर्वी पाकिस्तान) में चला गया है। बंगाल में मछलियों की खपत बहुत अधिक है। तटीय भागों और पोखरों आदि में मछलियों के उत्पादन में वृद्धि के प्रयत्न किये जा रहे हैं। देश में पकड़ी जाने वाली मछलियों में से लगभग 30% यहाँ पकड़ी जाती हैं।

बिहार और असम में भी खूब मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। पश्चिमी बंगाल, बिहार और असम राज्य देश के कुल मीठे पानी की मछलियों के कुल उत्पादन का लगभग 70 प्रतिशत भाग देते हैं।

(2) तमिलनाडु—तमिलनाडु में लगभग 2 815 Kms सामुद्रिक तट और लगभग 65 हजार Kms उथला समुद्र है। यह राज्य सामुद्रिक मछलियों का सबसे बड़ा उत्पादक है। यहाँ केवल 4 7 प्रतिशत मीठे पानी की मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। पश्चिमी समुद्री तट पर कालीकट और बंगलोर मछली पकड़ने के मुख्य क्षेत्र हैं। पूर्वी तट पर पश्चिमी तट की अपेक्षा अधिक मछलियाँ पकड़ी जाती है। विशाखापट्टम मछलीपट्टम, नेलोर मद्रास व पाण्डिचेरी गोपालपुर गंजाम, नागापट्टम आदि पूर्वी तट पर मछली पकड़ने के मुख्य केन्द्र हैं।

मीठे पानी की मछलियाँ गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों व तालाबों और बाँधों में पकड़ी जाती हैं।

(3) महाराष्ट्र—यहाँ अधिकतर सामुद्रिक मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। यहाँ मछली पकड़ने की कुछ सुविधाएँ हैं। तट अधिक लम्बा, कटा हुआ और कम गहरा है। वर्ष में लगभग सात महीने मौसम शान्त रहता है। यहाँ छोटे छोटे स्टीमर भी मछली पकड़ने के लिए काम में लाये जाते हैं।

(4) गुजरात—यहाँ मछली पकड़ने के ग्यारह मछली-बन्दरगाह हैं। योजना में इस व्यवसाय की उन्नति के लिए भी स्थान रखा गया है।

(5) केरल—यहाँ इस व्यवसाय के विकास का भविष्य उज्ज्वल है। यहाँ के तटीय भाग पर काफी मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। यहाँ पर मछली का तेल निकालने के कारखाने भी हैं।

(6) पूर्वी पंजाब—यहाँ नदियों व नहरों से मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

भाकरा बाँध पूरा हो जाने पर पजाब म मछलियों का उत्पादन और अधिक बढ जायेगा।

(7) उत्तर प्रदेश—नदियाँ नहरें बाँध व झील मछलियाँ प्राप्त करने के स्रोत हैं। वैज्ञानिक ढङ्ग पर मछलिया को पकडने की आवश्यकता है।

(8) अन्य राज्य—भारत के अन्य राज्यो म भी इस व्यवसाय के विकास के लिए पर्याप्त क्षेत्र है। भोपाल म नवदा पार्वती और बनवा नदियाँ मछलियों के स्रोत है। बिहार के पूर्णिया जिले म मछली उद्योग के विकास की सम्भावनाए हैं। मसूर व हैदराबाद के तालाबो म मछलियाँ अधिक हैं। राजस्थान म चम्बल व जखाई योजनाओ के पूरा हो जान पर मछली उत्पादन म वृद्धि अवश्य होगी।

मछलियों का व्यापार

भारत म मछलियो का वर्देशिक व्यापार महत्वपूर्ण नही है। देश के आन्तरिक भागो की मछलियाँ तो उत्पादन के क्षेत्रो म खप जाती हैं। समुद्री मछलियाँ भी देश के आन्तरिक भागो मे नमक अथवा शराब आदि लगाकर और सुखाकर भेज दी जाती हैं। अधिकांश समुद्री मछलिया तट पर ही खप जाती हैं।

विदेशो म भारत की मछली और मछलीज य पदार्थों की काफी माग है। सूखी मछली के सबसे बड ग्राहक लका व ब्रह्मा हैं जो कुल मछली निर्यात का क्रमश लगभग 83 प्रतिशत व 16 प्रतिशत भाग आयात करते हैं। कुछ दिनो स अमरिका म भी बफ म लगी झींगा मछली की माग बढी है। तिरुवनन्तपुरम कोचीन कोजी कोडे, मगलौर और बम्बई म झींगा मछली बफ म जमाई जाती है। आजकल बफ म जमी झींगा मछली वातानुकूलित जहाजो से कनाडा और अमरिका भेजी जाती है। पाकिस्तान भी भारतीय मछलिया का ग्राहक है। भारत स प्रतिवष लगभग 25 करोड रुपयो की मछलियाँ विदेशो को निर्यात की जाती हैं। सन 1968 69 म लगभग 24 70 करोड रुपय की मछलियाँ व मछली का तेल आदि बाहर भेजा गया।

भारत म विदेशो स दूसरी किस्म की डिब्बो म बन्द मछलियाँ तथा उत्तम कोटि का मछली का तेल मगवाया जाता है।

मछली व्यवसाय के पिछडे होने के कारण

यद्यपि हमारे देश मे मछलियो की कमी नहीं है परन्तु फिर भी यहा यह व्यवसाय पिछडी हुई दशा म है। हमारे यहाँ प्रतिवष लगभग 14 लाख टन मछलियाँ पकडी जाती हैं। यदि अन्य देशो से हम तुलना करें तो ज्ञात होगा कि भारत म प्रति व्यक्ति वार्षिक मछलियाँ औसत रूप से बहुत कम पकडी जाती हैं।

अनुमान किया जाता है कि ससार की कुल मछलियो की पकड का लगभग 25 प्रतिशत भाग जापान मे पकडा जाता है तथा वहाँ की जनसख्या का लगभग 20 प्रतिशत इसी उद्योग म लगा हुआ है। भारत म लगभग 5 लाख मछुए हैं जो कुल जनसख्या का 0 15 प्रतिशत स भी कम है। हमारे देश म इस उद्योग के अविकसित होने के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं —

(1) धार्मिक कारण—हमारे देश मे मछली का उद्योग धार्मिक कारणो से भी कम होता है। ब्राह्मण, जन व वश्य इसका प्रयोग नहीं करते हैं। धार्मिक रुकावटो के कारण मछलिया को मारना अच्छा नही समझते।

(2) महँगी—अनेक मामाहारी व्यक्ति मछलिया की उपलब्धता के अभाव मे प्रयोग नहा कर पाते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक भागा म मछलिया महँगी होन क कारण भी लोग इनका उपयोग कम करते हैं।

(3) ट्रालर की कमी—भारत म मछलियाँ समुद्र म भी नावा द्वारा ही पकडी जाती हैं। अनुमानत भारत म लगभग 70 हजार नाव इस व्यवसाय म लगी हुई हैं। नावो द्वारा अधिक परिश्रम स कम मछलिया पकडी जाती हैं। ट्रालर जहाज के पीछे जाल लगा होन के कारण कम परिश्रम म अधिक मछलिया पकडी जाती हैं। भारत म औसत रूप स प्रति मछुआ वष भर म $2\frac{1}{2}$ हजार पौण्ड मछलियाँ पकड पाता है जबकि सयुक्त राज्य अमरीका म ट्रालर की सहायता II प्रति मछुआ वष म 80 हजार पौण्ड अर्थात 32 गुनी मछलिया पकडता ह।

(4) शीत भण्डारो का अभाव—भारत म गर्मी अधिक पडन के कारण मछलियाँ शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं शीत भण्डारा की कमी के कारण भी यह उद्योग पिछडा हुआ रहा।

(5) यातायात की असुविधाएँ—यातायात की पर्याप्त सुविधाएँ न हान के कारण मछलिया का स्थानीय महत्त्व ही रहा है। आन्तरिक अथवा वदेशिक व्यापार म इस कारण महत्त्व नही हान पाया और यह उद्योग पिछडा हुआ ही रहा।

(6) समावेष्टन की कठिनाई—मछलिया क लिए समावेष्टन (Packing) सम्बन्धी सुविधाएँ उपलब्ध नहा हैं। इन्हे डिब्बा म रखकर भेजना महँगा पडना है, क्योंकि य डिब्बे काफी महँगे पडत हैं।

(7) दूषित जल—अनक तालावा व पोखरा का पानी दूषित कर दिया जाता है अत वहाँ मछलिया का विकास नही हो पाता। पश्चिमी बगाल के अनेक तालावा व पोखरो म जूट धोया जाता है अत पानी मछलिया के रहन योग्य नही रह पाता है।

(8) नवजात मछलियों को पकडना—भारत के मछुए छोटी व नवजात मछलिया को पकड लेते हैं जिसके कारण मछलियो की उत्पत्ति म कमी हो जाती है।

(9) मछलियों का अभाव—कुछ क्षेत्रा म बहुत अधिक मछलिया पकडी जाती हैं जिसके कारण मछलियो की उन क्षेत्रा म कमी होती जा रही है। तमिल नाडु व बगाल क अनेक तालावा व नदिया म रेत भरती जा रही है। अत इस कारण भी वहाँ मछलिया की कमी होती जा रही है।

(10) सहायक व्यवसाय—अनेक मछुए मछलिया का केवल सहायक

व्यवसाय के रूप में पकड़ने का काम करते हैं। अत व इस व्यवसाय में मनोरंजनक रुचि नहीं लेते हैं।

(11) सीमित क्षेत्र—अभी तक मल्लाह समुद्र के किनारे 10 15 किलो मीटर के दायरे तक ही मछलियाँ पकड़ते हैं। अत दूर गहरे जल की मत्स्यभूमि अविकसित पड़ी हुई है।

(12) बिखरे हुए क्षेत्र—यहाँ की मत्स्यभूमि शीतोष्ण कटिबन्ध की मत्स्य भूमि की भाँति एक ही स्थान पर स्थित न होकर समुद्र में दूर दूर बिखरी हुई है। अत एक स्थान की मछली मार लेने के पश्चात् दूसरे स्थान तक जाने में असुविधा होती है।

(13) नदियों की विशेषताएं—भारत की अधिकांश नदियाँ बरसाती हैं अत बाढ़ आने पर उनका पानी दूर दूर तक फैल जाता है परन्तु वर्षा का पानी सूख जाने पर किनारों के गड्ढों में जो मछलियाँ रह जाती हैं, व पुन पानी में नहीं आ पाती अत या तो जमीन में सड़ जाती हैं अथवा धूप से मर जाती हैं।

(14) सरकारी उदासीनता—भारत सरकार कुछ वर्षों पूर्व तक इस व्यव साय की ओर उदासीन रही और अब भी यदि विदेशों से तुलना की जाय तो ज्ञात होगा कि सरकार पर्याप्त प्रयत्नशील नहीं है। जापान सरकार और भारत सरकार की यदि इस दिशा में तुलना की जाय तो महान् अन्तर दृष्टिगोचर होगा।

(15) अवैज्ञानिक तरीके—कुशल विशेषज्ञ तथा आधुनिक यन्त्रों की कमी के कारण भी यह उद्योग विकसित नहीं हो सका। लोग अभी तक पुरानी नावों तथा जालों का ही प्रयोग करते हैं, जिसके कारण अधिक श्रम व समय में कम मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। मछुवे छोटी व नवजात मछलियों को भी पकड़ लेते हैं, जिसके कारण मछलियों में कमी हो जाने की आशंका रहती है।

(16) संगठन का अभाव—मछुओं के आर्थिक तथा सामाजिक कारणों से पिछड़े होने के कारण भी यह उद्योग विकसित नहीं हो पाया। इनका कोई ऐसा संगठन नहीं है जो इनके विकास की ओर ध्यान दे।

(17) शिक्षा की कमी—देश में मछली व उसके पदार्थों के उपयोगों के विषय में अनेक लोग अनभिज्ञ होने के कारण इसके विकास में रुकावट पड़ी।

(18) विक्रय दोष—मछलियों के विक्रय करने के दोषपूर्ण तरीके भी इस उद्योग के विकास में बाधक हुए हैं। ये सहकारिता के आधार पर विक्रय नहीं करते हैं।

उन्नति के लिए परामर्श

हम ऊपर देख आये हैं कि भारत में मछली व्यवसाय अविकसित दशा में है। यदि इस व्यवसाय के दोषों का निवारण कर लिया जाय तो यह व्यवसाय उन्नति कर सकेगा। नीचे इस व्यवसाय की उन्नति के लिए कुछ परामर्श दिए गये हैं —

(1) वैज्ञानिक तरीकों का प्रयोग—भारत के मछली व्यवसाय में काम में

आने वाले प्राचीन यन्त्रो एव तरीको का परित्याग करना आवश्यक है। नये यन्त्रो तथा वैज्ञानिक तरीको से मछलियाँ पकडनी चाहिए।

(2) **शीत भण्डारों की व्यवस्था**—मछली पकडे जाने वाले केन्द्रो म शीत भण्डार की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि पकडी हुई मछलियाँ जल्दी खराब न हो और सुरक्षित रह सकें।

(3) **सम्बधित उद्योग का विकास**—मछली सम्बन्धी अन्य उद्योगो, जसे तल निकालना, खाद बनाना आदि का प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है।

(4) **गहरे सागर से मछलियाँ पकडना**—आजकल समुद्री तट से 10 15 Kms म अधिक दूरी पर जाकर मछलियाँ नही पकडते हैं तथा 100 फदम तक गहरे समुद्र की मछलियाँ भी पूरी तरह से नही पकडते हैं। अधिक दूर व अधिक गहरे समुद्रो की मछलियाँ भी पकडनी चाहिय।

(5) **मछली का अधिक प्रयोग**—मनुष्यो म मछली के अधिक प्रयोग करने की आदत डालने के सम्बन्ध म आन्दोलन आरम्भ करना चाहिए। इसका प्रभाव यह होगा कि मछली की माँग म वृद्धि होगी।

(6) **विक्रय प्रणाली मे सुधार**—मछलियो की विक्रय-सम्बन्धी व्यवस्था त्रुटिपूण है, अत इनके क्रय विक्रय के लिए सहकारी समितियो की स्थापना आवश्यक है।

(7) **उचित शिक्षा**—मछुओ को इस दिशा मे उचित शिक्षा दी जाय ताकि वे इस काय म दक्ष हो जावें।

(8) **प्रदशनी**—सरकार को चाहिए कि समय समय पर अधिक मछली पकडने की स्पर्धा प्रदशनियाँ आयोजित करे। इसस मछली व्यवसाय में उन्नति अवश्य ही होगी।

(9) **विशषज्ञ**—अन्य देशो के मछलीमार विशषज्ञ भारत में आमन्त्रित किये जाने चाहिये ताकि वे नय वज्ञानिक तरीको को बतला सकें। सरकार को यह भी चाहिये कि भारतवासियो को विदेशो में भी इससे सम्बन्धित शिक्षा प्राप्त करन के लिये भेजे।

(10) **सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन**—मछुओ को शिक्षित करने, उनकी सामाजिक कुरीतियो को दूर करने और उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने से भी इस उद्योग की उन्नति हो सकेगी।

(11) **सगठन**—मछुओ को अपना सगठन बनाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि वे अपनी असुविधाओ और कठिनाइयो को दूर कर सकें।

सरकार और मछली व्यवस्था

हमारी राष्ट्रीय सरकार मछली व्यवस्था की उन्नति की ओर उदासीन हो ऐसी बात नही है।

(1) **पचवर्षीय योजनाएँ**—सरकार न देश के मछली व्यवसाय को उन्नत

करने के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना में 5 5 करोड रुपये की व्यवस्था की थी और द्वितीय पंचवर्षीय योजना म 12 करोड रुपये की व्यवस्था की गई। सरकार के इस प्रकार के सहयोग से यह व्यवसाय अवश्य विकसित होगा। तृतीय योजना में 29 करोड रुपये की व्यवस्था की गई थी जिससे उत्पादन में 4 लाख टन और निर्यात मे दो गुनी वृद्धि होने का लक्ष्य था। चौथी योजना म 83 5 करोड रुपये व्यय करने का प्रावधान है।

(2) अन्य देशो से समझौते—भारत नार्वे के मध्य मार्च 1967 म एक समझौता हुआ है जिसके अनुसार नार्वे भारत को 1 अप्रल 1967 से 5 वर्षों में लगभग 4 करोड रुपये की सहायता, अनुदान और ऋण के रूप म देगा। भारत अपनी ओर स इन कार्यक्रमो म 4 80 करोड रुपया खर्च करेगा। दोनो सहकारी देशो की प्रार्थना पर राष्ट्र-संघ भी उचित सहायता देगा।

भारत नार्वे मछली पालन विकास योजना त्रिपक्षीय समझौते के अन्तर्गत केरल म प्रारम्भ हुई थी। इस पर भारत नार्वे तथा संयुक्त राष्ट्र संघ ने हस्ताक्षर किए थे।

(3) यन्त्रीकरण—सरकार मछुओ को इस बात के लिये प्रोत्साहित कर रही है कि वे यान्त्रिक नावो का प्रयोग करें। इसके लिए केन्द्रीय और राज्य सरकारें मछुओ को इंजन खरीदने के लिए मूल्य का 50 प्रतिशत देती हैं। बम्बई के उत्तरी क्षेत्र म अनेक नावो में मशीनें लगा दी गई हैं। इस समय भारत के तट के आस पास लगभग 7 860 मोटर चालित नावो से मछलियाँ पकडी जा रही हैं जबकि द्वितीय योजना के अन्त मे 2,100 मोटर चालित नाव थी[1]। बम्बई में देशी नावो में इंजन लगाये जा रहे है। मद्रास, केरल व आन्ध्र म नई तरह की नावें बनाई जा रही हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना म 850 नावो म मशीन लगाई गई हैं। तीसरी योजना मे 4,000 नावो म मशीनें लगाने का प्रस्ताव था जिसम से 1,600 नावो म ही यन्त्र लगाये जा सके।

(4) अनुसंधानशालाएँ—भारत सरकार मछली उद्योग की उन्नति की ओर ध्यान दे रही है। उन्नति के नये साधनो की खोज के लिए सरकार ने मछली अनुसंधानशालाएँ भी स्थापित की हैं। एक केन्द्रीय मछली अनुसंधानशाला की स्थापना बम्बई म कर दी गई है। इसकी तीन शाखाएं स्थापित की गई हैं, जो कलकत्ता, कटक तथा मद्रास म हैं। कटक म मीठे पानी की मछलियों की ओर मद्रास म समुद्री मछलियो की अनुसंधानशाला है। इनम मछलियो की पैदावार बढाने, अच्छी नस्ल की मछलियो के पालन एव अन्य उपयोग-सम्बन्धी अनुसंधान किये जाते हैं।

(5) प्रशिक्षण केन्द्र—भारत सरकार एव महाराष्ट्र सरकार ने मिलकर सतपाटी (बम्बई) म एक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना की है। इस प्रशिक्षण केन्द्र की

---

[1] *Fourth Five Year Plan*, p 212

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संघ और अमरीका के औद्योगिक सहयोग मिशन ने यन्त्रादि की सहायता दी है। यह दक्षिणी पूर्वी एशिया में अपने ढंग का पहला केन्द्र है। कोलम्बो योजना के अन्तर्गत जापान भी भारतीयों को आधुनिक तरीकों व साधनों में प्रशिक्षण दे रहा है।

इसके अतिरिक्त आगरा, हैदराबाद, तमिलनाडु राज्य (तूतीकोरन) में और केरल राज्य (कोचीन) में और प्रशिक्षण-केन्द्र खोले गये हैं जिनमें प्रतिवर्ष व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षण काल 6 6 महीने का है। कलकत्ता में नदियों झीलों व तालाबों में अधिक मछलियाँ उत्पन्न करना सिखाया जाता है। केन्द्रीय मछली शिक्षा संस्था की स्थापना बम्बई में और केन्द्रीय मछली सहकारी संस्था की स्थापना एर्नाकुलम (केरल) में कर दी गई है।

(6) नवीन क्षेत्रों की खोज—मछली के अनेक विशाल अज्ञात भण्डार हैं उनका पता लगाकर उनका विदोहन करना चाहिए।

(7) यातायात की सुविधाएँ—सरकार को मछली के स्थानान्तरण के लिए रेलवे व अन्य साधनों द्वारा विशेष सुविधाएँ देनी चाहिए।

(8) शीत भण्डार—बम्बई केरल मंगलौर, मद्रास व कलकत्ता में मछलियों को सुरक्षित रखने के लिए शीत भण्डार स्थापित किये जा चुके हैं। विशाखापट्नम, तूतीकोरन व जामनगर में एसे शीत भण्डार स्थापित किये जा रहे हैं।

(9) मछलियों के बन्दरगाह (Fishing Harbour)—मछलियाँ उतारने के लिए मंगलौर (मैसूर राज्य) में एक घाट का निर्माण हो चुका है। गुजरात में वेरावल (Veraval) बन्दरगाह इस काम के लिए बन कर पूरा हो चुका है। मछलियों के लिए बन्दरगाह इन स्थानों पर बनाये जा रहे हैं—नागापट्टनम (मद्रास) काकीनाडा (आंध्र) विझिनजम (केरल) और पोरबन्दर (गुजरात)।

(10) केन्द्रीय मछली निगम की स्थापना—केन्द्रीय सरकार ने एक 'केन्द्रीय मछली निगम' (Central Fisheries Corporation) की स्थापना की है जिसने मछली एकत्रित करने व वितरण केन्द्रों का जाल सा बिछा दिया है। अभी यह कलकत्ता में मछलियों की पूर्ति करता है। इसने दामोदर घाटी क्षेत्र को मछलियों के लिए लीज पर लिया है।

(11) अन्य—भारत सरकार ने अधिक मछली पकड़ो आन्दोलन आरम्भ किया है और अगले पाँच वर्षों में 12 करोड़ रुपये व्यय करके 50% उत्पादन में वृद्धि का लक्ष्य स्थिर किया है। अब भारत प्रतिवर्ष औसत रूप से 14 लाख टन मछलियों का उत्पादन करता है। अण्डमान द्वीपसमूह के निकटवर्ती क्षेत्रों में भी मछलियाँ पकड़ी जा रही हैं। नमक यदि खराब होता है तो मछलियाँ सड़ जाती हैं अतः भारत सरकार ने तमिलनाडु केरल तथा बम्बई में नमक की शुद्धि करना आरम्भ कर दिया है।

समुद्र से देश के आन्तरिक भागों में मछलियाँ पहुँचाने के लिए 20 शीत भण्डार-युक्त (Refrigerated) रेलवे वैगन प्राप्त कर लिये गये हैं। मद्रास और कालीकट (केरल) के मध्य शीत भण्डार युक्त रेलवे वैगन चल रहे हैं। ऐसे तीन और वैगन चलाने की योजना है। इसके अतिरिक्त वायुयान द्वारा भी मछलियों को देश के आन्तरिक भागों में पहुँचाने के लिये प्रोत्साहन दिया जा रहा है। मलाया इण्डोनेशिया व थाईलैण्ड में भारतीयों के लिए बाजार खोजने के लिये व्यापारिक प्रतिनिधि मण्डल गये हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 How do you account for the backwardness of Fishing Industry in India ? Give suggestions to improve this industry

2 Name the important areas in India where fishes are available

3 Why the Fisheries of India are little developed ? Is our Government doing something to improve this industry ?

16
भारत की खनिज-सम्पत्ति

विषय प्रवेश—

खनिज देश के सम्बल हैं। देश का औद्योगिक और आर्थिक विकास, खनिजों की विभिन्नता, बाहुल्यता और उत्तमता पर निर्भर करता है। शान्ति और युद्ध दोनों ही अवस्थाओं में, खनिज पदार्थ आधुनिक उद्योगों के आधार का काम करते हैं। औद्योगिक विकास में ही देश की सम्पत्ति और राष्ट्रीय शक्ति निहित है। खनिज सम्पत्ति प्रकृति की ओर से एक भेंट (Gift) है, परन्तु प्रकृतिदत्त अन्य पदार्थों और खनिज पदार्थों में विशेष अन्तर है। अनेक प्राकृतिक वस्तुएँ (जैसे वायु, जल, सूर्य की किरणें आदि) असीमित होती हैं तथा अनेक प्राकृतिक वस्तुएँ (जैसे भूमि तथा वन आदि) सीमित होते हैं। वन दुबारा लगाये जा सकते हैं भूमि की खोई हुई उवर्रा शक्ति खाद द्वारा पुनः प्राप्त की जा सकती है किन्तु खनिज पदार्थों के उत्पादन और उपयोग से इनका अस्तित्व सदा के लिए मिट जाता है। इस प्रकार खनिज-सम्पत्ति अन्य प्राकृतिक भेंटों की अपेक्षा एक अत्यन्त दुर्लभ और सदा के लिए नष्ट हो जाने वाली भेंट है।

भारत खनिज-सम्पदा में धनी है

भारत की वसुन्धरा में इतनी खनिज सम्पत्ति छिपी हुई है कि यदि उसका उचित दोहन किया जाय तो देश पुनः विश्व में समृद्धशाली व धनी हो सकता है। भारत खनिज सम्पत्ति का बड़ा भण्डार है। हमारे देश में प्रायः सभी प्रकार के खनिज पदार्थ उपलब्ध हैं। इस सम्बन्ध में एक बात और उल्लेखनीय है कि हमारे देश में खनिज पदार्थों का समान वितरण नहीं है। भारत में ही नहीं वरन् विश्व में बिहार व छोटानागपुर का पठार खनिज पदार्थों की दृष्टि से बहुत धनी माने जाते हैं इसी कारण इन्हें 'खनिज पदार्थों का आश्चर्य' भी कहते हैं। इन भागों में भारत के लगभग 40 प्रतिशत खनिज पदार्थ प्राप्त होते हैं। भारत में खनिज-पदार्थों के वितरण के सम्बन्ध में डा० कृष्णन का उल्लेख करना लाभदायक होगा। उन्होंने कहा है कि यदि एक रेखा दक्षिण में मंगलौर से कानपुर तक और वहाँ से हिमालय पर्वत तक खींची जाय तो जो भाग इस रेखा के पूर्व में होंगे वे सभी खनिज पदार्थों में धनी और पश्चिम की ओर के भाग—राजस्थान में अभ्रक, नमक, सीसा तथा पंजाब में

कोयला व पेट्रोल का तेल पाये जाने वाले भागों को छोड़कर—खनिज पदार्थों में बिल्कुल निर्धन है।[1]

भारत में अनेक खनिज पदार्थ पाये जाते हैं जिनमें से कुछ खनिज देश की आवश्यकता की पूर्ति के पश्चात् निर्यात भी किए जाते हैं। कुछ खनिज पदार्थों में भारत अन्य पर निर्भर है।

खनिज पदार्थ जिनका निर्यात भारत से पर्याप्त मात्रा में होता है उनमें मैंगनीज़, इल्मेनाइट, बाक्साइट, मैग्नेसाइट, बेरिलियम, मोनाज़ाइट, सिलिमनाइट, क्यानाइट आदि प्रमुख हैं। कुछ ऐसे खनिज पदार्थ हैं जिनका भारत से साधारण मात्रा में निर्यात किया जाता है उनमें कोयला, अभ्रक, क्रोमाइट आदि हैं। इन खनिज पदार्थों में भारत आत्म निर्भर है—बालू, जिप्सम, एल्यूमिनियम, सोना, रेडियम, संगमरमर, तांबा, सीसा, खनिज तेल, कोबाल्ट, निकिल, जस्ता, पारा, मोलिब्डेनम, टंगस्टन, टाइटेनियम, आदि। कुछ खनिज-पदार्थ ऐसे हैं जो भारत में उत्पन्न तो होते हैं किन्तु देश की आवश्यकता की पूर्ति नहीं करते अतः उनका आयात किया जाता है। ऐसे खनिजों में खनिज तेल, चाँदी, निकिल, गन्धक, सीसा, तांबा, टिन, पारा, पोटाश, गुरमा, टंगस्टन, प्लेटिनम, पैराफिन आदि प्रमुख हैं।

भारत में खनिज उत्पादन का मूल्य (1901-1969)

भारत में आजकल 4 अरब रु० से भी अधिक मूल्य के खनिज निकाले जा रहे हैं —

भारत में खनिज उत्पादन का मूल्य[1]

वर्ष	करोड़ रु०	वर्ष	करोड़ रु०
1901	6.70	1951	89.2
1911	11.40	1955	93.4
1921	32.90	1961	177.2
1931	23.90	1966	319.7
1939	20.20	1968	409.4
1948	64.00	1969	413.6

भारत की खनिज सम्पत्ति के दोष

(1) भारत में खनिज पदार्थों का वितरण असमान है। कुछ क्षेत्रों में तो खनिज पदार्थ बाहुल्यता एवं विविधता में पाये जाते हैं किन्तु दूसरे क्षेत्रों की गोद बिल्कुल खाली है।

---

[1] *Source* Ministry of Petroleum Chemicals and Mines & Metals, Deptt of Mines and Metals Mineral Year Book

(2) कुछ खनिज पदार्थ ऐसे हैं जिनके छोटे छोटे भण्डार देश के अनेक भागों में फैले हुए हैं, किन्तु आर्थिक दृष्टि से उनका उत्खनन लाभप्रद नहीं है।

(3) कुछ खनिज पदार्थ ऐसे क्षेत्रों में स्थित हैं जहाँ भूमि की दुर्गम बनावट के कारण आवागमन और यातायात के साधनों का विकास नहीं हो पाया जिसके परिणामस्वरूप उन खनिज पदार्थों का उत्खनन नहीं हो सका। उदाहरण के लिए, असम की गारो खासी और जयंतिया की पहाड़ियों में उत्तम कोटि का कोयला पाया जाता है, शिवालिक पर्वतमाला (उत्तर प्रदेश) में ताँबे की खान हैं, किन्तु यातायात के साधनों के अभाव में वहाँ उनके विदोहन के कार्य को प्रगति नहीं मिली।

(4) सरकारी नीति व नियन्त्रण उपयुक्त न होने के कारण कोयले व अभ्रक की खानों से केवल उत्तम कोटि के द्रव्य तो निकाल लिए जाते हैं, किन्तु साधारण कोटि के द्रव्य खानों के पास ही छोड़ दिए जाते हैं जिससे राष्ट्रीय सम्पत्ति की बड़ी हानि होती है।

(5) अनेक आधारभूत खनिज पदार्थों का भारत में प्रायः अभाव ही है, जैसे टीन, सीसा, जस्ता आदि।

(6) कुछ खनिज पदार्थों का उत्पादन केवल निर्यात के लिए ही किया जाता है, जो भारत के भविष्य के लिए हानिप्रद है। हमारी टैरिफ-नीति देश से धातुओं के निर्यात को निरुत्साहित करने और आधारभूत खनिजों का, देश के उद्योग धन्धों में प्रयोग को प्रोत्साहित करने वाली होनी चाहिए।

भारत की खनिज-सम्पत्ति

लोहा (Iron Ore)—

महत्त्व—आधुनिक युग में किसी देश के आर्थिक विकास में लोहा व कोयला मेरुदण्ड के समान हैं, इनके बिना किसी भी देश का विकास सम्भव नहीं है। स्मिथ एवं फिलिप्स ने भी उपरोक्त कथन की पुष्टि इन शब्दों में की है 'वर्तमान औद्योगिक विश्व में स्वर्ण तथा हीरे की अपेक्षा लोहा व कोयला अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।' सम्भवतः विश्व में और किसी भी धातु का इतना व्यापक उपयोग नहीं हो रहा है। कदाचित इसी कारण आधुनिक युग को 'लौह युग (Iron Age)' कहा जाता है। लोहे का इतना व्यापक प्रयोग होने का प्रमुख कारण यह है कि लोहा लगभग सभी देशों में पाया जाता है और उसका बहुमुखी प्रयोग इसकी अनेक विशेषताओं के कारण है, जैसे सस्तापन,

विश्व में लौह-उत्पादक देश

देश	कुल उत्पादन का %
संयुक्त राज्य अमरीका	42%
रूस	18%
फ्रांस	12%
स्वीडन	9%
इंगलैण्ड	5%
जर्मनी	3%
कनाडा	2.2%
भारत	2%
चिली	2%

पिघलाकर ढालना, कठोरता, लचीलापन और तारों में खींचे जाने की क्षमता आदि। विश्व में शायद ही ऐसी कोई दूसरी धातु है जो इतने अधिक कार्यों में प्रयोग की जा सकती है। इन्हीं सब विशेषताओं के कारण लोहा हमारी आधुनिक भौतिक सभ्यता का एक बड़ा भारी स्तम्भ बन बैठा है।

आधुनिक औद्योगिक युग का मुख्य आधार लोहा है। मात्रा की दृष्टि से प्रकृति भारत के प्रति उदार है। यद्यपि लोहा उत्पादन की दृष्टि से भारत का विश्व में आठवां स्थान है किन्तु किस्म (Quality) की दृष्टि से श्रेष्ठ लोहा उत्पन्न करने वाले देशों में ब्राजील के बाद भारत का ही स्थान है। पृष्ठ 313 की तालिका से भारत का लौह उत्पादन की दृष्टि से विश्व में स्थान ज्ञात होता है।

शुद्धता—जहाँ तक शुद्धता का प्रश्न है, लोहा शुद्ध अवस्था में खानों से नहीं निकलता है। उसके साथ रेत, कंकड़ व कभी-कभी अन्य धातुएं भी मिश्रित होती हैं। भारत में निकलने वाले लौह धातु में 50 से 60 प्रतिशत तक शुद्ध लोहा निकलता है और शेष अन्य पदार्थ होते हैं। विश्व के अन्य देशों में खानों से निकलने वाले लौह खनिज में अपेक्षाकृत कम लोहा होता है जैसा कि तालिका से स्पष्ट होता है।

विभिन्न देशों में लौह शुद्धता

देश	लोहे का अंश
भारत	59%
स्वीडन	56%
स्पेन	56%
सं० रा० अमेरिका	50%
फ्रांस	33%
इंगलैण्ड	30%

अमरीका के प्रमुख लोहा क्षेत्र मिनिसोटा व मिशीगन में पाये जाने वाले लोहे की अपेक्षा भारतीय लोहा किस्म व मात्रा में कहीं अधिक श्रेष्ठ है।[1]

लोहे की किस्म—खानों से निकलने वाले लौह खनिज में अनेक वस्तुएं मिली रहती हैं, शुद्ध अवस्था में लोहा कहीं नहीं निकलता है। इन अशुद्धियों को दूर करके ही शुद्ध धातु प्राप्त की जाती है। यह ध्यान रहे कि जिस कच्ची धातु में अशुद्धियों का अनुपात जितना कम होता है और शुद्ध धातु का अनुपात जितना अधिक होता है, वह धातु उतनी ही श्रेष्ठ समझी जाती है। लोहा मुख्यतः चार प्रकार का होता है —

(1) मैगनेटाइट लोहा (Magnetite)—यह सबसे अच्छी प्रकार का लोहा माना जाता है। इसमें 72 प्रतिशत तक शुद्ध लौह धातु पाई जाती है, लगभग 28 प्रतिशत अन्य पदार्थ मिले होते हैं। इसका रंग काला अथवा गहरा भूरा होता है। इस प्रकार का लोहा प्रायः आग्नेय चट्टानों में छोटे छोटे कणों के रूप में बिखरा हुआ पाया जाता है। इसमें कुछ चुम्बकीय लक्षण पाये जाते हैं, इसी कारण इसे मैगनेटाइट लोहा कहते हैं।

(2) हैमेटाइट लोहा (Hametite)—हैमेटाइट शब्द एक ग्रीक शब्द से

---

[1] T R Sharma *Location of Industries in India*

लिया गया है जिसका अर्थ है 'खून'। यह लोहा लाल रंग का अथवा स्लेटी रंग का होता है। कच्ची धातु में 50 से 70 प्रतिशत तक शुद्ध लोहा मिलता है। इस धातु को साफ करने में कठिनाई नहीं पड़ती। इस प्रकार की धातु सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि संसार में इस प्रकार की ही धातु सबसे अधिक पाई जाती है, अतः इसका औद्योगिक महत्व अधिक है।

(3) लिमोनाइट लोहा (Limonite)—यह धातु पीले रंग की अथवा भूरे रंग की होती है। वैसे तो इस धातु में 60 प्रतिशत तक शुद्ध लोहा होता है किन्तु सामान्यतः 40 प्रतिशत शुद्ध लोहा होता है। यह परतदार चट्टानों में पाया जाता है, अतः इसकी खुदाई सस्ती व आसान होती है।

(4) साइडेराइट लोहा (Siderite)—वैसे तो इस लौह धातु में 48 प्रतिशत तक शुद्ध लोहा प्राप्य है, किन्तु साधारणतः 35 प्रतिशत तक ही शुद्ध लोहा निकलता है। इस धातु का रंग प्रायः राख के रंग जैसा ही होता है। यह लोहा चट्टानों में तांबे व गन्धक के साथ मिला हुआ पाया जाता है। कहीं कहीं चूना व कोयला भी मिला हुआ मिलता है। इस प्रकार का लोहा तेज धार वाली वस्तुएँ बनाने के लिए श्रेष्ठ समझा जाता है।

भारत में अधिकतर हैमेटाइट और मैगनेटाइट किस्म का लोहा मिलता है।

उत्पादन—भारत में आजकल 350 लाख मीट्रिक टन से भी अधिक कच्चा लोहा खानों से निकाला जाता है। निम्न तालिका से ज्ञात होगा कि भारत में खानों से कच्चा लोहा प्रतिवर्ष अधिक निकाला जा रहा है —

पंचवर्षीय योजनाओं से लौह उत्पादन

वर्ष	लाख टन
1950 51	30
1955 56	43
1960 61	110
1965 66	180
1969 70	370
1973 74	460 (लक्ष्य)

भारत के समस्त निक्षेपों में लगभग 22 अरब टन लौह खनिज आंका गया है, जो सम्पूर्ण भूमण्डल के निक्षेपों के सातवें भाग के बराबर है।

उत्पादन-क्षेत्र—प्रायद्वीप की धारवाड़ व कडप्पा चट्टानों के पूर्वी आधे भाग के लौह खनिज-क्षेत्र विश्व के सबसे बड़े लौह खनिज क्षेत्रों में से हैं।[1] यहाँ मुख्यतः हैमेटाइट व मैगनेटाइट किस्म का लोहा मिलता है, जिसमें 60 से 70 प्रतिशत तक शुद्ध लौह धातु प्राप्त हो जाती है। सबसे प्रमुख क्षेत्र उड़ीसा पहाड़ी के उत्तरी किनारे हैं जिनमें उड़ीसा के क्योंझर मयूरभंज और बोनाय जिले और बिहार का सिंहभूमि जिला सम्मिलित है। यहाँ लगातार लगभग 65 Kms तक लौह की श्रेणी है जिसमें शायद विश्व का सबसे बड़ा व धनी लौह निक्षेप (Iron deposits)

---

1 Spate *India & Pakistan* p 264

है जो कि सुपीरियर झील (स० रा० अमरीका) लौह खनिज से कहीं अधिक मात्रा में है।[1] भारत की प्रमुख लोह खान कलकत्ता से लगभग 240 से 320 Kms (150 से 200 मील) पश्चिम की ओर बिहार व उड़ीसा म हैं। इनके अतिरिक्त मध्य प्रदेश तमिलनाडु मसूर आन्ध्र महाराष्ट्र व राजस्थान म भी लोह की खानें हैं। उत्तर प्रदेश पश्चिमी बगाल व पूर्वी पजाब म भी थोडी मात्रा म लोहा पाया जाता है। इण्डियन मिनरल रिसोर्सेज ब्यूरो के अनुसार भारत के पूर्वी तट पर उड़ीसा से तमिलनाडु तक कच्चे लोहे के अक्षय भण्डार विस्तृत है।

भारत के कुल लोह उत्पादन का लगभग 88 प्रतिशत भाग बिहार तथा उड़ीसा की खानो से प्राप्त होता है। भारत म यह लोह की पट्टी बिहार के सिंहभूमि जिले से आरम्भ हो कर पूर्वी रियासतो म होती हुई उड़ीसा तक लगभग 50 Kms की लम्बाई म फली हुई है। इस लौह की पट्टी म लोह का इतना भण्डार है कि भारतीय कारखानो का सयुक्त राज्य अमरीका तथा इगलण्ड के कारखानो के समान चलाने के लिए 300 वर्षों तक के लिए पर्याप्त लोहा है।[2]

लौह वितरण—राज्यो की दृष्टि से भारत म लोहे की खानो का वितरण इस प्रकार है —

(1) बिहार—लोह के उत्पादन म बिहार का प्रथम स्थान है। यहाँ की लोह की खान सिंहभूमि जिले मे है। सिंहभूमि जिले से भारत का लगभग 45 प्रतिशत लोहा प्राप्त होता है। इस जिले के मनोहरपुर गुआ बुद्ध नोआमण्डी आदि स्थानो म लोह की खान स्थित हैं। यहाँ मगनेटाइट किस्म का अच्छा लोहा प्राप्त होता है। यहाँ का लोहा उड़ीसा की खानो से भी अच्छा है। इस भाग की खानें पूर्वी रेलवे द्वारा एक-दूसरी से सम्बद्ध है। इन खानो का लोहा टाटा कम्पनी दुर्गापुर लौह कारखाना और इण्डियन स्टील कम्पनी विशेषत प्रयोग करती हैं।

(2) उड़ीसा—भारत म लोहे की प्रसिद्ध खान यही हैं। भारत के लोह उत्पादन का लगभग 40 प्रतिशत भाग यही से प्राप्त होता है। इस राज्य म लोहे की खानें विशेषत तीन जिलो म हैं—क्योंझर मयूरभज और बोनाय। मयूरभज जिले म लोह की खानो के तीन क्षेत्र अधिक महत्वपूर्ण हैं। उनके नाम गुरुमहिसानी पर्वत-क्षेत्र (मयूरभज के उत्तर मे) सुलेपत क्षेत्र (खोरका नदी के पश्चिम म) और बादाम पहाड (मयूरभज के उत्तर म) हैं। कटक व सभलपुर लौह उत्पादक अन्य जिले हैं। यहाँ के लोह म 65 से 70 प्रतिशत शुद्धता होती है।

बिहार उड़ीसा की सीमा पर बानाय पर्वत श्रृखला के किरीबुरू क्षेत्र म लौह खनिज प्रचुर मात्रा म हैं। अब तक के अनुमानानुसार यहाँ 14 70 करोड टन लौह खनिज आँका जा सकता है। यहाँ लौह खनिज की मुख्य पट्टी दक्षिण पश्चिम से उत्तर

---

1 Jathar & Beri vol I pp 29 30 and Wadia p 347

2 J C Brown *India s Mineral Wealth*, p 58

पूर्व की ओर त्रिकोणात्मक रूप में 50 Kms तक चली गई है। इसका अधिकांश भाग (⅞ भाग) बिहार राज्य में है और शेष (लगभग 1/8 भाग) उड़ीसा राज्य में है।

किरीबुरू लौह खनिज निक्षेप के विकास के लिए 'किरीबुरू लौह खनिज संस्थान' की स्थापना की गई है। यह संस्थान भारत जापान मैत्री का प्रतीक है। एक समझौते के अनुसार जापान कन्सल्टिंग इंस्टीट्यूट इस संस्थान का परामर्शदाता है। किरीबुरू संस्थान के लिए संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति विकास कोष से 220 लाख डालर की सहायता प्राप्त हुई है। यहाँ की खानों में 40 लाख टन खनिज और अतिरिक्त निकालने की योजना विचाराधीन है जिसमें दुर्गापुर और नये स्थापित होने वाले बोकारो इस्पात कारखाना को लोह-खनिज भेजा जावेगा।

(3) मैसूर—मैसूर की लोहे की खान कदूर और बेलारी जिलों में हैं। कदूर जिले में बाबाबूदन पहाड़ी की केमनगुण्डी खान प्रसिद्ध है। यह खान भद्रावती से 40 Kms दक्षिण में स्थित है। इन खानों के लोहे का उपयोग विशेषतः मैसूर आयरन वर्क्स (भद्रावती में) करता है। हॉस्पेट में शीघ्र ही लोहे एवं इस्पात का कारखाना स्थापित किया जावेगा।

(4) तमिलनाडु (मद्रास)—यहाँ लोहे की खानें सलम जिले में हैं। प्रमुख 5 खान हैं—(क) गोदामलाय (ख) थालामलाय कोलामलाय, (ग) सिंगापति, (घ) थिरतामलाय और (ङ) कंजामलाय।[1] शक्ति के साधनों के अभाव में इन खानों की अभी खुदाई नहीं हुई है। इस क्षेत्र में लोहे एवं इस्पात का एक बड़ा कारखाना स्थापित किया जा सकता है।

(5) आन्ध्र प्रदेश—यहाँ लोहे की खान नेल्लोर, करनूल और कुडप्पा जिलों में पाई जाती हैं। इस लोहे को मैसूर आयरन वर्क्स, भद्रावती काम में लेता है। यहाँ 4.3 करोड़ टन लौह खनिज होने का अनुमान है। यहाँ के अधिकांश खनिज में 50 से 65 प्रतिशत तक शुद्ध लोहा है। वारंगल और खम्मामेट जिलों में अच्छी किस्म के लोहे की खानों का पता चला है।

(6) मध्य प्रदेश—यहाँ भी कच्चे लोहे की खानें हैं, किन्तु उनकी खुदाई बहुत ही साधारण हुई है। यहाँ दुर्ग जिले में दाली और राजहारा की पहाड़ियों में लोहे की खानें हैं। इन खानों का लोहा भिलाई के कारखाने में काम आता है। यहाँ के लोहे में 65 प्रतिशत तक शुद्धता मिलती है।

(7) महाराष्ट्र—इस राज्य के चांदा जिले में लोहे की 10 खानें हैं। लोहारा पर्वत और पीपलगाँव में भी लोहे की खानें हैं। इस राज्य में रत्नगिरि पर्वत क्षेत्र में लोहे के उत्पादन की सम्भावनाएँ हैं।

(8) गोआ—गोआ में अच्छे किस्म के लोहे के बड़े भण्डार हैं।

---

1 कच्चे लोहे पर पुस्तिका—इम्पीरियल मिनरल रिसोर्सेज ब्यूरो द्वारा प्रकाशित के आधार पर।

(9) अन्य—लोहे की छोटी छोटी खानें उत्तर प्रदेश (अल्मोड़ा गढ़वाल जिलों में), पश्चिमी बंगाल (बदवान जिले म), राजस्थान (अजमेर विभाग) में पाई जाती हैं। गोआ में भी अच्छी किस्म के लोहे के भण्डार हैं। आशा है कि चतुर्थ योजना के अन्त तक गोआ की खाना से लगभग 80 लाख टन लोहे का उत्पादन होने लगेगा।

तृतीय पंचवर्षीय योजना मे 3 2 करोड़ टन कच्चा लोहा उत्पन्न करने का लक्ष्य रखा गया था। चौथी योजना में उत्पादन लक्ष्य 4 6 करोड़ टन है।

व्यापार—भारत से काफी मात्रा में कच्चे लोहे का निर्यात होता है। भारत के लोह खनिज का सबसे बड़ा ग्राहक जापान है। भारत ने जापान के साथ मार्च 1970 में लोह खनिज निर्यात के सम्बन्ध में एक समझौता किया है जिसके अनुसार अगले 15 वर्षों में (सन 1985 तक) जापान को 20 करोड़ टन लोह खनिज निर्यात करेगा। यह विश्व का सबसे बड़ा खनिज बिक्री समझौता है। इसके अतिरिक्त चेकोस्लोवाकिया आस्ट्रेलिया पोलण्ड युगोस्लाविया और पश्चिमी जर्मनी भी भारतीय लोहा खरीदते हैं। इटली भारतीय लोह का नया ग्राहक है।

निम्न तालिका में भारत से विदेशों को निर्यात किए गये लोह खनिज का मूल्य बताया गया है —

भारत से कच्चे लोहे का निर्यात

वर्ष	निर्यात मूल्य (करोड़ रु०)
1950 51	0 22
1955 56	
1960 61	17 0
1965 66	39 3
1967 68	74 0
1968 69	88 0

इस तालिका से स्पष्ट है कि भारत से लोह खनिज के निर्यात में निरन्तर वृद्धि हो रही है। भारत ने 1969 70 में 1 7 करोड़ टन लोह खनिज को निर्यात किया। इसमें से 70 लाख टन लोहा जापान को निर्यात किया गया। अनुमान है कि 1970 71 में 2 1 करोड़ टन लोहा निर्यात किया जायगा।

मैंगनीज—

परिचय—यह धातु भूरे रंग की होती है। इस धातु में यह विशेषता होती है कि यह अत्यन्त कठिनाई से पिघलाया जाता है। प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व तो इसका प्रयोग इतना अधिक नहीं होता था किन्तु बाद में तो इसका प्रयोग एवं महत्व दोनों ही बहुत अधिक हो गये हैं। आजकल भारत मे विश्व के मैंगनीज उत्पादन का लगभग 15 प्रतिशत उत्पन्न होता है। वैसे विश्व के मैंगनीज उत्पादक देशों में भारत को तीसरा स्थान प्राप्त है। विश्व में सबसे अधिक मैंगनीज रूस में और उसके बाद घाना (अफ्रीका) में निकाला जाता है। इसके पश्चात भारत ही सबसे अधिक मैंगनीज निकालता है।

विभिन्न उपयोग—आजकल भारत में मैंगनीज का सबसे अधिक उपयोग लौह उद्योग में किया जाता है। ऐसा अनुमान है कि कुल मैंगनीज के उत्पादन का

लगभग 90 प्रतिशत भाग लोहे से फौलाद बनाने के काम में, 5 प्रतिशत अन्य धातुओं से सम्बन्ध रखने वाले धन्धों में तथा शेष 5 प्रतिशत अन्य रासायनिक पदार्थों में काम आता है।

मैंगनीज के निम्न प्रमुख उपयोग हैं —

(1) मैंगनीज का सबसे अधिक उपयोग फौलाद बनाने के काम में होता है। (2) चीनी के बर्तनों को रंगने में। (3) ब्लाकों की पालिश बनाने में। (4) रंगीन काँच बनाने में व काँच पर से पीले धब्बे छुडाने के लिए। (5) जहाज बनाने में, क्योंकि मैंगनीज से बने फौलाद में चुम्बकीय शक्ति नहीं होती। (6) ब्लीचिंग पाउडर बनाने में। (7) बिजली के कारखानों में बिजली के काम में। (8) सूखी बैटरी बनाने में। (9) कीटाणुनाशक पदार्थों—पोटेशियम परमैगनेट, आक्सीजन तथा क्लोरीन गैसें आदि के निर्माण में। संक्षेप में इस धातु के इतने अधिक उपयोग हैं कि इसे 'Jack of all Trades' खनिज भी कहते हैं।

उत्पादन—आजकल भारत में मैंगनीज का वार्षिक उत्पादन 17 लाख टन से भी अधिक हो रहा है। निम्न तालिका देखने से ज्ञात होगा कि भारत में मैंगनीज उत्पादन की मात्रा प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है —

उत्पादन क्षेत्र—भारतीय मैंगनीज का मुख्य स्रोत धारवाड की चट्टानें हैं अतः इसका अधिकांश भाग प्राय द्वीपीय भारत से प्राप्त होता है। मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश, मैसूर, गुजरात और राजस्थान में 18 करोड़ टन मैंगनीज के भण्डार हैं जिनमें से 14 करोड़ टन के भण्डार नागपुर भण्डारा-बालाघाट की पट्टी में हैं जो महाराष्ट्र व मध्य प्रदेश में है। भारत में मैंगनीज के उत्पादन क्षेत्र उपरोक्त ही हैं। भारत में सबसे अधिक मैंगनीज मध्य प्रदेश में होता है। पाकिस्तान में मैंगनीज का संचय बिलकुल नहीं है।

भारत में मैंगनीज का उत्पादन

वर्ष	उत्पादन (लाख टन)
1947	4 6
1951	13 5
1955	16 0
1961	12 0
1966	16 0
1969	17 5

मैंगनीज वितरण—मैंगनीज की खानों का राज्यों के अनुसार इस प्रकार वितरण है —

(1) मध्य प्रदेश—भारत में सबसे अधिक मैंगनीज मध्य प्रदेश में उत्पन्न होता है। एक अनुमान के अनुसार मध्य प्रदेश से भारत के कुल मैंगनीज-उत्पादन का लगभग 60 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। मैंगनीज की प्रमुख खानें—(क) बालाघाट (ख) छिंदवाड़ा और (ग) झाबुआ में हैं। इनमें सबसे अधिक महत्वशील खानें बालाघाट में हैं। अधिकांश मैंगनीज विशाखापट्टनम बन्दरगाह (आन्ध्र प्रदेश) से

(9) अय—लोह की छोटी छोटी खानें उत्तर प्रदेश (अल्मोडा गढ़वाल जिल म), पश्चिमी बगाल (बदवान जिले म) राजस्थान (अजमर विभाग) मे पाई जाती हैं। गोआ म भी अच्छी किस्म क लोह क भण्डार है। आशा है कि चतुथ योजना के अ त तक गोआ की खानो स लगभग 80 लाख टन लोहे का उत्पादन होन लगेगा।

तृतीय पचवर्षीय योजना म 3 2 करोड टन कच्चा लोहा उत्पादन करने का लक्ष्य रखा गया था। चौथी योजना मे उत्पादन लक्ष्य 4 6 करोड टन है।

व्यापार—भारत से बडी मात्रा म कच्च लोह का निर्यात होता है। भारत के लोह खनिज का सबस बडा ग्राहक जापान है। भारत न जापान क साथ माच 1970 म लोह खनिज निर्यात के सम्बन्ध म एक समझौता किया है जिसके अनुसार अगले 15 वर्षों म (सन 1985 तक) जापान को 20 करोड टन लोह खनिज निर्यात करेगा। यह विश्व का सबस बडा खनिज बिक्री समझौता है। इसक अतिरिक्त चकोस्लोवाकिया आस्ट्रेलिया पोलण्ड यूगोस्लाविया और पश्चिमी जमनी भी भारतीय लोहा खरीदते हैं। इटली भारतीय लोह का नया ग्राहक है।

निम्न तालिका म भारत स विदेशो का निर्यात किए गय लोह खनिज का मूल्य बताया गया है —

भारत से कच्चे लोहे का निर्यात

वष	निर्यात मूल्य (करोड रु०)
1950 51	0 22
1955 56	
1960 61	17 0
1965 66	39 3
1967 68	74 0
1968 69	88 0

इस तालिका से स्पष्ट है कि भारत स लोह खनिज के निर्यात म निरन्तर वृद्धि हो रही है। भारत ने 1969 70 म 1 7 करोड टन लोह खनिज को निर्यात किया। इसम स 70 लाख टन लोहा जापान को निर्यात किया गया। अनुमान है कि 1970 71 म 2 1 करोड टन लोहा निर्यात किय जायगा।

मगनीज—

परिचय—यह धातु भूरे रग की होती है। इस धातु म यह विशेषता होती है कि यह अत्यन्त कठिनाई स पिघलाया जाता है। प्रथम विश्व-युद्ध क पूव तो इसका प्रयोग इतना अधिक नही होता था किन्तु बाद म तो इसका प्रयोग एव महत्व दोनो ही बहुत अधिक हो गय हैं। आजकल भारत म विश्व क मैंगनीज उत्पादन का लगभग 15 प्रतिशत उत्पन्न होता है। वस विश्व क मैंगनीज उत्पादक देशों म भारत को तीसरा स्थान प्राप्त है। विश्व म सबस अधिक मैंगनीज रूस म और उसक बाद घाना (अफ्रीका) म निकाला जाता है। इसक पश्चात भारत ही सबस अधिक मगनीज निकालता है।

विभिन्न उपयोग—आजकल भारत म मगनीज का सबस अधिक उपयोग लोह उद्योग म किया जाता है। ऐसा अनुमान है कि कुल मगनीज क उत्पादन का

लगभग 90 प्रतिशत भाग लोहे से फौलाद बनाने के काम में, 5 प्रतिशत अन्य धातुओं से सम्बन्ध रखने वाले धन्धों में तथा शेष 5 प्रतिशत अन्य रासायनिक पदार्थों में काम आता है।

मैंगनीज के निम्न प्रमुख उपयोग हैं —

(1) मैंगनीज का सबसे अधिक उपयोग फौलाद बनाने के काम में होता है। (2) चीनी के बर्तनों को रंगने में। (3) ब्लाकों की पालिश बनाने में। (4) रंगीन काँच बनाने में व काँच पर से पीले धब्बे छुड़ाने के लिए। (5) जहाज बनाने में, क्योंकि मैंगनीज से बने फौलाद में चुम्बकीय शक्ति नहीं होती। (6) ब्लीचिंग पाउडर बनाने में। (7) बिजली के कारखानों में बिजली के काम में। (8) सूखी बैटरी बनाने में। (9) कीटाणुनाशक पदार्थों—पोटेशियम परमैंगनेट आक्सीजन तथा क्लोरीन गैसें आदि के निर्माण में। संक्षेप में इस धातु के इतने अधिक उपयोग हैं कि इसे 'Jack of all Trades' खनिज भी कहते हैं।

उत्पादन—आजकल भारत में मैंगनीज का वार्षिक उत्पादन 17 लाख टन से भी अधिक हो रहा है। निम्न तालिका देखने से ज्ञात होगा कि भारत में मैंगनीज उत्पादन की मात्रा प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है —

भारत में मैंगनीज का उत्पादन

वर्ष	उत्पादन (लाख टन)
1947	4 6
1951	13 5
1955	16 0
1961	12 0
1966	16 0
1969	17 5

उत्पादन क्षेत्र—भारतीय मैंगनीज का मुख्य स्रोत धारवाड़ की चट्टानें हैं अतः इसका अधिकांश भाग प्रायः द्वीपीय भारत से प्राप्त होता है। मध्य प्रदेश बिहार, उड़ीसा आन्ध्र प्रदेश, मैसूर गुजरात और राजस्थान में 18 करोड़ टन मैंगनीज के भण्डार हैं जिनमें से 14 करोड़ टन के भण्डार नागपुर-भण्डारा-बालाघाट की पट्टी में हैं जो महाराष्ट्र व मध्य प्रदेश में है। भारत में मैंगनीज के उत्पादन क्षेत्र उपरोक्त ही हैं। भारत में सबसे अधिक मैंगनीज मध्य प्रदेश में होता है। पाकिस्तान में मैंगनीज का संचय बिलकुल नहीं है।

मैंगनीज वितरण—मैंगनीज की खानों का राज्यों के अनुसार इस प्रकार वितरण है —

(1) मध्य प्रदेश—भारत में सबसे अधिक मैंगनीज मध्य प्रदेश में उत्पन्न होता है। एक अनुमान के अनुसार मध्य प्रदेश से भारत के कुल मैंगनीज उत्पादन का लगभग 60 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। मैंगनीज की प्रमुख खानें—(क) बालाघाट, (ख) छिंदवाड़ा और (ग) झाबुआ में हैं। इनमें सबसे अधिक महत्वशील खानें बालाघाट में हैं। अधिकांश मैंगनीज विशाखापट्टनम बन्दरगाह (आन्ध्र प्रदेश) से

विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है। भिलाई इस्पात कारखाना खुल जाने के कारण अब मध्य प्रदेश में मैंगनीज का महत्त्व और अधिक बढ़ गया है।

(2) उड़ीसा—मैंगनीज उत्पादन की दृष्टि से भारत में उड़ीसा का तीसरा स्थान है। एक अनुमान के अनुसार भारत का लगभग 20 प्रतिशत मैंगनीज यहीं से प्राप्त होता है। प्रमुख मैंगनीज की खानें मयूरभंज, क्योंझर, बोनाय और गंगपुर में हैं। राउरकेला इस्पात कारखाना खुल जाने के कारण इन खानों का बहुत महत्त्व हो गया है।

(3) महाराष्ट्र—यहाँ नागपुर, भंडारा, रत्नगिरि, पंचमहल आदि मैंगनीज उत्पादक प्रमुख क्षेत्र हैं। इनमें नागपुर व भंडारा सबसे अधिक महत्त्वशील हैं।

(4) आन्ध्र—आन्ध्र प्रदेश में मैंगनीज दो क्षेत्रों में मिलती है। प्रथम तो विशाखापट्टनम जिला है जहाँ लगभग 450 मीटर लम्बी और 50 मीटर चौड़ी मैंगनीज की पट्टी है। दूसरा क्षेत्र कुनूल जिले में है।

(5) मैसूर राज्य—इस राज्य में चित्रदुर्ग, सन्दूर, बलारी और शिमोगा में मैंगनीज की कुछ खानें हैं।

(6) अन्य उत्पादक—उपरोक्त के अतिरिक्त थोड़ा मैंगनीज इन राज्यों में भी पाया जाता है—बिहार (सिंहभूमि जिला) राजस्थान (उदयपुर विभाग में बाँसवाड़ा और कुशलगढ़)।

व्यापार—पहले भारत विदेशों को बड़ी मात्रा में मैंगनीज निर्यात करता था। भारत से निर्यात किये जाने वाले मैंगनीज की मात्रा निम्न आँकड़े प्रकट करते हैं:—

भारत से मैंगनीज का निर्यात

(करोड़ रु० में)

वर्ष	निर्यात मूल्य
1960 61	14 0
1965 66	11 0
1966 67	11 1
1967 68	11 1
1968 69	13 5

भारतीय मैंगनीज के प्रमुख ग्राहक संयुक्त राज्य अमरीका, इंगलैण्ड, फ्रांस, बेल्जियम, जर्मनी व जापान आदि हैं। इनमें संयुक्त राज्य अमरीका भारतीय मैंगनीज का सबसे बड़ा ग्राहक रहा है। भारत के विदेशी मुद्रा के साधनों में मैंगनीज खनिज का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण योग रहा है। किन्तु उपभोक्ता देशों के निकटवर्ती देशों, विशेषतः सोवियत रूस, ब्राजील, घाना, दक्षिणी अफ्रीका में इसका खनन आरम्भ होने पर भारत से मैंगनीज का निर्यात लड़खड़ाने लगा है। भारतीय मैंगनीज खनिज का सबसे बड़ा खरीदार संयुक्त राज्य अमरीका था जिस पर ब्राजील ने अधिकार कर लिया क्योंकि वह अमरीका के निकट है और दूसरा यह कि उसके आर्थिक विकास में अमरीका का वित्तीय स्वार्थ है। यूरोप की मण्डियाँ रूस और दक्षिणी अफ्रीका के हाथों में चली गई हैं। इसके अतिरिक्त संसार के इस्पात उद्योगों में भी कुछ मण्डियाँ आ गई हैं।

यह उल्लेखनीय है कि सन् 1965 में 'राजकीय खनिज व धातु व्यापार

निगम' (Minerals and Metals Trading Corporation Established October 1963) ने देश के कच्चे ममनीज के अधिकाश निर्यात का काम अपने हाथ म ले लिया है। निजी निर्यात पर कोई प्रतिबन्ध तो नही है, किन्तु सरकारी सहायता के अभाव म ऐसा निर्यात सम्भव नहीं होगा।

किन्तु अब देश म लोहे व इस्पात के तीन कारखाने (राउरकेला, भिलाई, दुर्गापुर) म स्थापित हो चुके हैं, चौथा कारखाना बोकारो म स्थापित किया जा रहा है व अन्य इस्पात कारखानो की उत्पादन-क्षमता बढाई जा रही है, अत भारत म ही मगनीज का उपभोग बढ रहा है तथा निर्यात का भविष्य उज्ज्वल प्रतीत नहीं होता।

अभ्रक (Mica)—

अभ्रक उत्पादक देशो म भारत का विश्व मे प्रथम स्थान है। भारतवष म विश्व के कुल अभ्रक उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत भाग होता है। अभ्रक खानो स पर्तों म मिलता है। यह पारदशक तथा लचीला होता है। पूर्वी अफ्रीका ब्राजील, सयुक्त राज्य अमरीका विश्व के अभ्रक उत्पादक अन्य देश हैं।

व्यापारिक उपयोग—अभ्रक का उपयोग विशेषत बिजली के कारखानो म होता है क्योंकि यह विद्युत निरोधक होता है। बेतार का तार, रेडियो समुद्री विमान ट्यूब, वाशर, नेत्र रक्षक चश्मे, मोहर, लालटेन की चिमनी आदि के निर्माण म इसका प्रयोग होता है। सामुद्रिक कुतुबनुमा रेडियो मोटर्स, ग्रामोफोन के साउण्ड बाक्स शायरूम्स कोमल भौतिक यन्त्र के दपणो, स्टोवो की चिमनियो लोहा गलाने की भट्टियो के फाटको, रक्षात्मक रगो के उत्पादन म अभ्रक का महत्त्वपूर्ण उपयोग होता है। इसका उपयोग एरोनोटिकल इजीनियरिंग और मोटर यातायात म भी खूब होता है। इनके अतिरिक्त भवनों को सजाने तथा औषधियो म भी इसका प्रयोग किया जाता है।

उत्पादन—भारत म अभ्रक का पिछले वर्षों म इस प्रकार उत्पादन किया गया —

अभ्रक का उत्पादन

वष	हजार मीट्रिक टन
1951	10 0
1955	23 6
1961	28 3
1966	22 7
1667	17 0
1968	21 0
1969	17 2

उत्पादन-क्षेत्र—भारत म प्रति वष 20 हजार टन स भी अधिक अभ्रक निकाला जा रहा है। हमारे देश में अभ्रक उत्पादन के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं —बिहार, राजस्थान और आन्ध्र। इनके अतिरिक्त मसूर एव केरल म भी थोडा अभ्रक मिलता है।

अभ्रक का वितरण—ऊपर बतलाया जा चुका है कि भारत म अभ्रक उत्पादन के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं। आगे उनका सक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

(1) बिहार—भारत में सबसे अधिक अभ्रक बिहार से निकाला जाता है। अनुमान है कि इस क्षेत्र से देश के कुल अभ्रक उत्पादन का लगभग 60 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। यहाँ अभ्रक की खान लगभग 100 Kms लम्बी और 20 से 24 Kms चौड़ी पट्टी में स्थित हैं। यहाँ अभ्रक क्षेत्र लगभग 3880 वर्ग किलोमीटर में विस्तृत है। यह अभ्रक की पट्टी पूर्व से पश्चिम तक विस्तृत है। इस क्षेत्र में गया, हजारीबाग भागलपुर और मुंगेर के जिले सम्मिलित हैं। बिहार का 90% अभ्रक हजारीबाग जिले से प्राप्त होता है। यहाँ का अभ्रक विश्व के बाजारों में श्रेष्ठतम समझा जाता है। इस क्षेत्र में लगभग डेढ़ लाख मनुष्य इस व्यवसाय में लगे हुए हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारत में इस व्यवसाय में कुल दो लाख से कुछ अधिक व्यक्ति लगे हुए हैं। प्रायः समस्त अभ्रक निर्यात के लिए कलकत्ता भेज दिया जाता है।

(2) राजस्थान—अभ्रक उत्पादन की दृष्टि से राजस्थान का भारत में दूसरा स्थान है। यहाँ अभ्रक का क्षेत्र लगभग 3,110 वर्ग किलोमीटर में विस्तृत है। अभ्रक की मुख्य पट्टी लगभग 325 किलोमीटर लम्बी और 100 किलोमीटर चौड़ी है जो जयपुर व उदयपुर के मध्य फैली हुई है। सबसे अधिक अभ्रक भीलवाड़ा (उदयपुर) से प्राप्त होता है। अजमेर व जयपुर अन्य क्षेत्र हैं। भारत के कुल अभ्रक उत्पादन का लगभग 25 प्रतिशत भाग राजस्थान से ही प्राप्त होता है। यहाँ का अभ्रक हल्के हरे तथा हल्के गुलाबी रंग का होता है। अधिकांश अभ्रक सफेद रंग का होता है। यहाँ का अधिकांश अभ्रक बिहार राज्य में साफ होने के लिए भेज दिया जाता है और शेष कलकत्ता व बम्बई निर्यात के लिए भेज दिया जाता है।

(3) आन्ध्र प्रदेश—अभ्रक उत्पादन की दृष्टि से आन्ध्र प्रदेश का भारत में तीसरा स्थान है। भारत के कुल अभ्रक उत्पादन का लगभग 10 प्रतिशत भाग इसी राज्य से प्राप्त होता है। यहाँ का अभ्रक क्षेत्र लगभग 1550 वर्ग किलोमीटर में विस्तृत है। यहाँ पर अभ्रक की पट्टी लगभग 100 किलोमीटर लम्बी व 12 से 15 किलोमीटर चौड़ी है। यहाँ नलोर जिला मुख्य अभ्रक क्षेत्र है। यहाँ का अभ्रक हल्के हरे रंग का होता है।

तमिलनाडु, केरल व पंजाब में भी थोड़ा अभ्रक मिलता है।

व्यापार—भारत में अभ्रक की खपत बहुत कम होने के कारण अधिकांश अभ्रक निर्यात कर दिया जाता है। अभ्रक के निर्यात से भारत सरकार को काफी आय होती है।

आजकल भारतीय अभ्रक के 4 प्रमुख ग्राहकों में संयुक्त राज्य अमरीका का भाग 40 प्रतिशत, इंगलैण्ड का 20 प्रतिशत, पश्चिमी जर्मनी का 19 प्रतिशत और जापान का 19 प्रतिशत है। शेष 12 प्रतिशत 38 देशों को भेजा जाता है। फ्रांस, सोवियत रूस, कनाडा, आस्ट्रेलिया भी भारत से अभ्रक का आयात करते हैं। आगे की तालिका में भारत से निर्यात होने वाले अभ्रक का मूल्य बतलाया है।

ब्राजील (दक्षिणी अमरीका) विश्व के बाजार में भारत के अभ्रक का कठोर प्रतिस्पर्द्धी है। जर्मनी कृत्रिम अभ्रक बनाने लगा है।

भविष्य—भारत में अब उद्योगों का विकास हो रहा है। रेडियो, मोटर, इंजीनियरिंग आदि अनेक उद्योग विकसित दशा में हैं। इस प्रकार अभ्रक का उपयोग व माँग देश में बढ़ रही है। अतः अभ्रक के विषय में कहा जा सकता है कि देश के अन्दर माँग की दृष्टि में इसका भविष्य उज्ज्वल है, किन्तु निर्यात की दृष्टि से इसका महत्व क्रमशः घटता जायगा।

भारत से अभ्रक का निर्यात

वर्ष	मूल्य (करोड़ रुपये)
1960 61	10 1
1965 66	11 2
1966 67	11 9
1967 68	15 0
1968 69	13 4

भारत में अणु शक्ति के खनिज (Atomic Minerals)

प्रारम्भिक—

अणु शक्ति आज के वैज्ञानिक युग के आश्चर्यजनक चमत्कारों में से है। भारत में 'कोयला' व खनिज तेल के भण्डार सीमित ही हैं। इतना ही नहीं वैज्ञानिकों ने सम्भावना प्रकट की है कि भारत के जल शक्ति भण्डार भी भविष्य में समाप्त हो सकते हैं। अतः शक्ति के सस्ते व नये साधनों की खोज आवश्यक है। आज संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत रूस, कनाडा, जापान, इंगलैण्ड, फ्रांस, चीन आदि देश अणु शक्ति के विकास के लिए प्रतिस्पर्द्धा कर रहे हैं। बदलते हुए समय को देखते हुए, भारत भी इस दिशा में जाग्रत हुआ है और अणु का शांति के लिए उपयोग में अग्रसर हो रहा है। देश में शक्ति के साधनों की समस्या अणु शक्ति के विकास द्वारा हल की जा सकती है। भारत इस सम्बन्ध में भाग्यशाली है कि देश में अणु शक्ति में उपयोग आने वाले अनेक खनिज पाये जाते हैं।

अणु शक्ति उत्पन्न करने में यूरेनियम व थोरियम खनिजों की विशेषरूप से आवश्यकता पड़ती है। इनके अतिरिक्त बेरीलियम, जिरकन, एण्टीमनी, ग्रेफाइट, गंधक आदि अन्य प्रमुख खनिज हैं। इनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है —

(1) यूरेनियम (*Uranium*)—

यह महत्त्वपूर्ण अणु-खनिज है। इस खनिज को ब्रिटिश शासन काल में भी निकाला जाता था। द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व ही यह खनिज समाप्त हो गया। किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सन् 1949 में यूरेनियम के दो महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों का पता लगा। ये दो क्षेत्र हैं बिहार और राजस्थान।

बिहार राज्य में यूरेनियम का क्षेत्र सिंहभूम जिले में है। यहाँ यूरेनियम खनिज की पट्टी लगभग 100 किलोमीटर लम्बी है। राजस्थान में बांसवाड़ा व

डूंगरपुर में यूरेनियम की खान हैं। इन दोनों क्षेत्रों—बिहार व राजस्थान—में 15 हजार टन यूरेनियम के अनुमानित भण्डार हैं।

भारत में यूरेनियम के चार प्रमुख स्रोत हैं, जहाँ से यह प्राप्त किया जाता है —

(क) धारवाड़ एवं आर्कियन चट्टानों से—बिहार में सिंहभूम और राजस्थान में बागवाड़ा व डूंगरपुर के क्षेत्र इसमें सम्मिलित हैं। इन चट्टानों में बढ़िया किस्म का यूरेनियम नहीं मिलता। इन चट्टानों में यूरेनियम की मात्रा 0.03 से 0.1 प्रतिशत तक मिलता है।

(ख) पगमेटाइटस चट्टानों से—ये चट्टान भारत में बहुत कम हैं। उत्तरी बिहार, तमिलनाडु, केरल व मध्य राजस्थान में ऐसी कुछ चट्टानें हैं। इन चट्टानों में यूरेनियम की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक होती है। इन चट्टानों में 10 से 30 प्रतिशत यूरेनियम प्राप्त हो जाता है।

(ग) मोनाजाइट बालू मिट्टी से—यह बालू मिट्टी पीले रंग की होती है जिसमें 0.2 से 0.4 प्रतिशत तक यूरेनियम प्राप्त होता है। यह मिट्टी केरल तथा तमिलनाडु राज्यों के समुद्रतटीय भागों में मिलती है। यह केवल 160 किलोमीटर की लम्बाई में ही फैली हुई है। यह मिट्टी समुद्री की लहरों की प्रतिक्रिया के कारण एकत्रित हो जाती है। भारत की मोनोजाइट मिट्टी विश्व की सर्वोत्तम श्रेणियों में मानी जाती है।

(घ) चेरालाइट खनिज से—यूरेनियम का स्रोत चेरालाइट खनिज भी है जो केरल राज्य की बालू में मिलता है। इसमें यूरेनियम की मात्रा लगभग 5 प्रतिशत और थोरियम की मात्रा 20 से 35 प्रतिशत तक होती है।

(2) थोरियम (Thorium)—

अणु शक्ति खनिजों में थोरियम दूसरा प्रमुख खनिज है। यह खनिज मोनाजाइट बालू से प्राप्त किया जाता है। मोनाजाइट बालू मुख्यतः केरल और तमिलनाडु राज्यों के तटीय भागों में मिलती है। इनके अतिरिक्त राजस्थान (उदयपुर) और बिहार (हजारीबाग) से भी थोड़ा थोरियम प्राप्त होता है। अनुमान है कि केरल राज्य में लगभग 20 लाख टन मोनाजाइट बालू है। केरल राज्य की बालू में 8 से 10 प्रतिशत तक और बिहार राज्य की मिट्टी में लगभग 10 प्रतिशत तक थोरियम प्राप्त हो जाता है। यह उल्लेखनीय है कि ब्राजील तथा अन्य देशों की मोनाजाइट मिट्टी में 5 से 6 प्रतिशत ही थोरियम प्राप्त होता है।

(3) बेरीलियम (Beryllium)—

बरील नामक खनिज से बरीलियम प्राप्त किया जाता है। यह प्रायः अभ्रक क्षेत्रों में अथवा उसके निकटवर्ती भागों में उपलब्ध होता है। राजस्थान, बिहार, आन्ध्र प्रदेश तथा तमिलनाडु राज्यों में यह मिलता है। भारत में प्राप्त होने वाले बरील में बरीलियम का प्रतिशत अन्य देशों की तुलना में अधिक है। संयुक्त राज्य अमरीका, ब्राजील, अर्जेण्टाइना (दक्षिणी अमरीका), रोडेशिया व मैडागास्कर

(अफ्रीका) बेरीलियम के अन्य उत्पादक देश हैं। भारत सरकार द्वारा मध्य प्रदेश, आन्ध्र, तमिलनाडु और कश्मीर आदि में बेरीलियम की खोज की जा रही है।

(4) जिरकन (Zircon)—

जिरकन खनिज केरल राज्य की बालू मिट्टी से मिलता है। जिरकन से जिरकोनिया प्राप्त किया जाता है जिसका उपयोग अणु शक्ति के अतिरिक्त रेडियो-ट्यूबों विद्युत के जोड़ लगाने व अनेक विस्फोटक हथियारों में किया जाता है।

(5) ग्रेफाइट (Graphite)—

यह ताप सोखने वाला खनिज है। इसका उपयोग अणु शक्ति के अतिरिक्त धातु गलाने के पात्र बनाने में भी किया जाता है। यह राजस्थान (किशनगढ़ व अजमेर जिला) उड़ीसा (पालामऊ जिला), मध्य प्रदेश (बेतूल), मैसूर (मैसूर जिला) आन्ध्र प्रदेश (विशाखापट्टनम पश्चिमी गोदावरी और वारंगल जिले) तथा तमिलनाडु (तिरुनलवली जिले) राज्यों में कुछ क्षेत्रों में मिलता है।

(6) ऐण्टीमनी (Antimony)—

ऐण्टीमनी को हिन्दी में सुरमा कहते हैं। यह रवेदार और सरलता से टूटने वाला पदार्थ है। यह पंजाब (काँगड़ा) और मध्य प्रदेश (जबलपुर) जिले से प्राप्त किया जाता है। अणु शक्ति में उपयोग के अतिरिक्त इसके अन्य कई उपयोग हैं जैसे बिजली की बैटरी बनाने, टाइप मेटल और गोला बारूद में इसको प्रयोग में लाते हैं।

(7) गन्धक (Sulphur)—

गन्धक का प्रयोग विस्फोटक पदार्थों के निर्माण में किया जाता है। इसके अतिरिक्त दवाइयों व कीटाणुनाशक पदार्थ बनाने में भी इसका उपयोग किया जाता है। बिहार व मैसूर राज्यों से गन्धक प्राप्त होता है। देश में गन्धक की कमी है।

भारत सरकार अणु शक्ति के सम्बन्ध में अपनी नीति अनेक बार घोषित कर चुकी है और पुनः सन् 1970 में पुष्टि की है कि भारत अणु शक्ति का प्रयोग केवल शांति के कार्यों में ही करेगा। यदि भारत में अणु शक्ति का उचित विकास किया जा सका तो शक्ति की समस्या लगभग हल हो जायेगी और देश के औद्योगिक विकास में पर्याप्त सहायता मिल सकेगी। महाराष्ट्र में तारापुर अणु शक्ति केन्द्र का निर्माण-कार्य पूरा हो चुका है जिसका उद्घाटन प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने 19 जनवरी 1970 को किया। राजस्थान (राणा सागर बाँध के निकट) और तमिलनाडु (कलपक्कम) में अणु शक्ति गृहों का निर्माण हो रहा है। इनके लिए अणु खनिजों की बड़ी मात्रा में आवश्यकता होगी। अतः देश में अणु खनिजों के विदोहन व खोज की आवश्यकता है।

भारत में खनिज विकास के सरकारी प्रयत्न
अथवा
भारत सरकार की खनिज नीति

प्रारम्भिक—

किसी भी देश के आर्थिक विकास में वहाँ के खनिज पदार्थों के विदोहन

एव उपयाग का महत्वपूर्ण योग होता है। खानो का विदोहन वास्तव मे प्रकृति की सम्पत्ति का अपहरण करना है अत खान खोदना एक प्रकार की आर्थिक डकैती (Robber Economy) कहलाती हैं। एक बार खनिज खोद कर निकाल लेने पर वह मात्रा सदव के लिए समाप्त हो जाती है। खनिज सम्पत्ति को वनो की अथवा कृषि की उपज की भाँति पुन प्राप्त नही कर सकते। खानें अक्षय नही होती, और एक बार समाप्त हो जाने पर उन्हे पुन स्थापित नही किया जा सकता है, क्योकि फिर इनका अस्तित्व सदा के लिए नष्ट हो जाता है।

खनिज-नीति की आवश्यकता—

हमारे देश म खानें राष्ट्र क हित क लिए नही वरन पूणत व्यक्तिगत लाभ की दृष्टि से खोदी जाती रही हैं। खानो का विदोहन सुव्यवस्थित ढग से नही किया जाता है, खनिजो के पूण उपयोग क साधनो की कमी है, नई खोजें करने म अनेक कठिनाइयाँ आती हैं, खानो पर सरकार का अपूण निय त्रण है अत देश म खनिज विकास वाछनीय ढग से नही हो पाया। इन सबका प्रमुख कारण है उचित खनिज नीति का अभाव। अत देश के लिए उपयुक्त खनिज-नीति की स्पष्ट आवश्यकता है।

सरकार द्वारा विकास के प्रयत्न—

यद्यपि विदेशी शासन क अ तगत सरकार ने देश के खनिज विकास पर ध्यान नही दिया किन्तु स्वत त्रता प्राप्ति के पश्चात राष्ट्रीय सरकार न इस दिशा म पर्याप्त ध्यान दिया और अनेक प्रयत्न भी किए। इन प्रयत्नो में से प्रमुख निम्न लिखित हैं —

(1) **अनेक अधिनियमो का निर्माण**—राष्ट्रीय सरकार ने सन 1948 म 'खान और खनिज नियमन तथा विकास अधिनियम (Mines and Minerals Regulation and Development Act) 'खनिज अधिनियम' 1952 (Mining Act) आदि अनेक अधिनियम बनाए जिनका उद्देश्य भारत मे खनिज-पदार्थों का उचित विकास है।

(2) **औद्योगिक नीति की घोषणा**—सरकार ने पहले 1948 मे और बाद म 1956 में औद्योगिक नीतियो की घोषणा की, जिनमे अ य बातो के अतिरिक्त खनिज नीति का भी उल्लेख है। विशेष खनिजो की खोज, उत्खनन आदि का दायित्व केन्द्रीय सरकार ने लिया।

(3) **विभिन्न सस्थाओं की स्थापना**—सरकार ने विभिन्न प्रमुख खनिजो के उपयुक्त विकास के लिए पृथक पृथक सस्थाएँ, कम्पनियाँ व निगम आदि स्थापित कर दिए हैं। इनम स कुछ ये हैं —

नेशनल मिनरल डेवलपमण्ट कारपोरेशन लि० मिनरल एडवायजरी बाड जियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, नेशनल कोल डेवलपमेण्ट कारपोरेशन इण्डियन आयल कारपोरेशन, आयल एण्ड नेचुरल गस कमीशन नशनल फ्यूअल रिसच

इन्स्टीट्यूट, हिन्दुस्तान कॉपर लि०, हिन्दुस्तान जिंक लि०, भारत एल्युमिनियम कम्पनी आदि।

(4) अधिनियमो का निर्माण—भारत सरकार ने देश के खनिज उद्योग के नियमन के लिए कुछ अधिनियम भी बनाए हैं जैसे माइनिंग एक्ट 1952।

(5) औद्योगिक नीति की घोषणा—सरकार ने पहले सन 1948 में और फिर सन् 1956 मे राष्ट्र के विकास के लिए औद्योगिक नीति घोषित की। इनमे खनिज विकास के लिए भी नीति निर्धारित की गई।

(6) विदेशी सहायता—सरकार ने देश के कुछ खनिज पदार्थों की खोज और विकास के लिए विदेशों से सहायता भी ली है। संयुक्त राज्य अमरीका सोवियत रूस, इंगलण्ड फ्रांस, जर्मनी, रूमानिया व जापान आदि उल्लेखनीय हैं।

(7) तकनीकी ज्ञान का आयात—भारत में विकसित तकनीकी ज्ञान के अभाव के फलस्वरूप सरकार ने विदेशों से अनेक बार विशेषज्ञों को आमंत्रित किया है जिन्होंने खनिज क्षेत्रों का सर्वे किया है और उनके विकास के लिए परामर्श दिए हैं।

(8) खनिज व्यापार में हस्तक्षेप—सरकार ने अनेक खनिज-पदार्थों, जैसे मैंगनीज अभ्रक, क्रोमाइट लोहा आदि के विदेशी व्यापार में रुचि ली है। अनेक खनिज पदार्थों के विदेशी व्यापार पर सरकार ने अपना एकाधिकार कर लिया है।

(9) क्षेत्रीय मण्डलो की स्थापना—सरकार ने खनिज विकास योजना के अन्तर्गत चार क्षेत्रीय मण्डलो (Zonal Councils) की स्थापना की है। ये मण्डल अजमेर कलकत्ता, नागपुर व बंगलौर में हैं। इनके कार्य क्षेत्र इस प्रकार हैं —अजमेर (अथवा उत्तरी-पूर्वी मण्डल)—इसका कार्यक्षेत्र राजस्थान, उत्तर प्रदेश पंजाब हरियाना हिमाचल प्रदेश, दिल्ली और जम्मू व कश्मीर है)। कलकत्ता (अथवा पूर्वी मण्डल)—इसका कार्यक्षेत्र पश्चिमी बंगाल, बिहार असम मणिपुर व त्रिपुरा उडीसा और अण्डमान द्वीप समूह हैं। नागपुर (अथवा मध्य मण्डल)—इसका कार्यक्षेत्र मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र व गुजरात है। बंगलौर (अथवा दक्षिणी मण्डल)—इसका कार्य क्षेत्र आन्ध्र प्रदेश तमिलनाडु और केरल राज्य है।

(10) पंचवर्षीय योजनाएँ—भारत ने नियोजित राष्ट्रीय विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ बनाई हैं। तीन पंचवर्षीय योजनाएँ समाप्त हो गई हैं। चौथी पंच वर्षीय योजना चल रही है। सरकार ने इन पंचवर्षीय योजनाओं में खनिज विकास पर भी काफी ध्यान दिया है।

पंचवर्षीय योजनाओं मे खनिज विकास

प्रथम पंच वर्षीय योजना मे खनिज विकास—

योजना आयोग ने प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में खनिज विकास के कार्य के लिए खनिज नीति के सम्बन्ध में अनेक सुझाव दिए जिनमें से प्रमुख निम्न हैं—(i) देश के विभिन्न खनिज भण्डारों का ठीक अनुमान लगाना और उनके खोज की आवश्यक व्यवस्था करना। (ii) अनेक महत्त्वपूर्ण खनिजो जैसे मैंगनीज, कच्चा

लोहा बाक्साइट की खुदाई के लिए ठेके दिये जाने से पूर्व केन्द्रीय सरकार की अनुमति लेना अनिवार्य कर दी जाय। (iii) इण्डियन ब्यूरो आफ माइन्स द्वारा खनिज उद्योग तथा खनिज व्यापार द्वारा आँकड़े एकत्रित किए जायें। (iv) खाने खोदने की प्रणाली में सुधार किया जाय। धीरे धीरे मशीनों का प्रयोग बढ़ाना चाहिए। प्रशिक्षित तथा तकनीकी व्यक्तियों की अधिक से अधिक सेवाएँ प्राप्त करनी चाहिए। (v) खनिज अनुसंधान एवं प्रशिक्षा पर अधिक बल दिया जाना चाहिए। (vi) सामरिक महत्त्व के खनिजों जैसे यूरेनियम, बेरिलियम, गन्धक की खोज और विकास पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में खनिजों की खोज के लिए एक करोड़ रुपयों की व्यवस्था की गई थी किन्तु बाद में यह राशि बढ़ाकर 2.5 करोड़ रुपये कर दी गई। इस योजना के आरम्भ में भारत की खनिज सम्पत्ति के सम्बन्ध में अपूर्ण और बहुत कम जानकारी थी अतः देश के भूगर्भ के विषय में जानकारी एवं सूचनाएं प्राप्त करना बहुत आवश्यक हो गया। अतः भारत की भूगर्भ सर्वेक्षण संस्था तथा इण्डियन ब्यूरो आफ माइन्स ने खनिज भण्डारों की स्थिति के सम्बन्ध में व्यापक सर्वेक्षण किए। खान अधिनियम 1952 के अधीन कोयला खानों के संरक्षण का भार सरकार ने अपने ऊपर ले लिया। सरकार ने एक कोयला बोर्ड की स्थापना की जो कोयले के खनन और विकास के सम्बन्ध में परामर्श देता है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के आरम्भिक वर्ष 1951 में देश में लगभग 89.20 करोड़ रुपये के मूल्य के खनिज निकाले गये जबकि सन 1956 में लगभग 106.90 करोड़ रुपये के मूल्य के खनिज निकाले गये।

द्वितीय पंच-वर्षीय योजना—

द्वितीय योजना में खनिज सम्बन्धी विकास के लिए 73 करोड़ रुपये की राशि निर्धारित की गई अर्थात् पहली योजना में व्यय की गई राशि ($2\frac{1}{2}$ करोड़ रुपये) की तुलना में लगभग 30 गुनी राशि।

द्वितीय योजना काल में देश के उद्योगों की उन्नति हुई अतः उद्योगों की आवश्यकता की पूर्ति करने के उद्देश्य से लोहा, कोयला, चूने का पत्थर आदि खनिजों का उत्पादन बढ़ाया गया।

सन् 1956 में सरकार द्वारा औद्योगिक नीति घोषित कर दी जाने के कारण अनेक महत्त्वपूर्ण खनिजों जैसे लोहा, मैंगनीज, गन्धक, सोना, ताँबा, जस्ता, सीसा, खनिज-तेल और अणु शक्ति से सम्बन्धित खनिज-पदार्थ सार्वजनिक क्षेत्र में सम्मिलित कर लिए गये।

इस अवधि में नेशनल मिनरल डवलपमेण्ट कारपोरेशन लि० की स्थापना सन् 1958 में की गई जिसका प्रमुख उद्देश्य कोयले, खनिज तेल व प्राकृतिक गैस के अतिरिक्त अन्य खनिज पदार्थों का विदोहन करना है। सन 1956 में नेशनल

कोल डेवलपमैण्ट कॉरपोरेशन की स्थापना केन्द्रीय सरकार ने की। इसी वर्ष स्टेट ट्रेडिंग कारपोरेशन की स्थापना की गई।

सन् 1961 में लगभग 181 21 करोड रुपये के मूल्य के खनिज निकाले गये।

तृतीय पचवर्षीय योजना—

इस योजना में खनिज विकास पर और अधिक ध्यान दिया गया और लगभग 478 करोड रुपये व्यय करने की व्यवस्था की गई थी किन्तु बाद में इस राशि को बढ़ाकर 662 करोड रुपये कर दिया गया। किन्तु तीसरी योजना अवधि में केवल 525 करोड रुपये ही व्यय किये जा सके।

इस योजना काल में खनिज विकास के लिए प्रमुख कार्यक्रम ये रखे गये—(i) ऐसे खनिजो और धातुओ के भण्डारो का खोज करना और स्थिति निश्चित करना जिनको, देश की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से आयात किया जाता है, (ii) कोयला, जिप्सम, लोहा, चूने का पत्थर, बॉक्साइट आदि जैसे खनिजों के अतिरिक्त भण्डार खोजना जिनकी आवश्यकता देश के उद्योगों को है, (iii) निर्यात के लिए लोहा व अन्य खनिज पदार्थों की खानों की खोज करना व विकास करना आदि।

सन 1963 में मिनरल्स एण्ड मेटल ट्रेडिंग कारपोरेशन की स्थापना केन्द्रीय सरकार ने भारतीय कम्पनी अधिनियम 1956 के आधीन की। यह निगम विभिन्न खनिज एवं धातुओं का आयात व निर्यात करता है। भारत से लौह खनिज का निर्यात केवल यही निगम करता है। इण्डियन आयल कॉरपोरेशन की स्थापना सन् 1964 में, 'भारत एल्यूमिनियम कम्पनी' की स्थापना सन 1965 में और हिन्दुस्तान जिंक लि० की स्थापना सन् 1966 में की गई।

सन् 1966 में लगभग 284 33 करोड रुपये के मूल्य के खनिज निकाले गये।

चतुर्थ पचवर्षीय योजना (1969 74)—

यद्यपि तृतीय योजना में खनिज विकास कार्यक्रमो पर जितनी राशि (662 करोड रुपये) व्यय करने का प्रावधान था उसमें कम राशि (525 करोड रुपये) ही व्यय किए जा सके। फिर भी चौथी योजना में और अधिक राशि व्यय करने का प्रावधान है। चौथी योजना में खनिज विकास कार्यक्रमो पर लगभग 717 14 करोड व्यय करने का प्रावधान किया गया है।

इस अवधि में खनिज पदार्थों के उत्पादन में वृद्धि की जायगी खनिजो के नये क्षेत्र खोले जावेंगे खनिजो के निर्यात की सम्भावनाओं में वृद्धि की जावेगी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सरकार ने खनिज विकास को निश्चित कार्यक्रम के अनुसार करने का प्रयत्न किया है, और उसमें सफलता भी मिली है। किन्तु अभी देश के खनिजों के विकास के लिए विस्तृत क्षेत्र व कार्य पड़े हुए हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 Where is Mica found in India ? What is its commercial use ? Discuss future prospects of this industry in India (R U, 1959)

2 भारत के किन भागों में लोहा और कोयला मिलता है और कितना ? इन खनिजों का औद्योगिक महत्त्व बताइये। (T D C, 1959)

3 भारत के अभ्रक और खनिज-तेलों के क्षेत्रों का विवरण दीजिए और यह बतलाइये कि ये वस्तुएँ यहाँ किस प्रकार काम में ली जा रही हैं ?

4 What minerals are found in Rajasthan ? State the steps that the Central Government and the Rajasthan Government are taking to exploit minerals in the state (T D C, 1961)

5 Account for the mineral resurces of India with special reference to coal, iron ore and mica (T D C, 1962)

6 भारत में लोह और मैंगनीज मृत्तिकाओं का वितरण, उत्पादन और उपयोग बतलाइये। (T D C, 1963)

[Discuss the distribution, production and consumption of iron and manganese ores in India]

7 भारत में अभ्रक के प्रयोग और उत्पादन का ब्यौरा दीजिये और देश में इस खनिज का वितरण बताइये। (T D C, 1964)

[Discuss the use and production of mica in India and detail distribution of the mineral in the country]

8 भारत में कोयले और लोह का वितरण बताइये और पिछले पन्द्रह वर्षों में इनके विकास पर प्रकाश डालिए। (T D C Suppl, 1964)

[Show the distribution of coal and iron in India and account for their progress during the last fifteen years]

9 'भारत खनिज दृष्टिकोण से बहुत धनी है।" इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं ? भारत में खनिज विकास के लिए परामर्श दीजिए।

(T D C 1965 Suppl, 1966)

10 'भारतवर्ष खनिज दृष्टिकोण से बहुत धनी है।' इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं ? भारत में आणविक खनिज सम्पत्ति की वर्तमान स्थिति क्या है ?

(T D C, 1967)

11 'भारत खनिज सम्पदा में समृद्ध है। क्या आप इस विचार से सहमत हैं ? बहुत महत्त्वपूर्ण खनिजों के आँकड़े दीजिए। (T D C, 1970)

[संकेत—लोहा मैंगनीज, कोयला व पेट्रोलियम के आँकड़े दीजिये।]

17

शक्ति के साधन

प्रारम्भिक—शक्ति के साधनों का महत्त्व

हेनरी फोर्ड ने एक स्थान पर कहा है कि भौतिक संस्कृति का स्रोत विकसित शक्ति है। अब हम शक्ति के युग में प्रवेश कर चुके हैं और शक्ति का महत्त्व उत्पादन को अधिक और सस्ता करने में है ताकि हम सबको सांसारिक वस्तुएँ अधिक उपलब्ध हो सकें। किसी भी देश के औद्योगिक विकास की आधार शिला विकसित शक्ति के साधन हैं। शक्ति के साधनों का महत्त्व विशेषतः औद्योगिक क्रांति के पश्चात ही विशेष रूप से प्रतीत हुआ। वर्तमान यांत्रिक युग में बिना शक्ति के साधनों के कोई राष्ट्र उन्नति नहीं कर सकता है। इतना ही नहीं, आजकल प्रत्येक व्यक्ति प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में किसी न किसी शक्ति के साधन का अवश्य ही प्रयोग करता है। अतः प्रत्येक राष्ट्र के लिए शक्ति के साधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होना ही आवश्यक नहीं वरन उनकी सुलभता, उपयोग करने की क्षमता, अनुकूलता एवं उपयोगिता भी अनिवार्य है।

जिस देश में शक्ति के साधन प्रचुर मात्रा में तथा सस्ते उपलब्ध होते हैं, वहाँ द्रुतगति से चहुँमुखी आर्थिक विकास में पर्याप्त योग मिलता है। इसके विपरीत, जिस देश में शक्ति के साधनों का अभाव हो, वहाँ अन्य बातों के अनुकूल होते हुए भी आर्थिक विकास में मंदता आ जाती है। जिस देश में शक्ति के साधन उपलब्ध हों वहाँ कृषि, उद्योग, व्यापार एवं परिवहन—सभी की सर्वाङ्गीण उन्नति की जा सकती है, क्योंकि शक्ति के साधनों की सहायता से यान्त्रिक कृषि सम्भव हो सकती है। बड़े उद्योग धन्धे, कुटीर उद्योग धन्धे, जल, थल तथा वायु के आवागमन के साधनों का विकास हो सकता है। अतः स्पष्ट है कि यदि किसी देश को शक्तिशाली और समृद्ध बनना है तो वहाँ शक्ति के साधनों का विकास करना चाहिए, अन्यथा वे औद्योगिक विकास की दौड़ में पीछे रह जाएँगे तथा उनकी शक्ति व प्रतिष्ठा विश्व के राष्ट्रों में कम हो जायगी।

शक्ति के प्रमुख साधन

भारत में औद्योगिक शक्ति के तीन प्रमुख साधन काम में लाये जाते हैं — (I) कोयला (II) पट्रोलियम और (III) जल विद्युत।

[उपरोक्त के अतिरिक्त विश्व में निम्न शक्ति के साधनों को उपयोग करने के यत्न हो रहे हैं — (क) अणु शक्ति, (ख) सूर्य की शक्ति, (ग) वायु शक्ति और (घ) समुद्री-ज्वार की शक्ति ।]

(1) कोयला

कोयले का निर्माण—

कोयले को काला हीरा (Black diamond) भी कहते हैं । ई० सी० अफरे के कथनानुसार, 'आधुनिक संस्कृति जिन साधनों पर टिकी हुई है उनमें कोयले को प्रथम स्थान मिलना चाहिए ।[1] लाखों वर्ष पहले पृथ्वी के ऊपर पेड़-पौधे, बड़े बड़े वन नष्ट हो गये और वे भूमि के गर्भ में चले गये । भीतर ही भीतर वे दबते गये भारी दबाव के कारण वे कठोर होते चले गये और उन पर पृथ्वी के भीतर की गर्मी और भूगर्भिक अन्य क्रियाओं व प्रतिक्रियाओं का ऐसा प्रभाव पड़ा कि उनका रूप कोयले में बदल गया । कोयला साधारणतः ठोस पर्तों के रूप में धरातल के समान्तर परतदार चट्टानों के रूप में मिलता है । इस पर्त को ही कोयले का पट्टा (सीम) भी कहते हैं ।

कोयले के दोष—

कोयले के प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं —

(1) सीमित भण्डार—कोयले के भण्डार सीमित हैं । जितना अंश एक बार निकाल कर उपयोग कर लिया जाता है वह सदा के लिये समाप्त हो जाता है । अतः इस पर सदा के लिए निर्भर नहीं किया जा सकता है ।

(2) भण्डार की असुविधा—कोयले को भण्डार में रखना बहुत ही असुविधा जनक होता है । खानों के पास अथवा बड़े बड़े कारखानों में तो कोयले को खुले में ही डाल देते हैं । यह वर्षा धूप और वायु से कुछ खराब हो जाता है ।

(3) अस्वच्छता—कोयले को निकालने, ले जाने व उपयोग में काफी गन्दगी हो जाती है । वह स्थान, मनुष्यों के वस्त्र आदि काले हो जाते हैं ।

(4) व्ययशील—कोयले से शक्ति प्राप्त करने में काफी व्यय हो जाता है । कोयले के यातायात में भी काफी व्यय करना पड़ता है ।

(5) खानों के निकट उद्योगों का केन्द्रीयकरण—शक्ति के अन्य साधनों के अभाव में उद्योग धन्धों में कोयले की खानों के पास केन्द्रित होने की प्रवृत्ति होती है । यह राष्ट्रीय हित में नहीं है ।

विश्व में भारत का स्थान—

विश्व में कोयला उत्पादक देशों में भारत का आठवाँ स्थान है व राष्ट्र मण्डल (Commonwealth) देशों में द्वितीय स्थान है । विश्व के कुल उत्पादन का लगभग 2% भारत उत्पन्न करता है । सबसे अधिक कोयला विश्व में संयुक्त राज्य अमरीका उत्पन्न करता है । अनुमान है कि यहाँ से विश्व के कुल कोयला उत्पादन

---

1 *Coal and Civilization*, 1925, p 2

का लगभग 40 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। दक्षिणी गोलार्द्ध में बहुत कम कोयला है।

कोयला-उत्पादक क्षेत्र—

भारत में व्यापारिक पैमाने पर सर्वप्रथम सन् 1774 में रानीगंज के सीता राम क्षेत्र से कोयला खोदा गया था। यातायात के साधन सुलभ न होने के कारण अनेक वर्षों तक इसका विकास न हो सका। इसका विकास तत्कालीन ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा अपना मार्ग सन 1885 में रानीगंज तक बना लेने के पश्चात ही हुआ। भूगर्भ तत्व के अनुसार भारत के कोयला क्षेत्रों को दो श्रेणियों में बांटा गया है— (I) गोंडवाना क्षेत्र, और (II) टरशरी क्षेत्र। गोण्डवाना में पश्चिमी बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश और आंध्र के कोयले के क्षेत्र हैं। टरशरी क्षेत्र में असम, राजस्थान, तमिलनाडु और कच्छ हैं। गोंडवाना क्षेत्र से कुल कोयला उत्पादन का लगभग 94% भाग प्राप्त होता है और शेष टरशरी क्षेत्र से।

(I) गोंडवाना क्षेत्र—

भारत के कुल कोयला उत्पादन का लगभग 90 प्रतिशत भाग पश्चिमी बिहार एवं उड़ीसा की खानों से प्राप्त होता है।

(1) पश्चिमी बंगाल रानीगंज क्षेत्र—रानीगंज की खान पश्चिमी बंगाल के बर्दवान और वीरभूमि जिलों में है। इस कोयले की ओर अंग्रेजों का ध्यान 18वीं शताब्दी में गया। वारेन हेस्टिंग्ज (Warren Hastings) के समय में दो अंग्रेजों—समर और एस० जी० हाटले ने सबसे पहले रानीगंज के वीरभूमि जिले में कोयले की खोज की। इस प्रकार भारत में सर्वप्रथम कोयला रानीगंज में ही खोदा गया। लगभग 70 वर्ष के पश्चात सन् 1843 में प्रथम खान से मैसर्स एन्ड्रयू यूल एण्ड कम्पनी (Andrew Yule & Co) की मैनेजिंग एजेंसी ने अपने अन्तर्गत बंगाल कोल क० के नाम से कोयला खोदना प्रारम्भ किया।

रानीगंज कोयले की खानें भारत में सबसे पुरानी हैं। ये खानें कलकत्ता से 240 Kms उत्तर-पूर्व की ओर लगभग 1555 वर्ग Kms (600 वर्ग मील) में विस्तृत हैं। इसके अतिरिक्त भारत में सबसे गहरी कोयले की खानें यहीं हैं। कुछ खानें तो 30 मीटर की गहराई तक पहुंच गई हैं। ये खानें सबसे अधिक पूर्व (Easternmost) में हैं व कलकत्ता से सबसे अधिक निकट हैं। झरिया की कोयले की खानों की अपेक्षा रानीगंज की खानों का क्षेत्रफल तीन गुने से भी अधिक है। यहाँ कोयले की 6 पर्तें अच्छी हैं जो प्रत्येक लगभग 15 मीटर (50 फीट) मोटी हैं। भारत के कुल कोयला उत्पादन का लगभग 33 प्रतिशत यहीं से प्राप्त होता है। भारतीय भूगर्भ सर्वे विभाग ने 1951-52 में सर्वे किया था तथा बताया कि रानीगंज कोयला क्षेत्र में लगभग 13 अरब टन कोयले का भण्डार है अर्थात सन 1928 में जो अनुमान लगाया था उससे लगभग दुगुना। वर्तमान उपभोग को देखते हुए यह कोयला कई शताब्दियों तक चल सकता है।

(2) बिहार—भारत में सबसे अधिक कोयला उत्पन्न करने वाला राज्य बिहार है। भारत के कुल कोयला उत्पादन का लगभग 50 प्रतिशत भाग यही राज्य उत्पन्न करता है। इस प्रकार पश्चिमी बंगाल व बिहार दोनों मिलकर भारत के कुल कोयला उत्पादन का लगभग 90 प्रतिशत भाग उत्पन्न करते हैं। इस राज्य की प्रमुख कोयले की खानें झरिया, बोकारो, गिरीडीह, उत्तरी व दक्षिणी करनपुरा डाल्टनगंज में हैं। ये भाग रेल द्वारा कलकत्ता व जमशेदपुर से मिले हुए हैं।

झरिया क्षेत्र—ये खानें कलकत्ता से उत्तर-पश्चिम की ओर लगभग 275 kms की दूरी पर हैं। रानीगंज से झरिया की खानें केवल 30 kms पश्चिम में



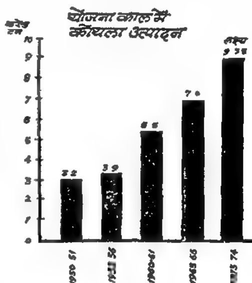
चित्र 25

है। यहाँ से उत्तम [illegible] लगभग 450 वर्ग kms क्षेत्र में फैली हुई हैं। झरिया के [illegible] किया [illegible] है। [illegible] झरिया की खानों में सन् 1894 में ही कोयला का उत्पादन शुरू किया

गया जबकि तत्कालीन ईस्ट इण्डियन रेलवे की एक ब्रांच द्वारा इसको मिला दिया गया। उस वर्ष (सन 1894) इस खान से लगभग 15 हजार टन कोयला ही खोदा गया था किन्तु केवल 10 वर्ष बाद ही (सन 1904 में) इसका लगभग 25 लाख टन हो गया। इस क्षेत्र की अनेक खानों पर जमशेदपुर व बर्नपुर के इस्पात के कारखानों का अधिकार है।

सन् 1954 में *भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग द्वारा किये गये झरिया कोयला* खानों के पुनः सर्वेक्षण के अनुसार झरिया में 600 मीटर तक सब प्रकार के कोयले की मात्रा लगभग 1 17,000 लाख टन है।

यह भाग गंगा के मैदान की सीमा पर स्थित है, जहां रेलों का जाल सा बिछा हुआ है अतः यहां की कोयला खानों का महत्व और भी अधिक हो गया है। यहां का कोयला दिल्ली से कलकत्ता तक गंगा नदी के मैदान के औद्योगिक प्रदेश में उपयोग में आता है। जमशेदपुर आसनसोल कुल्टी व कलकत्ता के लौह बाजार भी निकट हैं। यहाँ से पूर्व रेलवे द्वारा कोयला भेजा जाता है।



चित्र 26

बोकारो क्षेत्र—झरिया के पश्चिम में हजारीबाग जिले में बोकारो का कोयला क्षेत्र है। इसमें दो खानें हैं—पूर्वी और पश्चिमी बोकारो। दोनों का क्षेत्रफल लगभग 570 Kms है। यहाँ का अधिकांश कोयला रेलवे के काम आता है।

गिरीडीह क्षेत्र—यह क्षेत्र हजारीबाग जिले में बाराकर नदी की घाटी में है। यहाँ की कोयला खान केवल 28 वर्ग Kms में ही है, किन्तु यहाँ के कोयले का वर्ग भी अधिक महत्व का है क्योंकि यह उच्च कोटि का होता है। पूर्वी रेलवे के अधिकार में यह खान है।

करनपुरा क्षेत्र—यह क्षेत्र दामोदर नदी की घाटी में हजारीबाग पठार के दक्षिणी भाग में, बोकारो क्षेत्र से लगभग 3 Kms पश्चिम में है। इस क्षेत्र के दो भाग हैं—उत्तरी करनपुरा और दक्षिणी करनपुरा। उत्तरी करनपुरा का क्षेत्र बड़ा है जो लगभग 1230 वर्ग Kms में विस्तृत है, दक्षिणी करनपुरा का क्षेत्र अपना

क्षेत्र बहुत छोटा है जो केवल 195 वर्ग Kms में विस्तृत है। भारत के कुल कोयला उत्पादन का लगभग 2 प्रतिशत भाग यहाँ से प्राप्त होता है।

डाल्टनगंज क्षेत्र—बिहार के पालामऊ जिले में डाल्टनगंज के निकट कोयल की खान है। सन 1901 में इसको ईस्ट इण्डिया रेलवे से मिला दिया गया।

(3) मध्य प्रदेश—मध्य प्रदेश में कोयले के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं —

उमरिया—यह बहुत छोटा क्षेत्र है जो महानदी क्षेत्र में रीवां के निकट है और जिसका क्षेत्रफल केवल 15 वर्ग Kms ही है। यह क्षेत्र कटनी के निकट है। सन 1882 में यहां सर्वप्रथम कोयला खोदा गया था।

सोहागपुर—इसका क्षेत्र 3,110 वर्ग Kms में है, यह रीवां में है।

सिंगरौली—यह क्षेत्र भी रीवां में है। इसका क्षेत्रफल 2,330 वर्ग Kms है। खान और तेल मंत्रालय ने (6 मई) 1959 में सिंगरौली कोयला खान का पता लगने की सूचना दी थी। उन्होंने बताया कि भूगर्भ सर्वे के शास्त्रियों को सिंगरौली में 42 मीटर गहराई पर कोयले की 16 मीटर मोटी तह मिली तथा और प्रयत्न करने पर 27 मीटर मोटी नई तह भी मिली। इस पट्टी का अब तक किसी को ज्ञान नहीं था। भूगर्भ सर्वे के अनुमान के अनुसार सिंगरौली कोयला खान की दो पट्टियों में लगभग 68 करोड़ टन कोयला है। ये दोनों पट्टियां 15 वर्ग Kms में फैली हुई हैं। इस क्षेत्र में अभी और कोयला मिलने की आशा है।

भारतीय खान ब्यूरो की खोज के फलस्वरूप सिंगरौली कोयला-क्षेत्र के उत्तर-पूर्वी भाग में (सन 1965 में) कोयले के विशाल भण्डार मिले हैं। इस नये क्षेत्र का क्षेत्रफल लगभग 2,070 वर्ग Kms है। इसका अधिकांश भाग मध्य प्रदेश के सिद्धि जिले में है सुदूर उत्तर पूर्वी भाग का एक छोटा-सा अंश उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले में पड़ता है।

मध्य प्रदेश में कोयले की दो और प्रमुख खानें हैं। पहली खान पेंच घाटी में है जो सतपुड़ा पर्वत के दक्षिण में छिन्दवाड़ा जिले में है जो लगभग 260 वर्ग Kms में फैली हुई है। दूसरी खान मोहपानी क्षेत्र में है जो नर्मदा नदी के दक्षिण में नरसिंह में है।

उपरोक्त के अतिरिक्त मध्य प्रदेश के कोरबा जिले में भी कोयले की खान का अभी पता चला है। यह खान लगभग 520 वर्ग Kms में फैली हुई है। यहाँ प्रति वर्ग मील में लगभग 60 लाख टन कोयला है।

(4) आन्ध्र—हैदराबाद नगर से लगभग 235 Kms दूर गोदावरी की घाटी में कोयले का प्रमुख क्षेत्र सिंगरेनी है। यह कोयला दक्षिण की रेलों तथा कारखानों में काम आ जाता है।

(5) महाराष्ट्र राज्य—सन् 1956 के राज्य-पुनर्गठन के पूर्व महाराष्ट्र राज्य (पूर्वकालीन बम्बई राज्य) में कोयले का नितान्त अभाव था किन्तु अब इसमें पूर्वकालीन मध्य प्रदेश के कुछ कारखाना-क्षेत्र सम्मिलित हो गये हैं। महाराष्ट्र में वर्धा

नदी की घाटी म कायले की अनेक खानें हैं। इन खाना म चादा जिले की खानें अधिक महत्त्व की है, जिनका प्रमुख केन्द्र बलालपुर है।

नागपुर से लगभग 20 Kms दूर कामटी म एक सरकारी कोयले की खान है। सरकारी तौर पर की गई एक घोषणा (जनवरी 1965 मे) के अनुसार यहाँ लगभग 70 50 कराड टन कोयला होने का अनुमान है, कोयले के ये भण्डार 5 विभिन्न कोयला क्षेत्रो म पाये गय हैं और 450 मीटर की गहराई तक हैं। इसमे 31 वग Kms के छोटे से क्षेत्र मे ही 22 70 कराड टन कोयले का होना प्रमाणित हो चुका है।

नागपुर के निकट उमरेर म एक नई कोयले की खान का पता अप्रेल 1963 में लगा है। महाराष्ट्र राज्य मे यह सबसे बडी कोयले की खान होगी। इसकी 4 तहो म 7 करोड टन कोयला होने का अनुमान है। राष्ट्रीय कोयला निगम द्वारा महाराष्ट्र म चलाई जाने वाली यह प्रथम खान होगी। अकोला, भुसावल और अन्य स्थाना के बिजलीघरा और रत्नगिरि के लोह कारखाने को उमरेर से ही कोयला उपलब्ध किया जावेगा। गुजरात की कुछ कपडा मिलों को भी यहीं से कोयला दिया जायगा।

(II) टरशरी क्षेत्र—

भारत मे टरशरी युग का कोयला बहुत कम पाया जाता है। अनुमान है कि देश के कुल कोयला उत्पादन का लगभग 6 प्रतिशत भाग ही, यह कोयला प्राप्त किया जाता है। असम और राजस्थान म ऐसा ही कोयला पाया जाता है। इसके अतिरिक्त मद्रास, गुजरात व कच्छ म भी कुछ वर्षों पूव टरशरी युग की कोयले की खानें मिली हैं।

(1) **राजस्थान**—इस राज्य मे केवल बीकानेर डिवीजन म बीकानेर नगर से लगभग 12 Kms दूर पलाना म भूरे कोयले (लिग्नाइट) की खान है। यहा सन 1898 से कोयला निकाला जा रहा है।

(2) **असम**—इस राज्य क लखीमपुर और शिवसागर जिलो म लिग्नाइट कोयला पाया जाता ह। यहाँ सबसे बडा क्षेत्र **माकूम** (स्थिति 27 15, उत्तर, 95 45 पूव) है जा लगभग 130 वग Kms म फला हुआ है। यहाँ से सवप्रथम सन 1881 म असम रलवेज एण्ड ट्रेडिंग कम्पनी द्वारा कोयला निकाला गया था। यहाँ का कोयला उच्च कोटि का है जिसका उपयोग रेलवे व चाय उद्योग म होता है।

(3) **कच्छ**—यहाँ उमरसर क्षेत्र म लिग्नाइट कायले की खानें अभी पाई गई हैं। इस क्षत्र की खाना म बहुत अधिक मात्रा मे कोयला होने का अनुमान नही है।

(4) **तमिलनाडु**—अभी हाल ही म तमिलनाडु राज्य के अन्तगत दक्षिण अरकाट जिले म मद्रास से लगभग 210 Kms दक्षिण म स्थित निवेली स्थान पर लिग्नाइट कोयला पाया गया है। इससे बहुत आशाएँ हैं। यह दक्षिण म सवत्र विकास के लिए क्षितिज उन्मुक्त करेगा और कोयले तथा बिजली के अतीत के अभाव

को दूर करने में सहायक होगा जिसने इस समस्त क्षेत्र की आर्थिक प्रगति को अवरुद्ध कर रखा है।[1]

नियेली के लिग्नाइट के भण्डार का अनुमान दो अरब टन का है। किन्तु वर्तमान उत्खनन कार्यक्रम का लक्ष्य केवल 35 लाख टन प्रतिवर्ष उत्पादन का है। प्रथम दौर के लिए 15 वर्ग Kms का क्षेत्र चुना गया है जिसमें 20 करोड़ टन लिग्नाइट होने का अनुमान है। नियेली लिग्नाइट की विशेषता है इसके कोयले की उत्कृष्ट किस्म।

इस खान से तमिलनाडु, आन्ध्र, केरल तथा मैसूर राज्यों की उन्नति के नये द्वार खुल गये हैं। कारखानों को चलाने के लिए दक्षिण भारत में कोयले का जो अभाव है, उसकी बहुत कुछ पूर्ति हो सकेगी। हजारों मील दूर बिहार व पश्चिमी बंगाल से कोयला लाने का व्यय भी बच जायगा।

कोयले का उत्पादन—

भारत में पंचवर्षीय योजना-काल में कोयले का उत्पादन निम्न तालिका[2] से स्पष्ट होता है —

वर्ष	कोयले का उत्पादन (करोड़ टन)
1950 51	3 2
1955 56	3 9
1960 61	5 5
1965 66	7 0
1966 67	7 1
1968 69	7 2
1969 70	7 5
1973 74	9 35 (लक्ष्य)

यह ध्यान रहे कि इसमें लिग्नाइट कोयले का उत्पादन सम्मिलित नहीं है। सरकारी क्षेत्र में कोयले के उत्पादन पर देख रेख 'राष्ट्रीय कोयला विकास निगम (प्रा०) लि०' [The National Coal Development Corporation (Private Ltd)] द्वारा होती है। यह निगम केन्द्रीय सरकार का है जिसकी स्थापना अक्टूबर 1956 में की गई थी।

कोयले की खानों में 4 25 लाख से भी अधिक मजदूर लगे हुए हैं। इनकी साप्ताहिक नकद आमदनी का औसत 26 75 रुपये है। मजदूर प्रति सप्ताह 48 घण्टे काम करता है।

कोयले का प्रयोग—

कोयला उत्पादन का सबसे अधिक भाग (लगभग 35 %) रेल काम में आती है और दूसरा स्थान इस्पात उद्योग का है। इसके अतिरिक्त विद्युत उत्पादन व अन्य उद्योगों में इसका प्रयोग होता है।

[1] Lignite in South Arcot Madras by M S Krishnan Indian Minerals July

[2] Source Pre Budget Economic Survey presented to Parliament on 24 Feb 1970 by our Prime Minister

कोयले का व्यापार—

भारत कोयले का निर्यात भी करता ह और थोडी मात्रा म आयात भी। विभाजन के फलस्वरूप पाकिस्तान मे कोयले की बहुत कमी हो गई। अत भारतवर्ष पाकिस्तान को काफी कोयला भेजता है। इसके अतिरिक्त दक्षिणी कोरिया, जापान बर्मा लका व अन्य निकटवर्ती देशो को भी भारत कोयला निर्यात करता है। भारत कोयले का एक बडा निर्यातक कभी नही हो सकता है।

परन्तु आजकल भारत के सामने कोयले के निर्यात व्यापार मे एक कठिनाई उपस्थित हो गई है—और वह है प्रतिस्पर्धा। दक्षिणी अफ्रीका, आस्ट्रेलिया व कुछ अशो तक सयुक्त राज्य अमरीका हमारे प्रतिद्वन्द्वी हैं। भारत मे बहुत थोडी मात्रा मे कोयला बम्बई बन्दरगाह द्वारा आयात किया जाता है।

समस्याएँ—

वसे तो भारतीय कोयला उद्योग के सम्मुख अनेक समस्याएँ हैं, किन्तु उनमे से प्रमुख निम्नलिखित हैं —

(1) **राष्टीयकरण की समस्या**—कोयला उद्योग पर राष्ट्रीयकरण की तलवार लटक रही है। कोयले के उद्योग के सम्बन्ध म जो कमेटी बैठी थी उसने कोयले की खानो के राष्ट्रीयकरण करने के पक्ष म सरकार को परामश दिया है। सरकार भी इनका राष्ट्रीयकरण करना चाहती है। अत इस आशका से कोयला उद्योग विचलित हो उठा है इस उद्योग मे पूजीपति अब विनियोग नही कर रहे हैं। इस समय राज्य यवस्था म ।। कोयले की खाना का सचालन हो रहा है।

(2) **यातायात की समस्या**—कोयला उद्योग के सम्मुख यातायात की समस्या बडी कठिन है। भारत मे कोयले की खानो का समान वितरण न होकर एक ही क्षेत्र म प्राय केन्द्रित होने के कारण कोयले को एक स्थान से दूर के स्थानो जैसे—अहमदाबाद, बम्बई आदि को ले जान म यय बहुत पडता है। इसके अतिरिक्त यातायात की सुविधाए अपर्याप्त हाने के कारण खानो से निकाला हुआ कोयला बाहर पडा रहता है। पिछले कुछ वर्षों मे इसी कठिनाई के कारण पश्चिमी बगाल व बिहार में खाना के पास इस प्रकार कोयले का लाखो मन स्टाक पडा रहा।

(3) **भाडे की समस्या**—कोयले को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जान म भाडा अधिक लगता है जिसके परिणामस्वरूप देश के उत्तरी व पश्चिमी क्षेत्रो (Zones) म कोयला भेजने का व्यय कोयल के मूल्य से अधिक होता है।

(4) **प्राचीन तरीके**—भारत मे कोयले की खानो से कोयला प्राचीन तरीका स ही निकाला जाता है इससे बहुत सा कोयला नष्ट हो जाता है और कोयला निकालने म व्यय भी अधिक होता है।

(5) **उपभोग समस्या**—भारत म प्रति व्यक्ति कोयला उपभोग औसत रूप स

देश	हडरवेट
इगलैण्ड	84
स० रा० अमरीका	80
जापान	8
भारत	2

बहुत ही कम है इसम वृद्धि करना आवश्यक है। यह तालिका विभिन्न देशो म प्रति व्यक्ति कोयला उपभोग दर्शाती है।

(6) जल विद्युत से प्रतिस्पर्धा—देश म जल विद्युत का द्रुतगति से विकास हो रहा है जो शक्ति के साधन के रूप म प्रिय होती जा रही है। किन्तु देश की आवश्यकता को देखते हुए, कोयले पर निकट भविष्य म कोई विशेष प्रभाव नही पडेगा।

(7) श्रमिको की समस्या—भारत म कोयले की अधिकाश खानें ऐसे क्षेत्र मे स्थित हैं जहाँ जनसंख्या कम है अत देश के अन्य भागो से श्रमिक आते हैं जो अधिक पारिश्रमिक लेते हैं। भारत म कोयले की खानो म 4 27 लाख श्रमिक काय कर रहे हैं।

इसके अतिरिक्त कोयले की अनेक खान अब पर्याप्त गहरी हो गई हैं नीचे गर्मी बहुत अधिक होती है हवा की कठिनाई अधिक होती है अँधेरा कष्ट होना है अत प्रकाश की भी समस्या है।

कोयला उद्योग एव पचवर्षीय योजनाएँ—

द्वितीय पचवर्षीय योजना म 6 करोड टन कोयला खोदने का लक्ष्य रखा था किन्तु यह लक्ष्य पूरा न हो सका क्योंकि 31 माच 1961 को समाप्त द्वितीय योजना के अन्तिम वष म 5 514 करोड टन कोयला खोदा गया। दूसरी योजना का लक्ष्य तीसरी योजना के प्रथम वष के समाप्त होने पर (31 माच 1962) केवल 5 523 करोड टन कोयले का उत्पादन किया गया। इस प्रकार पूरे वष म कवल 9 लाख टन ही अधिक कोयले का उत्पादन हुआ। अत उत्पादन लक्ष्य प्राप्त करन म 77 लाख टन कोयले की कमी रही।

तृतीय पचवर्षीय योजना क लिए कोयले का उत्पादन लक्ष्य 9 7 करोड मीटरिक टन रखा था।[1] इस कम कर बाद म 10 47 करोड मीट्रिक टन कर दिया गया था किन्तु अब इसे घटाकर 7 6 करोड मीट्रिक टन कर दिया गया है। चौथी पचवर्षीय योजना म उत्पादन लक्ष्य 9 15 करोड टन रखा गया है।

यहाँ यह बतला देना भी आवश्यक है कि हमारे देश म कोयले की माँग म और भी अधिक वृद्धि होगी। इसका कारण यह है कि कोयला लोहे व इस्पात के तीन नये कारखाना के लिए चाहिए। इसके अतिरिक्त टाटा आयरन कम्पनी (जमशेदपुर) के कारखाना तथा इण्डियन आयरन कम्पनी (बनपुर) के कारखाने का भी विस्तार हो गया है अत वहाँ भी कोयले का खपत म अवश्य वृद्धि होगी।

कोयले को पश्चिमी देशों ने काले सोने (Black Gold) से टीक ही उपमा दी है। आज के औद्योगिक युग म वर्तमान म भी अधिक कामना पनप है।

1 सरकारी क्षेत्र म 3 5 करोड टन और निजी क्षेत्र म 6 2 करोड

(II) खनिज तेल
(Petroleum)

खनिज तेल का महत्त्व, अर्थ एवं इतिहास—

महत्त्व—देश के समन्वित तथा सतुलित आर्थिक विकास मे अन्य तत्त्वो के साथ साथ, खनिज-तेल उद्योग का अपना ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक युग में तो सभी विकासोन्मुख देश इसे आर्थिक विकास का एक अभिन्न अंग मानते है और यह विचारधारा है भी शत प्रतिशत सत्य क्योंकि खनिज तेल के विकास के बिना सर्वांगीण आर्थिक विकास की कल्पना नही की जा सकती।

अर्थ—'पेट्रा' और 'ओलियम' दो लटिन शब्दो से मिलकर 'पेट्रोलियम' शब्द बना है। पैट्रा का अर्थ है चट्टान और 'ओलियम' का अर्थ है 'तेल'। इस प्रकार पेट्रोलियम का शाब्दिक अर्थ है चट्टानी तेल।

इतिहास—यद्यपि आधुनिक पेट्रोलियम उद्योग नया ही है किन्तु मानव सभ्यता के उदय से करोडो वर्ष पूर्व खनिज-तेल के भण्डारो का निर्माण होने लगा था। कुछ तेल-स्रोत तो पाँच करोड वर्ष से भी अधिक प्राचीन है। पेट्रोलियम का ज्ञान मनुष्यो को कब से हुआ, यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता है। अनेक प्राचीन ग्रन्थो मे पैट्रोलियम का उल्लेख तो मिलता है, किन्तु स्पष्ट वर्णन नही मिलता है।

लार्ड प्लेफेयर (Lord Playfair) प्रथम व्यक्ति थे जिन्होने 19वीं शताब्दी के मध्य मे पेट्रोलियम से प्राप्त विभिन्न अंशो की उपयोगिता बताई। किन्तु उस समय पैट्रोलियम अधिक मात्रा मे उपलब्ध नही था। इसके पश्चात आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व सन् 1859 मे कर्नल ड्रेक नामक व्यक्ति ने जमीन से तेल निकालने के लिए प्रथम तेल कूप पनसिलवनिया में खोदा।

तेल उत्पत्ति—

पैट्रोलियम प्राय परतदार चट्टानों मे पाया जाता है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि तैल की उत्पत्ति पशु जीवन मे हुई है जो कि प्राचीन समय मे नदियो के डेल्टा, समुद्रो तथा झीलों मे दब गये थे। सबसे मान्य धारणा यह है और व्यवहार मे भी इसकी पुष्टि होती है कि पट्रोल ऐसी जगह होता है जहाँ कभी समुद्र (खारा पानी) और जैविक द्रव्य रहे हो।

भारत का विश्व मे स्थान—

भारत मे खनिज पदार्थों के मूल्य की दृष्टि से पट्रोलियम का पाचवाँ स्थान है। विश्व में पेट्रोलियम उत्पादक देशों मे भारत का 12वाँ स्थान है। उत्पादन की दृष्टि से देशों का क्रम इस प्रकार है—सयुक्त राज्य अमरीका वेनज्युला (दक्षिणी अमरीका) रूस साउदी अरब ईराक, मक्सिको ईरान पूर्वी द्वीपसमूह रूमानिया, कनाडा बर्मा व भारत। विश्व मे सबसे अधिक पट्रोलियम सयुक्त राज्य अमरीका से प्राप्त होता है। दूसरा स्थान सोवियत रूस का है।

ब्रिटिश पट्रोलियम सघ द्वारा किये गये सर्वेक्षण के अनुसार कुछ ... पूर्व

विश्व के पैट्रोलियम उत्पादन का 48 प्रतिशत अमरीका, 20 प्रतिशत मध्यवर्ती देश, 19 प्रतिशत लेटिन अमरीका, 10 प्रतिशत पूर्वी यूरोप देश तथा 3 प्रतिशत अन्य देशो से प्राप्त हुआ। भारत मे पट्रोल के कुल विश्व उत्पादन का केवल 0 4 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है।

उत्पादन क्षेत्र—

भारत म सवप्रथम सन् 1867 म उत्तरी पूर्वी असम म माकुम नामक स्थान पर पट्रोलियम मिला, किन्तु यातायात के साधनो के अभाव मे सन 1882 तक खुदाई नही हो सकी।

(1) असम क्षेत्र—भारत म इस समय तेल का प्रमुख केन्द्र केवल एक क्षेत्र असम राज्य मे ही है। यह क्षेत्र असम मे हिमालय के पूर्वी किनारे पर स्थित है। यह असम के उत्तरी-पूर्वी किनारे से ब्रह्मपुत्र व सूरमा की घाटिया के पूर्वी किनारे तक लगभग 320 Kms तक फैला हुआ है। तेल क्षेत्रो का यह सिलसिला सुमात्रा, जावा और बोर्नियो तक चला गया है। वास्तव म यह क्षेत्र प्राचीन टेथिस सागर की घाटिया के स्थान है। असम राज्य म प्रमुख तेल क्षेत्र निम्नलिखित हैं —

(क) डिगबोई क्षेत्र—ऊपरी असम के लखीमपुर जिले म भारत का तेल नगरी डिगबोई है। तेल उत्पादन की दृष्टि से असम राज्य म डिगबोई क्षेत्र अत्यन्त महत्वशील है। यहाँ तेल प्रदेश का क्षेत्रफल लगभग 6 वर्ग Kms है। इस क्षेत्र मे लगभग 500 तेल के कुँए हैं। यहाँ तेल 450 मीटर से 1525 मीटर तक की गहराई तक मिलता है। डिगबोई मे सवप्रथम सन् 1890 म तेल मिला था। सन् 1925 तक यहां 125 तेल के कुँए हो गये। यहाँ असम तेल कम्पनी[1] द्वारा तेल निकाला जाता है और पाइप लाइनो द्वारा डिगबोई के तेल शोधक कारखाने मे भेज दिया जाता है। इस क्षेत्र म दो अन्य केन्द्र—बप्पापोंग और हसापोंग—हैं। भारत का प्रमुख तेल क्षेत्र अभी असम ही है।

लखीमपुर क्षेत्र के अतिरिक्त असम राज्य म ही सूरमा नदी की घाटी मे (बदरपुर और मसीमपुर) घटिया किस्म का थोडा तेल प्राप्त होता है।

(ख) नहरकटिया क्षेत्र—यह डिगबोई से लगभग 40 Kms दूर दक्षिण पश्चिम म है। ऊपर बताया जा चुका है कि सवप्रथम सन् 1867 म उत्तरी-पूर्वी असम म माकुम नामक स्थान पर पट्रोलियम मिला। असम आयल कम्पनी गत 60 वर्षों से भी अधिक समय से असम म तेल की खोज कर रहा है। इस डिगबोई और बदरपुर म तेल मिला। इसके पश्चात् सन् 1911 से लगातार दो सौ से भी अधिक तेल-कूप खोदने के बाद सन् 1953 म यह कम्पनी नहरकटिया (असम) म तेल क्षेत्र का पता लगा पाई। नहरकटिया क्षेत्र से तेल निकाला जा रहा है। नवीन

---

[1] असम तेल कम्पनी (The Assam Oil Co) की स्थापना 3 10 लाख पौण्ड की पूँजी से अप्रैल 1899 में हुई थी।

अनुमानो के अनुसार इस क्षेत्र में 2 85 करोड टन खनिज तेल है। इस क्षेत्र म 55 कुँए खोदे जा चुके हैं जिनमे से 47 तेल के, 3 गैस के और 9 सूखे कुँए हैं। शेष कुँओ का अभी परीक्षण किया जा रहा है। इस क्षेत्र स जो तेल निकाला जा रहा है उसे गोहाटी के निकट नूनमती और बिहार म बरौनी के कारखानो में साफ करने भेज दिया जाता है। यह असम के लिए भविष्य की आशा है।



चित्र 27

असम के तेल का क्षेत्र कलकत्ता से रेल व नदियों द्वारा मिला हुआ है। अभी तक ये मार्ग पूर्वी पाकिस्तान में होकर गुजरते थे, अत अब पश्चिमी बंगाल और असम के मध्य रेल मार्ग बना दिया गया है।

(ग) मोरान क्षेत्र—यह तेलोत्पादक क्षेत्र नहरकटिया क्षेत्र के दक्षिण-पूर्व की ओर लगभग 40 Kms की दूरी पर है। यहाँ तेल अधिक गहराई पर मिलने के कारण उत्पादन में कठिनाई पड़ती है।

स्थापित की है। सोवियत रूस ने इस शोधनशाला के निर्माण के लिए 10 करोड रूबल का ऋण दिया है। पहले इसकी शोधन-क्षमता 20 लाख टन वार्षिक थी। किन्तु अब इसकी क्षमता 36 लाख टन वार्षिक कर दी गई है। इस शोधनशाला में 38 60 करोड़ रुपये विनियोग किये गये हैं। यह शोधनशाला नहरकटिया (असम) से मिलने वाले अशोधित तेल को साफ करती है। असम से बरौनी तक (लगभग 750 kms) पाइप लाइन डालने का कार्य पूरा हो गया है, जिससे तेल आता है। इस शोधनशाला का निर्माण पूरा हो चुका है।

(3) कोयली तेल शोधनशाला (गुजरात)—यह तेल शोधनशाला बड़ौदा से लगभग 10 kms दूर कोयली नामक स्थान पर सोवियत रूस सरकार के सहयोग से स्थापित की गयी है। यह अङ्कलेश्वर-क्षेत्र के तेल क्षेत्रों से प्राप्त तेल को साफ करती है। इसकी पहले शोधन-क्षमता 20 लाख टन वार्षिक थी, किन्तु अब यह क्षमता बढ़ा कर 30 लाख टन वार्षिक कर दी गई है। इस शोधनशाला में लगभग 30 4 करोड़ रुपये विनियोग किये गये हैं।

(4) कोचीन तेल शोधनशाला (केरल)—राजकीय क्षेत्र में चौथी शोधनशाला केरल राज्य में कोचीन में स्थापित की गयी है। यह शोधनशाला भारत सरकार ने अमरीका की फ़िलिप्स पट्रोलियम कम्पनी के सहयोग से स्थापित की है। इस सम्बन्ध में इस कम्पनी व भारत सरकार के मध्य 27 अप्रल 1963 को एक समझौता हुआ था। इस समझौते के अनुसार एक नई कम्पनी की स्थापना की गई है जिसमें 51 प्रतिशत हिस्से भारत सरकार के हैं। इस शोधनशाला की वार्षिक क्षमता इस समय 25 लाख टन है। इस शोधनशाला में लगभग 26 5 करोड़ रुपये विनियोजित हैं। इस शोधनशाला का निर्माण 1966 में पूरा हो गया।

(5) मद्रास तेल शोधनशाला—मद्रास के निकट तेल शोधनशाला की स्थापना के लिए भारत सरकार तथा नेशनल ईरानियन आयल कम्पनी के साथ तहरान में एक समझौता हुआ जिसके अनुसार इस शोधनशाला की स्थापना नेशनल ईरानियन आयल कम्पनी तथा अमरीकी इन्टरनेशनल आयल कम्पनी द्वारा की गई है। यहाँ मुख्यतः ईरान से आयात किए गये तेल को साफ किया जाता है। तेल की खोज के लिए ईरान को 27 क्षेत्रों में विभाजित कर दिया गया है, प्रत्येक का क्षेत्रफल लगभग 65 हजार वर्ग किलोमीटर है। क्षेत्र संख्या एक में जिसमें भारत को पट्टे पर जमीन दी गई है 3 अरब से 6 अरब टन तक तेल पाये जाने की सम्भावना है। इस तेल खोज समझौते के अनुसार ईरान व खोजने वाले देश के बीच लाभ 75 व 25 के अनुपात में बांटा जाता है। मद्रास तेल शोधनशाला की तेल शोधन क्षमता लगभग 25 लाख टन वार्षिक है। इस शोधनशाला में 30 करोड़ रुपये विनियोग किए गये हैं।

(6) हल्दिया तेल शोधनशाला (प० बंगाल)—यह शोधनशाला कलकत्ता के निकट हल्दिया क्षेत्र में स्थापित की जा रही है। इसकी वार्षिक शोधन क्षमता

35 लाख टन होगी। यह शोधनशाला फ्रास और इटली की कम्पनियो के सहयोग से स्थापित की जा रही है। इस शोधनशाला मे 42 करोड रुपये विनियोग किये जाने की सम्भावना है।

तेल शोधनशालाओ मे विनियोग एव क्षमता

तेल शोधनशाला	विनियोग (करोड रु० मे)	वार्षिक क्षमता (लाख टन म)
निजी क्षेत्र मे—		
1 डिग्बाई (आसाम)		5 0
2 ट्राम्बे (एस्सो)	17 4	35 0
3 ट्राम्बे (बर्मा शल)	32 2	47 5
4 विशाखापट्टनम (कालटैक्स)	17 0	16 0
निजी क्षेत्र का योग	66 6	103 5
सावजनिक क्षेत्र मे—		
1 नूनमाटी	17 7	8 0
2 बरौनी	38 6	36 0
3 कोयली	30 4	30 0
4 कोचीन	26 4	25 0
5 मद्रास	30 0	25 0
सावजनिक क्षेत्र का योग	143 1	124 0
निजी क्षेत्र का योग	66 6	103 5
कुल योग	209 7	227 5
हल्दिया (निर्माणाधीन)	42 0	35

भारत मे पट्रोलियम वितरण व्यवस्था—

भारत मे इस समय पट्रोलियम एव पट्रोलियम पदार्थो के वितरण एव विक्रय के लिए चार प्रमुख कम्पनियाँ हैं —इण्डियन आयल कॉरपोरेशन (I O C) बर्मा शल, एस्सो और कालटक्स।

इण्डियन आयल कारपोरेशन—पैट्रोलियम एव पट्रोलियम पदार्थो के वितरण एव विक्रय के लिए सन 1959 म इण्डियन ऑयल कम्पनी की स्थापना की गई। यह पूणत सरकारी कम्पनी थी। सावजनिक क्षत्र मे तल शोधक कारखानो और विक्रय व्यवस्था मे समन्वय स्थापित करने के हेतु दो सरकारी कम्पनिया—इण्डियन रिफाइनरीज लि० और इण्डियन आयल कम्पनी का विलीनीकरण (Merger) करके एक नई कम्पनी—इण्डियन आयल कॉरपोरेशन—की स्थापना सन् 1964 म की गई। यह कारपोरेशन भी पूणत सरकारी है। इस कारपोरेशन के दो विभाग हैं—तेल शोधन

विभाग और विपणन विभाग (Marketing Division)। इस कारपोरेशन की अधिकृत पूंजी अब 85 करोड रुपये है। इसमे इस समय 725 करोड रुपये विनियोग हैं और अनुमान है कि सन 1980 तक इसम 2150 करोड रुपये विनियोग हो जावेंगे।

यह उल्लेखनीय है कि इस समय (सन 1970 में) भारत के पट्रोलियम बाजार का लगभग 48 प्रतिशत भाग इसी निगम के पास है। इस कॉरपोरेशन के द्वारा सचालित इस समय प्रमुख पैट्रोलियम पाइप लाइन हैं—बरौनी स कानपुर, बरौनी से हल्दिया, गोहाटी से सिलीगुडी और कोयली से अहमदाबाद। बम्बई से पूना तक पाइप लाइन बिछाने का काय आरम्भ किया जा रहा है जिस पर लगभग 6 करोड रुपय व्यय आने का अनुमान है।

अब यह निजी क्षत्र के गोहाटी, बरौनी व कोयली तथा सावजनिक क्षेत्र के मद्रास तथा कोचीन तेल शोधक कारखानो के पट्रोल व पट्रोल पदार्थों का वितरण व विक्रय करता है। हल्दिया तेल शोधक कारखाने के पट्रोल आदि के वितरण व विक्रय की व्यवस्था भी यही कारपोरेशन करेगा।

(III) जल शक्ति के ससाधन
(Water Power Resources)

किसी भी देश की आर्थिक उन्नति शक्ति के सस्ते साधनों पर ही निभर होती है। आधुनिक युग म यह बात स्पष्ट रूप म दिखाई दती है कि जिन देशा ने सचालन शक्ति को बढा लिया है व ही औद्योगिक उन्नति कर सके हैं। रूस और जापान की उन्नति उनकी बढती हुई शक्ति के कारण ही हुई है। उद्योग धन्धो के लिए सस्ती शक्ति की आवश्यकता होती है और वह जल से प्राप्त की जा सकती है। कोयले तथा पैट्रोलियम के भण्डार खत्म हो सकते हैं किन्तु जल विद्युत का अक्षय भण्डार होता है। जल विद्युत शक्ति कोयले क धुएँ तथा अन्य अस्वास्थ्यकर प्रभावों स मुक्त होता है। अत इस 'श्वेत कोयला (White coal) भी कहते हैं क्योंकि बहता हुआ पानी श्वेत दिखाई पडता है और कोयले की भांति शक्ति उत्पन्न करने के काम आता है। श्वेत कोयले का प्रमुख तत्व यह है कि कोयले की भांति यह अविनिष्ट नही है। यद्यपि देश म कोयले व पट्रोलियम क वितरण की दृष्टि स प्रकृति कृपण है, किन्तु जल विद्युत स्रोतो की भरमार है।

भाप के इजन द्वारा चलाये जाने वाले डायनमो द्वारा भी विद्युत का निर्माण किया जाता है परन्तु इसम कोयले की आवश्यकता होती है। इस प्रकार की विद्युत को थमल विद्युत कहते हैं।

जल विद्युत के तुलनात्मक लाभ—

जल विद्युत क आविष्कार न विश्व क औद्योगिक क्षेत्र म क्रान्तिकारी परिवतन कर दिये हैं। जल विद्युत शक्ति अन्य प्रकार की प्रचलित शक्तियों स अत्यन्त श्रेष्ठ है। कोयले व पट्रोल की तुलना म जल विद्युत क निम्नलिखित प्रमुख लाभ हैं —

(1) असीमित पूर्ति—कोयले व पट्रोल में सबसे बड़ा दोष यह है कि जितना अंश एक बार निकालकर उपयोग कर लिया जाता है वह सदा के लिए समाप्त हो जाता है, अतः उन पर सदा के लिए निर्भर नहीं किया जा सकता। किन्तु जल विद्युत की शक्ति का वास्तव में अक्षय कोष है क्योंकि वर्षा द्वारा सदैव जल प्राप्त होता रहेगा जिससे जल विद्युत तैयार होती रहेगी।

(2) स्वच्छता व सुविधा—कोयले व पट्रोल के धुएँ का स्वास्थ्य पर खराब प्रभाव पड़ता है, किन्तु जल विद्युत इससे मुक्त होती है। इसके अतिरिक्त कोयले आदि को निकालने ले जाने व उपयोग में गन्दगी हो जाती है किन्तु जल विद्युत को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने व उपयोग में स्वच्छता व सुविधा के गुण पाये जाते हैं।

(3) कम मनुष्यों की आवश्यकता—कोयले व पट्रोल को प्राप्त करने व उसमें शक्ति प्राप्त करने में बहुत श्रमिकों की आवश्यकता होती है जबकि जल विद्युत शक्ति उत्पादन में अपेक्षाकृत कम व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। अतः जिन देशों में जनसंख्या कम है वहाँ तो यह बहुत ही लाभप्रद है।

(4) भण्डार की सुविधा—कोयले व पट्रोल का भण्डार करने के लिए बहुत अधिक स्थान की आवश्यकता होती है किन्तु जल विद्युत के लिए शक्ति गृह ही पर्याप्त होता है।

(5) अधिक शक्ति का उत्पादन—जल से शक्ति कोयले की अपेक्षा अधिक प्राप्त होती है। अनुमान है कि 4 टन कोयले से प्राप्त होने वाली शक्ति एक अश्व शक्ति विद्युत के बराबर होती है।

(6) कम गर्मी—जल विद्युत से यद्यपि शक्ति तो अधिक उत्पन्न होती है किन्तु कोई विशेष गर्मी उत्पन्न नहीं होती है। कारखानों व रेल के इंजन आदि में देखा गया है कि कोयले से शक्ति तो उत्पन्न होती है किन्तु गर्मी इतनी अधिक उत्पन्न होती है कि पास में खड़ा रहना कठिन होता है, किन्तु जहाँ जल विद्युत काम में लाई जाती है, वहाँ का वातावरण इतना गर्म नहीं होता है।

(7) कोयले के उपभोग में कमी—जल विद्युत के अधिक प्रयोग से दो दिशाओं में लाभ होते हैं। प्रथम कोयले की बचत होती है, जिसके कारण संकट के समय उसका उपयोग हो सकता है। द्वितीय कोयला स्थानान्तरण में संलग्न यातायात के साधनों का उपयोग [redacted]य वस्तुओं के ढोने में किया जा सकता है।

(8) स्थानान्तरण में कम व्यय—कोयले व पैट्रोल की अपेक्षा जल विद्युत को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में तुलनात्मक रूप में बहुत ही कम व्यय होता है। हाँ आरम्भ में खम्भे व तार लगाने में व्यय अवश्य ही होता है।

(9) रेल आदि की गति में वृद्धि—यातायात के क्षेत्र में भी जल विद्युत के प्रयोग ने लाभ पहुँचाया है। विद्युत के प्रयोग से रेलगाड़ियों की गति और भी तेज

जो जा सकता है। पहाड़ी भागों में सुरंगों आदि में रेलों के संचालन में जल विद्युत अधिक माध्यम है। इसी प्रकार सस्ती जल विद्युत से बड़े शहरों में ट्राम गाड़ियों का संचालन एवं मकानों को वातानुकूलित किया जा सकता है।

(10) विशाल उद्योगों की स्थापना — जल विद्युत की उपलब्धि से बड़े बड़े कारखाने स्थापित किये जा सकते हैं। राजस्थान अभी तक शक्ति के साधनों के अभाव में औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ था किन्तु अब चम्बल से भाखड़ा बांध परियोजना से विद्युत प्राप्त होने लगी है जिससे विशाल उद्योगों की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हो रहा है। यद्यपि अब तक राजस्थान में कोई भी विशाल कारखाना स्थापित नहीं है।

(11) विशेष उद्योगों को लाभ — अनेक उद्योग ऐसे हैं जिनमें बहुत ऊष्मा आवश्यक होती है जैसे — एल्युमिनियम उद्योग, लोहे व इस्पात उद्योग, वायु मण्डल से नाइट्रोजन प्राप्त करने के उद्योग आदि। कोयला व पेट्रोल अधिक महंगा होने के कारण जल विद्युत की तुलना में कम उपयोगी है।

(12) पानी के अन्य उपयोग—कोयले का उपयोग करने के पश्चात् केवल राख शेष रह जाती है और पेट्रोलियम के उपयोग करने के पश्चात कुछ भी शेष नहीं रहता किन्तु जल से विद्युत बना लेने के पश्चात् पानी शेष रह जाता है और उससे बार-बार शक्ति प्राप्त की जा सकती है अथवा उस जल के अन्य उपयोग किये जा सकते हैं।

(13) लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास—जल विद्युत की उपलब्धि के फलस्वरूप लघु व कुटीर उद्योगों को भी प्रोत्साहन मिलता है। मशीनों द्वारा निर्मित वस्तुओं के साथ प्रतियोगिता में इन उद्योगों के उत्पाद भी टिक सकते हैं।

(14) औद्योगिक विकेन्द्रीकरण—जल विद्युत के विकास से पहले उद्योगों को कोयला क्षेत्रों के पास लगाने की प्रवृत्ति थी किन्तु अब औद्योगिक केन्द्रीयकरण था अब तो विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति उत्पन्न हो रही है अब गांव में भी बड़े उद्योग स्थापित किये जा सकते हैं।

(15) जनसंख्या का स्वस्थ वितरण—जल विद्युत के विकास से देश में जनसंख्या का असमान वितरण न हो कर स्वस्थ वितरण रहता है और मनुष्यों की गांवों से नगर की ओर आकर्षित होने की प्रवृत्ति समाप्त हो जाती है।

(16) उच्च जीवन स्तर—जल विद्युत को एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र पर स्थानान्तरित करने के परिणामस्वरूप मार्ग में पड़ने वाले समस्त गांवों आदि को भी सस्ती विद्युत प्राप्त हो जाती है जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में भी लोगों का जीवन स्तर ऊंचा हो जाता है। गांवों में भी रेडियो बिजली के पंखे वातानुकूलित यन्त्र आदि का प्रयोग हो सकता है।

जल विद्युत में तुलनात्मक दोष—

एक ओर तो जल विद्युत के कोयला व पट्रोल की तुलना में अनेक गुण हैं किन्तु दूसरी ओर इसके कुछ दोष भी हैं जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं —

(1) **प्रारम्भिक व्यय अधिक**—जल विद्युत उत्पन्न करने में प्रारम्भिक व्यय बहुत अधिक होता है, यद्यपि बाद में संचालन व्यय बहुत कम होता है।

(2) **सब भागों में सम्भव नहीं**—जिन भागों में अथवा निकटवर्ती भागों में नदियाँ नहीं हैं वहां जल शक्ति उत्पन्न नहीं की जा सकती है। उदाहरण के लिए, सहारा रेगिस्तान (अफ्रीका) थार का रेगिस्तान (राजस्थान) आदि में जल विद्युत उत्पन्न नहीं की जा सकती।

(3) **स्थानान्तरण सदैव सम्भव नहीं**—जल विद्युत को एक देश से दूसरे देश में भेजना सम्भव नहीं है। उदाहरण के लिए, स्वीडन (उत्तरी यूरोप) से जल विद्युत भारत में नहीं लाई जा सकती है। इसके विपरीत, कोयले व पट्रोल के स्थानान्तरण असम्भव नहीं हैं।

(4) **प्रगतिशील देशों के लिए ही उपयोगी**—जो देश औद्योगिक दृष्टि से उन्नत हैं या उन्नत हो रहे हैं वहां जल विद्युत लाभप्रद है किन्तु जिन देशों में औद्योगिक प्रगति नहीं हुई है (अथवा नहीं हो सकती) वहाँ जल विद्युत महत्वहीन है। यदि ऐसे पिछड़े हुए देशों में कोयला या पट्रोल है, तो अन्य देशों को भेज कर विदेशी मुद्रा प्राप्त कर सकते हैं।

जल विद्युत उत्पादन की दशाएँ—

जल विद्युत विकास के लिए अनेक तत्वों का होना आवश्यक है उनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं —

(1) **भूमि की बनावट**—भूमि की बनावट पर जल विद्युत उत्पादन निर्भर होता है। प्राकृतिक झरने यदि उपलब्ध हों तो जल विद्युत कम व्यय में बना ली जाती है। यदि प्राकृतिक झरने उपलब्ध न हों तो कृत्रिम झरने बनाने की सुविधा होनी चाहिए।

(2) **जल का निरन्तर प्रवाह**—प्रपातों से पानी वर्ष भर गिरता रहना चाहिए। जिन भागों में वर्षा साल भर तक व पर्याप्त मात्रा में होती है, वहाँ तो प्रपातों में पानी की समस्या नहीं रहती किन्तु कम वर्षा वाले भागों में नदियों पर बाँध बना कर इस समस्या को हल किया जा सकता है।

(3) **जल का समान वेग**—प्राकृतिक अथवा कृत्रिम प्रपातों से पानी समान वेग व गति से गिरना चाहिए अन्यथा जल विद्युत मशीनों पर खराब प्रभाव पड़ता है।

(4) **अच्छी जलवायु**—जल विद्युत उत्पन्न करने वाले भाग की जलवायु अधिक ठण्डी नहीं होनी चाहिए, अन्यथा सर्दियों के मौसम में जल विद्युत का उत्पादन बन्द हो जावेगा और इसका प्रतिकूल प्रभाव सम्बन्धित उद्योगों पर पड़ेगा।

(5) **अन्य शक्ति के साधनों का अभाव**—जिन क्षेत्रों में कोयला अथवा पट्रोलियम अधिक मात्रा में न मिलता हो और सस्ता न हो वे प्रदेश ही जल शक्ति के उत्पादन के लिए अनुकूल होते हैं। यही कारण है कि विश्व में तथा भारत में जल

विद्युत उत्पादन-केन्द्र वहीं स्थित है, जहाँ उपयोग होना मात्राओं का अभाव है अथवा मँहगा है।

(6) जल का उपयोग—जल विद्युत उत्पादन म प्रयुक्त होने वाले जल (Tail Water) का उपयोग सिंचाई म करने की सुविधा उपलब्ध हो, ताकि पानी व्यय नष्ट न हो और जल एकत्रित करने और वितरित करने का व्यय अपेक्षाकृत कम हो जाय। ऐसी दशा म सिंचाई और बिजली दोनों ही सस्ती होगा।

(7) स्वच्छ जल—जल विद्युत उत्पन्न करने के लिए स्वच्छ पानी चाहिए। इसका कारण यह है कि जिन नदियों का पानी म दो अथवा अधिक मिट्टी मिला हुआ होता है उनसे जल विद्युत उत्पादन म बाधा होती है और साथ ही मशीनों का भी क्षय शीघ्रता से होता है। इससे पानी को 'सिल्ट सपरेटर' (Silt Separator) यन्त्र द्वारा साफ किया जा सकता है।

(8) उपयोग केन्द्रों की निकटता—जल विद्युत के उपभोग केन्द्र निकट ही होने चाहिए क्योंकि यदि विद्युत को तारों द्वारा दूर ले जाया जाता है तो विद्युत की शक्ति म कमी आ जाती है। 325 Kms की दूरी म जल विद्युत शक्ति म लगभग 10 प्रतिशत की और 800 Kms की दूरी म लगभग 20 प्रतिशत की कमी हो जाती है।

(9) अधिक पूँजी की आवश्यकता—जल विद्युत के निर्माण एव उसके विकास म बहुत अधिक पूजी की आवश्यकता पड़ती है—विशेषत आरम्भिक काल म। जिन देशों म पूजी की कमी है वहाँ जल विद्युत का विकास नहीं हो पाया है।

(10) तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता—जल विद्युत निर्माण के प्रारम्भिक चरण से वास्तविक उत्पादन तक की स्थिति म तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। यदि देश मे इससे सम्बन्धित ज्ञान अविकसित दशा म है तो विदेशी विशेषज्ञों की सहायता से विकास किया जा सकता है।

भारत की स्थिति—

बीसवीं शताब्दी के मध्य तक भारत म शक्ति उत्पादन की गति बहुत मन्द रही। सन् 1925 म देश म विद्युत उत्पादन क्षमता केवल 1 60 लाख किलोवाट ही थी। सन 1945 तक यह क्षमता लगभग 5 गुनी बढ़कर 8 लाख किलोवाट हो गई। प्रथम योजना के आरम्भ में देश मे 23 लाख किलोवाट विद्युत् तयार होती थी और उसी योजना के अन्त मे 34 लाख किलोवाट और दूसरी योजना के अन्त म 56 लाख किलोवाट बिजली तयार होने लगी। तीसरी योजना के अन्त तक कुल उत्पादन बढ़ाकर 127 लाख किलोवाट करने का लक्ष्य है।

यदि हम भारत की अन्य देशों से तुलना करें तो ज्ञात होगा कि विभिन्न देश अपने अपने देश म जल विद्युत उत्पादन क्षमता का बड़ा भाग प्रयोग करते हैं। निम्न तालिका से यह स्पष्ट होगा —

देश	कुल जल विद्युत का प्रयोग	देश	कुल जल विद्युत का प्रयोग
स्विटजरलण्ड	67%	रूस	34%
जर्मनी	54%	स्वीडन	27%
नार्वे	53%	स० रा० अमरीका	24%
कनाडा	34%	भारत	1 25%

भारत मे जल विद्युत विकास की आवश्यकता—

क्या भारत मे जल विद्युत विकास की आवश्यकता है ? भारत म जल विद्युत् विकास आवश्यक ही नही, वरन् अनिवाय भी है। इसके प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं —

(1) भारत अभी तक औद्योगिक दृष्टि से पिछडा हुआ रहा है। इसके अनक कारणो में स एक यह भी है कि हमारे दश म शक्ति के साधन सुलभ नही हुए। आज जबकि दश औद्योगीकरण की ओर द्रुतगति से अग्रसर हो रहा है भारत म जल विद्युत का विकास आवश्यक है।

(2) भारत म कोयले की खानो का समान वितरण नही है, वरन् अधिकाश खानें उडीसा, विहार व पश्चिमी बगाल म हैं। अत देश के अन्य भागो म कोयला भेजने अथवा मँगाने म व्यय अधिक होता है। इसलिए यदि जल विद्युत का विकास हो जाय तो यह समस्या सदा के लिए हल हो जाय।

(3) हमारे देश म पट्रोल का तो नितान्त ही अभाव है और हम पैट्रोल के प्रदाय के लिए विदेशों पर निभर हैं। यदि जल शक्ति का विकास हो जाय तो पट्रोल की माँग अवश्य कम हो जायगी तथा आवश्यकता के लिए पैट्रोल का सचय किया जा सकता है।

(4) भारत क ग्रामीण क्षेत्र बहुत पिछडे हुए हैं। अत सस्ती जल विद्युत का निर्माण होने से गाँवो म प्रकाश एव अनेक कुटीर उद्योगो की शक्ति उपलब्ध हो सकेगी। इस प्रकार गाँवो के विकास म सहायता मिलेगी।

(5) जल विद्युत निर्माण के पश्चात जलराशि का सिंचाई मे प्रयोग किया जा सकता है। इसके फलस्वरूप एक ओर तो जल विद्युत सस्ती होगी और दूसरी ओर सिंचाई के क्षेत्र मे वृद्धि होती है जिससे खाद्यान्न व कृषि की अन्य उपजो म भी वृद्धि होती है।

(6) अनक उद्योगो म बहुत ही सस्ती शक्ति की आवश्यकता होती है जैसे इस्पात उद्योग, अल्यूमीनियम उद्योग लकडी चीरने आदि म। चूंकि जल विद्युत सस्ती होती है। अत इसके विकास की अत्यन्त आवश्यकता है।

(7) अनक स्थानो म कोयले क अभाव में रेलगाडियाँ नहीं चलाई जाती हैं अथवा कम चलाई जाती हैं क्योंकि सचालन-व्यय अधिक आता है। जल विद्युत से रेलें चलान म उनकी गति मे भी वृद्धि होती है और सचालन व्यय म भी कमी

आती है । भारत के अनेक क्षेत्रों में जल विद्युत द्वारा रेल चलाई जाती हैं, जैसे—कलकत्ता, कानपुर ।

(8) राजस्थान के पश्चिमी भाग में पानी बहुत गहराई पर मिलता है अतः वहाँ पीने का जल नियमित रूप से प्राप्त करने के लिए व देश के अन्य भागों में सिंचाई के लिए नल-कूपों (Tube Wells) की आवश्यकता है । अतः इसके लिए सस्ती शक्ति की आवश्यकता है जो जल विद्युत द्वारा ही प्राप्त हो सकती है ।

अन्त में यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि भारत के उत्थान के लिए जल विद्युत का विकास अनिवार्य है ।

भारत की नदियों की शक्ति उत्पादन क्षमता—शक्ति-उत्पादन क्षमता के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला है कि भारत की समस्त नदियों की शक्ति-उत्पादन क्षमता लगभग 4 करोड़ किलोवाट है ।

देश में जल विद्युत—

अब हम भारत में जल विद्युत विकास का संक्षिप्त विवरण राज्यों के अनुसार ले रहे हैं । भारत में जल विद्युत का विकास महाराष्ट्र, मसूर मद्रास कश्मीर, उत्तर प्रदेश और पूर्वी पंजाब में विशेष रूप से हुआ है ।

(1) महाराष्ट्र राज्य—

महाराष्ट्र राज्य में आरम्भ से ही कोयले की कमी होने के कारण जल विद्युत का विकास किया गया । महाराष्ट्र राज्य में अच्छी वर्षा और पश्चिमी घाट की स्थिति ने जल विद्युत् विकास की अनुकूल दशाएं बना दी हैं । पश्चिमी घाट में तीन स्थानों पर—खापोली, भिवपुरी और भीरा नामक स्थान पर जल विद्युत बनाने के केन्द्र है । ये तीनों शक्ति-गृह टाटा द्वारा संचालित हैं ।

कुछ नवीन योजनाएँ—बम्बई में विद्युत की अधिक माँग होने के कारण विद्युत का उत्पादन बढ़ाने के लिए निम्नलिखित योजनाओं पर कार्य हो रहा है —

(1) कोयना योजना—कोयना नदी पर लगभग 90 मीटर ऊंचा बाँध बनाया जा रहा है । आरम्भ में 2.4 लाख किलोवाट और योजना पूरी होने पर 4 लाख किलोवाट जल विद्युत प्राप्त हो सकेगी । इस विद्युत का उपयोग पूना व बम्बई में होगा । यह भारत के बड़े शक्ति गृहों में होगा ।

(2) नर्बदा नदी योजना—इससे गुजरात को 2 लाख किलोवाट विद्युत मिल सकेगी ।

(3) राधानगरी योजना—कोल्हापुर जिले में राधानगरी स्थान पर भोगावती नदी पर 44 मीटर ऊंचा बाँध बनाया जायेगा । इससे जो विद्युत बनेगी वह कोल्हापुर नगर व वहाँ के कारखानों के काम आवेगा ।

(4) ताप्ती योजना—इस योजना में उत्तर व दक्षिण गुजरात ग्रिड योजना को विद्युत मिलेगी ।

(2) मसूर राज्य—

(1) शिवसमुद्रम योजना —कावरी नदी पर शिवसमुद्रम पर एक शक्ति गृह बनाया गया है। भारत म सबस पहल जल विद्युत सन 1902 म यहीं उत्पन्न की गयी थी। यहा 4½ हजार किलोवाट जल विद्युत उत्पन्न करने वाला शक्तिगृह 1902 म स्थापित किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य कोलार की सोने की खानो को—जो शक्ति गृह म 150 Kms दूर है—विद्युत प्रदान करना था। अब इस

चित्र 28

शक्ति गृह की उत्पादन क्षमता 42 हजार किलोवाट जल विद्युत है। इस शक्ति गृह की जल विद्युत बगलौर मसूर व लगभग 225 ग वा म प्रयोग की जाती है।

(2) शिमशा प्रपात योजना—सन् 1940 से शिमशा प्रपात से भी जल विद्युत का निर्माण आरम्भ किया जा चुका है।

(3) शिरावती विद्युत योजना अथवा जोग योजना—मसूर राज्य म बगलौर

से लगभग 320 किलोमीटर उत्तर पश्चिम की ओर शिरावती नदी पर जल प्रपात है। यह जल प्रपात लगभग 253 मीटर (830 फीट) ऊँचा है। इस प्रपात से कुछ किलोमीटर ऊपर दो विशाल बाँध बना कर शिरावती नदी का समस्त जल एकत्रित किया गया है और उसे पनस्टोक पाइपों के द्वारा 467 मीटर (1,500 फीट) नीचे गिराकर उसकी शक्ति से जल विद्युत् उत्पन्न की जा रही है। शिरावती नदी की लम्बाई लगभग 132 किलोमीटर (82 मील) है, जो सह्याद्रि से निकलती है और अरब सागर में गिरती है।

इस परियोजना के प्रथम चरण का उद्घाटन स्व० प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने 25 जनवरी 1965 को किया। प्रथम चरण पूरा हो जाने से 89 100 किलोवाट जल विद्युत उत्पन्न हो रही है। इस परियोजना के लिए अमरीका ने 487 करोड़ रुपये का ऋण दिया है। भारत की किसी भी अन्य परियोजना को अमरीका से इतना ऋण नहीं मिला।

यह परियोजना पूर्ण हो जाने पर भारत की सबसे बड़ी बिजली परियोजना होगी और इससे 1 23 600 किलोवाट बिजली पैदा होगी। भारत की ही नहीं संसार की विशालतम बिजली परियोजनाओं में इसका स्थान है। अमरीका में भी इससे अधिक क्षमता वाली केवल तीन ही बिजली परियोजनाएं है— ग्रांड (19 53,000 किलोवाट) ग्रण्ड कूली (19 74,000 किलोवाट) और हूवर (1,34 400 किलोवाट)।

(3) तमिलनाडु राज्य—

जल विद्युत उत्पादन में महाराष्ट्र के पश्चात तमिलनाडु का स्थान है। यहाँ तीन प्रमुख योजनाएँ हैं—पैकारा योजना मेटूर योजना पापनाशम योजना।

(1) पैकारा योजना—नीलगिरि जिले में पैकारा नदी पर 945 मीटर की ऊँचाई के जल प्रपात से सन 1932 से जल विद्युत उत्पादन आरम्भ हुआ। इसकी उत्पादन क्षमता लगभग 40 हजार किलोवाट है। इस योजना से इन स्थानों को विद्युत दी जाती है—कोयम्बटूर त्रिचनापल्ली इरोड, नेगापट्टम, मदुरा, विरधुनगर कोयल पडडी आदि। दक्षिण के औद्योगिक विकास में इस योजना का काफी योग रहा है। उत्पादित जल विद्युत का लगभग 55 प्रतिशत भाग सूती मिलों द्वारा उपयोग किया जाता है।

(2) मेटूर योजना—कावेरी नदी की सहायक मेटूर नदी पर एक बहुत बड़ा बाँध बनाया गया है। यह बाँध 54 मीटर ऊँचा है। शक्ति-गृह ठीक मेटूर बाँध के नीचे स्थित है। मेटूर बाँध को मुख्यत सिंचाई के उद्देश्य से बनाया गया था। मेटूर शक्ति-गृह को इरोडा स्थान पर पैकारा शक्ति गृह से सम्बन्धित कर दिया गया है। इस शक्ति गृह से त्रिचनापल्ली तंजौर मनम और उत्तरी व दक्षिणी अरकाट को विद्युत दी जाती है।

पापनासम के समीप गिरती है। इससे अगस्त 1944 से विद्युत प्राप्त की जाने लगी है। इसमें पेरियार नदी का पानी भी प्रयोग कर लिया गया है। मदुरा पर उस पकारा योजना में मिला दिया गया है। इस योजना से तूतीकोरन मदुरा, कोयलपट्टी आदि को विद्युत मिलती है।

कुछ नवीन योजनायें—पैकारा पापनासम, मदुरा व अन्य दो शक्ति गृहों का विस्तार, मोयार, मदुरा, नैलार मल्लकुण्ड आदि पर नये शक्ति गृह बनाये जावेंगे।

(4) केरल राज्य—

पल्लीवासल योजना—केरल में पल्लीवासल योजना के अन्तर्गत मुद्रा-पूजा नदी से जल विद्युत उत्पादन के लिए एक छोटा शक्ति गृह मुनार में स्थापित किया गया है जिससे सन् 1935 से जल विद्युत प्राप्त की जाती है। इस शक्ति गृह की 21 हजार किलोवाट जल विद्युत उत्पन्न करने की क्षमता है।

दक्षिण भारत की अपेक्षा उत्तर भारत में जल विद्युत का अभी तक विकास कम हुआ है। परन्तु अब उत्तरी भारत भी जल विद्युत की दृष्टि से काफी प्रगति कर रहा है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पूर्वी पंजाब और कश्मीर के जल विद्युत विकास का विवरण यहाँ दे रहे हैं।

(5) उत्तर प्रदेश—

उत्तर प्रदेश में सबसे पहला बिजलीघर एक इंगलिश कम्पनी ने सन 1905 06 में कानपुर में स्थापित किया। इसके पश्चात प्रथम जल विद्युत् शक्ति गृह मसूरी में वहाँ की नगरपालिका ने स्थापित किया। इसके पश्चात् देहरादून (सन् 1915) लखनऊ एवं इलाहाबाद (1916) में भी बिजली घर स्थापित हुए और सन् 1930 तक उत्तर प्रदेश के प्रायः समस्त प्रमुख नगरों में बिजलीघर स्थापित हो गये।

(1) गंगा नहर जल विद्युत ग्रिड योजना—हरिद्वार और अलीगढ़ के मध्य ऊपरी गंगा नहर में 13 जल प्रपात हैं जो 3 से 4 मीटर ऊँचे हैं। इनमें से 10 जल प्रपात विद्युत विकास के लिए उपयुक्त है और 7 जल प्रपातों पर शक्ति गृह स्थापित किये जा चुके हैं। इन स्थानों के नाम ये हैं—बहादुराबाद, मोहम्मदपुर, चितौरा सलावा भोला पालरा और सुमेरा। ये सातों बिजली घर एक दूसरे से तार द्वारा मिला दिये गये हैं।

इस योजना से उत्तर प्रदेश के 14 जिला—बिजनौर, बरेली, मुरादाबाद मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, एटा, मेरठ, आगरा, अलीगढ़ मथुरा बदायूँ इटावा, बुलन्दशहर और मैनपुरी तथा दिल्ली के कुछ भाग में विद्युत उपलब्ध होता है।

(2) यमुना योजना—देहरादून से 50 Kms दूर यमुना नदी के पानी को बाँध बनाकर एकत्रित किया गया है जिससे जल विद्युत उत्पन्न की जा रही है।

नवीन योजना—उत्तर प्रदेश में जल विद्युत की निम्न योजनाओं पर विचार हो रहा है —(1) शारदा शक्ति गृह (2) नय्यर बाँध (3) पिन्डर योजना, (4)

सोन योजना, (5) रामगंगा योजना, (6) कोपरी योजना, (7) बेतवा योजना, (8) गोमरा योजना।

(6) पूर्वी पंजाब—

मण्डी जल विद्युत योजना—मण्डी राज्य में व्यास नदी की सहायता से उहल नदी से शिमला की पहाड़ियों में जोगेन्द्र नगर में जल विद्युत उत्पन्न की जाती है। इस समय शिमला, अम्बाला, फिरोजपुर व करनाल आदि इससे विद्युत प्राप्त करते हैं, किन्तु निकट भविष्य में सहारनपुर, दिल्ली, मेरठ आदि नगर भी यहाँ से विद्युत प्राप्त कर सकेंगे।

कश्मीर राज्य—

यहाँ जल विद्युत की दो प्रमुख योजनाएँ हैं—(1) बारामूला जल विद्युत योजना, और (2) किशनगंगा जल विद्युत योजना।

बारामूला जल विद्युत योजना—श्रीनगर से 55 Kms उत्तर पश्चिम की ओर बारमूला स्थान है जहाँ झेलम नदी के पानी को रोक कर जल विद्युत उत्पन्न की जाती है। यह विद्युत श्रीनगर व बारामूला नगरों में काम आती है।

मुजफ्फराबाद स्थान पर किशनगंगा नदी पर बांध बनाकर बिजली उत्पन्न की जाती है। इसके अतिरिक्त जम्मू में भी जल विद्युत उत्पन्न की जाती है।

भारत की नवीन योजनाएँ—

भारत में अनेक नदी घाटी योजनाओं पर कार्य हो रहा है जिनसे सिंचाई आदि के अतिरिक्त जल विद्युत भी उपलब्ध की जावेगी। इनका विवरण 'भारत में नदी घाटी योजनाएँ' शीर्षक के अन्तर्गत अध्याय में किया गया है।

सरकार विद्युत प्रदान करने वाले कारखानों का शनै शनै राष्ट्रीयकरण कर रही है।

पंचवर्षीय योजनाएँ—

प्रथम पंचवर्षीय योजना के आरम्भ में देश में कुल विद्युत उत्पादन-क्षमता केवल 23 लाख किलोवाट थी। प्रथम योजना काल में यह क्षमता लगभग 34 लाख किलोवाट हो गई अथवा लगभग 49 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना-काल में विद्युत उत्पादन क्षमता 34 लाख से बढ़ कर 56 लाख किलोवाट हो गई अर्थात लगभग 64 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्त में विद्युत उत्पादन क्षमता 127 लाख किलोवाट[1] कर देने का लक्ष्य रखा था किन्तु यह लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सका क्योंकि उत्पादन क्षमता लगभग 102 लाख किलोवाट[1] ही की जा सकी।

इस योजना काल में देश के समस्त शक्ति गृहों को एक दूसरे से सम्बन्धित करने की योजना बनाई गई। ग्रिड (Grid) बनाने की दृष्टि से देश को 5 क्षेत्रों में[1] विभक्त किया गया है। ये क्षेत्र इस प्रकार हैं—

1 Fourth Five Year Plan, pp 267 270

1 उत्तरी क्षेत्र	जम्मू व कश्मीर हिमाचल प्रदेश पजाब हरियाना, दिल्ली उत्तर प्रदेश और राजस्थान।
2 पश्चिमी क्षेत्र	गुजरात महाराष्ट्र मध्य प्रदेश व गोआ।
3 दक्षिणी क्षेत्र	आन्ध्र प्रदेश तमिलनाडु मैसूर केरल और पाण्डचेरी।
4 पूर्वी क्षेत्र	पश्चिमी बगाल, बिहार उडीसा।
5 उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र	आसाम मनिपुर नफा और नागालण्ड।

चतुर्थ पचवर्षीय योजना—इस योजना काल म विद्युत विकास के लिए लगभग 2447 करोड रुपये[1] व्यय करने का प्रावधान किया गया है।

भारत म विद्युत का प्रति व्यक्ति उपभोग[1] बढ रहा है जसा कि तालिका[1] से स्पष्ट है।

वर्ष	प्रति व्यक्ति विद्युत उपभोग
1960 61	38 किलोवाट
1965 66	61 4 किलोवाट
1968 69	79 0 किलोवाट

भारत मे अणु-शक्ति
(Atomic Energy)

अनेक व्यक्तियो न केवल सन् 1946 म अणु शक्ति का नाम सुना था, और वह भी अणु बम के रूप म। किन्तु अब अणु शक्ति विज्ञान की अन्य शक्तियो का मुकाबला करने लगी है। औद्योगिक कार्यों के लिए आज अणु शक्ति के प्रयोग को निरन्तर बढाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। वास्तव म अणु शक्ति का आविष्कार इस युग का सबसे बडा चमत्कार है। इस आविष्कार न मानव जाति के सहार और सृजन की व्यापक सम्भावनाए खोल दी हैं।

भारत मे अणु शक्ति विकास की आवश्यकता—

अणु शक्ति-आयोग के प्रथम अध्यक्ष स्व० डॉ० भाभा का मत है, 'बिना अणु शक्ति के भारत मे तेजी से औद्योगीकरण तथा यहा के लोगों का जीवन-स्तर ऊपर उठाना कठिन होगा।" भारत म अणु शक्ति विकास की बहुत आवश्यकता है जिसके प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं —

(1) देश म औद्योगिक विकास तेजी से हो रहा है अत पर्याप्त एव सस्ती चालक शक्ति की आवश्यकता है।

(2) भारत म अणु खनिज जसे यूरेनियम थोरियम बेरीलियम आदि पाये जाते हैं। ये खनिज अणु-शक्ति उत्पन्न करने म काम आते हैं। अत इन्हे प्राप्त करने

1 Fourth Five Year Plan pp 267 270

के लिए विदेशो पर निभर रहने की आवश्यकता नही है । शक्ति प्राप्त करने के लिए केवल इनके विकास की ही आवश्यकता है ।

(3) भारत म उत्तम प्रकार के कोयले व कायशीन भण्डार लगभग एक शताब्दी म समाप्त हो जाने की सम्भावना है अत इन्हे और अधिक समय तक चलाने व अन्य उपयोग म लाने के लिए अणु शक्ति विकास की आवश्यकता है ।

(4) एक अनुमान के अनुसार भारत म जलशक्ति के स्रोत 410 लाख किलोवाट है जो भविष्य की आवश्यकताओ की पूर्ति करने म समय नही हो सकेंगे।

(5) अणु शक्ति उत्पन्न करने के लिए भारी जल (Heavy Water) की आवश्यकता पडती है जो भाखरा नागल, चम्बल व अन्य योजनाओ से प्राप्त किया जा सकता है ।

अणु शक्ति-गृह निर्माण के विरुद्ध तर्क —

भारत म अणु शक्ति-गृह के निर्माण के विरुद्ध निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किए जाते हैं —

(1) अणु शक्ति गृह के निर्माण और उसके सचालन मे व्यय बहुत अधिक होता है । जल विद्युत शक्ति स्टेशन की तुलना म अणु शक्ति गृह के निर्माण मे लगभग दो गुना व्यय अधिक होता है । भारत के आर्थिक स्रोत अभी इस योग्य नही हैं ।

(2) अणु शक्ति गृह निर्माण के लिए अभी हम स्वावलम्बी नही हैं । तकनीकी ज्ञान व अन्य अनेक उपकरणो के लिए हमे अभी भी विदेशो पर निभर रहना पडता है । अत इस काय के लिए विदेशी मुद्रा की अधिक आवश्यकता होती है ।

(3) देश म कोयले व जल विद्युत शक्ति के अपार साधन पडे हुए है । अभी तक उनका ही पूरा विदोहन नही किया जा सका है । अत अभी उनका ही विकास व उपयोग करना चाहिए ।

(4) अणु शक्ति गृह के निर्माण म समय अधिक लगता है ।

अणु शक्ति गृह निर्माण के विरुद्ध यद्यपि उपरोक्त कुछ तर्क दिए जाते हैं । किन्तु इन तर्कों म कोई वजन प्रतीत नही होता है । देश म अणु शक्ति के विकास की नितान्त आवश्यकता है ।

अन्य देशों मे प्रगति—

विश्व के प्रगतिशील देशो में अणु शक्ति केन्द्रो की स्थापना तेजी से हो रही है । सन 1969 तक विश्व के 18 देशो में 81 अणु रिएक्टर्स की स्थापना हो चुकी है । बेल्जियम फ्रांस इटली लक्जमबर्ग आदि देशो ने अणु शक्ति के विकास के लिए एक सयुक्त संस्था स्थापित की है । यूरोपीय साझा बाजार के विशेषज्ञो का तो यह भी मत है कि सन 1980 में विद्युत और अणु शक्ति का अनुपात 3 और 2 हो जायेगा । साझा बाजार म अणु शक्ति के विकास के लिए एक पंचवर्षीय योजना तैयार की है । इस योजना के अनुसार इन पाँच वर्षो में 48 करोड डालर व्यय किए जायेंगे ।

रूस ने पाँच नये अणु विद्युत केन्द्र स्थापित कर लिये हैं जिनमे 4 लाख म

6 लाख किलोवाट तक विद्युत उत्पन्न हो रही है। इंगलैण्ड में अणु शक्ति के तीन स्टेशन स्थापित किये जा रहे हैं जिनमें सबसे बड़ा केन्द्र स्कॉटलैण्ड के दक्षिण में स्थापित किया जा रहा है। ये तीनों केन्द्र औद्योगिक क्षेत्रों को शक्ति प्रदान करेंगे। तीनों पर 15 करोड़ पौण्ड व्यय होने का अनुमान है। संयुक्त राज्य अमरीका ने तो इस दिशा में काफी प्रगति की है। कनाडा भी इस दिशा में पीछे नहीं है।

भारत में विकास के प्रयत्न—

भारत सरकार अपनी नीति अनेक बार स्पष्ट कर चुकी है कि देश में अणु का विकास शान्ति के कार्यों के लिए ही किया जायगा। अब भारत में अणु शक्ति का विकास बहुत तेजी से किया जा रहा है। इस उद्देश्य के लिए अणुशक्ति आयोग (Atomic Energy Commission) की स्थापना की गई है जिसके प्रधान अध्यक्ष स्व० डॉ० एच० जे० भाभा थे। आजकल इस आयोग के अध्यक्ष डा० विक्रम साराभाई हैं। शान्तिमय उद्देश्यों के लिए अणु शक्ति के भारत में विकास और योजनाएँ बनाने का कार्य इस आयोग का ही है। अणु शक्ति का प्रयोग कृषि जीव विज्ञान उद्योग धंधों, औषधियों आदि में प्रोत्साहित करना भी आयोग का कार्य है।

अणु शक्ति विकास एवं अनुसंधान के लिए बम्बई के निकट ट्राम्बे में भाभा एटॉमिक रिसर्च सेन्टर की स्थापना की गई है। ट्राम्बे में यहाँ तीन अणु रिएक्टर्स हैं। अगस्त 1956 में यहाँ प्रथम अणु भट्टी (Reactor) स्थापित की गई। इसे पूर्णत भारतीय वैज्ञानिकों और इन्जीनियरों ने बनाया है। स्व० प० नेहरू के शब्दों में 'भारत में प्रथम बार अणु शक्ति का उत्पादन हमारे लिए महत्त्वपूर्ण घटना है। इस प्रथम अणु भट्टी (Reactor) का नाम अप्सरा' रखा गया है, दूसरे रिएक्टर का नाम कनाडा भारत रिएक्टर' है जो विश्व में आइसोटोप उत्पन्न करने वाले सबसे बड़े रिएक्टरों में से एक है। यह सन 1961 में तैयार हो गया। तीसरा रिएक्टर जेरलिना है जो शून्य शक्ति प्रयोग करने का रिएक्टर है। यह भी पूरा हो गया है।

भारत सरकार ने अणु शक्ति विकास के लिए संयुक्त राज्य अमरीका कनाडा व सोवियत रूस आदि देशों से तकनीकी व आर्थिक सहायता प्राप्त की है तथा इस दिशा में और अधिक प्रयत्नशील है।

सरकार ने देश के आर्थिक विकास की पंचवर्षीय योजनाओं में अणु शक्ति विकास के लिए पर्याप्त ध्यान दिया है। चौथी पंचवर्षीय योजना में अणु परियोजनाओं के लिए 247 करोड़ रुपये की व्यवस्था का प्रस्ताव है।

सरकार ने देश के कुछ केन्द्रों में अणु शक्ति केन्द्र स्थापित कर दिए हैं और कुछ किए जा रहे हैं। इनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है —

(1) **तारापुर अणु शक्ति बिजलीघर**—बम्बई से लगभग 105 Kms उत्तर की ओर अरब सागर के तट पर बसा हुआ तारापुर गाँव है। यहाँ आणविक विद्युत-गृह की स्थापना की गई है। तारापुर का यह बिजलीघर एशिया में अपनी किस्म का सबसे बड़ा कारखाना है। इस कारखाने को स्थापित करने का श्रेय स्व० ...

हामी जे० भाभा का है। अमरीका के 'यूनाइटेड स्टेटस एटोमिक इनर्जी कमीशन' ने इसके निर्माण के लिए लगभग 7 5 करोड डालर का ऋण दिया है और उच्च किस्म के यूरेनियम ईंधन देना स्वीकार किया है।

तारापुर अणु बिजलीघर का निर्माण कार्य अक्टूबर 1964 से आरम्भ हुआ था और सन् 1969 में पूरा हो गया। 19 जनवरी 1970 को श्रीमती इन्दिरा गांधी ने इस बिजलीघर का उद्घाटन किया।

यह बिजलीघर 260 से 300 मेगावाट शक्ति उत्पन्न करता है जबकि इसकी उत्पादन क्षमता 400 मेगावाट है। यहाँ उल्लेखनीय है कि संयुक्त राज्य अमरीका में अणु बिजलीघरों की औसत उत्पादन क्षमता 1,000 मेगावाट शक्ति है।

इस अणु विद्युतगृह के निर्माण में पूंजीगत व्यय लगभग 65 करोड रुपये हुए हैं। महाराष्ट्र व गुजरात राज्यों को इससे सस्ती शक्ति प्राप्त होगी। अणु शक्ति आयोग के अध्यक्ष डा० साराभाई के अनुसार तारापुर अणु शक्ति केन्द्र में प्रति किलो वाट घण्टे शक्ति उत्पन्न करने में 4 725 पैसे व्यय आता है।

(2) राजस्थान अणु शक्ति केन्द्र—कोटा नगर से लगभग 50 किलोमीटर दूर राणा प्रताप सागर बाँध के निकट एक अणु शक्ति केन्द्र स्थापित किया जा रहा है। यह औद्योगिक एवं कृषि क्रान्ति का भावी केन्द्र है। यह केन्द्र कनाडा के सहयोग से बनाया जा रहा है। इसका निर्माण सन 1965 में आरम्भ किया गया था। यहाँ दो अणु शक्ति इकाइयों की स्थापना हो रही है जिनमें से प्रत्येक की क्षमता 200 मेगावाट होगी। प्रथम इकाई में एक-एक टरबाइन और एक एक रिएक्टर होगा। प्रथम इकाई के सन् 1971 में पूरा हो जाने की सम्भावना है।

प्रथम इकाई का निर्माण कनाडा के अणु विशेषज्ञों की देखरेख तथा भारतीय अणु शक्ति आयोग द्वारा किया जा रहा है। प्रथम इकाई में 60 प्रतिशत भाग विदेशी विनिमय द्वारा प्राप्त किये गये हैं जबकि दूसरी इकाई में ये 40 प्रतिशत होंगे। प्रथम इकाई में हैवीवाटर तथा यूरेनियम ईंधन का प्रयोग किया जावेगा। पहली इकाई प्रतिवर्ष 100 टन हैवीवाटर का उत्पादन करेगी जो कि दूसरी इकाई तथा देश के अन्य भागों में भविष्य में स्थापित किए जाने वाले अणु शक्ति गृहों के काम में आवेगा। पहली इकाई पर लगभग 120 करोड रुपये व्यय होने का अनुमान है।

राजस्थान केन्द्र में प्रयुक्त होने वाले यूरेनियम ईंधन के प्रथम भाग का आधा कनाडा से प्राप्त होगा। शेष भारत अपने संसाधनों से जुटाएगा। राजस्थान अणु शक्ति केन्द्र की पहली इकाई से प्राप्त 200 मेगावाट बिजली से राज्य की विद्युत्-क्षमता में भारी वृद्धि होगी जिसके परिणामस्वरूप अब तक चलती आ रही बिजली की कमी तो समाप्त हो ही जावेगी किन्तु उससे भी अधिक नये उद्योगों और कृषि कार्यों के लिये अधिक विद्युत् उपलब्ध होगी। अनुमान है कि यहाँ उत्पादित विद्युत की लागत 2 64 पैसा प्रति किलोवाट-हावर होगा।

आशा है कि दूसरी इकाई सन 1977 तक पूरी हो सकेगी।

(3) मद्रास अणु शक्ति केन्द्र—मद्रास के निकट कलपक्कम मे 400 मगावाट शक्ति-क्षमता का एक अणु शक्ति केन्द्र स्थापित किया जा रहा है। आशा है कि यह चतुथ पचवर्षीय योजना काल म पूरा बन जावेगा। इस पर लगभग 104 करोड रुपय व्यय हान का अनुमान है। भापान का हैवी इलक्ट्रिकल्स यहा के लिए 200 मेगावाट का जनरेटर बना रहा है। प्रथम चरण म 200 मगावाट शक्ति उत्पादन क्षमता होगी।

चतुथ योजना मे अणु शक्ति क्षमता

केन्द्र	क्षमता (मगावाट)
तारापुर (बम्बई)	380
राणाप्रताप सागर (कोटा)	400
कलपक्कम (मद्रास)	10
कुल क्षमता	980

UNIVERSITY QUESTIONS

1 भारत के किन भागा म लोहा और कोयला मिलता है और कितना ? इन खनिजो का औद्योगिक महत्त्व बताइये। (T D C 1959)

2 भारत मे जल विद्युत शक्ति के महत्त्व और विकास की सम्भावना पर प्रकाश डालिए। दामोदर घाटी योजना का विवरण दीजिए। (T D C 1960)

3 Name the principal sources of power available in India How far has India developed in petroleum resources ? (T D C 1961)

4 भारत म शक्ति के महत्त्वपूर्ण साधन क्या हैं ? स्वतन्त्रता काल म हुए उनके विकास पर प्रकाश डालिए। (T D C 1963)

5 भारत की आर्थिक सम्पन्नता के लिए कौनसा अधिक आवश्यक है—सिंचाई अथवा शक्ति ? देश के आर्थिक ढाचे और प्राकृतिक साधना को ध्यान म रखते हुए बौद्धिक उत्तर देन का प्रयास कीजिय। (T D C 1964)

6 भारत म जल विद्युत के विकास के तत्त्वा की विवचना कीजिए। जल विद्युत शक्ति के आर्थिक महत्त्व पर प्रकाश डालिए। (T D C 1965)

7 भारत म जल विद्युत विकास के तत्त्वो की विवेचना कीजिय। इस कथन स आप कहाँ तक सहमत हैं कि आधुनिक काल मे यह सबसे अच्छा शक्ति का साधन है। (T D C Suppl 1966)

8 खनिज तल का आर्थिक महत्त्व बताइये। भारतवष म खनिज तेल स्रोतो का वणन कीजिए। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद कच्चे व शुद्ध तेल की कमी को पूरा करने के लिए क्या प्रयत्न किये गये हैं ? (T D C 1966)

9 भारत म किस सीमा तक खनिज-तल के साधना की खोज की गई है ? भविष्य की सम्भावनाआ पर विचार करिये। (T D C 1968)

10 भारत मे शक्ति के कौन-कौन से साधन पाये जाते हैं ? उनम स किसी एक साधन का पूण रूप से वणन देते हुए उसकी समस्याआ को लिखिय और समस्याओ को दूर करने का सुझाव भी दीजिए। (T D C 1971)

18

वस्त्र-उद्योग
(Textile Industries)

विषय प्रवेश—

भोजन के बाद मनुष्य की प्रमुख आवश्यकता वस्त्र की होती है। भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से ही वस्त्र उद्योग गौरवशील रहा है। आज भी कृषि के बाद भारत का सबसे बड़ा उद्योग वस्त्र-व्यवसाय ही है। जब यूरोप के देशों में सभ्यता का श्रीगणेश भी न हुआ था, भारत में वस्त्र उद्योग अपनी कला, सुन्दरता तथा उपयोगिता के कारण चरम उत्कर्ष को पहुँच गया था। वैदिक काल में हम वस्त्रों के विभिन्न नमूनों का उल्लेख मिलता है। रामायण और महाभारत तथा विविध स्मृतियों, पुराणों व काव्यों में सुन्दर सूती रेशमी तथा ऊनी वस्त्रों का उल्लेख मिलता है। आज भी भारत का सर्वप्रथम उद्योग वस्त्र ही है। इसका भारतीय अर्थ-व्यवस्था में अत्यन्त महत्त्वशील स्थान है।

(I) सूती वस्त्र उद्योग
(Cotton Textile Industry)
अतीत के स्वर्णिम चित्र

ऊपर बता चुके हैं कि भारत में वस्त्र उद्योग प्राचीन काल से ही गौरवपूर्ण रहा है व अन्य देशों में जब लोग सूती वस्त्र का नाम भी न जानते थे उस समय यहाँ कपास से वस्त्र बनाये जाते थे। ग्रीस के प्रसिद्ध इतिहासकार हैरोडोटस ने आश्चर्य प्रकट किया है कि 'भारतीय एक ऐसी ऊन के वस्त्र पहनते हैं जो भेड़ बकरियों के शरीर पर नहीं होती, वरन पेड़ पौधों की शक्ल में उगाई जाती है। ढाका[1] की मलमल विश्व विख्यात थी तथा विदेशियों ने इसे अनेक काव्योपम नाम दे

---

1 राष्ट्रकवि स्वर्गीय मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत भारती' में ढाका की मलमल के विषय में आश्चर्यचकित हो कर लिखा है—

रखा नली में बांस की जो थान कपड़े का नया,
आश्चर्य अम्बारी सहित हाथी उसी से ढक गया।
वे वस्त्र कितने सूक्ष्म थे कर ली जिनकी कई तह
शहजादी के अंग फिर भी झलकते जिनमें रहे॥

रखे थे, उदाहरणार्थ 'प्रवाहित जल' (Running water), वायु वितान (Woven Air) तथा साध्य सीकर (Evening Dew) आदि। फ्रांस में इस मलमल को 'मानसून की बौछार' कहते थे।

विश्व में भारत का स्थान

प्राचीन भारत के वस्त्र उद्योग के ह्रास की कहानी जितनी करुण है, आधुनिक वस्त्रोद्योग के जन्म व विकास की कहानी उतनी ही गौरवपूर्ण है। विदेशी शासन की अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियों में अकल्पित बाधाओं का सामना करते हुए भी भारतीय उद्योगपतियों ने वस्त्रोद्योग की दृष्टि से सम्पूर्ण विश्व में भारत का ऊँचा स्थान स्थापित कर दिया है। सूती कपड़े के उत्पादन की दृष्टि से भारत का विश्व में द्वितीय स्थान है। अमरीका, इंगलैण्ड व जापान का क्रमशः प्रथम तृतीय एवं पाँचवां स्थान है। श्रमिकों की दृष्टि से भारत का तृतीय स्थान है। कपड़े के निर्यात में भी जापान के बाद भारत का ही स्थान है।

मिलों की स्थापना

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारत में प्राचीन काल में सूती वस्त्र उद्योग कुटीर उद्योग के रूप में ही विकसित था। 18वीं शताब्दी तक भारत में कोई भी आधुनिक ढंग की सूती मिल नहीं थी। भारत में सूती वस्त्र बनाने की सर्वप्रथम मिल[1] सन 1818 में कलकत्ता में (फोर्ट ग्लास्टर मिल के नाम से) स्थापित की गई थी जो शीघ्र ही बन्द हो गई। परन्तु इस क्षेत्र में यह उद्योग विकसित नहीं हो पाया। वास्तव में इस उद्योग का विकास बम्बई क्षेत्र में ही हुआ।

वास्तव में इस उद्योग का मिलों के रूप में आरम्भ सन 1851 में एक पारसी सज्जन श्री कोवासजी डावर द्वारा बम्बई में 'स्पिनिंग एण्ड वीविंग कम्पनी' की स्थापना के साथ हुआ। यह मिल 'संयुक्त पूंजी वाली कम्पनी' के रूप में स्थापित की गई थी तथा इस मिल ने कपड़े का उत्पादन 2 फरवरी 1854 से आरम्भ किया था। इसके पश्चात् सन 1859 में अहमदाबाद में सूती वस्त्र की प्रथम मिल श्री रणछोडलाल की देख रेख में स्थापित की गई। इसके बाद देश के अन्य उद्योगपति भी इस उद्योग की ओर आकर्षित हुए तथा नागपुर, शोलापुर, मद्रास आदि अनेक केन्द्रों में सूती वस्त्र बनाने की अनेक मिल स्थापित हुईं।

उद्योग की अनुकूल परिस्थितियां

भारत में सूती वस्त्र उद्योग के 'विकासशील' होने में अनेक भौगोलिक व आर्थिक तत्वों का भी प्रमुख स्थान है। इनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं —

(1) नम जलवायु—भारत की गणना नम देशों में की जाती है। सम्पूर्ण

1 *The Imperial Gazetteer of Indian Empire*, published by the Clarendon Press, Oxford (Edition of 1908) p 196

देश म सूती वस्त्र पहने जाते हैं। चाहे धनी व्यक्ति हो चाहे निधन प्रत्येक व्यक्ति सूती वस्त्र का उपयोग करता है।

(2) कपास की उपज—देश क अत्यन्त शुष्क भागो को छोडकर प्राय सभी भागा म कपास की थाडा-बहुत उपज होती है। कपास की देश म 55 लाख गांठा से भी अधिक का उत्पादन हा रहा है। कपास की इतनी उपलब्धता ने भी इस उद्योग के विकास म योग दिया है।

(3) शक्ति के साधन—भारत के पूर्वी क्षत्र (उडीसा, बिहार व पश्चिमी बगाल) म कोयल की अनेक खानें हैं। इसके अतिरिक्त देश म अनेक बहुउद्देशीय याजनाऐं कार्यान्वित हो रही हैं। इन कारणो स शक्ति के साधन भी उपलब्ध हैं।

(4) वशानुगत कुशलता प्राप्त कारीगर—देश के इस उद्योग के लिए वशानुगत कुशलता प्राप्त कारीगर बहुत बडी सख्या म उपलब्ध हैं। इसका कारण यह है कि लाखा कारीगरा के वश के लोग कपास की धुनाई, रगाई, कताई आदि का काम सदिया से करते चले आ रहे है।

(5) सस्ते श्रमिक—भारत की सघन जनसख्या इस उद्योग की मिलो के लिए सस्ते श्रमिक उपलब्ध करती है। इस प्रकार इस उद्योग को सस्ते और कुशल कारीगर मिल जाते हैं।

(6) उपभोग का स्थानीय बाजार—भारत म लगभग 54 करोड व्यक्ति निवास कर रहे हैं अत उन सबके तन ढँकने क लिए करोडो गज कपडा चाहिए। इस प्रकार देश की आवश्यकता-पूर्ति क लिए भी सूती वस्त्र उद्योग की विकसित अवस्था चाहिए।

(7) मशीनो आदि की सुविधा—देश का औद्योगिक विकास द्रुतगति से हो रहा है अत इन्जीनियरिंग उद्योग भी तीव्र गति स विकसित हो रहा है। अत इस उद्योग सम्बन्धी अनेक कल-पुर्जे देश म ही बन रहे हैं।

मिलों का वितरण

सरकारी सूचना क अनुसार भारत म इस समय (1970 म) सूती वस्त्र बनाने की 656 मिलें हैं जिनम 366 कताई की और 290 कताई तथा बुनाई दोनो की हैं। निम्न तालिका सूती वस्त्र मिलो का भारत म क्रमिक विकास की ओर सकेत करती है —

भारत में सूती मिलों का विकास

वर्ष	मिलों की सख्या	वर्ष	मिलों की सख्या
1879 80	58	1951	378
1889	114	1956	412
1901	178	1960	479
1911	233	1961	479
1921	249	1966	575
1931	314	1968	6 5
19 1	396	1969	647
1947	423	1970	656

मिलो की अधिकांश संख्या महाराष्ट्र राज्य, गुजरात राज्य, तमिलनाडु राज्य, उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल आदि मे है। संयुक्त राज्य अमरीका मे इस समय 1,200 सूती मिलें है।

भारत का विश्व के सूती वस्त्र उत्पादक देशों में तकुओं की संख्या की दृष्टि से तृतीय स्थान है और करघो की संख्या की दृष्टि से चौथा स्थान है। यहा यह भी उल्लेखनीय है कि संयुक्त राज्य अमरीका में प्राय 100 प्रतिशत जापान में लगभग 70 प्रतिशत और भारत में लगभग 6 से 7 प्रतिशत स्वचालित करघे (Automatic looms) हैं। स्वचालित करघो को लगाने की गति बहुत धीमी ही रही है। विदेशी बाजारो में भारतीय वस्त्र उद्योग सफलतापूर्वक जम सके, इस दृष्टि से सरकार ने और अधिक स्वचालित करघे लगाने की स्वीकृति दी है।

सूती वस्त्र उद्योग के प्रमुख क्षेत्र

भारत में सूती वस्त्र उद्योग के चार प्रमुख क्षेत्र हैं —(1) **दक्षिणी क्षेत्र**—इस क्षेत्र में महाराष्ट्र गुजरात व तमिलनाडु प्रमुख हैं। इस क्षेत्र में ही सूती वस्त्र उद्योग का सर्वाधिक विकास हुआ है। (2) **पूर्वी क्षेत्र**—इस क्षेत्र में पश्चिमी बंगाल है। यहा घनी आबादी कोयले की निकटता रेल व नदियों द्वारा यातायात की सुविधा कलकत्ता बन्दरगाह की सुविधाओं ने इस उद्योग के विकास में सहयोग दिया है। (3) **उत्तरी क्षेत्र**—इस क्षेत्र में उत्तर प्रदेश पूर्वी पंजाब व राजस्थान हैं। यहाँ कानपुर, दिल्ली व आगरा आदि प्रमुख केन्द्र हैं। (4) **मध्यवर्ती क्षेत्र**—इसमें मध्य प्रदेश है जिसमें ग्वालियर व इन्दौर आदि प्रमुख केन्द्र हैं।

राज्यानुसार सूती वस्त्र उद्योग का वितरण—

राज्यानुसार सूती वस्त्र उद्योग का वितरण इस प्रकार है —

(1) महाराष्ट्र राज्य—

भारत में सूती वस्त्र उद्योग की दृष्टि से महाराष्ट्र का प्रमुख स्थान है। राज्य में सूती वस्त्र उद्योग के तीन क्षेत्र—पश्चिमी महाराष्ट्र विदर्भ और मराठवाडा हैं। यहां मिलो का वितरण इस प्रकार है —

	मिलो की संख्या
पश्चिमी महाराष्ट्र	90
विदर्भ	9
मराठवाडा	2
योग	101

इस राज्य के वस्त्रोद्योग के विषय में एक विचित्र स्थिति यह है कि उसके सर्वाधिक रुई उत्पादक क्षेत्र मे बहुत कम मिलें हैं और सबसे कम रुई उत्पादक क्षेत्र मे सबसे अधिक वस्त्र मिलें हैं। उदाहरण के लिए, महाराष्ट्र के सर्वाधिक रुई उत्पादक क्षेत्र विदर्भ में, जहाँ केवल 9 सूती मिलें हैं वहाँ सबसे कम रुई पैदा करने वाले

पश्चिमी महाराष्ट्र में 90 सूती मिलें हैं। इनमें से 66 मिलें अकेले बम्बई नगर में हैं। इसी भाँति मराठवाड़ा अपेक्षाकृत अधिक रुई-उत्पादक क्षेत्र होने पर भी मराठवाड़ा में केवल दो ही सूती मिलें हैं। महाराष्ट्र राज्य में कुल 122 सूती मिलें हैं।

महाराष्ट्र की मिलों में लगे हुए तकुओं की संख्या 38.50 लाख है। स्पष्ट है कि भारत भर की मिलों में लगे तकुओं में से लगभग 33 प्रतिशत तकुए महाराष्ट्र राज्य की मिलों में हैं। देश की सूती मिलों के कुल उत्पादन का लगभग 46 प्रतिशत महाराष्ट्र की मिलों में तैयार होता है। इसमें अकेले बम्बई नगर का योग 36 प्रतिशत है।

बम्बई नगर व द्वीप की प्रसिद्ध मिलें ये हैं —फिनले, सेंचुरी, मटाऊ, पोद्दार, फोनिक्स, सेक्सरिया, श्रीनिवास, सिम्पलेक्स आदि। इनके अतिरिक्त शोलापुर, पूना, कोल्हापुर, सतारा, अहमदनगर, अकोला, नागपुर, नान्देड आदि की सूती मिलें महाराष्ट्र राज्य में ही हैं।

मिलें स्थापित होने के कारण—बम्बई नगर व द्वीप में सूती वस्त्र मिलें स्थापित होने के निम्नलिखित कारण हैं —

(1) कच्चा माल—यह क्षेत्र कपास उत्पादन के लिए विख्यात है। पश्चिमी खानदेश, पूर्वी खानदेश, शोलापुर, अहमदनगर, अकोला, अमरावती आदि अनेक भागों में बड़ी मात्रा में कपास होती है। कच्चा माल (कपास) निकट ही बड़ी मात्रा में उपलब्ध होने के कारण सूती वस्त्र मिलें इस क्षेत्र में स्थापित हो गयी।

(2) नम जलवायु—यह क्षेत्र समुद्र के किनारे होने तथा अधिक वर्षा प्राप्त करने के कारण यहाँ की जलवायु नम है। वायुमण्डल में नमी रहने के कारण कपास का धागा शीघ्र नहीं टूटता और इसलिए लम्बा धागा काता जा सकता है। इस सुविधा के कारण भी यहाँ सूती वस्त्र मिलें स्थापित हो गयीं किन्तु आजकल कृत्रिम रूप से भी आवश्यक कक्षा का वातावरण नम बना लिया जाता है।

(3) शक्ति के साधन—कारखानों की मशीनें चलाने के लिए सस्ते शक्ति के साधन भी आवश्यक हैं। यद्यपि इस क्षेत्र में कोयला नहीं मिलता, किन्तु पश्चिमी घाट पर टाटा ने तीन स्थानों (खापोली, भिवपुरी और भीरा) पर जल विद्युत गृह स्थापित कर दिये हैं अतः सस्ती जल विद्युत होने के कारण इस भाग में वस्त्र मिलें स्थापित हो गयीं।

(4) यातायात के विकसित साधन—यह क्षेत्र यातायात की दृष्टि से बहुत विकसित है। जल, थल व वायु मार्ग यहाँ होकर जाते हैं। सड़क, रेलमार्ग व वायु मार्ग की सुविधाएँ सुलभ हैं।

(5) बन्दरगाह की निकटता—बन्दरगाह के निकट होने के कारण इस क्षेत्र में सूती वस्त्र मिलों को प्रोत्साहन मिला। विदेशों (विशेषतः इंगलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस आदि) से मशीनें आयात करने, कच्चे व पक्के माल के आयात व निर्यात, इस उद्योग

मे काम आने वाले अनेक रासायनिक पदार्थ, कोयला आदि आयात करने की सुविधा को देखते हुए इस क्षेत्र में सूती वस्त्र मिलें स्थापित हुईं।

(6) औद्योगिक क्षेत्र—यह राज्य—विशेषत बम्बई नगर व द्वीप और निकटवर्ती भाग—औद्योगिक दृष्टि से बहुत विकसित है। औद्योगिक क्षेत्र होने के कारण वहाँ पर स्थित समस्त उद्योगों को कुल लाभ सुगमता से प्राप्त होते हैं, अत यहाँ यह उद्योग स्थापित हो गया।

(7) बाजार की निकटता—उद्योग को किसी भी स्थान पर स्थापित करने के पूर्व बाजार की निकटता पर भी ध्यान रखा जाता है। बम्बई क्षेत्र के निकट ही देशी व विदेशी बाजार उपलब्ध हैं, अत यहाँ मिलें स्थापित की गयी।

(8) पर्याप्त श्रम—यहाँ न केवल भारत के प्रत्येक राज्य के व्यक्ति मिलेंगे बल्कि विश्व के प्रत्येक प्रमुख देश के थोड़े बहुत व्यक्ति रहते हैं। भारत के प्रत्येक भाग से आकर लोग यहाँ बस गये हैं, जिनमें अधिकांश श्रमिक हैं इसलिए यहाँ श्रमिक सरलता से उपलब्ध हो जाते हैं।

(9) पूँजी की प्रचुरता—इस भाग में अनेक देशी व विदेशी पूँजीपतियों के निवास-स्थान एवं कार्यालय हैं। देश के सभी प्रमुख बैंकों व बीमा कम्पनियों के यहाँ कार्यालय हैं। बम्बई शेयर व स्टाक एक्सचेंज—जिसकी गणना विश्व के बड़े एक्सचेंजों में की जाती है—यहीं है।

(10) स्वच्छ जल की प्रचुरता—सूती वस्त्र उद्योग के लिए स्वच्छ व प्रचुर मात्रा में जल की भी आवश्यकता होती है। इस भाग में वर्षा की अधिकता के कारण स्वच्छ जल बड़ी मात्रा में उपलब्ध है।

(11) औद्योगिक संस्थाएं—कुछ मिलों की स्थापना के पश्चात् सूती वस्त्र सम्बन्धी अनेक औद्योगिक संस्थाएँ, अनुसंधानशालाएँ एवं प्रयोगशालाएँ भी स्थापित हो गयी जिनके फलस्वरूप सूती वस्त्र की और मिलें भी यहाँ केन्द्रित होने के लिए आकर्षित हुईं।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि बम्बई नगर व द्वीप में सूती वस्त्र की मिलें स्थापित होने में भौगोलिक तथ्य इतने अधिक महत्वपूर्ण नहीं हैं जितने कि पूँजी व साख की सुविधाएँ उपलब्ध होना, यातायात व संवादवाहन के साधनों की सुलभता बम्बई को बन्दरगाह होने के कारण उत्तरदायी है। कपास उत्पादक भाग (खानदेश बरार वर्धा अकोला भड़ौंच आदि) बम्बई के उतने निकट नहीं हैं जितने कि अहमदाबाद के। इसी प्रकार शक्ति के साधनों को भी देखिए। जिस समय बम्बई में यह उद्योग स्थापित हुआ था उस समय वहाँ जल विद्युत का विकास नहीं हुआ था बल्कि बंगाल से कोयला मँगवाया जाता था। जहाँ तक श्रमिकों का सम्बन्ध है वह यहाँ स्थानीय उपलब्धि नहीं है। यहाँ पर श्रमिकों की उपलब्धि शोलापुर सतारा कोंकण, दक्षिण भारत, उत्तर प्रदेश से मुख्यत होती है।

परन्तु यह ध्यान रहे कि इन दोषों के होते हुए भी बम्बई अभी भी वस्त्र

उद्योग का प्रमुख केन्द्र है। अतः उपरोक्त कथन से यह सिद्ध होता है कि बम्बई को निश्चित रूप से कुछ सुविधाएं प्राप्त हैं जिनका उल्लेख ऊपर कर चुके हैं (अर्थात पूंजी साख यातायात सन्वादवाहन, बन्दरगाह की सुविधाएँ)। दास गुप्ता के शब्दों में 'बम्बई को मनचेस्टर की सूती वस्त्र उद्योग की विशिष्टता और लिवरपूल की व्यापारिक एवं जहाजी योग्यता मिश्रित रूप से प्राप्त है।'

भावी विकास की कठिनाइयाँ—बम्बई नगर में इतनी सुविधाओं के होते हुए भी यहाँ सन 1929 से इस उद्योग का विकास रुक सा गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि बम्बई में इस उद्योग का विकास हो चुका है और आगे विस्तार की सम्भावनाएँ कम हैं क्योंकि अब बम्बई को अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ रहा है, जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं[1] —

(1) बम्बई में पहले ही 65 से भी अधिक कारखाने हैं और अधिक कारखाना के लिए स्थान का अभाव है, क्योंकि यह नगर एक छोटे से द्वीप पर स्थित है और नगर की सीमा समुद्र द्वारा निर्धारित कर दी गई है।

(2) देश के भीतरी भाग के कारखाने जो कपड़े के उपभोग के प्रदेश में हैं बम्बई से कठोर प्रतिस्पर्धा करते हैं

(3) बम्बई पहले अधिकतर विदेशों के लिए सूत तैयार करता था किन्तु अब देश में कपड़ा अधिक बनने लगा है इस दृष्टि से बम्बई का महत्व कुछ कम हो गया है।

(4) बम्बई में रहन सहन का व्यय अधिक होता है, अतः श्रमिक अन्य स्थानों पर जाना अधिक पसन्द करते हैं।

(5) बम्बई में मजदूरों की मजदूरी भी बढ़ गयी है अतः वस्त्र के उत्पादन का व्यय अधिक होने लगा है।

(6) बम्बई में अनेक प्रकार के सरकारी तथा स्थानीय कर बढ़ गये हैं।

(7) रेलों ने बन्दरगाहों पर जाने वाले माल के लिये जो छूट दे रखी थी, वह बन्द कर दी है। इतना ही नहीं, माल का आवागमन इतना अधिक बढ़ गया है कि माल ढोने वाले डिब्बे आसानी से नहीं मिल पाते।

(8) बम्बई में हड़तालों की अधिकता होने के कारण नये कारखाने अन्य स्थानों पर स्थापित करने की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई यहाँ ट्रेड यूनियनों का सगठन भारत के अन्य भागों की अपेक्षा अधिक मजबूत है। अतः पूंजीपति यहाँ और अधिक मिलें स्थापित करना नहीं चाहते।

(II) गुजरात राज्य—

औद्योगिक दृष्टि से अविकसित होते हुए भी इस राज्य में कुछ ऐसे उद्योग हैं जिन पर न केवल गुजरात राज्य ही वरन भारत गौरव का अनुभव कर सकता

---

1 T R Sharma *Localisation of Industries in India* p 22

है। इन उद्योगों में सूती वस्त्र उद्योग अत्यन्त महत्त्वशील है। इस राज्य में लगभग 117 सूती मिलें हैं।

गुजरात टैक्सटाइल रिऑर्गनाइजेशन कमेटी की रिपोर्ट (1968) के अनुसार भारत के कुल सूती वस्त्र उत्पादन का लगभग 30 प्रतिशत भाग गुजरात राज्य ही उत्पन्न करता है।

अहमदाबाद इस राज्य का प्रमुख केन्द्र है, जहाँ सूती वस्त्र उद्योग स्थित है। आज अहमदाबाद न केवल अधिक संख्या में मिलों के लिए या अधिक उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है वरन् यह उच्चकोटि के वस्त्र उत्पादन के लिए भी बहुत प्रसिद्ध है।



चित्र 29

अहमदाबाद को सूती वस्त्र उद्योग की दृष्टि से 'भारत का मानचेस्टर' कहा जाता है। अहमदाबाद में 71 सूती मिलें हैं। अहमदाबाद में काम करने वाले श्रमिकों में लगभग 12 प्रतिशत श्रमिक राजस्थान के हैं और शेष अन्य स्थानों के हैं। अहमदाबाद में

धोतिया व साड़ियाँ विशेष रूप से तयार की जाती हैं। प्रसिद्ध मिल कलिको अरविन्द, अरुण जुपीटर रोहित मिस्टर काटन आदि यहीं हैं।

अहमदाबाद मे सूती वस्त्र उद्योग के विकास के कारण—अहमदाबाद म इस उद्योग के इतना अधिक और शीघ्र विकसित होने के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं —

(1) यह नगर कपास उत्पन्न करने वाले क्षेत्र के बीच म स्थित है, अत कच्चा माल प्राप्त करने की जो स्थानीय सुविधा है वह अन्य केन्द्रो को नहीं है।

(2) बम्बई की भाँति इस नगर म स्थान का अभाव नहीं है। श्रमिको के रहने के लिए यहा अपेक्षाकृत सस्ती भूमि उपलब्ध है।

(3) यह रेल द्वारा बम्बई से जुड़ा हुआ है अत इसे मशीनो के आयात व तयार माल के निर्यात मे भी पर्याप्त सुविधा है। काण्ड्ला बन्दरगाह के विकास के साथ इसको और भी सुविधा हो गई है।

(4) यहा की जलवायु स्वास्थ्यकर है अत मजदूरो की कार्यक्षमता ठीक रहती है। यहाँ की जलवायु शुष्क नही है अत बारीक सूत कातने म कठिनाई नहीं होती।

(5) अहमदाबाद के निकटवर्ती प्रदेश घने बसे हुए हैं अत श्रमिक सरलता स प्राप्त किये जा सकते है। ग्रामीण क्षेत्र से आने वाले मजदूर स्वस्थ व परिश्रमी होते हैं।

(6) अहमदाबाद नगर रेल व सड़क मार्गों द्वारा देश के विभिन्न भागो स जुड़ा हुआ है। अत उत्पादित माल का उपभोग केन्द्रो तक भेजने म सुविधा होती है। गुजरात राजस्थान, पजाब हरियाना, उत्तर प्रदेश आदि एव दूर के केन्द्रो तक वस्त्र सरलता से भेजा जा सकता है।

(7) यह द्वितीय श्रेणी का नगर है और यहा रहन-सहन का स्तर बम्बई की अपेक्षा काफी नीचा है। बम्बई की अपेक्षा यहा कम महगाई है। अत यहा मजदूरी की दर अपेक्षाकृत नीची है जिसके फलस्वरूप उत्पादन व्यय कम पड़ता है।

(8) अहमदाबाद मे मुख्यत महीन और उत्तम किस्म के वस्त्रो का उत्पादन किया जाता है, अत निकट भविष्य म गम्भीर प्रतियोगिता की सम्भावना नही है।

अहमदाबाद के अतिरिक्त गुजरात राज्य म बड़ौदा सूरत भड़ौच, कलोल, पाटन भावनगर पोरबन्दर राजकोट जामनगर मोरवी आदि सूती वस्त्र मिलो के अन्य केन्द्र हैं।

(III) तमिलनाडु (मद्रास) राज्य—

इस राज्य मे सूती वस्त्र उद्योग बहुत पुराना नही है। तमिलनाडु राज्य म लगभग 150 सूती मिलें हैं जो मद्रास, कोयम्बटूर मदुरा और सलेम आदि मे केन्द्रित हैं। केवल कोयम्बटूर में ही 40 से अधिक सूती मिल हैं। प्रसिद्ध बिन्नी व कर्नाटक मिलें इसी क्षेत्र में है।

सूती वस्त्र उद्योग के विकास के कारण—तमिलनाडु राज्य में सूती वस्त्र उद्योग के विकसित होने के निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं —

(1) इस प्रदेश में विशेषत कावेरी की घाटी में उत्तम प्रकार की कपास उत्पन्न की जाती है, अत कच्चे माल की आवश्यकता काफी अंशो तक स्थानीय रूप से पूरी हो जाती है। इसके अतिरिक्त कमी होने पर लम्बे रेशे की कपास आयात की जा सकती है।

(2) इस राज्य में सूती कपड़ा तैयार करने का काम सदियो से कुटीर उद्योग के रूप मे होता चला आ रहा है अत यहाँ इस कार्य में कुशल कारीगरो की भारी सख्या में प्राप्ति एक विशेष सुविधा है।

(3) तमिलनाडु तथा निकटवर्ती अन्य राज्यो में जनसख्या काफी घनी है, इसलिए सूती वस्त्र की स्थानीय माँग काफी रहती है।

(4) मद्रास बन्दरगाह की सुविधा होने से माल व मशीनो के आयात निर्यात की भी सुविधा है।

(5) इस राज्य में पहले कोयल का अभाव था, अत इस उद्योग का विकास अवरुद्ध सा था किन्तु जल विद्युत विकास के साथ यह उद्योग भी प्रगति के पथ पर अग्रसर हुआ। पायकारा व मटूर बाँधो से जल विद्युत उपलब्ध हो रही है।

इस राज्य में सूती वस्त्र उद्योग का विकास महाराष्ट्र के बाद हुआ था, अत यहाँ अधिकाश मिलें आधुनिक व बढ़िया हैं। मद्रास की खाकी जीन शर्टिंग व कमीज का कपड़ा विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

दक्षिण भारत मे देश की कुल मिलो की लगभग 28 प्रतिशत मिलें हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि दक्षिण भारत की मिलें कताई का काम ही अधिक करती हैं। ये मिलें दक्षिण के विख्यात हाथ करघे उद्योग को सूत देती हैं। दक्षिण भारत की मिलो म लगभग 80 हजार व्यक्ति काम करते है।

(IV) उत्तर प्रदेश—

इस राज्य म सूती वस्त्र की 31 मिलें हैं। औसत मिलें पश्चिमी बगाल की मिलो से बडी हैं। यह उद्योग विशेष रूप से गगा नदी के निकटवर्ती क्षेत्र म ही केन्द्रित है।

प्रमुख केन्द्र कानपुर है, जो अधिकतर मोटा कपडा उत्पान्न करता है। नगर म लगभग 17 मिलें हैं। प्रसिद्ध एल्गिन व म्यार मिलें कानपुर म ही हैं। अन्य मुख्य केन्द्र लखनऊ आगरा मिर्जापुर हाथरस, मोदीनगर, बरेली, रामपुर आदि हैं।

विकास की कठिनाइयाँ—उत्तर प्रदेश राज्य म सूती वस्त्र उद्योग के लिए दो अवरोध प्रमुख हैं—प्रथम, इस राज्य की जलवायु इस उद्योग के लिए उपयुक्त नही है क्योंकि समुद्र म दूर होने के कारण जलवायु प्राय शुष्क है अत कताई व बुनाई विभाग को कृत्रिम रूप से नम बनाया जाता है। द्वितीय, यहाँ निकटवर्ती भाग म कहीं कोयला नहा है।

उद्योग के विकास के कारण—अवरोधों के होते हुए भी इस राज्य में, विशेष रूप से कानपुर में, सूती वस्त्र उद्योग का बहुत विकास हुआ है, जिसके प्रमुख कारण निम्न हैं —

(1) इस राज्य में सूती वस्त्र की माँग बहुत है क्योंकि यहाँ जनसंख्या काफी घनी है। देश के जो अन्य सूती वस्त्र उत्पादक केन्द्र हैं—जैसे बम्बई, अहमदाबाद, मद्रास आदि—उनसे यह राज्य दूर है। इसका परिणाम यह हुआ कि स्थानीय मिलों को बाजार के लिए बहुत कम प्रतियोगिता करनी पड़ती है। कानपुर इस राज्य के लगभग मध्य में स्थित है। इसलिए यहाँ इस उद्योग के विकास को प्रोत्साहन मिला।

(2) इस राज्य में छोटे रेशे वाली कपास काफी होती है। बड़े रेशे वाली कपास बम्बई व कलकत्ता के बन्दरगाहों से मँगवा लेते हैं। दूर के स्थानों से रुई मँगाने का कानपुर व उत्तर प्रदेश के अन्य केन्द्रों पर कोई उल्टा प्रभाव न पड़ सका, क्योंकि उपभोग का क्षेत्र स्थानीय है।

(3) नदियों, सड़कों व रेल मार्गों का उत्तर प्रदेश में जाल सा बिछा हुआ है अतः कच्चे माल को मिलों तक तथा मिलों से उपभोग केन्द्रों तक माल लाने-ले जाने में बड़ी सरलता होती है।

(4) उत्तर प्रदेश राज्य में कोयले का अभाव है। किन्तु बिहार व बंगाल की खानों से कोयला मँगवा लिया जाता है।

(5) राज्य की घनी आबादी के कारण यहाँ सस्ते श्रमिक भी बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं।

(४) पश्चिमी बंगाल—

गत पच्चीस वर्षों से इस उद्योग ने यहाँ बहुत उन्नति की है। लगभग 42 सूती मिलें इस राज्य में हैं।

सूती मिलें विशेष रूप से तीन क्षेत्रों में केन्द्रित हैं—(1) चौबीस परगना, (2) हावड़ा, (3) हुगली—कलकत्ता से 50 किलोमीटर के पास में। सोदपुर सिरामपुर रामनगर मोरीग्राम फूलश्वर, धूसरी आदि इस उद्योग के प्रमुख केन्द्र हैं।

विकास के मार्ग में कठिनाइयाँ—पश्चिमी बंगाल राज्य में सूती वस्त्र उद्योग के विकास के मार्ग में दो बड़े अवरोध हैं—प्रथम, इस राज्य में कपास उत्पन्न नहीं होती क्योंकि यहाँ की जलवायु कपास के उत्पादन के लिए अनुपयुक्त है, फलस्वरूप यहाँ की मिलें कपास—जो कि आधारभूत कच्चा माल है—के लिए पूर्णतया बाहरी क्षेत्रों पर निर्भर हैं। द्वितीय यहाँ की मिलों को बहुत ही कठिन प्रतियोगिता करनी पड़ती है, क्योंकि पश्चिमी बंगाल के सूती उद्योग को केवल अन्य क्षेत्रों के सूती उद्योग के साथ ही प्रतियोगिता नहीं करनी पड़ती है वरन इस स्थानीय जूट उद्योग के साथ भी पूँजी, श्रम व शक्ति के साधनों और संगठन के क्षेत्र में प्रतियोगिता करनी पड़ती है।

उद्योग के विकास के कारण—उपरोक्त अवरोधो के होते हुए भी पश्चिमी बंगाल राज्य में सूती वस्त्र उद्योग का काफी विकास हुआ है जिसके प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं :—

(1) इस राज्य में शक्ति के साधनो की प्रचुरता है। रानीगंज व झरिया की कोयले की खान निकट हैं। इसके अतिरिक्त अब तो दामोदर घाटी योजना से उत्पन्न जल विद्युत से शक्ति के साधनो की उपलब्धता और भी सुगम है।

(2) इस क्षेत्र की मिलो द्वारा उत्पादित माल के लिए उपभोग के क्षेत्र भी निकट हैं। स्वयं पश्चिमी बंगाल ही घना बसा हुआ है। इसके अतिरिक्त बिहार, उड़ीसा व असम भी इस क्षेत्र की मिलो के कपड़े के उपभोक्ता हैं।

(3) यहाँ की मिलो के सामने कुशल कारीगरो की कमी नहीं है क्योंकि यह राज्य घना बसा हुआ है और बिहार, उड़ीसा व उत्तर प्रदेश से भी मजदूर प्राप्त हो जाते हैं। जूट मिलें जहा एक ओर इस उद्योग के साथ प्रतियोगिता करती हैं, वहाँ वे पूरक भी हैं क्योंकि इन दोनो उद्योगो की मशीनो के संचालन में काफी समानता है इसलिए एक मिल के मजदूर दूसरी मिल में सरलता से काम कर सकते हैं।

(4) इस राज्य में यातायात के साधनो का बहुत विकास हुआ है। नदियो में स्टीमर व नावें चलती है जो यातायात के सबसे सस्ते साधन हैं। राज्य में सड़को व रेलमार्गों का भी खूब विकास हुआ है।

(5) इस क्षेत्र को कलकत्ता बन्दरगाह की भी सुविधाएँ है, अतः आवश्यक मशीनें, कच्चा माल व अन्य आवश्यक वस्तुएं सरलता से मँगवाई जा सकती हैं व सूती वस्त्र को निर्यात किया जा सकता है।

(6) इस क्षेत्र की जलवायु इस उद्योग के लिए बहुत अनुकूल है क्योंकि समुद्र से निकटता व वर्षा की अधिकता के कारण वातावरण में नमी रहती है।

(7) कलकत्ता भारत का प्रमुख मुद्रा बाजार है अतः दीर्घ व अल्प अवधि के लिए आर्थिक सहायता यहा जितनी सरलता से उपलब्ध हो सकती है उतनी सरलता से (बम्बई के अतिरिक्त) अन्य किसी क्षेत्र में उपलब्ध नही हो सकती।

(8) यह क्षेत्र भारत का प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है, अतः यहाँ सभी उद्योगो को अनेक सुविधायें उपलब्ध हैं। पहले ऐसी सुविधाएँ उत्तर भारत में अन्य कहीं भी उपलब्ध नही थी।

(VI) मध्य प्रदेश—

इस राज्य में उज्जन, भोपाल, इन्दौर, ग्वालियर, रतलाम, जबलपुर सतना, देवास आदि में सूती वस्त्र बनाने की लगभग 30 मिलें हैं। इस राज्य में इस उद्योग के केन्द्रित होने के निम्नलिखित कारण हैं :—(1) इस राज्य में छोटे व मध्यम रेशे वाली कपास बहुत अधिक होती है। (2) यहा शक्ति के साधन के लिए कोयला प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। (3) मध्य प्रदेश में सस्ते मजदूर बहुत बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं। (4) बम्बई का बन्दरगाह निकट पड़ता है।

(VII) सूती वस्त्र उत्पादन के अन्य केन्द्र—

उपरोक्त राज्यों के अतिरिक्त निम्न स्थानों में सूती वस्त्र उद्योग स्थापित हैं —(1) दिल्ली (7 मिलें)। (2) हरियाणा एवं पंजाब (11 मिलें)—अमृतसर भिवानी। (3) राजस्थान (16 मिलें)—जयपुर कोटा भीलवाड़ा किशनगढ़ अजमेर ब्यावर, पाली, श्रीगंगानगर। (4) बिहार (3 मिलें)—गया, पटना भागलपुर। (5) उड़ीसा (6 मिलें)—कटक। (6) केरल (7 मिलें)—त्रिवेन्द्रम, क्विलोन अलवाय आदि। (7) आन्ध्र (19 मिलें)—कर्नूर हैदराबाद वारंगल सिकन्दराबाद। (8) मैसूर (22 मिलें)—मैसूर, बंगलौर बेलगाँव मंगलौर। (9) पाण्डेचेरी—यहाँ 3 मिलें हैं।

सूती वस्त्र उद्योग के लिए कच्चा माल

भारत में कपास की खेती का क्षेत्रफल विश्व के कुल कपास क्षेत्र का लगभग 20 प्रतिशत है किन्तु उपज केवल 9 प्रतिशत ही होती है। देश में छोटे रेशे की कपास तो आवश्यकता से अधिक होती है किन्तु बड़े रेशे की रुई कम होती है, अतः विदेशों से विशेषतः मिस्र अफ्रीका व अमरीका से काफी मँगवानी पड़ती है। किन्तु अब देश में बड़े रेशे की कपास की उपज बढ़ रही है और यही कारण है कि अब विदेशों से कपास के आयात की मात्रा में कमी हो रही है।

वर्ष	लाख गाँठें
1967 68	62 50
1968 69	58 50
1969 70	62 00

पिछले वर्षों में भारतीय सूती वस्त्र मिलों ने देशी एवं विदेशी कपास की कुल गाँठों (प्रत्येक गाँठ 400 पौण्ड) का उपभोग तालिकानुसार किया है।

सूती वस्त्र उद्योग के लिए आवश्यक कपास का 90 प्रतिशत से भी अधिक भाग देश में ही प्राप्त किया जाता है।

देश का विभाजन

देश के विभाजन का प्रभाव हमारे वस्त्र उद्योग पर पड़े बिना नहीं रह सका। कपास उत्पन्न करने वाला अधिकांश क्षेत्र पाकिस्तान में चला गया। सिंध का क्षेत्र जो लम्बे व चमकीले रेशे की कपास उत्पन्न करता था पाकिस्तान में चला गया। इसके अतिरिक्त 14 सूती मिलें भी पाकिस्तान के क्षेत्र में चली गई। इनमें से अधिकांश मिलें ढाका व लाहौर में स्थित थी।

सूती वस्त्र उद्योग में शक्ति, श्रम एवं पूंजी

शक्ति—भारतीय सूती मिलों में कोयला व जल विद्युत दोनों ही शक्ति के साधन के रूप में प्रयुक्त किये जाते हैं। बम्बई में अधिकांश जल विद्युत ही प्रयोग में लाई जाती है जो पश्चिमी घाट में स्थित टाटा के जल विद्युत शक्ति गृहों से प्राप्त की जाती है। नदी घाटी योजनाओं के पूर्ण हो जाने पर जल विद्युत अधिक लोकप्रिय हो सकेगी।

श्रम—प्रत्यक्ष रूप से भारत की सूती मिलों में लगभग 8 90 लाख कारीगर

काम कर रहे हैं। उस व्यवसाय मे सम्बद्ध धुलाई, रंगाई, प्रेसिंग, जिनिंग आदि मे लगभग 20½ लाख व्यक्ति लगे हुए हैं। दूसरे शब्दों में भारत में कृषि के अतिरिक्त अन्य सब व्यवसाय या सेवाओं में जितने मनुष्य कार्य करते हैं उनमें से प्रति 16 व्यक्तियों में 1 व्यक्ति सूती उद्योग में लगा हुआ है। इस उद्योग में लगे हुए श्रमिकों की संख्या की दृष्टि से भारत का विश्व मे तृतीय स्थान है जो इस तालिका मे विदित होता है।

देश	श्रमिक
इंगलैण्ड	15 लाख
सं० रा० अमरिका	11 लाख
भारत	6¾ लाख

पूंजी—इस उद्योग में लगभग 304 करोड़ रुपय की पूंजी लगी हुई है। हमारे यहां प्रतिवर्ष लगभग 725 करोड़ रुपय का कपडा उत्पन्न होता है।

उत्पादन व्यय

वस्त्र उद्योग में होने वाले विभिन्न उत्पादन व्यय का विवरण निम्न तालिका को देखने से विदित होगा कि कच्चे माल पर ही सबसे अधिक व्यय होता है। इसमे कपास का मूल्य, कमीशन आदि के व्यय सम्मिलित हैं। मजदूरी पर 26 से 28 प्रतिशत व्यय आता है जिसमे मजदूरों के लिए मकान, मँहगाई भत्ता, बोनस, सवेतन छुट्टियां, बीमा व अन्य सहायता सम्मिलित हैं। मिल को चलाने के लिए शक्ति व प्रबंध में लगभग 3 से 5 प्रतिशत व्यय होता है।[1]

व्यय के मद	व्यय का प्रतिशत
कच्चा माल	45 से 50
स्टोर, रंग, कमिकल आदि	12
मजदूरी आदि	26 से 28
शक्ति	3 से 5
सरकारी कर लाभ घिसावट बीमा ब्याज आदि	8 से 10

सूती वस्त्र का उत्पादन—

भारत में मिलों द्वारा आजकल लगभग 4 अरब मीटर कपडा प्रति वर्ष उत्पन्न हो रहा है। इन वर्षों में भारत में कपडे का उत्पादन इस प्रकार रहा है —

भारत मे मिलों द्वारा वस्त्र उत्पादन

वर्ष	करोड़ मीटर	वर्ष	करोड़ मीटर
1950 51	340 1	1968 69	429 7
1955 56	466 5	1969 70	417 5
1960 61	464 9	1970 71	435 0 (अनु०)
1965 66	440 1	1973 74	510 0 (लक्ष्य)
1967 68	425 8		

1 *Commerce Annual*

विश्व म कपडा उत्पादन की दृष्टि से भारत का दूसरा स्थान है। औसत रूप म भारत म कुल वस्त्र उत्पादन का लगभग 5% बहुत बारीक कपडा, 7% बारीक 66% मध्यम और 22% मोटा कपडा बनाया जाता है।

प्रति व्यक्ति उपभोग

भारत मे अ य देशो की तुलना म प्रतिवष प्रति यक्ति कम वस्त्र उपभोग होता है। प्रति व्यक्ति कपड का वार्षिक उपभोग सयुक्त राज्य अमरीका म 58 5 मीटर इगलण्ड म 32 मीटर जापान म 20 मीटर और मिस्र म 18 5 मीटर है। भारत म वष 1969 70 मे प्रति यक्ति वार्षिक कपडे के उपभोग का औसत लगभग 13 35 मीटर था।

गत वर्षों म भारत म सूती वस्त्र की प्रति यक्ति उपलब्धि इस तालिका नुसार थी।

वष	प्रति व्यक्ति वार्षिक उपलब्धि (मीटर म)
1950 51	11 0
1955 56	14 4
1960 61	13 8
1961 62	14 7
1965 66	14 6
1966 67	13 8
1967 68	13 3
1968 69	13 4
1969 70	13 3

इस प्रकार पिछले 10 वर्षों म औसतन 14 मीटर सूती वस्त्र प्रति व्यक्ति वार्षिक उपलब्ध था। चतुथ पचवर्षीय योजना काल के अ त म भारत म प्रति यक्ति कपडे की वार्षिक उपलब्धि का लक्ष्य 16 9 मीटर रखा गया है।

सूती वस्त्र का व्यापार

आज भारतीय वस्त्रोद्योग की स्थिति पर्याप्त सुदृढ है। सन 1913 म भारत ने इगलण्ड से 2 60 अरब गज कपडा आयात किया था और आज भारत ने ही दुनिया क कपडा बाजारो म लकाशायर को पीछे धकेल दिया है। इगलण्ड क मनचेस्टर वाणिज्य मडल द्वारा प्रकाशित वार्षिक प्रतिवदन म बतलाया गया है कि इगलण्ड म भारत स प्रतिवष 20 करोड वग गज कपडे का आयात हो रहा है। भारत औसत रूप स 85 करोड रुपये के मूल्य का कपडा आजकल प्रतिवष विदेशो को निर्यात कर रहा है। इस तालिका म भारतीय वस्त्र (केवल मिल का बना हुआ) निर्यात की स्थिति विश्व वस्त्र निर्यात-व्यापार तथा भारत का उसम स्थान बताया गया है।

वष	भारत द्वारा (निर्यात करोड रु०)
1960 61	57 5
1965 66	63 3
1966 67	61 5
1967 68	79 4
1968 69	87 97
1969 70	84 6

भारतीय सूती वस्त्र क निर्यात की महत्वपूर्ण बातें य हैं —(1) भारत क कुल वस्त्र निर्यात का 90 स 95 प्रतिशत भाग मोटा तथा मध्यम श्रेणी का कपडा

होता है। (2) कपडे के हमारे कुल निर्यात में बहुत बडा भाग बिना धुले (कोरे) कपडे का होता है, जिसे आयात कर्त्ता देश प्राय पुनर्निर्यात के लिए मँगाते हैं। (3) भारतीय वस्त्र निर्यात का बहुत कम प्रतिशत रंगा छपा या अन्य प्रकार से समाधित किया हुआ होता है। (4) हमारे वस्त्र निर्यात का अधिकांश भाग एशिया तथा अफ्रीका के देशों को जाता है। (5) देश की लगभग 230 मिलें ही वस्त्र निर्यात करती हैं। (6) देश से वस्त्र निर्यात की मात्रा बढ रही है।

विश्व में कपडा निर्यातक देशों में सन् 1956 से अब तक भारत का स्थान दूसरा है, सन 1950 में भारत का स्थान प्रथम था। अब प्रथम स्थान जापान का है और तीसरा कभी इंगलैण्ड का कभी संयुक्त राज्य अमरीका का रहता है।

इंगलैण्ड, संयुक्त राज्य अमरीका, सूडान, पूर्वी अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, कनाडा ब्रह्मा अदन, अफगानिस्तान, लंका, साऊदी अरब मलेशिया, इथियोपिया आदि देशों को भारत से सूती वस्त्र निर्यात किया जाता है।

अब भारत से सूती वस्त्र का निर्यात और भी बढेगा। सूती वस्त्र निर्यात को प्रोत्साहन देने एवं सुविधाएँ प्रदान करने की दृष्टि से सूती कपडा निर्यात प्रसार परिषद' (Cotton Export Promotion Council) की स्थापना अक्टूबर 1954 में की गई थी। प्रमुख सूती कपडा उद्योगपति सूती कपडा निर्यातक तथा भारत सरकार इसके सदस्य हैं। इसने निम्न देशों में (ब्रह्मा सिंगापुर, अदन ईरान, मोम्बासा व इंगलैण्ड—दोनों अफ्रीका में क्रमश कैनिया व नाइजीरिया में) अपने कार्यालय स्थापित कर दिये हैं।

विदेशी बाजारों के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए परिषद द्वारा प्रतिनिधि मण्डल भेजे गये हैं। इसके अतिरिक्त यह परिषद विदेशी प्रदर्शनियों में भी भाग लेती है तथा भारतीय वस्त्रों का विदेशों में प्रचार करती है।

पंचवर्षीय योजनाएँ

प्रथम पंचवर्षीय योजना में कपडे का उत्पादन लक्ष्य 470 करोड गज रखा था जो कि सन 1953 में ही पूरा कर लिया गया था जब कि लगभग 49 05 करोड गज कपडा उत्पन्न किया गया था।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सन 1960 तक भारत में कपडे के उत्पादन का लक्ष्य 8 अरब 20 करोड (अर्थात 820 करोड) गज रखा गया था, जिसका विवरण इस प्रकार है।

	करोड गज
मिलें	500
हाथ करघे	300
विद्युत करघे	20
	820

तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्त (1965 66) तक 930 करोड गज कपडा उत्पादन करने का लक्ष्य रखा था जिसमें से 350 करोड गज हाथ-करघे, विद्युत करघे और खादी उद्योग में और शेष 580 करोड गज कपडा मिलों में बनाने का

लक्ष्य था। यह उल्लेखनीय है कि इस 930 करोड गज कपडे म से 85 करोड गज निर्यात करने का लक्ष्य रखा था।

तृतीय पचवर्षीय योजनाकाल म सूती वस्त्र (मिल) का प्रतिवर्ष औसत निर्यात 50 करोड मीटर था जबकि द्वितीय योजनाकाल म यह औसत 65 5 करोड मीटर था। 1966 67 म सूती वस्त्र के निर्यात स 45 करोड रुपय प्राप्त हुए।

चतुर्थ पचवर्षीय योजना म मिल के कपड का उत्पादन लक्ष्य 548 करोड 60 लाख मीटर रखा गया है।

भविष्य—भारत म वस्त्र उद्योग क विकास की पर्याप्त सम्भावनाए हैं। हमारे देश म अनेक जल विद्युत योजनाएँ कार्यान्वित हो रही हैं अत सस्ती शक्ति उपलब्ध हो सकेगी। पूर्वी पजाब दिल्ली पश्चिमी उत्तर प्रदेश व दक्षिण भारत म सूती-वस्त्र उद्योग के विकास की पूर्ण सम्भावनाएँ हैं। देश म जनसख्या-वृद्धि हो रही है। अत कपडे की माग भी बढेगी।

हमारे निकट के देशो पाकिस्तान ब्रह्मा, थाईलण्ड, अफगानिस्तान ईरान ईराक, अरब गणराज्य व अफ्रीका के अन्य देश भारतीय वस्त्र के लिए अच्छे बाजार हैं। अत भविष्य उज्ज्वल है।

पचवर्षीय योजनाओ मे प्रगति—

(I) प्रथम पचवर्षीय योजना काल—प्रथम योजना के निर्माण के समय सूती वस्त्र के सम्बन्ध म यह नीति अपनाई गई थी कि इस उद्योग के द्वारा देश की आन्तरिक माँग की पूर्ति हो सके तथा विदेशों मे पर्याप्त मात्रा म वस्त्र का निर्यात भी किया जा सके। इस उद्योग का विकास निजी क्षेत्र पर ही छोड दिया गया।

मिलो की सख्या—इस योजना क आरम्भ म सूती वस्त्र बनाने की ३88 मिलें थी। इस योजना काल मे 24 नई मिले स्थापित की गई। इस प्रकार प्रथम योजना के अन्तिम वर्ष 1955 56 मे भारत म सूती मिलो की सख्या 412 हो गई।

लक्ष्य एव उत्पादन—प्रथम योजना मे कपडे के उत्पादन का लक्ष्य (मिलो द्वारा) 470 करोड गज रखा गया था जो कि सन 1953 मे ही पूरा कर लिया गया था। वर्ष 1950 51 म देश म लगभग 340 करोड मीटर कपडे का उत्पादन मिलो द्वारा किया गया जबकि 1955 56 म 466 करोड मीटर वस्त्र का उत्पादन हुआ।

प्रति व्यक्ति उपभोग—इस योजना काल म कपडे के प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग में भी वृद्धि हुई। वर्ष 1950 51 मे यह उपभोग 11 0 मीटर था जो वर्ष 1955 56 म बढकर 14 4 मीटर हो गया।

विदेशी व्यापार—विदेशी व्यापार की दृष्टि से इस योजना म गिरावट आई। वर्ष 1950 51 म लगभग 57 करोड रुपय के मूल्य का वस्त्र निर्यात किया गया जबकि 1955 56 म लगभग 48 करोड रुपय मूल्य का ही वस्त्र निर्यात किया

गया। देश से सूती वस्त्र निर्यात बढ़ाने के लिए परामर्श देने के लिए सन् 1954 में 'सूती कपड़ा निर्यात प्रसार परिषद (Cotton Export Promotion Council) की स्थापना की गई।

(II) द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल—इस योजना-काल में भारत में सूती वस्त्र की उत्पादन-क्षमता 24 प्रतिशत बढ़ाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इस योजना-काल में सूती वस्त्र का कुल उत्पादन लक्ष्य 8.20 अरब गज रखा गया था जिसका विवरण इस प्रकार है —

क्षेत्र	उत्पादन लक्ष्य
मिलें	500 करोड़ गज
हाथ करघे	300 करोड़ गज
विद्युत करघे	20 करोड़ गज
	820 करोड़ गज

मिलों की संख्या—द्वितीय योजना काल के आरम्भ (1955-56) में देश में 412 सूती वस्त्र मिलें थीं। इस योजना काल में लगभग 67 नई मिलें स्थापित हुई। इस प्रकार इस योजना के अंतिम वर्ष (1960-61) में भारत में 479 सूती वस्त्र मिलें हो गई।

उत्पादन—इस योजना के अंतिम वर्ष 1960-61 में देश में लगभग 465 करोड़ मीटर वस्त्र उत्पादन हुआ।

प्रति व्यक्ति उपभोग—इस योजना काल में देश में प्रति व्यक्ति वार्षिक वस्त्र के उपभोग में कुछ कमी हुई। वर्ष 1955-56 में यहां प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग का औसत 14.4 मीटर था जो वर्ष 1960-61 में 13.8 मीटर ही रह गया।

विदेशी व्यापार—द्वितीय योजना के आरम्भ में भारत से लगभग 48 करोड़ रुपये के मूल्य का वस्त्र निर्यात किया गया। इस काल में वस्त्र निर्यात के मूल्य में वृद्धि हुई। योजना के अंतिम वर्ष 1960-61 में लगभग 57.5 करोड़ रुपये के मूल्य का वस्त्र भारत से निर्यात किया गया। इस योजना में भारत से सूती वस्त्र का निर्यात लगभग 100 करोड़ गज का लक्ष्य रखा गया था, जो पूरा नहीं हो पाया क्योंकि देश से 1960-61 में केवल 72 करोड़ गज कपड़े का ही निर्यात किया जा सका।

सन् 1958 में भारत सरकार ने श्री डी० ए० रमन की अध्यक्षता में 'सूती वस्त्र जाँच समिति (Textile Enquiry Committee) की नियुक्ति की। इस समिति ने सूती वस्त्र उद्योग पर उत्पादन-कर घटाने, विवेकीकरण करने और स्वचालित-करघे लगाने की सिफारिश की। सरकार ने इनमें से अधिकांश सुझावों को मान्यता दी और जिसके परिणामस्वरूप सरकार ने 1959-60 में स्वचालित करघे लगाने की अनुमति दे दी।

(III) तृतीय पंचवर्षीय योजना काल—तृतीय पंचवर्षीय योजना के लिए वस्त्र उत्पादन का लक्ष्य द्वितीय योजना के उत्पादन लक्ष्य की अपेक्षा लगभग 16

प्रतिशत अधिक रखा गया। तृतीय योजना म सूती वस्त्र का मिलो द्वारा उत्पादन लक्ष्य लगभग 580 करोड गज रखा गया था।

उत्पादन—तीसरी योजना क प्रारम्भिक वर्षो म सूती वस्त्र का उत्पादन कुछ कम ही रहा किन्तु बाद के वर्षों म उत्पादन म वृद्धि हुई। योजना के अंतिम वर्ष 1965 66 म सूती-वस्त्र का उत्पादन लगभग 440 करोड मीटर हुआ जो कि उत्पादन लक्ष्य स लगभग 25 करोड मीटर कम था। इस प्रकार स्पष्ट है कि तृतीय पचवर्षीय योजना का सूती-वस्त्र उत्पादन लक्ष्य पूर्णतया प्राप्त नहीं हो पाया।

मिलो की सख्या—तृतीय योजना के आरम्भ म 479 सूती वस्त्र मिलें थीं जो सन 1966 म 575 हो गई। इस प्रकार इस अवधि म लगभग 96 नई मिलें स्थापित की गई।

प्रति व्यक्ति उपभोग—इस योजना काल म सूती वस्त्र के प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग म भी थोडी वृद्धि हुई। वर्ष 1960 61 म यह उपभोग 13 8 मीटर प्रति व्यक्ति वार्षिक था, जबकि वर्ष 1965 66 म यह बढ कर 14 6 मीटर हो गया।

तृतीय योजना म सूती वस्त्र उद्योग मिलो के आधुनीकरण एव पुनर्स्थापन पर 100 करोड रुपये व्यय करने का लक्ष्य था किन्तु वास्तव म 105 करोड रुपये व्यय किये गये।

विदेशी व्यापार—तीसरी योजना काल म सूती वस्त्र के निर्यात म भी वृद्धि हुई। वर्ष 1960 61 म 57 5 करोड रुपये मूल्य का वस्त्र निर्यात किया गया था और वर्ष 1965 66 म लगभग 63 करोड रुपये के मूल्य के वस्त्र निर्यात किये गये।

(IV) वार्षिक योजनाएँ—प्रथम वार्षिक योजना (1966 67) म सूती-वस्त्र के उत्पादन का जो लक्ष्य निर्धारित किया गया था, वह प्राप्त न हो सका और उत्पादन 1965 66 से भी कम रहा। इस वर्ष उत्पादन मे यह कमी कपास क अभाव एव क्रय शक्ति म कमी होने और सूती वस्त्र की माँग म गिरावट आने के कारण हुई। सूती वस्त्र का प्रत्येक व्यक्ति वार्षिक उपभोग लगभग 13 8 मीटर ही रह गया जो कि पिछले वर्ष 1965 66 से कम था।

द्वितीय वार्षिक योजना (1967 68) म सूती वस्त्र उद्योग की प्रगति और भी असन्तोषजनक हो गई। इस उद्योग की लगभग 123 मिलें इस वर्ष घाटे म रही जबकि गत वर्ष केवल 49 मिलें घाटे मे थी। इकोनोमिक टाइम्स के अनुसार सन 1968 म बन्द मिलो की सख्या 80 हो गई। इस वर्ष सूती वस्त्र का प्रति व्यक्ति उपभोग 0 5 मीटर घट कर 13 3 मीटर रह गया।

(V) चतुर्थ पचवर्षीय योजना (1969 74)—चौथी पचवर्षीय योजना मे सूती मिल के कपडे का उत्पादन लक्ष्य 548 ■ करोड मीटर रखा गया है।

इस योजनावधि म सूती-वस्त्र उद्योग क प्रसार पर कम किन्तु आधुनीकरण पर अधिक बल दिया जायगा। वित्तीय संस्थाओं द्वारा इस कार्यक्रम क समर्थन के

लिए समुचित व्यवस्था की गई है। सरकारी क्षेत्र का सूती वस्त्र निगम, उद्योग की बीमार (Sick) मिलो की सहायता करेगा।

चौथी योजना म, सूती वस्त्र का प्रति-व्यक्ति वार्षिक उपभोग लगभग 16 9 मीटर कर दने का लक्ष्य रखा है।

आशा है कि चतुर्थ पचवर्षीय योजना काल म सूती वस्त्र उद्योग का समुचित विकास हो सकेगा।

सूती वस्त्र उद्योग की वतमान समस्याएँ

सूती वस्त्र उत्पादक देशा म भारत का विश्व म दूसरा स्थान है, सयुक्त राज्य अमरीका का प्रथम स्थान है। कपडे के निर्यात की दृष्टि से भी जापान के पश्चात भारत का ही स्थान है। सयुक्त राज्य अमरीका और इगलण्ड उसके पीछे हैं। 100 वष से भी अधिक पुराना भारतीय वस्त्र उद्योग आज चौराहे पर खडा है उसके सामने अनेक नई व पुरानी समस्याएँ हैं किन्तु इन समस्याओ का समाधान नही हो पा रहा है। भारतीय सूती वस्त्र की प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं —

(1) **आधुनिकीकरण एव नवीनीकरण की समस्या**—भारतीय वस्त्र मिलो की पुरानी मशीना को बदल कर उनके स्थानो पर नई मशीन लगाना इस उद्योग की प्रमुख समस्या है। इस उद्योग की मशीन बहुत पुरानी है व घिस गई हैं। युद्ध काल मे इन मशीनो से लगातार 24 24 घण्टे काम लेने और बाद म एक से अधिक पालियो म काम करने से अधिकाश मशीनें जीर्ण हो चुकी हैं। वकिंग कमेटी ने बतलाया है कि स्पिनिंग कारखानो म लगभग 65 प्रतिशत मशीनें 1925 स पहले लगाई गई थी और 30 प्रतिशत मशीनें तो 1910 स भी पहले। जोशी कमेटी (1958) ने भी इसकी पुष्टि की है अत इन मशीनो को बदलने की आवश्यकता है। आधुनिकीकरण की समस्या का हल करने क माग म दो प्रमुख कठिनाइयाँ हैं प्रथम तो सूती वस्त्र उद्योग स सम्बन्धित मशीनो की उपलब्धि की कठिनाई और दूसरे पर्याप्त मात्रा म देशी व विदेशी पूजी की व्यवस्था। गुजरात टक्सटाइल रिऑरगनाइजेशन कमेटी ने अपनी रिपोर्ट (1968) में बतलाया है कि देश की सूती मिलो के आधुनिकीकरण के लिए कम से कम दो अरब रुपयो की आवश्यकता है।

जापान म 65 प्रतिशत कपडे की मशीनें नई है, सयुक्त राज्य अमरीका ने भी लगभग 80 करोड डालर कपडे की नई मशीनरी पर व्यय किये हैं।

(2) **विवेकीकरण की समस्या**— न्यूनतम व्यय से अधिकतम उत्पादन करना ही विवेकीकरण (Rationalisation) का उद्देश्य होता है। आज सभी उन्नत देश अपना उत्पादन व्यय कम करने के लिए स्वय सचालित करघा (Looms) का प्रयोग कर रहे हैं। इगलण्ड म एक कारीगर 4 6 करघो को चलाता है सयुक्त राज्य अमरीका मे 32 से 72 करघे और जापान मे 48 करघे चलाता है जबकि भारत मे एक कारीगर 2 से अधिक करघे नही चलाता है। यद्यपि देश के कुछ क्षेत्रो म विवेकीकरण का विरोध प्रकट किया गया है किन्तु उत्पादन व्यय म कमी करने के

लिए नियन्त्रण आवश्यक है, ताकि हम विदेशियों की प्रतिस्पर्धा का सफल मुकाबला कर सकें।

(3) बढ़िया कपास की समस्या—उच्च कोटि की कपास के सम्बन्ध में भारत अभी तक स्वावलम्बी नहीं हुआ है। विभाजन के फलस्वरूप पश्चिमी पंजाब व सिंध के कपास क्षेत्रों से हम वंचित रह गये। अभी हमको मिस्र, सूडान व संयुक्त-राज्य अमरीका से बढ़िया किस्म की कपास का आयात करना पड़ता है। कपास की दृष्टि से पूर्ण स्वावलम्बी होना अत्यन्त आवश्यक है। इससे विदेशी मुद्रा की भी बचत हो सकेगी। भारत सरकार तथा इण्डियन सेन्ट्रल काटन कमेटी कपास की किस्म व उपज बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है और इस दिशा में सफलता भी मिली है।

(4) बढ़ता हुआ उत्पादन व्यय—सूती वस्त्र उद्योग के सम्मुख उत्पादन व्यय में निरन्तर वृद्धि की भी समस्या है। उद्योग के आधारभूत कच्चे माल कपास के मूल्यों में वृद्धि हुई है। रासायनिक पदार्थों व रख रखाव (Maintenance) व मजदूरी में अधिक वृद्धि हुई है। अनुमान है कि पिछले कुछ वर्षों में ही मजदूरी व वेतन में लगभग 65 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसमें और अधिक वृद्धि होने की प्रवृत्ति है।

(5) औद्योगिक अशान्ति की समस्या—आज प्रत्येक उद्योग में अशान्ति की समस्या बनी हुई है और सूती वस्त्र उद्योग भी इससे वंचित नहीं है। अन्य उद्योगों की अपेक्षा सूती वस्त्र उद्योग में श्रमिक अधिक संगठित हैं अतः अशान्ति की सम्भावना अधिक रहती है। इन सबके परिणामस्वरूप वस्त्र उत्पादन में बाधा पड़ती है। इस समस्या का निवारण करने के लिए बम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स एक्ट बनाया गया है जिसमें सूती वस्त्र उद्योग के औद्योगिक सम्बन्धित समस्याओं का निवारण करने के लिए प्रयत्न किया गया है।

(6) किस्म नियन्त्रण—आज के युग में किस्म नियन्त्रण का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया है। कपड़े की किस्म का ऊँचा स्तर स्थापित करना और उसको बनाए रखना ही किस्म नियन्त्रण का प्रमुख उद्देश्य है। भारत विदेशों को बड़ी मात्रा में वस्त्र का निर्यात करता है अतः किस्म नियन्त्रण का महत्व और भी अधिक है। हमारे देश में किस्म नियन्त्रण पर अभी तक विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। इस दिशा में पर्याप्त ध्यान देने की आवश्यकता है।

(7) अनार्थिक मिलों की समस्या—हमारे देश में अनेक अनार्थिक (Uneconomic) सूती वस्त्र मिलें हैं। लगभग 100-125 सूती वस्त्र मिलें घाटे में रहती हैं। आज मिलों का बहुत ही कम लाभ होता है। इस प्रकार यह उद्योग संकट का सामना कर रहा है। महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश आदि में अनेक सूती मिलें बन्द हो गई। अतः इस स्थिति पर गम्भीरता से ध्यान देने की आवश्यकता है। राज्यों के वित्त निगम, यूनिट ट्रस्ट आफ इण्डिया तथा अन्य वित्तीय संस्थाओं को इन मिलों को ऋण आदि की सुविधा देनी चाहिए।

(8) **मशीनों की समस्या**—भारत को मशीनों के लिए विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है। रुपये के अवमूल्यन से ये मशीनें भारत के लिए और भी अधिक महँगी पड़ती हैं, क्योंकि मशीनें 'कठोर मुद्रा क्षेत्र' से मँगवाई जाती है।

कलकत्ता की टक्सटाइल मशीनरी कार्पोरेशन ने कातने के ढाँचे बनाना आरम्भ कर दिया है। कोयम्बटूर में भी तीन कम्पनियाँ कातन के ढाँचे बनाती हैं।

टक्समको ग्वालियर, कपूर इन्जीनियरिंग, सतारा, और मैसूर मशीनरी मैन्यूफैक्चरर्स लि०, बंगलौर—ये तीन कम्पनियाँ करघे बनाती हैं। फिर भी देश में इस क्षेत्र में अभी बहुत कार्य करना है।

(9) **सरकारी नीति**—करघे कमेटी तथा कानूनी कमेटी ने स्पष्ट रूप से भारत सरकार को परामर्श दिया है कि भारतीय सूती मिलों का उत्पादन 500 करोड़ गज प्रतिवर्ष से अधिक न होने दिया जावे और इस उद्देश्य के लिए प्रतिबन्ध लगा देना चाहिए किन्तु साथ ही साथ करघे को प्रोत्साहन दिया जावे। इस प्रकार भारतीय सूती मिलों का उत्पादन स्तर 500 करोड़ गज प्रति वर्ष निर्धारित कर दिया गया है। इस प्रकार सौतेली माँ का सा बर्ताव लाभप्रद न होगा।

(10) **सरकारी करों की अधिकता**—भारत में सूती वस्त्र उद्योग पर अधिक कर भार इसके विकास में एक बड़ी बाधा रही है। अनुमान है कि सूती वस्त्र के उत्पादन व्यय का लगभग 20 प्रतिशत भाग उत्पादन कर आदि होते हैं, जो बहुत अधिक है। इतना भाग कर चुका देने के पश्चात् उद्योगपतियों के पास लाभ की मात्रा बहुत कम रह जाती है और फिर मशीनों के नवीनीकरण एवं आधुनिकीकरण के लिए पर्याप्त धन राशि नहीं बच पाती है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि सवप्त सूती वस्त्र उद्योग की उन्नति के लिए उत्पादन कर में कमी की जानी चाहिए।

(11) **राष्ट्रीयकरण की समस्या**—कुछ क्षेत्रों से कपड़ा उद्योग के राष्ट्रीयकरण की माँग हो रही है जिसके कारण उद्योगपति इस उद्योग में रुपया लगाने में संकोच कर रहे हैं। जनवरी 1959 में अखिल भारतीय हाथ करघा बोर्ड की ओर से कहा गया था कि भारतीय अर्थव्यवस्था के हित में कपड़ा मिलों का तत्काल राष्ट्रीयकरण करना चाहिए।

(12) **आंतरिक प्रतिस्पर्धा की समस्या**—भारतीय सूती वस्त्र उद्योग को देश में खादी, हाथ-करघे अम्बर चर्खे आदि से प्रतिस्पर्धा करनी पड़ रही है। इसके अतिरिक्त नायलोन टरलीन तथा अन्य प्रकार के नवीन धागों से बने वस्त्रों की माँग दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। यह भी भारतीय सूती वस्त्र उद्योग के लिए समस्या हो गई है।

(13) **विदेशी प्रतिस्पर्धा की समस्या**—श्रेष्ठ किस्म की कपास, आधुनिक ढंग की मशीनों और आधुनिक विधि से उत्पादन करने के कारण कपड़े का उत्पादन व्यय बहुत कम पड़ता है अतः विदेशों में सस्ते मूल्य पर वस्त्र निर्यात किये जा सकते

हैं। जापान चीन, पाकिस्तान, अमरीका आदि देशो से भारतीय वस्त्र को विशेषा से कठोर प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है। अनेक बाजार हमारे हाथ से निकल गये हैं।

(14) बाजारों की समस्या—भारतीय वस्त्र को आयात करने वाले बहुत अधिक देश नहीं है। भारतीय वस्त्र निर्यात का लगभग 75 प्रतिशत केवल 7 देशो को जाता है जबकि जापान का इतना ही प्रतिशत कपडा 15 देशो को जाता है। अत कुछ ही बाजारो पर निर्भर रहना उचित नहीं।

(15) विकेन्द्रीयकरण की समस्या—वस्त्र उद्योग का भारत मे स्थानीयकरण है जिससे अनेक हानियाँ भी होती हैं। अब देश मे अनेक योजनाओ द्वारा सस्ती जल विद्युत उपलब्ध होने लगगी अत छोटे छोटे नगरो एव ग्रामीण क्षेत्रो मे भी सूती कपड की मिले स्थापित करनी चाहिए ताकि आर्थिक एव सामाजिक दोनो ही लाभ हो।

(16) रासायनिक पदार्थों की समस्या—सूती वस्त्र उद्योग मे अनेक रासायनिक पदार्थों की आवश्यकता पडती है जिनमे से अधिकाश विदेशो से आयात किये जाते हैं।

किन्तु अब हमारे देश मे रासायनिक पदार्थ के निर्माण मे अनेक कारखाने लग हुए है तथा अनेक नये कारखानो की स्थापना भी हो रही है। अत यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि भविष्य मे सूती मिलो की मांग की पूर्ति स्वदेश मे ही होने लगेगी।

(17) अनुसन्धान की समस्या—भारत के सूती वस्त्र उद्योग जैसे महत्वशील सगठित एव प्रतियोगी उद्योग मे निरन्तर उन्नति व सुधार की आवश्यकता रहती है। भारत मे सूती वस्त्र उद्योग मे अनुसन्धान की पर्याप्त सुविधाए उपलब्ध नहीं है अत इसकी उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

(II) ऊनी वस्त्र उद्योग
(Woollen Industry)

ऊनी वस्त्र उद्योग का सबसे अधिक विकास यूरोप तथा सयुक्त राज्य अमरीका मे ही हुआ है। हमारे देश मे गर्म जलवायु होने के कारण ऊन उद्योग बहुत अधिक विकसित नहीं हो पाया है।

भारत मे सबसे प्रथम ऊनी कपडा बनाने का कारखाना सन् 1876 मे कानपुर मे स्थापित हुआ। इसके थोड़ समय बाद ही दूसरा कारखाना धारीवाल (पजाब) मे स्थापित हुआ। इसके पश्चात अहमदाबाद लुधियाना बम्बई, व बगलोर मे भी ऊनी कारखाना की स्थापना हुई। बम्बई मद्रास कलकत्ता तथा मुजफ्फरनगर (उत्तर प्रदेश) मे सेना के लिए कम्बल बनाने के कारखाने स्थापित हुए।

सन 1939 मे भारत मे केवल 15 ऊनी मिलें थी। द्वितीय युद्ध काल मे सेना की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए अनेक मिलें स्थापित की गई। इस काल मे भारत मे 24 ऊनी मिलें थी। इनके अतिरिक्त लगभग 60 छोटे छोटे कारखाने भी

थे। सन 1948 म 26 ऊनी वडे कारखाने थे। इस उद्योग का विस्तार हमारे देश म 1920 21, 1948 54, 1957 61 और 1967-70 की अवधि मे हुआ।

वतमान स्थिति—

इस समय भारत में लगभग 92 ऊनी मिल ह। इनके अतिरिक्त अनेक छोटी मिलें हैं। भारत मे ऊनी मिलें मुख्यत महाराष्ट्र गुजरात पजाब, हरियाना उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बगाल व मसूर राज्यों मे हैं। यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि राजस्थान ऊन उत्पादक प्रमुख राज्य है किन्तु यहाँ ऊनी मिल उद्योग का विशेष विकास नहीं हुआ है। बीकानेर व चूरु में एक एक मिल है।

भारत के ऊनी मिल उद्योग मे लगभग 90 करोड रुपये विनियोजित हैं तथा लगभग एक लाख व्यक्तियो को रोजगार मिलता है। उत्तर प्रदेश म कानपुर में लाल इमली मिल, पजाब में धारीवाल म न्यू इजरटन मिल्स महाराष्ट्र म रेमण्ड वुलन मिल्स और बम्बई वुलन मन्युफक्चरिंग कम्पनी उल्लेखनीय ऊनी मिल हैं।

उपरोक्त के अतिरिक्त ऊनी होजियरी आदि की लगभग 900 छोटी इकाइयां हैं जिनमे लगभग 750 केवल पजाब व हरियाना म ही हैं जो स्वेटर, मफलर, मोजे, दस्ताने शाल दुशाले आदि बनाते हैं। इनके अतिरिक्त ऊनी कालीन बनाने के भी अनेक कारखाने है।

उत्पादन—

भारत मे ऊनी वस्त्र और धागो का उत्पादन इस प्रकार हुआ —

वर्ष	ऊनी वस्त्र (लाख मीटर)	ऊनी धागा (लाख किलो)
1950 51	61	87
1955 56	68	98
1960 61	84	130
1965 66	92	170
1966 67	95	170
1967 68	92	168

भारतवर्ष म मोटा कपडा तथा कुछ श्रेष्ठ किस्म का ऊनी कपडा बनता है। बहुत अच्छी किस्म का कपडा विदेशो से आयात किया जाता है।

कश्मीर व श्रीनगर के ऊनी दुशाल ससार भर म प्रसिद्ध हैं। राजस्थान म बीकानेर व जसलमर उत्तर प्रदेश म मिर्जापुर तथा पजाब म अमृतसर के नमदे तथा कम्बल अच्छे मान जाते हैं।

आग आने वाले वर्षों म जनसख्या की वृद्धि तथा जनता के रहन सहन के स्तर म सुधार होने के फलस्वरूप ऊनी कपडे की मांग बढ कर 1 करोड मीटर हो जाने का अनुमान है।

19

जूट उद्योग

(Jute Industry)

प्रारम्भिक—संक्षिप्त इतिहास

भारत में आधुनिक जूट उद्योग का विकास विदेशी पूंजी, साहस और संगठन के द्वारा पिछली शताब्दी के पूर्वार्द्ध के पश्चात हुआ। कुटीर उद्योग के रूप में बंगाल के कारीगर जूट का सामान काफी समय से तैयार करते आ रहे थे। सर्वप्रथम सन् 1832 में डंडी (इंगलैण्ड) के एक निर्माता ने यह प्रयोग किया कि इसको हैम्प (Hemp) के स्थान पर काम में ले सकते हैं। क्रीमिया युद्ध के समय सन् 1854 में रूस ने इंगलैण्ड को हैम्प व फ्लैक्स (Flax) देना बन्द कर दिया तब डंडी (Dundee) की मिलों को भारत से तत्कालीन ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने जूट भेजना आरम्भ कर दिया। अब सन 1855 में एक अंग्रेज जार्ज आकलैण्ड ने हुगली नदी के निकट सिरामपुर के निकट रिशरा नामक स्थान पर जूट का भारत में प्रथम कारखाना स्थापित किया। किन्तु यह कारखाना सफल न हो पाया और तीन वर्ष बाद सन 1858 में बन्द हो गया, इसके पश्चात सन् 1859 में स्काटिश जार्ज हैण्डरसन ने जूट का कपड़ा बुनने का एक नया कारखाना स्थापित किया। इसके पश्चात सन् 1862 में तीन और 1866 में एक और जूट के कारखाने की स्थापना हुई। सन 1884 में 'इण्डियन जूट मिल्स ऐसोसिएशन' की स्थापना की गई।

सन 1892 में 26 जूट मिल थी जिनमें 137 लाख रुपये की देशी पूंजी और 17.57 लाख पौण्ड की विदेशी पूंजी थी। सन 1904 में देश में 38 जूट मिलें थी जिनमें 743 लाख रुपये और 22.63 लाख पौण्ड की विदेशी पूंजी थी।

फिर तो इस उद्योग को इतनी सफलता मिली कि जूट को स्वर्ण रेशम और जूट के कारखानों को 'रुपये की टकसाल' कहने लगे थे। जूट का उपयोग निर्धन व धनी सभी व्यक्ति करते हैं। निर्धनों की झोपड़ियों में मटमैले टाटों और बोरों तथा धनवानों के घरों में रंग बिरंगे पर्दों, दरियों, फर्शों, बिछावनों, सोफा के गद्दों और वाटरप्रूफ कपड़ों के रूप में जूट का अधिकाधिक प्रयोग किया जाता है। पैकिंग में यह सर्वाधिक प्रयोग में आने वाला व सस्ता साधन है।

मिलों का वितरण

भारत में अधिकांश जूट की मिलें हुगली नदी के किनारे लगभग 3 Kms

चौडी और 100 Kms लम्बा पट्टी म स्थित हैं। यह पट्टी कलकत्ता मे लगभग 60 Kms उपर और 40 Kms नीचे तक विस्तृत है। इस भाग मे भारत की लगभग 80 प्रतिशत जूट की मिलें हैं।

भारत मे जूट उद्योग का क्रमिक विकास

वर्ष	मिलो की सख्या
1859 1860	1
1879 से 1884 तक (औसत)	21
1899 से 1904 तक (औसत)	36
1909 स 1914 तक (औसत)	60
1925 26	90
1930 31	100
1937 38	105
1946 47	106
1956 57	112
1966	94

भारत म सन 1966 म 94 जूट की मिलें थी।[1] भारत म जूट की अधिकाश मिल पश्चिमी बगाल म हैं। आन्ध्र बिहार, उडीसा, उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश म भी जूट की मिले हैं।

पश्चिमी बगाल—

जूट की मिलो की सख्या की उपरोक्त तालिका दखने स ज्ञान होता है कि जूट उद्योग पश्चिमी बगाल राज्य म (मुख्यत हुगली क्षेत्र म) केन्द्रित है। इस केन्द्रीयकरण क निम्नलिखित कारण हैं —

(1) कलकत्ता बन्दरगाह—इस क्षेत्र मे जूट उद्योग के केन्द्रीयकरण के सबसे महत्वपूर्ण कारणा म एक कारण है कलकत्ता बन्दरगाह की निकटता व सुविधा। जूट का अधिक उत्पादन पूर्वी बगाल मे होता था किन्तु उस क्षेत्र म कोई विकसित बन्दरगाह न होन के कारण कच्चा जूट पहल से ही कलकत्ता बन्दरगाह म बाहर निर्यात किया जाता था। अत कलकत्ता जूट की मण्डी के रूप म विकसित हो चुका था, इस कारण मिलो को कच्चा जूट हर समय सुविधा स प्राप्त हो सकता था। इस प्रकार कच्चे माल के कारण जूट की मिलें इसी क्षेत्र म स्थापित हुई। दूसरे उस समय भारत औद्योगिक दृष्टि स बहुत पिछडा था। अत मशीनो क लिए पूणत विदेशो विशेषत इगलण्ड पर निभर रहना पडता था। दश के आन्तरिक भागो म भी यातायात की इतनी अधिक सुविधायें न थी। इसलिए मशीनो का भीतरी भाग

[1] *India—1969*, p 323

म सरलता स यहा पहुचाया जा सकता था। इस सुविधा के कारण अधिकाश मिल हुगली नदी के किनारे पर ही स्थापित हो गयी।

(2) राजधानी का आकर्षण—सन् 1911 तक कलकत्ता भारत की राजधानी थी। भारत म जूट उद्योग का विकास विदेशी पूजी, साहस व सगठन म हुआ है। अत कलकत्ता व निकटवर्ती क्षत्रो म अनक अग्रज व यूरोपियन रह रह थ। उन्होंने इस क्षेत्र म ही जूट की मिल स्थापित की।

(3) पूर्वारम्भ—इस क्षत्र को पूर्वारम्भ की सुविधा भी मिल गई। आधुनिक मिल उद्योग आरम्भ होने के पूव यहा जूट कुटीर उद्योग क रूप म चालू था। स्टीम स चलने वाली मिलें भी पहल इसी क्षत्र म स्थापित हुई। इनक साथ ही तयार माल को सुरक्षित रखन और निर्यात करन की सुविधाए भी यहां विकसित हुई जो किसी नय क्षत्र म नहा मिल सकती थी। अत अय मिल भी इन सुविधाओ का लाभ उठान के लिए इसी क्षत्र म स्थापित हुई।

(4) जूट की सुविधापूवक उपलब्धि—जूट की खेती क लिए उस समय बगाल को एकाधिकार प्राप्त था। अत यह स्वाभाविक था कि जूट की मिलें इस क्षत्र मे हा स्थापित हो विशपत उस समय जबकि यहां अन्य सुविधाए उपलब्ध थी।

(5) कोयले की निकटता—उस समय जल विद्युत का तो औद्योगिक शक्ति के रूप म विकास हुआ नही था। केवल कोयला ही शक्ति का साधन था। रानीगज व झरिया का कोयल की खान 195 Kms की दूरी म ही हैं। इनके अतिरिक्त वे रेलमाग द्वारा कलकत्ता से जुडी हुई हैं अत कोयला यहा अधिक सुविधा स प्राप्त किया जा सकन क कारण जूट मिल यहीं स्थापित की जाने लगी।

(6) श्रमिको की उपलब्धता—इस भाग म पर्याप्त मात्रा म सस्ते श्रमिक उपलब्ध हो जाते है इसका कारण यह है कि प्रथम इस राज्य म घनी जनसख्या है, दूसरे, यह औद्योगिक केन्द्र होने के कारण तथा भारत की तत्कालीन राजधानी होने के कारण विभिन राज्यो से श्रमिक उपलब्ध रहत थे। कुशल, अद्धकुशल और अकुशल मजदूरो की प्राप्ति म कभी कठिनाई नही हुई।

(7) उत्तम जलवायु—समुद्र व नदी तट निकट होने के कारण यहा की जलवायु ऐसी थी कि यहा बहुत गर्मी नही पडती थी इसलिए अग्रजो ने जो कि इस इस उद्योग के संस्थापक थ यहा पर ही यह उद्योग स्थापित करना उपयुक्त समझा। इसके अतिरिक्त वातावरण मे नमी होन क कारण भी जलवायु इस उद्योग के अनुकूल है।

(8) यातायात की सुविधा—गगा एव ब्रह्मपुत्र की सहायक नदियो द्वारा सस्ते यातायात की सुविधा प्राप्त है जिससे कच्चा जूट कारखाना तक सरलता स पहुँच जाता है। हुगली स सिरामपुर तक जहाज चलाये जाते हैं। यह क्षत्र देश के आन्तरिक भागो से रल व सडक मार्गों द्वारा भी जुडा हुआ है। इसके अतिरिक्त वायुमार्ग

द्वारा भी देश व विदेशों से जुड़ा हुआ होने के कारण व्यापारियों व उद्योगपतियों को सुविधा है।

(9) स्वच्छ जल—जूट व रेशे धोने व रंगने के लिए स्वच्छ जल प्रचुर मात्रा में चाहिए क्योंकि यदि पानी गन्दा होता है तो जूट के रेशे में चमक नहीं आ पाती है और जूट की किस्म खराब हो जाती है। यहाँ हुगली नदी से स्वच्छ जल प्रचुर मात्रा में प्राप्त होने की सुविधा है।

(10) रासायनिक पदार्थों की प्राप्ति—कलकत्ता के औद्योगिक प्रदेश में रासायनिक पदार्थ बनाये जाते हैं, अतः सस्ते रसायन सुलभ हो जाते हैं। जो रासायनिक पदार्थ यहाँ उपलब्ध नहीं हो पाते हैं वे विदेशों से सरलतापूर्वक आयात कर लिये जाते हैं।

(11) पूंजी की सुविधा—कलकत्ता भारत का प्रमुख आर्थिक केन्द्र रहा है। कलकत्ता नगर में भारत के अनेक पूंजीपति बैंक, बीमा कम्पनियाँ आदि आरम्भ से ही हैं। अतः आर्थिक सहायता व पूंजी सरलता से उपलब्ध हो जाती थी। यह सुविधा बंगाल के अन्य भागों में उपलब्ध नहीं थी।

(12) औद्योगिक क्षेत्र की सुविधा—कलकत्ता और इसके उपनगर विशाल औद्योगिक क्षेत्र हैं। अतः यहाँ हर प्रकार के विज्ञापन मिस्त्री आदि सरलता से उपलब्ध हो जाते हैं। अतः तकनीकी सहायता सरलता से प्राप्त हो सकती है। इस भाग में पुर्जे आदि बनाने का कार्य भी आरम्भ हो चुका था। इसलिए जूट मिल यहाँ स्थापित करना सुविधाजनक प्रतीत होता था। यदि जूट मिलों का यहाँ केन्द्रीयकरण न होता और जूट मिलें दूर-दूर बिखरी होतीं तो ये सुविधाएँ सभी मिलों को नहीं मिल पातीं।

इन्हीं प्रमुख कारणों से इस राज्य के प्रायः सभी कारखाने हुगली नदी के दोनों ओर किनारे से 3 Kms की दूरी के अन्दर स्थित हैं। उत्तर में बसबेरिया में दक्षिण में बिरलापुर तक 100 Kms की पट्टी में सब कारखाने आ जाते हैं। इन कारखानों में कोई भी कारखाना कलकत्ता से 65 Kms से अधिक दूर नहीं है। इसमें भी सबसे अधिक केन्द्रीयकरण 25 Kms लम्बी पटटी में पाया जाता है जो दक्षिण में रिशरा से उत्तर में नहाटी तक विस्तृत है।

पश्चिमी बंगाल राज्य में जूट उद्योग के प्रमुख केन्द्र ये हैं—बिरलापुर, बजबज शिवपुर हावड़ा, बाली, अगरपारा, रिशरा टीटागढ़ सिरामपुर जगतदल, कानकिनारा नहाटी और बसबरिया आदि। इनमें से प्रत्येक में 6 से 17 तक कारखाने हैं।

आन्ध्र—

इस राज्य में जूट की चार मिलें हैं जिनमें दो मिलें तो पर्याप्त बड़ी हैं और दो छोटी हैं। बड़ी जूट की मिलें विशाखापट्टनम जिले में (चीतावालशाह और नेल्लीमर्ला स्थानों पर) स्थित हैं, शेष दो मिलें गन्तूर व पूर्वी गोदावरी जिले में हैं।

इस राज्य मे पर्याप्त कच्चा जूट उपलब्ध नही है। अत पश्चिमी बगाल से मँगवाया जाता है।

बिहार—

इस राज्य म जूट की चार मिले है जो पूर्णिया तथा दरभगा जिलो म है। इन चार मिलो मे ये दो मिल अधिक बडी है—रामेश्वर जूट मिल कटिहार, और मोतीलाल जूट मिल्स दरभगा। इस राज्य म कच्चा जूट काफी होता है। यहाँ चीनी के कारखाने अधिक होने के कारण बोरा की माग अधिक है।

उत्तर प्रदेश—

इस राज्य म जूट के तीन कारखाने हैं जिनमे से 2 कारखाने कानपुर मे हैं व एक गोरखपुर से 16 Kms (10 मील) पश्चिम म सहजनवा म है। इन कारखानो के नाम ये है —(1) महेश्वरी देवी जूट मिल्स कानपुर, (2) जुग्गीलाल कमलापत मिल्स, कानपुर (3) महावीर जूट मिल्स सहजनवा।

अन्य क्षेत्र—

उपरोक्त के अतिरिक्त उडीसा के कटक जिले व मध्य प्रदेश के रायगढ जिले—प्रत्येक म एक एक जूट की मिल है।

कच्चा माल

सन 1947 के पूर्व भारत के पास विश्व म जूट उत्पादन का एकाधिकार ही था किन्तु देश का विभाजन हो जाने के कारण अविभाजित भारत के कुल जूट उत्पादन का लगभग 27 प्रतिशत भारतीय सघ म व शेष 73 प्रतिशत पाकिस्तान म चले जाने के फलस्वरूप देश म कच्चे जूट की पर्याप्त कमी हो गई। कमी की पूर्ति के लिए पश्चिमी बगाल, असम बिहार उडीसा के अतिरिक्त केरल आन्ध्र, उत्तर प्रदेश और कूच बिहार म जूट का उत्पादन किया जा रहा है। किन्तु अब भी हम कच्चे जूट की दिशा म स्वावलम्बी नही होने पाये हैं।

विभाजन का परिणाम

ऊपर बतलाया गया है कि कच्चे जूट पर देश के विभाजन का यह परिणाम पडा कि जूट के उत्पादन का लगभग 73% भाग पाकिस्तान म गया, और 27 प्रतिशत भाग भारत म रहा जिसके फलस्वरूप जो मिलें अपने क्षेत्र म समझी जाती थी व भिखारिणी बनी खडी था।

जूट की प्राय सभी मिलें भारत म रहा, पाकिस्तान म जूट की मिल नहीं गयी। किन्तु विभाजन के ठीक बाद ही पाकिस्तान सरकार ने भारत के विरुद्ध जूट का युद्ध आरम्भ कर दिया जिसके कारण भारतीय जूट उद्योग म अनेक कठिनाइयाँ व अनिश्चितता उत्पन्न हो गई थी। श्री० डी० सी० ड्राइवर के शब्दो मे, विभाजन ने जूट उद्योग का बँटवारा कर दिया है और उसके सचालन म बाधा डाल कर उसके पतन की नीव डाल दी है।

रुपये का अवमूल्यन

सितम्बर 1949 म भारतीय रुपये का अवमूल्यन कर दिया गया, परन्तु पाकिस्तान ने अपने रुपये का अवमूल्यन न करने का निर्णय किया, जिसके फलस्वरूप पाकिस्तान के जूट का मूल्य भारतीय रुपये के रूप म 44 प्रतिशत तक प्रत्यक्ष रूप म बढ़ गया। अत यह कठिनाई उत्पन्न हो गई। पाकिस्तान सरकार ने सन् 1955 म अपने रुपये का भारत के रुपये के अनुसार अवमूल्यन कर दिया है।

भारतीय जूट उद्योग में पूंजी, श्रमिक तथा उत्पादन

पूंजी—भारतीय जूट उद्योग म अधिकांश विदेशी पूंजी लगी हुई है। भारतीय पूंजी अपेक्षाकृत कम लगी हुई है। बिरला हुकमचन्द जूट मिलों म तथा अन्य कुछ प्रमुख मिलों म भारतीय पूंजी लगी हुई है। इस उद्योग म 92 करोड़ रुपये की पूंजी लगी हुई थी।

श्रमिक—भारत के इस उद्योग म लगभग $3\frac{1}{2}$ लाख श्रमिक लगे हुए हैं। भारत की कुल जनसंख्या का ध्यान म रखते हुए यह संख्या पर्याप्त कम प्रतीत होती है, किन्तु साथ ही हम यह स्मरण रखना चाहिए कि केवल जूट उद्योग से भारत के कुल श्रमिकवर्ग का लगभग दसवां भाग अपनी जीविका प्राप्त करता है।

जूट के माल का उत्पादन[1]

वर्ष	उत्पादन (लाख टन)
1950 51	8 37
1955 56	10 71
1960 61	19 97
1965 66	13 02
1966 67	11 17
1967 68	11 56
1968 69	9 98
1969 70	11 50
1970 71	12 50
1973 74 (लक्ष्य)	15 00

उत्पादन—भारत म जूट के सामान का पर्याप्त उत्पादन नहीं हो रहा है। तालिका के आंकड़ों से जूट उद्योग की स्थिति का ज्ञान होगा।

भारत की जूट मिलें आजकल प्रतिवर्ष लगभग 130 करोड़ रुपये के मूल्य का माल बना रही हैं। जूट के माल के उत्पादन अथवा वितरण पर कोई सरकारी नियन्त्रण नहीं है। इस पर जो एकमात्र नियन्त्रण है वह भारतीय जूट मिल संघ की ओर से है।

पंचवर्षीय योजना

यहाँ उल्लेखनीय है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना म सन् 1955-56 म 12 लाख टन जूट के सामान का उत्पादन लक्ष्य रखा था किन्तु यह लक्ष्य पूरा न हो सका। सम्भवतः इसी कारण द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत जूट के सामान का उत्पादन लक्ष्य पुन 12 लाख टन रखा था। तृतीय योजना म उत्पादन लक्ष्य 13 लाख टन था। चौथी योजना म उत्पादन लक्ष्य 15 लाख टन रखा है।

---

[1] *Source* Economic Survey 1969 70, Govt of India and Draft Fourth Five Year Plan

भारतीय जूट का व्यापार

भारत से पहले जूट का माल व कच्चा जूट बडी मात्रा म विदेशा को निर्यात त्या जाता था। अनुमान है कि देश के कुल निर्यात का लगभग 30 प्रतिशत जूट था जूट का मामान ही निर्यात होता था।

देश मे तयार किए जाने वाले जूट के माल का लगभग 80 प्रतिशत भाग र्यात कर दिया जाता है। गत कुछ वर्षों म भारत न विदेशा को जूट का निर्मित ाल इस प्रकार निर्यात किया —

भारत से जूट के माल का निर्यात

वर्ष	लाख टन
1955 56	8 60
1960 61	8 02
1961 62	8 80
1962 63	9 60
1965 66	9 30
1966 67	7 38
1967 68	7 57
1968 69	7 3

सयुक्त राज्य अमरीका कनाडा इगलण्ड अर्जेंटाइना आस्ट्रेलिया, ब्राजील आदि भारतीय जूट के सामान के प्रमुख ग्राहक है। इनके अतिरिक्त पीरू बमा मध्य पूव के देश पश्चिमी अफीका व पश्चिमी जमनी भी भारतीय जूट के सामान की माग कर रहे हैं। रूस से कुछ समय पूव जूट का सामान निर्यात करने के लिए व्यापारिक सम झौते भारत न किए हैं।

भारत म विदेशी व्यापार म जूट उद्योग का विशष स्थान है क्योंकि इस द्योग स भारत को प्रतिवप लगभग 200 करोड रुपय की आय होती है।

पचवर्षीय योजनाओ म जूट उद्योग का विकास

थम पचवर्षीय योजना काल—

प्रथम पचवर्षीय योजना आरम्भ होन क कुछ वर्षों पूव ही देश का विभाजन आ था जिसके परिणामस्वरूप जूट का अधिकाश उत्पादक क्षेत्र पाकिस्तान को मला। अत जिस समय (1950 51) पचवर्षीय योजना आरम्भ की गई उस समय ट उद्योग क सम्मुख कच्च माल की विकट समस्या थी। सन 1950 51 म देश म च्चे जूट का कुल उत्पादन 33 लाख टन ही हुआ। इस वष जूट के माल का त्पादन 8 37 लाख टन हुआ।

प्रथम पचवर्षीय योजना म कच्च जूट का उत्पादन लक्ष्य 53 लाख गाँठें और ट क माल के उत्पादन का लक्ष्य 12 लाख टन रखा गया।

देश क विभाजन क परिणामस्वरूप अधिकाश जूट की मिलें भारत को ही मला। अत प्रथम योजना काल म जूट का उत्पादन क्षमता पर्याप्त थी किन्तु कच्च ाल का कमी थी इस कारण नया जूट मिलों की स्थापना अथवा जूट मिलों की त्पादन क्षमता म वृद्धि करन की योजना नहीं बनाई गई। बल्कि तत्कालीन जूट मलों की विद्यमान क्षमता क पूण उपयोग पर ही अधिक बल दिया गया। इस ोजना काल म जूट क उत्पादन म वृद्धि करन क लिए आर प्रयत्न किये।

पचवर्षीय-योजना के अंतिम वर्ष 1955 56 में देश में लगभग 42 लाख गाँठें जूट का उत्पादन हुआ 10 71 लाख टन मिला द्वारा जूट के माल का उत्पादन हुआ। इस प्रकार स्पष्ट है कि कच्चे जूट के उत्पादन और पक्के माल के उत्पादन लक्ष्य, जो प्रथम पचवर्षीय योजना के लिए निर्धारित किए गये थे पूरे न हो सके। इसी प्रकार जूट के सामान का निर्यात लक्ष्य 10 लाख टन रखा गया, किन्तु 1955 56 में निर्यात केवल 8 75 लाख टन ही हो पाया।

द्वितीय पचवर्षीय योजना काल—

द्वितीय पच-वर्षीय योजना काल में भी, प्रथम योजना की भाँति, दो उद्देश्य रखे गये—देश में कच्चे माल के उत्पादन में वृद्धि करके इस दृष्टि से देश को आत्म निर्भर बनाना और जूट मिलों की संख्या अथवा क्षमता में वृद्धि न करना।

द्वितीय पच वर्षीय योजना में कच्चे जूट का उत्पादन लक्ष्य 50 लाख गाँठें रखा गया (प्रथम योजना में 53 लाख गाँठें था)। इसी प्रकार जूट निर्मित माल का उत्पादन लक्ष्य पुन 12 लाख टन रखा गया (प्रथम योजना में भी 12 लाख टन था)।

इस योजनाकाल में उत्पादन व्यय को घटाने, मशीनों के आधुनिकीकरण और निर्यात को बढ़ाने पर विशेष ध्यान दिया गया। सन् 1957 में सरकार ने एक जूट जाँच कमेटी नियुक्त की जिसने जूट उद्योग के विकास के लिए अनेक महत्त्व पूर्ण परामर्श दिए और इन पर कुछ कार्य भी किया गया। इतने सभी प्रयत्न करने पर भी निर्धारित लक्ष्य पूरे नहीं हो सके।

इस योजना काल के अंतिम वर्ष 1960 61 में कच्चे जूट का उत्पादन लगभग 41 लाख गाँठें ही हुआ जो 1955 56 की तुलना में 1 लाख गाँठें कम था। जूट के निर्मित माल के उत्पादन में भी उत्साहजनक वृद्धि नहीं हुई। वर्ष 1960 61 में केवल 10 97 लाख टन जूट के सामान का उत्पादन हुआ। सन 1955 56 में 8 60 लाख टन जूट के सामान का निर्यात हुआ जो 1960 61 में 8 लाख टन ही रह गया।

तृतीय पचवर्षीय योजना काल—

यद्यपि प्रथम एवं द्वितीय पचवर्षीय योजना में निर्धारित लक्ष्य पूरे नहीं हो पाये, किन्तु योजना आयोग ने इन पर ध्यान न देते हुए तृतीय पचवर्षीय योजना में और ऊँचे लक्ष्य निर्धारित कर दिए।

तृतीय योजना के लिए कच्चे जूट का उत्पादन लक्ष्य 62 लाख गाँठें और जूट के निर्मित माल का उत्पादन लक्ष्य 13 लाख टन एवं निर्यात के लिए 9 लाख टन रखा गया। साथ ही यह आशा भी व्यक्त की गई कि इन लक्ष्यों के पूरा हो जाने पर देश स्वावलम्बी हो जायगा।

इस उद्योग ने सन 1964 में पक्के माल के निर्माण एवं निर्यात में रेकार्ड स्थापित कर दिया। सन 1965 में पुन और ऊँचा रेकार्ड स्थापित किया गया और दोनों ही वर्षों में तृतीय योजना के निर्धारित लक्ष्यों से आगे निकल गये।

वर्ष 1965 66 में कच्चे जूट का उत्पादन 44 लाख गाँठों से भी अधिक हुआ, निर्मित माल का उत्पादन 13 लाख टन व निर्यात 9 लाख टन हुआ। इस प्रकार तृतीय योजना काल जूट उद्योग की दृष्टि से देश के विभाजन के पश्चात से सर्वोत्तम रहा।

सन 1964 में 'जूट टेक्सटाइल कन्सलटेटिव बोर्ड' की स्थापना भी की गई जो इस उद्योग से सम्बन्धित समस्त महत्त्वपूर्ण विषयों पर परामर्श देता है। तृतीय योजना में जूट की दरियाँ बनाने में तेजी से वृद्धि हुई जिनकी माँग पिछले कुछ वर्षों से बहुत अधिक बढ़ गई। इन दरियों को बनाने में आवश्यक मशीनों का अधिकांश भाग भारत में ही तैयार होने लगा। इस योजना काल में जूट उद्योग में मशीनों के नवीनीकरण पर भी विशेष ध्यान दिया गया।

वार्षिक योजनायें और जूट उद्योग—

प्रथम वार्षिक योजना (1966 67)—यह वर्ष जूट उद्योग के लिए अच्छा नहीं कहा जा सकता। 1965 66 में जूट के सामान का उत्पादन लगभग 13 लाख टन था जो 1966 67 में घट कर लगभग 11 लाख टन ही रह गया। इस प्रकार उत्पादन में 2 लाख टन की कमी हुई। इसी प्रकार निर्यात में भी कमी हुई। निर्यात में भी लगभग 2 लाख टन की कमी हुई। जूट के सामान का निर्यात लगभग 7 लाख टन ही हुआ।

द्वितीय वार्षिक योजना (1967 68)—इस वर्ष भी जूट उत्पादित के सामान का उत्पादन लगभग 11 5 लाख टन रहा एवं निर्यात भी लगभग 7 5 लाख टन ही था। इस प्रकार ये दोनों वर्ष जूट उद्योग के लिए उत्साहप्रद नहीं रहे।

तृतीय वार्षिक योजना (1968 69)—यह वर्ष जूट उद्योग के लिए और भी खराब रहा। इस वर्ष जूट का उत्पादन घट कर केवल 30 5 लाख गाँठें ही रह गया। कच्चे जूट का इतना कम उत्पादन पिछले 15 16 वर्षों में कभी नहीं हुआ। इस वर्ष जूट का निर्मित माल भी केवल 10 लाख टन के लगभग ही रहा जो पिछले 15 16 वर्षों में सबसे कम हुआ। अतः इस वर्ष जूट के निर्मित माल के निर्यात में भी कमी आई।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना और जूट उद्योग (1969 74)—चौथी योजना में योजना आयोग ने कच्चे जूट के उत्पादन का लक्ष्य 74 लाख गाँठें व जूट निर्मित सामान का लक्ष्य 1973 74 के लिए 15 लाख टन रखा है। योजना आयोग द्वारा विभिन्न लक्ष्य अनेक लोगों को हास्यास्पद से प्रतीत होते हैं और यह भ्रान्ति उत्पन्न हो गई है कि योजना आयोग विभिन्न नोटरियाँ निकाल कर लक्ष्य निर्धारित कर देती है किन्तु यह वास्तविकता नहीं है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारूप एवं अन्तिम रूप देने में करोड़ों रुपये व्यय किये जाते हैं तब कहीं कार्य करने की योजनायें हमारे सम्मुख आती हैं।

भारतीय जूट-उद्योग की समस्याएँ

देश विभाजन के पश्चात से भारतीय जूट उद्योग के सामने अनेक समस्याएँ आई हैं और उनके निवारण के प्रयत्न भी किए गये है। सन 1962 में 'श्रीवास्तव जूट जाँच-कमेटी' की नियुक्ति की गई थी जिसने जूट उद्योग की समस्याओं पर विचार किया और इस उद्योग के विकास के लिए अनेक परामर्श दिए। जूट उद्योग की प्रमुख समस्याएँ और उनको दूर करने के लिए सुझाव निम्नलिखित हैं —

(1) **कच्चे माल की कमी**—विभाजन के पश्चात देश के सामने कच्चे जूट की समस्या अत्यन्त विकट उत्पन्न हो गई थी किन्तु देश के अन्य भागों में जूट का उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्न निरन्तर किए जा रहे हैं। श्रीवास्तव समिति ने सुझाव दिया है कि प्रति हेक्टेयर जूट का उत्पादन बढ़ाना चाहिए और इसके लिए अच्छे किस्म के बीज उवरकों का समुचित वितरण परिवहन लागत में रियायत, कृषकों को जूट का उचित मूल्य दिलाना आदि कार्यक्रम अपनाने चाहिए। यदि जूट की खेती पर उचित ध्यान नहीं दिया गया तो यह सम्भावना भी है कि कुछ जूट क्षेत्र, चावल क्षेत्र के अन्तर्गत न चला जाय।

(2) **नवीनीकरण की समस्या**—पाकिस्तान में अधिकांश जूट के कारखाने नए स्थापित किये गये जिनमें आधुनिकतम मशीनें लगाई गई हैं जापान में जूट उद्योग का शनैः शनैः विकास किया जा रहा है पॅकिंग के लिए नई सामग्री का निरन्तर प्रयोग आदि अनेक तत्वों ने भारतीय जूट मिलों की पुरानी एवं घिसी हुई मशीनों के नवीनीकरण की आवश्यकता को और अधिक बढ़ा दिया है। इस उद्योग में सन 1952 से नवीनीकरण का कार्य आरम्भ किया। अब तक (सन 1969 तक) लगभग 75 प्रतिशत तकुए और 65 प्रतिशत करघे बदले जा चुके हैं। चौथी योजना में जूट मिलों सम्बन्धी मशीनों व पुर्जों आदि की माँग लगभग 70 करोड रुपये की होने का अनुमान है।

(3) **विदेशी प्रतिस्पर्धा**—इस उद्योग का हमारा सबसे बड़ा प्रतिस्पर्धी पाकिस्तान है। पाकिस्तान द्वारा हमारा जूट उद्योग दो प्रकार से प्रभावित होता है — प्रथम, पाकिस्तान अन्य देशों को कच्चा जूट सस्ता देकर हमारे इस उद्योग को हानि पहुँचाता है और दूसरे पाकिस्तान जूट के माल के उत्पादन में तेजी से प्रगति कर रहा है। वहाँ आधुनिक ढंग की नवीनतम मशीनें नये कारखानों में लगाई गई हैं जिससे कम मजदूरी व कम व्यय में अधिक उत्पादन होता है। अतः भारत को विदेशी-बाजारों में कठोर प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। इधर थाईलैण्ड ने भी जूट के कारखाने स्थापित करने आरम्भ कर दिए हैं उधर अफ्रीका में घाना व नाइजीरिया ने भी जूट के कारखाने स्थापित किए हैं।

(4) **स्थानापन्न वस्तुओं का प्रयोग**—विदेशों में जूट के स्थान पर अन्य वस्तुओं का उपयोग बढ़ जाने के कारण भी भारतीय जूट के सामान की माँग में

कमी आई है। उदाहरण के लिए रूस व अर्जेन्टाइना में अलसी के रेश का प्रयोग बढ रहा है, न्यूजीलैण्ड मे, 'फोरियम टनाक्स' के पौधे के रेश से थैले आदि बनाने लगे हैं। संयुक्त राज्य अमरीका, आस्ट्रेलिया, कनाडा आदि देशो में कागज व कपडे के थैलो का प्रयोग बढ गया है। यदि भारतीय जूट के सामान के मूल्य में 10 प्रतिशत की कमी कर दी जाय तो फिर भारतीय जूट का सामान अन्य स्थानापन्न वस्तुओं से सस्ता पडने लगेगा। फिर यह समस्या नही रहेगी।

(5) **मशीनो की समस्या**—विदेशो से जूट उद्योग की मशीनें व पुर्जे आयात करने में विदेशी विनिमय की एवं अन्य कठिनाइयाँ आती हैं। इस समस्या को आंशिक रूप से हल करने के लिए 'उद्योग (विकास एवं नियन्त्रण) अधिनियम' के अन्तर्गत कम्पनियों को लाइसेन्स प्रदान कर दिए गये हैं। भारत में आजकल लगभग 3 करोड रुपये के मूल्य की वार्षिक जूट मिलो की मशीनें व पुर्जे बनाए जा रहे हैं।

(6) **सुप्त करघों की समस्या**—भारतीय जूट मिलो के हजारो करघे बन्द पडे हुए हैं और जो चलते भी हैं उन पर सप्ताह में 42½ घण्टे काम हो रहा है। हमारे प्रमुख प्रतिस्पर्धी पाकिस्तान की अनेक जूट मिलो मे नई मशीन काम कर रही हैं जिन पर 2-3 पालियो मे काम हो रहा है।

(7) **जूट के ऊँचे मूल्य**—कच्चे जूट के मूल्यो में निरन्तर वृद्धि हो रही है जिसके फलस्वरूप उत्पादन व्यय भी अधिक हो जाता है। भारतीय जूट के सामान का मूल्य अधिक हो जाने से लोकप्रियता में कमी आना स्वाभाविक है।

(8) **घेराव की समस्या**—भारत की अधिकाश जूट मिलें पश्चिमी बगाल में ही हैं। वहाँ संयुक्त मोर्चे की सरकार के समय प्रचलित 'घेराव' की नीति से भी सभी उद्योगो को हानि पहुची है। पूँजीपति व उद्योगपति अपने को असुरक्षित समझने लगे। इसका कुप्रभाव जूट उद्योग पर भी पडा है।

(9) **अनुसधान की समस्या**—देश में जूट उद्योग से सम्बन्धित अनुसन्धान के लिए पर्याप्त सुविधाएँ नही है। 'इण्डियन जूट इण्डस्ट्रीज रिसर्च एसोसिएशन' के नाम से एक संस्था की स्थापना कुछ वर्षो पूर्व की जा चुकी है, किन्तु यह देश की आवश्यकताओ के लिए अपर्याप्त है। इस संस्था ने संयुक्त राज्य अमरीका में फैब्रिक रिसर्च लैबोरेटरीज आफ डेडहम की अनुसधानशाला से शोध सम्बन्धी समझौता किया है।

(10) **अन्य समस्याएँ**—उपरोक्त समस्याओ के अतिरिक्त देश में तकनीकी विशेषज्ञ कुशल-श्रमिको निर्यात कर में अधिकता एवं राजनीतिक उथल पुथल की समस्याएँ हैं।

इनको बाजारो की खोज करने और सामान्य रूप से प्रगति करने के लिए एक स्थायी कार्यक्रम बनाना होगा। इस कार्यक्रम का आरम्भ अधिकतम महत्वपूर्ण मण्डियो—अमरीका, इगलैण्ड व आस्ट्रेलिया—से किया जा चुका है। इनमें से अमरीका व इगलैण्ड देशो में इण्डियन जूट मिल्स एसोसियेशन के कार्यालय हैं। इनके

अतिरिक्त एसोसियशन ने अमरीका, इंगलण्ड, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलण्ड में भी शिष्टमण्डल भेजे हैं। इन क्षेत्रों में प्रचार-कार्य, जन सम्पर्क और विज्ञापनों आदि के आन्दोलन अधिक तेजी से आरम्भ कर दिये हैं।

आजकल जूट के सामान के प्रयोग के सम्बन्ध में नये क्षेत्रों की खोज करने पर बहुत बल दिया जा रहा है। अमरीका के औद्योगिक तथा अन्य क्षेत्रों में इस प्रकार के अनुसंधान कार्य के लिए पर्याप्त क्षेत्र है। यह सर्वविदित है कि जूट एक ऐसी वस्तु है, जिसका प्रयोग केवल उन्हीं कामों के लिए नहीं हो सकता जिनके लिए अब तक होता रहा है वरन कुछ नये अनुभवों ने यह सिद्ध कर दिया है कि इसे और भी अनेक प्रकार से काम में लाया जा सकता है।

सब कुछ मिलाकर यह कहा जा सकता है कि भारतीय जूट उद्योग का भविष्य उज्ज्वल है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 भारत में जूट व्यवसाय के स्थानीयकरण के क्या कारण हैं? भारतीय व्यवसाय पर देश के विभाजन का क्या प्रभाव पड़ा? (T D C, 1960)

2 अहमदाबाद व बम्बई में सूती वस्त्र उद्योग के विकास के कारण बतलाओ। इस उद्योग की वर्तमान स्थिति बतलाओ। *(T D C 1961)*

3 Trace the development of the sugar industry of India since 1914 in the light of sugar cane production (T D C, 1962)

4 Discuss the present position and geographical distribution of sugar industry in India, giving reasons for its localisation
भारत में चीनी उद्योग के स्थानीयकरण के कारण बताते हुए उसके भौगोलिक वितरण और वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालिए। (T D C, 1963)

5 Discuss the importance and usefulness of the Iron and Steel Industry, and detail to progress in India since Independence
लौह इस्पात उद्योग का महत्त्व और उसकी उपयोगिता बताइए और भारत में स्वतन्त्रताकाल में उसकी उन्नति पर प्रकाश डालिये। *(T D C, 1964)*

6 Discuss the importance of paper in the present age and detail the growth of Indian Paper Industry
आधुनिक युग में कागज का महत्त्व बतलाइये और भारतीय कागज उद्योग के विकास का सविस्तार वर्णन कीजिये। (T D C Suppl 1964)

7 भारत में सूती वस्त्र उद्योग की प्रगति का ब्योरा दीजिए और उसके स्थानीयकरण तथा स्वाभाविकता (Suitability) के कारणों पर प्रकाश डालिये।
(T D C Suppl ,1964)

8 1950 से आगे भारतीय सूती वस्त्र उद्योग के विकास पर प्रकाश डालिये। इस उद्योग की समस्याओं के समाधानों पर विचार कीजिए।
(T D C Suppl, 1968)

20
चीनी उद्योग
(Sugar Industry)

परिचय—

भारत म सूती वस्त्र उद्याग के पश्चात दूसरा सबस बडा उद्याग चीनी उद्योग है। जिस समय विश्व के अन्य देश चीनी के नाम से परिचित भी नहीं थ भारत मे उस समय भी चीनी बनती व प्रयोग म आती थी। गन्ने का मूल उत्पादक स्थान भारत ही माना जाता है। अथर्ववेद मे, जिसकी रचना ईसा के लगभग पाच हजार वष पूव मानी जाती है सवप्रथम गन्ने का उल्लेख मिलता है। आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थो, बौद्ध ग्रन्थो चाणक्य के अथशास्त्र और चरक संहिता आदि ग्रन्थो म भी गन्ने व चीनी का उल्लेख मिलता है। अत यह निर्विवाद सत्य है कि चीनी सवप्रथम भारत म ही बनाई गई और यहाँ से ही यह विद्या विश्व के अन्य देशो म फली।

क्रमिक विकास

भारत म चीनी उद्योग अत्य त प्राचीन काल से कुटीर उद्योग के रूप म रहा। भारत के कुछ उद्योगपतियो ने विदेशियो की सहायता एव सहयोग से उत्तर प्रदश व बिहार म चीनी के कारखाने स्थापित किये। सन् 1846 मे ब्रिटिश तटकर नीति मे परिवतन किया गया जिसने हमारे चीनी उद्योग पर इतना कडा आघात किया कि लगभग 50 वष तक दानेदार चीनी उद्याग मे चेतना न आ पाई।

इसके पश्चात आज से लगभग 70 वष पूव सन् 1903 म आधुनिक ढग का भारत म सवप्रथम चीनी का कारखाना बिहार म स्थापित किया गया। इस उद्योग ने अपने शशव-काल म प्राय प्रथम विश्व युद्ध काल तक विशेष प्रगति नही की। सरकार ने भी इस उद्योग के विकास के लिए प्रयत्न किये, किन्तु अधिक सफलता न मिली। सन 1932 म इस उद्योग को सरकारी सरक्षण प्रदान किया गया। टरिफ बोड न जनवरी 1950 को सरकार के समक्ष अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसम उद्याग पर से सरक्षण हटा लेन के लिए सरकार को परामश दिया। सरकार ने इस परामश को 6 माच 1950 को स्वीकार कर लिया। इस प्रकार चीनी उद्याग पर स 18 वष पुराना सरक्षण हटा लिया गया।

कच्चा माल

भारत में विश्व के कुल गन्ना उत्पादन का लगभग 33 प्रतिशत भाग होता है। आजकल भारत में लगभग 24.5 लाख हेक्टयर भूमि में गन्ने की खेती होती है जिसमें लगभग 120 लाख टन गन्ना उत्पन्न हो रहा है। भारत में सबसे अधिक गन्ना उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र व पंजाब हैं। भारत में लगभग 2 करोड़ कृषक गन्ने की खेती करते हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि गन्ने की कुल उपज का लगभग 55 प्रतिशत भाग गुड़ खाण्डसारी बनाने के काम आता है और केवल 25 प्रतिशत मिलों में दानदार चीनी बनाने के।

चीनी उद्योग की आवश्यकताएँ

चीनी उद्योग के लिए कुछ विशेष बातों का होना नितान्त आवश्यक है, सर्वप्रथम आवश्यकता कच्चे माल की निकट उपलब्धता है। यदि गन्ना दूर के क्षेत्रों से लाया जाता है तो कारखाने तक पहुँचने में समय अधिक लगता है जिसका परिणाम यह होता है कि गन्ने का कुछ रस सूख जाता है और कारखाने तक गन्ना ले जाने में व्यय भी अधिक पड़ता है। साधारण तौर पर चीनी की मिलें अपने आस पास के 10 मील के क्षेत्र से गन्ना एकत्रित करती हैं। दूसरी प्रमुख आवश्यकता सस्ते श्रमिक हैं। इस उद्योग में अधिक कार्य हाथ से होने के कारण सस्ते श्रमिक चाहिए। तीसरे कारखानों के संचालन के लिए सस्ती शक्ति की उपलब्धता भी आवश्यक है। अन्त में इस उद्योग में स्वच्छ मीठे पानी की आवश्यकता होती है अतः कारखाने एसी जगह पर स्थित होने चाहिए जहाँ प्रचुर मात्रा में स्वच्छ मीठा पानी उपलब्ध हो।

चीनी बनाने की रीतियाँ

भारत में चीनी तीन प्रधान रीतियों से उत्पादित की जाती है —

(1) मशीनों द्वारा गन्ना कुचल कर—जैसा कि बड़े-बड़े कारखाने इस रीति से ही चीनी बनाते हैं, (2) गुड़ को साफ करके मशीनों द्वारा और (3) देशी तरीका जिसमें खाँडसारी शक्कर तैयार की जाती है। यह तरीका प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योग के रूप में अपनाया जाता है।

चीनी उद्योग का क्रमिक विकास

वर्ष 1950 51 में देश में 138 कारखाने थे सन 1955 56 में 143 कारखाने और 1960 61 में 175 कारखाने हो गये। इस समय देश में 200 से भी अधिक चीनी बनाने के कारखाने हैं जिनमें से सहकारिता क्षेत्र में 55 कारखाने हैं।

भारत में चीनी बनाने के कारखानों का क्रमिक विकास इस प्रकार हुआ —

वर्ष	कारखानों की संख्या	वर्ष	कारखानों की संख्या
1931-32	32	1959 60	170
1938 39	132	1960 61	175
1945-46	138	1964 65	194
1950-51	138	1967 68	200
1955 56	143	1968 69	205

चीनी मिलों का वितरण

भारत में चीनी के 205 कारखाने हैं। राज्यों के अनुसार देश के चीनी के कारखानों का वितरण इस प्रकार है —

भारत में चीनी मिलों का वितरण[1]

राज्य	मिलें	वार्षिक उत्पादन क्षमता
उत्तर प्रदेश	71	11.18 लाख टन
महाराष्ट्र	33	5.50 लाख टन
बिहार	30	3.67 लाख टन
आन्ध्र प्रदेश	18	2.41 लाख टन
तमिलनाडु	10	1.60 लाख टन
पंजाब	8	1.30 लाख टन
मैसूर	8	1.19 लाख टन
मध्य प्रदेश	4	32 हजार टन
गुजरात	3	45 हजार टन
राजस्थान	2	13 हजार टन
उड़ीसा	2	18 हजार टन
प० बंगाल	2	22 हजार टन
केरल	2	18 हजार टन
असम	1	10 हजार टन
पांडिचेरी	1	18 हजार टन

इस उद्योग को प्रोत्साहन देने के लिए भारत सरकार ने 52 नये कारखाने जिनमें 38 सरकारी कारखाने हैं नये खोलने और 71 वर्तमान कारखानों का विस्तार करने के लिए अनुमति दे दी है। पुराने दो कारखाने जो बन्द पड़े हैं फिर से चलाये जावेंगे। चीनी का एक कारखाना पाण्डिचेरी में भी स्थापित किया जायगा।

भारत की मध्य गंगा घाटी, जिसमें उत्तर प्रदेश व बिहार सम्मिलित हैं में चीनी उद्योग मुख्यतः केन्द्रित है। इस प्रकार मध्य गंगा घाटी को भारत की चीनी की पेटी (Sugarbelt of India) भी कहते हैं। इस पेटी की जलवायु व मिट्टी भारतीय गन्ने (जोकि जावा के गन्ने से भिन्न है) की उपज के लिए अनुकूल है। इस पेटी में भी चीनी उत्पादन के दो प्रमुख क्षेत्र हैं। प्रथम बिहार में दरभंगा, सारन, चम्पारन व मुजफ्फरपुर हैं तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश के गोरखपुर देवरिया, बस्ती गोंडा आदि हैं। द्वितीय क्षेत्र पश्चिमी उत्तर प्रदेश का है जिसमें सहारनपुर मेरठ, मुजफ्फरनगर, बिजनौर व मुरादाबाद प्रमुख केन्द्र हैं।

---

1 खाद्य उप मन्त्री द्वारा संसद में दी गई सूचना के अनुसार।

भारत का चीनी उत्पादक दूसरा क्षेत्र महाराष्ट्र दक्कन है जो कि नासिक अहमदनगर व शोलापुर में विस्तृत है। यहाँ मिलों की संख्या बढ़ रही है। शेष दक्षिण भारत की चीनी मिलें तमिलनाडु मैसूर व आंध्र राज्यों में हैं। मांड्या में स्थित मैसूर सुगर मिल्स (The Mysore Sugar Mills Mandya) का उल्लेख करना आवश्यक है जो सरकारी फार्म से गन्ना प्राप्त करती है।

(I) उत्तर प्रदेश—

उत्तर प्रदेश में 71 कारखाने हैं जिनमें 37 पश्चिमी जिलों में और 34 पूर्वी जिलों में हैं। उत्तर प्रदेश में शक्कर के प्रमुख उत्पादक केन्द्र कानपुर गोरखपुर मुजफ्फरनगर आगरा बरेली इलाहाबाद मेरठ बस्ती देवरिया गोंडा सीतापुर बुलन्दशहर आदि हैं।

उत्तर प्रदेश के चीनी उद्योग में एक बड़ा दोष यह है कि कारखानों का वितरण उचित नहीं है। कहीं पर तो एक ही क्षेत्र में अनेक कारखाने हैं जिसका परिणाम यह होता है कि कारखानों को कच्चा माल (गन्ना) खरीदने में बहुत स्पर्धा करनी पड़ती है और कहीं कारखाने ऐसे स्थानों पर हैं कि गन्ना पर्याप्त दूरी से लाना पड़ता है जिसके कारण गन्ने का रस कुछ सूख जाता है व यातायात में भी व्यय अधिक पड़ता है।

उत्तर प्रदेश में चीनी उद्योग के केन्द्रित होने के अनेक कारण हैं जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं —

(1) अनेक प्रमुख अर्थशास्त्रियों के अनुसार[1] इस राज्य में चीनी उद्योग के केन्द्रीयकरण का प्रमुख कारण उद्योगपतियों द्वारा सरकार के संरक्षण-कर की सुविधा से शीघ्र ही अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करना था। क्योंकि केवल प्राकृतिक सुविधाएँ ही इस राज्य में आदर्श नहीं है। तमिलनाडु पंजाब महाराष्ट्र में भी लगभग वे ही प्राकृतिक सुविधाएँ हैं जो उत्तर प्रदेश में।

(2) इस राज्य में कच्चे माल की भी सुविधा है। इस दृष्टि से उत्तर प्रदेश व बिहार को विशेष सुविधा है। कारखाने का कच्चे माल के निकट स्थित होने के कारण उत्पादन व्यय अपेक्षाकृत कम पड़ता है।

(3) उत्तर भारत में इन राज्यों (उत्तर प्रदेश व बिहार) के गन्ने में काफी मिठास होता है।

(4) श्रमिकों का इस राज्य में कोई कमी नहीं है क्योंकि जनसंख्या काफी घनी है। कुशल श्रमिकों की अधिक आवश्यकता नहीं होती इसलिए अकुशल श्रमिक सस्ते मिल जाते हैं।

(5) शक्ति के साधनों की भी यहाँ सुविधा है क्योंकि बिहार व पश्चिमी बंगाल के कोयला क्षेत्र यहाँ से अधिक दूर नहीं हैं। तराई प्रदेश के निकट की मिलों को सरलता से लकड़ी भी मिल जाती है।

---

1 **Basu & Chakarvarty** *Economic & Com Geog*

(6) कानपुर प्रमुख औद्योगिक व वितरण केन्द्र है। कानपुर रेलमार्ग व सड़क-मार्ग का केन्द्र है। अत उपभोग के केन्द्र जो प्रमुख हैं और निकट भी हैं, वहाँ चीनी भेजने मे अधिक व्यय नही होता।



चित्र 30

(7) उत्तर प्रदेश म पानी की कोई कमी नही है। इस उद्योग के लिए पानी अधिक मात्रा मे चाहिए जो नल-कूपो व नहरो आदि स प्राप्त हो जाता है।

(II) बिहार—

इस राज्य म शक्कर के कारखानो के प्रमुख केन्द्र दरभगा सारन, मुजफ्फर पुर भागलपुर और चम्पारन हैं। इस राज्य म शक्कर के 30 कारखाने हैं। चीनी उत्पादन म उत्तर प्रदेश के पश्चात बिहार का ही स्थान है।

इस राज्य म भी प्राय वही समस्याएँ हैं जो उत्तर प्रदेश राज्य म। यहाँ भी कारखानों को प्रतिस्पर्धा करनी पडती है। इसके अतिरिक्त यहाँ प्रति एकड गन्ने

ा उत्पादन भी बहुत कम (6 टन प्रति एकड) है और गन्ना भी अच्छी किस्म का ही होता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि उत्तर प्रदेश व बिहार—ये दोनो राज्य देश के कुल शक्कर उत्पादन का लगभग 70 प्रतिशत भाग उत्पन्न करते हैं और यहाँ देश के लगभग 60 प्रतिशत शक्कर के कारखाने हैं।

अन्य क्षेत्र—

तमिलनाडु राज्य मे चीनी के कारखाने कोयम्बटूर में हैं। नई मिलें तंजौर जिले में स्थापित की जा रही हैं। महाराष्ट्र मे बेलापुर, पश्चिमी बंगाल मे मुर्शिदाबाद, जलपाइगुडी और मालदा इस उद्योग के केन्द्र हैं। पूर्वी पंजाब मे अमृतसर मुख्य केन्द्र है हरियाना में पानीपत में चीनी का नया कारखाना स्थापित किया गया है।

दक्षिण भारत मे चीनी उद्योग के विकास की सम्भावनाएँ

दक्षिणी भारत को अपनी स्वय की स्थिति के कारण चीनी उद्योग के लिए कुछ सुविधाएँ और कुछ असुविधाएँ हैं। दक्षिणी भारत में इस उद्योग के लिए निम्नलिखित सुविधाए प्राप्त हैं —

(1) दक्षिणी भारत अयन वृत्त प्रदेश (Tropical Region) में स्थित है। अत यहा के गन्ने की किस्म उत्तर भारत के गन्ने की किस्म से अच्छी है। यहाँ के गन्ने मे मिठास भी अधिक होती है इसस प्रति टन गन्ने से उत्तर भारत की अपेक्षा अधिक चीनी बनाई जाती है।

(2) गन्ने की प्रति हैक्टेयर उपज भी उत्तर भारत की अपेक्षा अधिक है। वास्तव मे उत्तरी भारत में तो गन्ना आदर्श भौगोलिक दशाओं में उत्पन्न ही नहीं किया जाता है जबकि दक्षिणी भारत मे गन्ना आदर्श दशाओं में उत्पन्न किया जाता है।

(3) गन्ने से चीनी बनाने का मौसम भी जलवायु सम्बन्धी कारणो से, दक्षिणी भारत में उत्तरी भारत की अपेक्षा अधिक लम्बा होता है। यहाँ चीनी बनाने का काय 7 8 महीना तक बराबर चलता रहता है। अत ऊपरी खर्चों का औसत घट जाता है और उत्पादन व्यय कम रहता है।

(4) दक्षिणी भारत में चीनी के कारखाने गन्ना स्वय पैदा करते हैं अथवा निकटवर्ती भागो में खूब गन्ना उत्पन्न किया जाता है।

(5) अब दक्षिणी भारत में लिग्नाइट कोयले के विशाल भण्डार मद्रास (नवली) मे मिल गये हैं। जल विद्युत भी अब अधिक प्राप्त होने लगी है।

किन्तु दक्षिणी भारत में चीनी उद्योग के विकास मे दो प्रमुख अवरोध हैं —

(1) दक्षिणी भारत में सिंचाई की कठिनाई होने के कारण, जहाँ भी सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं वहाँ पर कृषक के सम्मुख गन्ने के अतिरिक्त अन्य व्यापारिक फसलें—जैसे मूंगफली, कपास तम्बाकू—हैं जो आपस में प्रतिस्पर्धा करती हैं। इस कारण गन्ना अधिक मात्रा में उपलब्ध नहीं हो पाता है।

(2) दक्षिणी भारत म गन्ना उत्पन्न करन का व्यय अ य स्थानो की अपक्षा अधिक है। इस कारण चीनी का लागत व्यय अधिक हो जाता है।

चीनी का उत्पादन

भारत म ग न स औसत रूप से 10 प्रतिशत चीनी प्राप्त होती है, जबकि आस्ट्रेलिया म 14 प्रतिशत से भी कुछ अधिक। ऊपर बतलाया जा चुका है कि भारत मे ग ने की कुल उपज का 55 प्रतिशत भाग गुड व खाडसारी बनाने के काम आता है और केवल 25 प्रतिशत मिलो म दानदार चीनी बनान क काम आता है। भारत म चीनी के कारखाना की 14 लाख टन गन्ना प्रतिदिन पेरन की क्षमता है।

भारत म पिछले वर्षों दानदार चीनी का उत्पादन इस प्रकार रहा —

भारत मे चीनी का उत्पादन[1]

वर्ष	लाख टन
1950 51	11 34
1955 56	18 90
1960 61	30 29
1965 66	35 10
1966 67	21 47
1967 68	22 49
1968 69	35 60
1969 70	42 80
1973 74 (लक्ष्य)	47 00

यहा यह उल्लेखनीय है कि तृतीय **पचवर्षीय योजना** म शक्कर के उत्पादन का लक्ष्य 35 लाख टन रखा गया था और **चतुर्थ पचवर्षीय योजना** म प्रस्तावित लक्ष्य 45 लाख टन रखा गया है।

उत्पादन-व्यय[2]

अनुमान किया गया है कि चीनी बनाने म जितना व्यय होता है उसका 45 प्रतिशत ग न का सरकार द्वारा निर्धारित मूल्य होता है। लगभग 35 प्रतिशत सरकारी कर, चुङ्गी व सहकारी समितियो का कमाशन होता है। इस प्रकार उत्पादन व्यय का 80 प्रतिशत तो स्थिर है। इसके पश्चात वेतन तथा पारिश्रमिक, शक्ति ईधन पकिंग आदि उत्पादन व्यय का 19 प्रतिशत होता है। बाकी 1 प्रतिशत लाभ शेष रह पाता है।

प्रति व्यक्ति उपभोग

हमारे देश म चीनी की प्रति व्यक्ति वार्षिक खपत लगभग 44 पौंड है। यदि हम अन्य देशा स तुलना कर तो ज्ञात होगा कि यह मात्रा बहुत कम है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारत म महाराष्ट्र राज्य सबस कम चीनी उत्पन्न करता है जबकि वहा चीनी की खपत भारत म सबस अधिक

---

1 Figures of Sugar production have been adopted from the pre budget Economic Survey Report 1969 70 presented to Parliament on 24 Feb 1970 The figures slightly differ from as published in India 1969

2 Indian Sugar Mills Association द्वारा प्रकाशित तथ्या एव आँकडा स।

है। अब भारत सरकार देश म चीनी का उत्पादन बढाने म प्रयत्नशील है, जिससे चीनी का उपभोग बढ सकेगा।

देश	प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग (पौण्ड मे)
आस्ट्रेलिया	114 4
क्यूबा	106 3
अमरीका	96 2
इङ्गलैंड	89 3
जमनी	58 2
फास	55 3
भारत	44 0
रूस	26 0
जापान	24 0
पाकिस्तान	5 4

चीनी उद्योग मे श्रम एव पूजी

नवीनतम आँकडा क अनुसार इस उद्योग मे 1 लाख 40 हजार दक्ष कमचारी और 3½ हजार विश्वविद्यालय म शिक्षा प्राप्त कमचारी काय कर रहे हैं। इनके अतिरिक्त लगभग दो करोड कृषक गन्ने की खेती करते हैं और लाखो व्यक्ति इस उद्योग स सम्बन्धित अन्य कार्यों म परोक्ष रूप से अपनी जीविका उपार्जन करते हैं।

भारत मे इस उद्योग मे कारखाना म, नवीनतम आकडो के अनुसार लगभग एक अरब रुपए की पूजी लगी हुई है। सरकार को इस उद्योग से प्रतिवष लगभग 65 करोड रुपये की आय होती है।

चीनी उद्योग पर नियन्त्रण

युद्ध-काल म अन्य आवश्यक वस्तुओ के साथ ही चीनी की भी कमी हो जाने के कारण माच 1942 म सरकार न चीनी के मूल्य एव उसके वितरण पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। यह नियन्त्रण दिसम्बर 1947 से हटा लिया गया।

मध्य जनवरी 1963 स चीनी क भावा म तीव्र वृद्धि होने लगी फलस्वरूप भारत सरकार न चीनी (नियन्त्रण) आदेश, 1963' चीनी क मूल्य एव वितरण पर नियन्त्रण लागू करने के लिए जारी किया। नवम्बर 1967 स चीनी पर आशिक नियन्त्रण था। भारत सरकार ने 25 मई 1971 से चीनी के मूल्य, वितरण एव स्थानान्तरण पर से नियन्त्रण पूणत हटा लिया है।

पचवर्षीय योजनाएँ

प्रथम पचवर्षीय योजना क अन्तगत चीनी का उत्पादन लक्ष्य सन् 1955-56 के लिए 18 लाख टन रखा गया था। द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्तगत चीनी का उत्पादन लक्ष्य 22½ लाख टन प्रतिवष रखा गया था। तृतीय पचवर्षीय योजना म चीनी का उत्पादन लक्ष्य 35 लाख टन प्रतिवष रखा गया था। चौथी पचवर्षीय योजना म चीनी का उत्पादन-लक्ष्य 45 लाख टन रखा गया है। इस काल म 70 नये कारखान और स्थापित किय जायेंगे, जिसम 75 कारखाने सहकारी क्षेत्र म होंगे

चीनी का व्यापार

अभी तक भारत देश की आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त चीनी नही बना पा रहा था, अत प्रतिवष हमको विदेशा स चीनी आयात करनी पडती थी

सुगर मिल्स ऐसोसियेशन द्वारा प्रारम्भ किया गया । देश म विदेशी मुद्रा की तीव्र आवश्यक्ता होने के कारण चीनी को, हानि सहन करते हुए भी निर्यात किया गया । वष 1960 61 मे 1 2 लाख टन चीनी का निर्यात किया गया ।

तृतीय पचवर्षीय योजना काल—इस योजना काल म भी चीनी उद्योग का विकास हुआ । तृतीय योजना काल म चीनी का उत्पादन लक्ष्य 35 लाख टन रखा गया ।

योजना के आरम्भिक वर्षों म चीनी के उत्पादन म कुछ कमी आई । वष 1961 62 म चीनी का उत्पादन लगभग 27 लाख टन और 1962 63 म लगभग 21 5 लाख टन हुआ । यह उत्पादन निराशाप्रद था । इसके पश्चात चीनी का उत्पादन बढा ही है । वष 1963 64 म चीनी का उत्पादन लगभग 35 7 लाख टन हो गया जो उत्पादन लक्ष्य से भी अधिक था । वष 1965 66 म चीनी का उत्पादन लगभग 35 लाख टन हुआ ।

इस अवधि म चीनी के उपभाग की मात्रा भी देश मे बढी । वष 1965 66 मे देश म लगभग 27 5 लाख टन चीनी का उपभोग हुआ । इस प्रकार द्वितीय *योजना की तुलना म तृतीय याजना म चीनी के उत्पादन म लगभग 13 प्रतिशत की* वृद्धि और उपभोग मे लगभग 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई ।

इस योजना काल म चीनी के निर्यात की मात्रा म भी वृद्धि हुई । वष 1964 65 मे भारत स लगभग 2 5 लाख टन चीनी का नियात किया गया । 1965 66 म चीनी के निर्यात मे और अधिक वृद्धि हुई । इस वष (1965 66 म) भारत से लगभग 3 लाख टन चीनी का विदेशा म नियात किया गया ।

वार्षिक योजनाएँ—तृतीय पचवर्षीय योजना के पश्चात दो वर्षों म चीनी के उत्पादन म गिरावट आइ है । 1966 67 म लगभग 21 5 लाख टन और 1967 68 म लगभग 22 5 लाख टन चीनी का उत्पादन हुआ । वष 1967 68 म चीनी मिलो की सख्या 200 हो गइ । वष 1968 69 म चीनी का उत्पादन फिर बढ कर 35 5 लाख टन स अधिक हो गया ।

इन तीन वर्षों म चीनी का निर्यात निरन्तर घटता ही गया । 1966 67 मे 3 5 लाख टन चीनी का निर्यात किया गया जब कि वष 1967 68 मे 2 3 लाख टन और 1968 69 म 1 0 लाख टन चीनी का निर्यात किया गया । सन 1968 म जिनेवा म होने वाली अन्तर्राष्टीय चीनी कान्फ्रेन्स म भारत ने भी भाग लिया, जिसम भारत ने चीनी निर्यात का कोटा 10 लाख टन बढा देने के लिए *प्रार्थना* की । किन्तु भारत के लिए चीनी के नियात का कोटा केवल 3 5 लाख टन ही दिया गया और भारत सन् 1969 म केवल 95 हजार टन चीनी का ही निर्यात कर सका ।

चतुर्थ पचवर्षीय योजना-काल (1969 74)—चौथी पचवर्षीय योजना म चीनी का उत्पादन-लक्ष्य 45 लाख टन रखा है । इस योजना काल म चीनी के अनेक

कारखाने स्थापित किये जावेंगे। सहकारी क्षेत्र में चीनी के कारखानों की स्थापना को विशेष प्रोत्साहन दिया जावेगा।

चीनी उद्योग की समस्यायें एवं उनका निवारण

भारतीय चीनी उद्योग के सम्मुख अनेक समस्याएँ एवं कठिनाइयां हैं, उनमें से प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं —

(1) **राष्ट्रीयकरण की समस्या**—चीनी उद्योग के राष्ट्रीयकरण के सम्बंध में सरकार की नीति स्पष्ट नहीं होने के कारण इस उद्योग का विकास रुक सा गया है। न तो उद्योगपति चीनी के नए कारखाने स्थापित करने को प्रोत्साहित होते हैं और न अपने चीनी के कारखानों का विकास करने में। सन 1970 में उत्तर प्रदेश अपने राज्य के 71 कारखानों में से 24 कारखानों पर राज्य सरकार ने अपना अधिकार जमा लिया। इससे चीनी उद्योग में खलबली मच गई है। उधर बिहार राज्य में भी चीनी के कारखानों की स्थिति अच्छी नहीं है क्योंकि राज्य सरकार ने राज्य की चीनी मिलों को रुग्ण घालक की संज्ञा दी है और कहा है कि राज्य सरकार राज्य की चीनी मिलों के राष्ट्रीयकरण में जल्दबाजी नहीं करेगी। यह अनिश्चित नीति उद्योग के विकास के लिए हानिकारक है। सरकार को चाहिए कि चीनी उद्योग के सम्बंध में अपनी नीति स्पष्ट कर दे।

(2) **मौसमी उद्योग**—चीनी उद्योग की यह विशेषता है कि यह मौसमी (Seasonal) उद्योग है। ये कारखाने नवम्बर से अप्रल तक केवल 4 5 महीने ही काम करते हैं और वर्ष में 7 8 महीने बन्द रहते हैं। इस कारण चीनी का मूल्य भी अधिक हो जाता है।

इस समस्या के निवारण के लिए यह आवश्यक है कि शीघ्र पकने वाली और देर से पकने वाली गन्ने की किस्मों की खेती करना चाहिए ताकि कारखानों को वर्ष भर गन्ना उपलब्ध होता रहे।

(3) **कम उपज**—भारत में गन्ने की प्रति हेक्टेयर उपज अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है, अतः उसमें खाद, खेती की विधि में सुधार, अच्छे बीज, सिंचाई की सुविधा, कीटाणुओं से रक्षा करके उपज में वृद्धि की जा सकती है। इससे मिलों को काफी गन्ना मिलेगा।

(4) **गन्ने का ऊँचा मूल्य**—चीनी बनाने में गन्ने का मूल्य ही लगभग 51 प्रतिशत होता है। गन्ना वजन के अनुसार बेचा जाता है किस्म के अनुसार नहीं। इसका परिणाम यह होता है कि कृषक गन्ने की किस्म में उन्नति की ओर ध्यान नहीं देते हैं। इसके अतिरिक्त गन्ने का मूल्य सरकार निश्चित करती है, स्वतन्त्र प्रतियोगिता के आधार पर नहीं। प्रति हेक्टेयर उपज बढ़ाने से गन्ने के मूल्य में भी कमी होगी।

(5) **मिलों का अवैज्ञानिक वितरण**—भारत की अधिकांश चीनी की मिलें उत्तर प्रदेश व बिहार राज्यों में स्थित हैं किन्तु उनका वितरण ठीक नहीं है। कुछ

मिलें तो गन्ना उत्पादक क्षेत्रों के इतनी निकट हैं कि गन्ना प्राप्त करने के लिए कठोर प्रतिस्पर्द्धा करनी पड़ती है और कुछ मिलें बहुत दूर हैं जहाँ गन्ना ले जाने में व्यय अधिक पड़ता है। इसके अतिरिक्त देश की अधिकांश चीनी मिलें उत्तरी भारत में स्थित हैं, जबकि दक्षिणी भारत चीनी उद्योग के लिए अधिक अनुकूल है।

(6) अनार्थिक आकार की चीनी मिलें—देश में अनेक मिलें छोटी हैं अतः उनकी उत्पादन क्षमता भी कम है। अतः ऐसी मिलों का विस्तार करना आवश्यक है। आर्थिक आकार वाली चीनी की वे मिलें मानी जाती हैं जिनमें लगभग 1,500 टन गन्ना पेरने की दैनिक क्षमता हो।

(7) आधुनिकीकरण की समस्या—उत्तरी भारत की अधिकांश चीनी मिलों की मशीनें बहुत पुरानी हो चुकी हैं और घिस चुकी हैं अतः उनमें नई व आधुनिक मशीनें लगाने की आवश्यकता है। एक अनुमान के अनुसार अगले 10 वर्षों में आधुनीकरण के लिए लगभग 90 करोड़ रुपया की आवश्यकता होगी।

(8) उप पदार्थों की समस्या—गन्ने से चीनी बनाने के पश्चात अनेक उप पदार्थ जैसे छिलका शीरा, तलछट आदि बच जाते हैं। इनका पूरा उपयोग नहीं किया जा रहा है। यदि इनका पूरा उपयोग किया जाये तो काफी लाभ हो सकता है। यद्यपि शीरे से अब एल्कोहल शराब व स्प्रिट आदि तैयार किये जाते हैं किन्तु अभी तक समस्त शीरे का उपयोग नहीं होता। छिलकों का प्रयोग अखबारी कागज गत्ते, नकली रेशम खाद आदि बनाने में किया जा सकता है।

(9) यातायात की समस्या—यातायात की समस्या वास्तव में चीनी उद्योग के विकास में एक बहुत बड़ी रुकावट है। अधिकांश मिल गन्ना क्षेत्रों से दूर हैं और गन्ना ले जाने के लिए सस्ते व तेज यातायात के साधन चाहिए।

(10) वितरण की समस्या—भारत में चीनी के वितरण की भी समस्या है। चीनी के वितरण पर आंशिक सरकारी नियन्त्रण है। राशन में बहुत कम मात्रा में चीनी उपलब्ध होती है इसलिए अब खुले बाजार में (और पहले काले बाजार में) चीनी लेनी पड़ती है। कण्ट्रोल भाव व बाजार भाव में (या काले बाजार के भाव में) काफी अन्तर होता है। नियन्त्रण की नीति असफल रही है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि वितरण की समुचित व्यवस्था की जाय जिससे जनसाधारण को उचित मूल्य पर आवश्यक मात्रा में चीनी उपलब्ध हो सके।

(11) मूल्य नियन्त्रण—गन्ना और चीनी दोनों पर ही मूल्य नियन्त्रण है और श्रमिकों की मजदूरी की दर भी सरकार द्वारा निर्धारित की जाती हैं। लाभ की मात्रा भी सरकार ने 5 प्रतिशत तक सीमित कर दी है। परिणाम यह है कि अनेक मिलों को हानि होती है व अनेक मिलें लाभांश घोषित नहीं कर पाती। चीनी मिल संघ की माँग है कि 20 करोड़ रुपये का एक रिवोल्विंग फण्ड बनाया जाय जो कारखानों के विस्तार के लिए आर्थिक प्रबन्ध कर सके।

(12) चीनी के निर्यात की समस्या—भारत चीनी का निर्यात मुख्यत

विदेशी मुद्रा को प्राप्त करने के उद्देश्य से करता है। भारत को चीनी का अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य मिलता है जो बहुत कम है। उदाहरण के लिए सन् 1967 में चीनी का अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य लगभग 20 पैसे प्रति पौण्ड (अर्थात लगभग 40.45 पैसे प्रति किलोग्राम) था, जबकि भारत में उपभोक्ता को इससे कई गुना मूल्य अधिक देना पड़ता है। फिर भी भारत की चीनी के अधिक मूल्य होने के कारण विदेशों में इसकी माँग कम है।

(13) अनुसंधान कार्य में शिथिलता—भारत में चीनी उद्योग से सम्बन्धित अनुसंधान कार्यों में बहुत शिथिलता है। अनुसंधान कार्य की समुचित सुविधाएँ उपलब्ध होने पर चीनी का उत्पादन मूल्य कम किया जा सकता है व उप पदार्थों के नए उपयोग ज्ञात किए जा सकते हैं।

(14) अन्य समस्याएं—उपरोक्त समस्याओं के अतिरिक्त भारत के चीनी उद्योग के सामने अन्य अनेक समस्याएँ भी हैं जैसे गुड़ और खाण्डसारी से चीनी की कठोर प्रतिस्पर्धा है जिसके फलस्वरूप चीनी उद्योग को पर्याप्त मात्रा में गन्ना प्राप्त करने में कठिनाई होती है, गन्धक की भारत में बहुत कमी है अतः अमरीका से बड़ी मात्रा में आयात किया जाता है, अतः इस उद्योग के सामने गन्धक प्राप्ति की समस्या है। इन समस्याओं का निराकरण आवश्यक है। चीनी उद्योग का भारत में विकेन्द्रीकरण आवश्यक है अतः अब नये कारखाने ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित किये जाने चाहिए।

इसके अतिरिक्त शक्कर उद्योग के कुटीर उद्योग के रूप में भी विकसित होने की पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं।

अन्तिम विचार—

देश में इस उद्योग के विकास के लिए सहकारिता के आधार पर कारखाने स्थापित करने का परामर्श है। सरकार ने इस आधार को स्वीकार कर लिया है और पूर्वी पंजाब आदि में सहकारिता के आधार पर शक्कर के कुछ कारखाने स्थापित किये भी हैं।

देश में विभिन्न नदी घाटी योजनाओं के पूरा हो जाने पर सस्ती जल विद्युत उपलब्ध हो सकेगी जिनसे इस उद्योग के विकास की और भी अधिक सम्भावनाएँ हैं। उत्तर प्रदेश के वाराणसी व इलाहाबाद जिलों में इस उद्योग के विकास की सम्भावनाएँ हैं।

इस उद्योग में अन्वेषण के लिए विस्तृत क्षेत्र है। अतः सरकार को चाहिए कि अन्वेषण करने वाली वर्तमान संस्थाओं के अतिरिक्त अन्य संस्थाओं की भी स्थापना करे।

इस उद्योग पर कर भार अधिक है। यदि इसकी वर्तमान कठिनाइयाँ और बाधाएँ कुछ कम की जा सकें तो यह उद्योग भारत की अर्थव्यवस्था को और अधिक स्थायी बनाने में योग दे सकता है।

एक अखिल भारतीय शक्कर उद्योग संघ की स्थापना बहुत ही आवश्यक प्रतीत हो रही है जो इस उद्योग की उन्नति तथा विकास की दिशा में प्रगतिशील रहे। देश में कच्चा माल, श्रम, पूंजी तथा विस्तृत बाजार है, अतः आवश्यकता केवल इतनी ही प्रतीत होती है कि इस उद्योग की उन्नति आयोजित रूप से की जाय। संक्षेप में, इस उद्योग का भविष्य हमारे देश में उज्ज्वल है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 चीनी उद्योग की वर्तमान स्थिति तथा भावी विकास की सम्भावनाएँ बतलाइये।

2 भारत में चीनी उद्योग के केन्द्रीयकरण के कारण बतलाइये।

3 भारत में चीनी उद्योग के विकास का विवरण दीजिए।

(T D C 1959)

4 भारत के चीनी उद्योग के स्थानीयकरण के कारण बताते हुये उसके भौगोलिक वितरण और वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालिए। (T D C, 1963)

[Discuss the present position and geographical distribution of sugar industry in India, giving reasons for its localisation]

5 भारत में शक्कर उद्योग की [illegible] स्थिति तथा आर्थिक महत्त्व पर प्रकाश डालिए। भारत में इस उद्योग ने स्वतन्त्रता के बाद क्या प्रगति की है?

([illegible])

6 1950 से अब तक भारतीय चीनी उद्योग की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालिए। (T D C, 1968)

7 भारत के लौह इस्पात उद्योग अथवा चीनी उद्योग की स्थिति और विकास समस्याओं का संक्षेप में विवेचन करिये। (T D C, 1970)

21

लोहा तथा इस्पात उद्योग

(Iron & Steel Industry)

परिचय—

लोहा और इस्पात विकास की आधारभूत वस्तुएँ हैं जिनका उपयोग लगभग सार्वभौमिक है। ये विकासोन्मुख अर्थ व्यवस्था की आधारभूत अपेक्षताएँ हैं। यदि किसी देश का आर्थिक विकास ज्ञात करना हो तो "और कुछ न देखिये, बल्कि केवल यह देखिये कि वहाँ लोहे व इस्पात का कितना उत्पादन व उपभोग होता है।" यह है आज के सभ्य देशों के आर्थिक विकास का माप-दण्ड।

आज विश्व के प्रत्येक देश के औद्योगिक क्षेत्र में लोहा तथा इस्पात उद्योग अत्यन्त महत्वशील स्थान रखता है। भारत में अत्यन्त प्राचीनकाल से लोहे व इस्पात का निर्माण होता चला आ रहा है। दिल्ली में कुतुबमीनार के निकट प्रसिद्ध 'लौह स्तम्भ' कम से कम 1 500 वर्ष पुराना है जो 23 फीट से भी अधिक लम्बा और लगभग 6 टन भारी है तथा इसका व्यास $12\frac{1}{2}$ इंच से $15\frac{1}{2}$ इंच तक है। इस स्तम्भ को देखकर आज भी लोग आश्चर्यचकित रह जाते हैं। इसे हिन्दू राजा चन्द्र वर्मन ने बनवाया था। हिम आतप वर्षा के प्रहार सहकर भी, युगों से अचल यह लौह स्तम्भ भारतीय लौह उद्योग का ही गाथा गा रहा है। यदि हमको लाल चीन के सम्भावित आक्रमण से भारत भूमि की रक्षा करनी है, यदि हमारी रक्षा योजनाओं को सफल बनाना है, देश को आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी बनाना है, तो लोहे व इस्पात उद्योग का विकास करना ही पड़ेगा।

संक्षिप्त इतिहास

वैसे तो यह उद्योग भारत में कई हजार वर्ष पूर्व से कुटीर उद्योग के रूप में रहा, किन्तु आधुनिक लौह उद्योग का प्रारम्भ आज से लगभग 138 वर्ष पूर्व सन् 1830 में ईस्ट इण्डियन कम्पनी के कर्मचारी सर जोसिहा हीथ (Sir Josiah Heath) ने मद्रास के निकट (अरकाट में) एक लोहे का कारखाना स्थापित करके की, किन्तु यह कारखाना सन् 1874 में बन्द कर दिया। इस अवधि में पंजाब व बंगाल में भी छोटे-बड़े प्रयत्न किये गये किन्तु सफलता न मिल सकी। जेसप एण्ड कम्पनी ने सन् 1875 में कुल्टी में 'बाराकर आयरन कम्पनी' की स्थापना की जिसका

स्वामित्व कुछ वर्षों बाद (सन 1889 में) बंगाल आयरन एण्ड स्टील कम्पनी के पास चला गया। सन् 1939 में बंगाल कम्पनी का इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी के साथ एकीकरण हो गया।

भारत में व्यापारिक आधार पर सफलतापूर्वक इस्पात के निर्माण करने का श्रेय श्री जमशेदजी टाटा को है, जिन्होंने 1907 में टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी की स्थापना की।

उपरोक्त के अतिरिक्त बिजली पैदा करने के लिए बिजलीघर, लपट वाली भट्टी में तेजी से हवा धौंकने का यंत्र, मरम्मत का काम करने के लिए ढाँचे तथा मशीनों का कारखाना, परीक्षण तथा प्रयोग करने की प्रयोगशालायें, कच्चा माल तथा अन्य सामान भरने के गोदाम आदि।

लोहा तथा इस्पात के प्रमुख कारखाने

इंगलैण्ड में 22 मार्च 1967 को इस्पात उद्योग का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। इस प्रकार वहाँ इस्पात उद्योग अब फिर सन 1951 की स्थिति में पहुँच गया है जबकि युद्धोत्तर काल में बनी मजदूर सरकार ने पहली बार इसका राष्ट्रीयकरण किया था। ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलीय देशों में लोहे व इस्पात उद्योग की दृष्टि से इंगलैण्ड के पश्चात भारत का ही स्थान है। भारत में लोहे का काम आज भी प्राय सभी गाँवों व नगरों में कुटीर उद्योग के रूप में होता है। लोहे व इस्पात के प्रमुख कारखानों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है —

(1) टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी लिमिटेड (TISCO)—

यह कारखाना सन 1907 में बिहार के सिंहभूमि जिले में स्वर्णरेखा और खोरकोई नदियों के मध्य, साक्ची (वर्तमान जमशेदपुर) नामक स्थान पर महान उद्योगपति जमशेदजी नसरवानजी टाटा ने स्थापित किया था। यह कारखाना भारत में ही नहीं वरन एशिया भर में लोहे व इस्पात का सबसे बड़ा कारखाना है। इस कारखाने की स्थिति बहुत अच्छी है क्योंकि इसे निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं —

(1) झरिया बोकारो और करनपुरा की कोयले की खानें जमशेदपुर से लगभग 160 Kms दूर हैं। ये खानें टाटा कम्पनी के अधिकार में हैं।

(2) कच्चा लोहा भी जमशेदपुर के दक्षिण पूर्व की ओर गुरुमहिसानी व नोआमंडी के क्षेत्रों से प्राप्त हो जाता है। यहाँ अच्छी किस्म का लोहा मिलता है। गुरुमहिसानी की लोहे की खानें केवल 80 Kms दूर ही हैं।

(3) डोलोमाइट भी निकट उपलब्ध हो जाता है। चूने का पत्थर अवश्य 320 Kms दूर से प्राप्त होता है। अन्य पदार्थ 160 Kms की परिधि से प्राप्त हो जाते हैं।

(4) नोआमंडी के 50 Kms दक्षिण में स्थित (माल्दा की) खानों से मैंगनीज प्राप्त होता है।

(5) स्वर्ण रेखा और खोरकाई नदियाँ निकट होने से प्रचुर मात्रा में स्वच्छ

पानी मिलने म कठिनाई नही होती । गर्मियो मे स्वर्णरेखा नदी सूख जाती है अत खोरकोई नदी पर एक बाध बना कर पानी एकत्रित कर लिया जाता है ।

(6) सस्ते श्रमिक विहार, उत्तरप्रदेश व मध्य प्रदेश के अन्य भागो स उपलब्ध हो जात हैं।



चित्र 31

(7) कलकत्ते से बम्बई जाने वाला रेलमार्ग जमशेदपुर होकर जाता है । कलकत्ता यहाँ से 320 Kms दूर है ।

(8) अनेक सहायक उद्योगों की स्थापना के कारण भी टाटानगर का महत्त्व बढ़ गया है । जसे टाटा इजीनियरिंग एण्ड लोकोमोटिव कम्पनी टाटानगर फाउण्ड्री टाटा कमिन्स कम्पनी इण्डियन केबिल कम्पनी, एग्रीको फक्ट्री आदि ।

टाटानगर को भारत का बरमिघम अथवा इस्पात नगरी भी कहते हैं । टाटा कम्पनी न सन 1911 मे इस्पात का निर्माण किया । टाटा के कारखाने की

विस्तार योजना कार्यान्वित हो गई है। इस सम्बन्ध में संयुक्त राज्य अमरीका के कसर (Kaiser Corporation) के साथ समझौता किया गया था।

टाटा कम्पनी द्वारा लोहे एवं इस्पात का उत्पादन गत वर्षों में इस प्रकार किया गया —

वर्ष (31 मार्च तक के वर्ष)	पिग (लाख टन)	स्टील (लाख टन)
1957	11 55	10 73
1960	15 68	15 33
1966	19 19	19 80
1967	19 28	20 01
1968	17 99	19 32
1969		17 56

(II) इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कॉर्पोरेशन (IISCO)—

सन 1918 में पश्चिमी बंगाल में आसनसोल के निकट हीरापुर में यह कारखाना स्थापित हुआ। यह कारखाना कलकत्ता से 230 Kms दूर है।

लोहे की दो बड़ी कम्पनियाँ—बंगाल आयरन कम्पनी और स्टील कार्पोरेशन आफ बंगाल—भी क्रमश 1939 व 1953 में इसी कम्पनी में विलीन हो गयी। इस प्रकार इस कम्पनी के पास आजकल तीन कारखाने है—दो बनपुर में और एक कुल्टी (हीरापुर) में।

इन कारखानों के लिए लोहा नोआमंडी, गुल्हान एवं गुरुमहिसानी से प्राप्त होता है। इस कारखाने का इंगलण्ड की इण्टरनेशनल कन्स्ट्रक्शन कम्पनी द्वारा विस्तार किया गया है। विस्तार योजना पूरी हो जाने पर इस कारखाने में 10 लाख टन वार्षिक इस्पात का उत्पादन होने लगा है। 1970 71 तक इसकी क्षमता बढ़ा कर 13 लाख टन कर दी गई है।

इस्को' (IISCO) द्वारा लोहे व इस्पात का उत्पादन गत वर्षों में इस प्रकार किया गया —

वर्ष (31 मार्च तक के वर्ष)	पिग (लाख टन)	स्टील (लाख टन)
1957	7 95	5 32
1960	10 53	8 27
1966	12 18	9 70
1967	11 75	8 96
1968	10 90	7 90
1969		7 24

इन कारखाना को यहां निम्न सुविधाएँ हैं —(1) पहले यहां लोहा स्थानीय रूप मे प्राप्त होता था। बाद म लोहे की धातु उडीसा क मयूरभज और सिहभूमि जिला से मँगाई जाने लगी। (2) रानीगज व झरिया के कोयले के क्षेत्र निकट ही हैं, अत कोयला प्राप्त करने मे कठिनाई नही होती। (3) चूने का पत्थर और डोलोमाइट गगापुर और पाराघाट से प्राप्त होना है। (4) मैंगनीज बिहार तथा मध्य प्रदश से प्राप्त हो जाता है। (5) आसनसोल के निकट होन के कारण इनको रेल यातायात की सुविधाएँ प्राप्त हैं। कलकत्ता बन्दरगाह की सुविधाएँ प्राप्त हैं। (6) बिहार व उत्तर प्रदेश के घने बसे हुए भागो से यहां सस्ते श्रमिक मिल जाते हैं।

(III) मसूर आयरन वर्क्स (MISCO)—

यह कारखाना मसूर राज्य म सरकार द्वारा भद्रावती नामक स्थान पर स्थापित किया गया था। यह भद्रा नदी क किनारे स्थित है। इस कारखान ने सन् 1923 स उत्पादन-काय आरम्भ किया था। 'मसूर आयरन एण्ड स्टील क०' की स्थापना सन् 1961 मे मैसूर-सरकार ने की जिसने अप्रल 1962 म 'मसूर आयरन वक्स' का प्रबन्ध अपने हाथ म ले लिया। इस कारखाने म प्रतिवप 5 हजार टन फेरोसिलिकन स्टील तयार किया जाता है जो भारत मे अन्यत्र तयार नही होता है। इस कारखाने को यहां निम्न सुविधाए प्राप्त हैं —(1) कच्चा लोहा यहाँ से लगभग 8 Kms दूर बाबाबूदन की पहाडियो और शिमोगा जिले से प्राप्त होता है। मैंगनीज व चून के पत्थर की दृष्टि मे भी इसे सुविधाएँ हैं। (2) भद्रा नदी की घाटी 12 Kms चौडी है अत भूमि की कमी नही है। (3) भद्रा नदी से आवश्यक जल प्राप्त कर लिया जाता है। (4) यहा ग्रामीण भागो म विशेषकर निधनता है अत सस्ते और परिश्रमी श्रमिक उपलब्ध हैं। (5) यहाँ पत्थर के कोयले की कमी है बिहार आदि से कोयला मँगवाने म व्यय अधिक लगता है। जिस समय यह कारखाना स्थापित हुआ था उस समय शक्ति के साधन के रूप मे लकडी का कोयला काम म लाया जाता था और पहाडी भाग मे अधिक मात्रा मे लकडी उपलब्ध है। किन्तु आजकल शक्ति के रूप म विद्युत का प्रयोग हो रहा है।

मसूर राज्य क भद्रावती मे स्थित इस कारखाने को 77 हजार टन उत्पादन क्षमता वाले एक मिश्रित विशेष इस्पात कारखाने मे बदला गया है। इस कारखाने के लिए पश्चिमी जमनी से 7 करोड रुपये का ऋण $5\frac{1}{2}\%$ की दर से मिल चुका है। नये रूप म परिवर्तित यह कारखाना जब बन कर पूरा हो जावेगा तो शन शन नरम लोहा बनाना कम कर देगा। नया कारखाना प्रति वष 50 करोड रुपये का माल तयार किया करेगा।

(IV) अन्य कारखाने—

उपरोक्त बड कारखानों के अतिरिक्त बम्बई बडौदा, झाँसी दिल्ली व हावडा में भी लोहे क छोटे छोटे कारखाने हैं।

नये कारखाने

भारत मे सन 1975 तक लोहे एव इस्पात के 10 नये कारखाने स्थापित करने का विचार है। ये सभी कारखान प्राय पश्चिमी बगाल, आन्ध्र प्रदेश, बिहार, उडीसा और मध्य प्रदेश म स्थापित किये जावग। भारत सरकार की नई औद्योगिक नीति (1956) के अनुसार अब देश म इसके नये कारखाने केवल भारत सरकार ही स्थापित कर सकती है।

भारत सरकार लोहे व इस्पात उद्योग के विकास के प्रति भी सजग है। इसके अलावा इसके चार कारखाने स्थापित करने की योजना है। ये कारखाने निम्न स्थानो पर होग —(1) राउरकेला (उडीसा) (2) भिलाई (मध्य प्रदेश) (3) दुर्गापुर (पश्चिमी बगाल) एव (4) बोकारो (बिहार)।

(1) राउरकेला का इस्पात कारखाना—

स्थिति—राउरकेला उडीसा राज्य म कलकत्ता स 415 किलोमीटर पश्चिम मे शख और कोयल नदियो के सगम पर एक छोटा गाँव था। यह कलकत्ता-बम्बई रेलवे लाइन पर स्थित है। भारत सरकार न यहाँ पर पश्चिमी जमनी की विख्यात क्रूप डेमाग कम्पनी क सहयोग से लोह व इस्पात बनाने का एक कारखाना स्थापित किया है।

स्थापना एव प्रगति—भारत सरकार ने 18 फरवरी 1954 को इसकी स्थापना की घोषणा की थी। इस कारखाने मे तीन धमन भट्टियाँ बनाई गई है। ढलाई के दो कारखाने हैं—एक म गम ढलाई और दूसरे म ठण्डी ढलाई होती है। गम ढलाई द्वारा भारी चादरे तथा स्लब बनाय जाते हैं और ठण्डी ढलाई द्वारा टिन की चादरें बनाई जाती हैं। सिल्लियाँ (Slabs) तयार करने वाली मिलें दिसम्बर 1959 स और चादरें बनाने वाली मिलें सितम्बर 1960 स चालू हो चुकी हैं। सम्पूण कारखाना पूरा हो गया है।

निर्माण व्यय—आरम्भ म इस कारखाने के लिए लागत का जो अनुमान था, उसके आधार पर इसका निर्माण व्यय 1 अरब 28 करोड (अर्थात 128 करोड) रुपये था, किन्तु बाद म सामग्री के मूल्यों व मजदूरी मे वृद्धि के कारण इस अनुमान म वृद्धि करनी पडी। अब इस कारखाने के लिए व्यय का सशोधित अनुमान 1 अरब 70 करोड (अर्थात 170 करोड) रुपये है। विस्तार हो जाने पर इस कारखाने म पूजी विनियोग 260 करोड रुपये होगा।

खनिज उपलब्धि—मयूरभज क्योंझर व बोनाय की खानो से लोह खनिज प्राप्त किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त राउरकेला से 70 Kms दूर बरसुआ में नई खान खोली जा रही है जहाँ स सितम्बर 1960 स लोह खनिज प्राप्त होने लगा है। इस नई खान स धातु प्राप्त करन के लिए नया रेल माग बनाया गया है। बिहार की बोकारो, झरिया व करगली की कोयला खानों स कोयला प्राप्त किया जा रहा है। करगली म कोयला धोने का कारखाना (Washery) सन् 1959

में स्थापित किया जा चुका है जहाँ बोकारो और करगली खानों का कोयला धोकर साफ किया जा रहा है। झरिया का कोयला साफ करने के लिए निकट ही (टुंगडा स्थान पर) कोयला धोने की मशीन लगाई गई है।

चूने के पत्थर का प्रबंध हाथीबाड़ी और बीरमित्रपुर से किया गया है, जो राउरकेला से 25 Kms दूर है। निकट ही गगापुर से डोलोमाइट प्राप्त किया जा रहा है। ब्राह्मनी नदी (जिसमें शख और कोयल नदियाँ गिरती हैं) से पानी एवं हीराकुड योजना से सस्ती जल विद्युत प्राप्त हो रही है।

विस्तार योजना—इस कारखाने की उत्पादन क्षमता आरम्भ में 10 लाख टन वार्षिक थी। प्रथम विकास योजना में इसकी उत्पादन-क्षमता 18 लाख टन करने की थी जो सन 1967 में पूरी हो गई है। अब इसकी उत्पादन क्षमता 25 लाख टन करने की योजना बनाई है। इस विकास पर लगभग 125 करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान है। इस प्रकार 25 लाख टन क्षमता होने तक उस पर 500 करोड़ रुपये व्यय हो चुकेंगे। क्षमता 10 लाख टन से 18 लाख टन करने की योजना की विशेष बात यह है कि इसके लिए 75 प्रतिशत ढाँचे भारत में ही निर्मित हैं।

उत्पादित वस्तुएँ—इस कारखाने की उत्पादन-क्षमता 10 लाख टन इस्पात बनाने की थी। इसकी उत्पादन क्षमता 10 लाख से 18 लाख टन कर दी गई है। इस कारखाने की विशेषता यह है कि इसमें इस्पात की चादरें प्लेटें और पत्थर जैसी चपटी चीजें बनाई जा रही हैं। जल-यान रेल इंजिन व मोटरों के लिए प्लेटें भी यहाँ निर्माण की जा रही हैं।

राउरकेला कारखाने ने सन 1959 से उत्पादन आरम्भ कर दिया है। गत वर्षों में इसका उत्पादन (लाख मीट्रिक टन) तालिकानुसार रहा।

राउरकेला में उत्पादन (लाख टन)

वर्ष	पिग आयरन	इस्पात के ढोके
1961	4 39	3 12
1966	9 76	6 44
1967	8 64	5 90
1968	11 63	7 16
1969	12 43	11 60

अन्तिम विचार—इस कारखाने को हम अत्यन्त आशामयी दृष्टि से देख सकते हैं। स्वर्गीय डा० राजेन्द्रप्रसाद के शब्दों में, समय आने पर राउरकेला के उद्योग चक्रों तथा हीराकुड बाँध से सब दिशाओं में प्रवाहित होने वाली कल्याणपुरी जल धाराओं के संयोग से उड़ीसा का यह क्षेत्र भारत का रूर होकर रहेगा।

(2) भिलाई का इस्पात कारखाना—

स्थिति—मध्य प्रदेश में रायपुर से लगभग 25 Kms दूर भिलाई गाँव दुर्ग जिले में स्थित है। नागपुर से भिलाई 265 Kms दूर बम्बई-कलकत्ता की मुख्य रेलवे लाइन पर स्थित है। यहाँ भारत सरकार द्वारा सोवियत रूस की सहायता से लोहे व इस्पात का कारखाना स्थापित किया गया है। इसका डिजाइन रूसी इंजीनियरों ने बनाया है और इसके लिए मशीनें आदि भी रूस ही दे रहा है।

स्थापना एवं प्रगति—इस कारखाने का निर्माण कार्य सन् 1956 में रूसी विशेषज्ञों की देख रेख में आरम्भ हुआ। यह कारखाना 68 sq Kms में विस्तृत है। इस कारखाने में भी 3 धमन भट्टियाँ एवं 6 खुली भट्टियाँ बनाई जाने की योजना थी जो सब बन चुकी है। यह कारखाना पूर्ण रूप से बनकर पूरा हो गया है।

[चाहे जाने में हुआ हो अथवा अनजाने में भिलाई के इस कारखाने की प्रत्येक मशीन और सामग्री को लाल रंग में रंगा गया है। यही नहीं आश्चर्य की बात यह है कि भिलाई की मिट्टी भी लाल रंग की है।]

निर्माण व्यय—आरम्भ में अनुमान था कि इस कारखाने पर 1 अरब 10 करोड़ (अर्थात 110 करोड़) रुपये व्यय होंगे किन्तु संशोधित अनुमान के अनुसार यह राशि 1 अरब 31 करोड़ (अर्थात 131 करोड़) रुपये हो गई। इसमें से रूस ने 64 करोड़ 70 लाख रुपये के मूल्य की मुख्य मशीनें व अन्य यन्त्र $2\frac{1}{2}$ प्रतिशत ब्याज की दर से दी है।[1] इस राशि का भुगतान 12 वार्षिक किश्तों में किया जायगा। इस कारखाने का विस्तार हो जाने पर इसमें पूंजी विनियोग 200 करोड़ हो गया है।

खनिज उपलब्धि—इस कारखाने के लिए लौह खनिज यहाँ से 100 Kms दूर स्थित राजहारा (मध्य प्रदेश) की खानों से प्राप्त किया जाता है। सन 1960 में इस लोहा खान से मशीनों द्वारा खुदाई का काम आरम्भ हुआ है। इस खान की लौह खनिज में 65 प्रतिशत तक धातु है। इसके अतिरिक्त दुर्ग व चाँदा जिलों (महाराष्ट्र) की खानों से भी लोहा प्राप्त किया जाता है। कोयला बिहार के बोकारो, झरिया करगली और मध्य प्रदेश की कोयना की कोयला खानों से प्राप्त किया जा रहा है। चूने का पत्थर भिलाई से लगभग 25 Kms दूर नंदिनी की खानों से मैंगनीज नागपुर और बालाघाट जिलों (महाराष्ट्र) से और डोलोमाइट बिलासपुर व रायपुर जिलों (मध्य प्रदेश) से प्राप्त किया जा रहा है। स्वच्छ जल तन्दुला नहर से प्राप्त हो रहा है जो लगभग 55 Kms दूर है।

उत्पादन की वस्तुएँ—इस कारखाने में रेल की पटरियाँ छड़ें चौड़ी पट्टियाँ व अन्य भारी किस्म की वस्तुएँ बनाई जा रही हैं।

भिलाई इस्पात कारखाना एक दृष्टि में

स्थिति मध्य प्रदेश में—

हावड़ा से 868 Kms

नागपुर से 265 Kms

कच्चा लोहा	राजहारा	100 Kms दूर
कोयला	बिहार (झरिया व करगली)	725 Kms दूर
चूना	नन्दिनी (मध्य प्रदेश)	25 Kms दूर
डोलोमाइट	बिलासपुर व रायपुर	
मैंगनीज	नागपुर व बालाघाट जिले	225 Kms दूर
जल	तन्दुला नहर	55 Kms दूर

[1] Soviet Indian Co-operation p 19

भिलाई कारखाने ने (अक्टूबर) सन 1959 से इस्पात बनाना आरम्भ कर दिया है। कारखाने की तीनो धमन भट्टियाँ चालू हैं। भिलाई के कारखाने मे गत वर्षों में उत्पादन (लाख टनो म) इस प्रकार हुआ —

विस्तार योजना—इस कारखाने की उत्पादन क्षमता भी आरम्भ म 10 लाख टन वार्षिक इस्पात बनाने की थी। विस्तार योजना के अ तगत इसकी उत्पादन-क्षमता 25 लाख टन वार्षिक कर देने की थी। यह विस्तार योजना सन 1967 म पूरी हो गई। भिलाई कारखाने की क्षमता, जो वतमान म 25 लाख टन है, को बढा कर 32 लाख टन करने का कायक्रम आजकल (1970 71) चल रहा है, परतु अब उसम और वृद्धि करके कुल क्षमता 42 लाख टन करने का लक्ष्य है।

भिलाई मे उत्पादन (लाख टन)

वष	पिग आयरन	इस्पात के ढोके
1961	9 60	7 01
1966	17 65	4 98
1967	19 50	6 60
1968	17 14	8 40
1969	19 35	7 35

अन्तिम विचार—अब इस्पात का युग है और मशीनो का उपयोग बढाना ही पडेगा। भिलाई म रेल की पटरियाँ, स्लीपर व अन्य वस्तुएँ बन रही हैं। इन चीजो की देश मे बहुत कमी है। कुछ सूत्रो का कथन है कि भिलाई का उत्पादन घटिया दर्जे का है। ऐसा कहा जाता है कि भिलाई मे बने लगभग 7 करोड रुपये मूल्य के इस्पात को जिसे जापान सयुक्त अरब गणराज्य और इथियोपिया को भेजा गया था, इन देशो ने घटिया होने के कारण वापिस कर दिया ह। श्री टी० टी० कृष्णामाचारी ने भी भिलाई आने पर घटिया इस्पात और भारी उत्पादन-व्यय की आलोचना की थी, उन्होने कहा था कि 'गौ के गोबर और हाथी की लीद में अतर है। बडी मात्रा मे हाथी की लीद के बजाय थोडी मात्रा मे गौ का गोबर उत्पादन मे अधिक लाभ दायक है। श्री कृष्णामाचारी के इस कथन म कटु सत्य छिपा हुआ है। स्वर्गीय प० नेहरू भी इस कारखाने से अति प्रभावित हुए थे और इसके सम्बन्ध मे कहा था, 'भिलाई कारखाना नये भारत विज्ञान और प्रगति तथा भारत-रूस की गाढ़ी मैत्री और सहयोग का प्रतीक है। भिलाई कारखाने के खुल जाने से नये भारत का स्वप्न साकार हुआ है।"

(3) दुर्गापुर इस्पात कारखाना—

स्थिति—पश्चिमी बगाल के बदवान जिले म दुर्गापुर स्थान पर इस्पात का तीसरा सरकारी कारखाना स्थापित किया गया है। ग्राण्ड-ट्रक रोड पर कलकत्ता से लगभग 175 Kms की दूरी पर दुर्गापुर स्थित है। यह कारखाना इगलैण्ड के सहयोग से बनाया गया है। इस कारखाने को तैयार करने का काय इगलण्ड की एक कम्पनी इगलण्ड स्टील वकस कास्ट्रक्शन कम्पनी लिमिटेड' (ISCON) को सौंपा गया था। टैक्नीकल सहायता इण्टरनेशनल कास्ट्रक्शन क० लि०, लदन' से

प्राप्त की गई। बस इस कारखाने के निर्माण म इ गलण्ड की 13 कम्पनियों न सह योग किया है। यह कारखाना भी रूरकेला व भिलाई कारखानों की भाँति हिन्दुस्तान स्टील लि०' के नियन्त्रण म है।

प्रगति—इस कारखाने म तीन धमन भट्टियाँ है और 9 खुली भट्टियाँ लगाई गई है। धमन भट्टियाँ लोहा बनाती है और खुली भट्टियाँ इस्पात तयार करती हैं। सन 1962 म यह कारखाना पूरा तरह बन गया है।

निर्माण व्यय—आरम्भ म अनुमान लगाया गया था कि कारखाने के निर्माण पर 115 करोड रुपय व्यय होंगे, किन्तु संशोधित अनुमान के अनुसार 138 करोड रुपय व्यय हुए।

खनिज उपलब्धि—इस कारखाने के लिए उडीसा की गुआ खानो म लोहा प्राप्त होना है। दुर्गापुर के कारखाने के लिए लगभग 55 प्रतिशत कोयला रानीगंज की खानो से व शेष झरिया की खानो म प्राप्त होता है। टुण्डा भोजूडीह और पथरडीह म कोयला धोने के कारखाने स्थापित किये जा चुके हैं। चूना और डोलोमाइट अभी तो बीरमित्रपुर—हाथीबाडी क्षेत्र से प्राप्त किया जा रहा है किन्तु निकटवर्ती भागो म भी इनकी खोज की जा रही है। इस कारखाने को दामोदर नदी से स्वच्छ जल प्राप्त होता है। दामोदर घाटी कारपोरेशन द्वारा निर्मित विद्युत गृह से सस्ती जल विद्युत प्राप्त होती है।

उत्पादित वस्तुएँ—कारखाना पूरा बन जाने पर यहाँ 10 लाख टन इस्पात व 3½ लाख टन पिग आयरन बनाया जा सकता है। इस कारखाने का भी विस्तार किया जा रहा है। इस कारखाने म पहिये धुरे बिलिट्स ब्लूम आदि के अतिरिक्त हल्की वस्तुयें भी बनाई जा रही है। भारतीय रेलवे को पहिये व धुरे इस कारखाने से प्राप्त हो रहे हैं। अभी तक दो धमन भट्टियाँ बनाई गई हैं। प्रत्येक खुली भट्टी प्रतिदिन 200 मीट्रिक टन इस्पात बनाने की क्षमता वाली है। इसका भी विस्तार किया जा रहा है।

दुर्गापुर इस्पात कारखाने म जो उत्पादन (लाखों टनो म) हुआ है उनका विवरण इस प्रकार है —

दुर्गापुर मे उत्पादन (लाख टन)

वर्ष	पिग आयरन	इस्पात के ढोके
1961	7 21	3 63
1967	7 43	3 80
1968	7 91	3 32
1969	▯ 56	

श्रमिक—इस कारखाने मे 6 हजार व्यक्ति काम कर रहे है। इस कारखाने के निर्माण काम म 25 हजार श्रमिक लगे हुए थे।

अन्तिम विचार—इन कारखानों की स्थापना के साथ ही देश के औद्योगिक इतिहास में एक नवीन अध्याय का सूत्रपात हो गया है। ये कारखाने देश की सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था को प्रभावित करेंगे। देश में इस्पात की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति करने में ये कारखाने पर्याप्त सहायक होंगे। इस्पात के ये मन्दिर भारत में लोक कल्याण कारी राज्य की स्थापना के स्वप्न को साकार करने में शृंखला की महत्वशाली कड़ी सिद्ध होंगे। भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वर्गीय डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के शब्दों में 'इनकी **चिमनियां उस नये युग की सन्देशवाहक हैं जिसे लाने के लिए हम उत्सुक हैं।**

विशेष—भारत के उपरोक्त तीनों चालू सरकारी कारखानों में अब तक (सन 1970 तक) 11 अरब रुपये लग चुके हैं। इन तीनों कारखानों में प्रति कर्मचारी प्रति वर्ष 42 टन से लेकर 56 टन तक इस्पात का उत्पादन करता है, जबकि दूसरे देशों में प्रति कर्मचारी 110 टन तक और जापान में 400 टन तक वार्षिक इस्पात का उत्पादन करता है।

विनियोग किये गये इन 11 अरब रुपयों से कम से कम 55 करोड़ रुपये का लाभ होना चाहिए यदि 5 प्रतिशत की भी आय हो। किन्तु आज भी इन कारखानों में प्रतिवर्ष 40 करोड़ रुपयों का घाटा होता है। इन कारखानों में 1969 70 तक 2 अरब रुपयों का घाटा हो चुका है।

(4) बोकारो इस्पात कारखाना—

स्थिति—बिहार राज्य के धनबाद जिले में बोकारो स्थान पर भारत सरकार सोवियत रूस के सहयोग से इस्पात का चौथा कारखाना स्थापित कर रही है। इस कारखाने का निर्माण कार्य आरम्भ हो गया है। बोकारो अनेक कारणों से इस्पात कारखाने के लिये बहुत उपयुक्त स्थान है। *यह करणपुरा, बोकारो और झरिया की* कोयला खानों के बहुत निकट है। यद्यपि खनिज लोहा यहां से कुछ दूर पड़ेगा, किन्तु *जो माल गाड़ियाँ करगली और झरिया से* हरकेला व भिलाई को कोयला ले जावेंगी वे ही वापसी में बोकारो के लिए लौह खनिज ले आवेंगी।

इस कारखाने के निर्माण के लिए पानी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अग्गा बाँध तैयार हो गया है जिसके निर्माण पर 80 लाख रुपये व्यय हुए हैं तथा इस बाँध से 2 करोड़ क्यूजेक पानी उपलब्ध होगा। बोकारो इस्पात कारखाने की पानी की अन्य आवश्यकताएं पूरी करने के लिए उड़ीसा में तनी नदी पर एक बांध बनाया जा रहा है। इस बांध के निर्माण पर लगभग 22 करोड़ रुपये व्यय होंगे। इस कारखाने के लिये 36 800 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया जायगा, जिसमें से लगभग 10 हजार एकड़ भूमि प्राप्त की जा चुकी है। इस कारखाने में इस्पात की चादरें आदि बनाई जावेंगी।

बोकारो के इस कारखाने के निर्माण आदि कार्यों को सचालित करने के लिए सन् 1964 में एक नई कम्पनी **'बोकारो स्टील लिमिटेड'** की स्थापना 335 करोड़ रुपये की अधिकृत अंश पूंजी से हुई है।

रूस भारत समझौते की प्रमुख बातें—सोवियत रूस और भारत के मध्य बोकारो इस्पात कारखाने के निर्माण के लिए 25 जनवरी 1965 को एक समझौते पर हस्ताक्षर हो गय। इस कारखान की विस्तृत योजना सोवियत रूस अधिकारिया ने दिसम्बर 1965 म भारत सरकार को दी।

बोकारो इस्पात कारखाना दो चरणो मे पूरा किया जायगा। कारखाना पूरा हो जाने पर इसकी उत्पादन क्षमता 40 लाख टन इस्पात की होगी जिस 55 लाख टन बढाया जा सकेगा। प्रथम चरण पूरा हो जान पर इसकी उत्पादन क्षमता 17 लाख टन इस्पात की होगी। इस प्रथम चरण को पूरा करने के लिए 671 करोड रुपये का पूँजीगत व्यय होगा। बोकारो का प्रथम चरण सन् 1973 तक पूरा हो जाने का सरकारी अनुमान है और उसके पश्चात 40 लाख टन की क्षमता 1975 76 तक प्राप्त होने की सम्भावना है।

सावियत रूस ने 20 करोड रूबल (अर्थात 166 60 करोड रुपये) का ऋण दिया है। यह विदेशी मुद्रा कारखाने के प्रथम चरण मे ही व्यय हो जावेगी। इस ऋण को चुकाने के लिए अवमूल्यन (जून 1966) के कारण अब भारत को 50 करोड रुपये अधिक चुकाने होगे।

इस समझौते म इस बात की भी व्यवस्था की गइ है कि इस कारखाने के लिये अधिक से अधिक भारतीय मशीनो आदि का उपयोग किया जायगा। कुछ मशीनें राची मे रूस की सहायता से—भारी इन्जीनियरिंग कारखाने म तयार की जावेंगी।

निर्माण व्यय—बोकारो इस्पात कारखान के निर्माण पर लगभग 770 करोड रुपये व्यय होंगे, ऐसा सरकारी रिपाट म बतलाया गया है किन्तु हमारा अनुमान है कि इस पर 900 करोड रुपये स भी अधिक व्यय होंगे।

अन्तिम विचार—यह समझौता आर्थिक क्षेत्र मे भारत व सोवियत रूस के मध्य बढ़ते हुए सहयोग का प्रतीक है। सावियत रूस की ओर स इस समझौते पर हस्ताक्षरकर्ता श्री सरगव ने कहा कि बोकारो इस्पात कारखाना खडा करने म सहायता देकर हम इतना ही कर रह हैं कि हमन जो प्रगति की है उसमे आपको भी हिस्सा दें। इस कारखाने से भारत की आर्थिक स्थिति म नि स देह सुधार होगा, ऐसा हमारा विश्वास है।

लाह एव इस्पात के प्रस्तावित कारखाने

भारत की प्रधान मत्री श्रीमती इ दिरा गाधी ने 17 अप्रल 1970 को लोकसभा म घोषणा की कि दक्षिण भारत के इन तीन राज्यो म लोह एव इस्पात क नवीन कारखान स्थापित किए जावेंग—

राज्य	स्थान
तमिलनाडु	सलेम
आध्र	विशाखापट्टनम
मैसूर	हासेट

आध्र व मसूर क कारखान नम इस्पात (Mild Steel) तथा तमिलनाडु का कारखाना विशष इस्पात (Special

Steel) बनावेगा। इन तीनो कारखानो के विकास के लिए 110 करोड रुपयो की व्यवस्था की गई है। इन कारखानो की स्थापना के लिए चतुर्थ पचवर्षीय योजना अवधि मे कार्य प्रारम्भ कर दिया जावेगा। आशा है कि सलेम (तमिलनाडु) मे इस्पात का कारखाना 1974-75 तक लग जावेगा, शेष दो मे विलम्ब होगा।

(1) सलेम (तमिलनाडु) का कारखाना—सलेम जिले म कच्चे लोहे की खानें हैं व निवेली म कोयले के विशाल भण्डार हैं। सलेम के कारखाने के इस कारण शीघ्र लग जाने की आशा है कि इसके लिए प्रारम्भिक कार्य काफी पूरा हो चुका है। लगभग 10 हजार एकड भूमि प्राप्त कर ली गई है। यह कारखाना विशेष प्रकार का इस्पात (Special Steel) निर्माण करेगा। यह उल्लेखनीय है कि सलम का कारखाना, शेष दोनो प्रस्तावित कारखानो से छोटा होगा।

(2) विशाखापट्टनम (आध्र) का कारखाना—आध्र प्रदेश म विशाखापट्टनम के स्थान का चुनाव बन्दरगाह की सुविधा के कारण विशेषरूप से किया गया है। आध्र राज्य में नलौर, करनूल और कुडप्पा मे लोहे की खानें हैं, व इसी राज्य म कोयले का प्रमुख क्षेत्र सिंगरनी है। बन्दरगाह होने के कारण यहा से इस्पात की वस्तुओ के निर्यात म तथा आवश्यक कच्चे माल के आयात म सुविधा होगी। यह कारखाना नम इस्पात (Mild Steel) निर्माण करेगा। इस कारखाने का शिलान्यास जनवरी 1971 मे किया जा चुका है।

(3) हास्पेट (मसूर) का कारखाना—मसूर राज्य के हास्पेट, कदूर और बेलारी जिलो म अच्छी किस्म क लोहे की खानें हैं। नयाकारखाना इस लोह खनिज का तो उपयोग करेगा ही किन्तु इस कारखाने के कारण इस क्षेत्र में औद्योगिक विकास की सम्भावनाएँ बढ जावगा।

दश म लोहे व इस्पात की कमी दखते हुए मई 1971 मे सरकार ने यह निर्णय किया है कि निजी क्षेत्र म 5 या 6 लोह व इस्पात बनाने क छोटे (Mini) कारखाने स्थापित किए जाने की अनुमति प्रदान की जावगी, जिनम स प्रत्येक कारखाने की उत्पादन क्षमता 50 हजार से 1 लाख टन इस्पात होगी।

लोहा एव इस्पात का उत्पादन

वर्तमान युग मे किसी देश की औद्योगिक उन्नति की कसौटी यह है कि वहाँ कितना इस्पात बनता एव उपयोग मे आता है। इस दृष्टि मे अमरीका का स्थान प्रथम है। वहाँ पर प्रतिवर्ष 10 करोड टन से भी अधिक इस्पात बनता है, रूस म 5 करोड टन इगलण्ड व जर्मनी प्रत्यक मे 2 करोड टन, भारत म 0 45 करोड टन इस्पात प्रतिवर्ष बनता है। जापान म सन् 1948 मे 17 लाख टन इस्पात उत्पादन किया गया किन्तु अब उत्पादन बढाकर वह 1 21 करोड टन इस्पात का उत्पादन कर रहा है। लाल चीन लगभग 2 करोड टन इस्पात का उत्पादन कर रहा है। आजकल हमारे देश म 45 लाख टन इस्पात से भी अधिक का उत्पादन हो रहा है। पिछले वर्षो म इस्पात का भारत म उत्पादन इस प्रकार रहा —

भारत मे इस्पात व पिग-आयरन का उत्पादन[1]

(लाख टन)

वर्ष	पिग आयरन	तैयार इस्पात
1950 51	16 9	10 4
1955 56	19 5	13 0
1960 61	43 1	23 9
1965 66	70 9	45 1
1966 67	70 1	44 3
1967 68	68 9	40 5
1968 69	71 7	47 0

प्रति व्यक्ति उपभोग

यदि हम अन्य देशो से तुलना करेंगे तो ज्ञात होगा कि भारत मे प्रति व्यक्ति इस्पात का उपभोग अन्य देशो की तुलना म बहुत कम है। सन् 1937 38 मे भारत म प्रति व्यक्ति वार्षिक इस्पात की खपत लगभग 7 पौण्ड थी। इस खपत मे यद्यपि वृद्धि हुई है किन्तु सतोषजनक नहा हुई है। भारत मे नवीनतम आंकडा के अनुसार इस्पात की प्रति व्यक्ति वतमान वार्षिक खपत 16 kg है। इस दिशा म नीच की तालिका तुलनात्मक दृष्टि मे लाभदायक सिद्ध होगी।

प्रति व्यक्ति इस्पात का वार्षिक उपभोग

देश	प्रति व्यक्ति इस्पात का उपभोग	देश	प्रति व्यक्ति इस्पात का उपभोग
स्वीडन	545 kg	इटली	275 kg
सयुक्त राज्य अमरीका	540 kg	जापान	260 kg
इगलण्ड	370 kg	भारत	16 kg
सोवियत रूस	345 kg	अरब गणराज्य	16 kg
फ्रास	325 kg	पाकिस्तान	7 5 kg

---

[1] Figures have been adopted from the Pre budget Economic Survey Report 1969 70 presented to Parliament by Prime Minister Shrimati Indira Gandhi on 24 Feb 1970 The figures slightly differ from as published in INDIA—1969, p 326

सन् 1966 का अवमूल्यन

अवमूल्यन के फलस्वरूप चौथी योजना में इस्पात कार्यक्रमों पर मोटे तौर पर लगभग 200 करोड़ रुपये अधिक व्यय होगा।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

भारत इस्पात का आयात अमरीका, जर्मनी, बेल्जियम, फ्रांस, चेकोस्लोवाकिया व रूस से आयात करता है। इन दोनों देशों से इस्पात के आयात में कमी हो रही है।

भारत में इस्पात का आयात

वर्ष	मूल्य (करोड़ रुपये)
1960 61	122 5
1965 66	97 9
1966 67	79 1
1967 68	106 3
1968 69	86 1

निर्यात—लोहे तथा इस्पात का भारत में निर्यात बढ़ रहा है जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट होगा —

भारत से इस्पात का निर्यात

वर्ष	मूल्य (करोड़ रुपये)	वर्ष	मूल्य (करोड़ रुपये)
1960 61	9 75	1967 68	54 85
1965 66	12 40	1968 69	79 00
1966 67	22 20	1969 70	77 20

पंचवर्षीय योजनायें

प्रथम पंचवर्षीय योजना में 1955 56 तक देश में इस्पात की उत्पादन क्षमता 11 लाख टन से बढ़ाकर 17 लाख टन और वास्तविक उत्पादन 10 लाख टन से 15 लाख टन कर देने का लक्ष्य रखा गया था।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्त तक इस्पात का वार्षिक उत्पादन 60 लाख टन कर देने का लक्ष्य रखा गया था। यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि विश्व में वर्तमान इस्पात उत्पादन 30 करोड़ टन है।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में लोहे व इस्पात के उत्पादन के संशोधित लक्ष्य इस प्रकार रखे थे —

	लाख टन
इस्पात पिंड (Steel Ingots)	102
समापित इस्पात (Finished Steel)	68
विक्रय के लिए कच्चा लोहा (Pig Iron for Sale)	15

लोहे तथा इस्पात के विकास कार्यक्रमों पर तीसरी योजना में कुल 640

करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान है जिसमें 305 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा है। इस 640 करोड़ रुपये में से 525 करोड़ रुपये सरकारी क्षेत्र में व्यय किए गए हैं।

चौथी पंचवर्षीय योजना में लोहे एवं इस्पात का प्रस्तावित उत्पादन लक्ष्य इस प्रकार है —

	लाख टन
इस्पात	165
पिंड लोह	45
मिश्र व विशेष इस्पात	5

अन्तिम विचार

इस देश में इस उद्योग के सामने अनेक कठिनाइयाँ आती रही हैं। सबसे पहली कठिनाई तो तान्त्रिक (Technical) व्यक्तियों का अभाव है। आज भी हम देख रहे हैं कि भारत में लोह उद्योग के नये स्थापित किए जाने वाले कारखानों की स्थापना जर्मनी, रूस व इंगलैण्ड के विशेषज्ञों द्वारा की जा रही है। दूसरी कठिनाई मशीनों की है। इस उद्योग से सम्बन्धित मशीनों के लिए अभी तक पूर्णतः हम विदेशों पर ही निर्भर हैं। तीसरी कठिनाई वित्त सम्बन्धी है।

उत्पादन वृद्धि के लिए विस्तृत क्षेत्र पड़ा हुआ है। देश में विकास योजनाएँ कार्यान्वित हो रही हैं जिसके कारण इस्पात की मांग में वृद्धि हो रही है अतः इस उद्योग के लिए देश में ही पर्याप्त क्षेत्र है। विदेशों, विशेषतः पड़ोसी देश जैसे पाकिस्तान, बर्मा, स्याम, अफगानिस्तान, ईरान, टर्की आदि में भी हमारे लिए अच्छा बाजार मिल सकता है। यह उद्योग राष्ट्रीय आय की दृष्टि से भी महत्वशील है।

देश के उद्योगों के विकास और विस्तार के लिए यह आवश्यक है कि इस्पात का उत्पादन बढ़ाया जाये जो कि सभी छोटे-बड़े उद्योगों की बुनियादी आवश्यकता है।

पंचवर्षीय योजना काल में भारत का लोह-इस्पात उद्योग

प्रथम पंचवर्षीय योजना काल—सन् 1948 में स्वतन्त्र भारत की प्रथम औद्योगिक नीति की घोषणा की गई। इस औद्योगिक नीति के अनुसार लोह व इस्पात के नए कारखाने सार्वजनिक-क्षेत्र में ही स्थापित करने का प्रावधान था। अतः प्रथम पंचवर्षीय योजना एवं आगे की योजनाओं में लोह एवं इस्पात के नए कारखाने केवल सार्वजनिक क्षेत्र में ही स्थापित करने की योजनाएँ बनाई गईं।

प्रथम योजना के आरम्भ में (1950 51 में) भारत में लोह व इस्पात के तीन बड़े कारखाने कार्य कर रहे थे। इन कारखानों में से दो कारखाने—टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, जमशेदपुर तथा इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कारपोरेशन, बर्नपुर कुल्टी—निजी क्षेत्र में कार्य कर रहे थे और एक कारखाना—मैसूर आयरन कम्पनी—सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य कर रहा था।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में 1955 56 तक देश में इस्पात की उत्पादन क्षमता

11 लाख टन से बढ़ाकर 17 लाख टन और वास्तविक उत्पादन 10 लाख टन से 15 लाख टन कर दने का लक्ष्य रखा गया था। इस योजना-काल म लौह व इस्पात उद्योग के विकास के लिए लगभग 30 करोड रुपयो का प्रावधान किया गया।

इस योजना-काल मे—(1) उपरोक्त चालू तीनो कारखानो (टाटा इण्डियन आयरन व मसूर आयरन) न विस्तार और आधुनिकीकरण की योजनाएँ बनाई, (11) सरकारी क्षेत्र मे 10 10 लाख उत्पादन-क्षमता वाल लौह व इस्पात के तीन कारखाने स्थापित करने की योजना बनाई और (111) सन् 1953 म 300 करोड रुपये की पूँजी स हिन्दुस्तान स्टील लि०' क नाम से लौह व इस्पात के कारखान स्थापित करन क लिए एक कम्पनी का निर्माण किया गया।

प्रथम योजना मे टाटा के कारखान का विस्तार सयुक्त राज्य अमरीका के कसर-कारपोरशन के सहयोग से किया गया। इसके विकास के कायक्रम पर लगभग 35 करोड रुपये व्यय हुए। मसूर आयरन वक्स और इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कारपोरेशन का भी विकास किया गया।

इस योजना म 10 10 लाख उत्पादन-क्षमता वाल लौह व इस्पात के तीन कारखान सावजनिक क्षेत्र म विदशी आर्थिक व तकनीकी सहायता से स्थापित करने के लिए अन्तिम रूप भी दिया गया। लौह व इस्पात का प्रथम कारखाना राउरकेला (उडीसा) म स्थापित करन का प्रस्ताव था। इस कारखाने को जमनी के सहयोग से स्थापित करने के सम्बन्ध म एक समझौता हुआ। फरवरी 1954 को इस कारखाने की स्थापना की घोषणा कर दी गई। लौह व इस्पात का दूसरा कारखाना भिलाई (मध्य प्रदेश) मे सोवियत रूस की सहायता से व तीसरा कारखाना दुर्गापुर (पश्चिमी बगाल) म इगलण्ड की सहायता स स्थापित करने क सम्बन्ध म तय किया गया।

इस योजना काल मे लौह एव इस्पात के उत्पादन म लगभग 3 लाख टन की वृद्धि हुई जसाकि निम्न तालिका स स्पष्ट है —

प्रथम योजना मे लौह एव इस्पात का उत्पादन (लाख टन)

विवरण	1950 51	1955 56
पिग आयरन	16 9	19 5
इस्पात के ढाचे	14 7	17 3
तयार इस्पात	10 4	13 0

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि प्रथम योजना काल म इस्पात के उत्पादन म कोई विशेष वृद्धि नही हुई। तयार इस्पात म लगभग 2 5 लाख टन उत्पादन म वृद्धि हुई।

द्वितीय पचवर्षीय योजना काल—सन 1956 मे भारत की औद्योगिक नीति की पुन घोषणा की गई और उसमे भी लौह व इस्पात उद्योग के भावी कारखानो

की स्थापना का उत्तरदायित्व सावजनिक क्षत्र पर ही छोडा गया। सन 1975 तक लोह व इस्पात के 10 नए कारखाने स्थापित करन का लक्ष्य रखा गया।

इस योजना काल म राउरकेला (उडीसा) इस्पात कारखान न उत्पादन आरम्भ कर दिया, जिसकी स्थापना प्रथम योजना काल (सन 1954) म की गई थी। दूसरा कारखाना भिलाई (मध्य प्रदेश) म सन 1956 म बनाना आरम्भ किया गया। इस कारखाने न भी इसी योजना काल म उत्पादन आरम्भ कर दिया। इस्पात के तीसरे कारखान का दुर्गापुर (प० बंगाल) म निर्माण आरम्भ कर दिया गया जिसने उत्पादन तृतीय पचवर्षीय योजना काल (सन 1962) म आरम्भ किया। सावजनिक क्षेत्र के इन तीनो कारखानो का प्रबन्ध हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड (जिसकी स्थापना सरकारी कम्पनी के रूप म सन 1953 म की जा चुकी थी) के अन्तगत हो रहा है।

निजी क्षेत्र म टाटा इस्पात कारखान व इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कारपोरेशन के विस्तार का कायक्रम पूरा हो गया जिसके परिणामस्वरूप इन कारखानो म भी इस्पात क उत्पादन म वृद्धि हुइ। सन 1961 म टाटा कम्पनी न लगभग 16 लाख टन इस्पात का व इण्डियन आयरन ने लगभग 9 लाख टन इस्पात का उत्पादन किया।

निम्न तालिका म द्वितीय पचवर्षीय योजना काल म लोहे व इस्पात का उत्पादन बतलाया गया है —

द्वितीय योजना मे लोह एव इस्पात का उत्पादन (लाख टन)

विवरण	1955 56	1960 61
पिग आयरन	19 5	43 10
इस्पात क ढोके	17 3	34 20
तयार इस्पात	13 0	24 00

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि द्वितीय योजना काल म इस्पात आदि के उत्पादन म वृद्धि हुई। इस वृद्धि का प्रमुख कारण था सावजनिक क्षेत्र के दोनो कारखानो द्वारा भी उत्पादन म योग। प्रथम योजना की तुलना म द्वितीय योजना म पिग आयरन का उत्पादन दो गुन से भी अधिक हुआ इस्पात के ढोको का उत्पादन लगभग दो गुना और तयार इस्पात क उत्पादन म लगभग 85 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

द्वितीय योजना काल म यद्यपि देश में लोह व इस्पात के उत्पादन मे वृद्धि हुइ किन्तु देश की आवश्यकताओ को पूरा करन म असमथ था। अत विदेशो से लोहा व इस्पात का आयात किया जा रहा था। योजना क अन्तिम वष 1960 61 म भारत म लगभग 122 5 करोड रुपय क मूल्य का इस्पात आयात किया गया। किन्तु भारत इस्पात क नियात की स्थिति म भी था। सन 1960 61 में भारत से लगभग 9 75 करोड रुपय क मूल्य का इस्पात निर्यात किया गया।

इस प्रकार द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में लौह व इस्पात उद्योग की प्रगति उत्साहप्रद रही।

तृतीय पंचवर्षीय योजना काल—तृतीय पंचवर्षीय योजना काल के लिए लौह व इस्पात उद्योग के लिए प्रमुख कार्यक्रम ये थे—सार्वजनिक क्षेत्र के तीनों कारखानों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि करना, और सार्वजनिक क्षेत्र में बोकारो (बिहार) स्थान पर लौह व इस्पात का चौथा कारखाना स्थापित करना, लौह व इस्पात के उत्पादन व निर्यात में वृद्धि।

तृतीय योजना काल में लौह व इस्पात के विकास कार्यक्रमों पर सार्वजनिक क्षेत्र में कुल 525 करोड़ रुपये व्यय किये जाने का प्रावधान था। इस योजना में इस उद्योग के उत्पादन लक्ष्य इस प्रकार रखे गये —

तृतीय योजना के लक्ष्य

विवरण	लाख टन
इस्पात के ढाँचे	102
तैयार इस्पात	68
विक्रय के लिए पिग आयरन	15

दुर्गापुर इस्पात कारखाने का निर्माण तो द्वितीय योजना में आरम्भ कर दिया गया किन्तु इसने उत्पादन सन् 1962 से आरम्भ किया। सार्वजनिक लौह व इस्पात के तीनों कारखानों में, प्रत्येक की उत्पादन क्षमता 10 10 लाख टन थी, तृतीय योजना में इनकी उत्पादन क्षमता बढ़ाने का कार्य किया गया। उत्पादन क्षमता में वृद्धि के ये लक्ष्य रखे गये —

भिलाई	25 लाख टन
राउरकेला	18 लाख टन
दुर्गापुर	16 लाख टन

इस कार्यक्रम में केवल भिलाई के कारखाने की उत्पादन क्षमता तो लक्ष्य के अनुसार बढ़ाई जा सकी, शेष कारखानों का भी विस्तार किया गया।

तृतीय योजना में लौह एवं इस्पात का उत्पादन (लाख टन)

विवरण	1960 61	1965 66
पिग आयरन	43 10	70 9
इस्पात के ढाँचे	34 20	65 3
तैयार इस्पात	24 00	45 1

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि द्वितीय योजना काल की तुलना में तृतीय योजना में लौह व इस्पात उद्योग का काफी विकास हुआ।

इस योजना काल में बिहार राज्य में बोकारो स्थान पर लौह व इस्पात का सार्वजनिक क्षेत्र में चौथा कारखाना स्थापित करने के लिए 25 जनवरी 1965 को भारत व सोवियत सरकार के मध्य एक समझौता हुआ।

इस योजना काल में लौह व इस्पात के आयात में कुछ कमी हुई और इसके निर्यात में कुछ वृद्धि हुई। यह अग्रलिखित तालिका से स्पष्ट होगा —

इस्पात का आयात व निर्यात (करोड़ रु०)

वर्ष	आयात	निर्यात
1960 61	122 5	9 75
1965 66	97 9	12 40

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत में लोहा तथा इस्पात उद्योग की प्रगति हो रही है।

वार्षिक योजनाएँ—

प्रथम वार्षिक योजना (1966 67)—इस काल में गत वर्ष की तुलना में तयार इस्पात का उत्पादन कुछ कम रहा। इस वर्ष तयार इस्पात का उत्पादन 44 लाख टन से कुछ अधिक हुआ जबकि पिछले वर्ष उत्पादन 45 लाख टन से कुछ अधिक था। इस वर्ष भिलाई इस्पात कारखाने के विकास का काय पूरा हो गया। इस वर्ष इस्पात के आयात में काफी कमी (79 करोड़ रुपये की) हुई, किन्तु इसके निर्यात में काफी वृद्धि हुई। अत यह वर्ष इस उद्योग की दृष्टि से सन्तोषजनक रहा।

द्वितीय वार्षिक योजना (1967 68)—इस वर्ष इस्पात के उत्पादन में और भी कमी आई। इस वर्ष बोकारो इस्पात कारखाने के निर्माण में और प्रगति हुई। इस वर्ष इस्पात एवं पिग आयरन के निर्यात पर विशेष ध्यान दिया गया। इस वर्ष इस्पात का निर्यात लगभग 55 करोड़ रुपये से कुछ कम हुआ। किन्तु इस्पात के आयात में अचानक बहुत वृद्धि हुई। इस वर्ष 106 करोड़ रुपये से कुछ अधिक मूल्य का इस्पात आयात किया गया।

तृतीय वार्षिक योजना (1968 69)—इस वर्ष बोकारो इस्पात के कारखान के निर्माण में और तेजी से प्रगति हुई। राउरकेला भिलाई व दुर्गापुर इस्पात कारखानों के विस्तार का काय सन्तोषजनक रहा। इस वर्ष तैयार इस्पात के उत्पादन में व पिग आयरन के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई जो कि क्रमश 47 लाख टन और 72 लाख टन था। यह ध्यान रहे कि अब तक के उत्पादन में यह रिकार्ड उत्पादन था। इसी प्रकार इस वर्ष इस्पात का रिकार्ड निर्यात भी हुआ। इस वर्ष 79 लाख टन इस्पात का निर्यात हुआ। इस्पात के आयात में कमी आयी।

चतुथ पचवर्षीय योजना—अनुमान है कि 1973 74 में तयार इस्पात की घरेलू माँग लगभग 71 2 लाख टन तथा पिग आयरन की घरेलू माँग 19 5 लाख टन हो जावेगी। इस माँग की पूर्ति करने के लिए चतुथ पचवर्षीय योजना काल में भिलाई के इस्पात कारखाने का विकास किया जायगा और इसे 25 लाख टन से बढ़ाकर 32 लाख टन करने का कायक्रम चल रहा है परन्तु अब उसमें और वृद्धि करके कुल क्षमता 42 लाख टन करने का लक्ष्य है। इसी प्रकार बोकारो की क्षमता का पहला चरण 17 लाख टन का था परन्तु अब उसे 40 लाख टन करने की

योजना है। दुर्गापुर म मिश्रित इस्पात उत्पादन क्षमता 40 हजार टन स बढ़ाकर 60 हजार टन करन का कार्यक्रम है।

निजी क्षेत्र की इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी अपनी क्षमता 10 लाख टन से बढ़ाकर 13 लाख टन करने के लिए विश्व बैंक आदि स बात कर रही है। टाटा स्टील के विस्तार का कोई प्रस्ताव नहा है।

चौथी योजना म लोह व इस्पात उद्योग के विकास पर लगभग 233 करोड़ रुपये व्यय होंगे। इस्पात व पिग आयरन की माग मे इस चौथी योजना म काफी वृद्धि होने की सम्भावना है अत इस माँग की अधिकतम पूर्ति करने के उद्देश्य को ध्यान म रखा गया है। 1973 74 मे 10 लाख टन इस्पात और 15 लाख टन पिग आयरन को निर्यात करन की परिकल्पना की गई है।

आशा है कि चौथी-पचवर्षीय योजना काल म देश का लौह व इस्पात उद्योग काफी विकास करेगा।

लौह एव इस्पात उद्योग की समस्याएँ

वर्तमान युग म लोह एव इस्पात उद्योग आर्थिक विकास का आधार है। हमारे देश मे लौह खनिज एव अन्य आवश्यक कच्चे पदार्थों के विशाल भण्डार हैं, किन्तु फिर भी यहाँ इस उद्योग का आवश्यक स्तर तक विकास नही हो सका है। भारत के लौह व इस्पात उद्योग के सामन अनेक समस्याएँ हैं उनम से प्रमुख निम्नलिखित हैं —

(1) **अच्छे कोयले की समस्या**—लोहे को गलाने के लिए श्रेष्ठ श्रेणी के कोयले की आवश्यकता होती है। भारत म इस प्रकार के कोयले की पूर्ति माँग से काफी कम है। अत एस कोयले की अपर्याप्तता के कारण पुरान एव नये इस्पात के कारखानो का विकास पूरा नही हो पा रहा है। इस समस्या का निवारण यह है कि देश मे कोयला धोने का उचित प्रबन्ध होना चाहिए। देश मे कोयला धोने के कुछ और कारखाने स्थापित किये जान चाहिए।

(2) **तकनीकी ज्ञान का अभाव**—भारत म लोहे व इस्पात उद्योग स सम्बन्धित तकनीकी ज्ञान का बहुत अभाव है। इसके लिए हमको इगलैण्ड सयुक्त राज्य अमरीका पश्चिमी जमनी, सोवियत रूस आदि देशो पर निर्भर रहना पड़ता है। राउरकेला भिलाई दुर्गापुर बोकारो आदि म स्थापित किये गये कारखाने प्राय विदेशियो के तकनीकी ज्ञान के आधार पर लगाये गये हैं।

(3) **पूजी की समस्या**—लोह एव इस्पात उद्योग के कारखान को लगाने मे बहुत पूजी की आवश्यकता होती है। पूजी की कमी के कारण भी देश म इस उद्योग का पर्याप्त विकास नही हो पाया। सार्वजनिक क्षेत्र के सभी इस्पात के कारखानों म विदेशी सहायता व विदेशी ऋणो को उपलब्ध किया गया है। टाटा के इस्पात कारखान ने भी विस्तार के लिए विश्व बैंक से ऋण लिया था।

(4) **यातायात की समस्या**—इस उद्योग के विकास के लिए सस्ते, सुलभ

और पर्याप्त यातायात के साधन आवश्यक हैं। लोहे, कोयला, मैंगनीज, चूने के पत्थर आदि की खानों के क्षेत्रों से इस्पात कारखानों तक रेलों की पर्याप्त उपलब्धि होनी चाहिए। भारत में अभी तक इनका आवश्यकता के अनुसार विकास नहीं हुआ है जो इस उद्योग के लिए एक अवरोध है।

(5) मशीनों की समस्या—इस्पात के कारखानों के लिए भारी मशीनों की आवश्यकता होती है जिसका भारत में अभाव ही है। भारत के सभी इस्पात के कारखानों में विदेशों से मशीनें आयात की गई हैं। यद्यपि देश में ही आवश्यक अनेक मशीनों के निर्माण में प्रगति हो रही है किन्तु निकट भविष्य में हम आत्मनिर्भर नहीं हो सकेंगे।

(6) इस्पात के मूल्य की समस्या—भारत में कारखानों में तैयार किये गये लोहे व इस्पात का मूल्य सरकार निर्धारित करती है जिससे अनेक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। भारत में इस्पात का आयात भी किया जाता है और उसका मूल्य ऊँचा होता है। इसी मूल्य के आधार पर देश में उत्पादित इस्पात का मूल्य निर्धारित किया जाता है अतः उपभोक्ताओं को अधिक मूल्य देना पड़ता है।

(7) सरकार की औद्योगिक नीति—भारत सरकार ने सन् 1956 में औद्योगिक नीति की घोषणा की। उसके अनुसार लोहे व इस्पात के नवीन कारखाने केवल सार्वजनिक क्षेत्र में ही खोले जा सकते हैं। पुराने कारखानों के अतिरिक्त निजी क्षेत्र में अब इसके कारखाने स्थापित नहीं किये जा सकते अतः देश की सरकारी औद्योगिक नीति ने देश के उद्योगपतियों को इस उद्योग की ओर आकर्षित होने के लिए मार्ग बिल्कुल अवरुद्ध कर दिया है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 भारतीय लोहे एवं इस्पात उद्योग की वर्तमान स्थिति बतलाइये। इस उद्योग के सम्मुख क्या समस्याएँ हैं?

2 उन स्थानों के नाम लिखिए जहाँ इस्पात के नये कारखाने स्थापित किये गये हैं और उनके वहाँ स्थापित होने के कारण बताइए।

3 लोहा इस्पात उद्योग का महत्व और उसकी उपयोगिता बताइये और भारत में इसके पिछले वर्षों में उसकी उन्नति पर प्रकाश डालिए।

(T D C 1964)

4 पंचवर्षीय योजनाकाल में भारत के सामान्य लोहा और इस्पात उद्योग के विकास, समस्याओं और सुझावों पर प्रकाश डालिए।

(T D C 1969)

5 भारत के लोहे इस्पात उद्योग की स्थिति और विकास ... का ... विवेचन कीजिए। (T D C 1970)

22

देश के अन्य प्रमुख उद्योग
(सीमेण्ट एवं कागज)

सीमेण्ट उद्योग
(Cement Industry)

महत्त्व—

सीमेण्ट उद्योग आज भारत में महत्त्वपूर्ण स्थान ले चुका है और देश के प्रमुख उद्योगों में से एक है। अन्य आधारभूत उद्योगों की भांति इसका भी हमारी विकासमान राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में अपना विशिष्ट स्थान है। यह तो निःसंकोच कहा जा सकता है कि सीमेण्ट उद्योग के आकार को ही देखकर किसी भी देश की औद्योगिक व सामाजिक प्रगति का तुरन्त ही अनुमान लगाया जा सकता है और भारत भी इस तथ्य के लिए कोई अपवाद नहीं है। आज हम देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए अधिक खाद्यान्न उत्पन्न करते हैं इसके लिए बहुउद्देशीय नदी घाटी योजनाएँ पूरी करनी हैं बढ़िया मकानों अस्पतालों, स्कूलों की आवश्यकता है सैनिक व नागरिक कार्यों के लिए हवाई अड्डों की आवश्यकता है—और इन सबके लिए सीमेण्ट एक पूर्वापेक्षित वस्तु है।

देश के विकास में सीमेण्ट महत्त्वशील स्थान रखता है। सीमेण्ट उद्योग भारत में ही नहीं वरन विश्व में महत्त्वपूर्ण उद्योगों में से है। एशिया के देशों में सीमेण्ट उत्पादन में भारत का तीसरा स्थान है। प्रथम जापान और द्वितीय चीन का है।

संक्षिप्त इतिहास—

भारत में आधुनिक ढंग से प्रथम बार सीमेण्ट तैयार करने का श्रेय मद्रास को है जहां 1904 में साउथ इण्डस्ट्रीज लिमिटेड नाम से सीमेण्ट बनाने का एक कारखाना स्थापित किया गया। इस कारखाने में मुख्यतः समुद्री सीपियों से सीमेण्ट बनाया जाता था। किन्तु यह कारखाना थोड़े समय पश्चात ही असफल सिद्ध हुआ और बन्द हो गया।

इसके पश्चात सन 1913 में पोरबन्दर (सौराष्ट्र) में 'इण्डियन सीमेण्ट कम्पनी लि०' के नाम से सीमेण्ट कारखाना स्थापित किया गया है। फिर राजस्थान में बूंदी के निकट लाखेरी में और मध्य प्रदेश के कटनी में एक एक सीमेण्ट बनाने का

कारखाना स्थापित हुआ। सन् 1936 तक देश में सीमेन्ट के 11 कारखाने स्थापित हो चुके थे जो आपस में कड़ी प्रतिस्पर्धा करते थे। इस प्रतिस्पर्धा को रोकने के लिए सन् 1936 में एसोसियेटेड सीमेण्ट कम्पनी (A C C) का बनाया गया जिसमें तीन बड़ी सीमेण्ट कम्पनियों के अतिरिक्त 12 कम्पनियाँ सम्मिलित थीं। बाद में सेठ डालमिया ने सन् 1938 में सीमेन्ट के चार कारखाने स्थापित किए जो एसोसियेटेड सीमेण्ट कम्पनी के साथ प्रतिस्पर्धा करते थे। अतः सन् 1940 में दोनों समूहों में समझौता हो गया और सीमेण्ट मार्केटिंग कम्पनी का सीमेण्ट की बिक्री का काम करने के लिए निर्माण किया गया। इस मार्केटिंग कम्पनी ने एसोसियेटेड सीमेण्ट कम्पनी की 12 तथा डालमिया ग्रुप की तीनों कम्पनियों के उत्पादन के वितरण पर नियन्त्रण रखा। सन् 1948 में डालमिया की तीनों कम्पनियाँ एसोसियेटेड कम्पनी से अलग हो गई हैं। द्वितीय युद्ध काल में सीमेंट के चार अन्य कारखाने स्थापित हुए।

पोर्टलैंड सीमेंट—

पत्थर पत्थर आदि को पीस कर बनाये जाने वाले साधारण ढंग के सीमेंट का उपयोग तो भारत में अन्य देशों की भाँति सदियों से ही होता आया है। परन्तु आधुनिक किस्म के पोर्टलैंड सीमेन्ट का आविष्कार सन् 1824 में इंगलैण्ड के लीड्स नामक स्थान के जोसेफ एस्पडिन नामक राजा ने किया था।

आजकल सीमेंट का अर्थ पोर्टलैंड सीमेंट ही माना जाता है और सीमेंट उद्योग का अर्थ पोर्टलैंड सीमेंट उद्योग ही लिया जाता है। सीमेंट के नाम के साथ पोर्टलैंड लगाने का कारण यह है कि इसका रंग पोर्टलैंड (इंगलैंड) में एक खान से निकलने वाले इमारती पत्थर के रंग से मिलता जुलता होता है। पोर्टलैण्ड सीमेण्ट मजबूती व आकर्षण—दोनों ही दृष्टिकोणों से श्रेष्ठ है। इसे प्लास्टिक के सामान की भाँति किसी भी रूप में ढाला जा सकता है। इससे ठोस अथवा खाली हर प्रकार की वस्तुएं तैयार की जा सकती हैं। इसकी सहायता से एक ओर तो सुन्दर बेल बूटों वाली जालियाँ बनाई जाती हैं और दूसरी ओर बड़े-बड़े बाँध और लम्बे चौड़े हवाई अड्डे व सड़क तैयार की जाती हैं।

कच्चा माल—

भारतीय सीमेंट उद्योग की एक विशेषता यह है कि इसके कारखाने अनेक प्रकार का कच्चा माल काम में लाते हैं। अधिकतर कारखाने चूने का पत्थर, चिकनी मिट्टी, जिप्सम व कोयला प्रयोग में लाते हैं। कुछ कारखाने सीपियों का प्रयोग करते हैं। हाल ही में एक नये प्रकार का कच्चा माल काम में लाया जाने लगा है। यह सिंदरी के खाद कारखाने में अमोनिया सल्फेट की खाद बनाने के साथ निकलने वाली रद्दी राख है।

अनुमान है कि 100 टन सीमेंट बनाने के लिए लगभग 160 टन चूने का पत्थर व मिट्टी 4 टन जिप्सम और 38 टन कोयले की आवश्यकता होती है। इसी

कारण सीमेंट के कारखाने प्राय चूने की खानों के निकट ही स्थापित होते हैं। भारत में सीमेंट के प्राय सभी कारखाने चूने की खानों के निकट 30 50 Kms की परिधि में ही हैं।

कारखानों का वितरण—

इस समय भारत में सीमेंट के 42 कारखाने हैं। राज्यों के अनुसार इन कारखानों का वितरण निम्न तालिका बतलाएगी —

सीमेंट के कारखानों का वितरण

राज्य	कारखानों की संख्या	राज्य	कारखानों की संख्या
बिहार	7	राजस्थान	3
आन्ध्र प्रदेश	6	पंजाब व हरियाणा	2
गुजरात	5	उत्तर प्रदेश	2
तमिलनाडु	5	उड़ीसा	1
मध्य प्रदेश	6	केरल	1
मसूर	4	योग	42

चुर्क सीमेंट कारखाना—

उत्तर प्रदेश में चुर्क स्थान पर सीमेंट के कारखाने की स्थापना हुई जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले में राबर्टसगंज से लगभग 10 Kms दूर चुर्क नामक स्थान पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सीमेंट का एक कारखाना स्थापित किया गया है। यह कारखाना इंगलैण्ड की हनरी पोली एण्ड कम्पनी के सहयोग से बनाया गया है। इस कारखाने पर लगभग 4½ करोड़ रुपये लागत आई है। यह विश्व के बड़े कारखानों में है।

यह कारखाना 1954 से सीमेंट उत्पादन कर रहा है। अभी इस कारखाने की उत्पादन क्षमता 700 टन प्रतिदिन है। उत्तर प्रदेश की द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस कारखाने के विकास और प्रसार पर 2 करोड़ रुपये व्यय करने का कार्यक्रम बनाया गया जिसके फलस्वरूप इसकी उत्पादन क्षमता 700 टन से बढ़कर 1,400 टन प्रतिदिन हो गई। यहाँ पर चूने का पत्थर इतना उपलब्ध है कि यदि इतने बड़े बड़े दो कारखाने भी चलाये जायें तो भी चूने के पत्थर की लगभग 4 शताब्दी तक कमी नहीं होगी। ब्रिटिश रोपवे इंजीनियरिंग कम्पनी लिमिटेड से उत्तर प्रदेश सरकार ने चुर्क स्थित सीमेंट कारखाने से 2,50,000 पौण्ड की लागत पर लगभग डेढ़ मील लम्बा एक रज्जू मार्ग बनाने का आर्डर प्राप्त किया है। यह रज्जू मार्ग इस प्रकार का बताया जायगा जो 400 टन प्रति घण्टे की रफ्तार पर पिसा हुआ चूना ले जायगा।

इनके अतिरिक्त ए० सी० सी० समूह ने अपने वर्तमान कारखानों की उत्पादन क्षमता बढाने तथा पाँच नये सीमेंट कारखाने स्थापित करने की योजना बनाई है।

उत्पादन—

सन 1913 में पोरबन्दर का सीमेंट का कारखाना केवल 40 हजार टन सीमेंट बनाता था। आजकल देश में 1 20 करोड टन सीमेंट से भी अधिक प्रतिवर्ष बन रहा है। इस तालिका से सीमेंट का उत्पादन विदित होगा।

सम्पूर्ण एशिया में प्रतिवर्ष 2 20 करोड टन सीमेंट बनता है जिसमें लगभग 20 प्रतिशत भाग भारत ही बनाता है। सन् 1966 से सीमेंट के मूल्य एवं वितरण पर से सरकार ने नियन्त्रण (Control) हटा लिया है।

भारत मे सीमेंट का उत्पादन

वर्ष	लाख टन
1950 51	27
1955 56	47
1960 61	80
1965 66	108
1966 67	211
1967 68	115
1968 69	122
1969 70	130
1973 74	(लक्ष्य) 180

प्रति व्यक्ति उपभोग—

यदि अन्य देशों से तुलना करें तो विदित होगा कि भारत में प्रति व्यक्ति वर्ष में सबसे कम सीमेंट व्यय होता है। नवीनतम आँकड़े तालिकानुसार हैं।

सीमेंट का प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग

देश	किलोग्राम
प० जर्मनी	565
फ्रांस	460
कनाडा	400
जापान	365
संयुक्त राज्य अमरीका	345
इंगलैण्ड	305
भारत	22

श्रम तथा पूँजी—

आज से 30 वर्ष पहले इस उद्योग में लगभग 500 व्यक्ति काम करते थे किन्तु आजकल इस उद्योग में लगभग 58 हजार व्यक्ति लगे हुए हैं। इस उद्योग में देश की लगभग 62 हजार करोड रुपये की पूँजी[1] लगी हुई है तथा नित प्रतिदिन और पूँजी लगाई जा रही है। उद्योग का विस्तार होने पर 50 60 करोड रुपये की पूँजी और लगेगी और 50 55 हजार अतिरिक्त लोगों को काम मिलेगा। सन 1967 से 1972 तक इस उद्योग में 2 50 अरब रुपये की पूँजी और लगाई जायगी।

देश का विभाजन—

भारत का विभाजन होने पर सीमेंट के 5 कारखाने पाकिस्तान के क्षेत्र में रहे और भारत में 18 कारखाने रहे। अब देश में 42 कारखाने हैं।

[1] *Times of India's Industries Supplement* pp 9 10

वितरण-व्यवस्था—

सन 1962 म 'सीमेंट (किस्म नियन्त्रण) आदेश पास किया गया ताकि सीमेंट मे मिलावट आदि को रोका जा सके। सन 1966 में सीमेंट के मूल्य पर से नियन्त्रण और वितरण व्यवस्था पर से नियन्त्रण हटा लिया गया, किन्तु यह व्यवस्था असन्तोषजनक रही और वितरण की व्यवस्था सन 1968 से सीमेंट कॉरपोरेशन आफ इण्डिया को सौंप दी गई। यह व्यवस्था 'सीमेंट नियन्त्रण अधिनियम 1967 के अन्तर्गत की गई।

व्यापार—भारत से सीमेंट का निर्यात भी होता है किन्तु बहुत अधिक मात्रा म नही। इस तालिका म भारत से निर्यात होने वाले सीमेंट का मूल्य बतलाया गया है।

भारत से सीमेंट का निर्यात मुख्यत ब्रह्मा, थाईलैण्ड, लका, पाकिस्तान आदि का होता है।

भारत से सीमेंट का निर्यात (लाख रुपये)

वर्ष	मूल्य
1960 61	64
1965 66	41
1966 67	14
1967 68	57
1968 69	74

पचवर्षीय योजनाओं मे सीमेंट उद्योग का विकास—

प्रथम पचवर्षीय योजना काल—प्रथम पचवर्षीय योजना म सीमेंट का उत्पादन लक्ष्य 53 लाख टन रखा गया था। किन्तु इस लक्ष्य को प्राप्त नही कर पाये। वर्ष 1950 51 म देश मे लगभग 27 लाख टन का उत्पादन हुआ जबकि 1955 56 म लगभग 47 लाख टन सीमेंट का। इस प्रकार इस योजना-अवधि मे लगभग 20 लाख टन सीमेंट का उत्पादन और अधिक बढा। इस योजना के लिए निर्धारित लक्ष्य (53 लाख टन) प्राप्त नही कर पाये, यद्यपि इस लक्ष्य के निकट अवश्य पहुँच गये।

प्रथम पचवर्षीय योजना काल म सीमेंट के 7 नये कारखाने स्थापित किये गये। सन् 1951 म भारत मे सीमेंट के 21 कारखाने थे इनकी सख्या 1956 में 28 हो गई।

द्वितीय पचवर्षीय योजना काल—इस योजना म सीमेंट की बढ़ती हुई माँग को देखकर सीमेंट उद्योग के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया। इस योजना-काल म भी सीमेंट के 6 नये कारखाने और स्थापित किये गये। सन् 1956 म भारत मे सीमेंट बनाने के 28 कारखाने थे जो सन 1961 म 34 हो गये।

इस योजना काल मे सीमेंट के उत्पादन म काफी वृद्धि हुई। वर्ष 1955 56 मे 47 लाख टन सीमेंट का उत्पादन हुआ था जो 1960 61 म लगभग 80 लाख टन हुआ। इस प्रकार इस अवधि में लगभग 43 लाख टन सीमेंट का अधिक उत्पादन हुआ।

इस योजना अवधि म उत्पादन लक्ष्य 1 करोड टन रखा था, किन्तु 1960 61 म उत्पादन केवल 80 लाख टन ही हुआ । अत लक्ष्य को प्राप्त नही कर पाये ।

तृतीय पचवर्षीय योजना काल—तृतीय योजना काल म सीमेंट का उत्पादन लक्ष्य 130 लाख टन रखा गया । वर्ष 1965 66 म सीमेंट का उत्पादन 108 लाख टन ही हुआ । अत इस योजना काल मे भी उत्पादन लक्ष्य प्राप्त नही किया जा सका ।

वर्ष 1960 61 म सीमेंट का उत्पादन 80 लाख टन हुआ और 1965 66 मे 108 लाख टन । इस प्रकार उत्पादन म केवल 28 लाख टन की ही वृद्धि हुई जबकि द्वितीय योजना म 43 लाख टन की उत्पादन वृद्धि हुई । सन 1962 म एक सीमेंट आदेश जारी किया गया ।

सन 1965 म भारत सरकार द्वारा सावजनिक क्षेत्र म सीमेंट उद्योग निगम (Cement Corporation of India) की स्थापना की गई । इस निगम का प्रमुख उद्देश्य सीमेंट म अनुसधान काय करना चूने के पत्थर के नए क्षेत्रों की खोज करना, सीमेंट की वितरण व्यवस्था करना आदि है ।

वार्षिक योजनाओ मे सीमेंट उद्योग का विकास—सन 1966 म सीमेंट के वितरण व मूल्यो पर से नियत्रण हटा लिया गया था, उसे सन 1968 म पुन लागू कर दिया गया । सीमेंट के वितरण का काय सीमेंट निगम को सौंप दिया गया । वार्षिक योजनाओ मे सीमेंट उद्योग का विकास निम्न तालिका से ज्ञात होता है —

वार्षिक योजनाओं मे सीमेंट उत्पादन

वर्ष	लाख टन
1966 67	211
1967 68	115
1968 69	122

इस प्रकार स्पष्ट होगा कि वर्ष 1966 67 मे सीमेंट का देश म रिकार्ड उत्पादन (211 लाख टन) हुआ ।

चतुर्थ पचवर्षीय योजना काल—चौथी पचवर्षीय योजना म वर्ष 1973 74 के लिए सीमेंट का उत्पादन लक्ष्य 180 लाख टन रखा है । इस योजना म लगभग 10 लाख टन सीमेंट को निर्यात करने की कल्पना की गई है ।

इस योजना काल म सावजनिक क्षेत्र म भी सीमेंट के नये कारखाने स्थापित करने की योजना है । निजी-क्षेत्र म सीमेंट के नये कारखानो की स्थापना को तो प्रोत्साहन दिया ही जावेगा किन्तु विभिन्न राज्य सरकारो द्वारा भी सरकारी क्षेत्र म नए कारखाने स्थापित किए जावेंगे । सीमेंट उद्योग की क्षमता के विस्तार के लिए विदेशो से मशीनें आदि नही मगवाई जावेंगी बल्कि भारत म ही निर्मित मशीनो द्वारा किया जावेगा ।

सीमेंट उद्योग की समस्याऐं—

भारत के सीमेंट उद्योग का उतना विकास नही हो पाया है जितना होना चाहिए था । इस उद्योग के सामने अनेक समस्याए हैं जिनमे से प्रमुख अग्र लिखित है —

(1) **सरकारी नीति**—सरकार की हस्तक्षेप की नीति के कारण इस उद्योग के विकास में रुकावट रहा। सन 1966 के पहले सीमेंट के मूल्य एवं वितरण व्यवस्था पर नियन्त्रण था जिसके फलस्वरूप उद्योगपतियों को लाभ अधिक नहीं हुआ। सन 1966 में ये नियन्त्रण हटा लिए गये किन्तु पुन 1968 में लगा दिए। सन 1967 में सीमेंट नियन्त्रण अधिनियम' भी बना दिया गया। अत इस उद्योग की ओर उद्योगपति आकर्षित नहीं हो पाये।

(2) **कोयला क्षेत्रों से दूरी**—सीमेंट के कारखाने प्रायः चूना-क्षेत्रों के निकट लगाये जाते हैं। एक अनुमान के अनुसार 100 टन सीमेंट बनाने के लिए लगभग 38 टन कोयले की आवश्यकता पड़ती है। राजस्थान गुजरात मध्य प्रदेश व उत्तर प्रदेश में कोयले की कमी होने के कारण कोयला दूर के स्थानों से मँगवाया जाता है जो मँहगा पड़ता है अत उत्पादन व्यय में वृद्धि हो जाती है।

(3) **कम लाभ**—सीमेंट उद्योग में विनियोग की गई पूंजी पर लाभ का प्रतिशत लगभग 10 प्रतिशत ही है जबकि अन्य उद्योगों जैसे इंजीनियरिंग उद्योग रासायनिक उद्योग, लोहा व इस्पात उद्योग विद्युत यन्त्र उद्योग आदि में लगाई गई पूंजी पर लाभ अधिक होता है। इस कारण इस उद्योग की ओर अधिक उद्योगपति आकर्षित नहीं हुए।

(4) **पैकिंग व्यय अधिक**—सीमेंट का पैकिंग टाट के बोरों में किया जाता है जो अधिक मँहगा पड़ता है। एक अनुमान के अनुसार एक टन सीमेंट के पैकिंग पर लगभग 15 रुपये लग जाते हैं। विशेष प्रकार के कागज के थैलों में पैकिंग किया जा सकता है किन्तु इसमें अनेक कठिनाइयाँ हैं।

(5) **उत्पादकता कम है**—भारत में एक टन सीमेंट बनाने में लगभग 10 मानवीय घण्टे लगते हैं जबकि संयुक्त राज्य अमरीका में केवल $1\frac{1}{8}$ मानवीय घण्टे लगते हैं। चीन जापान इंगलैण्ड आदि में भारत की तुलना में कम मानवीय घण्टे लगते हैं। भारत में कार्य-क्षमता में वृद्धि बहुत आवश्यक है।

(6) **आधुनिक मशीनों की कमी**—भारत के अनेक सीमेंट के कारखानों में पुरानी मशीनें लगी हुई हैं। सीमेंट उद्योग के विकास के लिए यह आवश्यक है कि कारखानों में आधुनिक ढंग की मशीनें लगाई जावें। सीमेंट उद्योग की मशीनों का विदेशों से आयात प्रतिबन्धित है। देश में ही इन मशीनों का निर्माण किया जा रहा है। आशा है कि निकट भविष्य में ही सीमेंट उद्योग की मशीनों के सम्बन्ध में हम स्वावलम्बी हो जावेंगे।

(7) **सीमेंट का कम उपभोग**—भारत में सीमेंट का उपभोग बहुत कम है। अन्य देशों से तुलना करने पर ज्ञात होता है कि सीमेंट का प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग पश्चिमी जर्मनी में लगभग 565 किलोग्राम है, फ्रांस में 460 किलोग्राम, कनाडा में 400 किलोग्राम संयुक्त राज्य अमरीका में 345 किलोग्राम और भारत में केवल 22 किलोग्राम ही है।

अन्तिम विचार—

इस उद्योग से सम्बन्धित कच्चे माल का वितरण देश म ठीक न होन के कारण ढुलाई मे बहुत व्यय हो जाता है। कारखानो से सीमट को अन्य भागो मे पहुँचाने म काफी खच करना पडता है। रेलो को केवल सीमेंट की ढुलाई से लगभग 6 करोड रुपये की वार्षिक आय होती है। अनुमान है कि सीमेंट की ढुलाई का व्यय मूल्य का 20 प्रतिशत तक पड जाता है जो ससार भर में सबसे अधिक है।

इस उद्योग म अच्छी किस्म क कोयले की आवश्यकता होती है जिसे बगाल व बिहार से मँगवाना पडता है। इसमे भी व्यय अधिक हो जाता है।

देश में जितना सीमट बनता है उसकी अपेक्षा माग अधिक रहती है। अनेक बाँध बनाये जा रहे हैं साथ ही अच्छे ढग के मकान अस्पताल और स्कूल बनाये जा रहे हैं। बडे-बडे कारखाने बन्दरगाह सडकें आदि बन रही हैं। नागरिक तथा सनिक दोनो ही कार्यों के लिए हवाई अडडे भी बनाये जावेंगे। इन सबके लिए सीमट की आवश्यकता है। अत निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इस उद्योग का हमारे देश म भविष्य उज्ज्वल है।

कागज उद्योग
(Paper Industry)

परिचय—

मनुष्य को जब अपने विचार स्मरण रखना कठिन हो गया तो उन्ह लिपिबद्ध करन की आवश्यकता अनुभव हुई। इसी आवश्यकता ने लेखन सामग्री की खोज कराई। ताम्रपत्र भोजपत्र, चमपत्र और शिलायें आरम्भ म प्रयोग की गयी किन्तु और भी सुविधाजनक लेखन-सामग्री की खोज जारी रहा। वतमान कागज ने यह कमी पूरी की। सवप्रथम कागज बनान का आविष्कार चीन म साई लुन (Tsai Lun) नामक व्यक्ति न किया। उसन कागज बनान म चिथडा का उपयोग किया था। इसके पश्चात कागज बनान की कला अरब होती हुई लगभग सन 900 म यूरोप पहुँची। कागज बनाने का कारखाना इटली म सन 1150 में जमनी में 1291 म और इगलण्ड म सन 1330 म स्थापित हुआ। अन्य सामग्रिया से अधिक उपयोगी होन क कारण यह विश्व भर म फला और आज ज्ञान राशि के सरक्षण म कागज का अद्वितीय स्थान है।

क्रमिक विकास—

वस तो भारत म कुटीर-उद्योग क रूप म कागज बनान का काम होता आया है। भारत म आधुनिक ढग क कागज उद्योग का आरम्भ सन् 1832 म हुआ जबकि डा० करी न पश्चिमी बगाल म स्थित सिरामपुर म कागज बनाने का प्रथम कारखाना स्थापित किया किन्तु कुछ वर्षों बाद यह कारखाना बन्द हो गया। इसक पश्चात हुगली के किनारे बाला नामक स्थान पर सन् 1867 म रायल पपर मिल्स क नाम स कागज बनान का दूसरा कारखाना स्थापित किया गया। यह

मल भी सफल नहीं हुई और टीटागढ़ पेपर मिल्स (स्थापित सन् 1882) ने इसे ले लिया। भारत में मशीन निर्मित कागज का उत्पादन सन् 1870 में हुआ जबकि कलकत्ता के निकट बाली मिल्स (Bally Mills) की स्थापना हुई। इसके पश्चात बगाल रानीगज, उत्तर प्रदेश, पूना व बम्बई आदि में अन्य कारखाने स्थापित हुए। सन 1900 तक भारत म 7 कारखाने स्थापित हो गये थे जिनम से कुछ ये हैं— अपर इण्डिया कूपर पेपर मिल्स लखनऊ (स्थापित सन 1879 उत्पादन आरम्भ 1881), टीटागढ मिल्स प० बगाल (1882) डक्कन पेपर मिल्स, पूना (सन् 1887) आदि।

कच्चा माल—

कागज उद्योग का प्रमुख कच्चा माल है—बांस, सवाई घास गन्ने की खोई मुलायम लकडी, चिथडे रद्दी कागज आदि। भारत म मुलायम लकडी कारखानों को सरलता से प्राप्त नही हो पाती, क्योंकि यह हिमालय प्रदेश व कश्मीर म उपलब्ध है। भारत म केवल 8 प्रतिशत रद्दी कागज का उपयोग होता है जबकि अन्य प्रदेशा म 30 प्रतिशत तक उपयोग किया जाता है। कागज उद्योग के लिय कच्चे माल के पूरक के रूप मे रद्दी कागज और चिथडा को देश भर म सगठित रूप से इकट्ठा करने की आवश्यकता पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए।

इस उद्योग क लिए अनक रासायनिक पदार्थों का आवश्यकता होती है जिनम य प्रमुख हैं—गधक कास्टिक सोडा चूना, सोडा एश क्लोरीन फिटकरी, ब्लीचिंग पाउडर आदि। गधक व कास्टिक सोडा तो विदेशों स आयात किया जाता है शेष कच्चे पदाथ देश म ही उपलब्ध हो जात ह।

मशीनें और उपकरण—

कागज उद्योग को मशीनों व उपकरणों का आयात किया जाता है। अब भारत सरकार न टाटा इजीनियरिंग एण्ड लोकोमोटिव क० जमशेदपुर, उत्कल मशीनरी लि० बम्बई आदि को 50 60 टन प्रतिदिन की क्षमता वाल सय त्र बनान के लिय लाइसेन्स दिय हैं और पेपर मिल प्लाण्ट एण्ड मशीनरी म युफक्चरर्स बम्बई राहतास इण्डस्ट्रीज डालमियानगर नेशनल आयरन एण्ड स्टील क० कलकत्ता को 3 से 10 टन प्रतिदिन की क्षमता वाल कागज क छोटे सयन्त्रो के निर्माण क लाइसे स दिये हैं।

मिलों का वितरण—

भारत म इस समय कागज बनाने की 60 मिल हैं जिनम अखबारी कागज बनाने वाला मध्य प्रदेश मे स्थित नेपानगर का कारखाना सम्मिलित नहीं है।

पश्चिमी बगाल—इस समय भारत म कुल कागज के उत्पादन का लगभग 50 प्रतिशत भाग इसी राज्य स प्राप्त होता है। यहा कागज बनाने की 9 मिलें है जिनम टीटागढ पेपर मिल्स टीटागढ सबस बडी है। इसकी गणना भारत की अन्य

कागज मिलों में महत्वपूर्ण है। इन मिलों में लगभग 7 हजार श्रमिक काम करते हैं। पश्चिमी बंगाल में कागज उद्योग के अन्य केन्द्र कलकत्ता, काकिनाड़ा, नैहाटी तथा रानीगंज आदि हैं। इस राज्य के कारखाने लुग्दी बनाने के लिए असम-बंगाल से बांस तथा मध्य प्रदेश और बिहार से सवाई घास प्राप्त करते हैं। कोयला बिहार की कोयला खानों से प्राप्त हो जाता है। कलकत्ता के निकट होने के कारण रासायनिक पदार्थ



चित्र 32

सुलभता से प्राप्त हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त औद्योगिक क्षेत्र निकट होने के कारण अनेक कार्यालय हैं व अनेक बड़े प्रकाशक हैं, अतः कागज की माँग भी काफी है।

महाराष्ट्र राज्य—इस राज्य में कागज के 14 कारखाने हैं। इस राज्य में कच्चे माल तथा कोयले—दोनों की कमी है। थोड़ा बांस कनारा व सूरत जिले से प्राप्त हो जाता है। लकड़ी की लुग्दी विदेशों से मंगवाई जाती है। बम्बई, पूना, चान्दा, बालापुर, खोपोली आदि महाराष्ट्र के कागज उद्योग के प्रमुख केन्द्र हैं।

गुजरात राज्य—गुजरात राज्य मे कागज बनाने के 6 कारखाने हैं। अहमदाबाद (के निकट बाराजडी) प्रमुख केन्द्र है।

उत्तर प्रदेश—इस राज्य मे कागज की दो मिलें—लखनऊ और सहारनपुर म हैं। लखनऊ म स्थित कारखाना बडा है। इस राज्य की मिलें सवाई घास का प्रयोग करती हैं। कोयला बिहार व उडीसा की खानों स प्राप्त करते हैं।

बिहार एव उडीसा—इन दोनों राज्यों म कागज के बडे कारखाने हैं। इन राज्यों म कच्चा माल व कोयला सुविधा स मिल जाता है। उडीसा की मिल सम्बलपुर जिले क ब्रजराजनगर में है जो बाँस उत्पन्न करने वाला प्रमुख क्षेत्र है।

मसूर और केरल—राज्य की मिलो को राज्य के जगलो से बाँस प्राप्त हो जाता है। जल विद्युत शक्ति साधन के रूप में प्रयोग की जाती है। मैसूर राज्य में 5 व केरल राज्य में 2 कारखाने है।

हरियाना—इस राज्य में कागज बनाने के 3 कारखाने हैं, जो फरीदाबाद जगाधारी और यमुनानगर म स्थित हैं।

मध्य प्रदेश—भोपाल और नेपानगर म कागज बनाने के कारखाने है। नेपानगर में अखबारी कागज बनाने का कारखाना है।

अखबारी कागज—

भारत म अभी तक अखबारी कागज बनाने का कोई कारखाना नही था। भारत में 10 020 समाचार पत्र[1] निकलते हैं जिनकी कुल लगभग $27\frac{1}{2}$ लाख प्रतियां नित्य प्रकाशित होता है—अर्थात प्रति 150 व्यक्तियों के लिए अखबार की एक प्रति।

मध्य प्रदेश म बुरहानपुर और खण्डवा के मध्य ताप्ती नदी के निकट नेपानगर म अखबारी कागज बनाने का भारत म प्रथम कारखाना है। इस कारखाने का नाम नेशनल न्यूजप्रिण्ट एण्ड पेपर मिल्स है। इस कारखाने ने जनवरी 1955 म उत्पादन काय आरम्भ कर दिया है। इस समय यह 60 टन सफेद अखबारी कागज औसत रूप स प्रतिदिन बना रहा है। इस कारखाने पर लगभग $6\frac{1}{2}$ करोड रुपये व्यय हुआ है और इसकी उत्पादन क्षमता 100 टन अखबारी कागज प्रतिदिन है। इस कम्पनी की अश पूजी 5 करोड रु० है जिसम 51 प्रतिशत भाग केन्द्रीय सरकार का 34 प्रतिशत मध्य प्रदेश सरकार का व शेष 15 प्रतिशत निजी अशधारियो का है। एक टन कागज बनाने म $76\frac{1}{2}$ हजार गलन पानी की आवश्यकता होती है। इस कारखाने मे 900 व्यक्ति काय कर रहे हैं। निकट ही नेपानगर स्थापित हो गया है, जिसकी आबादी 5 हजार है। पिछले वर्षों म इसका उत्पादन तालिकानुसार रहा।

वर्ष	हजार टन
1955 56	3 4
1960 61	23 4
1965 66	29 2
1966 67	26 5
1967 68	31 0
1968 69	30 0

[1] समाचार-पत्रों के रजिस्ट्रार की वार्षिक रिपोट (1969), प्र० सन 1966।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में अखबारी कागज का उत्पादन लक्ष्य 1 20 लाख टन रखा था किन्तु उत्पादन लगभग 30 हजार टन ही हुआ।

यह कारखाना देश के अखबारी कागज की लगभग ⅓ माँग पूरी करता है और इस प्रकार प्रतिवर्ष 4 करोड़ रुपया बाहर जाने से बचता है। शंकरनगर (हैदराबाद) में भारत सरकार अखबारी कागज बनाने का एक और कारखाना स्थापित कर रही है।

अखबारी कागज बनाने का कारखाना कश्मीर में स्थापित किया जा सकता है। यहाँ कच्चा माल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो सकता है।

नोटों का कागज—

अब तक भारत सरकार नोट और सिक्योरिटिया को छापने के लिए इंगलैण्ड से कागज खरीदती है। भारत सरकार ने देश में 2½ लाख रुपये की लागत से सिक्यारिटी पेपर का एक कारखाना खोलने का निश्चय किया है। इस कारखाने के लिए स्थान व अन्य बातों पर विचार किया जा रहा है।

भारत में निम्न प्रकार के कागजों का उत्पादन होने लगा है—लिखने छापने, डाइंग, बंक बौण्ड कारतूस, डुप्लीकेटिंग लिथो, चेक मनीफाल्ड साइना, गणना मशीन, टलीप्रिण्टर मशीन का कागज लपटने का बादामी व नीला दियासलाई का कागज सिगरेट और उन्हें लपेटने का झीना कागज बढ़िया गत्ते टिकट का गत्ता आदि।

जिन कागजो का निर्माण अभी देश में शुरू नहीं हुआ है व इस प्रकार हैं—मनीला कागज फोटोग्राफी, कण्डन्सर कबिल और बिजली अवरोधक कागज बटर कागज, भाप कागज, ब्रुश कोटेड आर्ट पेपर आदि।

श्रम तथा पूँजी—

कागज मिलों में जिन मजदूरों को स्थायी रूप से रखा हुआ है उनकी संख्या आजकल 34 000 है। सन् 1953 में इन श्रमिकों की संख्या 23 000 थी 1954 में 23,500 थी। सन् 1969 में इस उद्योग में 55,000 व्यक्ति काम कर रहे थे।

सन् 1913 में भारतीय कागज उद्योग में 87 प्रतिशत विदेशी पूंजी लगी हुई थी। सन् 1932 से इस उद्योग में भारतीय पूंजी का तेजी से बढ़ना आरम्भ हुआ। 1953 में इस उद्योग में भारतीय पूंजी 65 प्रतिशत हो गई।

इस समय इस उद्योग में 80 करोड़ रुपये की पूंजी लगी हुई है।[1] वर्तमान मिलों के विस्तार आधुनिकीकरण तथा जिन नये कारखानों के लायसेन्स दिये जा चुके हैं उन्हें खोलने के लिए 20 करोड़ रुपये की पूंजी और सामान की आवश्यकता होगी।

---

[1] *Monthly Review* p 86 Published by the State Bank of India, Bombay

उत्पादन—

आजकल हमारे देश में लगभग 6 5 लाख टन कागज का वार्षिक उत्पादन हो रहा है। सल्यूलोज के विशेषज्ञ श्री डब्ल्यू० रेट ने अनुमान लगाया कि यदि भारत में सभी साधनों का उचित उपयोग किया जाय तो वह अकेला ही 40 वर्ष तक सारे विश्व की कागज की आवश्यकता को पूरा कर सकता है।

इस तालिका से स्पष्ट है कि भारत में कागज के उत्पादन में प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है।

वर्ष	लाख टन
1950	1 1
1955	1 5
1956	1 9
1960	3 4
1961	3 6
1965	5 2
1966	5 5
1967	6 0
1968	6 4
1969	6 8
1973 74 (लक्ष्य)	8 50

प्रति व्यक्ति उपयोग—

हमारे देश में शिक्षा का पर्याप्त विकास न होने के कारण कागज का प्रति व्यक्ति वार्षिक औसत उपभोग केवल 3 पौण्ड ही है। यदि हम विश्व के अन्य देशों से भारत की इस दिशा में तुलना करें तो स्पष्ट होगा कि हम सबसे पिछड़े हुए हैं। निम्न तालिका से यह स्पष्ट हो जायगा —

देश	प्रति व्यक्ति वार्षिक कागज का उपभोग[1] (पौण्ड में)
संयुक्त राज्य अमरीका	530
इंगलैण्ड	265
कनाडा	150
जापान	175
जर्मनी	225
रूस	46
मिस्र	4
भारत	3

अब देश में कागज की खपत प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है। इसके चार प्रमुख कारण हैं—(क) साक्षरता का प्रसार (ख) औद्योगिक उत्पादन में विस्तार, (ग) जन-साधारण के रहन सहन में सुधार और (घ) सरकारी कार्यालयों व कार्यों में वृद्धि।

---

1 भारतीय मिल संघ के अध्यक्ष श्री बाजोरिया के संघ की वार्षिक सभा में भाषण से।

व्यापार—

स्थूल रूप से हमारा कागज उद्योग छापने और लिखने के कागज की 80 प्रतिशत, विशेष कागज की 50 प्रतिशत, पैकिंग कागज की 30 प्रतिशत तथा कागज और लुग्दी के गत्ते की 95 प्रतिशत आवश्यकताएं पूरी करता है। शेष कमी को कागज का आयात करके पूरा किया जाता है। द्वितीय युद्ध से पूर्व पर्याप्त मात्रा में कागज की लुग्दी का आयात किया जाता था किन्तु आजकल विशेष कागज के निर्माण के लिए थोड़ी मात्रा में लुग्दी का आयात किया जाता है।

पंचवर्षीय योजनाएँ—

प्रथम पंचवर्षीय योजना में सन 1955 56 के लिए कागज के उत्पादन का लक्ष्य 2 लाख टन रखा था। यह लक्ष्य पूरा नहीं हो पाया, यद्यपि हम इस लक्ष्य के निकट पहुँच गये थे। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में कागज का उत्पादन लक्ष्य 3 5 लाख टन रखा गया था जो पूर्ण हो गया है। तृतीय पंचवर्षीय योजना में कागज का उत्पादन लक्ष्य 7 लाख टन रखा गया था। इसमें अखबारी कागज का उत्पादन सम्मिलित नहीं है। चौथी योजना में कागज का उत्पादन लक्ष्य 8 50 लाख टन रखा है।

स्वाभाविक गति से कागज और कागज के उत्पादनों की माँग पाँचवी योजना में 28 लाख टन हो जाने का अनुमान है। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में कच्चे माल मशीनें और उपकरण तथा दक्ष कर्मचारियों की उपलब्धि की समस्यायें आयेंगी।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 आधुनिक युग में कागज का महत्व बताइये और भारतीय कागज उद्योग के विकास का सविस्तार वर्णन कीजिये। (T D C Suppl, 1964)

2 सीमेंट उद्योग का महत्व और उसकी उपयोगिता बताइये। भारत ने इस उद्योग में स्वतन्त्रता के बाद क्या प्रगति की है? (T D C Suppl 1965)

3 भारत में कागज उद्योग की वर्तमान स्थिति तथा आर्थिक महत्व पर प्रकाश डालिए। इस उद्योग के उत्तरी भारत में केन्द्रीयकरण होने के कारण बताइये। (T D C 1966)

4 भारत में काँच उद्योग की वर्तमान स्थिति तथा आर्थिक महत्व पर प्रकाश डालिये और स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इस उद्योग ने क्या प्रगति की है वर्णन कीजिये। (T D C Supp 1966)

5 पंचवर्षीय योजना काल में भारत के सीमेंट या लौह इस्पात उद्योग का विकास, समस्याओं और सुझावों पर प्रकाश डालिए। (T D C, 1969)

6 टिप्पणी लिखिए—सीमेन्ट उद्योग। (T D C 1971)

23

भारत की जनसख्या एव उसकी समस्याएँ

(India s Population and its Problems)

प्रारम्भिक—जनसख्या का महत्व

प्रसिद्ध अथशास्त्री लिपसन न कहा है 'किसी देश का धन मुख्यत उसके निवासियों की योग्यताओं मे निहित है। जिस देश मे प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता है किन्तु निवासी आलसी व पिछडे हुए हैं, उस देश की तुलना में जहा प्राकृतिक साधन कम हैं किन्तु निवासी स्फूर्तिवान हैं दरिद्र होगा।' अत वास्तव म किसी भी दश की उन्नति वहाँ क उपलब्ध प्राकृतिक साधनो तथा कुशल जनसख्या के ऊपर निभर होती है। डी० सी० ह्विपिल क शब्दो म किसी राष्ट्र की वास्तविक सम्पत्ति न उसकी भूमियो और नदिया म, न उसके वनो अथवा खानो म, न उसके पशुओ और उसकी मुद्रा-सम्पत्ति म निहित है वरन उसक स्वस्थ, सुखी और प्रसन्न स्त्री पुरुष व बच्चो म निहित है। प्राकृतिक साधन तो निष्क्रिय (Passive) होत हैं तथा आर्थिक विकास की सुविधा प्रदान करत हैं कि तु मनुष्य का काय उनसे अधिकतम सम्पत्ति का उत्पादन करना होता है।

विश्व की जनसख्या

सयुक्त राष्ट्र सघ के जनसख्या विभाग के प्रतिवदन के अनुसार विश्व की जनसख्या इस प्रकार थी —

इनम स आधी से अधिक जनसख्या एशिया मे निवास करती है, लगभग 25 प्रतिशत यूरोप म लगभग 8 प्रतिशत उत्तरी अमरीका म 7 प्रतिशत अफीका मे और लगभग 4 प्रतिशत दक्षिणी अमरीका मे।

व्यक्तिगत देशो म चीन की जनसख्या विश्व मे सबसे अधिक है। वहाँ की वतमान जनसख्या 75 करोड स भी अधिक है। चीन के बाद घनी जनसख्या वाले

वर्ष	विश्व की जनसख्या
1650	55 करोड
1800	90 करोड
1850	125 करोड
1900	150 करोड
1950	245 करोड
1951	250 करोड
1964	330 करोड
1971	371 करोड

देशो मे भारत का ही स्थान है । दूसरे शब्दो मे जनसंख्या की दृष्टि से भारत का विश्व मे दूसरा स्थान है जैसा कि अग्रांकित तालिका से स्पष्ट है —

प्रमुख देशो की जनसंख्या (सन् 1968 मे[1])

देश	करोड	देश	करोड
चीन	75 0	जापान	10 10
भारत (1971)	54 70	जर्मनी (गणतन्त्र)	6 01
सोवियत रूस	23 80	इंगलैण्ड व वेल्स	5 52
कनाडा	20 80	फ्रांस	5 00
संयुक्त राज्य अमरीका	20 20	आस्ट्रेलिया	1 30

इस प्रकार जनसंख्या की दृष्टि से विश्व मे प्रथम स्थान चीन का, द्वितीय भारत का तृतीय सोवियत संघ का चतुर्थ कनाडा और पंचम संयुक्त राज्य अमरीका का है।

यदि विश्व मे देशो एवं प्रमुख नगरो की जनसंख्या का अध्ययन किया जाय तो ज्ञात होगा कि विश्व मे केवल 7 देश ही ऐसे हैं जिनकी जनसंख्या 10 करोड से अधिक है जबकि 22 देश ऐसे हैं जिनकी जनसंख्या 1 करोड से कम है। इसके अतिरिक्त विश्व मे केवल 20 नगर ही ऐसे हैं जिनकी प्रत्येक की जनसंख्या 30 लाख से अधिक है—और उनमे 4 नगर भारत मे ही हैं।

पूर्व तथा वर्तमान जनसंख्या

संयुक्त राज्य अमरीका मे सर्वप्रथम जनगणना सन् 1970 मे की गई था उस समय वहाँ की जनसंख्या लगभग 39 29 लाख थी (अमरिकन रिपोर्टर 10 अक्तूबर 1968)। भारत मे प्रथम जनगणना सन् 1881 मे हुई थी।

सन 1961 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या (1 मार्च 1961 को) लगभग 43 90 72 582 था और अप्रैल 1971 मे 54 69,55 945 थी। भारत की जनगणनाओ के आँकडे इस प्रकार हैं —

भारत मे जनसंख्या का विकास (करोड मे)

वर्ष	जनसंख्या	वर्ष	जनसंख्या
1891	23 9	1951	35 7
1901	23 6	1961	43 9
1911	24 9	1966	49 5
1921	24 8	1969	53 7
1931	27 6	1971	54 7
1941	31 2	1976	63 0 (अनु०

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत की जनसंख्या मे प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है।

1 *Handbook of Statistics 1970* (Published by Govt of Federal Republic of Germany) p 187

इस समय भारत की जनसंख्या, विश्व की कुल जनसंख्या का ⅙ भाग है अर्थात विश्व के प्रत्येक छ व्यक्तियों में एक भारतीय है। भारत में यह 54 70 करोड़ की जनसंख्या 32 68 लाख Sq Kms में फैली हुई है। इस प्रकार स्पष्ट है कि संसार के कुल क्षेत्रफल का 2 5 प्रतिशत भाग भारत में है जिसमें विश्व की जनसंख्या का 14 प्रतिशत भाग निवास करता है।[1] प्रायः यह कहा जाता है कि भारत प्रतिवर्ष एक आस्ट्रेलिया जोड़ लेता है। इसका आशय यह है कि प्रतिवर्ष भारत में आस्ट्रेलिया की जनसंख्या (1 3 करोड़) के बराबर वृद्धि हो जाती है।

वर्ष 1971 की जनगणना

सन 1961 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या लगभग 43 90 करोड़ थी और सन 1971 की जनगणना के अनुसार यह लगभग 54 70 करोड़ है। भारत में परिवार नियोजन आन्दोलन के बावजूद 1961 71 की दशाब्दी में लगभग 10 80 करोड़ जनसंख्या में वृद्धि हुई अर्थात प्रतिवर्ष औसतरूप से 1 80 करोड़ की वृद्धि।

जनसंख्या वृद्धि दर—

वर्ष 1951 61 की अवधि में जनसंख्या में लगभग 21 50 प्रति हजार (अर्थात 2 15 प्रतिशत) की वृद्धि हुई और 1961 71 की अवधि में यह वृद्धि दर 24 57 प्रति हजार (अर्थात 2 45 प्रतिशत) रही। यह वृद्धि बहुत अधिक है। भारत में जनसंख्या की वृद्धि दर कम नहीं हो रही है जैसा कि इस तालिका से स्पष्ट होगा।

भारत में जनसंख्या वृद्धि-दर

अवधि	प्रति हजार वृद्धि या कमी
1911 21	3 1 कमी
1921 31	11 0 वृद्धि
1931 41	14 2 वृद्धि
1941 51	13 3 वृद्धि
1951 61	21 5 वृद्धि
1961 71	24 5 वृद्धि

लिंग अनुपात—

सन् 1971 की जनगणना के अनुसार भारत में अब प्रति हजार पुरुषों के पीछे 932 स्त्रियाँ हैं। सन् 1901 से 1971 तक के 70 वर्षों के एक सरकारी विवरण के अनुसार, पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या में कमी होती जा रही है। निम्न तालिका इसे स्पष्ट करती है —

प्रति हजार पुरुषों के पीछे स्त्रियों की संख्या

वर्ष	स्त्रियों की संख्या	वर्ष	स्त्रियों की संख्या
1901	972	1941	945
1911	964	1951	946
1921	955	1961	941
1931	950	1971	932

1 जनसंख्या विशेषज्ञ डॉ० चन्द्रशेखर द्वारा आकाशवाणी, नई दिल्ली से भारत की आबादी पर प्रसारित भाषण से।

चारा अच्छा मिलता है। इसी कारण गुजरात तथा मराठवाड़ा में जनसंख्या बहुत ही कम है।

(6) औद्योगिक क्षेत्र—भारत के औद्योगिक क्षेत्रों में अनेक स्थानों में मनुष्य आकर बस जाते हैं और जनसंख्या घनी हो जाती है। भारत में जमशेदपुर, भिलाई, दुर्गापुर तथा उदाहरण हैं जहाँ कि लोग केवल औद्योगिक केन्द्र होने के कारण ही आकर बस गये हैं। इसके अतिरिक्त कानपुर, अहमदाबाद, बम्बई, मद्रास इत्यादि नगरों में घनी जनसंख्या होने के अन्य कारणों के अतिरिक्त औद्योगिक विकास भी एक प्रमुख कारण है।

(7) विशेष वस्तुओं के उत्पादक केन्द्र—कुछ भागों में कुछ तथा महत्वपूर्ण व्यापारिक वस्तुओं का उत्पादन होता है कि वहाँ लोग आकर बस जाते हैं उदाहरण के लिए, असम में चाय के उत्पादन के कारण ही वहाँ मनुष्य आकर बस गये हैं। इसी प्रकार बंगाल में जूट के उत्पादन और काली मिट्टी के क्षेत्र में रुई के उत्पादन के कारण वहाँ अधिक व्यक्ति बस गए हैं।

(8) खनिज-पदार्थ के क्षेत्र—जिन भागों में खनिज पदार्थ मिलते हैं वहाँ कठिन जीवन होने पर भी लोग आकर बस जाते हैं। छोटा नागपुर का पठार खनिज पदार्थों में धनी होने के कारण ही बस गया है। अभी राजस्थान में जैसलमेर का भाग बहुत कम बसा हुआ है यहाँ जनसंख्या का घनत्व 4 5 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। यहाँ पर पेट्रोल की खोज हो रही है। यदि यहाँ पेट्रोल मिल जायगा तो यहाँ भी काफी जनसंख्या हो जायगी और घनत्व में अवश्य वृद्धि होगी।

(9) आवागमन के साधनों की सुविधा—जिन भागों में आवागमन के साधन श्रेष्ठ होते हैं वहाँ भी जनसंख्या अधिक घनी हो जाती है। गंगा के मैदान, तटीय मैदान और डेल्टा के भागों में रेल मार्ग अथवा जल मार्गों की सुविधा होने के कारण वहाँ घनी आबादी हो गई है। इसके विपरीत, पहाड़ी भागों रेगिस्तानी भागों तथा घने वनों में आवागमन के साधनों की अपर्याप्तता के कारण जनसंख्या की मात्रा अत्यन्त ही क्षीण होती है।

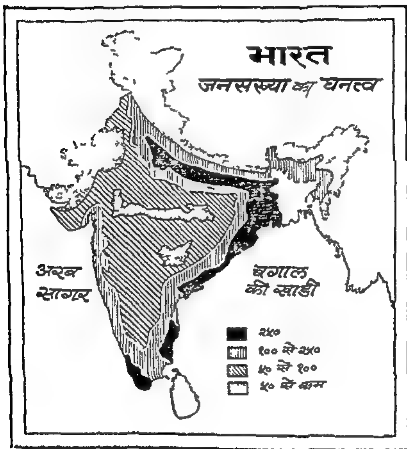
(10) अनुकूल स्थिति—जिन भागों की स्थिति अनुकूल होती है वहाँ भी जनसंख्या अधिक हो जाती है और घनत्व में वृद्धि हो जाती है। दिल्ली कानपुर आगरा, इलाहाबाद की स्थिति अनुकूल होने के कारण भी वहाँ घनी आबादी है।

(11) आवास प्रवास—किसी स्थान पर मनुष्यों के आवास के कारण जनसंख्या का घनत्व बढ़ जाता है व वहाँ से प्रवास के कारण घनत्व कम हो जाता है। असम में लगभग 16% जनसंख्या अन्य राज्यों से आकर बसी है।

(12) अन्य कारण सुरक्षित स्थान में अधिक मनुष्य जाकर बस जाते हैं। भारत व पाकिस्तान की सीमा कश्मीर व आजाद कश्मीर की सीमा व गोआ में सुरक्षा की मात्रा कम होने से आबादी कम है। इसके अतिरिक्त घने जंगलों में जंगली पशुओं एवं चोर डाकुओं के भय के कारण मनुष्य रहना पसन्द नहीं करते।

घनत्त्व के आधार पर देश के भाग

प्राकृतिक विविधता वैचित्र्य एवं सुषमा की दृष्टि में भारत एक अनुपम उदाहरण है। भारत एक विशाल देश है (क्षेत्रफल 32 68 090 वर्ग किलोमीटर[1]) अतः यहाँ विभिन्न प्रकार की जलवायु, प्राकृतिक बनावट व मिट्टी पाई जाती है। इसके परिणामस्वरूप भारत में जनसंख्या का घनत्व सर्वत्र समान नहीं है। जनसंख्या का घनत्व भूमि की बनावट, वर्षा, तापमान आदि तत्त्वों पर निर्भर होता है। अतः



चित्र 33

किसी देश की जनसंख्या का घनत्व सम्बन्धित समस्या का अध्ययन करने के लिए वहाँ के राजनीतिक विभाग उतने उपयुक्त नहीं होते जितने कि प्राकृतिक विभाग। भारत के जनगणना आयुक्त द्वारा सन 1971 की जनगणना की प्रकाशित रिपोर्ट के

---

1 India 1970 1

(2) बाल विवाह—भारत में बाल विवाह की प्रथा भी जनसंख्या की वृद्धि में सहायक हुई है। कम आयु में विवाह हो जाने के कारण सन्तान भी शीघ्र ही उत्पन्न होने लगती है। यदि विवाह देर में हो, तो सन्तान उत्पत्ति इतनी अधिक न हो। हमारे देश में 13-14 वर्ष की आयु की लड़कियों का विवाह कर देना अच्छा समझा जाता रहा है। कभी कभी तो 8-9 वर्ष अथवा इससे भी कम आयु में विवाह कर दिया जाता है।

(3) दरिद्रता—एडम स्मिथ के शब्दों में "निर्धनता सन्तानोत्पत्ति के वातावरण के अनुकूल है।" भारत में मनुष्यों का जीवन स्तर बहुत नीचा है। अत गरीब मनुष्य प्राय अपनी सन्तान संख्या के विषय में चिन्ता करना छोड़ देता है क्योंकि जीवन स्तर के और अधिक नीचा करने की सम्भावना शेष नहीं है वह पहले से ही निम्नतम है।

(4) मनोरंजन के साधनों का अभाव—हमारे देश में स्वस्थ मनोरंजन के साधनों की बहुत कमी है। जो साधन उपलब्ध हैं वे महँगे अधिक हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में तो इनका अभाव ही है। दिन भर कठिन परिश्रम करने के उपरान्त घर पर रहने के कारण भी सन्तान उत्पत्ति में सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिकों का मत है कि कमजोर व्यक्ति में सन्तान उत्पादन प्रवृत्ति अधिक होती है।

(5) शिक्षा का अभाव—भारत में शिक्षा का स्तर बहुत नीचा है। साक्षरता का प्रतिशत लगभग 29 है जिनमें ऐसे व्यक्ति भी सम्मिलित हैं जो केवल अपना नाम लिख तथा पढ़ सकते हैं। स्त्रियों में तो शिक्षा 18.5% की दशा और भी दयनीय है। अत अधिकांश व्यक्ति जीवन-स्तर के महत्व को नहीं समझते हैं और इसी कारण वे अपने परिवार के अधिक विस्तार के दोषों को नहीं समझते हैं।

(6) बहु पत्नी प्रथा—भारत में अनेक पत्नियाँ रखने की भी खराब प्रथा है। इस कारण कभी कभी तो एक व्यक्ति के ही यहाँ वर्ष में दो सन्तानें हो जाती हैं।

(7) विवाह—हमारे देश में प्रत्येक मनुष्य का विवाह हो जाता है चाहे वह शारीरिक एवं आर्थिक दृष्टि से अयोग्य ही हो। यहाँ भिखारियों तक का विवाह हो जाता है और ये अधिक सन्तानें न उत्पन्न करने की ओर ध्यान नहीं रखते।

(8) धार्मिक भावना—यह धारणा बनी हुई है कि 'प्रत्येक हिन्दू को विवाह और सन्तानोत्पत्ति करना चाहिए ताकि पुत्र उसकी अन्त्येष्टि क्रिया कर सके और उसकी आत्मा पृथ्वी के शून्य भागों में अशान्त होकर न भटके।'[1] इसके अतिरिक्त निःसन्तान स्त्रियों को समाज में अच्छी निगाह से नहीं देखा जाता है, अत प्रत्येक स्त्री की यह कामना होती है कि वह सन्तान अवश्य उत्पन्न करे।

(9) भारत में स्त्रियों को आर्थिक स्वतन्त्रता नहीं है। इस कारण वे सामाजिक प्रथा के अनुसार प्रत्येक स्त्री का विवाह होना अनिवार्य है।

---

[1] H Risely *Peoples of India* Ed 1901 p 154

(10) **बड़ा परिवार**—ग्रामीण क्षेत्रों में तो अब तक बड़े परिवार को आदर की दृष्टि से देखा जाता है। यहाँ मनुष्य की सम्पन्नता पुत्रों की सख्या मे ही आँकी जाती है। जिस स्त्री के पुत्र होते हैं वह बहुत ही सौभाग्यवती समझी जाती है।

(11) **वृद्धावस्था का सहारा**—प्रत्येक मनुष्य अपनी वृद्धावस्था के सहारे के लिए पुत्र की आवश्यकता प्रतीत करता है।

(12) **गर्भ विरोधी उपायों का कम प्रयोग**—सन्तान निरोध गर्भ विरोधी उपायों के विषय में उपयुक्त साधन एवं सुविधाएँ भारत में लोकप्रिय नहीं हो पाये हैं। अतः इनकी शिक्षा व परामर्श के विषय में सरकार को उपयुक्त सुविधाएँ प्रदान करनी चाहिए।

भारतीय जनसख्या की विशेषताएँ

भारत की जनसख्या के विशाल सागर में विभिन्न धर्मों जातियों प्रजातियों परम्पराओं, मान्यताओं तथा मूल्यों का निवास है, निर्धन, पूँजीपतियों तथा मध्यम वर्ग के शिक्षित, अर्द्धशिक्षित तथा अशिक्षित लोग हैं। इन समस्त विभिन्नताओं को एक इकाई में समेटे हुए अपना देश है। भारतीय जनसख्या की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं —

(1) **विश्व का कम क्षेत्र अधिक जनसख्या**—डा० चन्द्रशेखर के अनुसार विश्व के कुल क्षेत्रफल का लगभग 2.5% क्षेत्र भारत में है जिसमें विश्व की कुल जनसख्या का लगभग 14 प्रतिशत भाग निवास करता है। यह अनुपात बहुत अधिक है।

(2) **जनसख्या की अधिक वृद्धि**—डा० चन्द्रशेखर के अनुसार भारत प्रतिवर्ष एक आस्ट्रेलिया जोड़ लेता है। इसका आशय यह है कि भारत में प्रतिवर्ष आस्ट्रेलिया की जनसख्या के बराबर वृद्धि हो जाती है। आस्ट्रेलिया की जनसख्या लगभग 1.30 करोड़ है।

(3) **भारत का विश्व में स्थान**—जनसख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में द्वितीय स्थान है। चीन का इस दृष्टि से प्रथम स्थान है। चीन की इस समय अनुमानित जनसख्या लगभग 75 करोड़ है और भारत की (सन् 1971 में) लगभग 54.7 करोड़। भारत की जनसख्या विश्व की जनसख्या का लगभग $\frac{1}{6}$ है, अर्थात् विश्व के प्रत्येक छः व्यक्तियों में से एक भारतीय है।

(4) **जनसख्या वृद्धि की दर ऊँची**—भारत में जनसख्या में वृद्धि ऊँची दर से हो रही है। सन 1951 की जनसख्या की तुलना में सन 1961 में भारत की जनसख्या में लगभग 21.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो बहुत अधिक है। इसी प्रकार सन् 1901 की तुलना में सन् 1961 में लगभग 120 प्रतिशत जनसख्या बढ़ी है। भारत में प्रतिवर्ष 2.5 प्रतिशत की दर से वृद्धि हो रही है।

(5) **जन्म व मृत्यु दरें ऊँची हैं**—डा० चन्द्रशेखर के अनुसार भारत में प्रत्येक डेढ़ सैकिण्ड में एक बच्चा जन्म ले लेता है। इस दर से प्रतिवर्ष भारत में 2.10 करोड़ जन्म होते हैं अर्थात् प्रतिवर्ष जन्म दर लगभग 40 बच्चे प्रति हजार व्यक्ति या 4

प्रतिशत जन्म दर हुई। भारत में प्रतिवर्ष लगभग 80 लाख व्यक्तियों की मृत्यु होती है, अर्थात मृत्यु दर लगभग 16 व्यक्ति प्रति हजार या 1.6 प्रतिशत है।

(6) **भारत में जनसंख्या का घनत्व अधिक है**—सन 1971 की जनगणना के प्रकाशित आँकड़ों के अनुसार सन 1971 में भारत में जनसंख्या का घनत्व 182 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था जबकि सन 1961 की जनगणना के आधार पर यह घनत्व 134 व्यक्ति था। आँकड़ों से स्पष्ट है कि भारत में जनसंख्या के घनत्व में वृद्धि होती जा रही है। सोवियत रूस संयुक्त राज्य अमरीका, आस्ट्रेलिया फ्रांस ब्राजील आदि देशों की तुलना में भारत में जनसंख्या का घनत्व अधिक है, किन्तु जापान व इंगलैण्ड की तुलना में यह कम है।

(7) **घनत्व में असमानता है**—भारत की जनसंख्या की एक विशेषता यह भी है कि यहां विभिन्न क्षेत्रों में जनसंख्या के घनत्व में बहुत असमानता है। उदाहरण के लिए, भारत में जनसंख्या का औसत घनत्व 102 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है दिल्ली में यह घनत्व 2254 व्यक्ति है राजस्थान में 75, हिमाचल प्रदेश में 62 और अण्डमान निकोबार में 14 है।

(8) ***औसत आयु में वृद्धि की प्रवृत्ति*—सन 1931 की जनगणना के आधार** पर भारतीयों की औसत आयु 27 वर्ष थी। सन 1951 में यह 32 वर्ष हो गई, सन 1961 में 42 वर्ष और सन 1970 में यह 50 वर्ष हो गई। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीयों की औसत आयु में निरंतर वृद्धि हो रही है। संयुक्त राज्य अमरीका जर्मनी इंगलैण्ड आदि देशों की तुलना में भारतीयों की औसत आयु अभी भी कम है।

(9) **स्त्रियों की संख्या घट रही है**—सन 1901 से 1971 तक की जनगणनाओं के प्रकाशित आँकड़े देखने से ज्ञात होता है कि भारत में पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की संख्या में निरन्तर कमी आ रही है। सन 1901 में 1,000 पुरुषों के पीछे 972 स्त्रियाँ थीं, 1931 में यह संख्या घट कर 950 रह गई और 1971 में इनकी संख्या में और कमी हुई व इनकी संख्या 932 ही रह गई। केरल, उड़ीसा, मणिपुर और पाण्डिचेरी आदि में स्त्रियों की संख्या पुरुषों से अधिक है।

(10) **आयु समूह की प्रवृत्ति**—विभिन्न आयु-समूहों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि *भारत में बालकों की संख्या अधिक है।* भारत में 15 वर्ष से कम आयु के बालक कुल जनसंख्या के 31 प्रतिशत हैं और 15 वर्ष तथा 34 वर्ष के आयु समूह के व्यक्ति 32 प्रतिशत (See India–1970 p 10) है। 35 से 54 आयु-समूह के 19 प्रतिशत और 55 से 74 आयु समूह के 7 प्रतिशत हैं। अतः आगे आयु समूह में प्रतिशत क्रमशः घटने की प्रवृत्ति रखता है।

(11) **अधिकांश जनसंख्या गाँवों में निवास करती है**—महात्मा गाँधी का कथन है कि भारत गांवों में निवास करता है। आँकड़ों को देखने से ज्ञात होता है

कि भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 82 प्रतिशत भाग गाँवों में रहता है और 18 प्रतिशत भाग नगरों में।

(12) **नगर की ओर पलायन की प्रवृत्ति**—ग्रामीण व शहरी जनसंख्या के आंकड़ों का अध्ययन करने पर एक निष्कर्ष यह निकलता है कि ग्रामीण जनसंख्या में नगर की ओर आकर्षित होने की प्रवृत्ति है। सन 1921 में शहरी जनसंख्या 11 2 प्रतिशत थी (ग्रामीण 88 8 प्रतिशत) व सन 1961 में क्रमश 18 प्रतिशत और 82 प्रतिशत हो गई।

(13) **भारत में विभिन्न धर्मावलम्बी हैं**—भारत धर्मनिरपेक्ष गणराज्य है कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म को मानने अथवा न मानने के लिए स्वतन्त्र है। फिर भी कहा जा सकता है कि भारत हिन्दू धर्म प्रधान देश है। भारत में 83 5 प्रतिशत हिन्दू 10 7 प्रतिशत मुसलमान, 2 44 प्रतिशत ईसाई, 1 79 प्रतिशत सिक्ख 0 46 प्रतिशत जैन और शेष अन्य धर्म वाले हैं।

(14) **अधिकांश जनसंख्या का व्यवसाय कृषि है**—भारत में प्रमुख व्यवसाय कृषि है। देश में लगभग 69 5 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य में लगी हुई है जबकि अन्य व्यवसायों में तुलनात्मक कम अनुपात में लोग लगे हुए हैं। संयुक्त राज्य अमरीका में कुल जनसंख्या का लगभग 9 प्रतिशत और इंगलैण्ड में लगभग 4 प्रतिशत लोग कृषि व्यवसाय में लगे हुए हैं।

(15) **भारतीयों का जीवन स्तर नीचा है**—विश्व के विकसित देशों—जैसे संयुक्त राज्य अमरीका, इंगलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, जापान आदि—की तुलना में भारतीयों का जीवन स्तर नीचा है। भारत की अधिकांश जनसंख्या अशिक्षित है। चेस्टर बोल्स ने जापान में कृषकों के सम्बन्ध में कहा था, "जिन जापानी कृषकों को 1946 के महान भूमि सुधार कानून के अन्तर्गत भूमि दी गई उनमें 10 में से 9 उस कानून को पढ़ सकते थे।" किन्तु भारत में स्थिति क्या है? यहाँ 10 कृषकों में से कदाचित एक कृषक भी अपने लिए बनाए गये कानूनों को पढ़कर समझने में सर्वथा असमर्थ है।

जनसंख्या की उपरोक्त विवेचना से निष्कर्ष निकलता है कि भारत में जनसंख्या अनियन्त्रित एवं अधिक है। अधिक जनसंख्या के कारण देश में अनेक गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं।

जनसंख्या की समस्याएँ तथा निवारण

भारतवर्ष में बढ़ती हुई जनसंख्या ने अनेक समस्याओं को जन्म दिया है। भारत में जनसंख्या की तीव्र गति से होने वाली वृद्धि देश के आर्थिक विकास की हत्या कर देगी। देश में जनसंख्या तो दिन प्रतिदिन बढ़ रही है किन्तु भूमि की मात्रा में वृद्धि नहीं हो रही है बल्कि देश का विभाजन हो जाने के कारण भूमि की मात्रा में कमी ही हुई है।

यदि हम विश्व के कुछ अन्य देशों पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होगा कि

साइबेरिया में प्राकृतिक साधन तो अधिक हैं किन्तु उनका उपयोग करने वाले अपेक्षाकृत कम हैं। ब्राजील में कम जनसंख्या एक समस्या है। आस्ट्रेलिया में भी कम जनसंख्या आर्थिक विकास में रुकावटें डाल रही है। परन्तु हमारे देश भारत में घनी आबादी उन्नति में बाधक बनी हुई है। सर [illegible] के शब्दों में 'भारत की जनसंख्या की समस्या को हल करने की असफलता से राजनीतिक व सामाजिक कष्ट उत्पन्न होंगे। बढ़ती हुई जनसंख्या तो वह घुन है जिसे यदि रोका न गया तो देश को खोखला करके ही साँस लेगा।

जनसंख्या की वृद्धि को रोकने के उपाय बतलाना अत्यन्त सरल प्रतीत होता है परन्तु व्यावहारिकता की दृष्टि से यह कार्य इतना सरल नहीं है। इस बढ़ती हुई जनसंख्या की समस्या निवारण के हेतु निम्नलिखित परामर्श लाभप्रद होंगे —

(1) लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाया जाये। गाँवों में कुटीर धन्धों को लोकप्रिय बनाना चाहिए। नगरों में बड़े बड़े कारखानों की स्थापना भी आवश्यक है। इसके लिए जिस ग्रामीण क्षेत्र में सुविधाएँ हों वहाँ भी बड़े कारखाने स्थापित करने चाहिए ताकि लोगों की आय में वृद्धि हो और जीवन स्तर ऊँचा हो।

(2) भारत में बहुत सी भूमि बेकार पड़ी है। उस भूमि का उपयोग करने से खाद्य पदार्थों के उत्पादन में तो सहायता मिलती ही साथ में वहाँ भी लोग जाकर बस जायेंगे। इसका प्रभाव यह भी होगा कि कुछ क्षेत्रों में जहाँ जनसंख्या का अधिक भार है, कुछ कम हो जायगा।

(3) देश में बड़े उद्योगों के नये नये कारखाने स्थापित किये जायें और साथ ही कुटीर उद्योगों को भी प्रोत्साहन दिया जाय जिससे देश की उन्नति भी होगी और बेरोजगारी की समस्या भी हल होगी।

(4) विभिन्न राज्यों में जनसंख्या का पुनः वितरण किया जाय। इससे अधिक घने बसे हुए भागों में जनसंख्या का दबाव कम हो जायगा।

(5) शिक्षा का स्तर ऊँचा किया जाय। कम से कम दसवीं कक्षा तक कृषि बढ़ईगीरी दर्जी का काम जूते बनाना, मधुमक्खी पालना खिलौने बनाना तथा इस प्रकार के कामों में से एक या दो काम की शिक्षा, अनिवार्य कर देना चाहिए ताकि परीक्षा पास कर लेने के पश्चात् स्वतन्त्र धन्धा किया जा सके। विश्वविद्यालय की शिक्षा में प्रक्टिकल ट्रेनिंग पर भी विशेष जोर देना चाहिए

(6) सरकार को चाहिए कि मकानों की समस्या दूर करने के लिए सुलभ शर्तों पर ऋण देने की व्यवस्था करे।

(7) भारतीयों को विदेशों में जाकर रहने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इस दिशा में विदेशों में हमारे प्रतिनिधि काफी सहायता दे सकते हैं।

(8) गर्भ निरोध औषधियों तथा उपकरणों का उचित उपयोग करना चाहिए अनेक व्यक्ति इसे अप्राकृतिक समझते हैं तथा अनेक धार्मिक कारणों से इनका उपयोग नहीं करना चाहते। अतः इस दिशा में लोगों को शिक्षित करने की आवश्यकता है।

भारत सरकार देश म जनसंख्या की वृद्धि को रोकन क लिए अनक प्रयत्न कर रही है। देश म अनक परिवार नियोजन क द्र स्थापित किय हैं।

क्या भारत अतिवासित है ?
(Is India Over populated)

जनाधिक्य से आशय—

भूख और रति रति और भूख क ताने बाने स मानव स तति क सजन का इतिहास बना रहता है। आदश जनसंख्या (Optimum Population) वह कहलाती है जो देश के प्राकृतिक साधनो का पूणरूप स उपयोग कर सक और अपने परिश्रम द्वारा उत्पन्न सम्पत्ति पर एक उचित रहन-सहन के स्तर पर अपना निर्वाह कर सके। यदि देश की जनसंख्या आदश बिन्दु (Optimum Point) स कम होती है तो देश कमवासित (Under populated) कहलाता है। इसका प्रभाव यह होता है कि प्राकृतिक साधनो का पूरा उपयोग नही हो पाता है सम्पत्ति व प्रति व्यक्ति आय कम होगी तथा उद्योग व्यवसायो स श्रम की कमी होगी। यदि आदश बि दु स जनसंख्या अधिक हो जाती है तो देश म जनाधिक्य या अतिवासित (Over populated) कहलाता है और विपरीत प्रभाव होते है।

जनाधिक्य के पक्ष मे तर्क—

यह प्रश्न अत्य त विवादग्रस्त है। इस प्रश्न को यदि देखा जाय तो व्यावहारिक महत्व कम है और सद्धा तिक महत्व अधिक है।

(1) माल्थस के सिद्ध त का तर्क—प्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि भारत की जनसंख्या आदश बिन्दु स आग बढ़ गई है और भारत अतिवासित देश है। माल्थस के दृष्टिकोण स भी भारत अतिवासित देश है। माल्थस क अनुसार अतिवासित जनसंख्या के प्रमुख लक्षण उच्च ज म दर, उच्च मत्यु दर, बेरोजगारी व निम्न रोजगारी निधनता स्वास्थ्य खराब होना अकाल पडना और निम्न जीवन स्तर हैं। भारत म य सब लक्षण पाय जाते है। यह भी कहा जाता है कि उन गत वर्षों म दुर्भिक्ष आपसी झगडा बाढो, महामारी बीमारियो आदि ने इसलिए उग्र रूप धारण कर लिया है कि प्रकृति देश की तजी के साथ बढ़ती हुई जनसंख्या की गति को रोकना चाहती है। प्रो० टासिग के अनुसार 'ऊँची जन्म सख्या ऊँची मत्यु संख्या पिछडी हुई औद्योगिक दशाएँ निम्न रोजगारी—ये सब बातें साथ साथ चलती हैं।

(2) ऊँची ज म-दर और मत्यु दर—जनाधिक्य का एक लक्षण है—ऊँची ज म दर और ऊँची मत्यु-दर। भारत म यह लक्षण पाया जाता है। डा० च द्रशेखर क अनुसार भारत म लगभग 4 प्रतिशत ज म दर और 1 6 प्रतिशत मत्यु दर है। अर्थात लगभग 2 5 प्रतिशत वार्षिक दर स जन संख्या म वद्धि हो रही है। अन्य देशो की इन दरो से तुलना करने पर ज्ञात होगा कि भारत की दरें बहुत ऊँची हैं।

(3) बेरोजगारी मे वद्धि—जनाधिक्य होने स रोजगार क पर्याप्त अवसर

उपल ध नही होने पाते। रोजगार के जितने अवसर उत्पन्न किये जाते हैं उनकी तुलना में उनकी माँग करने वाले व्यक्तियों की संख्या बढ़ती जाती है। यही कारण है कि देश में बेरोजगारी व अर्द्ध बेरोजगारी ग्रामीण व शहरी बेरोजगारी तथा शिक्षित व अशिक्षित सभी वर्गों की बेरोजगारी भयंकर समस्या बन गई है, जिसका निराकरण होना दूभर दिखाई नहीं पड़ रहा है।

(4) पर्याप्त अन्न देने में असमर्थता—जनाधिक्य के कारण देश यहाँ के निवासियों को पर्याप्त मात्रा में अन्न देने में असमर्थ रहा है। खाद्य पूर्ति के लिए भारत को प्रतिवर्ष विदेशों से करोड़ों रुपये का खाद्यान्न आयात करना पड़ता है। डाक्टर राधाकमल मुकर्जी ने बतलाया है कि भारत में जब पैदावार साधारणत ठीक होता है उस वर्ष 12 प्रतिशत जनसंख्या के लिए भोजन की कमी रहती है। इस कथन की पुष्टि प्रो० अग्रवाल ने भी की है।

(5) अकालों का आगमन—भारत में अकाल भी समय समय पर आते रहते हैं। यह जनाधिक्य का ही एक लक्षण है। सन 1943 का बंगाल का अकाल 1966 67 में बिहार का अकाल और सन् 1967 1968 व 1969 में राजस्थान के अकाल लाखों व्यक्तियों को भक्षण कर चुके हैं। इन अकालों का विवरण आज भी सिहरन उत्पन्न कर देता है।

(6) प्रति व्यक्ति भूमि कम—भारत में प्रति व्यक्ति भूमि की मात्रा अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। जन गणना अधिकारी के अनुसार हमारे देश में प्रति व्यक्ति भूमि की मात्रा केवल 225 सेन्ट (Cents) है जबकि विश्व के लिए यह औसत 1530 सेन्ट है। इसका कारण यहाँ पर जनाधिक्य का होना है।

(7) साम्प्रदायिक व अन्य दंगे—भारत में साम्प्रदायिक व अन्य दंगे प्राय होते रहते हैं जो जनाधिक्य का ही लक्षण है। सन 1947 में देश के विभाजन के समय जो साम्प्रदायिक दंगे हुए एसे दंगे संसार के किसी भी भाग में अब तक नहीं हुए। अब तक देश में अनेक बार अलग अलग स्थानों पर साम्प्रदायिक व अन्य दंगे हो चुके हैं। सन 1969 में गुजरात राज्य में भी बड़े पैमाने पर साम्प्रदायिक दंगे हुए। बंगाल अशान्त होकर संतप्त रहा है। नक्सलवादी देश में अराजकता फैलाने का षडयन्त्र कर रहे हैं।

(8) बाढ़ों का प्रकोप—हमारे देश में बाढ़ों का भी प्रकोप रहता है। भारत में प्रतिवर्ष किसी न किसी भाग अथवा भागों में बाढ़ अवश्य आती हैं जिनसे लाखों व्यक्तियों को क्षति होती है। कहा जाता है कि प्रकृति भारत की बढ़ती हुई जनसंख्या को रोकने के लिए यह सब काम करती है।

(9) प्रति व्यक्ति कम आय—विश्व के यदि अन्य देशों की प्रति व्यक्ति वार्षिक आय से भारत के प्रति व्यक्ति वार्षिक आय की तुलना करें तो ज्ञात होगा कि भारत में यह बहुत ही कम है। यह जनाधिक्य के कारण ही है।

(10) राष्ट्रीय आय कम—जनसंख्या को देखते हुए भारत में राष्ट्रीय आय कम है। व इसमें वृद्धि की गति भी मन्द है। इसका एक कारण जनाधिक्य भी है।

(11) पूंजी निर्माण की मंद गति—भारत में पूंजी निर्माण की मात्रा राष्ट्रीय आय की तुलना में बहुत कम है। इसका एक कारण देश में जनाधिक्य भी है। भारत में पूंजी निर्माण राष्ट्रीय आय का केवल 8 प्रतिशत है जबकि यह पश्चिमी जर्मनी में 24 प्रतिशत जापान में 20 प्रतिशत, संयुक्त राज्य अमरीका में 18 प्रतिशत और इंगलैण्ड में 16 प्रतिशत है।

(12) अन्य तर्क—भारत में जनाधिक्य का एक और पहलू है। जनाधिक्य के कारण चिकित्सा स्वास्थ्य निवास शिक्षा आदि सुविधाओं का प्रसार उसके अनुरूप में नहीं हो रहा है जैसाकि होना चाहिए। हैजा, मलेरिया प्लेग, चेचक व अन्य संक्रामक रोग लाखों मनुष्यों स्त्रियों तथा बच्चों की मृत्यु का कारण होते हैं। तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या गरीबी के दुष्चक्र को जारी रखती है। भारत में जनाधिक्य होने के कारण परान्नजीवी, अपंग कमजोर और बीमार व्यक्तियों की संख्या बहुत अधिक है। अनुमान है कि इस समय देश में लगभग 25 लाख व्यक्ति तपेदिक से ग्रस्त 10 लाख व्यक्ति अन्धे 20 लाख व्यक्ति आंशिक रूप से अन्धे 8 लाख व्यक्ति गूंगे व बहरे और 1 लाख व्यक्ति भिखारी व वेश्या आदि हैं। यह सब जनाधिक्य के कारण ही है।

उपरोक्त तर्कों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत में जनाधिक्य है।

जनाधिक्य के विपक्ष में तर्क—

दूसरी विचारधारा के विद्वानों का मत है कि भारत में जनाधिक्य नहीं है, अतः जनाधिक्य अभी कोई समस्या देश के सामने नहीं है। उन्होंने इस सम्बन्ध में निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किये हैं —

(1) देश निर्धन नहीं है—यह केवल एक भ्रम ही है कि भारत निर्धन देश है। प्राकृतिक साधनों में देश बहुत धनी है। देश में अनेक प्रकार के खनिज पदार्थों के विपुल भण्डार हैं नदियों में अथाह जल है देश में बहुत जन शक्ति है किन्तु हमने अपने उपलब्ध साधनों का पूर्णरूप में उपयोग नहीं किया है सम्पत्ति के उत्पादन का समुचित वितरण नहीं किया जा रहा है देश में आय का समान वितरण नहीं है अतः निर्धनता है। देश की निर्धनता का मुख्य कारण वर्षों का विदेशी शासन सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्थाएँ हैं। कहा जाता है कि भारत एक धनी देश है, किन्तु निवासी निर्धन हैं।

(2) खाद्यान्नों की वास्तविक कमी नहीं है—भारत में खाद्य समस्या इसलिए है कि बहुत से व्यक्तियों को खिलाने के लिए थोड़े व्यक्तियों को उत्पादन करना पड़ता है। एक ओर तो खाद्यान्नों की कमी बताई जाती है और दूसरी ओर भूमि के बड़े टुकड़े निष्क्रिय पड़े हुए हैं। हमने इस भूमि का उपयोग नहीं किया नदियों में अथाह जल है लेकिन उसका हमने समुचित उपयोग सिंचाई में नहीं किया कृषि के आधुनिक साधनों को नहीं अपनाया अतः खाद्यान्नों की कमी है। यदि जनसंख्या

केवल 1 करोड ही हो और भूमि के टुकडा का उचित उपयोग न करें, तो भी खाद्यान्न की कमी रहेगी। अत देश म खाद्यान्न की कमी जनाधिक्य म कारण नही है।

(3) बेरोजगारी की समस्या वास्तविक नहीं है—भारत म बेरोजगारी की समस्या है तो सही किन्तु कृत्रिम है। देश म बहुत स काम करने का पडे हुए हैं किन्तु हम कर नही रहे है देश म अनेक बड उद्योग लघु उद्योग व कुटीर उद्योग स्थापित किये जा सकत हैं लकिन कर नही रहे है अनक प्राकृतिक साधनो का विदोहन करना है लेकिन कर नहा रह हैं इसलिए बेरोजगारी है। देश की शिक्षा प्रणाली ठीक नही है, अत अधिकाश शिक्षित व्यक्ति नौकरी क पीछ हो पड़े हुए हैं अत बेरोजगारी है। सरकार उद्योगो की स्थापना के उत्साहजनक एव पर्याप्त अवसर प्रदान नहा कर रहा है अत देश म बरोजगारी की समस्या है, जनाधिक्य की नहीं। बस बेरोजगारी संयुक्त राज्य अमरीका जैसे विकसित देशो म भी कुछ अशा म तो है हा।

(4) अकालो व बाढो को रोका जा सकता है—सिचाई की पर्याप्त सुविधाए प्रदान करके अकाल रोके जा सकत है। नदियो का मार्ग मन्द करके उचित स्थानो पर बाँध बना कर बाढो क प्रकोप स सदा क लिए मुक्त हो सकत ह कि तु उपयुक्त आयोजन नहा हो रहा है। राजस्थान नहर जसी महत्वपूर्ण परियोजना को भी युद्ध स्तर की प्राथमिकता नही दा जा रही है अत अकाल व बाढा स पीडित हैं।

(5) जनसंख्या का घनत्व अधिक नहीं है—भारत म जनसख्या का औसत घनत्व अनक विकसित दशा स कम है। भारत म यह घनत्व 182 व्यक्ति प्रति वग किलामीटर है। जापान (घनत्व 273 व्यक्ति प्रति वग किलोमीटर), पश्चिमा जमनी (243 व्यक्ति) इगलण्ड (322 व्यक्ति) तथा हालण्ड (316 व्यक्ति) आदि देशा म भारत की तुलना म प्रति वग किलोमीटर घनत्व कहा अधिक है। वास्तव म भारत म प्रति वग किलोमीटर घनत्व कम का समस्या है अधिक की नहीं। अत जब उपरोक्त देशा म जनाधिक्य का समस्या नहा है तो भारत म यह (वास्तविक) समस्या कस हो सकती है।

(6) प्रति व्यक्ति व राष्ट्रीय आय मे वृद्धि—भारत म राष्ट्रीय आय तथा प्रति व्यक्ति वास्तविक आय म निरन्तर वृद्धि हा रहा है। प्रथम द्वितीय व तृतीय पचवर्षीय याजनाओ म राष्ट्रीय आय व प्रति व्यक्ति आय म वृद्धि हुई है कमी नही। अत भारत म जनाधिक्य नहीं कहा जा सकता। यदि अ य कुछ दशा का तुलना म यह कम भा है ता इसका कारण हमारी निष्क्रियता है।

(7) अथ व्यवस्था का विकास—भारत का अथ व्यवस्था का उचित एव व्यावहारिक ढग स नियोजित करक और अधिक मजबूत बनाया जा सकता है। अभी तक प्राकृतिक एव मानवीय समाधनो का पूर्ण उपयोग करने क लक्ष्य स नियोजन नहीं किए जाने क कारण अनेक समस्याए उत्पन्न हो गई हैं।

(8) अन्य तर्क—बीमारियाँ, दंगे आदि भारत में ही नहीं वरन् अन्य देशों में भी पाये जाते हैं। संयुक्त राज्य अमरीका में रंग भेद नीति के अन्तर्गत दंगे हो जाते हैं। बीमारियों पर नियंत्रण किया जा सकता है, सतर्कता से काम लेने पर साम्प्रदायिक दंगे रोके जा सकते हैं। युद्ध भारत ने नहीं किये किन्तु चीन व पाकिस्तान ने भारत को ललकारा, भारत पर आक्रमण किये तो भारत ने भी ललकार का जवाब ललकार से दिया, आक्रमण का जवाब आक्रमण से दिया। चीन को यदि अपनी अधिक जनसंख्या पर गर्व है तो भारत को अपने वीर रण योद्धाओं पर, पाकिस्तान को यदि विदेशों से प्राप्त युद्ध-सामग्री पर नाज है तो भारत को अपने रण-कौशल पर। युद्ध इंगलैंड, जर्मनी, रूस, पोलैण्ड, फ्रान्स, इटली, मिस्र, इजरायल, वियतनाम आदि देशों में हुए हैं। अतः युद्ध व जनसंख्या के घनी होने में सम्बन्ध नहीं है वरन् राजनीतिक दशाओं के परिणाम हैं।

निम्न जीवन-स्तर, वस्त्र, मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि की सुविधाएँ उचित मात्रा में उपलब्ध न होने का मुख्य कारण है हमारी अकर्मण्यता, निष्क्रियता और सरकार की त्रुटिपूर्ण योजना व नीति।

अन्त में निष्कर्ष यह है कि भारत में जनाधिक्य नहीं है। हाँ, जनाधिक्य के तर्क की आड़ में हम अपनी योजनाओं की विफलताओं, अपनी अकर्मण्यता व सरकारी नीतियों की त्रुटियों को छिपाने का मन ही असफल प्रयत्न करते रहे। देश के राजनीतिज्ञों व एक वर्ग के अर्थशास्त्रियों ने 'भारत में जनाधिक्य है', 'भारत में जनाधिक्य है', 'भारत में जनसंख्या की विस्फोटक स्थिति है' के नारे लगा लगा कर व प्रचार करके जनसाधारण के दिमाग में यह अच्छी तरह बिठा लिया है कि भारत में जनाधिक्य है और इतनी मोह निद्रा (hypnotize) में जकड़ दिया है। अधिकांश व्यक्ति इसी बात को मानने लगे हैं कि भारत में जनाधिक्य है। यदि यह कहा जाता है कि भारत में जनाधिक्य नहीं है तो यह तथ्य हास्यप्रद सा प्रतीत होता है जबकि वास्तविकता यह है कि भारत में जनसंख्या का आधिक्य है ही नहीं वरन् उचित विश्लेषण करने पर स्पष्ट ज्ञात होगा कि भारत में जितनी जनसंख्या होनी चाहिए उससे हमारी जनसंख्या कहीं कम है। अभी तो देश में जनसंख्या बढ़ाने की ओर आवश्यकता है ताकि प्रकृति के साधनों का समुचित उपयोग किया जा सके और भारतीय अपना जीवन सुख व समृद्धि में बिता सकें।

अन्तिम विचार—

भारत में जनाधिक्य है अथवा नहीं है—का सिद्ध करना तर्क की दृष्टि से भले ही महत्त्वशील हो, किन्तु व्यावहारिक दृष्टिकोण से महत्त्वहीन है। यह अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि जितनी सन्तानें अधिक होंगी उतनी ही जनसंख्या अधिक बढ़ेगी तथा उतने ही खाद्यान्न और जीवन यापन के दूसरे साधन कम होंगे। गांधारी जब अपने सौ पुत्रों की मृत्यु पर विलाप करती है तो उपहास के साथ भीमसेन कहता

है, 'जो सन्तानें मक्खियों की तरह पैदा होंगी वे मक्खियों की तरह नष्ट होंगी। इस कथन के गर्भ में कुछ सत्य छिपा हुआ है।

भारत में जनाधिक्य के पक्ष तथा विपक्ष की विचारधाराओं में सत्यता का अंश अवश्य है। अन्त में निष्कर्ष निकलता है कि भारत अतिवासित देश है। इस कथन की सत्यता दुभिक्ष आयोग ने की है। उसके अनुसार औद्योगिक व कृषि साधनों के विकास की वर्तमान स्थिति की तुलना में भारत में जनाधिक्य है। यह इससे भी विदित होता है कि खाद्य समस्या, भूमि के आकार में कमी, खेतों का खण्डन, भूमिहीन मजदूरों की वृद्धि, अधिकांश जनसंख्या की दीर्घस्थायी निर्धनता, देश के कुल औद्योगिक व कृषि साधनों तथा कुल सम्पत्ति में वृद्धि होने पर भी जनता को अपर्याप्त व कम पौष्टिक भोजन मिलता है।

भारत में जनाधिक्य है, इससे हतोत्साह होने की कोई आवश्यकता नहीं। इसी बिखरी हुई जनसंख्या के पीछे असीम शक्ति छिपी पड़ी है। आवश्यकता तो केवल इस बात की है कि उसे एक सूत्र में बांध कर उचित दिशा में ले जाया जाय। देश की अनेक उच्छृंखल नदियां जो नियन्त्रित किये जाने पर आश्चर्यजनक कार्य करते देखा है। कल तक सामान्य महानदी व अन्य दूसरी नदियां हमारे देखते-देखते मचल जाया करती थीं और अपनी मर्यादा को त्याग कर दूर-दूर तक प्रलय मचा दिया करती थीं पर आज वे ही नदियां हमारे लिए वरदान बन गई हैं। यह है नियन्त्रण व संयम का फल। इसी प्रकार यदि हम जनसंख्या रूपी नदी में नियन्त्रण रूपी बाँध बाँधकर उसकी बाढ़ को रोक सकें तथा देश प्रेम की इच्छा शक्ति और आगे बढ़ने की लगन रूपी नहरों में उसे प्रवाहित कर सकें तो उससे भी शक्ति का वह स्रोत प्रवाहित होगा जो हमारे देश के स्वरूप को ही बदल देगा।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. भारत में अत्यधिक आबादी है। क्या आप इस कथन से सहमत हैं? भारत में आबादी की क्या मुख्य समस्याएं हैं? इन समस्याओं को हल करने के लिए सुझाव दीजिए। (T D C 1966)
2. क्या आपके विचार में इस समय भारत में जनाधिक्य है? जनसंख्या के समाधान करने के लिए उपयुक्त सुझाव दीजिये। (T D C 1968)
3. भारत की जनसंख्या के वितरण और घनत्व पर प्रकाश डालिए। भारत में जनसंख्या नियोजन कहाँ तक सफल हुआ है? (T D C 1970)

24

भारत मे परिवार-नियोजन

प्रारम्भिक—अर्थ एवं आवश्यकता

परिवार नियोजन म आशय है, 'परिवार को जानबूझ कर अपनी इच्छा नुसार सीमित करना तथा उचित समय के पश्चात सतानोत्पादन करना।' आर्थिक और सामाजिक निर्माण के अन्तर्गत परिवार नियोजन एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है। जनगणना रिपोर्ट म भी कहा गया है "यदि हम अकाल मृत्यु नहीं चाहते हैं तो हमे अकाल जन्म से भी अभीष्ट नहीं होना चाहिए।

परिवार नियोजन अशान्ति दरिद्रता तथा भविष्य की दुराशाओ की आशका का दमन करके पारिवारिक विघटन का समाप्त कर परिवार को एक 'स्वग की रूपरेखा दन म सहयोग देना है। परिवार नियोजन साधन नहीं साध्य है एक जीवन पद्धति है। इसका सम्बन्ध जीवन स्तर म हा नही वरन जीवन के मूल्यो स है। देश से निधनता व अभिशाप को मिटाकर तथा देशवासियो के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाकर देश का तीव्रगति स आर्थिक विकास करन क लिए परिवार नियोजन के कार्यक्रम को अपनाना बहुत आवश्यक है।

हमारे साहित्य म अनक स्थलो पर छोटे परिवार की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। महाभारत महाकाव्य म कुन्ती न अपन पति पाण्डु स जिस अर्जुन के बाद चौथी सन्तान की कामना थी कहा— बुद्धिमान लोग आपत्तिकाल मे भी चौथी सन्तान की स्वीकृति नहीं देते।' आज की परिस्थिति म जबकि भयानक रूप से बढ़ती हुई जनसख्या क कारण हमारी आर्थिक प्रगति के सभी लाभ समाप्त होते जा रहे हैं कुन्ती के य शब्द और भी अधिक सार्थक हैं।

सत कुवण न कहा है कि अधिक बच्चो का होना ही वास्तव म कलियुग' है। ग्यारहवी शताब्दी म सत रामदास न कहा था कि अधिक बच्चे होन से आदमी दरिद्र हो जाता है।

भारत मे परिवार-नियोजन

भारत म परिवार नियोजन का कार्यक्रम मानव इतिहास म स्वास्थ्य तथा मानव-कल्याण का सबसे बडा कार्यक्रम है। परिवार नियोजन वास्तव में एक सामाजिक क्रान्ति है।

भारत म परिवार नियोजन को सरकारी कायक्रम के रूप म सन 1952 से अपनाया गया है। यदि बढ़ती हुई जनसख्या को रोकने के लिए राष्ट्रीय-स्तर पर प्रय न नहीं किए गये तो भारत म जनसख्या वृद्धि दर अवश्य ही बढ़गी। बढ़ती हुई जनसख्या देश की आर्थिक प्रगति को निगल जाती है अत इस नियंत्रित करना ही होगा। यही कारण है कि पचवर्षीय योजनाओं की सफलता के लिए भारत-सरकार ने परिवार नियोजन को एक प्रमुख कायक्रम के रूप म स्वीकार किया है। वतमान 4 प्रतिशत की जन्म दर 2 5 प्रतिशत करने के लिए राष्ट्रव्यापी कायक्रम अपनाया है। दूसरे शब्दों म परिवार नियोजन का मुख्य उद्देश्य है कि अगले 10 वर्षों म भारत म जन्म दर 40 प्रति हजार से 25 प्रति हजार कर दी जाय। यह लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जबकि प्रजनन शक्ति वाले 9 करोड़ जोड़े परिवार नियोजन को अपनाव।

पचवर्षीय योजनाओं के अन्तगत परिवार-नियोजन

प्रथम पचवर्षीय योजना मे परिवार नियोजन को प्रारम्भ किया गया **द्वितीय योजना में** गहन कायक्रम एव अनुसधान सम्बन्धी काय किए गये **तृतीय योजना मे** परिवार नियोजन को स्पष्ट एव प्रभावशाली मान्यता प्रदान की गई और **चतुथ योजना मे** इसे उच्चतम प्राथमिकता (Highest Priority) दी गई है।

प्रथम पचवर्षीय योजना—देश की प्रथम पचवर्षीय योजना म परिवार नियोजन कायक्रम पर 65 लाख रुपये व्यय करने की व्यवस्था की गई थी। इस योजना काल म सन 1953 मे परिवार नियोजन से सबधित कायक्रमों के सबध मे अनुसधान (Family Planning Research and Programme Committee) कमटी स्थापित की गई। इस योजना काल म बम्बई तथा अन्य केन्द्रों म गर्भ निरोधक उपकरणो मे अनुसधान का काय किया और जनसख्या सम्बन्धी 4 अनुसधान केन्द्रो की स्थापना भी की गई।

प्रथम योजना काल म 145 परिवार नियोजन केन्द्र स्थापित किए गये (जिनमे ग्रामीण क्षेत्र म 25 व शहरी क्षेत्रो म 120 परिवार नियोजन केन्द्र थे)। इस योजनावधि मे अनुसधान काय अधिक किए गय अत केवल 18 5 लाख रुपये ही व्यय किये जा सके। इस योजनावधि म न तो उपयुक्त प्रचार ही किया जा सका और न ही परिवार नियोजन लोकप्रिय हो सका। एक विद्वान के अनुसार परिवार नियोजन के लिए प्रथम पचवर्षीय योजना तो विकास के लिए प्रथम सीढ़ी मात्र थी।

द्वितीय पचवर्षीय योजना—दूसरी योजना म परिवार नियोजन कायक्रमों पर लगभग 5 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान किया गया। इस योजना-काल मे परिवार नियोजन केन्द्रों की कुल सख्या 1 645 हो गई (546 शहरी क्षेत्र म और 1,099 ग्रामीण क्षेत्र म)। इस योजना काल म परिवार नियोजन के प्रचार-काय मे और अधिक तेजी की गई जनता को निशुल्क परामर्श देने के लिए सुविधाओ म

वृद्धि की गई अनुसंधान कार्य का विस्तार तथा जनसंख्या से सम्बन्धित समस्याओं का विश्लेषण आदि किया गया।

तृतीय पंचवर्षीय योजना—इस योजना में परिवार नियोजन कार्यक्रमों पर लगभग 27 करोड़ रुपए व्यय करने की व्यवस्था की गई। इस योजना अवधि में निम्नलिखित कार्यक्रम अपनाए गए—(1) परिवार नियोजन कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए अनुकूल सामाजिक वातावरण तैयार करना और प्रचार करना। (2) परिवार नियोजन के कार्यों और साधारण स्वास्थ्य सेवाओं में सामंजस्य बिठाना। (3) चिकित्सा एवं स्वास्थ्य केन्द्रों के द्वारा परिवार नियोजन की सेवाओं को उपलब्ध कराना एवं गर्भ निरोधक उपकरणों का वितरण करना। (4) मेडीकल कालेजों एवं अन्य शिक्षा संस्थाओं में परिवार नियोजन प्रशिक्षण कार्यक्रमों का विकास करना। (5) परिवार नियोजन से सम्बन्धित अनुसंधान-कार्य की और अधिक सुविधाओं को उपलब्ध कराना। (6) प्रथम व द्वितीय योजना काल के अपूर्ण कार्यक्रमों को आगे बढ़ाना।

इस काल में इन कार्यक्रमों पर लगभग 24 86 करोड़ रुपए व्यय किए गए। वर्ष 1965 66 में भारत में लगभग 200 जिला परिवार नियोजन ब्यूरो थे। ग्रामीण-परिवार कल्याण नियोजन केन्द्रों की संख्या लगभग 3,675 थी। इनके अतिरिक्त ग्रामीण उप केन्द्रों की संख्या 7 080 और शहरी-परिवार नियोजन केन्द्रों की संख्या 1380 हो गई। देश में 30 प्रशिक्षण-केन्द्र स्थापित किए गए जिनमें लगभग 7,650 व्यक्तियों को नियमित (Regular) तथा लगभग 34 5 व्यक्तियों को अल्पकालीन प्रशिक्षण दिया। वर्ष 1965 66 में 'लूप' पर विशेष जोर दिया गया। लूप उत्पादन के लिए कानपुर में एक कारखाने की स्थापना की गई। इस कारखाने की दैनिक उत्पादन क्षमता 36 हजार लूप है।

वार्षिक योजनाएँ—

प्रथम वार्षिक योजना (1966 67)—इस वर्ष परिवार नियोजन कार्यक्रमों पर लगभग 15 करोड़ रुपए व्यय किए गए। सन 1966 में स्वास्थ्य और परिवार नियोजन मन्त्रालय में पृथक से एक परिवार नियोजन विभाग की स्थापना की गई। परिवार नियोजन को लोकप्रिय बनाने के लिए अनेक साधन अपनाए गए।

द्वितीय-वार्षिक योजना (1967 68)—इस वर्ष इन कार्यक्रमों पर 31 करोड़ रुपए व्यय करने का प्रावधान किया गया। इस वर्ष प्रचार का क्षेत्र और अधिक विस्तृत कर दिया गया। खनिज क्षेत्रों सामुदायिक विकास खण्डों बागानों आदि को परिवार नियोजन कार्यक्रमों में अधिक आकर्षित करने के प्रयास किए गये।

तृतीय वार्षिक योजना (1968 69)—इस वर्ष परिवार नियोजन के कार्यों पर लगभग 30 6 करोड़ रुपए व्यय किये गए। इस योजना में 30 जिला परिवार ब्यूरो 500 ग्रामीण परिवार कल्याण नियोजन केन्द्र, 4950 उपकेन्द्र और 180 शहरी परिवार नियोजन केन्द्र स्थापित करने का लक्ष्य था। इस वर्ष विवाह की आयु बढ़ाने और गर्भपात सम्बन्धी कानूनों को उदार बनाने के सम्बन्ध में विचार किया गया।

इस प्रकार म सरकारी आँकडा की तो गणना उन्नी जाती है पर वास्तविक रूप म काम कम हो पाता है। उपरोक्त बाता का जनता पर स्वभावत विपरीत प्रभाव पडता है। उसकी जिज्ञासा एव सहानुभूति को उचित माग नही मिल पाता है।[1]

देश के नेता भी इस सम्बन्ध म न तो कोई अनुकरणीय आदश प्रस्तुत कर सके हैं और न उनम से किसी न पहल ही की है। ऐसा ता सम्भव नही कि नेताओ के इस लम्ब समुदाय म दो चार भी एस न हो जिन्ह नसबन्दी क लिए न चुना जा सके। जनता का आक्रोश इन थोथे आदर्शों एव भाषणो से बढता है इसीलिय उसका विश्वास भी खण्डित होता है।[1] समाचार-पत्रो म इस आशय क ता प्राय समाचार पढन का मिलते है कि अमुक नेता न अमुक दूकान अथवा सस्था अथवा कारखान का उद्घाटन किया, अथवा अमुक नेता न परिवार नियोजन की आवश्यकता को बतलाते हुए जोरदार भाषण दिया किन्तु ऐसा समाचार पढने को नहीं मिला कि अमुक नेता न परिवार नियोजन के लिए अपना अथवा अपनी पत्नी का आपरेशन कराया।

इतना प्रचार प्रसार व विज्ञापन होन पर भी भारत की जनता म परिवार नियोजन के प्रति कितना उत्साह है यह जनता क सम्पक म आये बिना ज्ञात नही हो सकता।

भारत क वयोवृद्ध नेता श्री सी० राजगोपालाचाय ने केन्द्रीय स्वास्थ्य एव परिवार नियोजन मन्त्री डा० एस० चन्द्रशेखर और उनके गर्भ विरोध कायक्रम को भारत की नैतिकता का सबसे बडा शत्रु बतलाया है। श्री राजगोपालाचाय ने स्वराज्य म प्रकाशित एक लेख म कहा है 'मैने श्री चन्द्रशेखर को बहुत ही स्पष्ट शब्दो म कहा है कि कुल आबादी म महत्त्वपूण कमी करान म कामयाब होन से पहले ही हमार युवको की नतिकता नष्ट हो जावेगी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत म परिवार नियोजन इतना सफल नही हुआ है जितना कि उसके लिए ढिंढोरा पीटा जाता है। इस सम्बन्ध मे एक विचारधारा यह भी है कि 'भारत मे परिवार नियोजन बुरी तरह असफल हुआ है।

परिवार-नियोजन की सफलता के लिए परामश

अथवा

भारत मे जनसख्या वृद्धि रोकने के उपाय

परिवार नियोजन एक 'सामाजिक क्रान्ति' है। परिवार नियोजन अशान्ति, दरिद्रता तथा भविष्य की दुराशाओ की आशका का दमन करके, परिवार को एक स्वग की रूपरेखा देने म प्रयत्नशील है। परिवार नियोजन साधन नहीं साध्य है,

---

1 यह सामग्री भारत सरकार के योजना आयाग की ओर से निदेशक प्रकाशन विभाग भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित योजना पाक्षिक पत्रिका के 20 अक्टूबर 1969 क अक म पृष्ठ 11 पर श्री उमाशकर दुब द्वारा लिखित लेख म स्वतन्त्रतापूवक व साभार ली गई है।

एक जीवन पद्धति है। इसका सम्बन्ध जीवन-स्तर से ही नहीं वरन जीवन के मूल्यों से है। परिवार नियोजन की सफलता के लिए कुछ परामर्श निम्नलिखित हैं —

(1) **विवाह की अधिक आयु**—जनसंख्या शासन के अंतर्गत हैजनल के नियम के अनुसार अधिक आयु में विवाहित महिलाओं में संतान सम्बन्धी उर्वरता उन महिलाओं से कम होती है, जिनका विवाह कम आयु में हो जाता है। सरकार ने कानून बना कर लडकियों के लिए विवाह की आयु 15 व लडकों के लिए 18 वर्ष कर दी है जो लडकियों के लिए 20 वर्ष व लडकों के लिए 25 वर्ष कर देनी चाहिए।

(2) **प्रशिक्षण का प्रसार**—डाक्टरों व अन्य कार्यकर्त्ताओं को परिवार नियन्त्रण कार्य का प्रशिक्षण देने के लिए संस्थानों की संख्या में वृद्धि करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त यह व्यवस्था होनी चाहिए कि अधिक से अधिक व्यक्तियों में परिवार नियोजन शिक्षा का प्रसार हो।

(3) **शोध संस्थाओं की स्थापना**—भारत में परिवार नियन्त्रण एवं शोध संस्थाओं की अभी कमी है। प्रत्येक राज्य में कम से कम एक एक शोध संस्था तो अवश्य ही होनी चाहिए।

(4) **शिक्षकों की संख्या में वृद्धि**—स्वास्थ्य शिक्षकों की संख्या में वृद्धि की जानी चाहिए। स्त्रियों को भी इस कार्य के लिए भरती करना चाहिए ताकि वे घर घर जाकर स्त्रियों को संतति निरोध के लिए समझा सकें।

(5) **प्रचार में तेजी**—परिवार नियोजन के लिए वातावरण अनुकूल बनाने के लिए फिल्म बनानी चाहिए और नगरों के अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में प्रदर्शन की विशेष व्यवस्था की जानी चाहिए। समय समय पर परिवार नियोजन सम्बन्धी लेख एवं भाषण प्रतियोगिताएँ आयोजित की जानी चाहिए। शिक्षण संस्थाओं में व्याख्यान मालाएँ आयोजित की जानी चाहिए।

(6) **कर्मचारियों का विनम्र व्यवहार**—परिवार नियोजन से सम्बन्धित कर्मचारियों व अधिकारियों को अपना व्यवहार सौहार्द्रपूर्ण एवं विनम्र रखना चाहिए। उपेक्षित व्यवहार अथवा हतोत्साह करने वाले व्यवहार को कभी नहीं अपनाना चाहिए।

(7) **परिवार नियोजन का मूल्यांकन**—परिवार नियोजन कार्यक्रमों का सही मूल्यांकन करने के लिए विभाग खोलने चाहिए। आँकडे सही प्रेषित करने चाहिए।

(8) **गर्भपात नियमों में ढील**—इस समय जापान की जनसंख्या में वृद्धि की दर केवल 0 8 प्रतिशत वार्षिक है। इसका कारण यह है कि जापान में गर्भपात को वैध घोषित कर दिया गया है। हँगरी, सोवियत रूस, जर्मनी, फ्रांस आदि देशों ने भी यही रास्ता अपनाया है। इन देशों में गर्भपात के सरल एवं सुरक्षित तरीके प्रचलित किए गये हैं। भारत में प्रतिवर्ष लगभग 2 लाख स्त्रियाँ गर्भपात से मरती हैं। भारत में भी गर्भपात के सम्बन्ध में एक्ट बनाया जा चुका है। इसमें गर्भपात को वैधानिक मान्यता (विशेष परिस्थितियों में) दी गई है। मान्यता की दशाओं को

और नसबन्दी बनाना चाहिए। धर्म का एक हिस्सा अब अनैतिकता में वृद्धि की आशंका से इसका विरोध कर रहा है।

(9) बुढ़ापा पेंशन योजना—सरकार को सबसे बुढ़ापा पेंशन योजना आरम्भ कर देना चाहिए। इससे लोगों में यह विश्वास उत्पन्न होगा कि उनकी वृद्धावस्था में संतान पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा और इससे कम संतान उत्पन्न करने की भावना बढ़ेगी।

महाराष्ट्र के स्वास्थ्य मंत्री ने परिवार नियोजन करने के लिए एक नारा का प्रचलन किया है कि वह पहला बच्चा शादी के एक वर्ष बाद पैदा करें, दूसरे का स्वागत करें, तीसरे की प्रतीक्षा करें और चौथे को आने न दें। इस तरीके से 75 प्रतिशत जनसंख्या की वृद्धि गिर सकती है।

UNIVERSITY QUESTION

1. क्या आप समझते हैं कि भारत में परिवार नियोजन बुरी तरह असफल हुआ है ? अपने नये सुझाव सहित समस्या का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए।
(T D C 1969)

25

भारत में बेरोजगारी की समस्या

(Unemployment Problem in India)

विषय प्रवेश—

बेरोजगारी किसी भी देश के लिए अभिशाप है। बेरोजगारी, व्यक्ति को प्राय शारीरिक बौद्धिक नैतिक व सामाजिक पतन के कगार पर खड़ा कर देती है। यह मानव को निराश कर देती है और उसके नैतिक बल में गिरावट लाती है। अत्यधिक जन्म दर व मृत्यु दर, जनसंख्या में वृद्धि, मानसिक व सांस्कृतिक पतन, पूंजीपतियों द्वारा शोषण औद्योगिक अशांति के प्रसार आदि के लिए बेरोजगारी ही मुख्यतः उत्तरदायी है। अत्यधिक बेरोजगारी से समाज की व्यवस्था अस्त व्यस्त हो जाती है, चोरी डाके, हत्याएँ आत्महत्याएँ व्यभिचार आदि बढ़ जाते हैं और ये समाज में कोढ़ के समान लग जाते हैं। बेरोजगारी कहीं भी और किसी भी वर्ग में व्याप्त हो समाज पर वह कलंक ही है।

बेरोजगारी के कारण

भारत में बेरोजगारी के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं —

(1) जनसंख्या में तीव्रगति से वृद्धि होने के कारण विद्यमान बेरोजगार लोगों के लिए रोजगार की व्यवस्था करने के साथ साथ नये उत्पन्न होने वाले श्रमिकों के लिए काम के अवसरों का प्रबन्ध करना स्वयं ही एक समस्या हो जाती है।

(2) अधिकांश जनसंख्या (लगभग 70%) प्रत्यक्षरूप से कृषि व्यवसाय पर निर्भर है जबकि भूमि की मात्रा में वृद्धि नहीं होती।

(3) भूमि के उपविभाजन व अपखण्डन से तथा गैर-कृषकों के हाथों में उसका हस्तांतरण होने के कारण भूमि रहित कृषकों की संख्या में वृद्धि हुई है और बेरोजगारी फैली है।

(4) कृषि की मौसमी प्रकृति होने के कारण भारतीय कृषक वर्ष में औसत रूप से 150 200 दिन कार्य करता है शेष दिनों में कार्य की कोई व्यवस्था नहीं होती।

(5) कुटीर उद्योगों का पिछड़ जाना भी इस समस्या का प्रमुख कारण है।

(6) भारत में भौतिक साधनों की प्रचुरता होने हुए भी, देश में औद्योगीकरण की गति बहुत धीमी है।

(7) सामाजिक व पारिवारिक कारणों से भारतीय श्रमिकों में गतिशीलता की बहुत ही कमी है अतः जहाँ रोजगार के अवसर अधिक हैं वहाँ भी लोग नहीं पहुँचते।

(8) पूँजीवादी प्रथा के दोषों के कारण श्रमिकों का शोषण होता रहा है धनी वर्ग और अधिक धनी तथा निर्धन वर्ग और अधिक निर्धन होता रहा है।

(9) देश की दोषपूर्ण अर्थव्यवस्था के कारण, देश में आन्तरिक बचत और विनियोग की मात्रा बहुत कम है जिसके फलस्वरूप श्रमिकों के लिए रोजगार के पर्याप्त अवसरों का विकास नहीं हो पाता है।

(10) भारत में अनेक व्यक्ति इस कारण भी बेरोजगार हैं कि वे तकनीकी दृष्टि से प्रशिक्षित नहीं हैं।

(11) भारत में शिक्षा प्राप्त करने का प्रमुख उद्देश्य नौकरी प्राप्त करना होता है। शिक्षित युवक अपने पारिवारिक धन्धे या स्वतन्त्र धन्धा नहीं करना चाहते। देश की शिक्षा प्रणाली का नियोजित आर्थिक विकास से आवश्यक ताल मेल नहीं हो पाया है।

(12) देश की तीन पंचवर्षीय योजना अवधि समाप्त हो चुकी हैं चौथी चल रही है। इनमें बेरोजगारी दूर करने के लिए योजनाएँ बनाई गई किन्तु इनके परिणामों से भ्रम होने की सम्भावना रहती है कि शायद ये योजनाएँ बेरोजगारी प्रसार की योजनाएं थी, क्योंकि प्रति पंचवर्षीय योजना के अन्त में बेरोजगारों की संख्या में बहुत वृद्धि हुई है।

बेरोजगारी का आकार

भारत में बेरोजगारी एवं अल्प रोजगार की समस्या गम्भीर रूप धारण किए हुए है। ग्रामीण क्षेत्रों में अल्प रोजगार की समस्या प्रधान है तो नगरों में बेरोजगारी का भयंकर रूप है। ये दोनों एक दूसरे से गुँथे हुए हैं क्योंकि जब ग्रामीण क्षेत्रों में अल्प रोजगार की स्थिति विषम हो जाती है तो अनेक व्यक्ति रोजगार की तलाश में नगरों की ओर पलायन करने लगते हैं और वहाँ उनके पहुँचने पर बेरोजगारी की समस्या और भी खराब हो जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में अशिक्षित एवं अदक्ष श्रम की बेरोजगारी की समस्या प्रधान है तो नगरों में शिक्षित व दक्ष श्रम की बेरोजगारी की प्रधान समस्या है।

भारत में बेरोजगारी निरन्तर विकराल रूप धारण कर रही है। प्रथम योजना के आरम्भ में बेरोजगारों की अनुमानित संख्या 33 लाख थी किन्तु इनकी संख्या में लगातार वृद्धि के कारण योजना कालों में स्थिति और खराब हो गई जैसा कि तालिका से स्पष्ट है।

योजना	बेरोजगारी
प्रथम योजना (आरम्भ मे)	33 लाख
द्वितीय योजना (अन्त मे)	70 लाख
तृतीय योजना (अन्त मे)	90 लाख
चतुर्थ योजना (अन्त मे)(अनु०)	230 लाख

उपरोक्त आँकड़ों को देखने से ज्ञात होता है कि भारत में बेरोजगारी की दीर्घकालीन प्रवृत्ति वर्द्धन की ओर है। अनुमान है कि चतुर्थ योजना काल के अन्त में देश में लगभग एक लाख इन्जीनियर बेकार हो जायेंगे।

बेरोजगारी की समस्या को हल करने के उपाय

भारत में बेरोजगारी की समस्या काफी पुरानी है और यह समस्या भारतीय अर्थव्यवस्था का स्थायी अंग बन गई प्रतीत होती है अतः अल्पकाल में तो इस समस्या को पूर्णतः हल करने का कोई उपाय दिखाई नहीं देता, क्योंकि देश में अनेक बड़े-बड़े अर्थशास्त्री, समाजसेवी, राजनीतिक नेता एवं सरकार अभी तक तो बेरोजगारी की समस्या को हल करने के लिए कोई अल्पकालीन उपाय खोज नहीं पाये, जिसके द्वारा देश के समस्त व्यक्तियों को (अल्पकाल में) रोजगार मिल जाय। बेरोजगारी सभी देशों में है किन्तु उसकी तीव्रता एवं मात्रा में अन्तर है किन्तु विश्व के किसी भी देश की सरकार या अर्थशास्त्री अभी तक अल्पकाल में बेरोजगारी पूर्णतः समाप्त नहीं कर पाये हैं।

भारत में बेरोजगारी, जैसा कि ऊपर संकेत किया जा चुका है, देश की अर्थव्यवस्था का स्थायी अंग बन गई है। बेरोजगारी को समूल एवं पूर्णतः हटाना सम्भव प्रतीत नहीं होता किन्तु इसकी तीक्ष्णता व मात्रा में पर्याप्त कमी की जा सकती है। बेरोजगारी की समस्या को हल करने के लिए निम्नलिखित प्रमुख उपाय हैं —

(1) जनसंख्या वृद्धि पर प्रभावपूर्ण नियन्त्रण—भारत में जनसंख्या की वृद्धि तेज गति से हो रही है उतनी ही अथवा उससे तेज गति से रोजगार के अवसर उपलब्ध होने चाहिए किन्तु हो नहीं रहे हैं और वर्तमान परिस्थितियों में सम्भव भी प्रतीत नहीं होता है। तेज गति से जनसंख्या वर्द्धन के कारण बेरोजगारी की समस्या और जटिल होती जा रही है इसलिए जनसंख्या की वृद्धि पर प्रभावपूर्ण नियन्त्रण लगाना अति आवश्यक है। इस समय भारत में जनसंख्या की वृद्धि की दर लगभग 2.5 प्रतिशत वार्षिक है जिसे घटाकर 1980-81 में 1.7 प्रतिशत और सन् 2000 में 1.2 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा गया है। यदि यह लक्ष्य सफल हो भी गया तो अनुमान है कि सन् 2000 में भारत की जनसंख्या 90 करोड़ के लगभग होगी।

(2) जनशक्ति नियोजन—रोजगार की समस्या को हल करने के लिए जनशक्ति के उचित नियोजन की बहुत आवश्यकता है। जनशक्ति नियोजन इस प्रकार का होना चाहिए कि भावी माँग का ठीक अनुमान लगाकर पूर्ति की व्यवस्था की जानी चाहिए। यदि नियोजन में त्रुटि के कारण भविष्य में दक्ष श्रमिकों की कमी रही तो अर्थव्यवस्था के विकास में कठिनाई होगी। भारत में जनशक्ति नियोजन त्रुटिपूर्ण है। वर्ष 1965-66 तक देश में इन्जीनियरों की कमी बताई जाती थी, लेकिन पिछले दो तीन वर्षों से इन्जीनियरों में भयंकर बेरोजगारी फैल गई है।

डॉक्टरो की यदि कमी कमा बताई जाती है तो कभी अधिकता । इसी प्रकार कृषि स्नातको तथा पशु चिकित्सको में भी निराशा की भावना दिखाई पड़ती है । यह सब जनशक्ति नियोजन की कमी का परिणाम है ।

(3) ग्रामीण औद्योगीकरण—विभिन्न नदी घाटी योजनाओ का सफलता के कारण अब ग्रामीण क्षेत्रा म भी विद्युतीकरण का सुविधाएँ उपलब्ध हो गई हैं अत अब वहाँ लघु व मध्यम श्रेणी के उद्योगो की स्थापना एव विस्तार की परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गई हैं । अत विभिन्न ग्रामीण उद्योगो का विकास करके वहाँ लोगो को रोजगार दिया जा सकता है ।

(4) कृषि के सहायक धन्धो का विकास—भारतीय कृषक वर्ग म लगभग 150 से 200 दिन ही काम करता है अत पशुपालन मुर्गीपालन मधु मक्खी पालन उद्योगो को प्रोत्साहन देना चाहिए ।

(5) हरी क्रान्ति और रोजगार की सम्भावनाएँ—भारतीय कृषि टेक्नोलॉजी के निम्न स्तर को छोडकर उच्च स्तर की ओर बढ रही है । कृषि म अधिक उपज देने वाली किस्मो और बहु फसल कायक्रमो म काफी सफलता मिली है । कृषि का व्यवसायीकरण हो रहा है जिसके कारण कृषिगत विनियोग म वृद्धि होगी । इन सबके फलस्वरूप अधिक रोजगार की सम्भावनाए बढ रही हैं ।

(6) निर्माण कार्यों पर जोर—नदी घाटी योजनाओ सडक पुल, भवन ट्यूबवल, पार्क आदि निर्माण कार्यों म वृद्धि करनी चाहिए । इसस लोगो को रोजगार भी मिलेगा और देश का विकास भी होगा ।

(7) शिक्षा प्रणाली मे सुधार—प्राय स्कूल व कालेजो को लिपिक (clerk) तैयार करने वाले कारखाने कह दिया जाता है । देश की शिक्षा प्रणाली वैज्ञानिक, यान्त्रिक तथा व्यावसायिक होनी चाहिए न कि केवल सैद्धान्तिक । शिक्षा इस प्रकार की हो, जिससे अध्ययन के पश्चात् स्वय अपने रोजगार की व्यवस्था कर सकें ।

(8) श्रम की गतिशीलता मे वृद्धि—श्रम की गतिशीलता म वृद्धि होनी चाहिए और इसके लिए श्रमिको को सूचना शिक्षा तथा सुविधाए मिलनी चाहिए ।

(9) सामाजिक परिवतन—सयुक्त परिवार प्रणाली जाति प्रथा, छुआ छूत व सामाजिक असमानताओ के कारण भी बेरोजगारी की समस्या है । इन बन्धनो का प्रभाव कम होता जा रहा है और भविष्य मे और भी कम हो जावेगा ।

(10) दृष्टिकोण मे परिवतन—युवको मे विशेषत मध्यम व उच्च श्रेणियो के शारीरिक श्रम के प्रति उत्साह उत्पन्न कराना चाहिए ।

(11) रोजगार कार्यालयो का विस्तार—रोजगार कार्यालयो की काय विधि म सुधार की आवश्यकता है । नियोक्ताओ व जनता को चाहिए कि इन रोजगार कार्यालयो को अपना पूर्ण सहयोग दे ।

(12) सही आँकडो का प्रकाशन—भारत म बेरोजगारी के सम्बन्ध मे सही

आंकडे उपलब्ध नही होने के कारण बरोजगारी की सही स्थिति का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। जब सही स्थिति का ही ज्ञान न हो तो समस्या का ठीक निराकरण भी नही हो सकता। बकारी सम्बन्धी सही आंकडा के प्रकाशन एव प्रसार की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

UNIVERSITY QUESTION

1 भारत म बेरोजगारी की समस्या पर आलोचनात्मक प्रकाश डालिये। अल्प काल म बरोजगारी की समस्या के हल के लिए प्राथमिकता के आधार पर पाँच अत्यन्त महत्वपूण उपायो के सुझाव दीजिये।

(T D C Suppl 1969)

26

भारतीय यातायात की प्रमुख समस्याएँ

विषय प्रवेश—

एक विद्वान ने कहा है यदि कृषि और उद्योग राष्ट्ररूपी प्राणी के शरीर और हड्डिया हैं तो यातायात उनके जीवन तन्तु हैं। किसी भी देश का आर्थिक विकास वहाँ के विकसित यातायात के साधनो पर काफी अशो तक निभर होता है। देश की आर्थिक सामाजिक एव राजनतिक प्रगति म यातायात के साधनो का बहुत महत्त्व होता है। कच्चे अद्धनिर्मित व निर्मित पदार्थ और श्रमिको व पजी को एक स्थान स दूसरे स्थान पर लाने ले जाने मे यातायात के साधन ही काम म लाए जाते हैं।

यातायात की प्रमुख समस्याएँ

भारत मे यातायात मुख्यत निम्न साधनो द्वारा होता है —(I) रेल माग (II) सडक माग (III) जल माग (IV) वायु माग। अब हम प्रत्यक की समस्याओ तथा उनके हल के विषय म उल्लख करेंगे।

(I) रेलो की प्रमुख समस्याएँ एव उनके हल—

भारत म यातायात के साधनो मे रेलो का अत्यन्त महत्त्वपूण स्थान है। भारत मे इस समय लगभग 59 550 किलोमीटर लम्बे रेल माग हैं।[1] यही नहीं भारत का रेल माग एशिया म सबसे बडा है व ससार मे इसका दूसरा स्थान है। भारतीय रेलो की प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित है —

(1) रेल मार्गों की कमी—यद्यपि भारतीय रेल माग का लम्बाई की दृष्टि से विश्व मे दूसरा स्थान ह कि तु दश की विशालता को दखते हुए यह कम है। जापान मे प्रति वगमील म 3 मील लम्बा रेलमाग है जबकि भारत म 0 8 मील। इसके अतिरिक्त देश के समस्त भाग रेलो द्वारा नहो जुड हुए हैं। अनेक गाँव तो ऐसे हैं जो रेल माग से पचासो मील दूर हैं। जसलमेर क्षेत्र म तो रलो का नितान्त अभाव ही है। पाकिस्तान न भारत पर जब आक्रमण किया था तो भारतीय फौजो को

---

1 *India 1970* p 394

जसलमेर क्षेत्र के सीमावर्ती स्थानो पर पहुचने म बहुत कठिनाई व समय लगा था अत अब वहाँ रेल-माग बनाए गये हैं।

सरकार को चाहिए कि खनिज, औद्योगिक व व्यापारिक स्थानो को रेल माग द्वारा जोडन को प्राथमिकता दे।

(2) रेल दुघटनाएँ—भारतीय रेल क्षेत्रा म दुघटनाएँ अधिक होती हैं। इसका एक कारण यह है कि भारतीय रेलो म अभी तक पूरी तरह स्वचालित-यन्त्रो का प्रयोग नही हुआ है, गाडियो को सिगनल देन पटरी बदलने आदि काय मानव शक्ति द्वारा होना है, जिससे भूल की सभावना अधिक रहती है। इसके अतिरिक्त रेल लाइनें व पुल आदि बहुत पुराने हैं। अत दुघटना होन की सभावनाएँ अधिक रहती हैं। हडतालो व उपद्रवो के अन्तगत कभी-कभी रेल के डिब्बे व स्टेशन आदि जला दिये जाते हैं जिससे करोडो रुपया की क्षति होती है।

इस समस्या का हल करन के लिए सरकार रेलो का स्वचालित यत्रीकरण करन की दिशा म काय कर रही है किन्तु आर्थिक व टैक्नीकल कारणो से समय लगेगा। इसके अतिरिक्त सरकार दोहरी लाइनें भी बिछा रही है। तृतीय पचवर्षीय योजना काल म लगभग 3 230 किलोमीटर रेल माग को दोहरा किया गया है। राष्ट्रीय भावना की कमी के कारण रेल के डिब्बे व स्टेशन आदि जला दिये जाते हैं अत राष्ट्रीय भावना की जागति आवश्यक है। राष्ट्र की सम्पत्ति हम सबकी सम्पत्ति है।

(3) भ्रष्टाचार की समस्या—भ्रष्टाचार भारतीय रेलो की प्रमुख समस्या है। सामान आदि की चोरी पग पग पर घूसखोरी आदि प्रमुख समस्याएँ हैं। वक शापो मे लाखो रुपयो का माल चोरी से निकल जाता है। स्टेशन पर रेलवे बिल्टी बनवाने व मालगाडी के डिब्बे उपलब्ध करवान आदि के लिए अधिकतर घूस ली जाती है।

इस समस्या को रोकन क लिए सरकार ने अनक प्रयत्न किये हैं किन्तु भ्रष्टाचार तो मानो हमारे दनिक जीवन का अग ही बन गया है अत इस समस्या को हल करना अभी तो असम्भव दिखाई पडता है, क्योंकि ऊपर स नीचे तक प्राय सभी कमचारी भ्रष्टाचार मे लिप्त हैं व जनता भी उनको प्रोत्साहित करती है।

(4) बिना टिकट यात्रा की समस्या—भारतीय रेलो म हजारो लोग प्रतिदिन बिना टिकट चलते हैं जिससे रेलो को प्रतिदिन लाखो रुपयों की हानि होती है। बहुत से लोग तो टिकट निरीक्षक आदि को कम पसे देकर यात्रा कर लेते हैं। बहुत बडे स्टेशनो के अतिरिक्त लोग प्लेटफाम टिकट नही लेते।

यात्रियो को चाहिए कि बिना टिकट यात्रा न करें व रेल विभाग को भी निरीक्षण आदि का काय और कठोर कर देना चाहिए।

(5) बहुत अधिक भीड भाड—रेलो म यात्रियो की भीड बहुत बढ़ती जा रही है जिसके फलस्वरूप अनक यात्रियो को रेलगाडी म बठन तक को स्थान नही

भारत म किराए पर चलने वाली मोटर गाडियो की सख्या बहुत कम है। इसके अतिरिक्त उनको दूर के स्थानो तक चलाने की अनुमति नही है। इस कारण मोटर यातायात का विकास अधिक नही हुआ है।

सरकार को चाहिए कि मोटर-यातायात के विकास के लिए उदारता से नीति बनावे और साथ ही साथ शर्तों को उतना कठिन न रखे।

(3) रेल सडक प्रतियोगिता—आज भारत म रेल सडक यातायात मे कठोर पारस्परिक प्रतिस्पर्धा है। इससे दोनो के विकास पर ही विपरीत प्रभाव पडता है। आदश नीति तो वह है जिसम रेल व सडक एक दूसरे के पूरक के रूप म काय करे। रेल तथा सडक यातायात के बीच सामजस्य स्थापित करने की बहुत आवश्यकता है।

(4) राष्ट्रीयकरण की समस्या—भारत के सडक-यातायात के सामने राष्ट्रीयकरण की समस्या भी है। निजी क्षेत्र इसके राष्ट्रीयकरण की आशका से आकर्षित नही होता वे काम चलाऊ वाहन ही रखते हैं। उच्च कोटि के वाहन रखने के लिए प्रेरित नहा होते।

अत सरकार को चाहिए कि सडक यातायात के सम्बन्ध म अपनी नीति स्पष्ट रूप स घोषित करदे ताकि अनिश्चितता की स्थिति समाप्त हो जाय और इसके विकास की ओर पूरा ध्यान दिया जा सके।

(III) जल यातायात की समस्याएँ एव उनके हल—

अन्य देशो ने जल यातायात मे काफी अधिक विकास किया है किन्तु भारत इस दिशा म बहुत पिछडा हुआ है। सयुक्त राज्य अमरीका जापान, इगलण्ड जमनी, फ्रान्स, सोवियत रूस आदि देशो ने जल यातायात म काफी प्रगति की है। किन्तु भारत इस दिशा म काफी पिछडा हुआ है। भारत म इस समय (1967 म) जल यातायात के लिए लगभग 8 800 Kms जल माग हैं जिनम गगा, ब्रह्मपुत्र व उनकी सहायक नदियो के जल माग प्रमुख हैं। भारतीय जल यातायात की प्रमुख समस्याएँ व हल निम्नलिखित हैं —

(1) जल मार्गो की कमी—भारत म जल मार्गों की बहुत कमी है। देश म लगभग 8 800 Kms लम्बे जल-माग हैं जो देश के विस्तार को देखते हुए बहुत कम हैं। दक्षिणी भारत की अधिकाश नदियाँ जल यातायात के लिए अनुपयुक्त हैं। भारत की नदिया म वर्ष भर इतना पर्याप्त पानी नहा रहता कि इनम छोटे जहाज अथवा स्टीमर्स चल सकें। भारत की नहरें भी यातायात के योग्य नहा हैं।

भविष्य म नहरो का निर्माण यातायात की दृष्टि म भी करना चाहिए।

(2) बन्दरगाहो की कमी—भारत म इस समय केवल सात बड बन्दरगाह (Major Ports) हैं और 225 छोटे बन्दरगाह (Minor Ports) हैं जिनम से केवल 150 बन्दरगाह ही चालू हैं। देश का विभाजन होने के फलस्वरूप कराची म बन्दरगाह पाकिस्तान म चले गये। अत बन्दरगाहो के सुधार एव विकास की बहुत आवश्यकता है।

(3) **जहाजों की कम ढुलाई क्षमता**—भारत म जहाजो की ढुलाई क्षमता अन्य देशो की तुलना म बहुत कम है। सन् 1961 म यह क्षमता लगभग 5 लाख टन थी जो 1966 म बढकर लगभग 15 5 लाख टन हो गई, जो अब भी कम है। सरकार न चौथी पचवर्षीय योजना म 15 लाख टन ढुलाई-क्षमता और बढ़ान का प्रस्ताव रखा है। इस प्रकार चौथी योजना के अन्त तक देश म जहाजों की ढुलाई क्षमता लगभग 0 लाख टन हो जायगी।

(4) **जहाजों का कमी**—सन 1966 म भारत के पास 217 जलयान थ जिनम स 104 जलयान तटीय-व्यापार म लगे हुए थ व 113 जलयान विदेशी-व्यापार म लगे हुए थ। अत भारत को और अधिक जहाजो को प्राप्त करना चाहिए।

(5) **जहाज निर्माण की धीमी प्रगति**—भारत मे जलयान निर्माण की गति बहुत ही धीमी है। अभी केवल विशाखापट्टनम शिपयार्ड म जलयानो का निर्माण होता है। इस शिपयार्ड का नियन्त्रण हिन्दुस्तान शिपयार्ड लि० के पास है। सरकार न सन् 1952 म इस पर अपना अधिकार कर लिया है। जहाजरानी बोर्ड के अध्यक्ष ने बतलाया है कि भारत म जहाजो का निर्माण नहीं के बराबर है। उन्होने बताया कि स्वीडन जसे छोटे देश ने 70 दिन म 70 हजार टन क्षमता वाला जहाज बना डाला किन्तु भारत अनेक वर्षों म केवल 20 हजार टन भार क्षमता वाला एक जहाज ही बना सका है। सरकार को चाहिए कि जलयान बनान के लिए अन्य शिपयार्ड स्थापित करे। कोचीन मे एक नया शिपयार्ड स्थापित किया जा रहा है।

(6) **विदेशी कम्पनियों की प्रतियोगिता**—भारत के स्वतन्त्रता प्राप्त करने क पूर्व सम्पूर्ण भारतीय जहाजरानी पर विदेशी कम्पनियो का एकाधिकार था। भारतीय कम्पनियों मे उनस प्रतिस्पर्द्धा करन की क्षमता नहीं थी। स्वतन्त्रता क पश्चात् भारत सरकार न तटवर्ती जहाजरानी (Coastal Shipping) पूर्णतया भारतीय कम्पनियों के लिए सुरक्षित कर दी है किन्तु शेष म उन्हे विदेशी प्रतिस्पर्द्धा का बडा मुकाबला करना पडता है। इस समय भारत म लगभग 40 जहाजी कम्पनियाँ हैं जिनम से केवल 6 कम्पनियाँ—सिंधिया स्टीम नवीगेशन कम्पनी, जयन्ती शिपिंग कम्पनी इण्डियन स्टीमशिप क०, ग्रेट ईस्टर्न शिपिंग क० रत्नाकार शिपिंग क० और चौगुल स्टीमशिप क०—तटीय एव विदेशी व्यापार म लगी हुई हैं।

जहाजरानी बोर्ड के अध्यक्ष के अनुसार भारत को समुद्रीय रास्ते से यातायात पर प्रतिवर्ष 1 85 अरब रुपय व्यय करन पडत है जिसम से भारतीय जहाजरानी को केवल 40 स 45 करोड रुपय ही मिल पाते हैं शेष 1.4 अरब रुपये की राशि विदेशी जहाजो को माल ढुलाई देने पडते हैं। अत हमको अपनी जहाजी क्षमता म बहुत वृद्धि करनी चाहिए।

(IV) वायु यातायात की समस्याएँ एव उनके हल—

आज क प्रगतिशील युग म द्रुतगामी यातायात का महत्व बढ़ता जा रहा है, किन्तु खद है कि इस दिशा म भी हम विश्व के उन्नत देशो की तुलना म बहुत पिछडे

हुए हैं। यद्यपि वायु-यातायात की अधिकांश समस्याओं का समाधान राष्ट्रीयकरण के पश्चात् हो गया है किन्तु फिर भी भारत में इसकी प्रगति सन्तोषजनक नहीं कह सकते। वायु यातायात की प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं —

(1) अधिक व्ययशील—वायु-यातायात काफी मँहगा है। साधारण एवं मध्यम वर्ग के व्यक्ति तो इसका साधारणतया प्रयोग कर ही नहीं पाते। यह समस्या बनी ही रहेगी। देश का औद्योगिक पर्याप्त विकास हो जाने के पश्चात् यातायात का यह साधन अधिक लोकप्रिय हो सकेगा।

(2) हल्के माल के लिए ही उपयुक्त—वायु यातायात के सम्मुख दूसरी प्रमुख समस्या यह है कि यह भारी माल के यातायात के लिए अनुपयुक्त है। इसके द्वारा तो हल्की व मूल्यवान वस्तुएँ ही लाई ले जाई जा सकती हैं। भीमकाय मशीनें व कम मूल्य के माल के लिए यह साधन उपयुक्त नहीं है।

(3) हवाई अड्डों की कमी—भारत में आधुनिक सुविधाओं से सम्पन्न अच्छे हवाई-अड्डों की कमी है। भारत में यद्यपि इस समय 14 हवाई अड्डे हैं जो नागरिक उड्डयन के लिए खुले हैं किन्तु केवल 4 हवाई अड्डे ही बहुत अच्छी दशा में हैं।

(4) विदेशी प्रतिस्पर्द्धा—अनेक विदेशी कम्पनियों के वायुयान भी भारत होकर जाते हैं अतः भारतीय वायु-यातायात को उनसे प्रतिस्पर्द्धा करनी पड़ती है।

(5) अच्छे वायुयान की कमी—भारत के पास जो वायुयान हैं उनमें से अनेक पुराने हो चुके हैं। विदेशों से जेट यान उपलब्ध की जा रही है।

(6) वायुयान निर्माण की धीमी प्रगति—बंगलौर में वायुयान बनाने का बड़ा कारखाना है, किन्तु अनेक कल पुर्जे विदेशों से मँगाने पड़ते हैं। भारत में वायुयान निर्माण की मन्द गति है। यद्यपि भारत में निर्मित नैट हवाई-जहाजों ने पिछले पाकिस्तानी आक्रमण के समय पाकिस्तानी श्रेष्ठ जहाजों को भी धड़ाधड़ मार गिराया था, किन्तु देश की आवश्यकता को देखते हुए भारत में वायुयान निर्माण की मन्द गति ही है।

(7) विमान अपहरण की समस्या—यह एक नवीन समस्या है। भारतीय एयरलाइन्स का एक वायुयान (जनवरी) 1971 में दो पाकिस्तानी एजेण्टों द्वारा अपहरण करके लाहौर ले जाया गया। इसके पूर्व भी विश्व के अन्य देशों के कुछ वायुयानों का अपहरण हो चुका है। इसके समाधान के लिए वायुयानों का अपहरण के विरुद्ध बीमा कराना चाहिए एवं यात्रियों की जाँच-पड़ताल प्रभावशील ढंग से करनी चाहिए।

भारत में वायुयान निर्माण एवं वायु-यातायात सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector) में है।

UNIVERSITY QUESTION

1 भारतीय यातायात की मुख्य समस्याएँ क्या हैं ? इनका उचित हल क्या हो सकता है ? (T D C, 1967)

[What are the main problems of Transport in India today ? How may they be best solved ?]

27

आवागमन के मार्ग
(रेल-मार्ग)

प्रारम्भिक—

जिस प्रकार मानव शरीर में स्नायु प्रणाली महत्त्वशील है उसी प्रकार बल्कि उससे भी अधिक महत्त्व देश के आर्थिक जीवन में यातायात के साधनों का है। आधुनिक काल में किसी देश की आर्थिक औद्योगिक प्रगति बहुत अंशों तक वहाँ के आवागमन के मार्गों तथा साधनों के विकास पर अवलम्बित है। अतः कहा जाता है कि 'यदि कृषि और उद्योग राष्ट्ररूपी प्राणी के शरीर और हड्डियाँ हैं तो यातायात उसके जीवन तन्तु हैं। कच्चे, अर्द्धनिर्मित तथा निर्मित माल और श्रमिकों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में आवागमन के मार्गों का अत्यन्त महत्त्वशील स्थान है। यदि आवागमन के मार्ग विकसित नहीं होते तो आधुनिक कारखानों तथा उत्पादन का विकास असम्भव ही होता।

आवागमन के मार्ग

आवागमन के तीन मार्ग होते हैं —

(I) स्थल मार्ग—इसमें रेल, सड़कें और कच्चे मार्ग सम्मिलित हैं। रेल मोटर, ट्राम गाड़ी, पशु और मनुष्य प्रमुख साधन हैं।

(II) जल मार्ग—समुद्र नदी नहर और झीलों के मार्ग इनके अन्तर्गत आते हैं। जलयान और नाव प्रमुख साधन हैं एवं

(III) वायु-मार्ग—इनके लिए वायु मार्ग हैं। वायुयान यातायात का साधन है।

(I) स्थल-मार्ग

इस अध्याय में हम केवल (स्थल मार्ग के अन्तर्गत) रेल मार्ग का ही अध्ययन करेंगे।

रेल मार्ग (Railways)

वास्तव में देशी व्यापार तथा विदेशी व्यापार में रेलें बहुत ही महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई हैं। भारी और बड़ी वस्तुओं को दूर स्थानों को ले जाने में रेलें अपना प्रतिद्वन्द्वी नहीं रखतीं। भारत में लगभग 80% माल तथा 70% यात्री रेलों द्वारा ले जाते हैं।

भू०, 32

सक्षिप्त इतिहास—

भारत म सवप्रथम रेल बनान का प्रस्ताव सन् 1844 म हुआ था। हमार दश म सवप्रथम रेलवे लाइन, जी० आई० पी० रेलवे कम्पनी ने (16 अप्रल) मन् 1953 म बम्बई स कल्याण तक बनाई थी। इस लाइन पर भारत म सवप्रथम रेलवे 1853 म बोरीब दर (बम्बई) से 34 Kms ($21\frac{3}{4}$ मील) दूर थाना नामक स्थान तक चलाई गई। वास्तव म यह ट्रेन भारत म ही नहीं पूरे एशिया मे चलने वाली पहली ट्रेन थी। इसके पश्चात सन् 1854 म हावडा स रानीगज तक 193 Kms लम्बी रेलवे लाइन ईस्ट इण्डिया रेलवे कम्पनी न बनाई। सन 1859 म मद्रास से अरकोनम तक 63 Kms लम्बी रलवे लाइन बिछाइ गई। इसक पश्चात 1859 और 1870 क मध्य 8 रेलवे कम्पनिया ने धडाधड रेल मार्गों का निर्माण करना आरम्भ किया। तत्पश्चात अंग्रेज सरकार तथा कुछ देशी राज्यो ने भी रेल माग बनान आरम्भ कर दिये। सन् 1944 म भारतीय रलो का स्वामित्व भारत सरकार ने ले लिया।

निम्न तालिका सन 1853 से भारतीय रेल माग के विकास को बतलाती है —

वष	किलोमीटर	वष	किलोमीटर
1853 54	32	1950 51	54,845
1923 24	61 190	1955 56	55 900
1933 34	69 126	1960 61	56,247
1943 44	65 198	1965 66	58 399
1947 48	54 814	1968 69	59 553

[यह ध्यान रहे कि सन 1937 म ब्रह्मा की रेलें भारत से अलग हो गई। अत 1943 44 म रेलो की लम्बाइ कम है। सन 1947 48 म देश का विभाजन हो जान क कारण लम्बाइ मे कमी हो गई है।]

भारत की रेलो का विश्व मे स्थान[1]—

भारत म इस समय रेल मार्गों की कुल लम्बाई 59 553 Kms है। भारत का रेलमाग एशिया में सबसे बडा तथा ससार मे इसका दूसरा स्थान है। सयुक्त राज्य अमरीका का प्रथम स्थान है। सम्पूण दश म लगभग 662 Kms का ही एसा रेल माग है जिस निजी कम्पनियाँ चलाती हैं शेष सम्पूण रेलवे व्यवस्था सरकार क अधीन है। रेल मार्गों की लम्बाई के अनुमार भारत को रेलवे एशिया म सबस बडी है द्वितीय स्थान चीन का है और तृतीय स्थान जापान का।

उपरोक्त तालिका का देखन से ज्ञात होता है कि भारत के रेल माग का लम्बाइ

---

1 *India 1970*, p 394

की दृष्टि मे विश्व के देशा म दूसरा स्थान है, किन्तु किसी देश में रेल माग के विकास की तुलना उस देश क क्षत्रफल एव उस देश की जनसख्या क अनुपात से करनी चाहिए। इस दृष्टि से भारत अन्य देशा की तुलना म पर्याप्त पीछे रह जाता है।

विभाजन के पश्चात

भारत म अगस्त 1949 स पूव 37 रलव कम्पनिया था जिनम म प्रमुख नौ रेलवे था। उनके नाम और उनकी लम्बाई कि० मी० (कोष्ठक मे मील म) म बताई गई है —

(1) ईस्ट इण्डियन रेलवे—7,008 Kms (4,380 मील)—यह भारत की सबसे बड़ा लाइन था।

(2) बगाल नागपुर रेलवे—5 416 Kms (3 388 मील)

(3) बम्बई बड़ोदा एण्ड सेण्ट्रल इण्डिया रेलवे—5 421 Kms (3,404 मील)

(4) ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे—5 698 Kms (3 561 मील),

(5) मद्रास एण्ड सदन मराठा रेलवे—4 776 Kms (2 985 मील),

(6) साउथ इण्डियन रेलवे—3,922 Kms (2 439 मील),

(7) अवध तिरहुत रेलवे—4 917 Kms (4 073 मील)

(8) असम रेलवे—1 982 Kms (1 239 मील)

(9) ईस्टन पजाब रेलवे—3 006 Kms (1 879 मील)।

रेलों का पुनगठन—

समस्त भारतीय सघ की रेल 1 अप्रैल 1950 से भारत सरकार के केन्द्रीय रेलवे विभाग के नियन्त्रण म आ गई। रेला के पुन वर्गीकरण का काय माच 1951 स आरम्भ हुआ। रेलव बार्ड ने भारतीय रेला का 6 क्षेत्रो म विभाजित करन की योजना बनाई थी।

14 अप्रैल 1951 को मद्रास दक्षिणी मरहठा रेलव दक्षिण भारत रेलवे तथा मसूर स्टेट रेलवे को मिलाकर दक्षिण रेलवे का गठन हुआ। इसके पश्चात 5 नवम्बर 1951 को केन्द्रीय रेलवे और 'पश्चिमी रेलव का गठन हुआ। शेष तीन रेलवे का उदघाटन 14 अप्रल 1952 को हुआ।

भारत म आजकल रेलवे के नौ समूह हैं। उनके नाम तथा सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है —(1) उत्तर रलवे (Northern Railway) (2) उत्तरी-पूर्वी रलव (North Eastern Railway), (3) पूर्वोत्तर सीमान्त रेलवे (North East Frontier Railway) ( ) पश्चिमी रेलव (Western Railway) (5) मध्य रेलव (Central Railway) (6) दक्षिणी रलव (Southern Railway) (7) पूर्वी रलव (Eastern Railway) (8) दक्षिणी-पूर्वी रेलवे (South Eastern Railway) एव (9) दक्षिण मध्य रेलव।

भारत की वतमान रेलों का विवरण निम्न तालिका से स्पष्ट है —

भारत में रेलें[1]

समूह	स्थापना की तिथि	सम्मिलित की गई रेलें	प्रधान कार्यालय	लम्बाई Kms में 31 मार्च 1969 को
(1) उत्तरी रेलवे	14 अप्रैल 1952	(1) ईस्टर्न पंजाब (2) जोधपुर (3) बीकानेर (4) ईस्ट इण्डिया रेलवे के तीन ऊपरी भाग	दिल्ली	ब्राडगेज 6 889 मीटर 1,432 नैरो 260
(2) उत्तरी पूर्वी रेलवे	14 अप्रैल 1952	(1) अवध व तिरहुत रेलवे (2) बी बी एण्ड सी आई रेलवे का फतहगढ क्षेत्र	गोरखपुर	ब्राडगेज 52 मीटर 4,913 नैरो —
(3) पूर्वोत्तर सीमान्त रेलवे	15 जनवरी 1958	उत्तरी-पूर्वी रेलवे का पूर्वी भाग	मालीगाओ (गोहाटी)	ब्राडगेज 645 मीटर 2 900 नैरो 87
(4) मध्य रेलवे	5 नवम्बर 1951	(1) ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे (2) निजाम स्टेट (3) सिंधिया (4) धौलपुर रेलवे	बम्बई	ब्राडगेज 4,593 मीटर 383 नैरो 796
(5) पश्चिमी रेलवे	5 नवम्बर 1951	(1) बी बी एण्ड सी आई रेलवे का अधिकांश भाग (2) सौराष्ट्र (3) कच्छ (4) जयपुर रेलवे	बम्बई	ब्राडगेज 2 761 मीटर 6 079 नैरो 1 202

[1] *India 1970* p 395
ब्राड मीटर व नैरो गेज में एक पटरी दूसरी से क्रमश 1 67 मीटर अथवा 5 6 1 मीटर अथवा 3 ⅜ और 0 762 मीटर अथवा 2 6 (तथा कहीं कहीं 0 7610 अथवा 2 6) दूर होता है।

(6) दक्षिणी रेलवे	14 अप्रैल 1951	(1) मद्रास एण्ड साउथ मरहठा रेलवे (2) साउथ इण्डिया (3) मसूर रेलवे	मद्रास	ब्राडगज मीटर नैरो	2,334 4,795 153
(7) पूर्वी रेलवे	1 अगस्त 1955	ईस्ट इण्डियन रेलवे (ऊपरी तीन भागों को छोड़कर)	कलकत्ता	ब्राडगज मीटर नैरो	4,013 — 131
(8) दक्षिण पूर्वी रेलवे	1 अगस्त 1955	बंगाल-नागपुर रेलवे	कलकत्ता	ब्राडगज मीटर नैरो	5,323 — 1,479
(9) दक्षिण मध्य रेलवे	2 अक्टूबर 1966	(1) मध्य रेलवे का शोलापुर विभाग (2) दक्षिण रेलवे का सिकन्दराबाद विभाग	सिकन्दराबाद	ब्राडगज मीटर नैरो	2 606 3 183 370

(1) उत्तरी रेलवे (Northern Railway)—

कार्यालय—इसका केन्द्रीय कार्यालय (बड़ौदा हाउस) दिल्ली में है।

प्रमुख रेल मार्ग—उत्तरी रेलवे के निम्न प्रमुख मार्ग हैं —(1) दिल्ली अलीगढ़, कानपुर, इलाहाबाद मुगलसराय। (2) मुगलसराय, वाराणसी लखनऊ बरेली, मुरादाबाद हरिद्वार देहरादून। (3) दिल्ली रोहतक भटिण्डा फीरोजपुर (4) दिल्ली अम्बाला लुधियाना जालन्धर अमृतसर। (5) दिल्ली रिवाड़ी हिसार, रतनगढ़ जोधपुर बाड़मेर (पाकिस्तान की सीमा पर)। (6) भटिण्डा हनुमानगढ़ बीकानेर जोधपुर।

प्रमुख स्टेशन—इस रेल मार्ग के प्रमुख स्टेशन ये हैं — नई दिल्ली चण्डीगढ़ शिमला देहरादून मुरादाबाद बरेली वाराणसी इलाहाबाद, कानपुर, लखनऊ फुलेरा जोधपुर बीकानेर, अमृतसर आदि।

महत्त्व—भारत की राजधानी नई दिल्ली के अतिरिक्त उत्तरी-पश्चिम भारत के दो राज्यों की राजधानियाँ चंडीगढ़ व शिमला होकर जाने के कारण इस रेल मार्ग का पर्याप्त महत्त्व है। इसके क्षेत्र में औद्योगिक एवं कृषि का पर्याप्त विकास हुआ है। इस रेल मार्ग द्वारा ढोये जाने वाले माल में निर्मित माल के अतिरिक्त गेहूँ गन्ना, ऊन, तिलहन, खालें, कपास, नमक भी महत्त्वशील हैं।

(2) उत्तरी पूर्वी रेलवे (North Lastern Railway)—

कार्यालय—इसका केन्द्रीय कार्यालय गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) में है।

प्रमुख रेल मार्ग—इसके निम्न प्रमुख रेल मार्ग हैं—(1) लखनऊ गोरखपुर छपरा सोनपुर, कटिहार। (2) बरेली सीतापुर गोरखपुर झांसी, कटिहार। (3) वृन्दावन, हाथरस कासगंज बरेली काठगोदाम। (4) इलाहाबाद, वाराणसी गोरखपुर। (5) कासगंज, फर्रुखाबाद कानपुर लखनऊ।

प्रमुख स्टेशन—मथुरा, हाथरस बरेली मुरादाबाद काठगोदाम, गोरखपुर, कानपुर लखनऊ आदि इस रेलवे के प्रमुख स्टेशनों में से हैं।

महत्व—आर्थिक दृष्टि से इस रेलवे का महत्व बहुत अधिक है। कानपुर में चमड़े सूती वस्त्र, ऊनी वस्त्र आदि के कारखाने हैं। उत्तर प्रदेश व बिहार की गन्ने की पट्टियां इसी क्षेत्र के अन्तर्गत आती हैं। इस रेल मार्ग के द्वारा ढोई जाने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—गन्ना चावल चीनी चमड़ा व चमड़े का सामान ऊनी व सूती कपड़ा ऊन कपास तम्बाकू, दालें लकड़ी व चाय।

(3) पूर्वोत्तर सीमान्त रेलवे (North East Frontier Railway)—

कार्यालय—इसका केन्द्रीय कार्यालय मालीगाओ (गोहाटी) में है।

लम्बाई—इस रेल मार्ग की लम्बाई लगभग 3 632 Kms है। लम्बाई की दृष्टि से यह रेल मार्ग भारत में सबसे छोटा है व इसका आठवां स्थान है।

क्षेत्र—इस रेल मार्ग के अन्तर्गत समस्त असम तथा पश्चिमी बंगाल और बिहार के कुछ भाग हैं।

प्रमुख स्टेशन—पाडु, दार्जिलिंग, मनिहारीघाट, गोहाटी व डिब्रूगढ़ इसके प्रमुख स्टेशन हैं।

महत्व—यह रेल मार्ग कृषि, औद्योगिक तथा खनिज सम्बन्धी वस्तुओं को ढोने के लिए महत्वशील हैं। सीमावर्ती भागों से यह रेलवे पटोल, चाय, कोयला लकड़ी, पटसन आदि प्रमुख वस्तुएं भारत में लाती है और यहां से वस्त्र इस्पात चीनी खाद्यान्न और नमक लेकर जाती है।

(4) मध्य रेलवे (Central Railway)—

कार्यालय—इसका केन्द्रीय कार्यालय बम्बई में है।

लम्बाई—इस रेल मार्ग की लम्बाई लगभग 6 032 Kms है। इस रेलमार्ग का भारत में लम्बाई की दृष्टि से चौथा स्थान है।

प्रमुख रेल मार्ग—मध्य रेलवे के निम्न प्रमुख मार्ग हैं—(1) बम्बई कल्यान, भुसावल नागपुर (कलकत्ता तक)। (2) बम्बई भुसावल, खडवा, इटारसी, भोपाल झांसी आगरा मथुरा ओखला (दिल्ली)। (3) बम्बई खंडवा इटारसी कटनी इलाहाबाद। (4) बम्बई पूना शोलापुर, वाडी रायचूर। (5) ओखला (दिल्ली) आगरा झांसी नागपुर वर्धा विजयवाडा तथा (6) झांसी, बीना, भोपाल इटारसी।

प्रमुख स्टेशन—इस रेल मार्ग के प्रमुख स्टेशन ये है—दिल्ली, मथुरा, आगरा, ग्वालियर, झाँसी बीना कोटा, भोपाल, खड़वा भुसावल बम्बई, पूना, शोलापुर, रायचूर, हैदराबाद विजयवाडा नागपुर, जबलपुर, कटनी, ननी आदि।

महत्त्व—यह रेल मार्ग भारत के कपास उत्पन्न करने वाले प्रमुख क्षेत्र में होकर जाता है। बम्बई, नागपुर व शोलापुर सूती वस्त्र उद्योग के प्रमुख केन्द्र हैं। पूना, सतारा, शोलापुर, हैदराबाद आदि औद्योगिक नगर इसी रेल मार्ग पर है। इस क्षेत्र में सीमेंट, दियासलाई कागज आदि उद्योग विकसित हैं। अत इस रेल मार्ग पर रेलें इन उद्योगो के लिए कच्चा माल व इनका निर्मित माल लाती ले जाती हैं। इनके अतिरिक्त चावल, गेहूं, कपास, मैंगनीज, नारंगियाँ व लकडी आदि ले जाई जाती हैं।

(5) पश्चिमी रेलवे (Western Railway)—

कार्यालय—इसका केन्द्रीय कार्यालय बम्बई में है।

प्रमुख रेल-मार्ग—पश्चिमी रेलवे के निम्न प्रमुख रेल-मार्ग है —(1) बम्बई, सूरत बडौदा, अहमदाबाद, विरमग्राम (ब्राड गज)। (2) बम्बई बडौदा, रतलाम, कोटा सवाईमाधोपुर, भरतपुर, मथुरा (ब्राड गज)। (3) अहमदाबाद, आबू रोड मारवाड, अजमेर जयपुर, अलवर रिवाडी, दिल्ली (मीटर गज)। (4) अहमदाबाद अजमेर, जयपुर आगरा (मीटर गज)। (5) अजमेर चित्तौड रतलाम इन्दौर, खडवा (मीटर गेज)। (6) डीसा, कादला, भुज। (7) विरमग्राम, राजकोट द्वारका पोर्ट ओखा। एव (8) उदयपुर हिम्मतनगर।

प्रमुख स्टेशन—पश्चिमी रेलवे की छोटी लाइन पर ये प्रमुख स्टेशन हैं—दिल्ली, जयपुर फुलरा, अजमेर मारवाड आबू रोड डीसा काडला ओखा, भुज, उदयपुर, सीकर लुहारू आदि।

पश्चिमी रेलवे की बडी लाइन पर मथुरा, आगरा, कोटा बडौदा, अहमदाबाद सूरत व बम्बई बड़े स्टेशन हैं।

महत्त्व—यह रेलवे भारत के दो बडे बन्दरगाहों—बम्बई व कांदला—के अतिरिक्त अनेक छोटे बन्दरगाहों—ओखा पोरबन्दर, सूरत आदि—को देश के आन्तरिक भागो से मिलाती है अत इस रेल मार्ग का अपना विशेष महत्त्व है। *बम्बई सूरत अहमदाबाद बडौदा आदि वस्त्र उद्योग के बडे केन्द्र हैं लाखेरी (बूँदी* राजस्थान) व पोरबन्दर व सवाई माधोपुर में सीमेंट के कारखाने हैं। यह रेलवे इन सबकी सेवा करती है। ओखा बन्दरगाह से पट्रोलियम देश के आन्तरिक भागो में इसी रेल मार्ग द्वारा लाया जाता है।

(6) दक्षिणी रेलवे (Southern Railway)—

कार्यालय—इसका केन्द्रीय कार्यालय मद्रास में है।

प्रमुख रेल मार्ग—इसके निम्न प्रमुख रेल मार्ग हैं—(1) मद्रास, विजयवाडा, वाल्टयर। (2) मद्रास गुटकल रायचूर। (3) मद्रास, जालरपेट, सलेम, मगलौर। (4) मद्रास, विलूपुम, तजौर, तिरुचिरापल्ली, धनुषकोटि। (5) मद्रास, मदुरा

त्रिवलो त्रिवेन्द्रम। (6) बगलौर, हुबली, पूना। एव (7) विजयवाडा, गुटक्ल, बलारी, हुबली।

प्रमुख स्टेशन—इस रेल माग पर अनक धार्मिक महत्त्व के और अनक व्यापारिक महत्त्व के स्टेशन हैं। प्रमुख स्टेशन ये हैं। मद्रास गुतूर, नेलोर तिरुचिरापल्ली मदुरा रामेश्वर, तूतीकोरन त्रिवन्द्रम, एर्नाकुलम, मगलौर बगलौर, कोयम्बटूर आदि।

महत्त्व—यह मद्रास विशाखापट्टनम और पाडीचेरी बन्दरगाहों के अतिरिक्त अनेक छोटे बन्दरगाहों जसे—काकीनाडा नगापट्टम धनुषकोटि तूतीकोरन त्रिवलो, मगलौर आदि बन्दरगाहों की सेवा करता है। इस प्रदेश के प्रमुख औद्योगिक नगर मद्रास, बगलौर मसूर कोयम्बटूर मदुराई हैं जहाँ सूती और रेशमी वस्त्र के बडे केन्द्र हैं। इस क्षेत्र की प्रमुख उपज नारियल मूँगफली, कपास मसाले तम्बाकू, चाय कहवा रबर लकडी आदि प्रमुख खनिज मैंगनीज लोहा अभ्रक व स्वण आदि और निर्मित माल म सूती ऊनी व रेशमी कपडा आदि मुख्य वस्तुएँ हैं जिन्हें यह रेलवे ढोती हैं।

(7) पूर्वी रेलवे (Eastern Railway)—

कार्यालय—इसका केन्द्रीय कार्यालय कलकत्ता म है।

प्रमुख रेल माग—पूर्वी रेलवे के प्रमुख रेल-माग निम्न हैं—(1) कलकत्ता—बदवान—आसनसोल—पटना—मुगलसराय। (2) आसनसोल—धनबाद—मुगलसराय। (3) कलकत्ता—मुर्शिदाबाद—लालगोलाघाट। एव (4) बदवान—साहिबगज—क्यूल।

प्रमुख स्टेशन—पूर्वी रेल-माग के प्रमुख स्टेशन ये हैं—मुगलसराय पटना गया मुगेर कलकत्ता हावडा आसनसोल आदि।

महत्त्व—भारत के कोयले व अभ्रक की खानों का अधिकांश क्षेत्र इसी रेलवे के क्षेत्र म स्थित है। खनिज पदार्थ का केन्द्र—छोटा नागपुर तथा आसनसोल का औद्योगिक क्षेत्र भी इसी रेल माग पर है। यह रेल माग इन क्षेत्रों को पश्चिमी बगाल की राजधानी एव भारत के प्रमुख बन्दरगाह कलकत्ता से मिलाता है। जूट चावल सीमण्ट, कोयला मगनीज लोहा व इस्पात चाय वस्त्र व अनेक वस्तुओं का व्यापार इस रेल-माग द्वारा होता है।

(8) दक्षिणी पूर्वी रेलवे (*South Eastern Railway*)—

कार्यालय—दक्षिणी-पूर्वी रेलवे का केन्द्रीय कार्यालय भी कलकत्ता म ही है।

प्रमुख रेल माग—इस रेलवे की मुख्य लाइन हावडा से प्रारम्भ होकर नागपुर तक जाती है। नागपुर कलकत्ता से 1 130 Kms दूर है। दूसरी शाखा खडगपुर जक्शन (हावडा स 115 Kms पूव म) से उत्तर पश्चिम की ओर आसनसोल टाटानगर की ओर जाती है और इसकी तीसरी शाखा भारत के पूर्वी समुद्रतट के साथ-साथ कलकत्ता से लगभग 880 Kms दूर वाल्टेयर तक जाती है।

दक्षिणी पूर्वी रेलवे के प्रमुख रेल मार्ग निम्न हैं —(1) कलकत्ता—खड़गपुर—टाटानगर—राउरकेला—रायपुर—भिलाई—नागपुर। (2) कलकत्ता—खड़गपुर—कटक (पुरी)—विजयपुर नगर—वाल्टेयर। (3) खड़गपुर—मिदनापुर—गोमा। एव (4) रायपुर—टीटागढ—विजयनगरम।

प्रमुख स्टेशन—इस रेल मार्ग के प्रमुख स्टेशन ये हैं—कटनी, बिलासपुर आसनसोल हावड़ा, खड़गपुर पुरी, विशाखापट्टनम नागपुर, जबलपुर आदि।

महत्व—यह रेलवे तीन राज्यों पश्चिमी बंगाल मध्य प्रदेश और उड़ीसा की राजधानियों को और देश के बन्दरगाहों—कलकत्ता और विशाखापट्टनम व उनके पृष्ठ प्रदेशों को जोड़ती है। यह रेल मार्ग पश्चिमी बंगाल के उर्वरा चावल क्षेत्रों, उड़ीसा और मध्य प्रदेश के घने वन, बिहार उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश की कोयले लोहे मैंगनीज तथा चूने की खानों के क्षेत्रों में होकर गुजरती है।

इस रेल मार्ग पर हीराकुड बांध टाटानगर, बर्नपुर, राउरकेला व भिलाई के लोहे व इस्पात के कारखाने विशाखापट्टनम का जहाज का कारखाना और तेल शोधक कारखाने स्थित हैं।

दक्षिणी-पूर्वी रेलवे लाइन पर सबसे अधिक ढुलाई खनिज पदार्थों की होती है। इनमें कोयला सबसे अधिक ढोया जाता है क्योंकि देश के तीन सबसे बड़े कोयला क्षेत्र इसी रेल मार्ग पर हैं। कोयले के अतिरिक्त लोहा मैंगनीज और चूने की भी पर्याप्त ढुलाई की जाती है।

(९) दक्षिणी मध्य रेलवे—

कार्यालय—इस रेलवे क्षेत्र का निर्माण मध्य और दक्षिणी रेलों के दो दो डिवीजनों को मिलाकर किया गया है। इसका केन्द्रीय कार्यालय सिकन्दराबाद में है।

इस नई रेल द्वारा 5 करोड़ मनुष्यों की सेवा सम्पन्न हो रही है। अधिकतर आन्ध्र प्रदेश ही इसका कार्यक्षेत्र है। वस्तुतः रेल मन्त्री तथा उद्योग मन्त्री के आग्रह वश यह नया क्षेत्र बनाया गया।

रेल मार्ग एवं योजनाओं के लक्ष्य—

भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में रेलों के विकास पर 423 23 करोड़ रुपये व्यय किये गये थे।

द्वितीय योजना में रेलों के लिए 1043 69 करोड़ रुपये निम्न लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निर्धारित किये गये थे—(i) लगभग 1 9 0 Kms लम्बी नई रेलवे लाइन का निर्माण, (ii) लगभग 2 100 Kms लम्बे रेल मार्ग का दुहरा करना और लगभग 1,415 Kms लम्बे रेल मार्ग का विद्युतीकरण करना, (iii) यात्रियों को ले जाने में 15 प्रतिशत क्षमता में वृद्धि (iv) लगभग 1 620 लाख टन माल ढोने की क्षमता उत्पन्न करना (v) 10 600 इंजिन 2९ 900 सवारी डिब्बों और 35 41 लाख मालगाड़ी के डिब्बे बढ़ाना।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में रेलवे विकास की संशोधित योजना (revised

programme) में लगभग [illegible] करोड़ [illegible] के [illegible] पूर्ण करने के लिए निर्धारित किये गये थे — (i) लगभग [illegible] Km नई रेलवे लाइन का निर्माण (ii) लगभग [illegible] Km [illegible] को दुहरी करना और लगभग [illegible] Kms [illegible] (iv) [illegible] (v) लगभग [illegible] 610 [illegible] (v) [illegible] 600 [illegible]।

योजनाओं में रेल मार्गों की प्रगति

प्रथम योजना काल में लगभग 1104 Kms लाइनें [illegible] बनाई गईं। इसके अतिरिक्त पुरानी रेल लाइनों (690 Kms) का पुनः निर्माण किया गया। इसके अतिरिक्त लगभग 710 Kms लाइन [illegible] का निर्माण भी [illegible] और लगभग 1250 Kms नई रेलवे [illegible] के लिए [illegible] भी [illegible] था।

द्वितीय योजना काल में लगभग 1311 Kms नई रेल मार्ग [illegible] के लिए था। इसके अतिरिक्त लगभग 2025 Kms लाइनें [illegible] निर्माण कार्य चल रहा था।

तृतीय योजना में लगभग 2 667 Kms नई रेलवे लाइन [illegible] था। द्वितीय योजना में जो कार्य चल रहे थे उनके अतिरिक्त तृतीय योजना में निम्न नई रेलवे लाइन बनाई जाने की योजना थी—(1) [illegible] (2) मायापुर [illegible] (3) [illegible] (214 Kms लम्बा रेल मार्ग है जो 1966 में बन चुका) (4) [illegible] (5) [illegible] (6) [illegible] (7) रांची [illegible] (8) [illegible] (9) [illegible] (10) [illegible] नई लाइन।

तृतीय योजना की उपलब्धियाँ—तीसरी पंचवर्षीय योजना में रेलों की क्षमता में इस प्रकार वृद्धि की गई—(1) 1 800 किलोमीटर लम्बी नई रेल लाइन बनाई गयी। (2) 3 230 किलोमीटर रेल मार्ग दोहरी की गयी। (3) 350 किलोमीटर लम्बी छोटी लाइन बड़ी लाइन में बदला गया। (4) 17 500 किलोमीटर रेलमार्ग पर सी० टी० सी० बिजली से रेल चलाने का प्रबन्ध किया गया। (5) 8 500 किलोमीटर लम्बे रेलमार्ग पर डीजल इंजन से गाड़ी चलाने की व्यवस्था की गई।

चौथी योजना में रेलवे पर 10 अरब 50 करोड़ रुपया व्यय करने का प्रस्ताव है। इस अवधि में 2 200 Kms की नई लाइन निर्माण का प्रस्ताव है जिसमें तीसरी योजना से बची हुई 1 775 Kms की लाइनें भी शामिल हैं। 3 100 Kms लाइन को दुहरी लाइन बनाने की भी व्यवस्था है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 "Means of communication follow the path of least resistance" Discuss Illustrate your answer by reference to the Indian in land means of transport and the course of trade they deter mine

2 "The railway system of a country is always connected with its relief" Illustrate this with reference to Indian railways

3 D scribe the main railway routes of India and the traffic found on them

4 Discuss how far the forces of economic geography have influenced the railway route pattern of India

5 सन 1950 के बाद भारतीय रेल विकास बताइय। यह देश की यातायात आवश्यकता की कहां तक पूर्ति कर पाता है ? (T D C 1963)
[Discuss the progress of Indian Railways since 1950 How far do they meet the transport needs of the country ?]

6 भारत म रेल यातायात का विकास बताइय और उसका अन्तर प्रादेशिक व्यापार पर प्रभाव समझाइये। (T D C Suppl, 1964)
[Discuss the growth of Railway Transport in India and show its effiect on inter state trade]

7 भारत मे रेल यातायात का क्या महत्त्व है ? योजनावधि म इसके विकास पर प्रकाश डालिए। (T D C, 1968)

8 योजना कालो म भारतीय रेल परिवहन के विकास का विवेचन कीजिये।
(T D C Suppl 1968)

पक्की एव शेष 2 11 लाख Kms लम्बी कच्ची सडकें थीं। उस समय इगलण्ड मे भी भारत के ही बराबर सडकें थी जबकि इगलण्ड का क्षेत्रफल भारत की तुलना म लगभग $\frac{1}{10}$ भाग था। इससे यह स्पष्ट हुआ है कि भारत के क्षेत्रफल को देखते हुए इगलण्ड मे सडको का काफी विकास हो चुका था। उस समय अमरीका म सडको की लम्बाई भारत से लगभग 12 गुनी थी।

भारत म सडको के निर्माण की गति भी काफी मन्द थी क्योकि सन् 1920 से 1945 तक, अर्थात 45 वर्षों मे केवल 10 375 Kms नई सडको का निर्माण हुआ, जबकि इतनी सडके अमरीका म केवल 1 वष म ही बन गई थी। फिर दुर्भाग्य से अखण्ड भारत सन 1947 म खण्डित हुआ जिसके फलस्वरूप सडको की काफी लम्बाई से भारत को वचित होना पडा, क्योकि लगभग 91 750 Kms लम्बी सडकें पाकिस्तान को हस्तातरित करनी पडी। भारत म लगभग 9 72 लाख Kms सडकें हैं जो देश की विशालता को देखते हुए काफी कम हैं।

अन्य देशो से तुलना—

अन्य देशो की तुलना मे भारत म सडको का बहुत ही कम विकास हुआ है, यह निम्न तालिका से स्पष्ट होगा —

अन्य देशो से तुलना (लम्बाई किलोमीटर म)

देश	प्रति 100 वग किलोमीटर क्षत्र मे सडकें	प्रति 10 000 व्यक्तियो के लिए सडकें
जापान	267 63	100
फ्रास	261 1	293
पश्चिमी जमनी	164 43	71
इगलण्ड	142 46	64
सयुक्त राज्य अमरीका	63 55	302
लका	56 40	32
भारत	29 80	18

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अन्य प्रमुख देशो की तुलना म भारत म सडकें बहुत ही कम हैं।

सडक माग की उन्नति के लिए किये गये प्रयत्न—

स्वतन्त्रता पूव किये गये प्रयत्न प्राचीन समय म भी भारत म सडको का पर्याप्त विकास हो चुका था। यह तथ्य मोहनजोदडो की खुदाई से भी स्पष्ट होता है। कौटिल्य के अथशास्त्र म भी रथ-माग और साधारण मार्गों का उल्लेख मिलता है। हिन्दू-काल म भी हिन्दू राजाओ न सडको के विकास की ओर काफी ध्यान दिया। 5वी शताब्दी क चीनी यात्री फाहियान न भी लिखा है कि उस काल म सडको क किनारे वृक्ष लगाये जाते थे।

मुस्लिम शासन म भी सडकों की स्थिति ठीक थी किन्तु उनका विकास राजनतिक दृष्टि से ही किया गया था। शेरशाह के शासन काल म भी सडकों की ठीक व्यवस्था थी।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन काल म सडकों की दशा म विशष सुधार नही हुआ क्योकि कम्पनी एक यापारिक सस्था थी। अंग्रजी शासन-काल म लाड डलहौजी न सडको का महत्त्व सामरिक एव शासकीय दृष्टि से अनुभव किया। किन्तु सडको का सन्तोषजनक विकास नही होने पाया क्योकि उसी समय रल निर्माण का भी काय चल रहा था जिसम सरकार क आर्थिक साधन फँसे हुए थे। सन 1855 म केन्द्रीय सावजनिक निर्माण विभाग (Central P W D) की स्थापना की गई।

(3) विकसित तथा कृषि प्रधान क्षेत्र म कोइ भी गांव पक्की सडक स 6 किलोमीटर तथा किसी भी अन्य प्रकार की सडक स 2 5 किलोमीटर स दूर नही रह,

(4) अर्द्ध विकसित क्षेत्र म कोई भी गांव पक्की-सडक स 13 किलोमीटर तथा किसी भी अ य प्रकार की सडक से 3 किलोमीटर दूर नही रहे

(5) अविकसित तथा गर-कृषि क्षेत्र म कोई भी गाव पक्की सडक से 20 किलोमीटर तथा किसी भी अन्य प्रकार की सडक से 8 किलोमीटर दूर न रह

(6) मदानी भाग म 2 हजार जनसख्या वाले प्रत्येक नगर को अर्द्ध पवतीय क्षेत्र म एक हजार जनसख्या वाले प्रत्येक कस्बे को और पवतीय क्षेत्रो म 500 जन सख्या वाली बस्तियो को पक्की सडको से सम्बद्ध किया जावेगा ।

उपरोक्त सडक विकास-योजना म लगभग 5 200 करोड रुपये यय होने का अनुमान है । किसी वष व्यय की राशि म अचानक वृद्धि को रोकने के लिए राशि को पाच पाच वष के चार चरणो म व्यय करने का प्रावधान किया गया है ।

तृतीय पचवर्षीय योजना मे सडक विकास—इस योजना-काल म सडक विकास पर पहल 324 करोड रुपय व्यय करने का प्रावधान[1] था किन्तु इस राशि को 454 करोड रुपय कर दिया गया । तीसरी पचवर्षीय योजना मे सडक विकास वास्तव म 20 वर्षीय सडक विकास योजना का ही अग था ।

इस योजनाकाल म लगभग 46 हजार किलोमीटर लम्बी सडको का नया निर्माण* व 2 हजार किलोमीटर पुरानी सडको का विकास करन का लक्ष्य रखा गया । अनक सडको को चौडा किय जान का कायक्रम भी अपनाया गया । ग्रामीण क्षेत्रो म सडक विकास पर विशेष ध्यान दिया गया । इस योजना काल म सडक अनुसन्धान काय (Road Research Programme) के लिए 2 करोड रुपये व्यय करने का प्रावधान किया गया था।

वार्षिक योजनाओ मे सडक विकास—वार्षिक योजनाओ मे सडक विकास पर व्यय की जान वाली राशि कम था अत लक्ष्य क अनुसार सडको का विकास नही हुआ । इन तीन वर्षो ('966 69) म सडक विकास पर लगभग ›00 करोड रुपये व्यय किय गये ।

चौथी पचवर्षीय योजना मे सडक विकास—यद्यपि पचवर्षीय योजनाकाल म सडक विकास म प्रगति हुई है किन्तु भारत की सडक प्रणाली म आज भी अनक दोष हैं जस सडको की लम्बाई की अपर्याप्तता सडको की कम चौडाई, सडको की मरम्मत खराब होना कमजोर पुल आदि । अनक क्षेत्रों म और पहाडी क्षेत्रो म भी पर्याप्त सडको का अभाव था । अनक गांव एसे थ जिनका मण्डियो व बाजारो से

---

1 *Thir l Five Year Pla* p 550

* *India 1969* p 390

सड़कों द्वारा कोई सम्पर्क नहीं था। अत चौथी योजना म सडको के विकास म इन बातों का भी ध्यान रखा गया।

चौथी योजना म सडकों के विकास पर कुल व्यय 871 करोड रुपये किय जाने का प्रावधान[1] किया गया है, इसम म केन्द्रीय क्षेत्र मे 418 करोड रुपये व्यय किय जान की व्यवस्था है। केन्द्रीय-क्षेत्र म 418 करोड रुपये इस प्रकार व्यय किये जावेंगे —

राष्ट्रीय राजमार्गों पर	328 करोड रुपये
अन्तर्राज्यीय मार्गों पर	25 करोड रुपये
पार्श्व सडकों पर	22 करोड रुपये
विशेष सडकों पर	43 करोड रुपये
योग	418 करोड रुपये
राज्य तथा सघीय क्षेत्रों म	411 करोड रुपये
कुल	829 करोड रुपये

चौथी योजना की अवधि म पहले से चालू कार्यों को पूरा किया जावेगा। कमजोर पुलों की मरम्मत की जावेगी तथा आवश्यक नये पुन बनाए जावेंगे। टूटी हुई सडकों की मरम्मत की जावेगी तथा अनेक सडकों को चौडा किया जावेगा।

सन 1968 69 म देश म पक्की सडकों की लम्बाई लगभग 3 17 लाख किलोमीटर थी चौथी पचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष म इनकी लम्बाई 3 67 किलोमीटर हो जाने का अनुमान है। इस प्रकार चौथी पचवर्षीय योजना काल म लगभग 50 हजार किलोमीटर लम्बी पक्की सडकें बनाई जावेंगी।

सडक-यातायात

सक्षिप्त इतिहास—

भारत म मोटर परिवहन का विकास प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् ही हुआ। सन् 1914 स पूर्व देश म मोटरो की सख्या बहुत कम थी जिनका प्रयोग व्यक्तिगत स्तर पर ही किया जाता था। मोटर यातायात नियमन के लिए सन 1914 म 'मोटर-वाहन अधिनियम (Motor Vehicle Act) पास किया गया। इस अधिनियम म मोटरो के रजिस्ट्रेशन और मोटर ड्राइवरों को लाइसेंस देने आदि के सम्बन्ध म नियम बनाए गये।

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् देश म मोटर-यातायात अधिक लोकप्रिय होने लगा और इस कारण मोटरो की सख्या म वृद्धि होने लगी। इसके बाद विश्व व्यापी आर्थिक मन्दी (1929) का समय आया और रेल तथा मोटर यातायात म प्रतिस्पर्धा होने लगी। मोटर-यातायात का महत्त्व बढ़ता ही गया अत सन् 1939 म दूसरा 'मोटर वाहन अधिनियम 1939 पास किया गया।

---

1 *Fourth Five Year Plan* p 339

द्वितीय विश्व युद्ध काल (1939 45) म यद्यपि मोटर यातायात की माँग म वृद्धि हुई कि तु पट्रोल मिलन म बहुत असुविधा हो गई विदेशो से मोटरा व उनक पुर्जे आयात हान लगभग ब द हो गय।

सन 1950 म मोटरवाहन-कर जाच समिति और सन 1953 म परिवहन अध्ययन दल (Study Group on Transport) की नियुक्ति की गई। सन् 1956 म मोटर परिवहन अधिनियम म कुछ सशाधन किये गये।

स्वत त्रता प्राप्ति के पश्चात् विकास—

सन 1947 मे भारत म मोटर वाहना की सख्या लगभग 2 12 लाख थी, जा 1968 म बढकर लगभग 12 9 लाख हो गय। इस प्रकार मोटर वाहनो की सख्या म पर्याप्त वृद्धि हुई है।

व्यापारिक वाहनों की स्थिति

वष	व्यापारिक वाहन (सख्या लाखो मे)
1960 61	2 25
1965 66	3 33
1968 66	3 80
1973 74 अनुमानित	5 85

व्यापारिक दृष्टि से चलन वाले मोटर वाहनो (ट्क व बसो) की स्थिति मे भी लगातार सुधार हुआ है। पिछले वर्षों व 1973 74 म एसे वाहना की अनुमानित सख्या तालिकानुसार है।

वष 1960 61 म सडक माग द्वारा लगभग 5400 करोड (अथात 54 अरब) यात्रियो ने यात्रा की। आशा है कि चतुथ पचवर्षीय योजना के अ तिम वष 1973 74 म इनकी सख्या बढ कर 14 000 करोड हो जावगी।

यात्री परिवहन का राष्ट्रीयकरण—

भारत के अधिकाश राज्या म यात्री परिवहन का विभिन्न अशा म राष्ट्रीय करण कर दिया गया है। सडक-परिवहन निगम अधिनियम 1950 के अ तगत विभिन्न राज्या न निगम स्थापित कर लिए हैं। राजस्थान पजाब हरियाना मध्य प्रदश, महाराष्ट्र मसूर करल, आध्र प्रदेश बिहार पश्चिमी बगाल गुजरात और हिमाचल प्रदेश म एस निगम स्थापित कर दिय गय हैं। शष राज्या म राष्ट्रीयकृत सवाएँ विभागीय-सस्थाना म्यूनिसिपल-सस्थाना अथवा रजिस्टड कम्पनियो द्वारा सचालित की जाती हैं। माल का यातायात (असम एव उत्तरी बगाल के क्षेत्र के अतिरिक्त) सभी राज्या म निजी-क्षेत्रा म है।

सडक यातायात के राष्ट्रीयकरण की समस्या (अर्थात मोटर यातायात की समस्या)—

भूमिका—सडक यातायात (अर्थात मोटर-यातायात) का राष्ट्रीयकरण एक क्रा तिकारी कदम है। रल-सडक समन्वय क दृष्टिकाण म भारत म सन 1947 के पश्चात अनक वस मार्गों का राष्ट्रीयकरण कर लिया गया है। मोटर-यातायात का राष्ट्रीयकरण देश म आज भी राज विवाद का विषय बना हुआ है।

मोटर-यातायात के राष्ट्रीयकरण से लाभ—

मोटर यातायात के राष्ट्रीयकरण से प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं —

(1) **सुविधाजनक सेवा**—सरकारी मोटरें चलाने का मुख्य उद्देश्य समाज सेवा व जन कल्याण में वृद्धि करना होता है अतः सरकारी मोटरें यात्रियों के लिए अधिक सुविधाएँ प्रदान करके अच्छी सेवा प्रदान कर सकती हैं। इसके विपरीत व्यक्तिगत मोटर मालिकों का मुख्य उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना होता है अतः वे यात्रियों की सुख-सुविधा पर ध्यान नहीं देते।

(2) **किराए भाड़े में निश्चितता**—सरकारी बसों में किराया भाड़ा सदैव निश्चित होता है अतः यात्रियों के शोषण की सम्भावना नहीं होती, जबकि निजी बस स्वामी समय व परिस्थिति का अनुचित लाभ उठाते हुए किराए भाड़े में परिवर्तन करके यात्रियों का शोषण करने में नहीं चूकते।

(3) **प्रतियोगिता का अन्त व सामंजस्य**—मोटर यातायात के राष्ट्रीयकरण से सड़क व रेलों में प्रतियोगिता समाप्त की जा सकती है और उनमें सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। यह देश के आर्थिक विकास में सहायक होगा।

(4) **समाजवादी व्यवस्था में सहायक**—भारत का लक्ष्य समाजवादी समाज की स्थापना है और इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मोटर यातायात का राष्ट्रीयकरण भी आवश्यक है।

(5) **उपेक्षित क्षेत्रों का विकास**—निजी मोटरचालक उन्हीं मार्गों पर मोटरें चलाते हैं जो अधिक आय (व लाभ) देते हैं। कम आय और हानि देने वाले मार्गों पर मोटरें नहीं चलाते। किन्तु मोटर यातायात के राष्ट्रीयकरण से उपेक्षित क्षेत्रों में भी सेवाएँ उपलब्ध की जा सकती हैं।

(6) **राष्ट्रीय सुरक्षा**—संकट काल में राष्ट्रीयकृत मोटर मार्ग अधिक सेवा प्रदान कर सकते हैं अन्यथा पृथक पृथक प्रबन्ध होने के कारण उनमें उतनी कुशलता की आशा नहीं की जा सकती। सरकार अपनी बसों को देश की आवश्यकतानुसार उपयोग कर सकती है। सीमान्त सड़कों का तो सामरिक दृष्टि से काफी महत्त्व होता है।

(7) **कर्मचारियों को लाभ**—निजी मोटर सेवा में कर्मचारियों का शोषण अधिक किया जाता है किन्तु मोटर यातायात के राष्ट्रीयकरण से कर्मचारियों को काम के घण्टों में कमी, उचित मजदूरी, वेतन व भत्ता की सुविधा तथा कार्य की अच्छी दशाएँ प्रदान की जाती हैं।

(8) **पूँजी की सुविधा**—निजी मोटर चालकों की अपेक्षा सरकार के पास आर्थिक स्रोत अधिक होते हैं अतः अतिरिक्त मोटरों व उनके कल पुर्जे और कर्मचारियों के लिए संचित कोष आदि की व्यवस्था की जा सकती है।

(9) **मोटर उद्योग का विकास**—मोटर-यातायात के राष्ट्रीयकरण के पश्चात सरकार बड़ी बड़ी वर्कशॉप स्थापित कर देती है जहाँ मोटरों व उनके कल पुर्जों के

निर्माण एवं मरम्मत की व्यवस्था होनी है और मोटर-उद्योग के विकास में सहायता मिलती है।

(10) कर भार में कमी—मोटर यातायात के राष्ट्रीयकरण से सरकारी आय में वृद्धि होनी है अतः जनता पर अधिक करों का भार कुछ कम हो जाता है। इसके अतिरिक्त इस सेवा से सरकार को जो लाभ प्राप्त होता है उसे सार्वजनिक हित के कार्यों पर लगाया जा सकता है।

(11) अन्य लाभ—मोटर-यातायात के राष्ट्रीयकरण से जनता को और भी लाभ प्राप्त होते हैं। ये मोटरें निश्चित समय पर चलकर अपने गन्तव्य स्थान पर निश्चित समय पर पहुंचती हैं और इस प्रकार समय की पाबन्दी अधिक रहती है। इन बसों में केवल उतने यात्रियों को ही प्रवेश दिया जाता है जितनी कि मोटर में सीट होती हैं अतः यात्री आराम से यात्रा कर लेते हैं जबकि निजी मोटरों में यात्रियों को भेड़ बकरियों की तरह भी भर लिया जाता है।

मोटर यातायात के राष्ट्रीयकरण के दोष—

सरदार पटेल एवं पं० नेहरू ने भी देश के आर्थिक साधनों को ध्यान में रखते हुए पूर्ण राष्ट्रीयकरण के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया था। टी० टी० कृष्णामाचारी ने तत्कालीन मद्रास राज्य के मोटर संघ के अधिवेशन में भाषण देते हुए कहा था 'सड़क-यातायात के राष्ट्रीयकरण की नीति से मोटर यातायात को बहुत धक्का पहुँचा है और उसके विकास में बहुत बड़ी बाधा आ गई है। श्री मसानी का सुझाव है कि सड़क यातायात पर राज्य सरकार का केवल नियन्त्रण रहना चाहिए। मोटर यातायात के राष्ट्रीयकरण के प्रमुख दोष (अथवा विपक्ष में तर्क) निम्न लिखित हैं —

(1) कार्यक्षमता में कमी—सरकारी कार्यों में व्यावहारिक कार्य की अपेक्षा लाल फीताशाही के कारण कार्य क्षमता में कमी हो जाती है। पदोन्नति वरिष्ठता के आधार पर होनी है अच्छे कार्य के आधार पर नहीं। कर्मचारियों में कार्य करने में प्रायः उत्साह अधिक नहीं रहता अतः मोटर यातायात का राष्ट्रीयकरण उचित नहीं।

(2) राजनीतिक भ्रष्टाचार—कर्मचारियों की नियुक्ति पदोन्नति किराए भाड़े के निर्धारण आदि में राजनीतिक भ्रष्टाचार का प्रभाव अधिक रहता है।

(3) प्रतिद्वन्दिता की भावना का अन्त—निजी मोटर यातायात में प्रतिद्वंदिता की भावना होने के कारण यात्रियों को अधिक सुविधाएं आदि प्रदान की जाती हैं जबकि राष्ट्रीयकरण में ऐसी भावना नहीं होती।

(4) सेवाओं में कमी—सरकारी बस केवल निश्चित स्थानों पर ही रुकती हैं किन्तु निजी बसें यात्रियों की सुविधा के लिए अन्य स्थानों पर भी रुक जाती हैं। इसके अतिरिक्त सरकारी बसों में पूरी सवारियाँ हो जाने पर एक भी अतिरिक्त सवारी को नहीं लेते, चाहे वह यात्री कितने ही अधिक आवश्यक कार्य से जा रहा हो, जबकि

निजी मोटरों म यह सुविधा है कि प्रत्येक यात्री को ले लेते हैं जिसमे यात्रा मे कुछ असुविधा हो सकती है किन्तु यात्री अपने निश्चित स्थान पर पहुँच तो जाता है।

(5) **सरकार एव कर्मचारियो के मध्य तनावपूर्ण स्थिति**—सरकार एव कर्मचारियो के मध्य बहुत सुन्दर सम्बन्ध प्राय नही रह पाते। समय समय पर हड़तालें आदि होती रहती हैं जबकि निजी मोटर मालिकों के यहा कभी हड़ताल सुनी नही जाती थी।

(6) **राज्य का अनुचित हस्तक्षेप**—मोटर राष्ट्रीयकरण म भी राज्य का अनुचित हस्तक्षेप होता रहता है क्योंकि शासन व्यवस्था एक यन्त्र के रूप म कार्य करती है।

(7) **व्यय मे अधिकता**—राष्ट्रीयकृत मोटर यातायात म प्रशासनिक एव अन्य व्यय अधिक होते हैं जबकि निजी मोटर यातायात कम खर्चीला है।

बैलगाडी की अनिवार्य उपयोगिता के कारण—

हमारा देश भारत प्राचीन काल से ही एक कृषि प्रधान देश रहा है। भारतीय अर्थ व्यवस्था म कृषि का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। भारत मे कृषि प्राचीन ढग से ही होती आ रही है। यन्त्रो का प्रयोग तो कृषि म होना ही नही था, यद्यपि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात इनका प्रयोग कुछ होने लगा है। बैल ही भारतीय कृषक की सम्पत्ति है। इन बैलो का उपयोग भारतीय कृषक अनेक रूपो म करता आया है। खेत की जुताई और सिचाई के काम म बैल आते हैं और यातायात के साधनो म भी कृषको के लिए बैल अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

भारत म बैलगाडी का उपयोग अतीत काल से होता आया है। एक अनुमान के अनुसार भारत म कृषि के आरम्भ के साथ ही बैलगाडी के प्रयोग का महत्त्व रहा होगा। देश म रेलगाडी एव सडको के विकास के पूर्व कृषि की उपज को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने का सबसे महत्त्वपूर्ण साधन यही है। रेल और मोटर गाडियो ने यातायात के क्षेत्र म प्रविष्ट करके बैलगाडियो को एक प्रकार की चुनौती दी है किन्तु बैलगाडियां हटाई नहीं जा सकी। आज भी भारतीय अर्थ व्यवस्था और विशेषत ग्रामीण अर्थ व्यवस्था म बैलगाडी की अनिवार्य उपयोगिता बनी हुई है, जिसके प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं —

(1) **समुचित सड़कों की कमी**—भारत म लाखो गाव हैं किन्तु उन्हें मण्डियो तथा नगरो से मिलाने के लिए सडको का नितान्त अभाव है। अधिकाश सडके कच्ची एव कम चौडी है। अनेक स्थानों पर सडकें ऊबड खाबड हैं। सन 1969 म देश म लगभग 6 47 लाख Kms कच्ची सडकें थी। इन पर मोटरो अथवा अन्य प्रकार के वाहनो द्वारा यातायात नही हो सकता। इन परिस्थितियो म बैलगाडी की अनिवार्यता स्पष्ट है क्योंकि यहाँ बैलगाडियो के द्वारा ही यातायात सम्भव है।

(2) **मितव्ययी साधन**—कृषक के लिए बैलगाडी ही सबसे अधिक मितव्ययी एव सुविधाजनक साधन है। इसका कारण यह है कि कृषक को बैल रखना आवश्यक

है क्योंकि खेती में बैलों की अनिवार्यता स्पष्ट है। इसके अतिरिक्त वह बैलों के लिए चारा प्राय अपने ही खेतों में उत्पन्न कर लेता है अथवा स्थानीय रूप में सस्ते में प्राप्त कर लेता है। कृषि के लिए यदि बैल रखता है तो भी उन्हें चारा तो देना ही पड़ता है। इस प्रकार, यदि वह बैलों को गाड़ी में प्रयोग करता है तो उसे किसी प्रकार से उन पर अतिरिक्त व्यय नहीं करना पड़ता है।

(3) सुविधाजनक संचालन—बैलगाड़ी के संचालन में विशेष चातुर्य की आवश्यकता नहीं पड़ती अतः इसके चालन के लिए किसी विशेष प्रकार के चालक की आवश्यकता नहीं पड़ती। बैलगाड़ी को वह स्वयं ही चला लेता है। यदि पंक्ति में अनेक बैलगाड़ियाँ चल रही हों तो केवल आगे वाली गाड़ी का चालन बड़ी सतर्कता से करता है और शेष गाड़ियाँ अपने आप उसका अनुसरण करती चलती हैं।

(4) भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल—देश की यातायात व्यवस्था में बैल गाड़ी की अनिवार्य उपयोगिता बनी रहने का एक मुख्य कारण यह भी है कि यह भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल है। देश का कृषक आज भी निर्धन है। यन्त्रीकरण आज भी अविकसित दशा में है कृषकों को निकट की मंडियों तक ही जाना होता है आदि कारण ऐसे हैं जिनके कारण बैलगाड़ियों का आज भी महत्त्व है।

अन्त में निष्कर्ष यही निकलता है कि चाहे विदेशी हमारी बैलगाड़ियों को देखकर हँसी उड़ायें अथवा चाहे स्वयं भारत के ही कुछ लोग इसकी आलोचना करें किन्तु यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि भारत की यातायात व्यवस्था में बैलगाड़ी की अनिवार्य उपयोगिता बनी हुई है और निकट भविष्य में भी इसकी उपयोगिता में कमी नहीं आने वाली है।

रेल सड़क प्रतियोगिता
(Rail Road Competition)

प्रारम्भिक—

यातायात के विभिन्न साधनों का कार्य क्षेत्र एक-दूसरे से पृथक होता है अतः जब एक साधन अपने क्षेत्र को लाँघकर दूसरे साधन के क्षेत्र में प्रवेश करने का प्रयत्न करता है तो दोनों साधनों के मध्य प्रतिस्पर्धा (Competition) उत्पन्न हो जाती है जिससे फलस्वरूप आर्थिक संकट उत्पन्न हो जाता है और देश की आर्थिक प्रगति अव्यवस्थित सी हो जाती है। आन्तरिक यातायात के तीन मुख्य साधन होते हैं—रेल सड़क और वायु-यातायात। इनमें से वायु-यातायात का क्षेत्र सीमित है जो अनेक कारणों से विस्तृत नहीं हो सकता। साथ ही अन्य दो प्रकार के यातायात के स्थान पर इसका उपयोग भी नहीं हो सकता। अतः स्पष्ट है कि वायु यातायात से प्रतिस्पर्धा का कोई गम्भीर समस्या उत्पन्न नहीं होती और अधिक से अधिक यह गौण यातायात के रूप में रह सकता है। किन्तु रेल तथा सड़क (अथवा मोटर) यातायात के मध्य इस प्रकार का सम्बन्ध नहीं होता। अनेक कारणों से सड़क यातायात रेल यातायात से सस्ता पड़ता है जिससे परिणामस्वरूप मोटर मार्गों पर

किराया लगा रेलों की तुलना में सफलतापूर्वक प्रतिस्पर्धा कर सकती हैं। विशेषत थोड़े फासले के यातायात में तो सड़कों से तुलना हो ही नहीं सकती।

रेल सड़क प्रतिस्पर्धा के कारण—

विश्व के लगभग सभी देशों में बीसवीं शताब्दी में रेल-सड़क प्रतियोगिता की नई समस्या उठ खड़ी हुई है। भारत में रेल सड़क प्रतिस्पर्धा का श्रीगणेश अभी थोड़े ही समय से हुआ है। इस प्रतिस्पर्धा के निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं —

(1) **अनियोजित निर्माण**—भारत में सर्वप्रथम सड़कों का निर्माण हुआ, रेल मार्गों के निर्माण को अभी 125 वर्ष भी नहीं हुए हैं। आरम्भ में जो रेल मार्ग बनाए गए वे ईस्ट इण्डिया कम्पनी अथवा अन्य कम्पनियों ने बनवाए। उन्होंने केवल अपना हित ही देखा। रेल सड़क प्रतिस्पर्धा जैसी महत्वपूर्ण बात पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। बाद में जो सड़क निर्माण की गई वे साधारणत रेलों की कमी को पूरा करने तथा उनके सहायक के रूप में बनाई गईं। रेलों से प्रतियोगिता करना उनका उद्देश्य नहीं था किन्तु कालान्तर में हुआ ऐसा ही। बजवुड समिति ने अपनी रिपोर्ट में बतलाया था कि भारत की 30 प्रतिशत सड़कें रेलवे लाइनों के समानान्तर थी और 45 प्रतिशत रेलवे लाइनें ऐसी थी जिनसे 15 किलोमीटर की दूरी के भीतर ही समानान्तर सड़कें मौजूद थी। यदि सड़क व रेल मार्गों का निर्माण नियोजित ढंग से किया होता तो रेल सड़क आपस में प्रतिस्पर्धी न होकर एक दूसरे के पूरक होते।

(2) **सस्ता साधन**—रेल सड़क प्रतिस्पर्धा का दूसरा मुख्य कारण है रेलो व मोटरों द्वारा लिए जाने वाले किराए की राशि। मोटर यातायात में रेल की अपेक्षा प्राय कम किराया लगता है अत मोटर यातायात की ओर मनुष्यों का आकर्षित होना स्वाभाविक ही है।

(3) **माल पहुँचाने में सुविधा**—मोटर यातायात में एक बड़ी सुविधा यह है कि यदि माल अधिक मात्रा में हो तो माल को गोदाम अथवा चाहे हुए स्थान पर उतारा जा सकता है। जबकि रेलवे से माल मगाने में बहुत असुविधा होती है व ऊपरी खर्चे अधिक हो जाते हैं।

(4) **मार्ग परिवर्तन की सुविधा**—मोटर यातायात में सबसे बड़ा लाभ यह है कि मार्ग का परिवर्तन सम्भव है जबकि रेल मार्ग में यह सम्भव नहीं है। सड़क यातायात में माल को कहीं से चढ़ा सकते हैं और कहीं भी उतार सकते हैं।

(5) **माल अधिक सुरक्षित**—मोटर द्वारा माल भेजने में अधिक सुरक्षित रहता है। इसका कारण यह है कि माल को व्यक्तिगत दायित्व पर भेजा जाता है। रेल द्वारा माल भेजने में माल को प्राय लापरवाही से चढ़ाते व उतारते हैं, माल में से चोरी करली जाती है अथवा कभी कभी तो सम्पूर्ण माल ही गुम जाता है। किन्तु मोटर यातायात में ऐसी बात नहीं पाई जाती है।

(6) **नियमित सेवाएँ व शीघ्रता**—माल को एक स्थान से दूसरे स्थान के

भेजने के लिए सड़क यातायात नियमित गाड़ियाँ प्रदान करता है और माल शीघ्र से भी पहुँच जाता है। किन्तु रेल द्वारा माल भेजने में कभी-कभी तो कई दिनों तक यह स्टेशन पर ही पड़ा रहता है। इसके अतिरिक्त यात्रियों के लिए भी बसें नियमित व दिन में अनेक बार सेवाएँ प्रदान करती हैं। जयपुर से अजमेर, दिल्ली, गाजियाबाद, कानपुर से लखनऊ आदि स्थानों के लिए दिन में अनेक बसें रवाना होती हैं, अतः अपनी सुविधानुसार यात्रा की जा सकती है। अब तो यात्री-बसें रात्रि में भी सेवाएँ प्रदान करने लगी हैं।

(7) बैठने की सुविधा—सवारी गाड़ी में भीड़ बहुत अधिक रहती है। कभी-कभी तो खड़े रहने को भी स्थान कठिनता से मिलता है किन्तु राष्ट्रीयकृत बसों में बैठने की सुविधा मिल जाती है।

अन्तिम विचार—रेल-सड़क प्रतिस्पर्धा का किसी भी दृष्टिकोण से हितकर नहीं कहा जा सकता है। वास्तव में इससे तो राष्ट्र का बड़ा अहित होता है। सड़कों के विकास के लिए यह नीति अपनानी चाहिए कि सड़क यातायात रेल यातायात का पूरक हो प्रतिस्पर्धी नहीं।

रेल सड़क सामंजस्य
(Rail Road Co ordination)

रेल एवं सड़क यातायात की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा को समाप्त करके उनको परस्पर पूरक बनाने के लिए और देश में यातायात के आरोग्य विकास के हेतु उनका सामंजस्य ही एकमात्र साधन है। विश्व के अन्य देशों में भी जहाँ यह समस्या उत्पन्न हुई, वैज्ञानिक रीतियों द्वारा उनमें सामंजस्य स्थापित किया गया। सामंजस्य का वास्तविक आशय यातायात की सेवाओं का जन साधारण की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विचारयुक्त एकीकरण से होता है। इसका प्रधान उद्देश्य अनावश्यक दोहराव को समाप्त करना, किरायों में अनार्थिक कटौती को रोकना और उनसे सम्बन्धित राष्ट्रीय साधनों, समय और शक्ति के अपव्यय को समाप्त करना होता है। इस प्रतिस्पर्धा को समाप्त करने के दो ही साधन हो सकते हैं—प्रथम, समस्त यातायात प्रणाली का राष्ट्रीयकरण कर दिया जाय, द्वितीय, वैधानिक प्रतिबन्धों द्वारा विभिन्न यातायात प्रणालियों के क्षेत्र अलग अलग निश्चित कर दिए जावें जिससे कि प्रतिस्पर्धा का प्रश्न ही न उठे।

रेल एवं सड़क यातायात में सामंजस्य लाने के लिए यह आवश्यक है कि सड़कों का भावी निर्माण एवं विकास योजनाबद्ध रीति से इस प्रकार हो कि रेलों को सड़कों का प्रतिस्पर्धी नहीं होना चाहिए वरन उनका पूरक होना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि सड़कों को रेल मार्गों के समान्तर नहीं बनाना चाहिए वरन उनका विकास अन्य क्षेत्रों में हो जहाँ यातायात की सुविधाएँ कम हैं। इसका परिणाम यह होगा कि यातायात के साधनों में वृद्धि होगी और सड़क यातायात रेलों के लिए पूरक का कार्य करेगा। साथ ही इस बात का विशेष ध्यान

रखा जावे कि यातायात सुविधाओं के दुहरेपन को यथासम्भव दूर रखा जावे। यद्यपि आजकल यातायात के साधनों का राष्ट्रीयकरण हो रहा है (रेल यातायात व वायु-यातायात का पूर्णतः राष्ट्रीयकरण किया जा चुका है सड़क यातायात के राष्ट्रीयकरण की ओर धीरे धीरे कार्य हो रहा है), जिसमें विभिन्न यातायात के साधनों का विकास योजनाबद्ध एवं विभिन्न साधनों में सामंजस्य रखने की दृष्टि से होगा। देश में सम्पूर्ण यातायात के साधनों का राष्ट्रीयकरण यद्यपि असम्भव तो उतना अधिक नहीं है किन्तु देश की वर्तमान परिस्थितियों में अत्यन्त कठिन अवश्य ही है। यातायात के विभिन्न साधनों में सामंजस्य लाने के लिए उन पर सरकारी नियन्त्रण आवश्यक है और सरकार ने इस दिशा में कार्यवाही भी की है। सन् 1948 में 'सड़क-यातायात निगम अधिनियम (Road Transport Corporation Act) पास किया जा चुका है जिसके अन्तर्गत राज्य सरकारों को इस बात का अधिकार दे दिया गया है कि वे चाहें तो अपनी यातायात कम्पनियाँ स्थापित कर सकती हैं। तमिलनाडु, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पंजाब व उड़ीसा आदि राज्यों में सड़क यातायात का राष्ट्रीयकरण हो चुका है। राजस्थान सरकार ने भी सड़क यातायात का आंशिक राष्ट्रीयकरण कर दिया है।

राष्ट्रीय राजमार्ग
(National Highways)

राष्ट्रीय राजमार्गों का प्रबन्ध एवं देखभाल केन्द्रीय सरकार के अधीन है। ये देश के एक कोने से दूसरे कोने तक जाती हैं। इन सड़कों से देशी व विदेशी व्यापार में अत्यन्त सहायता मिलती है। भारत में राष्ट्रीय राजमार्गों की लम्बाई[1] लगभग 24,143 Kms है। भारत में इस समय (सन 1970) राष्ट्रीय राजमार्गों की संख्या 40 है, जिनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं —

(1) **पूर्वी ग्राण्ड ट्रंक रोड**—यह कलकत्ता से आरम्भ होकर पाकिस्तान में पेशावर तक जाती है। कलकत्ता से अमृतसर तक का भाग भारत में है। यह मार्ग वाराणसी इलाहाबाद कानपुर हाथरस अलीगढ़ दिल्ली अम्बाला लुधियाना व जालंधर होता हुआ अमृतसर जाता है। आगे पश्चिमी पाकिस्तान में यह लाहौर, वजीराबाद आदि होता हुआ पेशावर तक जाता है।

(2) **उत्तरी ग्राण्ड ट्रंक रोड**—यह मार्ग बम्बई से दिल्ली होता हुआ अमृतसर तक जाता है। बम्बई से यह मार्ग बड़ौदा, कोटा भरतपुर मथुरा आदि होता हुआ दिल्ली तक जाता है।

(3) **बम्बई-कलकत्ता मार्ग**—बम्बई से एक सड़क नासिक इन्दौर ग्वालियर होती हुई आगरा जाती है। इस सड़क से एक शाखा नागपुर होकर कलकत्ता चली जाती है।

---

1 'India 1970 p 402

29

आवागमन के मार्ग (क्रमश)

(जल एवं वायु-मार्ग)

जल यातायात

भारत में प्राचीन काल से ही जल यातायात महत्वपूर्ण था। इसकी पुष्टि अनेक प्राचीन ग्रन्थ करते हैं। मेगस्थनीज ने भी लिखा है कि 'भारत में 58 नदियाँ नाव चलाने योग्य हैं।' प्राचीन समय के अनेक प्रमुख नगर (जैसे कलकत्ता, पटना, बनारस, हरिद्वार, इलाहाबाद, आगरा, दिल्ली आदि) भी नदियों के किनारे जल यातायात की सुविधा के कारण ही बसाए गए थे। प्रसिद्ध अंग्रेज लेखक डिग्बी ने भी लिखा है 'सन् 1789 में भारतीय व्यापारियों के पास इतने अधिक जहाज थे कि जितने ईस्ट इण्डिया कम्पनी तथा पुर्तगालियों व अमरीकी व्यापारियों के पास कुल मिला कर होंगे।' किन्तु बाद में सरकारी व जहाजों का स्थान भाप से चलने वाले जहाजों ने ले लिया जिसके कारण भारतीय जहाजों की उपयोगिता प्राय नष्ट होगई।

भारत में सबसे पहला स्टीमर डायना 1823 में कुल्पी घाट से कलकत्ता तक चला। इसके बाद 1834 में कलकत्ता से गंगा तट के शहरों तक महीने में एक बार नियमित रूप से स्टीमर चलने लगे। 1882 में कलकत्ता और आगरा के बीच हर 15वें दिन स्टीमर चलना शुरू हुआ। कलकत्ता व आगरा के मध्य 2 250 Kms की दूरी है। ये स्टीमर 120 फीट लम्बे और 22 फीट चौड़े होते थे। इनके इंजन 40 से 90 अश्व शक्ति के होते थे व गति 10 12 Kms प्रति घण्टा थी।

भारत में आयोजित एवं समन्वित जल यातायात की आवश्यकता (Necessity of a planned and co ordinated development of water transport in India)—

भारत, जो कि प्राचीन समय में जल-यातायात की दृष्टि से अग्रणी देश था, में उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से नदी यातायात की अवनति आरम्भ हो गई। इस अवनति के तीन प्रमुख कारण हैं—(1) रेलों का निर्माण (2) सरकार की उदासीनता, (3) सिंचाई योजनाओं का प्रारम्भ।

स्वतन्त्रता के पश्चात भारत उन्नति एवं विकास के शिखर की ओर निरन्तर बढ़ता जा रहा है पुराने कारखानों का विस्तार हो रहा है व नवीन कारखानों की स्थापना हो रही है कृषि व औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि हो रही है, कच्चे व पक्के

माल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने की आवश्यकता पडती है—अत यातायात के सस्ते एवं सुलभ साधन की आवश्यकता स्पष्ट प्रतीत होती है। यातायात के सस्ते साधन उपलब्ध करने का अर्थ है—जल यातायात का विकास। यह ध्यान रहे कि कोई भी यातायात का साधन व मार्ग प्रत्येक दशा में लाभप्रद नहीं होता। सबका अपना-अपना निजी महत्त्व है। अत भारत की बदलती हुई परिस्थितियों को देखते हुए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि सस्ते जल यातायात का आयोजित एवं सर्वांगीण ढंग से विकास किया जाय। इसके निम्नलिखित कारण हैं —

(1) सस्तापन—यातायात के अन्य साधनों की अपेक्षा जल यातायात सस्ता होता है। इसका कारण यह है कि जल मार्ग प्रकृति द्वारा प्रदान किया हुआ होता है तथा इसके निर्माण में व्यय नहीं होता। हाँ यातायात के लिए निर्मित की गई नहरों में व्यय अवश्य होता है किन्तु फिर भी अन्य यातायात के साधनों की अपेक्षा कम होता है। यद्यपि वायु यातायात के लिए भी वायु मार्ग प्राकृतिक ही होता है और इस मार्ग के लिए कुछ व्यय नहीं करना पडता किन्तु भूमि पर हवाई अड्डे व वायुयान में सीमित स्थान आदि होने के कारण यह साधन महँगा होता है। नदियों की देख रेख तथा उन्हें यातायात योग्य बनाये रखने में कुछ व्यय अवश्य पडता है किन्तु यह व्यय रेलों व सडकों पर किये गये व्यय की अपेक्षा कम होता है।

(2) सस्ती शक्ति का प्रयोग—यातायात के अन्य साधनों की अपेक्षा नाव तथा जलयान के सचालन में शक्ति का कम उपयोग होता है क्योंकि नाव व जहाज धारा के साथ साथ आसानी से चले जाते हैं और विपरीत धारा में अपेक्षाकृत अधिक शक्ति लगानी पडती है।

(3) भारी एवं कम मूल्य की वस्तुओं के लिए उपयुक्त—जल-यातायात विशेषत भारी व कम मूल्य की वस्तुओं के लिए अन्य साधनों की अपेक्षा अधिक उपयुक्त होता है। लकडी कोयला पत्थर व अनेक प्रकार के खनिज पदार्थों का एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिये जल यातायात ठीक रहता है। इसका कारण यह है कि रेल द्वारा इन्हें भेजने में व्यय अधिक होता है और वायु मार्ग द्वारा इन्हें भेजना प्राय असम्भव (अति व्ययशील होने के कारण) सा ही है।

(4) विदेशी व्यापार में अनिवार्य—जो पडोसी देश स्थल-मार्ग द्वारा जुडे हुए होते हैं उनके अतिरिक्त जल यातायात के बिना विदेशी व्यापार असम्भव है। भारत का निकटवर्ती देशों (जैसे लंका ब्रह्मा पूर्वी द्वीपसमूह अरब आदि) और दूरस्थ देशों (जैसे यूरोप अमरीका आदि) से विदेशी व्यापार जल-यातायात के द्वारा ही होता है। यहाँ तक कि पाकिस्तान व भारत की सीमा स्थलीय होने पर भी अधिकांश व्यापार जल मार्गों से ही होता है।

भारत का जल-यातायात देश के समस्त यातायात का एक बहुत ही छोटा भाग है। नदियों व नहरों द्वारा ले जाने वाला माल रेलों द्वारा ढोये जाने वाले

माल का । प्रतिशत भी रहा है । अतः देश में जल मार्गों के विकास का बहुत विस्तृत क्षेत्र है । भारत के आर्थिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि जल यातायात का विकास किया जाय—किन्तु साथ ही हम यह भी ध्यान रखना होगा कि यह विकास आयोजित ढंग से होना चाहिए अन्यथा लाभ न होगा । साथ ही वायु व सड़क यातायात के साथ ही जल यातायात का समन्वय आवश्यक है । इन्हीं उद्देश्यों को दृष्टि में रखते हुए केन्द्रीय सरकार ने 'केन्द्रीय जल शक्ति सिंचाई व यातायात कमीशन' (Central Water Power Irrigation and Navigation Commission) नाम की संस्था की स्थापना सन् 1945 में की और भारत के संविधान द्वारा अन्तर्प्रान्तीय जल मार्गों के विकास का उत्तरदायित्व इसी संस्था को सौंपा है । इस संस्था का प्रमुख कार्य यह है कि विद्यमान जल-मार्गों का विकास एवं सुधार करे, जल यातायात का व्यापार करने वालों को संगठित कर और जिन क्षेत्रों में जल-मार्ग नहीं हैं वहाँ उनकी व्यवस्था करे । इस कमीशन ने जल-यातायात का विकास करने की अनेक योजनाएँ बनाई हैं, जिनमें गंगा नदी पर पटना से कानपुर तक जमुना नदी पर इलाहाबाद से आगरा तक घाघरा नदी पर पटना से फैजाबाद तक के जल मार्गों की योजनाएँ प्रमुख हैं । इसके अतिरिक्त एशिया तथा सुदूरपूर्व के आर्थिक आयोग की ओर से भारत सरकार की प्रार्थना पर श्री आटो पापर (Otto Popper) को आन्तरिक जल मार्गों के विकास के सम्बन्ध में परामर्श देने के लिए भेजा गया था । यदि आयोजित एवं समन्वित ढंग से जल-यातायात का विकास किया जाय तो देश का यातायात का सस्ता साधन उपलब्ध हो सकता जो औद्योगिक उन्नति के कारण बढ़ते हुए रेल व सड़क यातायात के भार को कम करने में सहायक होगा ।

आन्तरिक जल यातायात के विकास में प्राकृतिक बाधाएँ—

भारत को नदियों का देश कहा जा सकता है । यहाँ सभी प्रकार की नदियाँ दृष्टिगोचर होती हैं—लम्बी छोटी, पहाड़ी, पठारी सदैव बहने वाली, वर्षा ऋतु में बहने वाली, उथली गहरी आदि । किन्तु फिर भी देश में आन्तरिक जल-यातायात विकसित दशा में नहीं है, इसके अनेक भौगोलिक कारण है —

(1) बाढ़ आना—भारत की अनेक नदियों में वर्षा ऋतु में बाढ़ आ जाती है, अतः जल धारा इतनी वेगवती हो जाती है कि उनमें नाव चलाना अत्यन्त कठिन हो जाता है ।

(2) नदियाँ सूख जाती हैं—वर्षा ऋतु समाप्त होते ही नदियों में पानी क्रमशः कम होता जाता है । गर्मियों में अनेक नदियाँ तो बिल्कुल ही सूख जाती हैं और अनेक नदियों में पानी इतना कम रहता है कि उनमें नावें नहीं चलाई जा सकतीं ।

(3) किनारे पर रेती—अधिकांश नदियों के किनारे पर दूर-दूर तक रेती फैली रहती है । अतः नदियों तक गाड़ियों का आना जाना कठिन होता है ।

(4) मार्ग बदलना—कभी कभी नदियाँ अपना मार्ग बदल देती है और एक

किनारे से दूसरे किनारे की पतली धारा के रूप में बहने लगती हैं। इस कारण नावें चलाने के लिए उनका उपयोग नहीं हो पाता है।

(5) नदियों के डेल्टे—अधिकांश नदियाँ डेल्टे बनाती हैं, अत बालू की अधिकता के कारण समुद्र से देश के भीतरी भाग में जहाज नहीं आ पाते हैं।

(6) जल प्रपात—दक्षिण भारत की अनेक नदियाँ पठारी भूमि पर बहती हैं और उनके मार्ग में अनेक प्रपात भी पड़ते हैं अत नावें नहीं चलाई जा सकती।

वर्गीकरण—

भारत के जल-मार्गों का वर्गीकरण इस प्रकार है —(1) अन्तर्देशीय जल मार्ग—(क) नदी मार्ग (ख) नहर मार्ग। (2) सामुद्रिक जल-मार्ग।

(1) अन्तर्देशीय जल-मार्ग—

प्राचीन भारत में जल यातायात बहुत ही उन्नत अवस्था में था किन्तु देश में रेलों के प्रचलन से जल यातायात का महत्त्व घटता हो गया। प्राचीन नगर जो व्यापारिक केन्द्र थे, प्राय नदियों के किनारे ही बसे हुए हैं।

भारत में 14 हजार किलोमीटर से भी अधिक लम्बा नौगम्य (navigable) जल-मार्ग है जिसमें से लगभग 5 हजार किलोमीटर मार्ग में स्टीमर चल सकते हैं और शेष में नावें। इन जलमार्गों में गंगा व ब्रह्मपुत्र नदियाँ व उनकी नहरें, आन्ध्र में बकिंघम नहर उड़ीसा में महानदी की नहरें आदि प्रमुख हैं।

अन्तर्देशीय जल मार्ग की दृष्टि से भारत को दो भागों—उत्तरी भारत और दक्षिणी भारत में विभक्त करना उपयुक्त होगा। उत्तरी भारत की नदियाँ प्राय वर्ष पर्यन्त प्रवाहित रहती हैं मैदानों में होकर बहती है और लम्बाई भी पर्याप्त है। इसके विपरीत दक्षिण भारत की नदियाँ अपेक्षाकृत छोटी द्रुत बहती, ऊंच नीच पथरीले भागों में बहने वाली तथा ग्रीष्म ऋतु में शुष्क हो जाने वाली अथवा पानी की क्षीण रेखामात्र रह जाने वाली होती हैं अत यातायात के लिए आदर्श नहीं हैं।

उत्तरी भारत में लगभग 42 हजार किलोमीटर लम्बे जल यातायात योग्य मार्ग हैं जिनमें गंगा नदी जल-यातायात के लिए पहले बड़ी महत्त्वशील थी, अब भी कदाचित् देश में सबसे अधिक नावें आदि इसी नदी में चलती हैं। गंगा नदी अपने मुहाने से लगभग 800 Kms तक 10 मीटर गहरी है, अत इसमें स्टीमर चलते हैं। नावें कानपुर तक चलती हैं। यमुना नदी में इलाहाबाद तक नावें चलती हैं।

यातायात की दृष्टि से दूसरी नदी ब्रह्मपुत्र है। यह नदी लगभग 2900 किलोमीटर लम्बी है किन्तु मुहाने से केवल 1300 Kms तक ही स्टीमर चलते हैं। पूर्वी पाकिस्तान होते हुए डिब्रूगढ़ तक इससे जहाज चलते हैं। खनिज, तेल, चाय, जूट, लकड़ी व अन्य व्यापारिक सामान स्टीमरों के द्वारा कलकत्ता तक लाया

जाता है। जमुना नदी में नावें चलती हैं। दक्षिण भारत में कृष्णा, गोदावरी व कावेरी नदियों में भी थोड़ी-बहुत दूर तक नाव चलती है।

अन्तर्देशीय जल मार्गों में नदियों के अतिरिक्त दूसरा प्रमुख मार्ग नहरों का होता है। भारत में अधिकांश नहरें सिंचाई की दृष्टि से बनाई गई थीं और ये प्राय गाँवों व नगरों से दूर खेतों में होकर जाती हैं इस कारण यातायात के लिए लाभदायक सिद्ध नहीं हो सकती हैं। भारत में नाव चलाने योग्य नहरें बहुत कम हैं यद्यपि विश्व में सबसे अधिक नहरें भारत में ही हैं। नाव चलाने योग्य नहरों की लम्बाई लगभग 6,760 Kms है। इस प्रकार की सबसे बड़ी नहर बकिंघम नहर है जो इसमें कृष्णा और कावेरी नदियों के डेल्टा को मिलाती है। इस नहर में यह दोष है कि बार बार मिट्टी जम जाती है। गंगा की ऊपरी नहर में 425 Kms तक—हरिद्वार से कानपुर तक—नावें चलती हैं। पश्चिमी बंगाल में भी जल-यातायात का काफी विकास हुआ है।

बहुमुखी योजनाओं से जल मार्गों का भी विकास हो सकेगा। हीराकुड बाँध बन जाने के पश्चात् महानदी में समुद्र की ओर 530 Kms तक नावें चल सकेंगी। दामोदर घाटी योजना पूरी हो जाने पर रानीगंज के कोयला-क्षेत्र को जल मार्ग द्वारा हुगली नदी से मिलाया जायेगा।

भारत सरकार भी अब अन्तर्देशीय जल-मार्गों के विकास की ओर प्रयत्नशील है। यातायात की नई समस्याओं का अध्ययन करने के लिए पूना में 'नदी अनुसंधानशाला (River Research Institute) की स्थापना की गई है। गंगा नदी को नौगम्य बनाने के लिये गंगा जल यातायात बोर्ड (Ganga Transport Board) भी स्थापित हो चुका है। इनके अतिरिक्त अन्तर्देशीय जल मार्गों के विकास करने के उद्देश्य से 'केन्द्रीय जल मार्ग सिंचाई व यातायात आयोग' (Central Waterways Irrigation and Navigation Commission) की स्थापना भी हो चुकी है।

केन्द्रीय जल-मार्ग—सिंचाई व यातायात आयोग ने आन्तरिक जल मार्गों के विकास के लिए कुछ योजनाएं बनाई हैं, जिनमें से प्रमुख ये हैं —(1) गंगा नदी के जल मार्गों को नर्बदा से मिला दिया जाय। (2) नर्बदा नदी के जल मार्गों को गोदावरी नदी के जल मार्गों से मिला दिया जाय। (3) ताप्ती नदी को वर्धा नदी द्वारा गोदावरी नदी से मिला दिया जाय। (4) गंगा नदी को सोन व रिहन्द के द्वारा महानदी से मिला दिया जाय। (5) कलकत्ता को मद्रास से और वहाँ से कुमारी अन्तरीप होते हुए केरल के पश्चिमी तट को आन्तरिक जल मार्गों द्वारा मिलाया जाय।

इन योजनाओं पर अभी तक तो कोई वास्तविक कार्य नहीं हो पाया है, परन्तु यदि ये योजनाएँ पूर्ण हो जाएँ तो यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि देश का आन्तरिक जल यातायात बहुत अधिक विकसित हो जायगा और देश को यातायात का एक सस्ता एवं सुलभ साधन उपलब्ध हो जायगा जिसके फलस्वरूप देश में औद्योगिक उन्नति में बढ़ते हुए रेल एवं सड़क यातायात का भार कुछ हल्का हो सकेगा।

आंतरिक जल यातायात समिति 1959 (Inland Water Transport Committee 1959) की सिफारिशो के आधार पर तृतीय पंचवर्षीय योजना म विकास का कायक्रम बनाया गया था। इस कायक्रम म लगभग 3 5 करोड रुपय व्यय किय जान का प्रावधान था, जिसम से 1 5 करोड केन्द्र सरकार व 1 9 करोड रुपये राज्य सरकारा द्वारा व्यय करन का प्रावधान था। राज्य सरकार इन कार्यों के लिए रुपया व्यय करेगी—केरल मे पश्चिमी तट पर नहर (West Coast Canal) का विकास उडीसा में तालण्डा व केन्द्रपारा नहरा का विकास तथा राजस्थान नहर मे जल यातायात की सुविधाओ का विकास करना।

चौथी पंचवर्षीय योजना—सरकार ने दीघकालीन लक्ष्य यह निर्धारित किया है कि पाँचवीं याजना क अन्त तक विदेशो के साथ भारत का कम से कम आधा व्यापार भारतीय जहाजा से हाने लगेगा।

इस दीघकालीन लक्ष्य की पूर्ति की दृष्टि मे रखते हुए चौथी याजना म जहाजरानी उद्योग के लिए 140 करोड रुपय का प्रावधान रखा है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए लगभग 45 लाख टन क जहाजा की आवश्यकता होगी।

तीसरी याजना के अन्त म भारतीय जहाजा की कुल क्षमता 15 4 लाख टन हो चुकी थी, चौथी योजनाकाल म 15 लाख टन की क्षमता और बढाई जावेगी। इस प्रकार चौथी याजना के अन्त तक 30 लाख टन के जहाज काम करग।

चौथी योजना क अन्त तक तटवर्ती बेडा 4 लाख टन का हो जायगा। सन 1967 म यह बेडा 3 3 लाख टन का है।

(2) सामुद्रिक जल माग—

भारत पूर्वी गोलाद्ध क मध्य म स्थित होन के कारण समुद्र माग द्वारा विश्व के प्राय समस्त मुख्य देशो से मिला हुआ है। बम्बई कोचीन मद्रास विशाखापट्टनम, कलकत्ता आदि भारत क प्रमुख बन्दरगाह है जहाँ अनेक सामुद्रिक माग आकर मिलत हैं। भारत का निम्नलिखित सामुद्रिक मार्गों स सम्बन्ध है —

(क) स्वेज माग—यह माग सन् 1899 म खुला। भारत से यूरोप जान के लिए सबसे छोटा जल माग है। यूरोप स आन वाला यह माग अरब के दक्षिणी पश्चिमी किनारे पर स्थित अदन होकर बम्बई आता है। अदन और बम्बई के मध्य 1 650 नौटिकल मील (Nautical Miles) का अन्तर है। इस माग से यूरोपीय देशो को प्राय कच्चा माल और वहाँ से मशीने आदि आती हैं।

(ख) आशा अन्तरीप माग—दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका और दक्षिणी अमरीका को भारत से जहाज आते जाते है। स्वेज माग म जहाजो का टैक्स अधिक देना पडता है अत जिन जहाजो को पहुँचने म शीघ्रता नही होती वे इसी माग से आते जात हैं।

(ग) सिंगापुर-माग—भारत के लिए यह माग अत्यन्त महत्त्वशील है क्योकि

इस माग के द्वारा ही भारत एशिया के पूर्वी देशों जापान कनाडा संयुक्त राज्य अमरीका के पश्चिमी तट, यूरोप आदि को जाते हैं।

(घ) आस्ट्रेलिया मार्ग—भारत व आस्ट्रेलिया के मार्ग का महत्व अब बढ़ता जा रहा है क्योंकि इन देशों के बीच व्यापार में निरन्तर वृद्धि हो रही है। एक मार्ग तो कलकत्ता से सिंगापुर होकर आस्ट्रेलिया जाता है और दूसरा मार्ग लंका के प्रसिद्ध बन्दरगाह कोलम्बो से सीधा आस्ट्रेलिया को जाता है।

(ङ) करांची-मार्ग—भारत और पश्चिमी पाकिस्तान के मध्य सामुद्रिक व्यापार बम्बई और करांची बन्दरगाहों के द्वारा होता है।

वायु मार्ग

देश के द्रुत आर्थिक विकास और आबादी में वृद्धि को देखते हुए सरकार को भारत में भी इस बड़े और द्रुतगामी आन्तरिक परिवहन विमानों के उपयोग की योजना बनानी चाहिए जिससे माल और यात्रियों का परिवहन अधिक तेज गति से और अधिक सस्ता हो सके। बढ़ती हुई आबादी और निरन्तर बन रहे आर्थिक विकास की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि सरकार इस नीति पर चलकर ही देश को बैलगाड़ी के युग से आगे बढ़ा सकेगी।

संक्षिप्त इतिहास—

सबसे पहले सन् 1911 में हवाई जहाज से इलाहाबाद और नैनी 10 kms के मध्य उड़ान की गई। इस वर्ष सर जार्ज लायड ने प्रयोग के रूप में प्रथम बार बम्बई से करांची के लिए हवाई यात्रा की थी। इसके अतिरिक्त प्रदर्शन के लक्ष्य से कुछ और भी उड़ान की गयी। प्रथम युद्ध-काल के पश्चात भारत की भौगोलिक स्थिति की महत्ता अनुभव की गई और यूरोप तथा सुदूरपूर्व और आस्ट्रेलिया को जोड़ने वाला प्रदेश सिद्ध हुआ। इसके उपरान्त देश में वायु यातायात की निरन्तर प्रगति जारी रहा। 1 अगस्त 1953 को भारत सरकार ने इसका राष्ट्रीयकरण कर दिया है।

सुविधाएँ—

यद्यपि भारत में अभी तक अन्य देशों की तुलना में वायु मार्ग का विकास नहीं हुआ है किन्तु देश में विकास के लिए अनेक अनुकूल दशाएं प्रस्तुत हैं इनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं —

(1) पूर्वी गोलार्द्ध में भारत की मध्यवर्ती स्थिति होने के कारण यूरोप से आस्ट्रेलिया व अन्य सुदूरपूर्व के देशों को जाने वाले हवाई मार्ग भारत होकर ही जाते हैं।

(2) भारत की जलवायु अच्छी होने के कारण आकाश कुछ समय को छोड़ कर प्रायः वर्ष भर ही स्वच्छ रहता है।

(3) देश विशाल होने के कारण हवाई अड्डे उपयुक्त स्थानों पर बिना कठिनाई के बनाये जा सकते हैं।

(4) भारत में बड़े बड़े नगर दूर-दूर स्थित हैं अतः हवाई यातायात के विकास के लिए पर्याप्त क्षेत्र है। बम्बई, दिल्ली और कलकत्ता आदि पर्याप्त दूरी पर हैं।

(5) अब हमारे देश का औद्योगिक तथा व्यापारिक विकास द्रुतगति से हो रहा है और अति शीघ्र यातायात का वायुयान ही उपलब्ध साधन है अतः देश में इसका विकास काफी होगा।

(6) भारत में अब वायुयान निर्माण भी (बंगलौर में) होने लगे हैं अतः इस क्षेत्र में विकास की सुविधा हो गई है।

वर्तमान स्थिति—

भारत में लगभग 23.5 हजार किलोमीटर लम्बा वायु मार्ग है। यद्यपि विश्व के वायुयान चित्र में भारत ने अभी तक बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं किया है तथापि उसने पिछले वर्षों में इस दिशा में जो साधारण उन्नति की है वह यूरोप व अमरीका की तुलना में महत्त्वहीन है। यात्रियों के नवीनतम उपलब्ध आँकड़े इस प्रकार हैं —

देश	यात्री
संयुक्त राज्य अमरीका	16.50 लाख
इंगलैण्ड	12.00 लाख
कनाडा	8.60 लाख
भारत	3.75 लाख
आस्ट्रेलिया	1.25 लाख
फ्रांस	1.10 लाख

इस प्रकार स्पष्ट है कि वायु-यातायात में भारत का विश्व में चौथा स्थान है।

देश का विभाजन—

वायु यातायात पर विभाजन का दीर्घकालीन प्रभाव खराब पड़ा क्योंकि प्रथम तो पाकिस्तान का विशाल क्षेत्र भारत के पास से चला गया और इसके अतिरिक्त कराँची लाहौर ढाका व चिटगाँव जैसे अच्छे हवाई अड्डे भी भारत के हाथ से निकल गये।

राष्ट्रीयकरण—

सन 1950 में देश में लगभग 15 भारतीय और लगभग इतनी ही विदेशी हवाई कम्पनियाँ कार्य कर रही थी। पारस्परिक प्रतिस्पर्धा पट्रोल के बढ़े हुए भाव तथा अन्य कारणों से अनेक वायु-कम्पनियों को घाटा हो रहा था साथ ही सरकार ने राष्ट्रीय हित के दृष्टिकोण से भी वायु यातायात का राष्ट्रीयकरण करना उचित समझा। सन 1950 में सरकार ने हवाई यातायात के सम्बन्ध में जाँच करने के लिए कमेटी नियुक्त की, जिसने अन्य बातों के अतिरिक्त इसके राष्ट्रीयकरण को 5 वर्षों के लिए स्थगित करने का परामर्श दिया था। किन्तु हवाई यातायात की दशा बिगड़ती ही जा रही थी। अतः सरकार को परामर्श के विरुद्ध, हवाई यातायात

का राष्ट्रीयकरण करना ही उचित है। मई 1953 में संसद ने राष्ट्रीयकरण के लिए 'एयर-कार्पोरेशन एक्ट' पास कर दिया।

इस एक्ट के अनुसार दो कार्पोरेशन स्थापित किए गए—(1) इण्डियन एयर लाइन्स (Indian Airlines) जो देश के आन्तरिक मार्गों तथा पड़ोसी देशों की यात्रा के लिए है और (2) एयर इण्डिया इण्टरनेशनल (Air India International) जो अन्तर्राष्ट्रीय वायुयातायात के लिए है। इण्डियन एयर लाइन्स कार्पोरेशन के वायु मार्गों की कुल लम्बाई 35,500 Kms है और एयर इण्डिया इण्टरनेशनल द्वारा संचालित यात्रा के विमान 15 देशों को जाते हैं और उनके वायुमार्गों की कुल लम्बाई 27 हजार Kms है। एयर इण्डिया ने चौथी पंचवर्षीय योजना में 83 करोड़ रुपए का विकास के लिए प्रबन्ध किया है।

1 अगस्त 1953 का दिन भारत के नागरिक उड्डयन के इतिहास में चिर स्मरणीय रहेगा। उस दिन देश के प्रधान मन्त्री स्व० पं० जवाहरलाल नेहरू ने बिजली का एक बटन दबाकर दिल्ली में बैठे करांची जाने के लिए तैयार वायुयानों पर इण्डियन एयर लाइन्स कार्पोरेशन का ध्वज फहरा दिया। उस दिन से नागरिकों की उड्डयन की सब सुविधाएँ—अन्तर्देशीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों का उत्तरदायित्व एयर कार्पोरेशन एक्ट 1953 के अन्तर्गत भारत सरकार ने अपने हाथ में ले लिया है।

इण्डियन एयरलाइन्स कार्पोरेशन भारत के भीतरी भागों तथा निकटवर्ती देशों जैसे पाकिस्तान, अफगानिस्तान, नेपाल, बर्मा, स्याम, इण्डोनेशिया और लंका आदि में वायु-यातायात का प्रबन्ध करता है। इसके सात विभाग हैं जो विभिन्न मार्गों पर यात्रा का प्रबन्ध करते हैं।

इण्डिया एयरलाइन्स कॉर्पोरेशन के प्रमुख मार्ग—

इनके वायुमार्गों की इस समय कुल लम्बाई 36 320 Kms है। प्रमुख वायुमार्ग ये हैं —

(क) मद्रास—

(1) मद्रास—त्रिवेन्द्रम—मद्रास।

(2) मद्रास—हैदराबाद—नागपुर—दिल्ली।

(3) मद्रास—नागपुर—दिल्ली (रात्रि)।

(ख) बम्बई—

(1) बम्बई—पूना—हैदराबाद—बंगलोर।

(2) बम्बई—नागपुर—कलकत्ता।

(3) बम्बई—करांची—बम्बई।

(4) बम्बई—अहमदाबाद—भुज—करांची।

(5) बम्बई—पोरबन्दर—जामनगर।

(7) बम्बई—कलकत्ता—बम्बई।
(8) बम्बई—कोलम्बो—बम्बई।
(9) बम्बई—दिल्ली—बम्बई।

(ग) कलकत्ता—
(1) कलकत्ता—बंगलौर—कलकत्ता।
(2) कलकत्ता—ढाका—कलकत्ता।
(3) कलकत्ता—चिटगाव—कलकत्ता।
(4) कलकत्ता—रंगून—कलकत्ता।
(5) कलकत्ता—अगरतला—कलकत्ता।
(6) कलकत्ता—अगरतला—गोहाटी—सिलचर।

(घ दिल्ली—
(1) दिल्ली—कलकत्ता—दिल्ली।
(2) दिल्ली—श्रीनगर—दिल्ली।
(3) दिल्ली—लाहौर—दिल्ली।
(4) दिल्ली—करांची—दिल्ली।
(5) दिल्ली—अमृतसर—काबुल।
(6) दिल्ली—लखनऊ—गोरखपुर—वाराणसी—पटना—कलकत्ता।
(7) दिल्ली—आगरा—ग्वालियर—भोपाल—इन्दौर—औरंगाबाद—बम्बई।

(ङ) (1) श्रीनगर—पठानकोट—श्रीनगर।
(च) (1) अगरतला—गोहाटी—अगरतला।
(छ) (1) काठमाडू—पटना, आदि।

भारतीय वैदेशिक सेवा—

एयर इण्डिया इण्टरनेशनल कॉर्पोरेशन भारत से विदेशों के लिए वायु यात्रा का प्रबंध करता है। इसके प्रमुख मार्ग ये हैं —

(1) दिल्ली—बम्बई/कलकत्ता—बम्बई—काहिरा (मिस्र में)—रोम (इटली में)—जिनेवा (स्विटजरलैण्ड में)—पेरिस (फ्रांस में)—लन्दन (इंगलैण्ड में)।
(2) लन्दन—ड्यूसलडर्फ (जर्मनी में)—रोम—काहिरा—बम्बई।
(3) बम्बई—काहिरा—रोम—ड्यूसलडर्फ—लन्दन।
(4) लन्दन—जिनेवा रोम—काहिरा—बम्बई।
(5) कलकत्ता—बम्बई—दिल्ली।
(6) करांची—अदन (अरब में)—नैरोबी (केनिया)—पूर्वी अफ्रीका में।
(7) नैरोबी—अदन—करांची—बम्बई।

यह उल्लेखनीय है कि एयर इण्डिया इण्टरनेशनल के वायुयान इस समय 17 देशों को जाते हैं।

वायु यातायात समझौते—

भारत सरकार व संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार के मध्य भारत द्वारा इन दोनो देशो के मध्य वायुयान चलाने का समझौता हुआ है भारत ने ऐसे समझौते ईरान व जापान से भी किये हैं।

निम्नलिखित 27 देशो से भारत ऐसे समझौते कर चुका है— अफगानिस्तान आस्ट्रेलिया लंका मिस्र फ्रांस नीदरलण्ड पाकिस्तान फिलिपाइन्स स्विटजरलण्ड, इटली जापान स्वीडन, रूस और इंगलण्ड।

निम्नलिखित देशो से भारत ने ऐसे समझौते अस्थायी रूप से किये हैं — ईरान, नार्वे डेनमार्क थाइलण्ड बर्मा नेपाल और पश्चिमी जर्मनी।

भारत एवं इंगलण्ड के मध्य वायु-मार्ग—

भारत व इंगलण्ड के मध्य अनेक कम्पनियों के वायुयान चलते हैं। इन कम्पनियो के मार्ग अलग अलग हैं। इन कम्पनियों में से एक कम्पनी भारत सरकार की है जिसका नाम एयर इण्डिया इन्टरनेशनल (Air India International) है। इसके अतिरिक्त इंगलण्ड फ्रांस अमरीका आदि अनेक देशो के वायुयान भी चलते हैं।

दिल्ली से यदि यात्रा आरम्भ की जाय तो पालम अथवा सफदरजंग हवाई अड्डे से वायुयान में बैठेंगे। यहाँ से एक मार्ग कराँची होता हुआ जाता है और दूसरा मार्ग बम्बई होता हुआ। एयर इण्डिया इण्टरनेशनल का मार्ग कराँची होकर नहीं जाता है बल्कि बम्बई होकर जाता है। बम्बई में सांताक्रुज हवाई अड्डा अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा है। यहाँ से चलकर शारजा पहुँचते हैं जो अरब के पूर्वी तट पर स्थित बन्दरगाह है। शारजा से चलकर फारस की खाड़ी (Persian Gulf) में स्थित बहरीन द्वीप (Bahrein Islands) पहुँचते हैं। इसे मोतियों का द्वीप भी कहते हैं। यहाँ से मिट्टी का तेल भी निकाला जाता है। यहाँ से बसरा (Basra) पहुचते हैं जो ईराक की राजधानी है। यह यूरोप भारत वायु मार्ग पर प्रमुख हवाई अड्डा है। यह खजूरों के व्यापार के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ से पलस्टाइन के दक्षिण में स्थित गाजा नगर पहुँचते हैं। यह यहाँ का प्रमुख व्यापारिक केन्द्र है व प्रमुख बन्दरगाह है। यहाँ से खजूर व ऊन बाहर भेजी जाती है। गाजा से आगे चलकर वायुयान मिस्र (Egypt) की राजधानी काहिरा (Cairo) पहुँचते हैं। यह अफ्रीका का सबसे बड़ा नगर है। काहिरा की गणना विश्व के बड़े हवाई अड्डों में की जाती है। यहाँ अल-अजहर विश्वविद्यालय है जो मुस्लिम जगत का प्रमुख विश्वविद्यालय है। आजकल इसकी और भी अधिक उन्नति हो रही है। यहाँ से सिकन्दरिया (Alexandria) पहुँचते हैं। यह हवाई अड्डा व बन्दरगाह दोनो ही है। यह मिस्र का बन्दरगाह है। यहाँ से मिस्र का लगभग 80% व्यापार होता है। कपास ऊन अण्डे निर्यात की प्रमुख वस्तुएँ हैं। इसके पश्चात् यूनान (Greece) की राजधानी एथेंस (Athens) पहुँचते हैं। सिकन्दरिया से एथेन्स जाने के लिए वायुयान भूमध्यसागर (Mediterranean Sea)

को पार करता है। यह प्राचीन सभ्यता का केन्द्र माना जाता है। एथेन्स से हवाई जहाज ब्रिंडिसी (Brindis) पहुँचते हैं जो इटली के दक्षिण-पूर्वी तट पर एक प्रसिद्ध बन्दरगाह है। यहाँ से रोम (Rome) पहुँचते हैं जो इटली की राजधानी है। यह एक प्राचीन नगर है व कई शताब्दियों से धार्मिक केन्द्र रहा है। अब भी 'रोमन कैथोलिक चर्च' का प्रधान कार्यालय है। रोम से चल कर जिनेवा (Geneva) पहुँचते हैं जो विश्वविख्यात नगर है। यह स्विटजरलैण्ड का प्रमुख औद्योगिक, व्यापारिक तथा शिक्षा का केन्द्र है। जिनेवा से उड़ कर फ्रांस की राजधानी पेरिस (Paris) पहुँचते हैं। इसकी गणना विश्व के सबसे सुन्दर नगरों में की जाती है। पेरिस से उड़ कर लंदन (London) पहुँचते हैं इसके लिए इंगलिश चैनल को पार करना पड़ता है।

विदेशी कम्पनियाँ—

उपरोक्त तो भारतीय कम्पनियों का विवरण हुआ। इनके अतिरिक्त कुछ विदेशी कम्पनियाँ भी चलती हैं इनमें से प्रमुख ये हैं —

(1) ब्रिटिश ओवरसीज एयरवेज कॉरपोरेशन (B O A C)—यह ब्रिटिश कम्पनी है तथा इसके निम्नलिखित प्रमुख मार्ग हैं—(क) लन्दन से अफ्रीका, कराँची, कलकत्ता रंगून सिंगापुर आदि होता हुआ आस्ट्रेलिया में सिडनी तक, (ख) लन्दन से रोम मिस्र, कराँची दिल्ली होता हुआ कलकत्ता तक (ग) लन्दन से रोम, मिस्र, बम्बई होता हुआ कोलम्बो तक (घ) लन्दन से रोम काहिरा (मिस्र), कराँची कलकत्ता, रंगून बैंकॉक होता हुआ टोकियो (जापान) तक जाता है।

( ) ट्रान्स वर्ल्ड एयरवेज (T W A)—यह अमरीकन कम्पनी है। वाशिंगटन से न्यूयार्क फ्रांस, इटली काहिरा आदि होता हुआ बम्बई तक इसका मार्ग है।

(3) पान अमेरिकन वर्ल्ड एयरवेज—इसका एक मार्ग न्यूयार्क से बोस्टन, लन्दन ब्रूसेल्स इस्तम्बूल कराँची, दिल्ली आदि होता हुआ कलकत्ता तक जाता है। दूसरा मार्ग कलकत्ता से बैंकॉक, हाँगकाँग, मनीला, टोकियो आदि होता हुआ संयुक्त राज्य अमरीका में लास एंजिल्स होता हुआ सनफ्रान्सिस्को तक जाता है।

(4) ओरियेन्ट एयरवेज—इसके तीन वायु मार्ग हैं—(क) ढाका से दिल्ली होता हुआ कराँची तक (ख) कलकत्ता से चिटगाँव होता हुआ रंगून तक (ग) कलकत्ता से चिटगाँव होता हुआ ढाका तक।

(5) पाक एयर सर्विस—इसका मार्ग पेशावर से आरम्भ होकर रावलपिण्डी, कराँची, लाहौर होता हुआ दिल्ली तक है।

इनके अतिरिक्त एयर फ्रांस एयर सीलोन के० एल० एम० ईरानियन एयरवेज स्यामीज एयरवेज फिलीपाइन एयरलाइन्स आदि अन्य विदेशी कम्पनियों के वायु-मार्ग भारत होकर गुजरते हैं।

प्रमुख हवाई अड्डे—

भारत सरकार द्वारा नियन्त्रित इस समय 85 हवाई अड्डे हैं।[1] संयुक्त

[1] *India 1970*, p 411

राज्य अमरीका मे इस समय (सन् 1968) कुल 10 015 हवाई अडडे हैं, इनमे से जिन अडडो पर सभी लोग उतर सकते हैं उनकी सख्या 6,850 है, शेष 3,165 अडडे सकटकालीन अथवा निजी उपयोग के लिए हैं।[1]

भारत के कुल 85 हवाई अडडो का वर्गीकरण इस प्रकार है —

(1) अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे—ये भारत के सबसे बडे हवाई अडडे हैं। इन अडडो की सख्या केवल 4 है। ये अड्डे बम्बई (सान्ताक्रुज) कलकत्ता (दमदम) और दिल्ली (पालम) और मद्रास म हैं।

(2) बडे हवाई अड्डे—ऐसे हवाई अडडो की सख्या 8 है। ये अडडे दिल्ली (सफदरजग) मद्रास (सण्ट टामस माउण्ट) नागपुर (मध्य प्रदेश) गौहाटी (असम) अहमदाबाद (गुजरात) अगरतला (त्रिपुरा) त्रिचरापल्ली (मद्रास राज्य) और बेगमपट।

(3) मध्यम श्रेणी के हवाई अड्डे—ऐसे हवाई अडडो की सख्या 45 है जिनम से जयपुर उदयपुर अमृतसर बडोदा भोपाल भुवनेश्वर (कटक), बम्बई (जूहू) कोयम्बटूर गया इन्दौर, बादला लखनऊ (अमौसी) पटना पोरबन्दर, पोर्ट ब्लेयर (अण्डमान द्वीप समूह) रामपुर वाराणसी विशाखापट्टनम आदि हैं।

(4) छोटे हवाई अड्डे—इनकी सख्या 29 है जिनम कोटा (राजस्थान), अकोला (महाराष्ट्र) बिलासपुर (मध्य प्रदेश) झाँसी (उत्तर प्रदेश) जबलपुर (मध्य प्रदेश) मुजफ्फरपुर (बिहार) मसूर शोलापुर (महाराष्ट्र) आदि हैं।

जोधपुर सामरिक महत्त्व का हवाई अडडा है। जोगबानी (बिहार) का हवाई अडडा बन रहा है।

वायु-मार्ग द्वारा दूरी —

भारत के प्रमुख नगरो के मध्य वायु मार्ग द्वारा दूरी इस प्रकार है —

कलकत्ता से दिल्ली	810 मील
कलकत्ता से बम्बई	1 040 ,,
कलकत्ता से बगलौर	1,036
दिल्ली से बम्बई	7.0 ,,
दिल्ली से मद्रास	1,155 मील
बम्बई से लखनऊ	807
नागपुर से लखनऊ	560 ,,
बम्बई से हैदराबाद	88

1 *American Reporter*

UNIVERSITY QUESTIONS

1 भारत म जल परिवहन के साधनो का विकास कितना हुआ है ? हमारा भूगोल इस विकास म कहाँ तक सहायक है ? (T D C, 1960)

2 Trace the sea route connecting India with England in the west and Australia in east What advantages accrue to this country through this situation ? (T D C, 1962)

3 सन 1950 के बाद भारत ने जल यातायान उद्योग का क्या विकास किया है ? लन्दन पहुँचने तक भारत का चला जलयान किन पोताश्रयों (*Ports*) से गुजरेगा । (T D C, 1963)

4 भारत म वायु-यातायान के विकास के लिए क्या साधन हैं। भौगोलिक आर्थिक एव राजनीतिक परिस्थितियाँ किस प्रकार वायु यातायात पर प्रभाव डालती हैं ? (T D C, 1965)

5 भारत म आन्तरिक जल मार्गों की वर्तमान स्थिति का वर्णन कीजिए। इसकी उन्नति के लिए उचित सुझाव दीजिए। (T D C, 1966)

30

भारत के प्रमुख औद्योगिक एवं व्यापारिक केन्द्र

प्रारम्भिक—औद्योगिक एवं व्यापारिक केन्द्र का अर्थ

व्यापारिक नगर वह स्थान है जहाँ पर माल एकत्रित होता हो तथा यातायात के किसी साधन द्वारा माल अन्य स्थानों को भेज दिया जाता हो। वास्तव में जब एक ही नगर में कोई विशेष व्यवसाय अथवा उद्योग का स्थानीयकरण हो जाता है तो वह औद्योगिक एवं व्यापारिक नगर बन जाता है। प्रो० हंटिंगटन[1] ने व्यापारिक नगर एवं औद्योगिक नगर की परिभाषा इस प्रकार की है —

'व्यापारिक नगर उस राक्षस की तरह होता है जो अपनी सम्पत्ति के द्वार पर बैठा रहता है। एक ओर तो वह अपनी सारी उपज को खरीद लेता है और दूसरी ओर वह अपनी क्षेत्रीय उपज को दूर के स्थानों तक पहुँचाता है और इसके बदले में क्षेत्रीय आवश्यकताओं की माँग पूरी किया करता है।

'औद्योगिक नगर की तुलना उस राक्षस से की जा सकती है जो अपने हाथों से मशीन, कपड़ा, रासायनिक पदार्थ अथवा अन्य सामान काफी मात्रा में तैयार करता है और इन मालों को विक्रय करके कच्चा माल तथा खाद्य सामग्री अपने पड़ोसियों या दूर के देशों से प्राप्त करता है।

अनेक नगर केवल व्यापारिक ही होते हैं जैसे—कराची, मनागोम आदि, और अनेक नगर केवल औद्योगिक होते हैं, जैसे—जमशेदपुर, भिलाई आदि। किन्तु अब यह प्रवृत्ति अधिक देखी जा रही है कि औद्योगिक नगर व्यापारिक नगर भी होते हैं और व्यापारिक नगर औद्योगिक नगर भी होते हैं जैसे कानपुर, बम्बई, ओसाका, न्यूयार्क।

व्यापारिक केन्द्र तथा औद्योगिक केन्द्र में अन्तर यह होता है कि व्यापारिक नगर तो एक प्रकार का एकत्रीकरण तथा वितरण केन्द्र होता है और औद्योगिक नगर किसी (अथवा कि ही) कच्चे माल से निर्मित माल बनाने का केन्द्र होता है। व्यापारिक केन्द्र तथा औद्योगिक केन्द्र, दोनों ही में कच्चा माल एकत्रित किया जाता है। किन्तु अन्तर इतना अवश्य होता है कि व्यापारिक केन्द्र में माल को पुन

[1] Huntington *Principles of Economic Geography*, p 613

वितरण के उद्देश्य से एकत्रित करते हैं और औद्योगिक केन्द्र माल को स्थानीय उपभोग के उद्देश्य से एकत्रित करते हैं।

औद्योगिक केन्द्र की उन्नति के लिए आवश्यक परिस्थितियां

औद्योगिक केन्द्र की उन्नति के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ निम्नलिखित हैं —

(1) **कच्चे माल की निकटता**—किसी भी औद्योगिक केन्द्र के विकसित होने के लिए कच्चे माल की अत्यन्त आवश्यकता प्रतीत होती है क्योंकि बिना कच्चे माल के मिले काम चलना असम्भव हो है। कुछ उद्योग तो इस प्रकार के होते हैं जिनमें कच्चा माल प्रायः दूसरे प्रदेशों से मँगवा लिया जाता है, किन्तु यदि कच्चा माल पास ही मिले तो उद्योग तीव्रगति से उन्नति कर सकेगा। प्रायः व्यावसायिक केन्द्र उन्हीं स्थानों पर केन्द्रित होते हैं जहाँ पर उस उद्योग के लिए कच्चा माल उत्पन्न होता है, जैसे जमशेदपुर, कानपुर तथा मैनचेस्टर को ही लीजिए। जमशेदपुर के पास ही बिहार तथा उड़ीसा बहुत बड़े लौह उत्पादक हैं। कानपुर में भी चमड़ा, गन्ना तथा कपास पास ही उत्पन्न होते हैं। मनचेस्टर में हालांकि कपास पास नहीं मिलती परन्तु मैनचेस्टर खुद एक बड़ा बन्दरगाह है और यह खुद ही अन्य देशों से कच्चा माल आसानी से मँगा सकता है।

(2) **शक्ति के साधनों की सुलभता**—किसी भी औद्योगिक केन्द्र की उन्नति के लिए शक्ति-साधनों का पर्याप्त मात्रा तथा निकटता में मिलना अत्यावश्यक है। लगभग सभी उद्योगों को चलाने के लिए सस्ते तथा सुलभ शक्ति-साधनों का होना आवश्यक है। इसीलिये औद्योगिक केन्द्र शक्ति-साधनों के पास स्थापित हो जाते हैं। कुछ हद तक कच्चा माल अन्य देशों से मँगाया जा सकता है, परन्तु शक्ति-साधन दूर से नहीं लाये जा सकते।

मैनचेस्टर, जमशेदपुर तथा कानपुर जो कि आज काफी बड़े औद्योगिक केन्द्र हो रहे हैं इसका मुख्य कारण शक्ति साधनों की सुलभता है। मनचेस्टर तथा जमशेदपुर के पास क्रमशः लंकाशायर तथा बिहार-उड़ीसा के कोयला क्षेत्र हैं। कानपुर में काफी मात्रा में जल विद्युत प्राप्त हो जाती है।

(3) **कुशल एवं सस्ते श्रमिक**—उद्योग धन्धे प्रायः उन्हीं स्थानों पर केन्द्रित होते हैं जहाँ पर पास में ही सस्ते श्रमिक आसानी से मिल जाते हैं। कुछ धन्धे जिनमें कपास तथा ऊन के कपड़ों का धन्धा इस प्रकार का है कि उनमें बिना सस्ते श्रमिकों के काम ही नहीं चल सकता। कुछ केन्द्र तो ऐसे हैं कि उनमें बिना किसी अन्य विशेष सुविधा के ही सिर्फ इसी आधार पर धन्धे केन्द्रित हो जाते हैं। मनचेस्टर तथा कानपुर में बहुत बड़ी मात्रा में सस्ते श्रमिक आसानी से मिल जाते हैं। जमशेदपुर में भी कुशल श्रमिक इकट्ठे होते जा रहे हैं। यहाँ यह ध्यान रखने योग्य बात है कि श्रमिक सस्ते तथा सुलभ होने के साथ-साथ कार्य-कुशल भी हों।

(4) **सस्ते आवागमन के साधनों की प्रचुरता**—कच्चे माल को बाहर से

मँगाने तथा तथा तयार माल को खपत करने तक भेजने के लिए सस्ते आवागमन के साधनों का होना आवश्यक है। यही कारण है कि प्राय बड़े-बड़े धंधे रेलों के जंक्शन तथा प्रमुख साधनों पर स्थित हो जाते हैं। जमशेदपुर, कानपुर तथा मनचेस्टर बड़े बड़े रेलवे जंक्शन हैं तथा इन शहरों में अच्छे-अच्छे आवागमन के साधनों की प्रचुरता है। मेनचेस्टर तो बड़ा बन्दरगाह भी है।

(5) उपभोग केन्द्रों की निकटता—प्राय ऐसा देखा गया है कि औद्योगिक केन्द्र या तो खुद ही उपभोग केन्द्र हो गये हैं अथवा उपभोग-केन्द्रों के पास ही स्थित होते हैं। खपत केन्द्र घन, बड़े तथा विकसित होने चाहिए। मनचेस्टर के पास ही यूरोप एक बहुत बड़ा खपत केन्द्र है।

(6) जलवायु—श्रमिकों की कुशलता, धंधे की उन्नति आदि के लिए जलवायु का समशीतोष्ण होना अति आवश्यक है। किसी भी औद्योगिक केन्द्र की स्थापना के लिए जलवायु का स्वास्थ्यवर्द्धक होना आवश्यक है। जलवायु यदि नम हो, तो बहुत ही अच्छा है। मेनचेस्टर की जलवायु नम शीतोष्ण तथा ठण्डी है जमशेदपुर की जलवायु कोई खास उपयुक्त नहीं परन्तु उसे कृत्रिम उपायों द्वारा ठीक बनाया गया है। कानपुर की जलवायु भी अन्य क्षेत्रों के देखते हुए ठीक है।

(7) पूंजी की सुलभता किसी केन्द्र के विकास में अच्छा हाथ रखती है। जमशेदपुर में लोहे का धंधा केन्द्रित होने का यह भी कारण है। मेनचेस्टर तथा कानपुर में भी धंधा को पूरी सहायता मिली है।

(8) सरकारी संरक्षण तथा प्रोत्साहन—कुछ ऐसे स्थान भी होते हैं जहाँ पर धंधा को स्थापित करने का निषेध होता है। इसलिए औद्योगिक केन्द्रों की स्थापना में यह भी एक कारण है जिसमें जमशेदपुर कानपुर तथा मनचेस्टर में धंधा को अच्छा प्रोत्साहन मिला।

भारत के प्रमुख नगर

कानपुर—उत्तर प्रदेश का प्रमुख औद्योगिक और व्यापारिक नगर है जो गंगा नदी के किनारे बसा हुआ है। पूर्वी पश्चिमी और उत्तरी-पूर्वी रेल मार्गों का केन्द्र होने से इसका महत्त्व और भी बढ़ गया है। यह बम्बई से लगभग 1 400 Kms और कलकत्ता से लगभग 1,015 Kms दूर है।

इसके निकटवर्ती क्षेत्रों में गंगा की नहरों से सिंचाई करके कृषि की जाती है जिससे गन्ना गेहूँ और कपास आदि की उपज होती है इस कारण यहाँ गन्ना, गेहूँ और कपास आदि कृषि की उपज एकत्रित करने की बड़ी मण्डियाँ हैं।

यह रेलों का बड़ा जंक्शन है। यह नगर सड़कों द्वारा दिल्ली आगरा लखनऊ इलाहाबाद आदि प्रमुख नगरों से जुड़ा हुआ है। यह वायु मार्ग द्वारा देश के प्रमुख भागों से सम्बद्ध है।

यहाँ उद्योग धंधों ने बहुत उन्नति की है इसलिए कानपुर को उत्तर प्रदेश की 'औद्योगिक राजधानी' भी कहते हैं। निकटवर्ती भागों में गन्ना उत्पन्न होने के

कारण यहाँ शक्कर बनाने के कारखाने स्थापित हो गये हैं। ग्राम व क्षेत्रो मे पशु अधिक होने के कारण यहाँ चमड़ा कमाने तथा चमड़े का सामान बनाने के कई कारखाने हैं। पंजाब व राजस्थान से यहा ऊन मगवाया जाता है जिससे यहाँ के ऊनी कारखाने मे कपड़ा बनाया जाता है। सूती कपड़ा बनाने की कई मिलें हैं। विख्यात लालइमली, एल्गिन मिल और म्योर मिल यहा ही हैं। रेलवे वैगन एव लोहा ढालने के कारखाने है। यूरिया रासायनिक खाद बनाने का एक बहुत बडा कारखाना है जिसकी स्थापना सन 1969 मे की गई है। टेलिविजन निर्माण उद्योग भी स्थापित किया गया है। इसके अतिरिक्त यहाँ एल्यूमिनियम, प्लास्टिक की चीज, मोज, बनियान, साबुन तेल निकालने आटा पीसने और रासायनिक पदार्थ बनाने के अनेक कारखाने हैं। फौजी सामान बनाने के भी यहा कई कारखाने हैं। तम्बू सूत व अन्य वस्तुएँ भी बनाये जाते हैं। नगर मे बडे-बडे बैंको की शाखाएँ हैं।

शिक्षा के क्षेत्र मे भी यहाँ काफी उन्नति हुई है। यहा एक विश्वविद्यालय, मेडिकल, इन्जीनियरिंग एव अन्य अनेक शिक्षण सस्थाएँ हैं।

पिछले वर्षों मे यहाँ की जनसख्या मे बहुत वृद्धि हुई है। जनसख्या की दृष्टि से इसका स्थान उत्तर प्रदेश मे प्रथम एव भारत मे आठवा है। सन् 1971 की जन-गणना के अनुसार इसकी जनसख्या 22 73 लाख से भी अधिक थी। उत्तर प्रदेश मे सबसे अधिक आबादी यही की है।

लखनऊ—यह एक प्राचीन नगर है जो गोमती नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है। पहले यह मुगल नवाबो की राजधानी था और आजकल यह उत्तर प्रदेश की राजधानी है। इसे बाग बगीचो का नगर भी कहा जाता है।

यह नगर उत्तर भारत के प्राय सभी बडे नगरो से रेल, सडक एव वायु मार्गों द्वारा मिला हुआ है।

यहाँ अनेक कारखाने हैं। कागज बनाने का एक बडा कारखाना है। रासायनिक उद्योग भी विकसित है। खुर्दबीन (microscope) एव सर्जरी का सामान बनाने का कारखाना है। इनके अतिरिक्त एक सूती मिल, शराब बनाने का कारखाना पानी के मीटर बनाने का कारखाना आदि भी है। रेलवे की एक बडी वर्कशाप भी यहाँ है।

यहाँ अनेक कुटीर उद्योग भी विकसित हैं। हाथी दाँत व लकडी पर नक्काशी का काम गोटा किनारी सोने चाँदी का काम मिट्टी के बर्तन आदि यहाँ बनाये जाते हैं। यहाँ का जरी व चिकन का काम प्रसिद्ध है। लखनऊ का इत्र प्रसिद्ध है।

यहाँ एक विश्वविद्यालय है। अनेक दर्शनीय स्थान हैं जिनमे इमामबाडा रूमी दरवाजा और छत्तरमजिल प्रमुख हैं। यहाँ उत्तर प्रदेश सरकार का सेक्रेटरियेट है और विधान सभा की बैठक होती है। यहाँ फौज की छावनी भी है।

जनसख्या की दृष्टि से उत्तर प्रदेश मे दूसरा स्थान है। सन 1961 मे यहाँ की जनसख्या लगभग 6 6 लाख थी।

आगरा—यह यमुना नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है। मुगल बादशाहों की राजधानी भी रहा है और प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर है।

यह नगर रेलों का प्रमुख जंक्शन है। उत्तर रेलवे, पश्चिम रेलवे व मध्य रेलवे मार्गों द्वारा भारत के अन्य बड़े नगरों से जुड़ा हुआ है। दिल्ली, कानपुर, लखनऊ, कलकत्ता, जयपुर, अहमदाबाद, बम्बई, इलाहाबाद आदि और नगरों से यह सड़क मार्गों द्वारा सम्बद्ध है। वायु-यातायात की भी यहाँ सुविधाएँ हैं। पर्यटकों के लिए यह आकर्षक केन्द्र है।

आगरा एक प्रमुख व्यापारिक मण्डी है। अनाज, दालें, तिलहन, चमड़े व गल्ले की व्यापारिक मण्डी है।

यहाँ अनेक कुटीर उद्योग विकसित हैं जैसे चमड़े की वस्तुएँ (जूता, सूटकेस आदि) दरी, कालीन, गोटे व जरी की वस्तुएँ, पत्थर का सामान आदि। संगमरमर से ताजमहल के नमूने (Models) व अन्य वस्तुएँ बनाई जाती हैं जो पर्यटकों द्वारा विशेष रूप से पसन्द की जाती हैं। यहाँ मीट्रिक प्रणाली के बाट बनाने, सूती वस्त्र बनाने व बिजली का सामान बनाने के कारखाने हैं।

यहाँ एक विश्वविद्यालय है। विश्वविख्यात ताजमहल यहीं स्थित है। इसके अतिरिक्त आगरे का किला, मोती मस्जिद, फतेहपुर सीकरी आदि अन्य दर्शनीय स्थान हैं। उत्तर प्रदेश में आगरा तीसरा घना बसा हुआ नगर है (प्रथम कानपुर और द्वितीय लखनऊ है)। यहाँ की जनसंख्या सन 1961 की जन गणना के अनुसार 5 लाख से भी अधिक थी।

हापुड़—उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग में हापुड़ स्थित है। यह मेरठ जिले में स्थित है। दिल्ली से यह लगभग 55 किलोमीटर (पूर्व की ओर) दूर है। यह गाजियाबाद के निकट, दिल्ली गाजियाबाद मुरादाबाद रेलवे लाइन पर स्थित है।

यह भारत की बहुत बड़ी व उत्तर प्रदेश में अनाज व गुड़ की प्रमुख मण्डी है। विशेषतः गेहूँ की यह उत्तर प्रदेश की सबसे बड़ी मण्डी है। निकटवर्ती भागों के कृषि-पदार्थ यहाँ विक्रय के लिए आते हैं। दालों (विशेषतः अरहर) तथा प्याज की भी यह मण्डी है। यहाँ से देश के विभिन्न क्षेत्रों में अनाज का वितरण होता है। यहाँ अनाज रखने की अनेक खत्तियाँ हैं। अनाज रखने के लिए यहाँ पक्के गोदामों की व्यवस्था की गई है जिनमें 50 हजार टन अनाज रखा जा सकता है।

यह गुड़ के व्यापार का भी प्रमुख केन्द्र है। यहाँ से पश्चिमी बंगाल, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, राजस्थान व उत्तर प्रदेश के अनेक भागों को गुड़ भेजा जाता है। राज्य सरकार के आलू विकास विभाग के प्रयत्नों से यहाँ आलू का उत्पादन भी काफी बढ़ गया है।

यह औद्योगिक नगर तो नहीं है किन्तु व्यापार की दृष्टि से बहुत महत्वशील है। यहाँ चीनी मिलें, कपास व तेल मिल, कोल्ड स्टोरेज व हल्दी पीसने की

मिलें हैं। यहाँ कृषि के यन्त्र व रहट भी तयार किये जाते हैं। यहाँ डिग्री एव इण्टरमीडियट कालेज भी हैं। यहाँ की जनसख्या लगभग 80 हजार है।

दिल्ली—यह यमुना नदी के किनारे स्थित है। यह वतमान स्वतन्त्र भारत की राजधानी है। इसके पूव अँग्रेजो के समय म भी सन 1911 से भारत की राजधानी रही है। इसस पहले सात बार भारत की राजधानी रह चुकी है।

उत्तर से गगा यमुना के मदाना म जाने के लिए प्रवेश द्वार है। यहा चारो ओर से रेल आकर मिलती हैं इसलिए रेलो का बडा जक्शन है। यहा प्रतिदिन 124 सवारी गाडिया आती-जाती हैं अर्थात लगभग प्रत्येक 10 मिनट म कोई न कोई सवारी गाडी आती या जाती है। थल माग का भी केन्द्र है। पालम म प्रसिद्ध हवाई अड्डा है। हवाई मार्गों का भी केन्द्र है।

दिल्ली व्यापारिक एव औद्योगिक दृष्टि स भी महत्त्वपूण है। यहाँ सूती कपडा बनाने, अनाज पीसने बिस्कुट बनाने फीते बनाने आदि के अनेक कारखाने हैं। प्रसिद्ध दिल्ली क्लाथ मिल' यहीं है। सिनमा सितारा हाथी दात का काम मिट्टी के बतन कशीदा व छपाई का काम और सोना चादी का काम भी होता है। यहा अनेक बडे-बडे छापखाने हैं। अनेक प्रसिद्ध समाचार पत्रो के प्रकाशन का केन्द्र है। इसका औद्योगिक एव व्यापारिक महत्त्व दिन प्रति दिन बढ रहा है।

भारत के प्रमुख व्यापारिक केन्द्रो मे दिल्ली की गणना होती है। पजाब, हरियाना उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग आदि की व्यापारिक वस्तुए जसे कपास आदि रेशम और ऊनी कपडा का भी व्यापारिक केन्द्र है। राजस्थान कलकत्ता और बम्बई तथा देश के प्राय प्रत्येक भाग स इसका व्यापारिक सम्बन्ध है।

लाल किला, कुतुबमीनार जामा मस्जिद राजघाट राष्ट्रपति भवन शान्ति वन, केन्द्रीय सचिवालय सीसगज गुरुद्वारा, बिरला मन्दिर आदि यहाँ अनेक दशनीय स्थान हैं। यहा एक विश्वविद्यालय है व अनेक शिक्षण सस्थाए हैं।

दिल्ली के निकट ही नई दिल्ली का शिलान्यास जाज पचम ने 15 दिसम्बर सन् 1911 मे किया था। यहाँ पहले वायसराय रहते थे और अब स्वतन्त्र भारत के राष्ट्रपति व प्रधान मन्त्री रहते हैं। यहा असम्बली है और विदेशी राजदूतो के कार्यालय हैं। सन् 1971 की जनगणना के अनुसार यहा की जनसख्या लगभग 36 30 लाख थी।

बम्बई—बम्बई नगर और बन्दरगाह एक द्वीप पर बसे हुए हैं जो भारत से रेल द्वारा मिले हुए हैं। यह महाराष्ट्र राज्य की राजधानी है। यह ससार के सबसे बडे और अधिक सुरक्षित बन्दरगाहों म से है। भारत के नगरो म इसका द्वितीय स्थान है प्रथम कलकत्ता है। इसकी उन्नति का प्रमुख कारण यह है कि यह यूरोप से सबसे निकट भारत का प्राकृतिक बन्दरगाह है। बम्बई को 'भारत का द्वार' भी कहते हैं। राजस्थान हरियाना, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र राज्य

इसके पृष्ठ प्रदेश में सम्मिलित हैं। इस बन्दरगाह से निर्यात होने वाली वस्तुओं में सूती वस्त्र, मैंगनीज, ऊन, कपास, तिलहन आदि मुख्य हैं। आयात की जाने वाली वस्तुओं में रेल सम्बन्धी वस्तुएं, मशीनें, लोहे का सामान, मोटर, कोयला, पट्रोल, मिट्टी का तेल आदि मुख्य हैं।

भोरघाट और थालघाट देश के भीतरी भाग से बम्बई को जोड़ने में सहायक हुए हैं। यहां कई रेलवे लाइनें आकर मिलती हैं। अतः यह एक बड़ा जंक्शन है। वायु मार्ग की दृष्टि से इसका अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है। पश्चिमी देशों से व्यापार करने के लिए यह भारत का सबसे बड़ा बन्दरगाह है।

यहां पर उद्योग धन्धे विशेषतः सूती वस्त्र उद्योग बहुत विकसित हुए हैं। इस क्षेत्र में कोयला न होने के कारण वेल्स और दक्षिणी अफ्रीका से पहले बहुत कोयला मंगाया जाता था, किन्तु अब यहां जल विद्युत का विकास हो जाने के कारण कोयले का आयात बहुत कम हो गया है। यहां पर सिनेमा उद्योग व होटल उद्योग का भी काफी विकास हुआ है। इसके अतिरिक्त यहां अनेक छोटे छोटे कारखाने हैं। भारत का यह प्रमुख व्यापारिक केन्द्र है। पश्चिमी भारत का यह सबसे बड़ा वितरण केन्द्र है। यहां एक विश्वविद्यालय भी है।

बम्बई का महत्व इससे ही स्पष्ट हो जाता है कि बम्बई को 'छोटा भारत' भी कहा जाता है। इस सम्बन्ध में कहा गया है कि भारत में हर एक चीज का कम से कम एक प्रतिशत भाग बम्बई में है।

बम्बई की जनसंख्या सन् 1971 की जनगणना के अनुसार 59.32 लाख है। जनसंख्या की दृष्टि से बम्बई का भारत में द्वितीय स्थान है।

अहमदाबाद—गुजरात में साबरमती नदी के बायें किनारे पर अहमदाबाद स्थित है। यह खम्भात की खाड़ी से लगभग 80 Kms दूर है। गुजरात राज्य में यह सबसे बड़ा नगर है। इसे 15वीं शताब्दी में गुजरात के नवाब अहमद ने बसाया था। बाद में गुजरात के शासकों ने इसे अपनी राजधानी बनाई थी। बाद में भी यह राजधानी रही।

अहमदाबाद सूती वस्त्र उद्योग के लिए प्रसिद्ध है। यहां इस समय (1971 ई.) 70 सूती-वस्त्र मिलें हैं जिनमें 1.25 लाख श्रमिक काम कर रहे हैं। एक सरकारी अनुमान के अनुसार यहां भारत के कुल वस्त्र उत्पादन का लगभग 20 प्रतिशत

दूसरी ओर गुजरात व भारत के अन्य प्रमुख केन्द्रों से मिला हुआ है। यह रेलों का बड़ा जंक्शन है।

सन् 1971 की जनगणना के अनुसार यहां की जनसंख्या लगभग 17 46 लाख है। जनसंख्या की दृष्टि से यह भारत में छठे नम्बर का नगर है।

[नोट—गुजरात राज्य की वर्तमान राजधानी गांधीनगर है।]

बड़ौदा—यह भी गुजरात राज्य का बड़ा नगर है। पश्चिमी रेलवे का प्रमुख नगर है और बम्बई तथा अहमदाबाद से रेल द्वारा मिला हुआ है। यहाँ सूती वस्त्र की मिलें भी हैं। यह उद्योग, व्यापार व शिक्षा का केन्द्र है। कपास एकत्रित करने का प्रमुख केन्द्र है। यहाँ लकड़ी का सामान अच्छा बनता है। यहां दवाइयां बनाने के भी अनेक कारखाने हैं। यहां की जनसंख्या 3 लाख से अधिक है।

सूरत—यह नगर ताप्ती नदी के निकट स्थित है। रेशम तथा सूती वस्त्र उद्योग का यहां विकास हुआ है। लगभग 350 वर्ष पूर्व यह एक प्रसिद्ध बन्दरगाह था किन्तु अब इसका महत्व नहीं है। इसकी जनसंख्या लगभग $2\frac{1}{4}$ लाख है।

मद्रास—यह कृत्रिम बन्दरगाह है जो तमिलनाडु राज्य में प्रथम नम्बर का, पूर्वी तट पर द्वितीय नम्बर का और भारत में तीसरे नम्बर का बन्दरगाह है। सामुद्रिक रास्ते में मद्रास और कलकत्ते के मध्य 1,122 Kms की दूरी है, बम्बई व मद्रास के मध्य 2 365 Kms की दूरी है।

मद्रास देश के प्रमुख भागों से रेल द्वारा जुड़ा हुआ है। कलकत्ता बम्बई, तूतीकोरन, कालीकट नागपुर आदि से रेल द्वारा सम्बद्ध है। इसका पृष्ठप्रदेश बहुत अधिक धनी नहीं है।

यहाँ से निर्यात होने वाली वस्तुओं में प्रमुख ये हैं—तिलहन रुई चमड़ा व खालें कहवा तम्बाकू मैंगनीज आदि धातुऐं नारियल, हल्दी व मछलियाँ। आयात की जाने वाली प्रमुख वस्तुऐं ये हैं—मशीनें लोहे का सामान, कागज मिट्टी का तेल, रंग, चावल चमड़ा बनाने का सामान मोटर व अन्य रासायनिक पदार्थ। भारत के विदेशी व्यापार का लगभग 5 प्रतिशत व्यापार इसी बन्दरगाह से होता है।

मद्रास में एक बड़ा विश्वविद्यालय है। यहाँ सूती कपड़ा बनाने लोहे का सामान बनाने शक्कर बनाने, चमड़े का काम करने और सिगरेट बनाने के कारखाने हैं। सन् 1971 की जनगणना के अनुसार यहाँ की जनसंख्या 24 70 लाख से भी अधिक है।

निवेली अथवा नेवेली (Neyvelli)—*मद्रास से लगभग 210 Kms (130 मील)* दूर निवेली स्थान है। निवेली के निकटवर्ती भाग में लगभग 250 वर्ग Kms तक लिग्नाइट कोयले की खानें विस्तृत हैं। इन खानों में लगभग 2 अरब टन लिग्नाइट होने का अनुमान है। यहाँ सबसे पहले (अगस्त) 1961 को पट्टी तक खुदाई हुई थी और मार्च 1964 तक लगभग $15\frac{1}{2}$ लाख टन लिग्नाइट निकाला गया। निवेली में ताप बिजलीघर (नवम्बर) 1957 से भारत रूस सहयोग से

स्थापित हुआ। यहाँ पर खाद का कारखाना बनाया जा रहा है। कारखाने के लिए मशीन पश्चिमी जर्मनी और इटली से आ रही है। निगाइट के निकट ही उत्तम किस्म की चीनी मिट्टी पाई गई है और इस पर कार्य करने के लिए एक कारखाना स्थापित किया जा चुका है जो प्रतिदिन 6 हजार टन चीनी मिट्टी साफ कर रहा है। यहाँ पर लोहे व इस्पात का कारखाना भी लगाया जा सकता है क्योंकि निकट ही (मगध में) लोहे की खान है।

हैदराबाद—भारत का प्रसिद्ध नगर एवं वर्तमान आंध्र राज्य की राजधानी है। यह कृष्णा नदी की सहायक मूसा नदी के दक्षिण तट पर बसा हुआ है। हैदराबाद एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर है जो पूर्वकालीन हैदराबाद राज्य की राजधानी रह चुका है। इस नगर के चारों ओर मजबूत दीवारें हैं। यहाँ अनेक सड़कें व रेल मार्ग आकर मिलते हैं। यहाँ पर उस्मानिया विश्वविद्यालय है। हैदराबाद एक प्रसिद्ध व्यापारिक एवं औद्योगिक नगर है। यहाँ पर सूती वस्त्र उद्योग, दियासलाई और सिगरेट का व्यवसाय बड़े पैमाने पर विकसित है। 1971 की जनगणना के अनुसार यहाँ की जनसंख्या लगभग 17.98 लाख है।

त्रिवेन्द्रम—यह नगर भारत के पश्चिमी-तट के दक्षिणी भाग में स्थित है। पहले यह ट्रावनकोर राज्य की राजधानी था और आजकल केरल राज्य की राजधानी है। यह हिन्दुओं का बड़ा तीर्थस्थान भी है। यह व्यापार और उद्योग का केन्द्र है। यहाँ पर नारियल की जटाओं से अनेक वस्तुएं बनाई जाती हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ साबुन, सुपारी, चाय, कहवा, पेंसिल, हाथी दाँत आदि के भी छोटे मोटे कारखाने हैं। इस प्रकार यह व्यापार की प्रसिद्ध मण्डी बन गया है। यहाँ अनेक दर्शनीय स्थान भी हैं। यहाँ पर शिक्षा का काफी प्रसार हुआ है व एक विश्वविद्यालय है। यह नगर दक्षिण पश्चिम में भारतीय रेलों का अन्तिम केन्द्र है और यहाँ से दो मुख्य रेल मार्ग उत्तर और पूर्व की ओर जाते हैं जिनके द्वारा यह नगर देश के अन्य भागों से सम्बन्धित है। यहाँ फौज की छावनी भी है। यहाँ की जनसंख्या लगभग 3 लाख है।

मैसूर—यह मैसूर राज्य की राजधानी है। यहाँ का रेशमी वस्त्र उद्योग प्रसिद्ध है। चन्दन का तेल निकालने के कई कारखाने हैं। चन्दन की लकड़ी के सुन्दर सुन्दर खिलौने भी बनाये जाते हैं। यहाँ की जनसंख्या 2.50 लाख है।

बंगलौर—यह मैसूर राज्य की राजधानी है और दक्षिण भारत का प्रसिद्ध नगर व प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है। यह नगर लगभग 10 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है। यहाँ की जलवायु अच्छी है। यह नगर बम्बई, मद्रास, हैदराबाद व त्रिवेन्द्रम आदि नगरों से रेल मार्ग द्वारा मिला हुआ है। सड़क मार्गों का भी विकास हुआ है। यहाँ एक हवाई अड्डा भी है जहाँ भारत के लगभग सभी बड़े नगरों से वायुयान आते हैं। मद्रास, हैदराबाद, बम्बई, कलकत्ता, श्रीनगर आदि के लिए वायु सेवा उपलब्ध है।

बगलौर एक औद्योगिक नगर भी है। सरकारी क्षेत्र म हिन्दुस्तान मशीन टूल्स (H M T) का कारखाना है जो खाद की मशीन व उच्चकोटि की घडिया बनाता है। इन घडियों की देश व विदेशों म माँग है। सरकारी क्षेत्र म ही दूसरा कारखाना हिन्दुस्तान एयरक्राफ्ट है जहाँ वायुयान बनाय जाते हैं। अत भारत म बगलौर ही एकमात्र वायुयान निर्माण-केन्द्र है। यहा टेलीफोन, बिजली का सामान और रेडियो का सामान बनाने के कारखान हैं। इनके अतिरिक्त यहा सूती, ऊनी व रेशमी वस्त्र बनाने की मिलें हैं। चमडा तेल साबुन उद्योग भी विकसित है।

बगलौर शिक्षा का भी केन्द्र है। यहाँ औद्योगिक शिक्षा, वायु यातायात और वायु सेना सम्बन्धी शिक्षा भी दी जाती है। यहा अनेक कॉलिज व स्कूल है। यहा दुग्ध व्यवसाय सम्बन्धी शिक्षा देने का भी केन्द्र है।

इण्डियन इन्स्टीच्यूट ऑफ साइन्स यही है। यह नगर सुन्दर ढग म बसा हुआ है और यहा अनक दर्शनीय स्थान भी हैं। यहा अनक बाग बगीचे है।

सन 1971 की जनगणना के अनुसार यहाँ की जनसख्या लगभग 16 48 लाख है। जनसख्या की दृष्टि से भारत म बगलौर का सातवा स्थान है।

नागपुर—यह नवम्बर 1956 के पूव मध्य प्रदेश की राजधानी एव यहाँ का सबसे बडा नगर था। यह अब महाराष्ट्र राज्य म है। यह रेल माग का बडा जक्शन है। पूर्वी रेल माग और केन्द्रीय रेल माग यहाँ आते हैं बम्बई से कलकत्ता और दिल्ली से मद्रास जाने वाले रेल माग पर स्थित होने के कारण इसका महत्त्व और भी अधिक है। यह वायु माग का भी केन्द्र है।

नागपुर व्यापारिक मण्डी भी है। निकटवर्ती क्षेत्रो म मैंगनीज खनिज पदार्थ उपलब्ध हैं। पश्चिमी भाग म कपास अधिक होती है अत यह कपास की बडी मण्डी बन गया है। यहा सूती वस्त्र कांच और चिकनी मिट्टी के बतन बनाने के कारखाने हैं। इन कारखानो मे कोयला शक्ति के साधन के रूप म प्रयुक्त होता है जो मध्य प्रदेश के अन्य भागो तथा बिहार से प्राप्त किया जाता है।

यहाँ डाक और तार विभाग का सबसे बडा कार्यालय और एक विश्व विद्यालय है। यहाँ की नारगियाँ प्रसिद्ध हैं जो भारत के विभिन्न भागों में भेजी जाती हैं। यहाँ की जनसख्या सन् 1961 म लगभग 6 90 लाख थी।

भोपाल—यह एक प्राचीन नगर है। पहले यह नगर इसी नाम के मुसलमानी राज्य की राजधानी था। आजकल यह मध्य प्रदेश राज्य की राजधानी है। यह नगर एक विशाल घाटी म स्थित है। इस नगर की राज्य म लगभग मध्यवर्ती स्थिति है। यहाँ दियासलाई चीनी व कपड के कारखाने हैं। यहाँ बिजली का सामान बनाने का एक कारखाना है जो भारत म सबसे बडा कारखाना है। यहाँ अनेक कुटीर उद्योग भी विकसित हैं। लकडी के खिलौने व मिट्टी के बतन प्रसिद्ध हैं।

यहाँ अनेक प्राचीन इमारतें दर्शनीय हैं। यहाँ एक सचिवालय है। अनेक

की यह बडी मण्डी है। खाल और चमड़े का यह केन्द्र है। यहा के शाल और कालीन प्रसिद्ध हैं। कपडे की भी यहा मण्डी है। गोटा, किनारी व हाथी दात का काम भी यहा अच्छा होता है। इसके अतिरिक्त यहा सूती व ऊनी वस्त्र बनाने रासायनिक पदार्थ व चमडे का सामान बनाने साईकिल आदि बनाने के अनेक कारखाने हैं। आजकल यह सीमा प्रान्तीय नगर हो जाने के कारण इसका महत्त्व और भी बढ गया है। यहाँ की जनसख्या 4 लाख है। लगभग दो फर्लाग पर प्रसिद्ध जलियाँवाला बाग है।

चण्डीगढ़—देश के विभाजन के फलस्वरूप पहले के पजाब की राजधानी लाहौर पाकिस्तान मे चला गया, अत पूर्वी पजाब की राजधानी का प्रश्न उठा। अनेक कारणो से पुराने नगर तथा अमृतसर अम्बाला, जालन्धर लुधियाना म से किसी को भी राजधानी न बनाया जा सका। अन्त म राज्य सरकार को केन्द्रीय सरकार की अनुमति से एक नई राजधानी के निर्माण का निर्णय करना पड़ा और वह नई राजधानी चण्डीगढ चुनी गई है।

समस्त पजाब का सर्वेक्षण करने के पश्चात अन्त म शिवालिक पर्वत-श्रेणी के चरणो म लगभग 40 वर्ग Kms म फैला हुआ एक मैदान चुना गया। चण्डीगढ का नामकरण यहाँ से लगभग 8 10 Kms की दूरी पर स्थित चण्डीदेवी के मन्दिर के नाम पर किया गया है। यद्यपि राजधानी का निर्माण कार्य सन 1952 से प्रारम्भ हो चुका था किन्तु इसका विधिवत उद्घाटन (7 अक्टूबर) सन 1953 को राष्ट्रपति स्व० डा० राजेन्द्रप्रसाद के द्वारा हुआ। यह ध्यान रहे कि चण्डीगढ योजना केन्द्रीय सरकार ने अपनी शरणार्थी पुनर्वास योजना के अन्तर्गत ली है। इस राजधानी की रूपरेखा तथा निर्माण कार्य जगत प्रसिद्ध फ्रांसीसी निर्माण विशेषज्ञ श्री० एम० ली कारबूजियर अमरीकी शिल्पी एलबर्ट मेयर, जिन्होंने न्यूयॉर्क नगर योजना बनाई थी और इगलैण्ड के विख्यात शिल्पी मैक्सवल फ्राई तथा अनेक भारतीय विशेषज्ञो की देखरेख म हो रहा है।

चण्डीगढ का जलवायु अच्छा है। वार्षिक औसत वर्षा 90 Cms से 1(0 Cms है। मई जून के अतिरिक्त वर्ष भर न अधिक गर्म और न अधिक मद रहता है। चण्डीगढ से लगभग 22 Kms पर मुगलो द्वारा निर्मित दर्शनीय स्थान 'पिंजरा का उद्यान है और लगभग 45 Kms दूर प्रसिद्ध रोपड स्थान है।

इसका निर्माण-कार्य अभी तक चल रहा है। इजीनियरिंग कॉलेज माउण्ट व्यू होटल स्वास्थ्य केन्द्र, सिनेमा घर, सरकारी मुद्रणालय, सरोवर कुछ कॉलेज व स्कूल, हवाई अड्डा रेलवे स्टेशन आदि के भवन बन चुके हैं। खुदाई से निकली गर्द मिट्टी से नगर के विभिन्न भागो म 29 कृत्रिम पहाडियाँ भी बनाई जा रही हैं जिन पर सुन्दर फूलो के पौधे लगाये जायेंगे। नगर के निकट ही एक बरसाती नदी 'सुखनाची पर बाँध बनाकर नगर के उत्तरी भाग म एक झील बनाई जावगी।

इस प्रकार चण्डीगढ़ के पूरे निर्माण हो जाने पर पुनर्गठित पंजाब राज्य की यह राजधानी एशिया भर में अनुपम होगी।

अम्बाला—यह हरियाना का प्रमुख नगर है। यह रस ा जाता है, यहाँ से शिमला को रेल जाती है। यहाँ सेना की छावनी भी है। यहाँ काँच का तथा विज्ञान सम्बन्धी सामान बनता है।

लुधियाना—यह नगर दिल्ली से 305 Kms व चण्डीगढ़ से 105 Kms दूर है। यह व्यापारिक नगर है और रेलों का केन्द्र व मुख्य जंक्शन है। पूर्वी पंजाब में ऊनी वस्त्र उद्योग का प्रमुख केन्द्र है। सूती वस्त्र की भी मिलें हैं। चर्म उद्योग के लिए यह विख्यात है। खेल का सामान आदि यहाँ अच्छा बनता है। हींग व आयुर्वेदिक जड़ी बूटियों का भारत में सबसे बड़ा केन्द्र है। इस भाग को 'छोटे उद्योगों की राजधानी' भी कहते हैं।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि विभाजन के फलस्वरूप निम्नलिखित प्रमुख नगर पाकिस्तान में चले गये —

लाहौर मुल्तान रावलपिंडी लायलपुर सियालकोट अटक, गुजरावाला मरी डेरागाजीखाँ आदि।

जयपुर—इस नगर को सन 1728 में महाराजा सवाई जयसिंहजी द्वितीय ने बसाया था। यह पहले जयपुर राज्य की राजधानी था और अब वर्तमान राजस्थान की राजधानी है।

जयपुर का व्यापारिक महत्व दिल्ली व आगरा के निकट होने से कारण और भी बढ़ गया है। यहाँ सूती कपड़े की एक मिल हल्की पीतल की एक मिल लोहे का सामान बनाने का एक कारखाना है। यहाँ बाल बियरिंग बनाने का भी एक कारखाना है जो भारत में ही नहीं वरन एशिया भर में अपनी तरह का एक है। इस नगर में भारत के प्रमुख बैंकों के कार्यालय भी हैं। यह रेलों का जंक्शन भी है। साँगानेर में हवाई-अड्डा है।

राजस्थान के सबसे बड़े स्कूल व कालिज यहीं हैं। यहाँ एक मडीकल कालिज एक कामर्स कॉलिज और एक ला कॉलिज भी है। राजस्थान विश्वविद्यालय का कार्यालय भी यहीं है। मन्त्रीगण भी यहीं रहते हैं। यहाँ सेक्रेटेरियट व अकाउन्टेन्ट जनरल व अन्य प्रमुख विभाग हैं।

जयपुर नगर बहुत सुन्दर ढंग से बसा है। यहाँ कई दर्शनीय स्थान हैं जिनमें हवामहल त्रिपोलिया रामनिवास बाग म्यूजियम रामबाग आदि प्रमुख हैं। मुख्य सड़कें काफी चौड़ी हैं जिनके दोनों ओर वृक्ष लगाये गये हैं।

यहाँ के पीतल के बर्तन व खिलौने हाथी दाँत के खिलौने व चूड़ियाँ कपड़ा की रंगाई छपाई व बंधाई लाख की चूड़ियाँ तथा अन्य अनेक छोटी मोटी वस्तुयें प्रसिद्ध हैं। यहाँ की जनसंख्या सन 1961 की जनगणना के अनुसार 4 लाख से कुछ अधिक है।

जोधपुर—यह पहले जोधपुर राज्य की राजधानी था। यहाँ का हवाई अड्डा विशेष महत्त्वशील है। जोधपुर विश्वविद्यालय का कार्यालय भी यहीं है। यहाँ इन्जीनियरिंग कालेज है तथा एक विज्ञान का और एक कला तथा वाणिज्य का कॉलेज भी है। यहाँ भी कपड़ा की रंगाई छपाई व बंधाई अच्छी होती है। संगमरमर की निकट ही (मकराना में) खानें हैं। यह संगमरमर तथा नमक के वितरण का केन्द्र है। खड़िया मिट्टी (Gypsum) यहाँ से सिन्दरी के कारखाने में भेजी जाती है। यहाँ हड्डी पीसने का एक कारखाना है। यहाँ की जनसंख्या 2.25 लाख है।

कोटा—यह नगर राजस्थान के दक्षिणी पूर्वी भाग में चम्बल नदी के दाहिने किनारे पर बसा हुआ है। यह नागदा-मथुरा रेलमार्ग पर स्थित है। यह अजमेर के दक्षिण पश्चिम में लगभग 193 किलोमीटर दूर है। यह रेलवे का बड़ा जंकशन है और यहाँ रेलवे वर्कशॉप भी है।

कोटा में तेज गति से औद्योगिक विकास हो रहा है। अब कोटा को राजस्थान का कानपुर कहने लगे हैं। उद्योगों के लिए आवश्यक जल तथा शक्ति यहाँ सरलता से प्राप्त हो जाती है। वर्ष-पर्यन्त बहने वाली चम्बल नदी यहाँ की समस्त जल आवश्यकता को पूरा कर देती है। चम्बल नदी योजना के अन्तर्गत बनाए गये बाँधों से जल विद्युत उपलब्ध हो रही है। एक अणु शक्तिगृह भी निर्माणाधीन है जिसके बन जाने पर शक्ति की समस्या पूर्णतः हल हो जावेगा। रेलमार्गों व सड़क मार्गों की सुविधा है। यहाँ एक हवाई अड्डा भी है।

यहाँ बहुमुखी उद्योगों का विकास हुआ है। यहाँ सूती वस्त्र व रेयन की मिलें हैं। प्रसिद्ध श्रीराम फर्टिलाइजर्स रासायनिक खाद बनाने का कारखाना यहीं है। इसके अतिरिक्त रासायनिक उद्योग प्लास्टिक उद्योग स्ट्रावोर्ड रबर के खिलौने बनाने बिजली के तार बनाने आदि के कारखाने हैं। यहाँ उद्योगों का और अधिक विकास हो रहा है। सोवियत रूस की सहायता से केन्द्रीय सरकार ने यहाँ सूक्ष्म यन्त्र का एक कारखाना स्थापित किया है।

कोटा के डोरिये पच, बारीक कपड़, पगड़ियाँ और मसूरी आदि प्रसिद्ध हैं जो दूर-दूर तक भेजे जाते हैं। कोटा में अमर निवास जैन मन्दिर, मथुराधीश का मन्दिर छत्रपुरा मानावाडी आदि अनेक दर्शनीय स्थान हैं।

जनसंख्या की दृष्टि से कोटा का राजस्थान में पाँचवाँ स्थान है। सन् 1961 की जनगणना के अनुसार यहाँ की जनसंख्या 1.20 लाख है।

बीकानेर—यह राजस्थान में तीसरे नम्बर का नगर है। देशी रियासतों के एकीकरण के पूर्व यह बीकानेर राज्य की राजधानी था। यह राजस्थान के शुष्क भागों में है परन्तु गंग नहर बन जाने के कारण यहाँ बहुत सहायता मिली है।

यहाँ उद्योग धंधों का विकास नहीं हो पाया है। बड़े उद्योग तो यहाँ हैं ही नहीं। कुटीर उद्योग में ऊन उद्योग सबसे अधिक विकसित है। बीकानेर के बने

हुए ऊनी नम्दे कम्बल दरियाँ आदि प्रसिद्ध हैं। राजस्थान सरकार ने ऊन विकास के लिये एक विभाग यहाँ स्थापित किया है। यहाँ एक मेडीकल कॉलेज, एक वटरनरी कालेज, एक टीचर्स ट्रेनिंग कालेज व तीन अन्य कालेज भी हैं। निकट ही 10 12 Kms दूर पलाना में लिग्नाइट कोयल की खान है जिनमें कोयला निकाला जाता है। यहाँ की जनसंख्या 1 लाख 50 हजार है।

उदयपुर—यह अरावली पर्वत क्षेत्र में स्थित है तथा अपनी प्राकृतिक सुन्दरता के लिए प्रसिद्ध है। यहा एक विश्वविद्यालय भी है। इस नगर का व्यापारिक महत्त्व की अपेक्षा ऐतिहासिक महत्त्व अधिक है। यहाँ झील पर्वतीय दृश्य एवं प्राचीन महल आदि अनेक दर्शनीय स्थान हैं। यहाँ की जनसंख्या 1 12 लाख है।

अजमेर—राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिश के अनुसार यह राजस्थान में सम्मिलित कर लिया गया है। यहा की जनसंख्या 1 97 लाख है। यह पश्चिमी रेलवे का बड़ा जंक्शन है और यहाँ एक बड़ी रेलवे वर्कशाप है। यह व्यापारिक केन्द्र भी है। यह मुसलमानों का तीर्थ स्थान है। यहाँ की दरगाह दर्शनीय है। अजमेर से 11 Kms दूर हिन्दुओं का तीर्थ स्थान पुष्कर है। लोक सेवा आयोग व माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के कार्यालय यहीं हैं। यहाँ की जनसंख्या 2 3 लाख है।

अलवर भरतपुर एवं जैसलमेर अन्य नगर हैं।

पटना—यह नगर गंगा नदी के दक्षिण तट पर स्थित है। यह प्राचीन काल में भी अनेक राजाओं की राजधानी रहा है उस समय इसका नाम पाटलिपुत्र था। दक्षिण में निकट ही सोन नदी और उत्तर में गण्डक व घाघरा नदियाँ होने के कारण यह जल मार्गों का भी केन्द्र है। रेलों का बड़ा जंक्शन है और स्थल मार्गों का भी केन्द्र है। पूर्व में कलकत्ता और पश्चिम में वाराणसी इलाहाबाद कानपुर आदि उत्तर प्रदेश के बड़े नगरों से रेल द्वारा मिला होने के कारण इसका महत्त्व और भी बढ़ गया है। यहाँ एक विश्वविद्यालय है और बिहार राज्य का हाईकोर्ट भी है। सन् 1957 में यहाँ एशिया में मकान बनाने के सबसे बड़े कारखाने की स्थापना 'पोलसाम लि॰' द्वारा की गई है। इसकी जनसंख्या 3 64 लाख के लगभग है।

जमशेदपुर—यह भारत में लोहे तथा इस्पात उद्योग का प्रमुख केन्द्र है। यह बिहार राज्य में स्थित है और रेल मार्ग द्वारा कलकत्ता से लगभग 250 Kms दूर स्थित है। इस नगर की उत्पत्ति केवल औद्योगिक कारणों से ही हुई है। कोयला कच्चा लोहा और चूना निकट ही मिलने के कारण यहाँ टाटा ने लोहे का कारखाना स्थापित किया। तभी से इसकी उन्नति हुई है। यहाँ रेल की पटरियाँ रेल का अन्य सामान मशीनें व लोहे का अन्य सामान बनाया जाता है। यहाँ की जनसंख्या 3 38 लाख है।

गया—पटना से दक्षिण की ओर गया हिन्दुओं का प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान है। यहाँ अनेक मन्दिर हैं। यहाँ की जनसंख्या 1 लाख 51 हजार है। यह रेल का बड़ा

जंकशन भी है। गया से 11 Kms दक्षिण में 'बुद्ध गया' है जहाँ महात्मा बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ था।

कटक—यह नगर उडीसा राज्य की राजधानी था। यह महानदी के मुहाने पर स्थित व्यापारिक केन्द्र है। यह जल मार्ग तथा थल मार्ग का केन्द्र है। लकडी एकत्र करने का बडा केन्द्र है। यहाँ खिलौने लाख की चूडियाँ जूते तथा कंघी अच्छी बनती है। यहाँ की जनसंख्या 1 लाख से कुछ अधिक है।

भुवनेश्वर—यह उडीसा की राजधानी है। इसका व्यापारिक महत्व अधिक नहीं है। यहाँ अनेक मन्दिर हैं। थोडी दूर पर पहाडियाँ हैं जिनमें जैन साधुओं की गुफाएं हैं।

पुरी—उडीसा के तटीय भाग पर छोटा बन्दरगाह व व्यापारिक केन्द्र है। यहाँ का जलवायु अच्छा है। यह भी हिन्दुओं का तीर्थ-स्थान है। यहाँ जगन्नाथजी का मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। पुरी स्वास्थ्यवर्द्धक स्थान है।

कलकत्ता—यह भारत का सबसे बडा नगर है। यह हुगली नदी के बायें किनारे पर नदी के मुहाने से लगभग 130 Kms अन्दर की ओर स्थित है। कलकत्ता की जनसंख्या 29.27 लाख के लगभग है। इस प्रकार से यह बहुत घना बसा हुआ है।

कलकत्ता भारत का प्रमुख व्यावसायिक केन्द्र है। यहाँ जूट उद्योग का सबसे अधिक विकास हुआ है। यहाँ सूती कपडे कागज दियासलाई चीनी रेशम लोहे और इन्जीनियरिंग के बडे बडे कारखाने हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ आटा पीसने, चावल व चमडा साफ करने साबुन व सुगन्धित वस्तुयें बनाने के भी कारखाने हैं। टाटा का लोहे का कारखाना यहाँ से 250 Kms दूर है।

इसका पृष्ठ प्रदेश बहुत विस्तृत तथा धनी है। इसका पृष्ठ प्रदेश असम, बंगाल बिहार उत्तर प्रदेश, पूर्वी पंजाब राजस्थान मध्य प्रदेश बिहार, उडीसा तक फैला हुआ है। इन सबसे यह रेलों व सडकों द्वारा मिला हुआ है। गंगा, ब्रह्मपुत्र तथा हुगली नदियों के जल मार्गों का भी काफी उपयोग होता है। यह बन्दरगाह हुगली नदी के किनारे 8 Kms तक फैला हुआ है।

नगर में सभी प्रमुख भारतीय बैंकों के कार्यालय हैं। विदेशी बैंकों ने भी यहाँ अपने कार्यालय स्थापित कर लिए हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ अनेक बीमा कम्पनियों के कार्यालय भी हैं। यहाँ के शेयर बाजार की भारत में ही नहीं वरन् विश्व के बडे बाजारों में गणना की जाती है। यहाँ एक विश्वविद्यालय भी है।

कलकत्ता का भारत के विदेशी व्यापार में प्रमुख हाथ रहा है। यहाँ से निर्यात होने वाली मुख्य वस्तुएँ—जूट का सामान चाय चमडा तिलहन लाख अभ्रक कोयला मैंगनीज व लोहे की अन्य वस्तुएं हैं। आयात होने वाली वस्तुओं में मशीनें पैट्रोल रबर की चीज, मोटरें शराब रासायनिक पदार्थ कागज सूती ऊनी व रेशमी वस्त्र काँच का सामान आदि मुख्य हैं।

हावडा—कलकत्ता के सामने हुगली नदी के दाहिने किनारे पर हावडा स्थित है। यह भी व्यापारिक तथा औद्योगिक नगर है। यहाँ जूट के सामान बनाने की अनेक मिलें हैं। शक्कर और लोहे का सामान बनाने के भी कारखाने हैं। यहाँ की जनसंख्या 5 लाख से भी अधिक है।

31

भारत के प्रमुख बन्दरगाह

प्रारम्भिक—

किसी भी देश के लिए जो समुद्र के निकट है बन्दरगाहो का विशेष महत्व होता है। बन्दरगाहो का सामरिक तथा व्यापारिक महत्व होता है। देश के आर्थिक विकास म बन्दरगाह का भी विशेष योग रहता है।

देश के समुद्र तट पर स्थित उन केन्द्रो को जहाँ से विदेशी व्यापार होता हो, अथवा विदेशो को व विदेशो से यात्री आते-जाते हो अथवा व्यापार तथा यात्रियो के आवागमन के दोनो ही कार्य होते हो, बन्दरगाह कहते हैं। वास्तव म विदेशो से आने के लिए बन्दरगाह देश का प्रवेश द्वार होता है तथा स्वदेश से विदेश म जाने के लिए 'निकास-द्वार' होता है। इस प्रकार बन्दरगाह विदेशो से आये हुए जहाजो के सामान को उतारता है, उसे एकत्र करने का प्रबन्ध करता है और देश म उसका वितरण करता है तथा स्थलीय साधनो द्वारा आये हुए सामान को जहाज म लादकर बाहर भेजने का प्रबन्ध करता है।

पृष्ठ-प्रदेश

आशय—किसी बन्दरगाह की 'पृष्ठ भूमि' (Hinterland) म तात्पर्य उस क्षेत्र से है जो इस बन्दरगाह को माल विदेशो के लिए भेजता अथवा मगवाता है। किसी भी बन्दरगाह के विकास म उसकी पृष्ठ भूमि का ही अधिक महत्व रहता है। वास्तव म पृष्ठ प्रदेश ही बन्दरगाह का हृदय होता है। बन्दरगाह का आश्रय स्थान (Harbour) चाहे अच्छा न हो, किन्तु बन्दरगाह का महत्व उसके पृष्ठ प्रदेश की दशा पर निर्भर होता है।

पृष्ठ भूमि का महत्व—पृष्ठ भूमि का महत्व अनेक कारणो से हो जाता है, उनम स प्रमुख निम्नलिखित हैं —

(1) **उवरा शक्ति—**पृष्ठ भूमि का महत्व वहाँ की उवरा शक्ति पर भी प्राय निर्भर हो जाया करता है। यदि पृष्ठ भूमि अधिक उपजाऊ है तो यह निश्चित है कि वह क्षेत्र कृषि प्रधान होगा। अतः उस प्रदेश की कृषि-जन्य वस्तुएं उस बन्दरगाह से ही निर्यात की जायेंगी और पक्का माल विदेशो से आयात किया जायगा। इस प्रकार पृष्ठ भूमि के उवरा होने के कारण बन्दरगाह का भी महत्व बढ़ जाता है।

(2) खनिज पदार्थ—यदि पृष्ठ भूमि उवरा न हो और वहाँ खनिज पदार्थ इतने हों कि देश की आवश्यकता के उपरान्त भी निर्यात करने के लिए उपलब्ध हों तो पृष्ठ भूमि का महत्त्वशील कहना और बन्दरगाह का विकास आवश्यक होगा।

(3) घनी जनसंख्या—पृष्ठ भूमि यदि घनी बसी हुई होती है तो वह भी बन्दरगाह के विकास में सहायक होती है क्योंकि उपयोग की वस्तुओं में वृद्धि होती है और व्यापार में वृद्धि होती है। इसके विपरीत यदि पृष्ठ भूमि कम आबाद है तो उपभोग की वस्तुएँ कम खपेंगी और प्राय व्यापार कम होता है।

(4) यातायात के साधन—बन्दरगाह के विकास में यातायात के साधनों का बहुत योग होता है। यदि पृष्ठ भूमि उर्वरा हो अथवा खनिज-पदार्थ से भरपूर हो अथवा घनी बसी हुई भी हो तो भी जब तक यातायात के साधन सुलभ न होंगे, बन्दरगाह का विकास नहीं हो सकेगा, क्योंकि ऐसी दशा में पृष्ठ प्रदेश तथा बन्दरगाह का घनिष्ठ सम्बन्ध न हो सकेगा और बन्दरगाह अविकसित ही रह जायगा।

इस सम्बन्ध में यह बता देना भी आवश्यक है कि किसी भी बन्दरगाह की पृष्ठ भूमि के क्षेत्रफल का अधिक महत्त्व नहीं है, महत्त्व तो पृष्ठ भूमि की उपज का होता है। पृष्ठ भूमि का क्षेत्रफल चाहे कितना ही अधिक क्यों न हो यदि विदेशी व्यापार के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं है तो बन्दरगाह महत्त्वहीन हो जावेगा। इसके विपरीत यदि पृष्ठ भूमि का क्षेत्र चाहे छोटा हो, परन्तु यदि वह विदेशी व्यापार में महत्त्व रखता है तो बन्दरगाह का महत्त्व स्वयं ही बढ़ जाता है।

ध्यान देने योग्य एक बात और है। यह आवश्यक नहीं है कि कोई विशेष क्षेत्र किसी एक ही बन्दरगाह की पृष्ठ भूमि पर हो। प्राय देखा गया है कि एक बन्दरगाह की पृष्ठ भूमि पर दूसरे बन्दरगाह की पृष्ठ भूमि भी फैल जाती है। इसको अधिक स्पष्ट करने के लिए कहा जा सकता है कि एक पृष्ठ भूमि कभी-कभी दो या अधिक बन्दरगाहों के व्यापार को नियन्त्रित करती है। उदाहरण के लिए, कलकत्ता की पृष्ठ भूमि दिल्ली तक फैली हुई है और बम्बई की पृष्ठ भूमि भी दिल्ली तक फैली हुई है। वह मद्रास की भी पृष्ठ भूमि है। पृष्ठ भूमि का विस्तार राजनैतिक तथा अन्य परिवर्तनों के साथ भी परिवर्तित होता रहता है।]

पोताश्रय (Horbour)

पोताश्रय से तात्पर्य—'पोत' जहाज को कहते हैं और 'आश्रय' से तात्पर्य है सुरक्षित स्थान। अत पोताश्रय (Harbour) शब्द में उस स्थान का बोध होता है जहाँ जहाज सुरक्षित रूप में रह सकें। पोताश्रय के ऊपर भी बन्दरगाह का विकास निर्भर होता है।

पोताश्रय के प्रकार—पोताश्रय दो प्रकार के होते हैं—(1) प्राकृतिक और (2) कृत्रिम। भारत में बम्बई प्राकृतिक पोताश्रय है तथा मद्रास कृत्रिम।

मिलाता है किन्तु पोताश्रय किसी देश के आन्तरिक भागों का सम्बन्ध विदेशी मार्गों से नहीं जोड़ता वरन आने वाले जहाजों को सुरक्षित ठहरने का स्थान प्रदान करता है। (2) बन्दरगाह समुद्र तट पर होते हैं किन्तु पोताश्रय समुद्र-तट से जरा दूर होता है। (3) बन्दरगाह का सम्बन्ध देश के आन्तरिक भागों से होता है पोताश्रय का सम्बन्ध बन्दरगाह से होता है। (4) बन्दरगाह पर आयात किये गये सामान को एकत्रित करके देश में भिजवाने का और निर्यात किये जाने वाले सामान को एकत्रित करके जहाज पर लदाने का प्रबन्ध होता है किन्तु पोताश्रय में जहाज केवल खड़ा रहता है। (5) बन्दरगाह की उन्नति किसी सीमा तक पोताश्रय पर निर्भर रहती है अर्थात पोताश्रय एक अच्छा बन्दरगाह बनाने में पूरा सहयोग प्रदान करता है।

समानता—बन्दरगाह तथा पोताश्रय में निम्नलिखित बातें समान होती हैं —(1) बन्दरगाह तूफानों, लहरों चक्रवात व अन्य सामुद्रिक हलचलों से सुरक्षित रहना चाहिए। पोताश्रय के लिए भी ऐसा ही है। (2) बन्दरगाह व पोताश्रय दोनों के लिए ही पानी की पर्याप्त गहराई आवश्यक है ताकि बड़े जहाज भी आसानी से आ जा सकें तथा विश्राम कर सकें। (3) बन्दरगाह व पोताश्रय वर्षपर्यन्त हिम मुक्त रहने चाहिए। कोहरा आदि दोनों के लिए ही अच्छा नहीं होता है। (4) बन्दरगाह न तो वस्तुओं का उत्पादन ही करता है और न समस्त वस्तुओं का उपभोग वह तो अपनी पृष्ठ भूमि के लिए ही सब कार्य करता है। पोताश्रय भी वस्तुओं का उत्पादन व उपभोग नहीं करता है।

पंचवर्षीय योजनाएँ और बन्दरगाह

प्रथम पंचवर्षीय योजना के आरम्भ में केवल पाँच बड़े बन्दरगाह (Major Ports) थे जिनके नाम ये हैं—बम्बई मद्रास, कलकत्ता, कोचीन और विशाखापट्टनम। इस योजनाकाल में बन्दरगाहों के विकास पर 45 करोड़ रुपये व्यय किए गये। इन पाँचों बन्दरगाहों की माल उठाने की क्षमता 2 करोड़ टन बढ़ाने का लक्ष्य था। देश के विभाजन के फलस्वरूप कराँची बन्दरगाह पाकिस्तान को मिला, अतः भारत के पास पश्चिमी तट पर केवल एक ही बन्दरगाह—बम्बई—भारत के पास रहा। बम्बई बन्दरगाह पर भार बहुत पड़ने लगा तथा भारत की विकासशील अर्थव्यवस्था में बम्बई बन्दरगाह पर और अधिक भार पड़ना निश्चित था। इस कारण भारत के पश्चिमी तट पर कम से कम एक और बन्दरगाह का विकास करना आवश्यक हो गया। इसके लिए कांदला बन्दरगाह को चुना गया। प्रथम योजना काल में कांदला बन्दरगाह का निर्माण पूरा हो गया, किन्तु विकास का कार्य आगे की योजनाओं में भी चलता रहा।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में बन्दरगाहों के विकास के लिए 93 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान किया गया। इस योजना काल में पूर्वी तट पर विशाखापट्टनम बन्दरगाह के विकास का कार्य रखा गया।

तृतीय योजना में इस कार्य के लिए 101 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान किया गया। हल्दिया व प्रदीप बन्दरगाहों के विकास का कार्यक्रम अपनाया गया।

चतुर्थ योजनाकाल में यह कल्पना की गई है कि 1973 74 में बड़े बन्दरगाहों द्वारा लगभग 9 करोड़ टन माल उतारा चढ़ाया जायगा जबकि 1968 69 में इन बन्दरगाहों द्वारा लगभग 5 5 करोड़ टन माल चढ़ाया उतारा गया। चतुर्थ योजना में केन्द्रीय क्षेत्र द्वारा लगभग 300 करोड़ रुपये और पोर्ट-ट्रस्टस द्वारा लगभग 100 करोड़ रुपये बन्दरगाहों के विकास आदि पर व्यय किए जावेंगे।

चौथी पंचवर्षीय योजना काल में बन्दरगाहों के सम्बन्ध में निम्न प्रमुख कार्यक्रम रखे गये हैं—(1) तृतीय योजना में बन्दरगाह विकास के अपूर्ण कार्यों को पूरा करना (2) हल्दिया डाक व्यवस्था (Haldia Dock System) का प्रबन्ध करना (3) मंगलौर तथा तूतीकोरन बन्दरगाह परियोजनाओं का कार्यक्रम (4) बम्बई डाक के विस्तार का कार्यक्रम, (5) मद्रास बन्दरगाह पर बाहरी डाक (outer dock) की व्यवस्था, तथा (6) विशाखापट्टनम में बाहरी पोताश्रय का निर्माण।

'इण्टरनेशनल ऐसोसियेशन आफ पोर्टस एण्ड हारबर्स (IAPH) के सदस्यों ने जो सन् 1969 में भारत आये थे चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में बन्दरगाहों के विकास के कार्यक्रमों की सफलता में सन्देह प्रकट किया है। उन्होंने इन्हें महत्त्वाकांक्षी कार्यक्रम बतलाए हैं।

बन्दरगाह विकास पर व्यय का प्रावधान

योजना	करोड़ रुपये
प्रथम पंचवर्षीय योजना	64
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	[illegible]3
तृतीय पंचवर्षीय योजना	101
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	400

संक्षेप में, पंचवर्षीय योजनाओं में बन्दरगाह विकास के लिए व्यय की राशि का प्रावधान तालिकानुसार रहा।

तीनों पंचवर्षीय योजनाओं में कुल निर्धारित राशि व्यय नहीं की जा सकी वरन् कुल केवल 165 करोड़ रुपये ही व्यय किये गये। तीनों वार्षिक योजनाओं (1966 69) में कुल 92 64 करोड़ रुपये व्यय किये गये। इस प्रकार प्रथम पंचवर्षीय योजना से 1968 69 तक कुल 257 64 करोड़ रुपये बन्दरगाहों के विकास आदि पर व्यय किये गये।

वर्तमान स्थिति

भारत में इस समय आठ बड़े बन्दरगाह (Major Ports) हैं जिनके नाम ये हैं—कलकत्ता बम्बई मद्रास मारमगाव कोचीन विशाखापट्टनम, काँदला और प्रदीप। बड़े बन्दरगाह वैधानिक पोर्ट ट्रस्ट बोर्डस द्वारा प्रशासित होते हैं जिन पर केन्द्रीय सरकार का आवश्यक नियन्त्रण रहता है।

इनके अतिरिक्त भारत में इस समय विभिन्न आकार के 225 छोटे बन्दरगाह

(Minor Ports) हैं जिनमें से लगभग 150 बन्दरगाह कार्यशील (Working Ports) हैं। छोटे बन्दरगाह सम्बन्धित राज्य सरकार द्वारा प्रशासित होते हैं।

बम्बई—

परिचय—बम्बई बन्दरगाह भारत के पश्चिमी तट पर महाराष्ट्र राज्य में स्थित है। यह भारत का सबसे बड़ा बन्दरगाह है और इसका पोताश्रय प्राकृतिक है। यह संसार के सबसे बड़े और सुरक्षित बन्दरगाहों में से है। यह महाराष्ट्र राज्य की राजधानी भी है और भारत के नगरों में इसका द्वितीय स्थान है प्रथम नगर कलकत्ता है। इसकी उन्नति का प्रमुख कारण यह है कि यह यूरोप से सबसे निकट भारत का प्राकृतिक बन्दरगाह है। स्वेज नहर खुल जाने से इसका महत्त्व और भी अधिक हो गया है। बम्बई को भारत का द्वार भी कहते हैं। बम्बई का बन्दरगाह वर्ष भर खुला रहता है। जिस स्थान पर यह बन्दरगाह है वहाँ पानी की कम से कम गहराई 9.75 मीटर (32 फीट) है। स्वेज नहर की भी लगभग इतनी ही गहराई होने के कारण वे जहाज जो स्वेज मार्ग से आते हैं बम्बई में सुगमतापूर्वक ठहर जाते हैं।

पृष्ठ प्रदेश का विस्तार—बम्बई बन्दरगाह की पृष्ठभूमि में दो विशेषताएँ हैं—प्रथम यह काफी विस्तृत है और द्वितीय यह काफी धनी है। राजनीतिक दृष्टि से बम्बई बन्दरगाह की पृष्ठभूमि इन राज्यों तक विस्तृत है—महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, मैसूर और जम्मू व काश्मीर के काफी भागों तक। बम्बई की पृष्ठभूमि उद्योग धन्धों (महाराष्ट्र) कृषि (गुजरात, पंजाब, राजस्थान) एवं खनिज (मध्य प्रदेश व राजस्थान) की दृष्टि से बहुत धनी है। बम्बई बन्दरगाह का महत्त्व इसलिये भी बहुत अधिक है कि यह अपनी पृष्ठभूमि के विभिन्न केन्द्रों से रेल, सड़क व वायु मार्गों से भली भाँति जुड़ा हुआ है। पश्चिमी रेलवे व मध्य रेलवे बम्बई को पृष्ठभूमि के प्रमुख केन्द्रों से सम्बन्धित करती हैं। आगरा ग्वालियर इन्दौर थाना बम्बई तथा दिल्ली-अजमेर अहमदाबाद बड़ौदा बम्बई तक के राष्ट्रीय राजमार्गों द्वारा सम्बन्धित है। बम्बई भारत के सभी प्रमुख नगरों से जहाँ हवाई अड्डे हैं, तथा विश्व के समस्त प्रमुख नगरों से वायु मार्गों द्वारा सम्बद्ध है।

आयात तथा निर्यात—बम्बई बन्दरगाह में प्रति वर्ष लगभग 2,800 जहाज आते हैं। औसत रूप से बम्बई बन्दरगाह द्वारा प्रतिवर्ष लगभग 1.25 करोड़ टन माल का आयात और 45 लाख टन माल का निर्यात होता है। दूसरे शब्दों में भारत में आयात होने वाले माल का लगभग 45 प्रतिशत और भारत से निर्यात होने वाले कुल माल का लगभग 25 प्रतिशत भाग बम्बई बन्दरगाह से ही होता है।

बम्बई बन्दरगाह से निर्यात होने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—सूती वस्त्र, मैंगनीज, ऊन, कपास, तिलहन, वनस्पति तेल और मसाले आदि।

मार्मागोआ बन्दरगाह से आयात होने वाली प्रमुख वस्तुएँ ये हैं—मशीनें, [illegible] की सामान, मशीन, परिवहन साज की सामग्री, लोहे का सामान, कच्चा वैज्ञानिक सामग्री, रासायनिक पदार्थ, खाद्यान्न, स्टील आदि।

कलकत्ता—

परिचय—कलकत्ता बन्दरगाह भारत के पूर्वी तट पर पश्चिमी बंगाल राज्य में स्थित है। यह भारत का दूसरा सबसे बड़ा बन्दरगाह है (प्रथम बम्बई है)। भारत का यह सबसे बड़ा नगर है। यह गंगा नदी की सहायक हुगली नदी के बाँयें किनारे पर स्थित है। यह बंगाल की खाड़ी के तट से लगभग 130 किलोमीटर अन्दर की ओर स्थित है। यह बन्दरगाह हुगली नदी के किनारे 9 किलोमीटर तक फैला हुआ है। कलकत्ता नगर बहुत घना बसा हुआ नगर है। यहाँ 30 लाख से भी अधिक मनुष्य निवास करते हैं। यह नदी पर स्थित बन्दरगाह (River Port) है अतः नदी द्वारा लाई गई मिट्टी बन्दरगाह के निकट समुद्र में एकत्रित होती रहती है जिससे जल का तल उथला होता रहता है। इस मिट्टी को निरन्तर हटाया जाता है।

पृष्ठ प्रदेश का विस्तार—कलकत्ता बन्दरगाह का पृष्ठ प्रदेश भी बहुत विस्तृत एवं धनी है। राजनीतिक दृष्टि से इसका पृष्ठ प्रदेश पश्चिमी बंगाल, असम, बिहार, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, जम्मू-कश्मीर, मध्य प्रदेश व उड़ीसा तक विस्तृत है। नेपाल, भूटान व सिक्किम भी इसके पृष्ठ प्रदेश में सम्मिलित हैं। सतलज, गंगा, ब्रह्मपुत्र के उपजाऊ मैदानों ने इस बन्दरगाह के महत्व को काफी बढ़ा दिया है। कलकत्ता बन्दरगाह देश के सभी भागों से रेल व सड़क-मार्गों द्वारा जुड़ा हुआ है। दिल्ली—कानपुर—इलाहाबाद—वाराणसी—कलकत्ता, नागपुर—रायपुर—कलकत्ता आदि राष्ट्रीय सड़क मार्गों व पूर्वी रेलवे और दक्षिण-पूर्वी रेल मार्गों से यह बन्दरगाह सम्बद्ध है। गंगा, ब्रह्मपुत्र तथा हुगली नदी के जल मार्गों का भी काफी उपयोग होता है। कलकत्ता का दमदम हवाई-अड्डा अंतर्राष्ट्रीय महत्व का है।

आयात निर्यात की वस्तुएँ—कलकत्ता बन्दरगाह में प्रतिवर्ष प्रवेश करने वाले जहाजों की संख्या लगभग 1½ हजार है। एक अनुमान के अनुसार भारत के प्रमुख बन्दरगाहों द्वारा कुल निर्यात का लगभग 25 प्रतिशत भाग और कुल आयात का लगभग 20 प्रतिशत भाग कलकत्ता बन्दरगाह द्वारा ही होता है। इस बन्दरगाह से प्रतिवर्ष औसतरूप से लगभग 50 लाख टन माल का आयात और 45 लाख टन माल का निर्यात होता है।

कलकत्ता बन्दरगाह से निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—जूट का सामान, चाय, तिलहन, लाख, मैंगनीज, पिग आयरन, इस्पात, चमड़ा व खालें, चमड़े का सामान, चीनी, इंजीनियरिंग व बिजली का सामान आदि।

कलकत्ता बन्दरगाह से आयात होने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—मशीनें, कच्चा

पट्रोलियम, रवर की चीजें, मोटरें, शराब, रासायनिक पदार्थ, रासायनिक खाद खाद्यान्न, कांच का सामान, औषधियां आदि।

मद्रास—

परिचय—मद्रास बन्दरगाह भारत के पूर्वी किनारे पर तमिलनाडु राज्य में स्थित है। यह कृत्रिम बन्दरगाह है जो तमिलनाडु राज्य में प्रथम नम्बर का पूर्वी तट पर द्वितीय नम्बर का तथा भारत में तीसरे नम्बर का बन्दरगाह है। सामुद्रिक रास्ते से मद्रास और कलकत्ता के मध्य लगभग 1 122 किलोमीटर की दूरी है तथा मद्रास और बम्बई के मध्य 2 365 किलोमीटर की दूरी है।

यह बन्दरगाह सन 1895 में बनकर तयार हुआ और सन 1911 में इसके पोताश्रय को पुन ठीक किया गया। इसके पोताश्रय को बनाने के लिए लगभग 915 मीटर (3 000 फीट) की गहराई पर नींव डालकर दीवारें बनाई गयी और लगभग 200 एकड़ समुद्र को घेरा गया। इस पोताश्रय में 14 जहाज ठहर सकते हैं। मद्रास तमिलनाडु की राजधानी भी है। इस नगर की जनसंख्या लगभग 18 लाख (सन 1961 में) थी। अब इसकी जनसंख्या लगभग 21 लाख है।

पृष्ठ प्रदेश का विस्तार—मद्रास बन्दरगाह का पृष्ठ प्रदेश भी काफी धनी व विस्तृत है किन्तु कलकत्ता व बम्बई के पृष्ठ प्रदेश के समान धनी नहीं है। राजनीतिक दृष्टि से इसके पृष्ठ प्रदेश में तमिलनाडु मैसूर आन्ध्र व केरल राज्यों के अधिकांश भाग दक्षिणी मध्य प्रदेश व दक्षिणी उड़ीसा राजस्थान आदि हैं। इसके पृष्ठ प्रदेश में मुख्यत खनिज क्षेत्र व तिलहन क्षेत्र है।

मद्रास का बन्दरगाह देश के सभी प्रमुख केन्द्रों से रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। बम्बई के निकट थाना से पूना हुबली-बंगलौर मद्रास तथा वाराणसी कटक विशाखापट्टनम मद्रास आदि राष्ट्रीय सड़क मार्गों से जुड़ा हुआ है। रेलों का भी जाल सा बिछा हुआ है। मद्रास का हवाई अड्डा भी भारत के बड़े हवाई अड्डों में से है।

आयात निर्यात की वस्तुएँ—मद्रास बन्दरगाह में प्रतिवर्ष लगभग 1,325 जहाज प्रवेश करते हैं। एक अनुमान के अनुसार भारत में बड़े बन्दरगाहों द्वारा कुल निर्यात का लगभग 8 प्रतिशत भाग और कुल आयात का लगभग 10 प्रतिशत भाग मद्रास द्वारा ही होता है। इस बन्दरगाह के द्वारा प्रतिवर्ष औसत रूप से लगभग 37 लाख टन माल का आयात व 20 लाख टन माल का निर्यात होता है।

मद्रास बन्दरगाह से निर्यात होने वाली प्रमुख वस्तुएँ ये हैं—तिलहन (विशेषत मूंगफली), चमड़ा व खालें चाय, कहवा, तम्बाकू मैंगनीज, अभ्रक, हल्दी नारियल व मछलियां आदि।

मद्रास बन्दरगाह द्वारा आयात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—मशीनें लोहे का सामान रासायनिक खाद रासायनिक पदार्थ लम्बे रेशे की कपास खाद्यान्न आदि।

बम्बई बन्दरगाह से आयात होने वाली प्रमुख वस्तुएँ ये हैं—कच्चे रूई की कपास, मशीन परिवहन सम्बन्धी यन्त्र ट्रक्टर, लोहे का सामान, कच्चा पैट्रोलियम कोयला रासायनिक पदार्थ खाद्यान्न, दवाइयाँ आदि।

कलकत्ता—

परिचय—कलकत्ता बन्दरगाह भारत के पूर्वी तट पर पश्चिमी-बंगाल राज्य में स्थित है। यह भारत का दूसरा सबसे बड़ा बन्दरगाह है (प्रथम बम्बई है)। भारत का यह सबसे बड़ा नगर है। यह गंगा नदी की सहायक, हुगली नदी के बायें किनारे पर स्थित है। यह बंगाल की खाड़ी के तट से लगभग 130 किलोमीटर अन्दर की ओर स्थित है। *यह बन्दरगाह हुगली नदी के किनारे 8 किलोमीटर तक फैला हुआ है।* कलकत्ता नगर बहुत घना बसा हुआ नगर है। यहाँ 30 लाख से भी अधिक मनुष्य निवास करते है। यह नदी पर स्थित बन्दरगाह (River Port) है अत नदी द्वारा लाई गई मिट्टी बन्दरगाह के निकट समुद्र में एकत्रित होती रहती है जिससे जल का तल उथला होता रहता है। इस मिट्टी को निरन्तर हटाया जाता है।

पृष्ठ प्रदेश का विस्तार—कलकत्ता बन्दरगाह का पृष्ठ प्रदेश भी बहुत विस्तृत एवं धनी है। राजनीतिक दृष्टि से इसका पृष्ठ प्रदेश पश्चिमी बंगाल, असम, बिहार, उत्तर प्रदेश दिल्ली राजस्थान, पंजाब, हरियाना जम्मू-काश्मीर मध्य प्रदेश व उड़ीसा तक विस्तृत है। नेपाल भूटान व सिक्किम भी इसके पृष्ठ प्रदेश में सम्मिलित है। सतलज गंगा ब्रह्मपुत्र के उपजाऊ मैदान ने इस बन्दरगाह के महत्त्व को काफी बढ़ा दिया है। कलकत्ता बन्दरगाह देश के सभी भागों से रेल व सड़क मार्गों द्वारा जुड़ा हुआ है। दिल्ली—कानपुर—इलाहाबाद—वाराणसी—कलकत्ता नागपुर—रायपुर—कलकत्ता आदि राष्ट्रीय सड़क मार्गों व पूर्वी रेलवे और दक्षिणी-पूर्वी रेल मार्गों से यह बन्दरगाह सम्बद्ध है। गंगा ब्रह्मपुत्र तथा हुगली नदी के जल मार्गों का भी काफी उपयोग होता है। कलकत्ता का दमदम हवाई अड्डा अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व का है।

आयात निर्यात की वस्तुऐं—कलकत्ता बन्दरगाह में प्रतिवर्ष प्रवेश करने वाले जहाजों की संख्या लगभग $1\frac{1}{2}$ हजार है। एक अनुमान के अनुसार भारत में प्रमुख बन्दरगाहों द्वारा कुल निर्यात का लगभग 25 प्रतिशत भाग और कुल आयात का लगभग 20 प्रतिशत भाग कलकत्ता बन्दरगाह द्वारा ही होता है। इस बन्दरगाह से प्रतिवर्ष औसतरूप से लगभग 50 लाख टन माल का आयात और 45 लाख टन माल का निर्यात होता है।

कलकत्ता बन्दरगाह से निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएँ ये हैं—जूट का सामान चाय तिलहन लाख मैंगनीज पिग आयरन इस्पात, चमड़ा व खालें चमड़े का सामान चीनी इन्जीनियरिंग व बिजली का सामान आदि।

कलकत्ता बन्दरगाह से आयात होने वाली प्रमुख वस्तुएँ ये हैं—मशीनें कच्चा

पट्रोलियम रबर की चीजें, मोटरें, शराब रासायनिक पदार्थ रासायनिक खाद, खाद्यान्न काँच का सामान, औषधियाँ आदि।

मद्रास—

परिचय—मद्रास बन्दरगाह भारत के पूर्वी किनारे पर तमिलनाडु राज्य में स्थित है। यह कृत्रिम बन्दरगाह है जो तमिलनाडु राज्य में प्रथम नम्बर का, पूर्वी तट पर द्वितीय नम्बर का तथा भारत में तीसरे नम्बर का बन्दरगाह है। सामुद्रिक रास्ते से मद्रास और कलकत्ता के मध्य लगभग 1 122 किलोमीटर की दूरी है तथा मद्रास और बम्बई के मध्य 2 365 किलोमीटर की दूरी है।

यह बन्दरगाह सन 1895 में बनकर तैयार हुआ और सन 1911 में इसके पोताश्रय का पुनः ठीक किया गया। इसके पोताश्रय को बनाने के लिए लगभग 915 मीटर (3 000 फीट) की गहराई पर नींव डालकर दीवारें बनाई गयी और लगभग 200 एकड़ समुद्र को घेरा गया। इस पोताश्रय में 14 जहाज ठहर सकते हैं। मद्रास तमिलनाडु की राजधानी भी है। इस नगर की जनसंख्या लगभग 18 लाख (सन 1961 में) थी। अब इसकी जनसंख्या लगभग 21 लाख है।

पृष्ठ प्रदेश का विस्तार—मद्रास बन्दरगाह का पृष्ठ प्रदेश भी काफी धनी व विस्तृत है किन्तु कलकत्ता व बम्बई के पृष्ठ प्रदेश के समान धनी नहीं है। राजनीतिक दृष्टि से इसके पृष्ठ प्रदेश में तमिलनाडु मैसूर आन्ध्र व केरल राज्यों के अधिकांश भाग, दक्षिणी मध्य प्रदेश व दक्षिणी उड़ीसा राजस्थान आदि हैं। इसके पृष्ठ प्रदेश में मुख्यतः खनिज क्षेत्र व तिलहन क्षेत्र हैं।

मद्रास का बन्दरगाह देश के सभी प्रमुख केन्द्रों से रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। बम्बई के निकट थाना से पूना हुबली बंगलौर मद्रास तथा वाराणसी कटक विशाखापट्टनम मद्रास आदि राष्ट्रीय सड़क मार्गों से जुड़ा हुआ है। रेलों का भी जाल सा बिछा हुआ है। मद्रास का हवाई अड्डा भी भारत के बड़े हवाई अड्डों में से है।

आयात निर्यात की वस्तुएँ—मद्रास बन्दरगाह में प्रतिवर्ष लगभग 1 325 जहाज प्रवेश करते हैं। एक अनुमान के अनुसार भारत में बड़े बन्दरगाहों द्वारा कुल निर्यात का लगभग 8 प्रतिशत भाग और कुल आयात का लगभग 10 प्रतिशत भाग मद्रास द्वारा ही होता है। इस बन्दरगाह के द्वारा प्रतिवर्ष औसत रूप से लगभग 37 लाख टन माल का आयात व 20 लाख टन माल का निर्यात होता है।

मद्रास बन्दरगाह से निर्यात होने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—तिलहन (विशेषतः मूंगफली) चमड़ा व खालें, चाय कहवा तम्बाकू, मैंगनीज अभ्रक, हल्दी, नारियल व मछलियां आदि।

मद्रास बन्दरगाह द्वारा आयात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—मशीनें लोहे का सामान रासायनिक खाद रासायनिक पदार्थ लम्बे रेशे की कपास खाद्यान्न आदि।

विशाखापट्टनम—

परिचय—विशाखापट्टनम भारत के पूर्वी किनारे पर आन्ध्र प्रदेश राज्य में स्थित है। यह भारत का महत्वपूर्ण बन्दरगाह होता जा रहा है। यह बन्दरगाह कलकत्ता तथा मद्रास बन्दरगाहों के लगभग मध्य में स्थित है। कलकत्ता से विशाखापट्टनम लगभग 875 किलोमीटर दूर और मद्रास से लगभग 425 किलोमीटर दूर है।

पृष्ठ प्रदेश का विस्तार—इसका पृष्ठप्रदेश भी काफी धनी है। इसका पृष्ठ प्रदेश मुख्य रूप से काफी दूर तक विस्तृत है—आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा, मध्य प्रदेश एवं पूर्वी मध्यप्रदेश एवं उत्तरी तमिलनाडु। वाराणसी—कटक—विशाखापट्टनम—मद्रास का राष्ट्रीय सड़क मार्ग इसके लिए महत्वशाली है। यह बन्दरगाह दक्षिणी-पूर्वी रेलवे द्वारा अपने पृष्ठ प्रदेश के प्रमुख केन्द्रों से जुड़ा हुआ है। यहां पर हवाई अड्डा भी है अतः वायु मार्ग की भी सुविधा है।

आयात व निर्यात की प्रमुख वस्तुऐं—इस बन्दरगाह में प्रवेश करने वाले जहाजों की औसत संख्या लगभग 600 है। इस बन्दरगाह से प्रतिवर्ष 41 लाख टन माल का निर्यात और 25 लाख टन माल का आयात होता है।

विशाखापट्टनम बन्दरगाह से निर्यात होने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—लोह खनिज, मैंगनीज, मूंगफली, अरंडी, लाख, चमड़ा व खालें, लकड़ियाँ और कोयला आदि। यहाँ से निर्यात होने वाली सबसे महत्वशाली वस्तु लोह खनिज है। विशाखापट्टनम से लोह खनिज के निर्यात की क्षमता 80 लाख टन करने के लिए इस बन्दरगाह का विकास किया जा रहा है। जापान सरकार ने इस कार्य के लिए ऋण भी दिया है।

इस बन्दरगाह द्वारा आयात की जाने वाली प्रमुख वस्तुऐं ये हैं—कच्चा तेल, मशीन, लोह व इस्पात का सामान, खाद्यान्न आदि।

औद्योगिक एवं व्यापारिक महत्व—कलकत्ता व मद्रास बन्दरगाहों पर विदेशी व्यापार का भार अधिक पड़ने के कारण, इस बन्दरगाह का विकास आवश्यक था। विशाखापट्टनम में हिन्दुस्तान शिपयार्ड है जहाँ सामुद्रिक-जहाज बनाने का एक बड़ा कारखाना है। यह कारखाना सार्वजनिक क्षेत्र में है। अब तक यहाँ 46 सामुद्रिक जहाज बन चुके हैं। कालटेक्स कम्पनी द्वारा यहाँ एक तेल शोधक कारखाना लगाया जा चुका है। रासायनिक खाद का एक कारखाना स्थापित किया जा रहा है। विशाखापट्टनम की जनसंख्या 1961 की जनगणना के अनुसार 1.82 लाख थी। अब इसमें और अधिक वृद्धि हो चुकी है।

विशाखापट्टनम बन्दरगाह कलकत्ता तथा मद्रास बन्दरगाहों का वास्तव में प्रतिस्पर्धी नहीं है वरन उनका पूरक है।

कोचीन—

परिचय—कोचीन भारत के पश्चिमी किनारे पर केरल राज्य में स्थित है।

दक्षिणी भारत के पश्चिमी तट पर यह सबसे बडा बन्दरगाह है। इसकी गणना भारत के पाँच बडे बन्दरगाहो (बम्बई, कलकत्ता मद्रास, विशाखापट्टनम और कोचीन) म की जाती है। यह बन्दरगाह मालाबार तट पर बम्बई स लगभग 935 किलोमीटर दक्षिण म स्थित है। यह भी प्राकृतिक बन्दरगाह है और यूरोप से आस्ट्रेलिया व सुदूर पूर्व क देशो को जाने वाले सामुद्रिक मार्ग म पडता है। वसे तो यह बम्बई और लका के कोलम्बो बन्दरगाह के मध्य मुख्य बन्दरगाह है। कोचीन बन्दरगाह का तटीय व्यापार म भी महत्त्वशील स्थान है। कोचीन के निकटवर्ती क्षेत्र म समुद्र छिछला व रेतीला होने के कारण जहाजो को तट से लगभग 4 किलोमीटर दूर ठहरना पडता है। यहाँ प्रत्येक मौसम म जहाज आ जा सकते है।

पृष्ठप्रदेश का विस्तार—कोचीन बन्दरगाह का पृष्ठप्रदेश बहुत विस्तृत नही है। इसका कारण यह है कि उत्तर मे बम्बई बन्दरगाह और पूर्व म मद्रास बन्दरगाह महत्वपूर्ण हैं। राजनीतिक दृष्टि से इसके पृष्ठप्रदेश म केरल राज्य, मसूर राज्य, व तमिलनाडु का मुख्यत दक्षिणी भाग सम्मिलित है। कोचीन अपने पृष्ठ प्रदेश स रेलो व सडको द्वारा मिला हुआ है। इसके पृष्ठ प्रदेश म अनेक व्यापारिक फसलें उत्पन्न होती हैं जसे काजू, रबर चाय कहवा, नारियल आदि। कोचीन एक हवाई अड्डा भी है।

आयात व निर्यात की प्रमुख वस्तुएँ—इस बन्दरगाह मे प्रवेश करने वाले जहाजो की औसत सख्या लगभग 1 200 है। इस बन्दरगाह द्वारा प्रतिवर्ष लगभग 40 लाख टन माल का आयात और 18 लाख टन माल का निर्यात होता है।

कोचीन बन्दरगाह से निर्यात होने वाली प्रमुख वस्तुएँ य हैं—काजू चाय कहवा, काली मिर्च, मसाले, नारियल नारियल की जटा नारियल की जटा का सामान, इलायची, मछलिया आदि।

इस बन्दरगाह द्वारा आयात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएँ य हैं—खाद्यान्न मशीनें लोहे का सामान, खनिज तेल आदि। कोचीन म एक तल शोधक कारखाना स्थापित किया गया है अत खनिज तेल का आयात की जाने वाली वस्तुओ म प्रमुख स्थान हो गया है।

औद्योगिक एव व्यापारिक महत्त्व—यहा सामुद्रिक जहाज बनाने का कारखाना टोकियो (जापान) की एक फर्म (मित्सुबिशी हैवी इण्डस्ट्रीज) के सहयोग म स्थापित किया जा रहा है। यह भारत म दूसरा कारखाना है प्रथम कारखाना विशाखापट्टनम म कार्य कर रहा है। इस कारखाने क कारण कोचीन बन्दरगाह का महत्त्व और अधिक हो गया है। सयुक्त राज्य अमरीका की फिलिप्स पट्रोलियम कम्पनी के सहयोग से कोचीन म एक तलशोधक कारखाना स्थापित किया जा चुका है जिसने तेल शोधन कार्य सन् 1967 से आरम्भ कर दिया है। इस कारखाने के कारण भी कोचीन का महत्त्व बहुत बढ गया है।

कांदला—

परिचय—गुजरात राज्य में कच्छ की खाड़ी के पूर्वी किनारे पर लगभग 70 दशा तट पर कांदला बन्दरगाह स्थित है। भुजनगर यहाँ से लगभग 50 किलोमीटर दूर है। कांदला का पोताश्रय सुरक्षित एवं प्राकृतिक है। यहाँ पानी की गहराई लगभग 9 मीटर (30 फीट) है।

इस बन्दरगाह का तत्कालीन कच्छ राज्य के लिए सन् 1930 में निर्माण किया गया था। देश का विभाजन हो जाने के कारण कराची बन्दरगाह पाकिस्तान को मिला अत बम्बई बन्दरगाह पर अधिक भार पड़ने लगा। इस कारण कांदला बन्दरगाह का विकास आवश्यक हो गया। इस बन्दरगाह के विकास का कार्य सन 1949 से आरम्भ किया गया। इस बन्दरगाह का उद्घाटन स्व० पण्डित नेहरू ने सन 1951 में किया।

पृष्ठभूमि का विस्तार—कांदला बन्दरगाह का पृष्ठ प्रदेश काफी विस्तृत है। इसके पृष्ठप्रदेश में गुजरात, महाराष्ट्र का थोड़ा उत्तरी भाग, राजस्थान पश्चिमी उत्तर प्रदेश पंजाब हरियाना तथा जम्मू व काश्मीर सम्मिलित हैं। कांदला बन्दरगाह का पूर्ण विकास न होने के कारण इन राज्यों का अधिकांश व्यापार बम्बई बन्दरगाह द्वारा ही होता है।

कांदला पहले भारत के पिछड़े प्रदेशों में से था रेल व सड़क मार्गों की कमी थी। सन 1952 में कांदला को मुख्य भूमि से मिलाने के लिए 275 किलोमीटर लम्बा रेल-मार्ग कांदला से डीसा तक बनकर तैयार हो चुका है। कांदला से एक रेल मार्ग गांधी धाम होता हुआ पश्चिम में भुज तक गया है। गांधी धाम से एक रेल मार्ग उत्तर पूर्व की ओर से तनपुर व डीसा होता हुआ पालनपुर तक आता है। यहां पर पश्चिमी रेलवे के दिल्ली अहमदाबाद मार्ग से मिल जाता है।

कराची की अपेक्षा कांदला दिल्ली व हिसार (हरियाना) से अधिक निकट है। दिल्ली से कांदला लगभग 1050 किलोमीटर दूर है और हिसार से कांदला लगभग 1 110 किलोमीटर दूर है जबकि दिल्ली से कराची 1 225 किलोमीटर और हिसार से 1 175 किलोमीटर दूर है।

आयात एवं निर्यात की प्रमुख वस्तुएँ—कांदला बन्दरगाह में प्रवेश करने वाले जहाजों की वार्षिक संख्या लगभग 275 है। इस बन्दरगाह द्वारा प्रतिवर्ष औसत रूप से 25 लाख टन माल का आयात व केवल 2 3 लाख टन माल का *निर्यात किया जाता है।*

कांदला बन्दरगाह से निर्यात होने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—तिलहन, चमडा व खालें ऊन नमक सूती वस्त्र छोटे रेशे का कपास आदि।

इस बन्दरगाह द्वारा आयात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएं ये हैं—खनिज तेल, लम्बे रेशे की कपास मशीनें लोहे का सामान, रासायनिक पदार्थ, रासायनिक खाद, खाद्यान्न आदि।

इस बन्दरगाह का महत्त्व बनाने के उद्देश्य से भारत सरकार ने काण्डला को मुक्त-बन्दरगाह (Free Port) की श्रेणी में कर दिया है। यहां एक बड़ा हवाई अड्डा बनाया गया है।

प्रदीप या पारादीप—

परिचय—यह बन्दरगाह भारत के पूर्वी तट पर उड़ीसा राज्य में है। इस बन्दरगाह का यूगोस्लाविया सरकार के सहयोग से विकास किया जा रहा है। इस बन्दरगाह का उद्घाटन यूगोस्लाविया के प्रधान मन्त्री ने सन 1966 में किया। इस बन्दरगाह के निर्माण पर लगभग 20 करोड़ रुपये व्यय किये गये हैं।

पृष्ठभूमि का विस्तार—इस बन्दरगाह की पृष्ठभूमि उड़ीसा, दक्षिणी बिहार व दक्षिणी मध्य प्रदेश है। इसकी पृष्ठभूमि का क्षेत्र बहुत विस्तृत नहीं है।

आयात एवं निर्यात की प्रमुख वस्तुएं—इस बन्दरगाह के विकास करने का मुख्य उद्देश्य कलकत्ता, विशाखापट्टनम व मद्रास बन्दरगाहों के भार को कम करना है। अभी इस बन्दरगाह में विदेशी व्यापार अधिक मात्रा में नहीं होता है। आजकल औसतरूप से लगभग 60 हजार टन माल का आयात व लगभग 10 लाख टन माल का वार्षिक निर्यात हो रहा है। इस बन्दरगाह में प्रवेश करने वाले जहाजों की संख्या नगण्य सी ही है। इस बन्दरगाह का विकास हो जाने पर भारत की अर्थ व्यवस्था में यह महत्त्वपूर्ण योग प्रदान करेगा।

इस बन्दरगाह द्वारा मुख्यतः उड़ीसा से खनिज लौह निर्यात किया जाता है। मध्य प्रदेश व दक्षिणी बिहार के भी खनिज निर्यात में इसका योग है। आयात के अन्तर्गत अभी तो इस बन्दरगाह द्वारा खाद्यान्न ही आयात किये जाते हैं।

भारत के अन्य बन्दरगाह—

उपरोक्त बन्दरगाहों के अतिरिक्त भारत में निम्नलिखित बन्दरगाह भी हैं :—

पश्चिमी तट के अन्य बन्दरगाह—भारत के पश्चिमी तट पर निम्नलिखित अन्य बन्दरगाह हैं :—

माण्डवी (कच्छ की खाड़ी में) नवलाखी, बेदी, ओखा, पोरबन्दर, भावनगर (सभी गुजरात में) मरमगाव (गोआ का बन्दरगाह) मंगलोर (मरमगाव के दक्षिण में) कालीकट (कोचीन के उत्तर में) एलप्पी (केरल में)।

पूर्वी तट के अन्य बन्दरगाह—धनुषकोटि (ठेठ दक्षिण में) तूतीकोरन (तमिलनाडु में) नगापट्टम (तमिलनाडु में) कुडालोर (पांडिचेरी के दक्षिण में) मछलीपट्टम (आन्ध्र प्रदेश में) काकीनाडा (आन्ध्र में विशाखापट्टनम के दक्षिण में) गोपालपुर (उड़ीसा) हल्दिया (प० बंगाल) आदि।

हल्दिया (Haldia)—पश्चिमी बंगाल राज्य में हुगली नदी की एस्चुअरी (estuary) पर स्थित हल्दिया को एक बन्दरगाह के रूप में विकास किया जा रहा है। यह कलकत्ता बन्दरगाह पर पड़ने वाला बोझ घटायेगा और इस क्षेत्र के औद्योगिक विकास को सहायता पहुँचायेगा। हल्दिया में 12 करोड़ रुपये की लागत में

25 लाख टन क्षमता वाला तेल शोधक कारखाना स्थापित किया जा रहा है जो आयातित कच्चा तेल साफ करेगा। केन्द्रीय सरकार ने 93 करोड रुपये की लागत से 1968 69 तक पट्रो केमिकल कारखाना स्थापित करने का निश्चय किया है जिसका निर्माण दो चरणों म होगा।

पोर्ट ब्लेयर (Port Blair)—बगाल की खाडी म स्थित अण्डमान द्वीपसमूह के दक्षिण पूर्वी किनारे पर स्थित एक प्राकृतिक बन्दरगाह है। यह अण्डमान व निकोबार द्वीपसमूह का सबसे प्रसिद्ध नगर, सबसे बडा बन्दरगाह और राजधानी है। यह बन्दरगाह कलकत्ता से लगभग 1,255 Kms और मद्रास से लगभग 1 190 Kms दूर है।

अण्डमान द्वीप समूह की प्रमुख उपज नारियल, गम मसाले, कहवा रबर आदि इस बन्दरगाह से बाहर—मुख्यत भारत को भेजी जाती हैं। यहाँ दियासलाई बनाने का एक कारखाना है। लकडी चीरने का एक सरकारी कारखाना है। नारियल की जटाओ से रस्सियाँ व अन्य वस्तुए बनाने टोकरियाँ व नारियल का तेल निकालने के छोटे छोटे कारखाने हैं। यहाँ अनेक जाति के लोग रहते हैं। वायु मार्ग का विकास किया जा रहा है। यहाँ जनसख्या कम (1 लाख से कम) है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 Give an account of any two ports of India and on a sketch map of India show their hinterlands (T D C 1961)

2 How does a trade centre develop ? Account for the growth of Ahmedabad, Bangalore and Kanpur (T D C, 1962)

3 एक व्यापारिक केन्द्र का विकास क्योकर होता है ? निम्नलिखित भागो को कौन से सुयोग प्राप्त हैं —कटनी मदुरई नियेली जमशेदपुर, त्रिवेन्द्रम, वाराणसी ?

[How does a trade centre develop ? What advantages do the following cities enjoy — Katni, Madurai Neyvelli, Jamshed pur, Trivendrum Varanasi ?] (T D C, 1964)

4 एक बन्दरगाह के विकास म पृष्ठ भूमि का क्या महत्त्व है ? निम्नलिखित बन्दरगाह क्यो प्रख्यात (विख्यात) हैं —बम्बई पोर्ट ब्लेयर, सिंगापुर, सिडनी मलबोर्न ?

[What is the importance of hinterland in the development of a port ? Why are the following ports important —Bombay, Port Blair, Singapore Sidney Melbourne ?] (T D C, 1964)

5 एक अच्छे पोताश्रय के गुणों को बतलाइये। काण्डला बन्दरगाह के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। भारत सरकार ने इस बन्दरगाह की प्रगति के लिए क्या कदम उठाए हैं ? (T D C Suppl 1965)

6 एक अच्छे पोताश्रय के गुण बताइये। विशाखापट्टनम बन्दरगाह के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। भारत सरकार ने इस बन्दरगाह की प्रगति के लिए क्या कदम उठाए हैं ? (T D C, 1965)

7 निम्नलिखित में से किन्हीं पाँच की स्थिति व व्यापारिक महत्त्व बताइये—कानपुर बंगलौर, अलेप्पी, कोचीन, जबलपुर, नूनमाटी। (T D C, 1966)

8 एक अच्छे पोताश्रय के गुण बताइये। काण्डला तथा विशाखापट्टनम बन्दरगाह के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। भारत सरकार ने इन बन्दरगाहों की प्रगति के लिए क्या कदम उठाए हैं ? (T D C, 1967)

9 काण्डला तथा विशाखापट्टनम बन्दरगाहों के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। भारत सरकार ने इन बन्दरगाहों के विकास के लिए क्या कदम उठाए हैं ? (T D C Suppl, 1968)

10 भारत के कृत्रिम बन्दरगाहों पर टिप्पणी लिखिए। रेखा चित्र दीजिए। (T D C, 1969)

11 योजना काल में विकसित भारत के दो बड़े बन्दरगाहों पर टिप्पणी लिखिए। (T D C, 1970)

[संकेत—विशाखापट्टनम काण्डला, कोचीन में से किन्हीं दो का विवरण दीजिए।]

12 एक बन्दरगाह के विकास में पृष्ठ भूमि का क्या महत्त्व है ? निम्नलिखित बन्दरगाह क्यों महत्त्वपूर्ण हैं —
(क) काण्डला (ख) बम्बई (ग) मद्रास। (T D C 1971)

25 लाख टन क्षमता वाला तेल शोधक कारखाना स्थापित किया जा रहा है, जो आयातित कच्चा तेल साफ करेगा। केन्द्रीय सरकार ने 93 करोड़ रुपये की लागत से 1968 69 तक पेट्रोकेमिकल कारखाना स्थापित करने का निश्चय किया है जिसका निर्माण दो चरणो म होगा।

पोर्ट ब्लेयर (Port Blair)—बगाल की खाडी म स्थित अण्डमान द्वीपसमूह के दक्षिण पूर्वी किनारे पर स्थित एक प्राकृतिक बन्दरगाह है। यह अण्डमान व निकोबार द्वीपसमूह का सबसे प्रसिद्ध नगर, सबसे बडा बन्दरगाह और राजधानी है। यह बन्दरगाह कलकत्ता से लगभग 1,255 Kms और मद्रास से लगभग 1 190 Kms दूर है।

अण्डमान द्वीप समूह की प्रमुख उपज नारियल गर्म मसाले कहवा रबर आदि इस बन्दरगाह से बाहर—मुख्यत भारत को भेजी जाती हैं। यहा दियासलाई बनाने का एक कारखाना है। लकडी चीरने का एक सरकारी कारखाना है। नारियल की जटाओ से रस्सिया व अन्य वस्तुएँ बनाने टोकरियाँ व नारियल का तेल निकालने के छोटे छोटे कारखाने हैं। यहा अनेक जाति के लोग रहते है। वायु मार्ग का विकास किया जा रहा है। यहाँ जनसख्या कम (1 लाख से कम) है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 Give an account of any two ports of India and on a sketch map of India show their hinterlands (T D C, 1961)

2 How does a trade centre develop ? Account for the growth of Ahmedabad, Bangalore and Kanpur (T D C 1962)

3 एक व्यापारिक केन्द्र का विकास क्योंकर होता है ? निम्नलिखित भागो को कौन से सुयोग प्राप्त हैं —कटनी मदुरई निवेली जमशेदपुर, त्रिवेन्द्रम वाराणसी ?

[How does a trade centre develop ? What advantages do the following cities enjoy — Katni, Madurai Neyvelli, Jamshedpur, Trivendrum Varanasi ?] (T D C, 1964)

4 एक बन्दरगाह के विकास म पृष्ठभूमि का क्या महत्त्व है ? निम्नलिखित बन्दरगाह क्यो प्रख्यात (विख्यात) हैं —बम्बई, पोर्ट ब्लेयर सिंगापुर, सिडनी, मलबोर्न ?

[What is the importance of hinterland in the development of a port ? Why are the following ports important —Bombay Port Blair, Singapore Sidney Melbourne ?] (T D C, 1964)

5 एक अच्छे पोताश्रय के गुणों को बतलाइये। काण्डला बन्दरगाह के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। भारत सरकार ने इस बन्दरगाह की प्रगति के लिए क्या कदम उठाए हैं ? (T D C Suppl 1965)

6 एक अच्छे पोताश्रय के गुण बताइये। विशाखापट्टनम बन्दरगाह के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। भारत सरकार ने इस बन्दरगाह की प्रगति के लिए क्या कदम उठाए हैं ? (T D C 1965)

7 निम्नलिखित में से किन्हीं पाँच की स्थिति व व्यापारिक महत्त्व बताइये—कानपुर, बंगलोर, अलेप्पी, कोचीन, जबलपुर, नूनमाटी। (T D C, 1966)

8 एक अच्छे पोताश्रय के गुण बताइये। काण्डला तथा विशाखापट्टनम बन्दरगाह के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। भारत सरकार ने इन बन्दरगाहों की प्रगति के लिए क्या कदम उठाए हैं ? (T D C 1967)

9 काण्डला तथा विशाखापट्टनम बन्दरगाहों के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। भारत सरकार ने इन बन्दरगाहों के विकास के लिए क्या कदम उठाए हैं ? (T D C Suppl, 1968)

10 भारत के कृत्रिम बन्दरगाहों पर टिप्पणी लिखिए। रेखा चित्र दीजिए। (T D C, 1969)

11 योजना काल में विकसित, भारत के दो बड़े बन्दरगाहों पर टिप्पणी लिखिए। (T D C, 1970)

[संकेत—विशाखापट्टनम, काण्डला, कोचीन में से किन्हीं दो का विवरण दीजिए।]

12 एक बन्दरगाह के विकास में पृष्ठ भूमि का क्या महत्त्व है ? निम्नलिखित बन्दरगाह क्यों महत्त्वपूर्ण हैं —

(क) काण्डला (ख) बम्बई, (ग) मद्रास। (T D C, 1971)

32

भारत का व्यापार

प्रारम्भिक—

व्यापार वतमान युग की धमनियाँ है। आज के युग म किसी भी देश की आर्थिक सम्पन्नता वहाँ क विदेशी व्यापार की मात्रा से ज्ञात की जा सकती है। सयुक्त राज्य अमरीका, इगलैंड फ्रास जमनी, रूस आदि के इतने विकसित होन का अनुमान उनके बढ़े हुए विदेशी व्यापार स लगाया जा सकता है। दूसरी ओर ब्रह्मा, थाइलण्ड भूटान पाकिस्तान आदि के विदेशी व्यापार की मात्रा देखने स उनकी अथ व्यवस्था का अनुमान लगाया जा सकता है।

भारतीय व्यापार का विभाजन

स्थूल रूप से व्यापार को तीन भागों म विभक्त किया जा सकता है —(I) आ तरिक अथवा अ तर्राज्यीय व्यापार (Inland Trade or Inter state Trade) (II) बाह्य अथवा विदेशी व्यापार (Foreign Trade) एव (III) पुनर्नियात व्यापार (Entrepot Trade)।

(1) आ तरिक व्यापार
(Inland Trade)

भारत एक विशाल देश है। एक राज्य (State) स दूसरे राज्य म वस्तुएँ भेजी एव मँगवाई जाती हैं। प्रो० के० टी० शाह के मतानुसार, देश का अन्तर्राज्यीय (Inter State) व्यापार राष्ट्रीय स्तर पर युक्तिपूण उत्पादन और वितरण के लिए अत्यन्त आवश्यक है।'

भारत म निम्न प्रमुख वस्तुओं का आ तरिक व्यापार होता है —(1) खाद्यान्न (2) तिलहन (3) नमक (4) वस्त्र—सूती ऊनी व रेशमी, (5) शक्कर व गुड़ (6) कपास व ऊन (7) चाय (8) गम मसाल, (9) जूट व जूट का सामान (10) सीमण्ट, (11) कोयला (12) अ य खनिज, (13) चमड़ा, खाल आदि, (14) कागज व अ य लखन-सामग्री (15) फल, एव (16) वनस्पति घी आदि।

पजाब एव उत्तर प्रदेश स तथा कभी-कभी राजस्थान स गहू विशषत दक्षिण भारत, बगाल, बिहार तथा महाराष्ट्र को भेजा जाता है। बगाल व बिहार स चावल मुख्यत तमिलनाडु को भजा जाता है। मूँगफली तमिलनाडु स उत्तर भारत व

राज्यों में भेजी जाती है। शक्कर व गुड़ उत्तर प्रदेश तथा बिहार से भारत के विभिन्न राज्यों में भेजे जाते हैं। सांभर (राजस्थान) से नमक देश के अनेक भागों में भेजा जाता है।

महाराष्ट्र राज्य, गुजरात राज्य व तमिलनाडु राज्य में विशेषत: सूती वस्त्र भारत के विभिन्न भागों में भेजा जाता है। कश्मीर, पंजाब, उत्तर प्रदेश आदि से ऊनी वस्त्र, कश्मीर से रेशमी वस्त्र अन्य भागों में भेजे जाते हैं। जूट की वस्तुएँ पश्चिमी बंगाल से भेजी जाती हैं। पंजाब, राजस्थान व आन्ध्र में चमड़ा भेजा जाता है। दार्जिलिंग व असम से चाय भारत के प्रत्येक राज्य में भेजी जाती है। नारंगी, केले, आम, सेब, लीची आदि अनेक फल एक स्थान से दूसरे स्थानों को भेजे जाते हैं। इन दिनों वनस्पति घी का आन्तरिक व्यापार भी जोरों पर है। कोयला एवं खाद्यान्नों का आन्तरिक व्यापार सबसे अधिक होता है।

(II) वैदेशिक व्यापार
(Foreign Trade)

विशेषताएँ—

अत्यन्त प्राचीन काल से भारत का विदेशी व्यापार महत्त्वशील रहा है और आज भी है किन्तु समय-समय पर इसके स्वरूप व दिशा में परिवर्तन होते रहे हैं। वर्तमान भारत के वैदेशिक व्यापार की निम्नलिखित विशेषताएँ (characteristics) हैं —

(1) अधिकांश विदेशी व्यापार समुद्र मार्ग द्वारा—भारत के विदेशी व्यापार का अधिकांश भाग (लगभग 95 प्रतिशत) समुद्र मार्ग द्वारा ही होता है। इसका कारण यह है कि हमारे निकटवर्ती देश अधिक विकसित व सम्पन्न नहीं हैं अतः दूर देशों यथा यूरोप, अमरीका आदि जो अधिक सम्पन्न हैं—से व्यापार अधिक होता है और इन देशों से समुद्र मार्ग द्वारा ही व्यापार अधिक सुविधाजनक एवं सम्भव है।

(2) कुछ बन्दरगाहों द्वारा ही व्यापार—भारत के समुद्री व्यापार का अधिकांश भाग केवल चार बन्दरगाहों—कलकत्ता, बम्बई, मद्रास व कांधला—द्वारा होता है।

(3) थल मार्ग से कम व्यापार—भारत का विदेशी व्यापार थल मार्ग द्वारा बहुत ही कम होता है। थल मार्ग द्वारा विदेशी व्यापार पाकिस्तान, नेपाल व तिब्बत आदि देशों से होता है।

(4) अधिकांश व्यापार कुछ देशों से ही—भारत के विदेशी व्यापार का अधिकांश भाग इंगलैण्ड, अमरीका व जापान से होता है। अब रूस से भी भारत का विदेशी व्यापार बढ़ रहा है।

(5) कच्चे एवं पक्के माल का निर्यात—द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व भारत से अधिकांश मात्रा में केवल कच्चा माल ही निर्यात किया जाता था किन्तु आजकल देश से पक्के माल का निर्यात बढ़ रहा है।

(6) कच्चे व पक्के माल का आयात—पहले केवल पक्के माल का ही आयात देश में किया जाता था। पक्के माल में भी पहले उपभोग की वस्तुएँ ही अधिक आयात की जाती थी किन्तु अब पक्के माल में मशीनों ने आयात में मुख्य स्थान ले लिया है। उद्योग धन्धों के लिए काफी कच्चा माल भी आयात किया जाने लगा है। यह परिवर्तन देश के विभाजन और औद्योगीकरण के कारण हुआ है।

(7) खाद्यान्नों के आयात मे वृद्धि—देश के विभाजन और जनसंख्या में वृद्धि होने के कारण खाद्यान्न आयात किए जाने लगे हैं। गेहूँ, चावल, आटा व अन्य अनाजों का आयात किया जाता है।

(8) अधिकतर व्यापार विदेशियों के हाथ में—भारत के आयात व निर्यात व्यापार में लगी हुई प्राय विदेशी कम्पनियाँ हैं। जहाजी बीमा कम्पनियाँ व बैंकिंग कम्पनियाँ अधिकांश विदेशी हैं। किन्तु धीरे धीरे अब भारतीयकरण होता जा रहा है।

(9) सतुलन विपक्ष मे—भारत के विदेशी व्यापार का सतुलन पहले भारत के पक्ष में रहता था किन्तु अब यह सन्तुलन भारत के विपक्ष में रहता है क्योंकि भारत मशीनें व खाद्यान्न बड़ी मात्रा में मँगा रहा है।

(10) सरकारी नियन्त्रण—भारत के विदेशी व्यापार पर सरकार का पूर्ण नियन्त्रण है। सरकार से बिना लाइसेंस प्राप्त किए वस्तुओं का आयात व निर्यात नही किया जा सकता है। सरकार समय-समय पर अपनी आयात व निर्यात नीति घोषित करती है।

(11) प्रति व्यक्ति व्यापार कम—विश्व के अन्य देशों की तुलना में भारत में प्रति व्यक्ति वैदेशिक व्यापार अत्यन्त कम है। इन दिनों इसमें वृद्धि हो रही है।

(12) निर्यात की वस्तुएँ कम व आयात की अधिक—हमारे निर्यात की सूची में थोड़ी सी वस्तुएँ हैं जिनमें जूट का सामान, चाय, चमड़ा, धातु, खनिज पदार्थ आदि हैं, किन्तु आयात की सूची बहुत बड़ी है।

विदेशी व्यापार सम्बन्धी प्रमुख परिवर्तन (सन 1950 से अब तक)—

सन् 1950 से भारतीय विदेशी व्यापार में अब तक अनेक परिवर्तन हुए हैं, जिन पर द्वितीय विश्व युद्ध, देश के विभाजन, रुपये के अवमूल्यन तथा पंचवर्षीय योजनाओं का विशेष प्रभाव पड़ा है। हमारे विदेशी व्यापार की मात्रा तथा उसके आयात निर्यात की वस्तुओं, विदेशी भुगतान की स्थिति तथा विदेशी व्यापार की दिशा में सन् 1950 से आधारभूत परिवर्तन हो गये हैं। प्रमुख परिवर्तन निम्नलिखित हैं —

(1) निर्यात की वस्तुओं मे परिवर्तन—पहले कपास, जूट, तिलहन आदि कृषि पदार्थ, लोहा, मैंगनीज, अभ्रक आदि खनिज पदार्थ व अन्य कच्चे पदार्थ भारत से निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएं थी। किन्तु सन् 1950 से भारत के निर्यात व्यापार के स्वभाव में अनेक परिवर्तन हुए हैं। इस काल में भारत से कच्चे

माल के निर्यात मे काफी कमी हुई है। अब भारत म कपडा चीनी, वनस्पति घी, काजू, इजीनियरिंग का सामान जस सिलाई की मशीनें, स्टोव, पखे, साइकिलें रेल के डिब्बे, हल्की मशीनें आदि अनक वस्तुएँ व अय पक्क माल नियति होने लग हैं।

(2) **परम्परागत कुछ वस्तुओं का निर्यात बन्द नहीं हुआ**—यद्यपि भारत स निर्यात होने वाली वस्तुओ मे से अनक वस्तुओ का निर्यात बद हो गया, अथवा परिवतन हुआ किन्तु फिर भी परम्परागत कुछ वस्तुओ का निर्यात अब तक हो रहा है। निर्यात की वस्तुओ म चाय का पहले भी प्रमुख स्थान था और अब भी है। इसके अतिरिक्त जूट की बनी वस्तुए चमडा व खालें, छोटे रेशे की कपास लाख कच्चा लोहा मैगनीज, अभ्रक आदि परम्परागत वस्तुओं का निर्यात अब भी हो रहा है।

(3) **आयात की वस्तुओ मे परिवर्तन**—पहले भारत मे मुख्यत पक्का माल एव उपभोग का माल विशेषरूप स आयात होता था जसे कपडा मौदय प्रसाधन, साइकिलें, खिलौने, कागज व अय लेखन सामग्री मोटरें रेडियो ब्लेड आदि। *किन्तु गत 20 वर्षों म भारत के आयात के स्वरूप म परिवर्तन हुए हैं।* इन वस्तुओ के आयात को हतोत्साहित किया गया और अनेक नई वस्तुएँ जसे मशीने, रासायनिक खाद, उत्तम श्रेणी का इस्पात, रासायनिक पदाथ, विद्युत उपकरण आदि आयात की प्रमुख वस्तुएँ हो गई। विभाजन के पश्चात से कच्चे जूट का भारत मे आयात एक प्रमुख परिवतन था। खाद्यान्नो का आयात करना तो भारतीय आयात व्यापार का प्रमुख अग बन गया।

(4) **परम्परागत कुछ वस्तुओ का आयात बन्द नहीं हुआ**—अनेक परम्परागत वस्तुओ के आयात यद्यपि पूर्णत ब द नहा हुए कि तु प्रतिवर्ष घत आयात होते रहे जसे पट्रोलियम पदाथ कपडा, शराब रासायनिक पदाथ उपभोग की अनेक वस्तुए आदि।

(5) **मूल्य तथा मात्रा में अधिक वद्धि**—पिछले 20 वर्षा म न कवल भारत *के निर्यात वरन् आयातो की मात्रा व मूल्यो म भारी वृद्धि हुई है,* जसा कि निम्न तालिका मे स्पष्ट है —

(करोड़ रुपये)

वष	आयात मूल्य	निर्यात मूल्य
1950 51	650 4	600 6
1955 56	774 4	608 9
1960 61	1122 5	642 0
1965 66	1410 0	809 5
1968 69	2858 8	1340 0

यदि उपरोक्त आँकडो का अध्ययन किया जाय तो स्पष्ट होगा कि 1950-51 की तुलना म 1968 69 के आयात म लगभग 285 प्रतिशत की व निर्यात म

लगभग 225 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस वृद्धि का एक कारण भारत तथा अन्य देशों में मुद्रा स्फीति है जिसके कारण वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि हो गई है।

(6) विदेशी व्यापार के असन्तुलन में वृद्धि—द्वितीय विश्व युद्धकाल तक भारत के विदेशी व्यापार का शेष अनुकूल रहा, किन्तु बाद में वह शनै शनै प्रतिकूल होने लगा। इसके पश्चात् आर्थिक नियोजन के अन्तर्गत विभिन्न परियोजनाओं को पूरा करने के उद्देश्य से भारी मशीनों और पूंजीगत माल का आयात बढ़ता ही जा रहा है जिसके फलस्वरूप विदेशी व्यापार के असन्तुलन में वृद्धि होती ही जा रही है, जैसा कि उपरोक्त आंकड़ों से स्पष्ट है।

(करोड़ रुपये)

वर्ष	व्यापार शेष
1950 51	50
1968 69	519

इस प्रकार ज्ञात होगा कि 20 वर्ष पूर्व की और वर्तमान विदेशी व्यापार के असन्तुलन में लगभग 940 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

(7) विदेशी व्यापार की दिशा में परिवर्तन—सन् 1950 से पूर्व भारत का विदेशी व्यापार मुख्यत इंगलैण्ड व राष्ट्रमण्डल के देशों, जापान तथा अन्य कुछ देशों तक ही सीमित था किन्तु इस काल में भारत ने अनेक नये देशों से अपने व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किये। भारत के विदेशी व्यापार की दिशा में प्रमुख उल्लेखनीय परिवर्तन यह हुआ कि साम्यवादी देशों—सोवियत रूस तथा चीन—से भी प्रथम बार व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हुए। पाकिस्तान नए राष्ट्र के रूप में सन् 1947 में उदय हुआ और उससे भी व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हुए। इस अवधि में पहले चीन द्वारा सन 1962 में भारत पर सैनिक आक्रमण किया गया, जिसके परिणामस्वरूप चीन से भारत का विदेशी व्यापार बन्द हो गया जो अभी तक बन्द है। यह भारत के विदेशी व्यापार की दिशा में दूसरा प्रमुख परिवर्तन हुआ। बाद में पाकिस्तान ने भारत पर सन 1965 में सैनिक आक्रमण किया जिसके फलस्वरूप पाकिस्तान से भी भारत का विदेशी व्यापार बन्द हो गया। अब यह व्यापार पुन चालू हो गया है किन्तु नगण्य मात्रा में। यह तीसरा प्रमुख परिवर्तन है। आस्ट्रेलिया पश्चिमी जर्मनी इटली, फ्रांस कनाडा, ब्रह्मा संयुक्त अरब गणराज्य आदि देशों से भी भारत के व्यापारिक सम्बन्ध और अधिक मजबूत हुए हैं।

(8) डालर क्षेत्र से विदेशी व्यापार की कठिनाइयाँ—स्वतन्त्रता से पूर्व डालर क्षेत्र के देशों से भारत का व्यापार सन्तुलन अनुकूल रहा करता था किन्तु गत बीस वर्षों से भारत को इस क्षेत्र के देशों से प्रतिकूल विदेशी भुगतान की कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। यद्यपि सरकार ने स्थिति को सुधारने के लिए अनेक प्रयत्न किये जिनमें रुपये का अवमूल्यन तथा आयातों पर प्रतिबन्ध भी शामिल हैं किन्तु पंचवर्षीय योजनाओं में विकास के लिए विदेशों से आयात और खाद्य संकट के कारण स्थिति में सुधार नहीं हुआ।

(9) **निर्यात को प्रोत्साहन देने के प्रयत्न**—पिछले बीस वर्षों में सरकार ने भारत के निर्यात व्यापार को प्रोत्साहन देने के कार्य को बहुत गम्भीरता से लिया है और इसके लिए अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किए हैं जिन्हें स्थूल रूप से चार भागों में विभक्त कर सकते हैं—(i) अब तक 19 निर्यात प्रोत्साहन परिषदों की स्थापना की गई है जो विभिन्न वस्तुओं के निर्यात और निर्यातकों को प्रोत्साहन देती हैं। ये सूती वस्त्र रेशम रासायनिक पदार्थ, तम्बाकू मसाले, चमड़ा प्लास्टिक की वस्तुएँ इंजीनियरिंग की वस्तुओं आदि के निर्यात को प्रोत्साहन देती हैं। (ii) निर्यात जोखिम बीमा निगम राजकीय व्यापार निगम खनिज एवं धातु व्यापार निगम, निर्यात साख गारन्टी निगम आदि की स्थापना। (iii) अनेक निर्यात नियन्त्रणों को हटा लिया गया है व अनेक निर्यात-करों में कमी की गई है। (iv) विदेशी मेलों व प्रदर्शनियों में भाग लेकर, भारत की वस्तुओं का विदेशों में प्रचार व लोकप्रिय बनाने के प्रयत्न करना आदि।

(10) **आयात व्यापार के राष्ट्रीयकरण की सम्भावना**—भारत की प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने जनवरी 1970 में बम्बई अधिवेशन में भारत के आयात व्यापार के राष्ट्रीयकरण की सम्भावना व्यक्त की है। यह भारत के विदेशी व्यापार एवं भारतीय अर्थव्यवस्था में बड़ा क्रान्तिकारी कदम होगा।

अन्तिम विचार—उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि सन् 1950 के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार के प्रत्येक अंग में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। भारत की अर्थव्यवस्था पर भी उन परिवर्तनों का स्पष्ट प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है। अब भारत सरकार की व्यापारिक नीति एक स्वतन्त्र देश की व्यापारिक नीति है जिसका एकमात्र उद्देश्य देश के आर्थिक विकास में सहायता प्रदान करना तथा देश के उद्योगों का विकास करके देश के प्राकृतिक साधनों का समुचित उपयोग करना है ताकि भारत शीघ्र एक प्रगतिशील देश बन सके।

भारत का विदेशी व्यापार
(समुद्री वायु तथा थल मार्गों द्वारा)

वर्ष	आयात	निर्यात	व्यापार का शेष
1950 51	650 44	600 67	— 49 77
1955 56	774 35	608 91	—165 44
1960 61	1 122 48	642 07	—480 41
1965 66	1 408 89	805 64	—603 25
1967 68	2 007 61	1,192 82	—814 79
1968 69	1 858 8	1 340 0	—518 [illegible]

चौथी पंचवर्षीय योजना के लक्ष्य—

इस योजना में निर्यात व आयात के लक्ष्य इस प्रकार रखे गये हैं —

निर्यात—अनुमान लगाया गया है कि चौथी योजना में कुल निर्यात, अवमूल्यन

के बाद रुपयों मे 8 030 करोड रुपये का होगा। इस लक्ष्य को प्राप्त होने के लिए जनता को निकट भविष्य मे बडा त्याग करना होगा और बडे सामाजिक अनुशासन में रहना होगा। निर्यात के लक्ष्य को पूरा करने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि निर्यात होन वाली कृषि जि मो खनिज पदार्थों और औद्योगिक सामान का उत्पादन बढाने के लक्ष्य पूरे किये जाएँ। इसके अलावा जिन चीजो का निर्यात होता है, उनकी देश मे खपत न बढे इसके भी उचित उपाय करने होगे।

आयात—अनुमान है कि चौथी योजना म पी० एल० 480 को छोडकर अन्य प्रकार के कुल आयात का मूल्य रुपये के अवमूल्यन से पहले के हिसाब से 7 650 करोड रु० और अवमूल्यन के बाद के हिसाब से 12,049 करोड रु० होगा। इस 7 650 करोड रु० मे से 5 200 करोड रु० केवल पुर्जे मशीनें, उपकरण आदि देशी कारखाना को चालू रखने मशीन बदलने आदि के लिए आयात करने होंगे।

शेष 2 450 करोड रु० की मुख्यत वे मशीनें और उपकरण आदि आयात करने पडग जिनकी योजना म शामिल किय गय कारखाना आदि को खडा करने म आवश्यकता पडेगी।

स्वभाव अथवा प्रकृति (Character or Nature)—

भारत स निर्यात की वस्तुओं म महत्त्व क अनुसार प्रथम पाँच वस्तुए क्रमश चाय जूट का सामान सूती वस्त्र, चमडा व खालें और मैंगनीज-खनिज हैं। आयात की वस्तुएँ इसी क्रम म कपास, मशीन, खनिज तल धातु (इस्पात आदि) और खाद्यान्न हैं।

आयात—प्रथम पचवर्षीय योजना की अवधि म कुल 3 620 करोड रुपये के मूल्य की वस्तुओ का आयात हुआ। इस प्रकार 740 करोड रुपय का प्रतिवर्ष औसत आयात हुआ। दूसरी योजना म कुल 5 360 करोड रुपय के मूल्य के आयात हुए। इस प्रकार द्वितीय योजना-काल म प्रतिवर्ष औसत आयात 1 072 करोड रुपये का था जो पहली योजना के औसत स 50 प्रतिशत अधिक है। दूसरी योजना म आयात क बढने का कारण था देश के औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक मशीनो, कच्चे माल और पुर्जों आदि के आयात को प्राथमिकता देना। औद्योगिक विकास पर और अधिक जोर दिये जाने के कारण द्वितीय योजना की तुलना म तृतीय योजना म और भी अधिक आयात की आवश्यकता समझी गई।

तृतीय योजना म प्रतिवर्ष औसत आयात लगभग 1242 करोड रुपय का था। निम्न तालिका म यह बतलाया गया है —

(करोड रुपय)

योजना	प्रतिवर्ष औसत आयात	प्रतिवर्ष औसत निर्यात
प्रथम पचवर्षीय योजना काल	740	609
द्वितीय पचवर्षीय योजना काल	1072	614
तृतीय पचवर्षीय योजना काल	1242	755

आयात की प्रमुख वस्तुएँ ये हैं—खाद्यान्न मशीनें, विद्युत उपकरण, उत्तम श्रेणी का लोहा व इस्पात, रासायनिक खाद, बढ़िया कपास, पैट्रोलियम, तांबा रासायनिक पदार्थ, कच्चा जूट आदि। आयात के आंकड़ों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सबसे अधिक मूल्य का आयात खाद्यान्नों का होता है, जो राष्ट्रीय हित में नहीं है।

अनेक वस्तुओं के आयात पर अनेक वर्षों के लिए रोक लगा दी गई है जैसे—मक्खन पनीर मुरब्बा, जली, चाकलेट, डिब्बाबन्द सब्जियाँ, तेल के बने पदार्थ, सिगरेट, सिगार, सक्रीन की टिकिया सौन्दर्य प्रसाधन पेंसिल, साबुन काटे छुरियाँ, फाउण्टेनपेन साइकिलें, टाइपराइटर ऊनी वस्त्र आदि।

निर्यात—प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में औसत वार्षिक निर्यात 609 करोड़ रुपये का था। द्वितीय योजना काल में औसत वार्षिक निर्यात 614 करोड़ रुपये का रहा। इस प्रकार प्रथम व द्वितीय योजनाओं में हमारे निर्यात व्यापार में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई। यद्यपि परिमाण (Volume) की दृष्टि से द्वितीय योजना में निर्यात 9 प्रतिशत अधिक रहा, पर तु वस्तुओं के मूल्य गिरने से आय नहा बढ़ी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इन दस वर्षों में जहाँ विश्व का निर्यात व्यापार दुगुना हुआ वहा भारत का निर्यात व्यापार जो 1950 में विश्व व्यापार का 2 1 प्रतिशत था, घटकर 1 1 प्रतिशत रह गया। जहाँ तक पिछले दस वर्षों में निर्यात व्यापार की प्रकृति का सम्बन्ध है, कृषि जन्य वस्तुओं का निर्यात नहीं बढ़ा पर तु नये तैयार माल और खनिज लोहे जैसी वस्तुओं के निर्यात में वृद्धि हुई। तृतीय पंचवर्षीय योजना काल में औसत वार्षिक निर्यात लगभग 755 करोड़ रुपये का था। 1968 69 वर्ष में 1340 करोड़ रुपये का एवं वर्ष 1967 68 में लगभग 1,198 करोड़ रुपये का माल निर्यात किया गया।

भारत से जिन आवश्यक वस्तुओं का निर्यात किया जाता है उनमें से प्रमुख ये हैं—चाय, जूट की बनी वस्तुएं सूती कपड़ा, फल, खली, वनस्पति तेल, काजू की गिरी मसाले, तम्बाकू, टायर का सामान चमड़ा एवं खालें, रुई तथा रद्दी रुई कच्ची ऊन, लाख अभ्रक कच्चा लोहा, कच्चा मैंगनीज, कोयला तथा कोक, नकली रेशम के वस्त्र, मशीनें एवं परिवहन उपकरण। इनके अतिरिक्त अब तो भारत इंजीनियरिंग के सामान के निर्यात में भिलाई की मशीनें रिपटें, ढिबरियाँ लोहे का इमारती सामान, कटलरी, रेजर ब्लेड स्टोव, लोहा तथा इस्पात का फर्नीचर छाते, डीजल इंजिन बिजली के पंखे सूखी बैटरियाँ साइकिल, खेती के औजार, कलात्मक वस्तुएँ आदि सम्मिलित हैं। इसके साथ ही रासायनिक एवं सम्बद्ध पदार्थों के निर्यात में भी वृद्धि हुई। इन दिनों चीनी का निर्यात भी काफी होने लगा है।

वैदेशिक व्यापार की दिशा (Direction of Foreign Trade)—

जहाँ तक भारत के वैदेशिक व्यापार की दिशा का सम्बन्ध है, इंगलैण्ड

सर्वाधिक महत्वपूर्ण देश है। भारत का संयुक्त राज्य अमरीका से होने वाले विदेशी व्यापार की तुलना मे लगभग दुगुना व्यापार इंगलैण्ड से होता है।

संयुक्त राज्य अमरीका भारत के वैदेशिक व्यापार की दृष्टि से, दूसरे नम्बर का देश है। भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात इन दोनो देशों के मध्य व्यापार में काफी वृद्धि हुई है। मुख्य कारण है वहा से अनाज का आयात।

आयात की दृष्टि से, पश्चिमी जर्मनी का तीसरा स्थान है, जापान का चौथा स्थान हो गया है। कनाडा, आस्ट्रेलिया, सिंगापुर व इटली से आयात हुए माल के मूल्य म कमी हुई है।

भारतीय निर्यात की दृष्टि से संयुक्त राज्य अमरीका सोवियत रूस व जापान महत्वपूर्ण देश हैं। बर्मा, कनाडा, सूडान और आयरलैण्ड ये प्रमुख देश हैं जिनको भारतीय निर्यात कम हुआ। इंगलैण्ड, जर्मनी गणराज्य कनाडा इटली पाकिस्तान सूडान, कीनिया अर्जेण्टाइना लंका, सिंगापुर इटली हालैण्ड, सऊदी अरब को हमारा निर्यात बढ़ा है।

भारत के वैदेशिक व्यापार मे एक महत्वपूर्ण परिवर्तन और हुआ है। भारत का वैदेशिक व्यापार रूस से भी बढ़ रहा है और आशा है कि और अधिक बढ़ेगा। रूस से पहले भारत के व्यापारिक सम्बन्ध नही थे। कुछ वर्षों पूर्व भारत व लाल चीन के मध्य व्यापार बढ़ रहा था किन्तु सन 1962 म भारत पर चीन द्वारा आक्रमण के कारण दोनो के मध्य व्यापार बन्द हो गया है। निकट भविष्य म चीन से व्यापार होने की सम्भावना नही है।

भारत के वैदेशिक व्यापार के सम्बन्ध म भारत सरकार द्वारा स्थापित राज्य व्यापार निगम (The State Trading Corporation of India Private Ltd) ने भी कुछ परिवर्तन किय हैं क्योंकि कुछ वस्तुओं का व्यापार केवल यही संस्था कर सकती है अन्य कोई नही।

निर्यात की प्रमुख वस्तुएँ—

पृष्ठ भूमि ऊपर बताया जा चुका है कि भारत के वैदेशिक व्यापार के स्वरूप व रचना (Composition) और दिशा म समय समय पर परिवर्तन होते रहे हैं। भारत के स्वतन्त्र होने के पहले हमारे देश म कच्चा जूट जूट निर्मित वस्तुएँ कपास, तिलहन खनिज पदार्थ आदि निर्यात की प्रमुख वस्तुएँ थी। किन्तु इसमे परिवर्तन हुआ। जूट उत्पादक प्रमुख क्षेत्र पाकिस्तान म चले जाने के कारण कच्चे जूट के निर्यात का प्रश्न ही नही उठता। देश का औद्योगीकरण द्रुतगति से हो रहा है अत देश म ही कच्चे पदार्थों की मांग बहुत बढ़ गई है। पहले भारत कपास बड़ी मात्रा म निर्यात करता था अब लम्बे रेशे की रुई भारत आयात करता है (लम्बे रेशे की कपास का क्षेत्र सिंध-पाकिस्तान म चला गया है) किन्तु छोटे रेशे की कपास अब भी निर्यात करता है। भारत म वर्ष 1968 69 म लगभग 1356 करोड़ रुपये का माल निर्यात किया गया।

निर्यात-व्यापार—भारत के निर्यात-व्यापार के आकडो का अध्ययन करने के पश्चात यह स्पष्ट होता है कि स्वतन्त्रता के पश्चात एव विभिन्न पच-वर्षीय योजनाओ मे भारत के विदेशी व्यापार के मूल्य मे वृद्धि हुई है, किन्तु उस गति से नही हुई है, जिससे होनी चाहिए थी। वर्ष 1950 51 मे देश से लगभग 600 करोड रुपये के मूल्य की वस्तुएँ निर्यात की गई थी किन्तु वर्ष 1968 69 मे लगभग 1356 करोड रुपये के मूल्य की वस्तुएँ निर्यात की गई अर्थात 1950 51 की तुलना मे 1968 69 मे निर्यात के मूल्य मे लगभग 226 प्रतिशत की वृद्धि हुई। निर्यात की यह वृद्धि सन्तोषजनक नही कही जा सकती, क्योकि भारत के विदेशी व्यापार का असन्तुलन निरन्तर बढ़ता जा रहा है। भारत से निर्यात होने वाली प्रमुख वस्तुए निम्नलिखित हैं —

(1) चाय—भारत से निर्यात होने वाली प्रथम पाँच वस्तुओ मे चाय का प्रमुख स्थान है। विदेशी मुद्रा अर्जन मे चाय का महत्त्वपूर्ण योग है। भारतीय चाय के प्रमुख ग्राहक इगलण्ड सोवियत रूस पश्चिमी जर्मनी सयुक्त राज्य अमरीका कनाडा, अरब गणराज्य आस्ट्रेलिया पाकिस्तान, सूडान आदि देश हैं। सोवियत रूस भारतीय चाय के नए ग्राहको मे से है।

भारतीय चाय का सबसे बडा ग्राहक आरम्भ से ही इगलण्ड है जो भारतीय चाय के कुल निर्यात का लगभग 60 प्रतिशत भाग आयात करता है। द्वितीय स्थान अब सोवियत रूस का है जो चाय के कुल निर्यात का लगभग 12 प्रतिशत भाग आयात करता है। भारतीय चाय के निर्यात का लगभग 6 प्रतिशत भाग अरब गणराज्य 4 प्रतिशत सयुक्त राज्य अमरीका और 3 प्रतिशत कनाडा मँगवाते हैं।

निम्न तालिका से पचवर्षीय योजनाओ मे तथा उनके पश्चात चाय निर्यात की प्रवृत्ति ज्ञात होती है —

चाय के निर्यात मे लका और पूर्वी अफ्रीका से कठोर प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड रहा है। लका व पूर्वी अफ्रीका भारतीय चाय के साथ इगलण्ड सोवियत रूस व सयुक्त अरब गणराज्य मे प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं। भारतीय टी बोर्ड (Tea Board) भारत से चाय के निर्यात को बढ़ाने का प्रयत्न कर रहा है। अधिकाश चाय कलकत्ता बन्दरगाह से निर्यात की जाती है।

(करोड रुपयो मे)

वर्ष	मूल्य
1950 51	80 4
1955 56	109 1
1960 61	123 6
1965 66	114 8
1966 67	158 4
1967 68	180 2
1968 69	156 5

(2) जूट का सामान—भारत से निर्यात होने वाली वस्तुओ मे जूट के सामान का अन्य महत्त्वशील स्थान है। भारत से जूट का कपडा जूट की बोरियाँ रस्से तथा अन्य निर्मित माल निर्यात किया जाता है।

(करोड़ रुपयों में)	
वर्ष	मूल्य
1950 51	113 8
1955 56	118 2
1960 61	123 6
1965 66	181 6
1966 67	248 3
1967 68	225 7
1968 69	209 5

भारतीय जूट के सामान का सबसे बड़ा ग्राहक संयुक्त राज्य अमरीका है जो भारत के कुल जूट के सामान के निर्यात का लगभग 30 प्रतिशत भाग मंगवा लेता है। सोवियत रूस, इंगलैण्ड, कनाडा, आस्ट्रेलिया अर्जेण्टाइना, मिस्र, जापान आदि अन्य ग्राहक हैं।

इस तालिका से, पंचवर्षीय योजनाओं में तथा उनके पश्चात जूट के सामान के निर्यात की प्रवृत्ति ज्ञात होती है।

पिछले कुछ समय से विश्व में जूट के सामान की प्रतिस्थापन्न वस्तुएँ उत्पन्न किए जाने के कारण और पाकिस्तान द्वारा भारत से विदेशों में कठोर प्रतिस्पर्धा किए जाने के कारण जूट के सामान के निर्यात में कुछ कमी आ रही है।

(3) सूती वस्त्र—भारत से निर्यात होने वाली वस्तुओं में सूती वस्त्र का विशेष स्थान है। वस्त्र निर्यात की दृष्टि से भारत का विश्व में दूसरा स्थान है। भारत से अधिकांश मोटा कपड़ा निर्यात किया जाता है। भारत पहले इंगलैण्ड से सूती वस्त्र आयात करता था किन्तु अब भारत इंगलैण्ड को भी कपड़ा निर्यात करता है।

(करोड़ रुपयों में)	
वर्ष	मूल्य
1950 51	107 1
1955 56	48 2
1960 61	57 5
1965 66	63 3
1966 67	76 4
1967 68	79 4
1968 69	87 9

मोटा कपड़ा मुख्यतः हिन्द महासागर के तटीय देशों को निर्यात किया जाता है। भारतीय वस्त्र के प्रमुख ग्राहक ब्रह्मा थाईलैण्ड, लंका, पाकिस्तान, सिंगापुर पूर्वी अफ्रीका आस्ट्रेलिया आदि हैं।

इस तालिका से पंचवर्षीय योजनाओं में तथा उनके पश्चात, सूती वस्त्र के निर्यात की प्रवृत्ति ज्ञात होता है।

भारतीय सूती-वस्त्र को विदेशों में जापान चीन इंगलैण्ड व संयुक्त राज्य अमरीका से कठोर प्रतिस्पर्धा करना पड़ती है। सूती वस्त्र निर्यात सम्वर्द्धन परिषद भारतीय वस्त्र के निर्यात में वृद्धि के प्रयत्न कर रही है। वस्त्र निर्यात व्यापार में वृद्धि करने के लिए उचित प्रयास किए जाने चाहिए।

(4) लौह खनिज—भारत से लौह-खनिज भी निर्यात किया जाता है। भारत से लौह-खनिज जापान, पश्चिमी जर्मनी इटली चेकोस्लोवाकिया फ्रांस आदि देशों को निर्यात किया जाता है। इनमें जापान हमारा प्रमुख ग्राहक है।

भारत न जापान के साथ मात्र 1970 म लौह खनिज नियान क सम्बन्ध म एक समझौता किया है जिसके अनुसार भारत अगले 15 वर्षों म (सन 1985 तक), जापान को 20 करोड टन लौह-खनिज निर्यात करेगा। यह विश्व का सबसे बडा खनिज बिक्री समझौता है।

इस तालिका से, पचवर्षीय योजनाओ म तथा उनके पश्चात लौह खनिज क निर्यात की प्रवृत्ति ज्ञात होती है।

(करोड रुपया म)

वष	मूल्य
1950 51	0 2
1955 56	6 3
1960 61	17 0
1965 66	42 4
1966 67	65 3
1967 68	74 7
1968 69	88 4

उपरोक्त तालिका स स्पष्ट है कि भारत स लौह खनिज का निर्यात प्रतिवष बढ ही रहा है। लौह-खनिज का सम्पूर्ण निर्यात राज्य व्यापार निगम द्वारा किया जाता है।

(5) चीनी—पिछले कुछ वर्षों से भारत चीनी का निर्यात करन लगा है। सन् 1968 म जिनेवा म होने वाली 'अन्तर्राष्ट्रीय चीनी कान्फ्रेंस' म भारत ने भी भाग लिया था, जिसम भारत न चीनी का निर्यात कोटा 10 लाख टन करा दन के लिए कहा किन्तु भारत क लिए निर्यात कोटा केवल 3 5 लाख टन चीनी ही दिया गया। किन्तु सन 1969 मे भारत केवल 95 हजार टन चीनी का ही निर्यात कर सका। सयुक्त राज्य अमरीका व इगलण्ड भारतीय चीनी के प्रमुख ग्राहक हैं। अरब गणराज्य व पाकिस्तान अन्य ग्राहक हैं। इस तालिका स चीनी के निर्यात की प्रवृत्ति ज्ञात होती है।

(करोड रुपयो म)

वष	मूल्य
1961 62	15 3
1965 66	11 2
1966 67	17 7
1967 68	16 5
1968 69	10 5

भारत म चीनी का उत्पादन बढ रहा है, अत आशा है कि चीनी क निर्यात म वृद्धि होन की सम्भावना है।

(6) छोटे रेशे की कपास—भारत छोटे रेशे की कपास व रद्दी कपास का निर्यात करता है। जापान इगलण्ड, इटली आदि इसके प्रमुख ग्राहक हैं। सबसे अधिक ऐसी कपास जापान को भेजी जाती है। पिछले कुछ वर्षों म कपास के निर्यात का मूल्य तालिकानुसार रहा।

(करोड रुपया म)

वष	मूल्य
1960 61	11 59
1965 66	13 09
1966 67	14 24
1967 68	19 40
1968 69	15 75

(7) चमड़ा व खालें—भारत में विश्व के लगभग 30 प्रतिशत पशु हैं अतः चमड़ा व खालें भी बड़ी मात्रा में उपलब्ध हो जाती हैं। भारतीय चमड़े व खालों का सबसे बड़ा ग्राहक इंगलैण्ड है जो भारत से निर्यात होने वाले चमड़े व खालों का लगभग 45 प्रतिशत भाग मँगवाता है। जर्मनी, फ्रांस, सोवियत रूस, इटली, संयुक्त राज्य अमरीका और जापान आदि प्रमुख ग्राहक हैं।

वर्ष 1960-61 में भारत से लगभग 9.5 करोड़ रुपये के मूल्य की, 1965-66 में 9.5 करोड़ रुपये के मूल्य की। 1967-68 में व बाद में चमड़े व खालों के निर्यात में कमी आई। 1967-68 में 7.4 करोड़ रुपये और 1968-69 में 5.0 करोड़ रुपये के मूल्य का चमड़ा व खालें निर्यात की गईं।

(8) तम्बाकू—भारत कच्चे तम्बाकू का प्रमुख निर्यातकर्ता है। भारतीय तम्बाकू के प्रमुख ग्राहक इंगलैण्ड, जापान, पाकिस्तान आदि हैं। इसके अतिरिक्त पाकिस्तान, लंका, मलाया, सिंगापुर को भारतीय सिगरेट व बीड़ी का निर्यात किया जाता है। वर्ष 1967-68 में लगभग 35 करोड़ रुपये व 1968-69 में लगभग 33 करोड़ रुपये के मूल्य की तम्बाकू निर्यात की गई।

भारतीय तम्बाकू के दक्षिणी अफ्रीका के देश प्रमुख प्रतिस्पर्द्धी हैं।

(9) खली (Oil cakes)—भारतीय निर्यात में खली का महत्व भी बढ़ता जा रहा है। इंगलैण्ड, रूस, पोलैण्ड और जापान भारतीय तिलहन के प्रमुख ग्राहक हैं। वर्ष 1967-68 में लगभग 45.5 करोड़ रुपये के मूल्य की व 1968-69 में 49.5 करोड़ रुपये के मूल्य की खली निर्यात की गई।

(10) इंजीनियरिंग का सामान—भारत में इंजीनियरिंग के सामान का निर्यात भी बढ़ रहा है। सिलाई की मशीनें, साइकिलें, बिजली के पंखे, हीटर, बल्ब, विद्युत मोटर आदि अनेक वस्तुएं भारत से निर्यात की जाती हैं। लंका, ब्रह्मा, पाकिस्तान, थाईलैण्ड, अरब गणराज्य, अफ्रीका के अन्य देश आदि प्रमुख ग्राहक हैं। 1967-68 में लगभग 32.6 करोड़ रुपये और 1968-69 में 76.4 करोड़ रुपये के मूल्य का इन्जीनियरिंग का सामान निर्यात किया गया।

(11) मैंगनीज—मैंगनीज उत्पादक देशों में भारत का विश्व में प्रमुख स्थान है। पहले भारत विदेशों में मैंगनीज का निर्यात बड़ी मात्रा में करता था किन्तु अब देश में ही मैंगनीज की माँग बढ़ जाने के कारण इसका निर्यात घट रहा है। इंगलैण्ड, पश्चिमी जर्मनी, फ्रांस, स्वीडन, संयुक्त राज्य अमरीका तथा जापान भारतीय मैंगनीज के प्रमुख ग्राहक हैं। वर्ष 1967-68 में 11.10 करोड़ रुपये और 1968-69 में लगभग 13.45 करोड़ रुपये मूल्य का मैंगनीज निर्यात किया गया।

(12) परिवहन के साधनों का निर्यात—भारत से बसें, ट्रक, जीपें, मोटर, साइकिलें, रेल के डिब्बे, वैगन, रेल के इंजिन आदि अब विदेशों को निर्यात किये जाने लगे हैं। सोवियत रूस, यूगोस्लाविया, थाईलैण्ड, सूडान, अफगानिस्तान, ईराक, ईरान, अरब गणराज्य आदि प्रमुख ग्राहक हैं। वर्ष 1967-68 में लगभग 22 करोड़

रुपय के मूल्य के तथा 1968 69 मे 44 75 करोड रुपय के मूल्य के परिवहन के साधन व उपकरण नियात किए गय।

(13) काजू—भारतीय निर्यातो म काजू आजकल महत्वपूण स्थान प्राप्त करता जा रहा है। सयुक्त राज्य अमरीका इगलण्ड सोवियत रूस, पश्चिमी जमनी कनाडा व आस्ट्रेलिया प्रमुख ग्राहक हैं। वप 1967 68 म काजू का नियात 53 5 करोड रुपय का व 1968 69 म लगभग 61 करोड रुपय का हुआ।

(14) अन्य वस्तुएँ—भारत म नियात होन वाली अन्य प्रमुख वस्तुएँ य हैं—लाख, अभ्रक ऊन, कहवा मसाले तिलहन, नारियल की जटा म बनाई गई वस्तुएँ, मछलियाँ, कोयला, जूते सीमण्ट रासायनिक पदाथ आदि अन्य वस्तुओं का निर्यात किया जाता है। 1947 48 मे लगभग 50 वस्तुओं का नियात होता था। किन्तु अब लगभग 3000 वस्तुएँ निर्यात-सूची म हैं।

प्रमुख वस्तुओ का निर्यात (करोड रुपय मे)

वस्तुएँ	1960 61	1965-66	1968 69
जूट का सामान	131 7	181 6	209 5
चाय	122 6	114 [illegible]	156 5
सूती वस्त्र	57 5	63 3	87 9
लौह-खनिज	17 0	42 4	88 4
चीनी		11 1	10 5
चमडा व खालें	9 4	9 5	5 0
तम्बाकू	14 6	19 5	33 0
ऊन	7 7	6 4	5 8
अभ्रक	10 1	11 2	13 4
मैंगनीज	14 0	11 0	13 4
कॉफी	7 2	12 9	18 0
काजू	18 9	27 4	61 0

आयात की प्रमुख वस्तुए—

भारत के विदेशी-व्यापार का विश्लेषण करन पर ज्ञात होता है कि भारत म आयात के मूल्यो म 1950 51 से निरन्तर वृद्धि हो रही है। वप 1950 51 म लगभग 650 5 करोड रुपय के मूल्य का माल आयात किया गया था तो 1968 69 म लगभग 1859 करोड रुपय के मूल्य का। इस प्रकार 1950 51 की तुलना म 1968 69 म आयात के मूल्य म लगभग 185 प्रतिशत की वृद्धि हुई। आयात के मूल्य म वृद्धि का प्रमुख कारण यह था कि देश म खाद्यान्नो के आयात तथा पच

योजना	करोड़ रुपये
प्रथम पचवर्षीय योजना	740
द्वितीय पचवर्षीय योजना	1,072
तृतीय पचवर्षीय योजना	1 240

वर्षीय योजनाओ म देश के आर्थिक विकास के लिए मशीनो व तकनीकी ज्ञान का आयात बडी मात्रा म किया गया। भारत म पचवर्षीय योजनाओ म औसत आयात प्रतिवर्ष तालिका नुसार रहा।

भारत म आयात की प्रमुख वस्तुएँ निम्नलिखित हैं —

(1) मशीनें—स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् नियोजित आर्थिक विकास की योजनाओ के फलस्वरूप देश ने औद्योगीकरण के लिए अनेक कायक्रम बनाय गय। इनके लिए मशीनो की आवश्यकता है। ऊची मात्रा म मशीनो के आयात मे वृद्धि इस बात की पुष्टि करती है कि देश म औद्योगिक योजनाएँ तेज गति स कार्यान्वित की जा रही हैं।

भारत म आयात की जाने वाली मशीनो म सबसे अधिक बिजली की मशीन आयात की जा रही हैं। इनके अतिरिक्त कृषि मशीन कपडा बुनने की मशीन चीनी सीमेण्ट और कागज उद्योग की मशीनें खनिज उद्योगो की मशीनें आदि आयात की जाती हैं। बिजली स चलने वाली मोटर शीतभण्डार की मशीनें टैक्टर बुलडोजर आदि मशीनो का आयात किया जा रहा है। यह उल्लेखनीय है कि भारत सरकार देश म भारी मशीनो के निर्माण पर बल दे रही है किन्तु फिर भी हम निकट भविष्य मे स्वावलम्बी नही हो सकेंगे और कुछ वर्षो तक हमारे विदेशो स मशीनें मँगानी पडगी।

मशीनो का आयात मुख्यत इगलण्ड सयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत रूस पश्चिमी जमनी फ्रास चकोस्लोवाकिया कनाडा जापान आदि देशो स किया जाता है। सबसे अधिक मशीन इगलण्ड स आयात करते है। दूसरे स्थान पर पश्चिमी जमनी व तीसरे स्थान पर सयुक्त राज्य अमरीका है।

वर्ष 1967 68 म कुल लगभग 337 करोड रुपय की और 1968 69 म लगभग 370 करोड रुपय के मूल्य की मशीनें आयात की गयी।

(2) खाद्यान्न—बढती हुई जनसख्या और लगातार प्रतिकूल मौसम के कारण देश म खाद्यान्नो की बहुत कमी रही है। अत खाद्यान्नो का अभाव पूरा करने के लिए विदेशो स अनाज की सहायता भी ली गई और अनाज आयात भी किए गय। भारत के केन्द्रीय खाद्य मन्त्री न अभी (सन 1970 म) इस आश्वासन को पुन दोहराया है कि सन् 1971 तक भारत खाद्यान्नो की दृष्टि स स्वावलम्बी हो जावेगा। यही नही सन 1980 के पश्चात भारत खाद्यान्न निर्यात करने की स्थिति म भी हो सकता है।

भारत म गहूँ का आयात मुख्यत सयुक्त राज्य अमरीका कनाडा आस्ट्रेलिया सोवियत रूस और अर्जेण्टाइना स चावल का आयात ब्रह्मा, थाईलण्ड, लका पाकिस्तान, मिस्र, इण्डोनेशिया म, जौ का आयात आस्ट्रेलिया व अर्जेण्टाइना स, और

ज्वार-बाजरे का आयात संयुक्त राज्य अमरीका व पूर्वी अफ्रीका के देशों से किया जाता है।

वर्ष	आयात (करोड़ रुपया में)
1966 67	572
1967 68	460
1968 69	305

अब प्रतिवर्ष देश में खाद्यान्न के आयात में कमी हो रही है जो कि एक शुभ लक्षण है। इस तालिका में पिछले तीन वर्षों में खाद्यान्नों का आयात बतलाया गया है।

(3) रासायनिक खाद—पंचवर्षीय योजना काल में भारत में रासायनिक खाद का आयात भी खूब बढ़ा है। देश में निजी व सार्वजनिक क्षेत्र में रासायनिक खाद बनाने के अनेक कारखाने स्थापित हो चुके हैं व अन्य कारखाने लगाने की योजना है। आशा है कि निकट भविष्य में हम स्वावलम्बी हो सकेंगे।

रासायनिक खाद का आयात मुख्यतः इंगलैण्ड, पश्चिमी जर्मनी, सोवियत रूस, संयुक्त राज्य अमरीका और जापान आदि से किया जाता है।

वर्ष 1967 68 में लगभग 140 करोड़ रुपये के मूल्य की तथा 1968 69 में लगभग 138 करोड़ रुपये के मूल्य की रासायनिक खाद आयात की गई।

(4) खनिज तेल—भारत में खनिज तेल की कमी है। देश में तेल शोधक कारखान स्थापित हो जाने के कारण अब पट्रोलियम की वस्तुओं के आयात में कमी हुई है और उनके स्थान पर अशोधित तेल का आयात किया जाता है।—— ——

भारत में मिट्टी के तेल का आयात मुख्यतः अरब, ईरान, ईराक, ब्रह्मा, बोर्नियो, सुमात्रा, संयुक्त राज्य अमरीका आदि से पट्रोलियम मुख्यतः संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत रूस, फ्रांस, इटली, रूमानिया, ईरान, अरब आदि देशों से किया जाता है। आने वाले अनेक वर्षों तक हमको खनिज तेल का आयात करना पड़ेगा, क्योंकि निकट भविष्य में हम स्वावलम्बी नहीं हो सकेंगे।

वर्ष 1967 68 में लगभग 59 करोड़ रुपये के मूल्य का व 1968 9 में लगभग 54 करोड़ रुपये मूल्य का खनिज तेल आयात किया गया।

(5) लम्बे रेशे की कपास—देश के विभाजन के फलस्वरूप लम्बे रेशे की कपास का अधिकांश क्षेत्र पाकिस्तान में चला गया। अतः देश के अन्य भागों में लम्बे रेशे की कपास उत्पन्न करने के प्रयत्न किए गये जिससे फलस्वरूप क्षेत्रफल एवं उपज दोनों में ही वृद्धि हुई किन्तु देश की बढ़ती हुई माँग की पूर्ति करने के लिए भारत को विदेशों से लम्बे रेशे की कपास का आयात करना पड़ता है।

कपास का सबसे अधिक आयात मिस्र से करते हैं, द्वितीय स्थान सूडान का है और तृतीय स्थान संयुक्त राज्य अमरीका का है। इनके अतिरिक्त अफ्रीका के अन्य देशों व पाकिस्तान आदि देशों से भी लम्बे रेशे की कपास का आयात करते हैं।

वर्ष 1967 68 में लगभग 83 करोड़ रुपये व 1968 69 में लगभग 90 करोड़ रुपये के मूल्य की कपास आयात की गई।

(6) रासायनिक पदार्थ—देश के औद्योगिक विकास के साथ रासायनिक पदार्थों की मांग भी बढ़ी है और मांग की पूर्ति देश के उत्पादन से नहीं हो रही है अत इनका आयात किया जाता है। इनके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के रंग और दवाइयाँ भी आयात की जाती हैं। रासायनिक पदार्थों का आयात मुख्यत संयुक्त राज्य अमरीका इंगलैण्ड रूस पश्चिमी जर्मनी फ्रांस इटली व जापान आदि देशों से किया जाता है।

(7) लोहा व इस्पात—यद्यपि भारत में लोहे व इस्पात के अनेक कारखाने हैं फिर भी देश में लोहे व इस्पात की पूर्ति नहीं हो पाती है, अत उच्च श्रेणी का लोहा व इस्पात संयुक्त राज्य अमरीका इंगलैण्ड पश्चिमी जर्मनी व सोवियत रूस से आयात करना पड़ता है। वर्ष 1967-68 में लगभग 106 करोड़ रुपये व 1968-69 में 86 करोड़ रुपये मूल्य का लोहा व इस्पात आयात किया गया।

(8) अन्य आयात—उपरोक्त के अतिरिक्त भारत में विदेशों से अनेक वस्तुएँ आयात की जाती हैं जिनमें जूट ऊन, कागज, नकली रेशम के धागे, नायलोन के धागे, यातायात के उपकरण, टायर ट्यूब मशीनों के पट्टे आदि उल्लेखनीय हैं।

पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न वस्तुओं के आयात की तुलनात्मक स्थिति निम्न तालिका से ज्ञात होती है —

प्रमुख वस्तुओं का आयात (करोड़ रु०)

वस्तुएँ	1960 61	1965 66	1968 69
मशीनें	260 6	421 6	369 9
विद्युत मशीनें	57 2	87 8	34 8
लोहा व इस्पात	122 5	122 5	86 1
पैट्रोलियम पदार्थ	53 2	33 4	32 0
पट्रोलियम	42 2	34 8	54 3
गेहूँ	153 2	264 7	378 50
कागज	5 9	13 2	18 2
कपास	81 7	46 2	90 1

कुछ प्रमुख देशों से भारत का व्यापारिक सम्बन्ध—

इंगलैण्ड—भारत के वैदेशिक व्यापार—आयात व्यापार तथा निर्यात व्यापार दोनों में ही इंगलैण्ड का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारत से इंगलैण्ड को भेजी जाने वाली वस्तुओं में चाय का प्रमुख स्थान है इसके अतिरिक्त चमड़ा, कपड़ा तिलहन वनस्पति-तेल, ऊन, कपास, धातुएँ तम्बाकू आदि प्रमुख वस्तुएँ हैं जिन्हें भारत इंगलैण्ड को भेजता है।

इंगलैण्ड से भारत में मशीनें, लोहा व इस्पात रासायनिक वस्तुएँ मोटर गाड़ियाँ, शराब रबर की वस्तुएँ आदि आती हैं। ब्रिटेन में बनी कपड़ा मिल की

मशीनों का सर्वोत्तम ग्राहक अब भी भारत ही है जो इनके कुल निर्यात में से लगभग 16 प्रतिशत मशीन खरीदता है।

इंगलैण्ड में होने वाले कुल आयात का लगभग 35 प्रतिशत भाग पाँच देशों (संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड व भारत) से होता है और इंगलैण्ड से होने वाले कुल निर्यात का लगभग 35 प्रतिशत भाग छः देशों—आस्ट्रेलिया, संयुक्त राज्य अमरीका, दक्षिणी अमरीका, कनाडा, न्यूजीलैण्ड व भारत को जाता है।

पश्चिमी जर्मनी—भारत और पश्चिमी जर्मनी के मध्य सन 1949 से व्यापार आरम्भ हुआ। पश्चिमी जर्मनी को भारत ये वस्तुएँ निर्यात करता है—लोहा, मैंगनीज, अभ्रक, चाय, कहवा, मूँगफली, तिलहन, मसाला, वनस्पति तेल, जूट का सामान, चमडा, काजू, ऊन, कच्चा सूत, हड्डियाँ, नारियल की जटा आदि। पश्चिमी जर्मनी से भारत ये वस्तुएँ आयात करता है—विद्युतचालित मशीनें व अन्य मशीनें, यातायात के उपकरण, रासायनिक पदार्थ, दवाइयाँ, खाद आदि।

भारत के विदेशी व्यापार में आयात की दृष्टि से पश्चिमी जर्मनी का तीसरा स्थान है किन्तु निर्यात की दृष्टि से नवाँ स्थान है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारत का व्यापार सन्तुलन पश्चिमी जर्मनी के साथ विपक्ष में रहता रहा है और भविष्य में भी मशीनों के अधिक आयात होने के कारण विपक्ष में रहने की सम्भावना है।

फ्रांस—भारत से फ्रांस को खालें, चमडा व इनसे पदार्थ, पशु व वनस्पति सम्बन्धी कच्चे माल, बागानों की उपज, कच्ची खाद, खनिज, कपड़े, चारा, तेल व इत्र आदि वस्तुएं भेजा जाता हैं।

फ्रांस से भारत में मँगवाई जाने वाली प्रमुख वस्तुएँ ये हैं—मशीन, शराब, रासायनिक पदार्थ, परिवहन सामग्री, तैयार खाद, विस्फोटक आदि। व्यापार का शेष भारत के विपक्ष में रहता है।

रूस—भारत से रूस को ये वस्तुएँ निर्यात की जाती है—चाय, ऊन, कहवा, मसाले, खालें व चमडा, काजू, अभ्रक, तम्बाकू, सूत, नारियल की जटा का सामान, ऊनी दरियाँ व फल आदि।

भारत में रूस से आने वाली प्रमुख वस्तुएँ ये हैं—लोहे व इस्पात का सामान, बिजली का सामान व मशीनें, अमोनियम सल्फेट, मशीनों के पुर्जे, लुग्दी, रसायन, पैट्रोलियम, विशेष किस्म का इस्पात आदि।

भारत और रूस के व्यापार का भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल है।

1966-1970 के दौरान में रूस ने भारत के नए और विकासशील उद्योगों की वस्तुएँ आयात की। इस अवधि में भारत से निर्यात किये जाने वाले माल में 40 प्रतिशत तैयार माल था।

संयुक्त राज्य अमरीका—यह देश भी भारत के वैदेशिक व्यापार की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। भारत से संयुक्त राज्य अमरीका में भेजी जाने वाली वस्तुओं में चाय, ऊन, चमडा, खालें, गलीचे, जूट का सामान, मैंगनीज, अभ्रक, काजू, सुपारी,

काली मिर्च आदि प्रमुख हैं। भारतीय चाय की खपत बढ़ाने के लिए अमरीकी चाय परिषद निरन्तर सम्वर्द्धनात्मक प्रयत्न कर रही है। भारतीय अभ्रक और मैंगनीज के निर्यात की भी पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं। अमरीका को निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में 60 प्रतिशत से भी अधिक निर्यात इन वस्तुओं के होते हैं—जूट का सामान, चाय, अभ्रक, मैंगनीज, मिर्च तथा काजू। इन दिनों भारत से अमरीका को हस्त की दस्तकारी का सामान, चप्पल, छपाई का सामान, चाय, रेशम, जेवर व अन्य इसी प्रकार की वस्तुओं का निर्यात बढ़ रहा है।

संयुक्त राज्य अमरीका से भारत में खाद्यान्न, रासायनिक पदार्थ, मशीनें, खनिज तेल, लम्बे रेशे की कपास व सूती कपड़े आदि मँगवाये जाते हैं।

सरकारी समीक्षा के अनुसार अमरीका को भारत का निर्यात तीसरी योजना में 28 प्रतिशत बढ़ा। निर्यात में औसतन हर वर्ष 6 करोड़ रु० की वृद्धि हुई।

तीसरी योजना के शुरू में भारत का निर्यात व्यापार (वार्षिक) 116 करोड़ रुपये का था, जो बढ़कर 1965 66 के अन्त (योजना की समाप्ति) में 148 करोड़ रु० का हो गया। यह भारत के कुल विदेशी व्यापार का 18 3 प्रतिशत था।

निर्यात की विभिन्न चीजों की दृष्टि से योजना के पाँच वर्षों में अमरीका को पटसन, काजू की गिरी, मसाला, मैंगनीज और फेरो मैंगनीज, खनिजों का निर्यात वृद्धि का क्रम कायम रहा, लेकिन चाय और अभ्रक के निर्यात में गिरावट आई। मूल्य के हिसाब से पटसन के निर्यात में 41 प्रतिशत की और काजू के निर्यात में 28 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस वृद्धि का मुख्य कारण अमरीका के मोन्टी एडिट कॉर्पोरेशन के साथ भारत के खनिज एवं धातु व्यापार निगम से हुआ वस्तु विनिमय समझौता था।

इटली—भारत से इटली को इन चीजों का निर्यात होता है—औद्योगिक कच्चा माल, कहवा, चाय, मसाले, मेवा, सूती कपड़ा, जूट का सामान, नारियल का रेशा, चमड़े के जूते। इटली से भारत में आयात होने वाली वस्तुएँ ये हैं—कृषि व अन्य कामों में काम आने वाले औजार व मशीनें, वैज्ञानिक व इन्जीनियरिंग के उपकरण, रासायनिक पदार्थ, परिवहन सामग्री, सिन्थेटिक रंग आदि।

कनाडा—भारत से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान चाय का है। इसके अतिरिक्त भारत से जूट का सामान, मूँगफली, सूती कपड़ा, मसाले, काजू, मैंगनीज, अभ्रक, काली मिर्च, गोंद व चमड़ा आदि भेजे जाते हैं।

कनाडा से भारत के आयात की प्रमुख वस्तुओं में खाद्यान्न, कागज, लुग्दी, मोटरें, मशीनें व अन्य धातु का सामान है।

कनाडा को भारत के निर्यात के बारे में समीक्षा में बताया गया है कि कनाडा से भारत का निर्यात व्यापार पिछले 5 वर्ष से 20 करोड़ रु० के आस-पास स्थिर रहा है यद्यपि वहाँ के आयात में वृद्धि का क्रम रहा। निर्यात जो 1961 62 में

17 60 करोड रुपये से बढकर 1968 म 29 75 करोड रुपये हुआ, लेकिन आयात उसी काल मे 18 55 करोड से 97 75 करोड पर पहुच गया। कनाडा को निर्यात म मामूली घटा कनाडा उस देश को भारतीय चीनी के निर्यात म घटा बढी से हुई है।

जापान—भारत से जापान को भेजी जाने वाली वस्तुओ मे कपास का महत्त्व पूर्ण स्थान है। इसके अतिरिक्त मैंगनीज, अभ्रक, तम्बाकू, लाख व चमडा, कच्चा लोहा गर्म मसाले आदि भेजे जाते हैं।

जापान से भारत मे आने वाली प्रमुख वस्तुएँ ये हैं—वस्त्र (सूती, ऊनी व रेशमी), नकली रेशम, मशीनें व औजार, बिजली का सामान काच व चीनी मिट्टी के बर्तन व खिलौने रासायनिक पदार्थ आदि।

बर्मा—बर्मा भारतीय सामान का अच्छा ग्राहक है। भारत से बर्मा को सूती वस्त्र साइकिलें सिलाई की मशीनें मूगफली का तेल जूट के बोरे रबर का सामान नारियल की जटा कोयला चाय कहवा, तम्बाकू जमाए हुए तेल (वनस्पति घी), कागज बिजली के पखे, शक्कर, बनियान-मोजे, सिले हुए कपडे चाकू कैंची आदि वस्तुए भेजी जाती हैं। बर्मा से भारत म चावल, खनिज तेल और लकडी मुख्यत आती है।

लका—लका को माल भेजने वाले देशो म इगलैण्ड के पश्चात भारत का ही स्थान है। अन्य देशो की तुलना म लका को भारत से माल मँगाने म परिवहन-व्यय कम पडता है अत भारत को लका म माल भेजने की सुविधा है। भारत से लका म भेजी जाने वाली वस्तुओ म सूती वस्त्र नकली रेशम रबर के टायर व ट्यूब, सीमेण्ट हड्डी का चूरा, कोयला मछली विद्युत का सामान प्लास्टिक का सामान, खेल का सामान स्टोव खिलौने सिलाई की मशीनें, दवाइया मोटर, साइकिलें लोहा व इस्पात का सामान गुड आदि प्रमुख हैं। लका से भारत चाय, खोपरे का तेल व खोपरा लेता है।

चीन—अक्टूबर 1954 के भारत चीन व्यापारिक समझौते के पश्चात दोनो देशों के व्यापार म उत्तरोत्तर प्रगति हुई थी। भारत से चीन को भेजी जाने वाली प्रमुख वस्तुयें ये थी—जूट का सामान कपास तम्बाकू गर्म मसाले, लाख और दवाइयाँ। चीन से भारत कच्चा रेशम का कोवा (कोकून), रेशमी कपडा औषधियाँ व दाल चीनी मगाता था। किन्तु सन 1962 म चीन द्वारा भारत पर आक्रमण के पश्चात चीन के साथ भारत का व्यापार बन्द हो गया है।

पाकिस्तान—सन 1947 के पूर्व पाकिस्तान देश का अस्तित्व भी नहीं था, किन्तु देश के विभाजन के पश्चात पाकिस्तान का जन्म हुआ। भारत के निर्मित सामान के लिए पाकिस्तान को सूती कपडा जूट का सामान चीनी गुड, चाय, सीमेण्ट कागज लोहे का सामान, कोयला, रासायनिक पदार्थ मछली जूते आदि मुख्यत जाते हैं।

भारत म पाकिस्तान से मुख्यत लम्बे रेशे का कपास, कच्चा जूट व चावल

भेजे जाते हैं। सन 1965 मे पाकिस्तान द्वारा भारत पर आक्रमण के पश्चात दोनो देशा के मध्य विदेशी व्यापार बन्द हो गया किन्तु अब यह पुन चालू हो गया है किन्तु नगण्य मात्रा म।

नेपाल—नेपाल के विदेशी व्यापार म भारत का बड़ा योग रहता है। नेपाल सरकार द्वारा प्रसारित सूचना के अनुसार सन 1957 से 1961 तक के 4 वर्षों मे नेपाल के कुल विदेशी व्यापार का 95 प्रतिशत भाग भारत के साथ हुआ। सन् 1970 म नेपाल भारत व्यापारिक समझौता हुआ है।

अन्य देश—भारत का व्यापार अफ्रीका के देशों म मुख्यत मिस्र व अरब गणराज्य माली सूडान केनिया इथोपिया कागो युगाडा, मोरक्को आदि देशो से होता है। इन देशा से भारत म कपास रबर जस्ता, ताँबा व सीसा आदि आयात करते हैं। निर्यात की वस्तुओ म सूती वस्त्र इजीनियरिंग का सामान, चीनी, तम्बाकू जूते, जूट का सामान आदि प्रमुख हैं। पश्चिमी एशिया के देशो म ईरान, ईराक साऊदी अरब अफगानिस्तान आदि देशों से भारत का व्यापारिक सम्बन्ध है। भारत म पेट्रोलियम खजूर सूखे फल आदि इन देशा म आयात करते हैं। चाय, सीमेण्ट इजीनियरी का सामान चीनी मशीन रासायनिक पदार्थ व सूती वस्त्र मुख्य निर्यात की वस्तुएँ हैं। दक्षिणी पूर्वी एशियायी देशो म सिंगापुर मलाया, हांगकांग, थाईलण्ड तथा इण्डोनेशिया आदि देशा स भारत का विदेशी व्यापार होता है। इन देशा म भारत म पट्रोलियम, रबर चावल मुलायम लकड़ियाँ, खोपरा व टिन आदि आयात होता है। भारत स सूती व ऊनी कपड इजीनियरिंग का सामान (साइकिलें सिलाई की मशीनें घड़ियाँ आदि), बिजली का सामान काँच का सामान, चाय आदि निर्यात होत हैं। दक्षिणी अमरीका के देशों म ब्राजील अर्जेन्टाइना व चिली आदि देशा से व्यापार होता है। गेहूँ कहवा चाँदी ताँबा, शोरा आदि भारत आयात करता है और चाय सूती कपड़, मशीनें खाद, अभ्रक आदि भारत निर्यात करता है।

प्रमुख देशों से व्यापार[1]

	आयात		निर्यात	
	1967-68	1968-69	1967 68	1968-69
सयुक्त राज्य अमरीका	776 6	575 0	207 4	234 2
इगलैण्ड	162 6	127 8	229 [illegible]	201 5
सोवियत रूस	111 2	185 5	121 8	148 3
पश्चिमी जमनी	143 9	119 7	22 2	26 5
जापान	31 4	36 3	15 4	20 0

[1] *Source* Monthly Statistics of the Foreign Trade of India (Govt of India Publication)

जापान	108 4	115 3	135 6	158 16
आस्ट्रेलिया	64 9	25 7	28 0	25 5
कनाडा	98 2	98 7	29 7	29 7
संयुक्त अरब गणराज्य	27 0	41 4	21 5	21 8
नेपाल	15 0	14 1	18 4	24 6
पाकिस्तान	21 1	0 1	0 1	0 1

(III) तटीय व्यापार
(Coastal Trade)

अर्थ—तटीय व्यापार से तात्पर्य किसी देश के उस व्यापार से है जो उस देश के समुद्र-तट के एक भाग अथवा स्थान से समुद्र के किनारे के दूसरे भाग अथवा स्थान का समुद्र-तटीय मार्ग द्वारा किया जावे।

भारत का समुद्री तट लगभग 5 690 Kms लम्बा है, अतः इतने लम्बे समुद्री तट वाले देश में तटीय व्यापार का महत्त्वशील होना आवश्यक है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व भारत का अधिकांश तटीय व्यापार विदेशी जहाजी कम्पनियों द्वारा सम्पन्न किया जाता था, किन्तु सन् 1950 से सम्पूर्ण तटीय व्यापार भारतीय जहाजी कम्पनियों के लिए सुरक्षित कर दिया है।

निम्न तालिका से भारत के तटीय व्यापार का ज्ञान होता है —

भारत का तटीय व्यापार (करोड़ रुपया में)

	1955 56	1960 61	1965 66	1966-67
कुल आयात	178 24	216 50	252 4	230 75
कुल निर्यात	159 73	222 88	252 4	230 76
कुल व्यापार	337 97	439 38	504 8	461 51

मुख्य वस्तुएँ—तटीय व्यापार की मुख्य वस्तुएं ये हैं—चावल, गेहूँ, दालें, नमक मिट्टी का तेल, लकड़ी सूती कपड़ा, जूट का सामान मसाले कोयला, चाय, शक्कर, नारियल आदि।

अ य अनक निगमो की स्थापना की है जिनम खनिज एव धातु व्यापार निगम, राष्ट्रीय टक्सटाइल निगम, भटल स्क्रप ट्रेड कारपोरेशन, भारतीय मोशन पिक्चस निर्यात निगम, दस्तकारी एव हस्तकर्घा निर्यात कारपोरेशन आदि हैं।

(5) वस्तु-बोड—इस समय 8 बाड है जिनका नाम वस्तु क नाम क अनुसार है। इन बार्डो का काय अपन पदाथ के विकास—उत्पादन म निर्यात तक—क लिए सरकार का परामश दना है। प्रमुख बोड य हैं —टी बोड काफी बोड सण्ट्रल सिल्क बोड क्वायर (Coir) बोड हायकघा बाड आदि।

(6) व्यापार मण्डल (Board of Trade)—यह सन् 1962 म स्थापित किया गया केन्द्रीय व्यापार मन्त्री इसके अध्यक्ष होते हैं। इसका प्रमुख काय व्यापार के सभी पहलुओ पर विचार करना तथा उनके सम्बन्ध म सरकार को परामश देना और निर्यात वृद्धि क लिए प्रयत्न करना है। इस बोड न समय समय पर निर्यात व्यापार से सम्बन्धित वस्तुओ तथा देशो के विषय म विश्लेषण किया है तथा निर्यात सम्बन्धी अवसरो के विषय म जानकारी प्राप्त कराई है।

(7) व्यापार मन्त्रालय व निर्यात सवधन निदेशालय की स्थापना—सन 1960 म भारत सरकार ने एक पृथक व्यापार मन्त्रालय की स्थापना की ह। इसके अन्तगत ही अब निर्यात सवधन निदेशालय (सन 1947 म स्थापित) काय कर रहा ह। इसके चार क्षत्रीय कार्यालय हैं तथा बम्बई कलकत्ता और मद्रास म कार्यालय स्थापित किये हैं।

(8) निर्यात साख गारण्टी निगम—यह निगम सन 1957 मे स्थापित किया गया। जिन जोखिमा के लिए सामान्यत साधारण बीमा कम्पनियाँ बीमा नही करती है उन जोखिमो के लिए यह निगम सुविधाएँ देता ह। इसके अतिरिक्त इस निगम द्वारा प्रदान की गई पालिसियो के आधार पर बक ऋण आदि भी दिया जाता है।

(9) निर्यात सेवा सगठन (Export Service Organizations)—भारत म इस समय अनक निर्यात सेवा सगठन काय कर रहे हैं, जिनम से प्रमुख निम्नलिखित हैं—(1) डायरेक्टोरेट आफ कार्माशयल पब्लिसिटी—यह विदेशी व्यापार मन्त्रालय के अन्तगत है व कार्यालय नई दिल्ली म है। यह निदशालय अनेक पत्र पत्रिकाओ का प्रकाशन करता है जिनम य प्रमुख हैं—जनल आफ टड एण्ड इण्डस्ट्री फॉरेन ट्रेड आफ इण्डिया वीकली एक्सपोट सर्विस बुलटिन त्रमासिक इण्डिया एक्सपोट स' आदि। (ii) डिपाटमेण्ट आफ कार्माशयल इण्टलीजंस एण्ड स्टटिसटिक्स—इसका कार्यालय कलकत्ता म है। इसक प्रमुख काय निर्यात व्यापार सम्बन्धी आकडे एकत्रित करना व्यापारिक मतभदो को दूर करने म सहायता करना और विदशो म जान वाले व्यापारियो का परिचय पत्र दन की व्यवस्था करना आदि हैं। (iii) निर्यात निरीक्षण काउन्सिल—इसकी स्थापना सन 1963 म की गइ व कार्यालय कलकत्ता म है। यह निर्यात का जान वाली वस्तुओ की किस्म पर नियन्त्रण रखन व माल

को जहाज पर लादने के पूर्व निरीक्षण करता है। (iv) इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ फॉरेन ट्रेड—इसका कार्यालय नई दिल्ली में है। यह संस्था प्रशिक्षण, अनुसंधान और बाजार अध्ययन का कार्य करती है। (v) इण्डियन काउन्सिल आफ ट्रेड, फेयर एण्ड एक्जीबिशन—इसका कार्यालय बम्बई में है। अन्तर्राष्ट्रीय मेला तथा प्रदर्शनियों में भाग लेना व भारतीय मण्डप लगाना इसका प्रमुख कार्य है। न्यूयार्क, मास्को मिलान (इटली), आदि स्थानों पर भारतीय प्रदर्शनियों का आयोजन किया है।

निर्यात प्रोत्साहन योजनाएँ

(1) अनेक चैम्बर आफ कामर्स और ट्रेड एसोसिएशनों को उदगम का प्रमाण पत्र (Certificate of Origin) निर्गमन करने का अधिकार दे दिया गया है। अनेक निर्यात-गृह (Export Houses) कार्य कर रहे हैं जो विदेशी विनिमय में तथा अन्य सहायता प्रदान करते है।

(2) **कच्चे माल व पुर्जों का आयात**—निर्यात किए गये माल के मूल्य का एक निश्चित प्रतिशत भाग उन कच्चे माल तथा पुर्जों के आयात के लिए उपयोग करने की अनुमति दी जाती है जिनकी आवश्यकता निर्यात सम्बन्धी वस्तुओं के उत्पादन में पड़ती है।

(3) **आयात किए हुए माल का विक्रय**—आयात किए गये माल को प्राय आयातकर्ता के कारखाने में ही उपयोग किया जा सकता है अन्य को विक्रय नहीं किया जा सकता। किन्तु ऐसे आयात किए हुए माल को किसी ऐसे निर्माता को भी बेचा जा सकता है जो उस वस्तु से उत्पादन करके माल को निर्यात करता हो।

(4) **अग्रिम लाइसेन्स**—निर्यातकों का निर्यात सम्बन्धी अनुबन्धों की पूर्ति के लिए आवश्यक सामान आयात करने के लिए अग्रिम-लाइसेन्स भी विशेष परिस्थितियों में दे दिए जाते हैं।

(5) **विशेष सुविधाएँ**—निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिए कुछ वस्तुओं के आयात कर में वापसी की सुविधाएं निर्यात से प्राप्त आय पर लगने वाले आय-कर में कुछ छूट, कुछ वस्तुओं के निर्यात करों में छूट आदि दी गई है। निर्यातकर्त्ताओं को ऋण देने की सुविधाएँ दी जाने लगी हैं।

निर्यात संवर्द्धन के लिए परामर्श

यद्यपि निर्यात संवर्द्धन के प्रति सरकार सचेत है और इस दिशा में अनेक कार्य भी किये हैं किन्तु इस सम्बन्ध में कुछ परामर्श निम्नलिखित हैं—(1) भारतीय उद्योगपतियों को चाहिए कि वे विदेशों में केवल ऐसा माल ही भेजें जो उच्च किस्म का ही हो। कुछ व्यापारियों अथवा उद्योगपतियों की बेइमानी से देश की साख विदेश में उठ जाती है उन व्यापारियों आदि को सरकार कड़ी सजा दे। (2) सरकार, उद्योगपतियों एवं व्यापारियों को निर्यात वृद्धि के लिए व्यवस्थित ढंग से प्रयत्न करना चाहिए। (3) विदेशी बाजारों का वैज्ञानिक ढंग से सर्वेक्षण तथा और अधिक प्रचार की आवश्यकता है। (4) निर्यात की जाने वाली वस्तुओं

के मूल्य कम करने के प्रयत्न करने चाहिए क्योंकि प्रायः वस्तुओं को बाजार इस कारण नहीं मिल पाता कि अन्य देशों की तुलना में अपना मूल्य अधिक होता है। (5) भारत सरकार को चाहिए कि विदेशी सरकारों से कहे कि भारत से निर्यात होने वाले विशेष सामानों पर आयात नियन्त्रण कुछ ढीला कर दें। (6) सरकार को विभिन्न देशों से व्यापारिक समझौते करने चाहिए ताकि भारतीय वस्तु का अधिक निर्यात हो। अधिकतर निर्मित पक्का माल ही निर्यात करने का प्रयत्न करना चाहिए। (7) समय-समय पर भारतीय उद्योगपतियों को विदेशों में जाना चाहिए और वहाँ के व्यापारियों से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके अपनी वस्तुओं के लिए बाजार दृढ़ बनावें। (8) निर्यात-वृद्धि में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए सरकारी अधिकारियों, निर्यातकों, उद्योगपतियों, व्यापारियों के सम्मेलन समय समय पर बुलाने चाहिए।

अन्तिम विचार—देश से निर्यात करने की प्रवृत्ति को यथासम्भव प्रोत्साहन देना चाहिए जिससे विदेशी मुद्रा का अर्जन हो और चौथी-पंचवर्षीय योजना के लिए आयात की जाने वाली वस्तुओं का मूल्य चुकाया जा सके।

सरकार के इतने प्रयत्न करने पर भी भारत का निर्यात व्यापार इतना अधिक नहीं बढ़ रहा है जैसा कि बढ़ना चाहिए। इस सम्बन्ध में भारत के औद्योगिक ऋण व पूंजी विनियोग निगम के अध्यक्ष ने भी कहा है कि निर्यात प्रोत्साहन योजना के बावजूद देश के निर्यात व्यापार की दशा गिरी हुई है। सही आँकड़ों व सही उपलब्धियों को प्राप्त करना कठिन हो जाता है अतः उन्होंने कहा है 'समय आ सकता है जबकि हम अपने तथाकथित विशेषज्ञों, बनावटी वैज्ञानिकों तथा झूठे साहित्यिक विशेषज्ञों का निर्यात करना पड़ेगा।

UNIVERSITY QUESTIONS

1 द्वितीय महायुद्ध एवं उनके उपरान्त के काल में भारत के विदेशी व्यापार में कौनसी प्रगति रही है? व्यापार के स्वरूप में परिवर्तन के कारणों को बताइये। (T D C 1963, Raj B Com Suppl, 1964)
[Discuss the trends of Indian foreign trade during and after the Second World War giving reasons for changes in its pattern]

2 भारत के विदेशी व्यापार की आधुनिक प्रवृत्तियों को बताइये। भारत से निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएं कौन कौन सी हैं?
(T D C 1961)
[Show the recent trends in the foreign trade of India What are the principal items exported from India ?]

3 भारत के तटीय व्यापार के विषय म अपन विचार व्यक्त कीजिय । पिछले पन्द्रह वष म उस उन्नत और उत्साहित करन के लिये क्या किया गया है ?
(T D C 1964)

[Comment upon the coastal trade of India What steps have been taken to improve and encourage it during last fifteen years ?]

4 भारतीय विदेशी व्यापार का वतमान ढाँचा कसा है ? आप उसम क्या परिवतन लाना चाहग और क्यो ? (T D C Suppl, 1964)

[Discuss the present pattern of Indian foreign trade What changes would you like to introduce and why ?]

5 भारत म पिछले बीस वर्षों मे विदशी व्यापार सम्बन्धी प्रमुख परिवतना का उल्लेख कीजिय । (T D C 1967)

6 1950 से किन किन देशा क साथ और किन किन वस्तुओ म भारत का विदेशी व्यापार गिर रहा है ? कारणा पर प्रकाश डालिए और समाधान के सुझाव दीजिय । (T D C, 1968)

7 भारत मे 1950 से अब तक विदशी व्यापार सम्बन्धी प्रमुख परिवतनो का उल्लेख कीजिय । (T D C Suppl, 1968)

8 1950 से भारतीय विदेशी व्यापार की क्या दिशा रही ? नियात-वृद्धि के लिए सुझाव दीजिय । (T D C 1970)

9 भारतीय विदशी-व्यापार मे नियात सवद्धन की आवश्यकता समझाइय । इस सम्बन्ध मे सरकार ने जा भी प्रयत्न किए हैं उनका सक्षेप म वणन कीजिय और अपने भी कुछ सुझाव दीजिय । (T D C 1971)

34

राजस्थान के प्राकृतिक भाग

स्थिति एव विस्तार

उत्तरी भारत क पश्चिम म भारत का प्रहरी राजस्थान राज्य स्थित है। इसकी भौगोलिक स्थिति 23 3 स ३0 12 उत्तरी अक्षाशो तथा 69 ३0 स 78 17' पूर्वी देशान्तरो के मध्य है। यह राज्य पूव स पश्चिम तक लगभग 915 Km तथा उत्तर से दक्षिण की ओर लगभग 870 Km लम्बा है।

राजस्थान का क्षेत्रफल 3,42 274 वग किलोमीटर है। यह समस्त भारत के क्षेत्रफल का लगभग 11% है। क्षत्रफल की दृष्टि स राजस्थान का भारत के राज्यो म दूसरा स्थान है, प्रथम स्थान मध्य प्रदश राज्य (क्षेत्रफल=4,43 452 वग Kms) का है। यह उल्लखनीय है कि राजस्थान का क्षेत्रफल इगलण्ड से कुछ अधिक ही है।

राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय सीमाएँ

राजस्थान की कुल स्थलीय सीमा 5,920 Kms है। राजस्थान की पश्चिमी सीमा क साथ भारत व पाकिस्तान की सीमा 1070 Kms अन्तर्राष्ट्रीय सीमा है। भारत व पाकिस्तान की सीमा पर राजस्थान के श्री गगानगर बीकानेर, जसलमेर व बाडमर जिल हैं।

राजस्थान क उत्तर म पजाब व हरियाना राज्य, पूव म उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश दक्षिण मे मध्य प्रदेश व गुजरात और पश्चिम म पश्चिमी पाकिस्तान है।

प्राकृतिक विभाग

क्षेत्रफल की दृष्टि स राजस्थान की गणना भारत के बडे राज्यो म की जाती है। राजस्थान प्रकृति की कला का नमूना है क्योकि मदान पहाड पठार रेगिस्तान, प्राकृतिक झीलो आदि विषमताओ स परिपूण राज्य भारत म राजस्थान के अतिरिक्त अन्य कोई नही है। भूमि की बनावट की दृष्टि से राजस्थान को निम्न चार प्राकृतिक भागो म विभक्त किया जा सकता है —(1) उत्तरी पश्चिमी मरुस्थली प्रदेश, (2) मध्य म अरावली पहाड (3) उत्तर पूर्वी मदानी प्रदेश, एव (4) दक्षिणी-पूर्वी पठारी प्रदेश।

(I) उत्तरी-पश्चिमी मरुस्थली प्रदेश—

(1) **स्थिति तथा विस्तार**—यह भाग राजस्थान के उत्तर पश्चिम में स्थित है। स्थूलरूप में यह रेतीला भाग अरावली पर्वत के पश्चिमी ढाल में प्रारम्भ होकर पश्चिम में भारत-पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक चला गया है। राजनीतिक दृष्टि से इस भाग में श्रीगंगानगर बीकानेर चूरू जोधपुर नागौर जैसलमेर बाड़मेर, पाली सीकर झुन्झुनू आदि जिले सम्मिलित हैं। विस्तार की दृष्टि से यह राजस्थान के प्राकृतिक भागों में सबसे बड़ा भाग है। अनुमान है कि इस भाग में राजस्थान के क्षेत्रफल का लगभग 60% भाग है।

(2) **बनावट**—यह भाग प्राय समतल है और यह बालू रेत के समुद्र के समान दिखाई पड़ता है। स्थान स्थान पर बालू रेत के टीले हैं जो दूर की पहाड़ियों की भाँति दिखाई देते हैं। ये टीले स्थायी नहीं हैं और वायु द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर चले जाते हैं।

(3) **जलवायु**—इस प्रदेश की जलवायु शुष्क है। वर्षा की मात्रा पूर्व से पश्चिम की ओर और दक्षिण से उत्तर की ओर घटती जाती है। पूर्व की ओर औसत वार्षिक वर्षा 25 Cm है जो घटते घटते पश्चिमी भागों में लगभग 10 Cms रह जाती है। इन भागों में कभी कभी लगातार कई वर्षों तक वर्षा नहीं होती है।

गर्मियों में यहाँ तापमान बहुत ऊँचा (32 C से 48 C तक) हो जाता है। विशेषतः दिन में गर्मी बहुत पड़ती है किन्तु रात्रियाँ सुहावनी होती हैं। सर्दियों में तापमान 8 —10 C हो जाता है किन्तु रात्रियों में तापमान कभी-कभी हिमांक से भी नीचे चला जाता है।

(4) **आर्थिक विकास**—आर्थिक विकास की दृष्टि से यह भाग बहुत ही पिछड़ा हुआ है। इस भाग में मनुष्यों का जीवन कठिन है अतः जनसंख्या बहुत ही कम है। मनुष्यों का मुख्य व्यवसाय कृषि करना व पशु चराना है। सिंचाई वाले भागों को छोड़कर शेष भाग में कृषि, वर्षा पर ही निर्भर है। बाजरा मूंग मोठ और ग्वार प्रमुख उपज हैं। गंगासागर क्षेत्र में सिंचाई की सुविधाएँ होने के कारण वहाँ कृषि का बहुत विकास हुआ है।

खनिज पदार्थों की कमी है। पलाना (बीकानेर) में लिग्नाइट कोयला जामसर व लूनकरनसर (दोनों बीकानेर में) जैसलमेर व बाड़मेर में जिप्सम, मकराना में संगमरमर बीकानेर (कोलायतजी) में मुल्तानी मिट्टी प्रमुख खनिज हैं। जैसलमेर में खनिज तेल की खोज की जा रही है।

आवागमन व यातायात के साधनों की दृष्टि से यह भाग पिछड़ा हुआ है। सड़कों व रेल-मार्गों की कमी है। सड़कें व रेलवे लाइन प्रमुख नगरों व कस्बों को जोड़ती हैं।

औद्योगिक दृष्टि से भी यह प्रदेश पिछड़ा हुआ है। चूरू व बीकानेर में ऊनी

मिले एव जाधपुर म हड्डी पीगने का कारखाना है। पालना म अनेक उद्योग स्थापित हो गये है।

जोधपुर बीकानेर जसलमर, गगानगर बाडमर पाली नागौर आदि प्रमुख कन्द्र हैं।

(II) अरावली पर्वत शृखला—

(1) स्थिति तथा विस्तार—अरावली पर्वत माला राजस्थान के लगभग मध्य म दक्षिण पश्चिम स आरम्भ होकर उत्तर-पूर्व म खेतडी होती हुई दिल्ली के निकट पहुचता है। यह एव लगातार पर्वतमाला नहीं है। इसकी लम्बाई लगभग 735 Kms है तथा औसत ऊचाई 914 मीटर है। इस पर्वत शृखला मे अनेक ऊँची चोटिया भी हैं जिनम गुरुशिखर अथवा आबू कुम्भलगढ (उदयपुर) तारागढ (अजमर) प्रमुख है। अरावली पर्वत शृखला मुख्यत उदयपुर डूगरपुर बासवाडा सिरोही अजमर, जयपुर व अलवर जिलो म फैला हुई है। यह पर्वतीय प्रदेश सम्पूर्ण राजस्थान के लगभग 10% भाग म फला हुआ है।

(2) जलवायु—यहा गर्मी का औसत तापमान (80 F) तथा सर्दी मे (45 F) रहता है। वर्षा गर्मियो म ही होती है। वर्षा की मात्रा दक्षिण से उत्तर की ओर कम होती जाती है। माउण्ट आबू गर्मियो म आकर्षण स्थल बन जाता है। वार्षिक वर्षा 200 Cms स 90 Cms तक होती है।

(3) आर्थिक विकास—इस भाग म मनुष्यो का प्रमुख व्यवसाय कृषि करना व पशु चराना है। खान खादना व लकडी काटना अन्य व्यवसाय है। प्रमुख उपज मक्का, गेहू जौ मूगफली व गन्ना है। गाय भस भड तथा बकरिया प्रमुख पशु है। वनो स बास कत्था व गोंद आदि प्राप्त होते हैं।

इस भाग म सीसा, जस्ता, अभ्रक ताँबा, चून का पत्थर, सोप स्टोन आदि अनक खनिज पाये जाते हैं।

इस प्रदेश म औद्योगिक विकास की पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं। आबू व उदयपुर *पर्यटकों के लिए आकर्षण केन्द्र हैं। इस प्रदेश म अनेक धार्मिक केन्द्र भी है।*

(III) उत्तर पूर्वी मदानी प्रदेश—

(1) स्थिति तथा विस्तार—अरावली पर्वत क पूर्व म यह मदान स्थित है। यही मदान आगे पूर्व म यमुना के मदान मे विलीन हो गया है। राजस्थान के लगभग चौथाई भाग (23 3 प्रतिशत) म यह मदान फला हुआ है। इस भाग म राज्य की लगभग $\frac{2}{5}$ जनसंख्या निवास करती है। राजनीतिक दृष्टि स इस भाग म जयपुर, अजमर सवाई माधोपुर, भीलवाडा, भरतपुर, अलवर आदि जिले हैं।

(2) जलवायु—इस भाग म वर्षा का वार्षिक औसत 50 सण्टीमीटर स 100 सण्टीमीटर है। गर्मिया म अधिक गर्मी व सर्दियो म विशेषत रात्रि म काफी ठण्ड पडती है।

(3) आर्थिक विकास—अन्य भागो की तुलना म, राजस्थान के इस भाग

म कृषि व उद्योगो का अपेक्षाकृत अधिक विकास हुआ है। गेहूँ, जौ, बाजरा, मक्का, चना दालें व तिलहन प्रमुख फसलें हैं। मुख्य व्यवसाय कृषि करना व पशु-पालना है।

अन्य भागो की अपेक्षा इस भाग म रेल व सड़क मार्गों का अधिक विकास हुआ है किन्तु आवश्यकतानुसार विकास कम ही हुआ है।

इस भाग म उद्योग धन्धो का विकास भी अपेक्षाकृत अधिक हुआ है। जयपुर, ब्यावर, किशनगढ आदि म सूती वस्त्र मिलें और सवाई माधोपुर म सीमेण्ट बनाने का कारखाना है। जयपुर, अजमेर, भरतपुर आदि म अन्य उद्योग भी हैं। अलवर व भरतपुर म तेल निकालने के कारखाने हैं।

(IV) पठारी प्रदेश—

(1) स्थिति एवं विस्तार—राजस्थान का दक्षिणी एव दक्षिणी-पूर्वी भाग पठारी है जो हाड़ौती का पठार कहा जाता है। कोटा, बूंदी झालावाड़ चित्तौड़ के जिले तथा भीलवाड़ा और उदयपुर जिलों के कुछ भाग इसमें शामिल हैं। राजस्थान का लगभग 9 प्रतिशत क्षेत्र इस पठारी प्रदेश म है। चम्बल बनास व बाणगंगा इस भाग की प्रमुख नदियाँ हैं।

(2) जलवायु—इस प्रदेश म गर्मी का औसत तापमान (90 F) और सर्दियों का (40 50 F) रहता है। इस भाग म वर्षा अधिक होती है। औसत वार्षिक-वर्षा 100 से 125 सेण्टीमीटर होता है।

(3) आर्थिक विकास—आर्थिक विकास की दृष्टि म यह भाग अभी पिछड़ा हुआ है। प्रमुख व्यवसाय कृषि करना पशु चराना व खनिज-क्षेत्रों म खानें खोदना है। गेहूँ जौ ज्वार, तिलहन दालें, तम्बाकू कपास व गन्ना प्रमुख उपजें हैं।

उद्योगो की दृष्टि से इस प्रदेश का महत्व बढ़ता जा रहा है। चम्बल योजना से जल विद्युत प्राप्त हो रही है। कोटा क्षेत्र म औद्योगिक विकास विशेषरूप से हो रहा है। कोटा म रेयन मिल्स खाद का कारखाना, प्रिसाइज इन्स्ट्रूमेण्ट का कारखाना केबिल्स का कारखाना लाखेरी (बूंदी) म सीमण्ट का कारखाना चित्तौड़ म सीमण्ट का कारखाना व भूपाल सागर (उदयपुर) म चीनी बनाने का कारखाना है। अन्य कारखाने स्थापित हो रहे हैं व अनेक के स्थापना की सम्भावना है।

राजस्थान के प्राकृतिक भागो का आर्थिक जीवन पर प्रभाव

यह बहुप्रचलित कथन है कि किसी देश के निवासियों के रहन सहन के ढंग संयोग की बात नहीं, वरन उसकी भौगोलिक परिस्थिति का परिणाम होता है। राजस्थान इसका अपवाद नहीं है। यहाँ के आर्थिक जीवन पर इसकी प्राकृतिक दशा का स्पष्ट प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है। राजस्थान के आर्थिक जीवन को इसके प्राकृतिक भागो ने इस प्रकार प्रभावित किया है —

(1) कृषि करना मुख्य व्यवसाय—राज्य के लगभग 70 प्रतिशत व्यक्तियों का मुख्य व्यवसाय कृषि करना है। यद्यपि राज्य म कृषि उद्योग विकसित नहीं है

मिल एव जोधपुर म हडडी पीसन का कारखाना है। पाली म अनेक उद्योग स्थापित हो गये है।

जोधपुर बीकानर जसलमर, गगानगर बाडमर पाली, नागोर आदि प्रमुख केन्द्र हैं।

(II) अरावली पवत शृ खला—

(1) स्थिति तथा विस्तार—अरावली पवत माला राजस्थान व लगभग मध्य म दक्षिण पश्चिम स आरम्भ होकर उत्तर-पूव म खेतडी होती हुई, दिल्ली के निकट पहुचती है। यह एक लगातार पवतमाला नहा है। इसकी लम्बाई लगभग 735 Kms है तथा औसत ऊचाई 914 मीटर है। इस पवत शृखला मे अनेक ऊँची चोटियाँ भी हैं जिनमे गुरशिखर अथवा आबू कुम्भलगढ (उदयपुर) तारागढ (अजमर) प्रमुख हैं। अरावली पवत शृखला मुख्यत उदयपुर डूगरपुर बासवाडा सिरोही अजमर जयपुर व अलवर जिलो म फला हुई है। यह पवतीय प्रदेश सम्पूर्ण राजस्थान के लगभग 10% भाग म फला हुआ है।

(2) जलवायु—यहाँ गर्मी का औसत तापमान (80 F) तथा सर्दी म (45 F) रहता है। वर्षा गर्मिया मे ही होती है। वर्षा की मात्रा दक्षिण स उत्तर की ओर कम होती जाती है। माउण्ट आबू गर्मिया म आकषण स्थल बन जाता है। वार्षिक वर्षा 200 Cms स 90 Cms तक होती है।

(3) आर्थिक विकास—इस भाग म मनुष्यो का प्रमुख व्यवसाय कृषि करना व पशु चराना है। खान खोदना व लकडी काटना अन्य व्यवसाय हैं। प्रमुख उपज मक्का गहू जौ मूगफली व गन्ना हैं। गाय भस भेड तथा बकरियाँ प्रमुख पशु हैं। वनो स घास कत्था व गोन्द आदि प्राप्त होते हैं।

इस भाग म सीसा, जस्ता, अभ्रक ताँबा, चूने का पत्थर, सोप स्टान आदि अनेक खनिज पाये जाते हैं।

इस प्रदेश म औद्योगिक विकास की पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं। आबू व उदयपुर पयटकों के लिए आकषण केन्द्र हैं। इस प्रदेश म अनेक धार्मिक केन्द्र भी है।

(III) उत्तर पूर्वी मदानी प्रदेश—

(1) स्थिति तथा विस्तार—अरावली पवत के पूव म यह मदान स्थित है। यही मैदान आग पूव म यमुना के मदान म विलीन हो गया है। राजस्थान के लगभग चौथाई भाग (23 3 प्रतिशत) म यह मैदान फला हुआ है। इस भाग म राज्य की लगभग $\frac{1}{3}$ जनसख्या निवास करती है। राजनीतिक दृष्टि स इस भाग म जयपुर अजमर सवाई माधोपुर भीलवाडा, भरतपुर, अलवर आदि जिले हैं।

(2) जलवायु—इस भाग म वर्षा का वार्षिक औसत 50 सण्टीमीटर स 100 सण्टीमीटर है। गर्मिया म अधिक गर्मी व सर्दिया म विशेषत रात्रि म काफी ठण्ड पडती है।

(3) आर्थिक विकास—अन्य भागो की तुलना म, राजस्थान के इस भाग

म कृषि व उद्योगों का अपेक्षाकृत अधिक विकास हुआ है। गेहूँ जौ, बाजरा, मक्का, चना दालें व तिलहन प्रमुख फसलें हैं। मुख्य व्यवसाय कृषि करना व पशु पालना है।

अन्य भागों की अपेक्षा इस भाग में रेल व सड़क मार्गों का अधिक विकास हुआ है किन्तु आवश्यकतानुसार विकास कम ही हुआ है।

इस भाग में उद्योग धन्धों का विकास भी अपेक्षाकृत अधिक हुआ है। जयपुर, ब्यावर, किशनगढ़ आदि में सूती वस्त्र मिलें और सवाई माधोपुर में सीमेण्ट बनाने का कारखाना है। जयपुर अजमेर, भरतपुर आदि में अन्य उद्योग भी हैं। अलवर व भरतपुर में तेल निकालने के कारखाने हैं।

(IV) पठारी प्रदेश—

(1) स्थिति एवं विस्तार—राजस्थान का दक्षिणी एवं दक्षिणी-पूर्वी भाग पठारी है जो हाड़ौती का पठार कहा जाता है। कोटा, बूंदी झालावाड़ चित्तौड़ के जिले तथा भीलवाड़ा और उदयपुर जिलों के कुछ भाग इसमें शामिल हैं। राजस्थान का लगभग 9 प्रतिशत क्षेत्र इस पठारी प्रदेश में है। चम्बल बनास व बाणगंगा इस भाग की प्रमुख नदियां हैं।

(2) जलवायु—इस प्रदेश में गर्मी का औसत तापमान (90 F) और सर्दियों का (40 50 F) रहता है। इस भाग में वर्षा अधिक होती है। औसत वार्षिक-वर्षा 100 से 125 सण्टीमीटर होती है।

(3) आर्थिक विकास—आर्थिक विकास की दृष्टि से यह भाग अभी पिछड़ा हुआ है। प्रमुख व्यवसाय कृषि करना पशु चराना व खनिज-क्षेत्रों में खानें खोदना है। गेहूं जौ ज्वार, तिलहन, दालें तम्बाकू कपास व गन्ना प्रमुख उपजें हैं।

उद्योगों की दृष्टि से इस प्रदेश का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। चम्बल योजना से जल विद्युत प्राप्त हो रही है। कोटा क्षेत्र में औद्योगिक विकास विशेषरूप से हो रहा है। कोटा में रयन सिल्क खाद का कारखाना प्रिसाइज इन्स्ट्रूमण्ट का कारखाना केबिल्स का कारखाना लाखेरी (बूंदी) में सीमेण्ट का कारखाना, चित्तौड़ में सीमेण्ट का कारखाना व भूपाल सागर (उदयपुर) में चीनी बनाने का कारखाना है। अन्य कारखाने स्थापित हो रहे हैं व अनेक के स्थापना की सम्भावना है।

राजस्थान में प्राकृतिक भागों का आर्थिक जीवन पर प्रभाव

यह बहुप्रचलित कथन है 'किसी देश के निवासियों का रहन सहन केवल संयोग की बात नहीं, वरन उसकी भौगोलिक परिस्थिति का परिणाम होता है।' राजस्थान इसका अपवाद नहीं है। यहां के आर्थिक जीवन पर इसकी प्राकृतिक दशा का स्पष्ट प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है। राजस्थान के आर्थिक जीवन को इसके प्राकृतिक भागों ने इस प्रकार प्रभावित किया है —

(1) कृषि करना मुख्य व्यवसाय—राज्य के लगभग 70 प्रतिशत व्यक्तियों का मुख्य व्यवसाय कृषि करना है। यद्यपि राज्य में कृषि उद्योग विकसित नहीं है,

किन्तु फिर भी निवासियों का प्रमुख व्यवसाय कृषि ही है। इसका प्रमुख कारण भूमि की उपलब्धता एवं रोजगार के अन्य साधनों की कमी है।

(2) पिछड़ी दशा में कृषि—अधिकांश लोगों का प्रमुख व्यवसाय कृषि होते हुए भी विचित्रता की बात यह है कि राज्य में कृषि पिछड़ी दशा में है। अधिकांश भागों में वर्षा के सहारे ही खेती की जाती है और वह भी प्राचीन रूढ़िवादी ढंग से।

(3) अकाल—राजस्थान समुद्र से दूर स्थित है एवं यहाँ कोई ऐसी पर्वत श्रेणी नहीं है जो मानसूनी हवाओं को रोक सके जिससे वर्षा हो सके। राजस्थान के उत्तरी पश्चिमी भाग तो प्रायः अकालग्रस्त ही रहते हैं। इससे राजस्थान की अर्थव्यवस्था पर बड़ा खराब प्रभाव पड़ता है।

(4) सिंचाई के साधनों पर प्रभाव—राजस्थान की प्राकृतिक दशा ने, सिंचाई के साधनों पर प्रभाव डाला है जिसका प्रभाव राज्य की आर्थिक व्यवस्था पर भी पड़ा है। भूमि की बनावट ने सिंचाई के साधनों के विकास में अवरोध उत्पन्न किया है। भूमि रेतीली होने के कारण नहरों के निर्माण में व्यय अधिक होता है, प्रायः समस्त नदियाँ बरसाती होने के कारण उनसे नहरें नहीं निकाली जा सकतीं अतः बाँधों का निर्माण आवश्यक है उत्तरी पश्चिमी भाग में पानी बहुत गहराई पर होने के कारण कुँआ द्वारा भी सिंचाई सम्भव नहीं है।

(5) कृषक भाग्यवादी—राज्य की प्राकृतिक दशा ने वर्षा को अनिश्चित कर दिया है और वर्षा ने कृषक के भाग्य को। कृषि वर्षा पर ही निर्भर होने के कारण, कृषक भाग्यवादी हो गया है।

(6) निर्धनता—राज्य के अधिकांश भाग में रेगिस्तान होने वर्षा की अनिश्चितता एवं न्यूनता के फलस्वरूप राज्य में न तो सन्तोषजनक कृषि का विकास हुआ है और न ही उद्योग धन्धों का विकास हुआ है अतः यहाँ के अधिकांश व्यक्ति निर्धन हैं।

(7) भूमि का पूर्ण उपयोग नहीं—वर्षा की कमी के कारण भूमि के बड़े बड़े टुकड़े बेकार पड़े हुए हैं जिनका न तो कृषि में और न औद्योगिक कार्यों में उपयोग होता है।

(8) अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण—राजस्थान की प्राकृतिक दशा ने यहाँ नगरों के विकास को हतोत्साहित किया है और गाँवों को प्रोत्साहित किया है जिसके फलस्वरूप गाँवों की संख्या काफी अधिक है। राजस्थान की लगभग 84 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण है।

(9) औद्योगिक विकास कम—औद्योगिक दृष्टि से राजस्थान के पिछड़े होने के कारणों में यहाँ की प्राकृतिक दशा भी महत्त्वपूर्ण है। राज्य में कोयला व लोहे की कमी है एवं वर्ष भर बहने वाली नदियों की कमी है।

(10) यातायात के अविकसित साधन—राज्य के उत्तरी व पश्चिमी भाग में रेगिस्तान होने के कारण सड़कों व रेलों का अभाव ही है। पठारी भाग की भी

यही स्थिति है। यातायात के अविकसित साधनों के लिए बहुत अंश तक यहाँ की प्राकृतिक दशा उत्तरदायी है।

(11) प्रवास—राज्य में औद्योगिक व व्यापारिक सुविधाएँ पर्याप्त न होने के कारण, यहाँ के अनेक व्यक्ति देश के अन्य भागों में जाकर बहुत योग्य उद्योगपति व व्यवसायी सिद्ध हुए हैं। बिरला व पोद्दारों को कौन नहीं जानता। राजस्थान के लोग भारत के प्राय सभी भागों में मिलेंगे। यही नहीं, विश्व का शायद ही कोई ऐसा देश होगा जहाँ कि राजस्थानी न हो।

(12) वीर एवं साहसी व्यक्ति—कठिन भूमि की बनावट, विषम जलवायु एवं कठोर परिस्थितियों का सामना करते करते यहाँ के लोग वीर एवं साहसी हो गये हैं। राजस्थान का इतिहास वीरता की गाथाओं से भरा पड़ा है। भारतीय सेनाओं में राजस्थानी वीरों की कमी नहीं है। पाकिस्तान द्वारा भारत पर आक्रमण (सन् 1965) के समय युद्ध में राजस्थान के वीर सिपाहियों ने रोमांचकारी वीरता एवं साहस का परिचय दिया।

35

राजस्थान की खनिज सम्पत्ति

प्रस्तावना —

राजस्थान में अनेक प्रकार के खनिजों का आगार है। अतः राजस्थान को 'खनिजों का संग्रहालय' भी कहा जाता है। खनिज पदार्थों की दृष्टि से भारत में बिहार व मध्य प्रदेश के पश्चात राजस्थान का ही स्थान है। इस प्रकार खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से राजस्थान का भारत में तीसरा स्थान है।

इस समय राजस्थान में छोटी मोटी 2 250 खानों पर काम हो रहा है तथा लगभग 30 विभिन्न प्रकार के खनिजों का विदोहन हो रहा है। खनिज उत्खनन में लगभग 1 5 लाख व्यक्ति लगे हुए हैं। राजस्थान सरकार ने राज्य में खनिज विकास के लिए सन 1968 में एक निगम (Corporation) की स्थापना की है।

राजस्थान का, भारत में सीसा व जस्ता आदि खनिजों पर एकाधिकार है, जिप्सम उत्पादन में राजस्थान को प्रथम स्थान प्राप्त है अभ्रक के उत्पादन में द्वितीय स्थान प्राप्त है। तांबा व नमक उत्पादन में राजस्थान का महत्वपूर्ण स्थान है। राजस्थान का संगमरमर दूर-दूर तक विख्यात है। अणु शक्ति में प्रयुक्त किये जाने वाले यूरेनियम खनिज भी राजस्थान में मिलता है। जैसलमेर क्षेत्र में पेट्रोलियम व प्राकृतिक गैस के बड़े भण्डार होने की सम्भावना है। इस प्रकार स्पष्ट है कि राजस्थान खनिज पदार्थों का भण्डार है।

राजस्थान के प्रमुख खनिज

राजस्थान में अनेक प्रकार के खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। राज्य में पाये जाने वाले प्रमुख खनिज-पदार्थ एवं उनका वितरण निम्न पंक्तियों में बताया गया है —

(1) अभ्रक (Mica)—राजस्थान में निकाले जाने वाले खनिजों में अभ्रक का महत्वपूर्ण स्थान है। अभ्रक के उत्पादन की दृष्टि से राजस्थान का भारत में द्वितीय स्थान है किन्तु अभ्रक-क्षेत्र की दृष्टि से प्रथम स्थान है। राजस्थान में अभ्रक क्षेत्र लगभग 30 हजार वर्ग किलोमीटर में विस्तृत है। राजस्थान में अभ्रक उत्पादन की प्रमुख पेटी उत्तर-पूर्व में दक्षिण-पश्चिम तक फैली हुई है।

अभ्रक-उत्पादन की दृष्टि से दक्षिण-पश्चिमी अभ्रक की पेटी अत्यन्त महत्व

शील है। इस पट्टी में मुख्यत भीलवाड़ा और उदयपुर जिला की खानें हैं। अभ्रक भण्डार की दृष्टि से भीलवाड़ा जिला अधिक महत्त्वपूर्ण है। इस क्षेत्र से भारत के कुल अभ्रक उत्पादन का लगभग 30% भाग प्राप्त होता है। यहां की कुछ खानों से 60 मीटर तक की गहराई तक खुदाई की जा चुकी है। यहां का अभ्रक हल्के लाल धब्बेदार होता है। उदयपुर जिले की अभ्रक की खानें उत्तर पूर्वी किनारे पर हैं।

दूसरी पट्टी उत्तर पूर्वी अभ्रक की पट्टी है। इस पट्टी में टोंक जिला व दक्षिणी जयपुर प्रमुख हैं। कुछ खानों में मशीनों व विद्युत की सहायता से अभ्रक निकाला जाता है। इन खानों से 12 से 30 मीटर गहराई तक अभ्रक निकाला जाता है। यह अभ्रक टोडारायसिंह रेलवे स्टेशन से बाहर भेज दिया जाता है।

राज्य का प्राय समस्त अभ्रक बिहार राज्य को भेज दिया जाता है जहां से उसे अलग-अलग पर्तों में करके विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है। यदि राजस्थान में ही इस मशीनों से पर्तों में करने की व्यवस्था कर दी जाय तो यहां से ही इसे विदेशों में निर्यात किया जा सकता है।

(2) लिग्नाइट कोयला (Lignite)—उच्च कोटि के कोयले की दृष्टि से राजस्थान निर्धन है। भूरे रंग का घटिया किस्म का कोयला, जिसे लिग्नाइट कहते हैं राजस्थान में मिलता है।

राजस्थान में लिग्नाइट कोयला उत्पादन की पट्टी बीकानेर विभाग में पूर्व से पश्चिम तक विस्तृत है जो कि बीकानेर नगर से दक्षिण की ओर है। इस पट्टी में कोयला उत्पादन क्षेत्र पालाना खारी, चनेरी गंगा सरोवर और मुण्ड हैं। इस पट्टी से बाहर कोयला उत्पादन क्षेत्र जोधपुर जिले में (गंगा) है। राजस्थान के इन समस्त क्षेत्रों में पलाना क्षेत्र ही प्रमुख है। इस क्षेत्र में लगभग 2 5 करोड़ टन कोयले के भण्डार होने का अनुमान है।

पलाना की खानें बीकानेर नगर के निकट स्थित हैं और भारत की टरशरी युग की कोयले की खानें हैं। पलाना की खानें बीकानेर से लगभग 23 किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम में हैं। पलाना रेलवे स्टेशन है जो बीकानेर के आगे बीकानेर-जोधपुर रेल मार्ग पर स्थित है।

बिहार का कोयला सस्ता होने एवं यातायात की कठिनाइयों के कारण स्थानीय महत्त्व का ही है। पहले यह कोयला पावर-हाउस तथा रेलवे के काम आता था। अब इस कोयले का उपयोग रेलवे व निकटवर्ती उद्योगों में होता है। आजकल लगभग 8 हजार टन कोयला निकाला जा रहा है।

(3) जिप्सम (Gyp um)—जिप्सम उत्पादन की दृष्टि से राजस्थान का भारत में प्रथम स्थान है। भारत के कुल जिप्सम उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत भाग इसी राज्य से प्राप्त होता है।

वैसे तो राजस्थान के विभिन्न भागों में जिप्सम मिलता है किन्तु राज्य में इसके तीन प्रमुख उत्पादन क्षेत्र हैं —(क) बीकानेर क्षेत्र—इस क्षेत्र में भारत के

कुल जिप्सम भण्डार का लगभग 17 प्रतिशत भण्डार है। बीकानेर के निकट जामसर गांव में राज्य के सबसे बड़े जिप्सम भण्डार हैं। यहाँ से जिप्सम सिन्दरी (बिहार) के खाद के कारखाने में भेज दिया जाता है। लूणकरणसर दूसरा प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है जो जामसर से लगभग 50 किलोमीटर दूर है। (ख) जोधपुर नागौर क्षेत्र—नागौर क्षेत्र में लगभग 45 करोड़ टन जिप्सम होने का अनुमान है। यहाँ जिप्सम 60 मीटर से 125 मीटर की गहराई तक मिलता है। जोधपुर जिले में भी जिप्सम के भण्डार हैं। एक छोटी खान पाली में भी है। (ग) जैसलमेर-बाड़मेर क्षेत्र—जैसलमेर में (मोहनगढ़, हमीरवाली और भाभा में) जिप्सम की खानें हैं। बाड़मेर में जिप्सम की छोटी खान है।

(4) तांबा (Copper)—तांबे की खानें वैसे तो राजस्थान में अनेक स्थानों पर पाई जाती हैं किन्तु दो खानें ही महत्वपूर्ण हैं—प्रथम झुंझुनू जिले में खेतड़ी सिंघाना क्षेत्र और द्वितीय, अलवर जिले में खो-दरीबा।

खेतड़ी सिंघाना क्षेत्र तांबा उत्पादन के लिए राजस्थान में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। ये खानें लगभग 25 किलोमीटर लम्बी और 3 से 5 किलोमीटर चौड़ी पट्टी में फैली हैं। आजकल खेतड़ी में तांबे की परियोजना राष्ट्रीय खनिज विकास निगम के अन्तर्गत है। खुदाई के लिए नवीनतम साधन अपनाए गये हैं। फ्रांस के यान्ट फर्म के साथ अभिनव इन्जीनियरिंग समझौता 1967 में हुआ। खेतड़ी में तांबा पिघलाने का संयन्त्र लगाया जा रहा है जो कि सार्वजनिक क्षेत्र में है।

दूसरा क्षेत्र अलवर नगर से 48 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम में खो दरीबा में है। यहाँ तांबे की छोटी खानें हैं।

(5) लोहा (Iron)—राजस्थान में लोहे की खानें छोटी और बिखरी हुई हैं। राजस्थान में प्रथम बार संगठित रूप से लोहा सन् 1953 से निकाला जा रहा है। राजस्थान में लोहे की प्रायः समस्त खानें या तो अरावली शृंखला के निकट अथवा इसके पूर्व में हैं।

चौमू-सामोद रेलवे स्टेशन (जयपुर जिले में जयपुर सीकर लाइन पर) से लगभग 8 10 किलोमीटर पूर्व में मोरिजा में लोहे की खानें हैं। यह राज्य का सबसे महत्वपूर्ण लोह खनिज भण्डार है। मोरिजा में एक किलोमीटर लम्बी तथा 10 मीटर मोटी पट्टी में लोह खनिज है। यह लोहा अच्छी किस्म का है व लगभग 68 प्रतिशत शुद्धता है। दूसरी प्रमुख खान दौसा रेलवे स्टेशन से लगभग 25 किलोमीटर उत्तर की ओर नीमला गांव के पास है। यहां का लोहा भी अच्छी किस्म का है व लगभग 68 प्रतिशत शुद्धता है।

झुंझुनू जिले में खेतड़ी के पूर्व में भी लोह की खानें हैं। इस क्षेत्र में काली पहाड़ी के निकट लोहे की खानें हैं। सीकर जिले में नीम का थाना से लगभग 15 20 किलोमीटर दूर लोहे की खान हैं।

उपरोक्त के अतिरिक्त उदयपुर (थाना) बूंदी (लोहारपुर इन्दरगढ)

ांसवाडा (कमलपुर), डूंगरपुर तथा झालावाड़ जिलों में भी लोहे की छोटी-छोटी ानें हैं।

(6) मैंगनीज (Manganese)—राजस्थान में मैंगनीज खनिज बांसवाड़ा जल में मुख्यतः निकाला जाता है। राज्य में मैंगनीज उद्योग का भविष्य इसी जिले बांसवाड़ा) में मैंगनीज की उपर्ति पर निर्भर करता है और राजस्थान में यही एकमात्र प्रमुख क्षेत्र है जहां व्यापारिक दृष्टि से मैंगनीज खोदा जाता है।

उदयपुर, कुशलगढ़ तथा जयपुर के निकट भी मैंगनीज की छोटी छोटी ान हैं।

(7) घीया पत्थर (Soap Stone)—भारत में सबसे अधिक सोप स्टोन राजस्थान की खानों से ही प्राप्त होता है। भारत के कुल सोप स्टोन उत्पादन का लगभग 85 प्रतिशत भाग राजस्थान में ही प्राप्त होता है। सोप-स्टोन की खानें तीन क्षेत्रों—उदयपुर (देवपुरा), भीलवाड़ा (धवरिया और चांदपुरा) और जयपुर (गैमा के निकट)—में हैं। उदयपुर जिले से राजस्थान का लगभग 40 प्रतिशत सोप स्टोन प्राप्त होता है। अधिकांश सोप-स्टोन विदेशों को भेज दिया जाता है।

(8) इमारती पत्थर—इमारती पत्थरों में सबसे प्रमुख संगमरमर है। सबसे अच्छी किस्म का संगमरमर राजस्थान से ही प्राप्त होता है। संगमरमर की प्रमुख खान मकराना में है। जयपुर फुलेरा जोधपुर रेलवे लाइन पर मकराना स्टेशन है। मकराने में संगमरमर की पहाड़ी लगभग 30 मीटर ऊँची है। यह पहाड़ी रेलवे लाइन के लगभग समानान्तर करीब 20 किलोमीटर तक जाती है।

जैसलमेर में पीले व छींटेदार सुंदर पत्थर मिलते हैं। इनके अतिरिक्त जोधपुर में लाल व भूरे रंग के इमारती पत्थरों की अनेक खानें हैं। उदयपुर व डूंगरपुर में काला पत्थर मिलता है। जयपुर उदयपुर कोटा बूंदी, अलवर आदि क्षेत्रों में भी इमारती पत्थर बहुतायत से मिलता है।

(9) कांच की मिट्टी—उत्तर प्रदेश के पश्चात कांच की मिट्टी का सबसे बड़ा उत्पादक क्षेत्र राजस्थान ही है। बीकानेर बूंदी कोटा सवाई माधोपुर जिला में इसकी खानें हैं। धौलपुर के कांच के कारखाने में थोड़ी मिट्टी काम में आती है, शेष उत्तर प्रदेश पंजाब और महाराष्ट्र को भेज दी जाती है।

(10) सीसा व जस्ता (Lead and Zinc)—भारत में सीसे व जस्ते की खानें केवल राजस्थान में ही हैं, अन्य कहीं नहीं हैं। उदयपुर से लगभग 40 किलोमीटर दक्षिण-पूर्व की ओर जावर गाँव है जिसके बिल्कुल निकट ही इनकी अनेक खानें हैं। यहाँ प्रतिदिन 200 300 टन सीसा व जस्ता प्राप्त होता है। जावर में सीसा गलाने का संयन्त्र सार्वजनिक क्षेत्र में लगाया गया है। इनकी अन्य खानें सवाई माधोपुर जिले (चौथ का बरवाड़ा) और अलवर जिले (गुढ़ा किशोरीदास) में हैं किन्तु ये खानें छोटी हैं।

(11) बेरिलियम—अणु शक्ति में बेरिलियम का उपयोग होने के कारण इस खनिज का महत्त्व बहुत अधिक है। भारत में यह खनिज केवल [redacted] राज्य—

राजस्थान व बिहार—म ही उत्पन्न होता है। राजस्थान का बेरिलियम उच्चकोटि का होता है। यह खनिज हरा, हल्का हरा सफेद अथवा पीला रंग का होता है। भीलवाड़ा उदयपुर जयपुर डूंगरपुर टोंक व सीकर जिले म इसकी खानें हैं।

सबसे अधिक बेरिलियम भीलवाड़ा जिले से प्राप्त होता है। भीलवाड़ा के निकट देवड़ा गाँव म पहाड़ी पर यह खनिज है। भीलवाड़ा से 32 किलोमीटर दूर तिरोली गाँव (गंगापुर सड़क पर) म तीन छोटी पहाड़ियों से भी यह खनिज प्राप्त किया जाता है। उदयपुर जिले म मला का गुडा डूंगरपुर म सगवाड़ा तहसील, जयपुर म किशनगढ के निकट व अलवर जिले म इसकी खानें हैं किन्तु यह खनिज बहुत कम मात्रा म है। बेरिलियम खनिज को खरीदने का एकाधिकार भारत के अणु शक्ति आयोग को ही है।

(12) टंगस्टन—टंगस्टन की भारत म केवल एक ही खान है जो डेगाना के निकट पहाड़ी म है। डेगाना जोधपुर जिले म है और जोधपुर फुलेरा रेलमार्ग पर एक छोटा सा स्टेशन है। यह सामयिक महत्व का खनिज है। यह कड़ी से कड़ी वस्तु को काट सकता है। आजकल इसका मूल्य लगभग 35,000 रुपये प्रति टन है।

(13) यूरेनियम—यह भी अणु शक्ति सम्बन्धी महत्वपूर्ण खनिज है। एक पौण्ड यूरेनियम से उतनी ही शक्ति प्राप्त होती है जितनी कि 25 लाख टन कोयले से। इसकी खानें डूंगरपुर बाँसवाड़ा और किशनगढ म हैं। इस खनिज को खरीदने का एकाधिकार भी भारत सरकार को ही है।

(14) बेराइटिस (Barytes)—राजस्थान म बेराइटिस का प्रमुख उत्पादक क्षेत्र अलवर है। भरतपुर जिले म बयाना के निकट (हाथोरी गाव मे) भी यह पाया गया है। यह सफेद तथा लाल रंग की होती है। इसे पेण्ट तथा अनेक रासायनिक पदार्थ बनाने के काम म लाते है।

(15) अन्य खनिज—राजस्थान म उपरोक्त खनिजो के अतिरिक्त भी अनेक खनिज पाये जाते हैं जैसे चूने का पत्थर (जोधपुर मे गोटन, जयपुर म सवाई माधोपुर कोटा म लाखेरी उदयपुर म चित्तौड आदि), गेरू (अलवर, सवाई माधोपुर और जैसलमेर), मुल्तानी मिट्टी (जोधपुर व बीकानेर), स्लेट का पत्थर (अलवर) एसबस्टस (भीलवाडा व उदयपुर) पन्ना (उदयपुर) आदि।

(16) पट्रोलियम—राजस्थान के पश्चिमी भाग म जैसलमेर मे अनेक वर्षों से पट्रोलियम की खोज की जा रही है। यहाँ पट्रोलियम के बड़े भण्डार होने की सम्भावना है।

36

राजस्थान के प्रमुख उद्योग

विषय प्रवेश—

क्षेत्रफल की दृष्टि से मध्य प्रदेश राज्य के पश्चात भारत का सबसे बड़ा राज्य राजस्थान है। किन्तु औद्योगिक विकास की दृष्टि से राजस्थान की गणना भारत के पिछड़े हुए राज्यों में की जाती है। राजस्थान ने बिड़ला, मोरारका, भरतिया, बगड़िया, बागड़, जयपुरिया, डागा, रामपुरिया, कानोडिया आदि जैसे उद्योगपति भारत को दिए हैं किन्तु स्वयं राजस्थान औद्योगिक दृष्टि से अभी भी पिछड़ा हुआ है। यद्यपि राजस्थान खनिज पदार्थों एवं अन्य प्राकृतिक स्रोतों से परिपूर्ण है, किन्तु संतोषजनक औद्योगिक विकास नहीं हो पाया।

औद्योगिक दृष्टि से अविकसित होने के कारण

राजस्थान आरम्भ से ही औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ क्षेत्र रहा है। यहाँ औद्योगिक विकास धीमा हुआ। इसके प्रमुख कारण ये हैं।

(1) **शक्ति के साधनों की कमी**—राजस्थान में शक्ति के साधनों की कमी के कारण उद्योग धन्धों का विकास नहीं हो पाया। कोयला केवल पलाना (बीकानेर) क्षेत्र से ही मिलता है और वह भी (लिग्नाइट) घटिया किस्म का है। रानीगंज व झरिया के उद्योगों के लिए पर्याप्त कोयला बहुत महंगा पड़ता है। राजस्थान में जल विद्युत केवल चम्बल-योजना से ही तैयार की जाती है। शक्ति के उपयुक्त सस्ते साधनों के अभाव में उद्योगों की स्थापना व विकास नहीं हो सकता।

(2) **कच्चे माल का अभाव**—राजस्थान में उद्योगों के लिए कच्चा-माल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है। इसका कारण यह है कि राजस्थान का अधिकांश भाग रेगिस्तानी है। कपास, गन्ना, तिलहन तथा अन्य औद्योगिक फसलों का उत्पादन बहुत कम है अतः इनसे सम्बन्धित कारखाने वांछित संख्या में स्थापित न हो सके।

(3) **वनों का अभाव**—राजस्थान में वनों का अभाव है अतः वन-पदार्थों की भी कमी है। औद्योगिक लकड़ी राज्य के बाहर से मँगवाई जाती है जो बहुत महंगी पड़ती है।

भू०, 39

राजस्थान व बिहार—मे ही उत्पन्न होता है। राजस्थान का बेरिलियम उच्चकोटि का होता है। यह खनिज हरा, हल्का हरा, सफेद अथवा पीला रंग का होता है। भीलवाडा उदयपुर, जयपुर डूंगरपुर, टांक व सीकर जिले मे इसकी खानें हैं।

सबसे अधिक बेरिलियम भीलवाडा जिले से प्राप्त होता है। भीलवाडा के निकट देवडा गांव म पहाडी पर यह खनिज है। भीलवाडा से 32 किलोमीटर दूर तिलोली गांव (गंगापुर सडक पर) म तीन छोटी पहाडिया म भी यह खनिज प्राप्त किया जाता है। उदयपुर जिले मे मेला का गुडा डूंगरपुर म सगवाडा तहसील, जयपुर म किशनगढ के निकट व अलवर जिले म इसकी खानें हैं किन्तु यह खनिज बहुत कम मात्रा म है। बेरिलियम खनिज को खरीदने का एकाधिकार भारत के अणु शक्ति आयोग को ही है।

(12) टंगस्टन—टंगस्टन की भारत म केवल एक ही खान है जो डेगाना के निकट पहाडी म है। डेगाना जोधपुर जिले मे है और जोधपुर फुलेरा रेलमार्ग पर एक छोटा सा स्टेशन है। यह सामयिक महत्व का खनिज है। यह कडी से कडी वस्तु को काट सकता है। आजकल इसका मूल्य लगभग 35,000 रुपये प्रति टन है।

(13) यूरेनियम—यह भी अणु शक्ति सम्बन्धी महत्वपूर्ण खनिज है। एक पौण्ड यूरेनियम स उतनी ही शक्ति प्राप्त होती है जितनी कि 25 लाख टन कोयले स। इसकी खानें डूंगरपुर बांसवाडा और किशनगढ म हैं। इस खनिज को खरीदने का एकाधिकार भी भारत सरकार को ही है।

(14) बेराइटिस (Barytes)—राजस्थान मे बेराइटिस का प्रमुख उत्पादक क्षेत्र अलवर है। भरतपुर जिले मे बयाना के निकट (हाथोरी गाव मे) भी यह पाया गया है। यह सफेद तथा लाल रंग की होती है। इससे पेण्ट तथा अनेक रासायनिक पदार्थ बनाने के काम मे लाते है।

(15) अन्य खनिज—राजस्थान म उपरोक्त खनिजों के अतिरिक्त भी अनेक खनिज पाये जाते हैं जैसे चूने का पत्थर (जोधपुर मे गोटन जयपुर म सवाई माधोपुर, कोटा म लाखेरी, उदयपुर म चित्तौड आदि), गेरू (अलवर, सवाई माधोपुर और जैसलमेर), मुल्तानी मिट्टी (जोधपुर व बीकानेर), स्लेट का पत्थर (अलवर) एसबस्टस (भीलवाडा व उदयपुर), पन्ना (उदयपुर) आदि।

(16) पट्रोलियम—राजस्थान के पश्चिमी भाग म जैसलमेर म अनेक वर्षों से पट्रोलियम की खोज की जा रही है। यहाँ पट्रोलियम के बडे भण्डार होने की सम्भावना है।

36

राजस्थान के प्रमुख उद्योग

विषय प्रवेश—

क्षेत्रफल की दृष्टि में मध्य प्रदेश राज्य के पश्चात भारत का सबसे बड़ा राज्य राजस्थान है। किन्तु औद्योगिक विकास की दृष्टि से राजस्थान की गणना भारत के पिछड़े हुए राज्यों में की जाती है। राजस्थान ने बिड़ला, मारवाड़ी, भरतिया, बगड़िया, बागड़ जयपुरिया डागा, रामपुरिया, कानोड़िया आदि जैसे उद्योगपति भारत को दिए हैं किन्तु स्वयं राजस्थान औद्योगिक दृष्टि से अभी भी पिछड़ा हुआ है। यद्यपि राजस्थान खनिज-पदार्थों एवं अन्य प्राकृतिक साधनों से परिपूर्ण है, किन्तु सन्तोषजनक औद्योगिक विकास नहीं हो पाया।

औद्योगिक दृष्टि से अविकसित होने के कारण

राजस्थान आरम्भ से ही औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ क्षेत्र रहा है यहाँ औद्योगिक विकास धीमा हुआ। इसके प्रमुख कारण ये हैं।

(1) **शक्ति के साधनों की कमी**—राजस्थान में शक्ति के साधनों की कमी के कारण उद्योग धन्धों का विकास नहीं हो पाया। कोयला केवल पलाना (बीकानेर) क्षेत्र से ही मिलता है और वह भी (लिग्नाइट) रद्दी किस्म का है। रानीगंज व झरिया के उद्योगों के लिए पर्याप्त कोयला बहुत महँगा पड़ता है। राजस्थान में जल विद्युत केवल चम्बल-योजना से ही तैयार की जाती है। शक्ति के उपयुक्त सस्ते साधनों के अभाव में उद्योगों की स्थापना व विकास नहीं हो सकता।

(2) **कच्चे माल का अभाव**—राजस्थान में उद्योगों के लिए कच्चा-माल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है। इसका कारण यह है कि राजस्थान का अधिकांश भाग रेगिस्तानी है। कपास, गन्ना, तिलहन तथा अन्य औद्योगिक फसलों का उत्पादन बहुत कम है अतः इनसे सम्बन्धित कारखाने वांछित संख्या में स्थापित न हो सके।

(3) **वनों का अभाव**—राजस्थान में वनों का अभाव है अतः वन-पदार्थों की भी कमी है। औद्योगिक लकड़ी राज्य के बाहर से मँगवाई जाती है जो बहुत महँगी पड़ती है।

मू०, 39

(4) **जल का अभाव**—औद्योगिक विकास के लिए जल प्रचुर मात्रा मे चाहिए जिसकी राजस्थान मे कमी है। राजस्थान म वर्षा की कमी है। वष पयन्त वहन वाली नदिया तो (चम्बल के अतिरिक्त) है ही नही। जल क अभाव म जसलमेर जस क्षत्रो म ता वडे उद्योगो के विकास की कल्पना भी नही की जा सकती।

(5) **यातायात के साधनो की अविकसित दशा**—राजस्थान म रेल माग व सडक मार्गों की कमी भी राज्य के औद्योगिक विकास म बाधक रही है। राजस्थान मे 100 वग किलोमीटर क्षत्र म औसत रूप से 14 किलोमीटर लम्बी सडकें ही हैं। सम्पूण भारत का यह औसत 27 किलोमीटर है। रेलो का विकास तो और भी कम हुआ है। राजस्थान मे 100 वग किलोमीटर मे औसत रूप से 1 6 किलामीटर रेल मार्ग है। राजस्थान के जसलमेर बाडमेर डूगरपुर, टोक, झालावाड और जालौर जिला म तो रेलवे का सवथा अभाव ही है। यातायात के माग उद्योग धन्धो की रक्त धमनिया होती हैं।

(6) **अशिक्षित श्रमिको का अभाव**—राजस्थान मे भारत का लगभग 11 प्रतिशत क्षेत्र है किन्तु 4 6 प्रतिशत जनसख्या है। इसके अतिरिक्त अनेक भागों म जनसख्या का घनत्व भी बहुत कम है। प्रशिक्षित श्रमिको का तो नितान्त अभाव है क्योकि राज्य म शिक्षा का प्रसार तो कम है ही किन्तु साथ ही प्रशिक्षण देने की सुविधाएँ भी कम ह।

(7) **पूजी की कमी**—राजस्थान के उद्योगपति व पजीपति अन्य राज्यो व नगरा (जस आसाम अहमदाबाद बम्बई, कलकत्ता, मद्रास) म चले गये हैं और वहा अपन उद्योग ध धे स्थापित किए हैं। राजस्थान मे पूजी लगाने मे उ होने सकोच किया है। अत राजस्थान मे पूजी की कमी है।

(8) **बाजार की कमी**—राजस्थान म प्रति व्यक्ति आय बहुत कम होने से क्रय शक्ति कम है और इस कारण वस्तुआ की माग कम है। माँग कम होने के कारण उद्यागपति इस राज्य म कारखाने लगान का प्रोत्साहित नही हुए, जबकि कलकत्ता बम्बइ मद्रास जसे केन्द्रो म अनक कारखाने स्थापित किए गय हैं।

(9) **तकनीकी ज्ञान का अभाव**—राजस्थान म तकनीकी ज्ञान का नितान्त अभाव है। यदि कोई वस्त्र मिल या चीना मिल या अन्य कोई कारखाना स्थापित करना चाह तो बाहर स ही तकनीकी व्यक्ति बुलाए जावगे। कोटा म खाद का कारखाना बिजली क तार बनान आदि क कारखान स्थापित किए गये किन्तु सभी क लिए तकनीकी व्यक्ति बाहर स बुलाए गय।

(10) **सरकारी नीति**—राजस्थान सरकार यद्यपि राज्य का औद्योगिक विकास करना चाहती है किन्तु सरकारी नीति उद्यागपतियो का प्रोत्साहित करन वाली नहा है। उद्यागपतियो को विशष रियायतें नहीं मिल रही हैं लाल फीताशाही [illegible] है। पजाब म औद्योगिक विकास तज गति स हो रहा है।

(11) **अन्तर्राज्यीय बाधाएँ**—राजस्थान म बाहर म मशीनें व कच्चा माल

मँगवाने व माल बाहर भेजने में अनेक कठिनाइयाँ आती हैं, अनेक प्रकार के कर चुकाने पड़ते हैं अनेक कार्यालयों में चक्कर लगाने पड़ते है ।

अंतिम विचार—राजस्थान में औद्योगिक विकास की सम्भावनाएँ तो बहुत अधिक है किन्तु व्यवस्थित ढंग से औद्योगीकरण नहीं हो सकेगा । विकास की गति बहुत मन्द रहेगी और उद्योगों की एक ही स्थान अथवा क्षेत्र में केन्द्रित होने की प्रवृत्ति रहेगी । कोटा में अणु शक्ति गृह बन रहा है उसका निर्माण पूरा हो जाने पर शक्ति की समस्या काफी हल हो जावेगी, किन्तु वह शक्ति सारे राजस्थान में नहीं भेजी जा सकेगी । कोटा क्षेत्र में और अधिक औद्योगिक विकास होगा किन्तु प्राकृतिक बाधाओं के कारण जैसलमेर जोधपुर बीकानेर आदि क्षेत्रों में औद्योगिक विकास बहुत ही मन्द गति से होगा ।

राजस्थान के प्रमुख उद्योग

राजस्थान के प्रमुख बड़े उद्योगों का विवरण नीचे दिया जा रहा है —

(1) सूती वस्त्र उद्योग—

प्रारम्भिक—जिस प्रकार भारत में सूती वस्त्र उद्योग का महत्त्वपूर्ण स्थान है, उसी प्रकार राजस्थान की अर्थव्यवस्था में यहाँ के सूती वस्त्र उद्योग का महत्त्वपूर्ण स्थान है । राज्य में यद्यपि बड़े उद्योगों में सबसे प्रमुख स्थान सूती मिल उद्योग का है किन्तु उत्पादित वस्त्र की श्रेष्ठता की दृष्टि से हम काफी पीछे है ।

क्रमिक विकास—राजस्थान में सर्वप्रथम सूती मिल ब्यावर में सन 1889 में (द कृष्णा मिल्स लि०) स्थापित की गई । इसके पश्चात दूसरी मिल (एडवर्ड मिल्स लि०) सन 1906 में ब्यावर में ही स्थापित की गई । इसके पश्चात तीसरी मिल (श्री महालक्ष्मी मिल्स लि०) भी ब्यावर में ही सन 1925 में स्थापित की गई । इस प्रकार सन 1925 तक केवल ब्यावर में ही सूती वस्त्र निर्माण की मिलें स्थापित हुईं ।

इसके पश्चात भीलवाड़ा में मेवाड़ टेक्सटाइल मिल्स के नाम से एक मिल सन 1938 में स्थापित की गई । सन 1942 में पाली (जोधपुर) में महाराजा उम्मेद मिल्स स्थापित की गई । इसके पश्चात किशनगढ़ विजयनगर (अजमेर) जयपुर गंगानगर भवानीमण्डी कोटा आदि में सूती मिलें स्थापित की गई ।

वर्तमान स्थिति—राजस्थान में अजमेर के विलय के समय 11 सूती-वस्त्र मिलें थी, उसके पश्चात 2 सूती मिलें बन्द हो गई और 7 नई मिलों की स्थापना हो गई । अतः राजस्थान में इस समय 17 सूती वस्त्र मिलें हैं[1] । भवानी मण्डी में सन 1968 में सूती मिल स्थापित की गई । यह उल्लेखनीय है कि राजस्थान में सूती वस्त्र की सबसे बड़ी मिल पाली में (महाराजा उम्मेद मिल्स) है ।

कच्चा माल—राजस्थान में कपास का उत्पादन होता है । गंगानगर, जयपुर

---

1 मुख्यमन्त्री श्री सुखाड़िया के मार्च 1970 में दिये गये भाषण से ।

भीलवाड़ा बाँसवाड़ा चित्तौड़ उदयपुर कोटा झालावाड, भरतपुर, पाली, टोंक आदि जिलों में कपास होती है। लम्बे रेशे की कपास बाहर से मंगवानी पड़ती है।

वस्त्र उत्पादन—राजस्थान में सूती वस्त्र का उत्पादन आजकल लगभग 6 करोड़ मीटर प्रतिवर्ष हो रहा है। सन 1956 में राजस्थान में 570 लाख मीटर 1961 में 554 लाख मीटर, 1966 में 625 मीटर व 1967 में 610 लाख मीटर वस्त्र का उत्पादन हुआ।

सम्भावनाएँ—राजस्थान में राज्य सरकार ने सूती वस्त्र की 10 नई मिलें स्थापित करने की स्वीकृति दे दी है। प्रत्येक मिल में लगभग 12 हजार तकुए होंगे ये मिलें जयपुर में दो तथा अलवर, धौलपुर चित्तौड़ जोधपुर, डूंगरपुर झुंझुनू हनुमानगढ़ तथा नोहर में स्थापित की जायेगी। गंगानगर क्षेत्र में कपास का उत्पादन बढ़ेगा। राजस्थान में बढ़िया किस्म के वस्त्र उत्पादन की सम्भावना कम प्रतीत होती है।

समस्याएं—राजस्थान के सूती वस्त्र उद्योग के समक्ष प्रमुख समस्याएँ ये हैं—(1) शक्ति के साधनों की कमी की समस्या (2) लम्बे रेशे की कपास की समस्या, (3) रासायनिक पदार्थों की समस्या (4) प्रशिक्षित श्रमिकों की समस्या (5) मशीनों के नवीनीकरण की समस्या (6) वित्तीय साधनों की कमी की समस्या (7) अनुसंधान की सुविधाओं की कमी आदि।

(2) सीमेण्ट उद्योग—

आवश्यक सुविधाएं—सीमेण्ट के निर्माण में चूने का पत्थर जिप्सम व कोयला मुख्य वस्तुएँ हैं। इस राज्य में चूने के पत्थर व जिप्सम के विपुल भण्डार हैं। बूंदी चित्तौड़गढ़ व सवाई माधोपुर के निकट चूने के पत्थर के बहुत बड़े भण्डार हैं। कोयले की कमी अवश्य रहती है। कोयला बिहार की खानों से मंगवाया जाता है। श्रमिकों की कमी नहीं है।

क्रमिक विकास—राजस्थान में सीमेण्ट का प्रथम कारखाना बूंदी के निकट लाखेरी में सन 1915 में स्थापित किया गया था। यह ए० सी० सी० ग्रुप का है। इसके पश्चात सीमेण्ट का दूसरा कारखाना डालमिया ग्रुप ने सवाई माधोपुर में स्थापित किया। यह कारखाना बड़ा है। तीसरा कारखाना कुछ वर्षों पूर्व चित्तौड़गढ़ में बिड़ला बन्धुओं ने स्थापित किया है। सवाई माधोपुर का कारखाना त्रिशूल छाप सीमेण्ट का व चित्तौड़गढ़ का कारखाना चेतक छाप सीमेण्ट का निर्माण करता है।

सीमेण्ट का उत्पादन—राजस्थान में प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष में 5 25 लाख टन द्वितीय योजना के अन्त में लगभग 11 लाख टन का उत्पादन हुआ। तृतीय योजना के अन्त में राजस्थान में लगभग 11 25 लाख टन सीमेण्ट का उत्पादन हुआ। इस योजना काल में सीमेण्ट उत्पादन में विशेष वृद्धि नहीं हुई। सन 1967 में लगभग 12 75 लाख सीमेण्ट का उत्पादन हुआ।

(3) चीनी उद्योग—

राज्य में चीनी बनाने के दो कारखाने हैं व तीसरे की स्थापना हो रही है। राजस्थान में चीनी का प्रथम कारखाना सन् 1932 में चित्तौड़गढ़ जिले में भोपाल सागर में स्थापित किया गया। यह मिल भोपालसागर रेलवे स्टेशन के निकट ही है। उदयपुर डिवीजन में गन्ना काफी उत्पन्न होता है और यह कारखाना इस क्षेत्र के गन्ने को ही काम में लेता है। इस कारखाने का नाम 'मेवाड़ शुगर मिल' है।

राजस्थान में चीनी बनाने का कारखाना सन् 1937 में गंगानगर में 3 लाख रुपये की पूँजी से स्थापित किया गया। यह कारखाना 8 वर्ष तक उत्पादन आरम्भ न कर सका। सन् 1946 में इस कारखाने को 'बीकानेर इण्डस्ट्रियल कॉरपोरेशन' ने खरीद लिया और तब चीनी का उत्पादन आरम्भ हुआ। यह कॉरपोरेशन भी इस कारखाने को सन्तोषजनक ढंग से न चला पाया और अन्त में सन् 1956 में राजस्थान सरकार ने इस कारखाने के लगभग 72 प्रतिशत अंश खरीदकर अपने नियन्त्रण में ले लिया। अब यह कारखाना सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य कर रहा है।

चीनी बनाने का तीसरा कारखाना केशोरायपाटन में स्थापित किया गया है। इस कारखाने का उद्घाटन मार्च 1970 में किया जा चुका है। उल्लेखनीय है कि यह कारखाना सहकारी क्षेत्र में स्थापित किया गया है।

राजस्थान में चीनी उत्पादन 1951 52 में लगभग [illegible] हजार टन 1955-56 में 13 5 हजार टन 1960 61 में 18 हजार टन 1965 66 में 18 25 हजार टन हुआ।

(4) काँच उद्योग—

राजस्थान में काँच का सामान बनाने के 7 कारखाने थे किन्तु इस समय केवल धौलपुर में ही दो कारखाने कार्य कर रहे हैं शेष कारखाने धीरे-धीरे बन्द हो गये। काँच बनाने में एक विशेष प्रकार की मिट्टी (सिलिका) की आवश्यकता पड़ती है। यह राजस्थान के तीन जिलों—धौलपुर सवाई माधोपुर तथा बीकानेर —में पाई जाती है। धौलपुर में काँच के दोनों कारखानों का संक्षिप्त परिचय निम्न लिखित है —

(क) धौलपुर ग्लास वर्क्स—यह कारखाना निजी क्षेत्र (Private Sector) में है। इस कारखाने में लगभग 9 लाख रुपये विनियोजित हैं। इस कारखाने में औसत रूप में लगभग 900 टन वार्षिक काँच का सामान तैयार किया जाता है। इस कारखाने में लगभग 700 श्रमिक कार्य कर रहे हैं।

(ख) हाईटेक (Hi Tech) प्रीसीजन ग्लास वर्क्स—यह कारखाना सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector) में है। यह कारखाना राजस्थान सरकार का है। इसकी अधिकृत-पूँजी 50 लाख रुपये है। इस कारखाने में सन् 1964 से उत्पादन आरम्भ किया गया। इस कारखाने में लगभग 740 व्यक्ति कार्य कर रहे हैं। यह कारखाना वैज्ञानिक अनुसंधानशालाओं और स्कूलों व कॉलिजों की विज्ञान प्रयोग

शालाओ मे काम मे आने वाली काँच की वस्तुएँ विशेषरूप से बनाता है—जैसे बीकर माइक्रो स्लाइडस, फ्लास्क, काच की नलियाँ कवर ग्लास, ताप मापक उपकरण, पर्सलीन की शीशियां आदि।

निरन्तर हानि होने के कारण इस कारखाने ने 1967 के अंतिम चरण में उत्पादन कार्य बन्द कर दिया था किन्तु 1968 के मध्य में पुनः उत्पादन कार्य चालू कर दिया है।

उदयपुर में भी काच बनाने का एक कारखाना स्थापित किया गया है किन्तु अभी तक उत्पादन आरम्भ नहीं कर सका है।

(5) नमक उद्योग—

नमक उद्योग राजस्थान के प्रमुख बडे उद्योगो म है। एक अनुमान के अनुसार कुल नमक उत्पादन की दृष्टि से राजस्थान का भारत में चौथा स्थान है तथा झीलों से नमक उत्पादन की दृष्टि से प्रथम स्थान है। भारत के कुल नमक उत्पादन का लगभग 10 प्रतिशत भाग राजस्थान से ही प्राप्त होता है।

राजस्थान म सबसे अधिक नमक साभर झील से प्राप्त किया जाता है। साभर झील जयपुर जोधपुर रेलमार्ग पर जयपुर से लगभग 60 किलोमीटर दूर है। फुलेरा से यह झील काफी निकट है। यह झील लगभग 235 वर्ग किलोमीटर मे फैली हुई है। साभर झील से राजस्थान म कुल नमक उत्पादन का लगभग 45 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। हिन्दुस्तान साल्टस लिमिटेड की सहायक कम्पनी के रूप मे साभर साल्टस लिमिटेड यहाँ नमक बनाती है। साभर साल्टस लि० सार्वजनिक क्षेत्र की कम्पनी है।

डीडवाना तथा पचभद्रा झीलो से भी नमक तैयार किया जाता है। इन झीलो से राजस्थान सरकार नमक तैयार करती है। इनमे भी डीडवाना का नमक अच्छा होता है।

उपरोक्त के अतिरिक्त कुचामन फलौदी और सुजानगढ की झीलो म भी नमक तैयार किया जाता है। यह नमक निजी क्षेत्र म तैयार किया जाता है। ये झीलें छोटी हैं अत उत्पादन भी कम होता है।

इस उद्योग के सामने स्वत-वगना की समस्या रहती है। इसके अतिरिक्त गौण पदार्थों का भी समुचित उपयोग नही हो रहा है। वर्षा म बहुत अधिक होने पर इस उद्योग पर विपरीत प्रभाव पडता है।

(6) जस्ता गलाने का उद्योग—

उदयपुर के निकट जावर के निकट सीसा (Lead) व जस्त (Zinc) की खानें हैं। यहाँ से माल तो बिहार के कारखाने म भेज दिया जाता है। उदयपुर के निकट देवारी स्थान पर जस्ता गलाने का एक कारखाना सार्वजनिक क्षेत्र म सन् 1967 म स्थापित किया गया है। इस कारखाने ने सन् 1968 से उत्पादन आरम्भ कर दिया है। इस कारखाने पर लगभग 16 करोड रुपया व्यय हुए हैं।

अय उद्योग—

(1) अभ्रक साफ करने का कारखाना—भीलवाडा क्षेत्र म अभ्रक का उत्पादन काफी होता है। पहले अभ्रक को विदेश म साफ करने के लिए भेज दिया जाता था। भीलवाडा म 'हिन्दुस्तान माइका लि०' की स्थापना की गई है जो अभ्रक को साफ करने का काय करती है।

(2) अभ्रक की ईटो का कारखाना—भीलवाडा म ताप एव विद्युत निरोध अभ्रक की ईटो का कारखाना सन 1958 म स्थापित किया गया। इस कारखाने द्वारा तयार की गई ईटें राऊरकेला व भिलाई के इस्पात-कारखानो की भट्टियो के उपयोग म लाई गई हैं।

(3) बाल बियरिंग उद्योग—यह कारखाना जयपुर म बिडला बन्धुओ द्वारा सन 1950 म स्थापित किया गया था। यह कारखाना भारत म केवल एक है और एशिया म, जापान के अतिरिक्त, सबसे बडा है। यहाँ छर्रे और उनको रखने के लिए बियरिंग बनाए जाते हैं।

(4) गृह निर्माण सामग्री का कारखाना—जयपुर म (रेलवे स्टेशन के निकट) 'मान इण्डस्ट्रियल कारपोरेशन लि० गृह निर्माण सम्बन्धी सामान बनाता है। इसम स्टील रौलिंग मिल भी है।

(5) मीटर बनाने के कारखाने—जयपुर म एक कारखाना अलौह पदार्थ एव बिजली के मीटर बनाता है। दूसरा कारखाना पानी तथा तेल नापने के मीटर बनाता है।

(6) हड्डी पीसने के कारखाने—राजस्थान म हड्डी पीसने के तीन कारखाने काय कर रहे हैं—जयपुर जोधपुर उदयपुर (गोगुण्डा म)। इन कारखानो म लगभग 10 लाख रुपये की पूजी लगी हुई है और लगभग एक हजार श्रमिक काय कर रहे हैं।

(7) रासायनिक उद्योग—वसे तो राजस्थान म रासायनिक पदार्थ बनाने के छोटे छोटे अनेक कारखाने हैं किन्तु जोधपुर व कोटा के कारखाने बडे हैं। कोटा का कारखाना 'दहली क्लाथ मिल्स' की इकाई के रूप म स्थापित किया गया है।

(8) अन्य कारखाने—उपरोक्त के अतिरिक्त राजस्थान म अन्य अनेक महत्वपूर्ण उद्योग हैं जसे कोटा मे श्रीराम फर्टिलाइजस (खाद का कारखाना), नाइलोन के धागे बनाने का कारखाना, बिजली के तार बनाने के कारखाने बिजली का सामान बनाने का कारखाना श्रीराम केमिकल इण्डस्ट्रीज, श्रीराम रेयन जे० के० सिनथटिक्स आदि, भरतपुर म रेल के वगन बनाने का कारखाना, बीकानेर, चूरू, नवलगढ मे ऊन के कारखाने टोंक म चमडे का कारखाना अजमेर म मशीन टूल का कारखाना आदि प्रमुख हैं।

पचवर्षीय योजनाओ मे औद्योगिक विकास

राजस्थान म प्रथम पचवर्षीय योजना काल म औद्योगिक विकास के लिए

55 10 लाख रुपयो का प्रावधान किया गया था, किन्तु 45 85 लाख रुपये व्यय हो सके। इस योजना-काल म शक्ति का विशेषज्ञ स अभाव था। इस योजना-काल म लघु एव कुटीर उद्योग, हस्त कला उद्योग एव औद्योगिक प्रशिक्षण पर विशेष जोर दिया गया। प्रशिक्षण कायक्रम अनेक केन्द्रो म चालू किया गया जस जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, सीकर चूरू आदि। ताड गुड उद्योग भेड व ऊन सुधार केन्द्र, नमक अनुसधान आदि पर काय हुआ।

द्वितीय पचवर्षीय योजना म लगभग 326 करोड रुपये व्यय किए गये। इस योजना काल म औद्योगिक सर्वेक्षण पर विशष बल दिया गया। इसके अतिरिक्त राज्य के विद्यमान उद्योगो का विकास बडे व मझले उद्योगो की स्थापना के प्रयत्न, नये उद्योगो की स्थापना की सम्भावनाए मात्र के विक्रय की व्यवस्था, नई वकशाप स्थापित करने सम्बन्धी प्रयत्न किए गये।

तृतीय पचवर्षीय योजना म राज्य के औद्योगिक विकास पर लगभग 190 लाख रुपये व्यय किए गये। इस राशि के अतिरिक्त राज्य के उद्योग विभाग के द्वारा लगभग 39 लाख रुपये और व्यय किए गये। इस काल म अनेक औद्योगिक बस्तियो का विस्तार किया गया।

चौथी पचवर्षीय योजना म राज्य के औद्योगिक विकास पर और अधिक राशि व्यय की जावेगी। खाद चमडे सूती वस्त्र चीनी व रासायनिक उद्योगो को स्थापित किए जाने की सम्भावना है। इस योजना काल म सवाई माधोपुर म एक तेल शोधक कारखाना स्थापित करने के लिए मुख्य मन्त्री प्रयास कर रहे है।